आज़ाद-कथा

रूपांतरकार

प्रेमचंद

सरस्वती प्रेस, बनारस

आज़ाद-कथा

१

मियाँ आज़ाद के बारे में हम इतना ही जानते हैं कि वह आज़ाद थे। उनके ख़ानदान का पता नहीं, गाँव-घर का पता नहीं; ख़याल आज़ाद, रंग-ढंग आज़ाद, लिबास आज़ाद, दिल आज़ाद और मज़हब भी आज़ाद। दिन भर जमीन के गज़ बने हुए इधर-उधर घूमना, जहाँ बैठना वहाँ से उठने का नाम न लेना, और एक बार उठ खड़े हुए तो दिन भर मटरगश्त करते रहना उनका काम था। न घर, न द्वार; कभी किसी दोस्त के यहाँ डट गये, कभी किसी हलवाई की दूकान पर अड्डा जमाया; और कोई ठिकाना न मिला, तो फ़ाक़ा कर गये। सब गुन पूरे थे। कुश्ती में, लकड़ी-बिनवट में, गदके-फरी में, पटे-बाँक में उस्ताद। ग़रज़, आलिमों में आलिम, शायरों में शायर, रँगीलों में रँगीले, हर फन मौला आदमी थे।

एक दिन मियाँ आज़ाद बाज़ार में सैर सपाटा कर रहे थे कि एक बुड्ढे ने एक बाँके से कहा कि मियाँ, बेधे आये हो, या जान भारी है, या छींकते घर से चले थे? यह अकड़ते क्यों चलते हो? यहाँ गरदन झुका कर चला कीजिए, नहीं तो कोई पहलवान गरदन नापेगा, सारी शेख़ी किरकिरी हो जायगी, ऐंड़ना भूल जाइएगा! इससे क्या वास्ता? यह शहर कुश्ती, पटे-बाँक और लकड़ी की टकसाल है। बहुत से लड़ंतिये आये, मगर पटकनी खा गये। हाथ मिलाते ही पहलवानों ने मारा चारों खाने चित्त। यह सुनते ही वह मियाँ बाँके आग-भभूका हो गये। बोले—जी, तो कहीं इस भरोसे भी न रहिएगा, यहाँ पटकनी खानेवाले आदमी नहीं हैं, बीच खेत पछाड़ें तो सही; बने रहें हमारे उस्ताद, जिन्होंने हमें लकड़ी सिखायी। टालों की लकड़ी फेंकना तो सभी जानते हैं, मैदान में ठहरना मर्दों ही का काम है। हमारे उस्ताद तीस-तीस आदमियों से गोहार लड़ते थे। और कौन लोग? गँवार-घामड़ नहीं, पले हुए पट्ठे, जिन पर उनको ग़रूर था। फिर यह ख़याल कीजिए कि तीस गदके बराबर पड़ते थे, मगर तीसों की खाली जाती थी। कभी आड़े हो गये, कभी गदके से चोट काट दी, कभी बन को समेट लिया, कभी पैंतरा बदल दिया। शागिर्दों को ललकारते जाते थे कि 'लगा दे बढ़ के हाथ, आ घुसके।' और वह झल्ला-झल्ला के चोटें लगाते थे, मगर मुँह की खाते थे। जब सबके दम टूट गये और लगे हाँफने, तो गदके हाथ से छूट-छूट पड़े। मगर वाह रे उस्ताद! उनके वही खमदम, वही ताव-भाव, पहरों लकड़ी फेंकें, मगर दम न फूले; और जो कहीं भिड़ पड़े तो बात की बात में परे साफ थे। किसी पर पालट का हाथ जमाया, किसी को चाकी का हाथ लगाया। फिर यही मालूम होता था कि फुलझड़ी छूट रही है, या आतशबाज़ी की छछूँदर नाच रही है, या चरख़ी चक्कर में है। जनेवा का हाथ तो आज तक कोई रोक ही न सका; वह तुला हुआ हाथ पड़ता था कि इधर इशारा किया, उधर तड़ से पड़ गया। बस, मौत का तीर था, गदका हाथ में आया

और मालूम हुआ कि बिजली लौंकने लगी। मुमकिन नहीं कि आदमी की आँख झपकने पाये। ललकार दिया कि रोक चाकी, फिर लाख जतन कीजिए, भला रोक तो लीजिए। निशाना तो कभी खाली जाने ही नहीं पाता था। फरी उम्र-भर न छूटी। एक अंग ही लड़ा किये। छरहरा बदन, सीधे-सादे आदमी, सूरत देखे तो यकीन न आये कि उस्ताद हैं, मगर एक जरा सी बाँस की खपाच दे दीजिए, फिर दिल्लगी देखिए, कैसे जौहर दिखाते हैं! हम जैसे उस्तादों की आँखें देखे हुए हैं, किसी से दबनेवाले नहीं।

मियाँ आज़ाद तो ऐसे आदमियों की टोह में रहते ही थे, बाँके के साथ हो लिये और दोनों शहर में चक्कर लगाने लगे। चौक में पहुँचे, तो जिस पर नज़र पड़ती है, बाँका-तिरछा; चुन्नटदार अँगरखे पहने, नुक्केदार टोपियाँ सिर पर जमाये, चुस्त घुटन्ने डाटे, ढाटे बाँधे हुए तने चले जाते हैं। तमंचे की जोड़ी कमर से लगी हुई, दो-दो विलायतियाँ पड़ी हुई, बाढ़ें चढ़ी हुई, पेशकब्ज, कटार, सिरोही, शेर-बचा, सबसे लैस। बाँके को देख कर एक दूकानदार की शामत आयी, हँस पड़ा। बाँके ने आव देखा न ताव, दन से तमंचा दाग दिया। संयोग था, खाली गया। लोगों ने पूछा, क्यों भाई, क्यों बिगड़ गये? तीखे हो कर बोले—हमको देख कर बचाजी मुसकिराये थे, हमने गोली लगायी कि दाँत पर पड़े और इनके दाँत खट्टे हो जायँ, मगर ज़िंदगी थी, बच निकले। मियाँ आज़ाद ने अपने दिल में सोचा, यह बाँके तो आफ़त के परकाले हैं, इनको नीचा न किया तो कुछ बात नहीं। एक तंबोली से पूछा—क्यों भाई, यहाँ बाँके बहुत हैं? उसने कहा—मियाँ, बाँका होना तो दिल्लगी नहीं, हाँ, बेफ़िक्रे बहुत हैं। और इन सबके गुरु-घंटाल वह हज़रत हैं, जिन्हें लोग एकरंग कहते हैं। वह संदली रँगा हुआ जोड़ा पहन कर निकलते हैं, मगर मज़ाल क्या कि शहर भर में कोई संदली जोड़ा पहन तो ले। एकरंग संदली जोड़ा कोई पहन नहीं सकता; कोई पहने तो गोली भी सर कर दे, इसके साथ यह भी है।

मियाँ आज़ाद ने सोचा कि इस एकरंग का टेटुआ न लिया, तो खाना हराम। दूसरे दिन आप भी संदली बूट, संदली घुटन्ना, संदली अँगरखा और टोपी डाट कर निकले। अब जिस गली-कूचे से निकलते हैं, उँगलियाँ उठती हैं कि यह आज इस ढब से कौन निकले हैं भाई! होते-होते एकरंग के चेले-चापड़ों ने उनके कान में भी भनक डाल दी। सुनते ही मुँह लाल चुकंदर हो गया। कपड़े पहन, हथियार लगा, चल खड़े हुए। आज़ाद तंबोली की दूकान पर टिक गये। उनका वेष देखते ही उसके होश उड़ गये। लगा हाथ जोड़ने कि भगवान् के लिए मेरी ही टोपी दे लीजिए, या जूता बदल डालिए, नहीं तो वह आता ही होगा, मुफ्त की ठायँ-ठायँ से क्या वास्ता? इनको तो कच्चे घड़े की चढ़ी थी, कब मानते थे, गिलौरी ली और अकड़ कर खड़े हुए। शहर में धूम हो गयी कि आज आज़ाद और एकरंग में तलवार चलेगी। तमाशा देखनेवाले जमा हो गये। इतने में मियाँ एकरंग भी दिखाई दिये। उनके आते ही भीड़ छट गयी। कोई इधर कतरा गया, कोई गली में घुसा, कोई कोठे पर चढ़ गया। एकरंग ने जो इनको

देखा, तो जल मरा। बोला—अबे ओ खब्ती, उतार टोपी, बदल जूता। हमारे होते तू संदली जोड़ा पहन कर निकले! उतार, उतार, नहीं तो मैं बढ़ कर काम तमाम कर दूँगा। मियाँ आज़ाद पैतरा बदल कर तीर की तरह झपट पड़े और बड़ी फुर्ती से एकरंग की तोंद पर तमंचा रख दिया। बस हिले और धुआँ उस पार! बोले और लाश फड़कने लगी! बेईमान, बड़ा बाँका बना है, सैकड़ों भले आदमियों को बेइज़्ज़त किया। इतने चाबुक मारूँगा कि याद करेगा। अभी उतार टोपी, उतार, उतार, नहीं तो धुआँ उस पार! संयोग से एक दर्ज़ी उधर से निकला, उसने एकरंग की टोपी उतार जेब में रखी। एकरंग की एक न चली। आज़ाद ने ललकारा—हौसला हो तो आओ, दो-दो हाथ भी हो जायँ, खबरदार जो आज से संदली जोड़ा पहना!

शहर भर में धूम हो गयी कि मियाँ आज़ाद ने एकरंग के छक्के छुड़ा दिये, चुपचाप दर्जी से टोपी बदली। सच है, 'दबे पर बिल्ली चूहे से कान कटाती है।' मियाँ आज़ाद की धाक बँध गयी। एक दिन उन्होंने मनादी कर दी कि आज मियाँ आज़ाद छह बजे से आठ बजे तक अपने करतब दिखायेंगे, जिन्हें शौक़ हो आयें। एक बड़े लम्बे-चौड़े मैदान में आज़ाद अपने जौहर दिखाने लगे। लाखों आदमी जमा थे। मियाँ आज़ाद ने नीबू पर निशान बनाया, और तलवार से उड़ाया, तो निशान के पास खट से दो टुकड़े। कसेरू उछाला और पाँच-छह बार में छील डाला! तलवार की बाढ़ से दस-बारह की आँखों में सुरमा लगाया। चिराग़ जलाया और खाँड़ा फेंकते-फेंकते गुल काट डाला, लौ अलग, बत्ती अलग। एक प्याले में दस कौड़ियाँ रखीं और दो पर निशान बना दिया। दोनों को तलवार से प्याले ही में काटा और बाक़ी कौड़ियाँ निलोह बच निकलीं। लकड़ी टेकी और बीस हाथ छत पर हो रहे। गदके का ज़रा इशारा किया और बीस हाथ उड़ गये। चालीस-चालीस आदमियों ने घेरा और यह साफ़ निकल भागे। पलँग के नीचे एक जंगली कबूतर छोड़ दिया गया। उन्होंने उसको निकलने न दिया। एक फिकैत ने ये करतब देखे तो बोला—अजी यह सब नट-विद्या है, मैदान में आयें तो मालूम हो।

आज़ाद—अच्छा! अब तुम्हें भी मैदान में आने का दावा हुआ! तुम्हारे एकरंग का तो रंग फीका हो गया, अब तुम मुँह चढ़ते हो, तुम्हें भी देखूँगा।

फिकैत—चोंच संभालो।

आज़ाद—तुम्हारी शामत ही आ गयी है, तो मैं क्या करूँ। आजकल में तुम्हारी भी कलई खुली जाती है। तुम लोग बाँके नहीं, बदमाश हो; जिधर से निकल जाओ, उधर आदमी काँप उठें कि भेड़िया आया। कोई हँसा और तुमने बंदूक छतियायी, किसी ने बात की और तुमने चोट लगायी। भाई वाह, अच्छा बाँकपन है! तो बात क्या, जहाँ दस दिन डंड पेले और उबल पड़े, दो-चार दिन लकड़ी फेंकी और महल्लेवालों पर शेर हो गये। गुनी लोग सिर झुका ही के चलते हैं।

यही बातें हो रही थीं कि सामने से एक पहलवान ऐंड़ते हुए निकले, लँगोट बाँधे,

मलमल की चादर ओढ़े दो-तीन पट्ठे साथ। एक कसेरूवाले के पास खड़े हो गये और उसके सिर पर एक धप लगा दी। वह पीछे फिरकर देखता है, तो एक देव खड़े हैं। बोले, तो पथा जाय; कान दबा कर, धप खा कर, दिल ही दिल में कोसता हुआ चला गया।

थोड़ी ही देर में मियाँ पहलवान ने एक खोंचेवाले का खोंचा उलट दिया; तीन-चार रुपये कि मिठाई धूल में मिल गयी। जब उसने गुल-गपाड़ा मचाया, तो पट्ठों ने दो-तीन गुद्दे, घूसे, मुक्के लगा दिये, दो-चार लप्पड़ जमा दिये। वह बेचारा रोता-चिल्लाता, दुहाई देता चला गया।

आज़ाद सोचने लगे, यह तो कोई बड़ा ही शैतान है, किसी के लप्पड़, किसी के थप्पड़, अच्छी पहलवानी है! सारे शहर में तहलका मचा दिया। इसकी खबर न ली, तो कुछ न किया। यह सोचते ही मेरा शेर झपट पड़ा और पहलवान के पास जा कर घुटने से ऐसा धक्का दिया कि मियाँ पहलवान ने इतना बड़ा डील-डौल रखने पर भी बीस लुढ़कनियाँ खायीं। मगर पनलवान सँभलते ही उनकी तरफ झपट पड़ा। तमाशाई तो समझे कि पहलवान आज़ाद को चुर्र-मुर्र कर डालेगा, लेकिन आज़ाद ने पहले ही से वह दाँव-पेंच किये कि पहलवान के छक्के छूट गये, ऐसा दबाया कि छठी का दूध याद आ गया। उसने जैसे ही आज़ाद का बायाँ हाथ घसीटा, उन्होंने दाहने हाथ से उसका हाथ बाँधा और अपना छुड़ा, चुटकियों में कूले पर लाद, घुटना टेक कर मारा—चारों खाने चित! पहलवान अब तक कोरा था, किसी दंगल में आसमान देखने की नौबत न आयी थी। आज़ाद ने जो इतने आदमियों के सामने पटकनी बतायी, तो बड़ी किरकिरी हुई और तमाम उम्र के लिए दाग़ लग गया।

अब तो मियाँ आज़ाद जगत्-गुरु हो गये, एकरंग का रंग फीका पड़ गया, पहलवान ने पटकनी खायी, शहर भर में धूम हो गयी। जिधर से निकल जाते, लोग अदब करते थे। जिससे चार आँखें हुईं उसने जमीन चूम कर सलाम किया। अच्छे-अच्छे बाँकों की कोर दबने लगी। जहाँ किसी शहज़ोर ने कमजोर को दबाया और उसने गुल मचाया—दोहाई मियाँ आज़ाद की, और यह बोंड़ी ले कर आ पहुँचे। किसी बदमाश ने कमज़ोर को दबाया और उसने डाँट बतायी—नहीं मानते, बुलाऊँ मियाँ आज़ाद को? शोहदे-लुच्चे उनसे ऐसे थर्राते थे, जैसे चूहे बिल्ली से, या मरीज़ तिल्ली से। नाम सुना और बगलें झाँकने लगे; सूरत देखी और गली-कूचों में दबक रहे। शहर भर में उनका डंका बज गया।

एक दिन आज़ाद सिरोही लिये ऐंड़ते जा रहे थे कि एक दर्ज़ी की दूकान के पास से निकले। देखते क्या हैं, रँगीले छैले, बाँके जवान छोटे पंजे का मखमली जूता पहने, जुल्फें लटकाये, छुरी कमर से लगाये दर्ज़ी से तकरार कर रहे हैं। वाह मियाँ ख़लीफ़ा! तुमने तो हमें उलटे छूरे मूड़ा! खुदा जाने, किस कतर-ब्योंत में रहते हो। सीना-पिरोना तो नाम का है, हाँ, ज़बान अलबत्ता कतरनी की तरह चला करती है। तुमसे

कपड़े सिलवाना अपनी मिट्टी खराब करना है। दम धागा देना खूब जानते हो। टोपी ऐसी भोंड़ी बनायी कि फबतियाँ सुनते-सुनते नाकों दम आ गया

दर्ज़ी--ऐ तो हुज़ूर, मैं इसको क्या करूँ? मेरा भला इसमें क्या कुसूर है? आपका सिर ही टेढ़ा है। मैं टोपी बनाता हूँ, सिर बनाना नहीं जानता।

बाँके—चोंच सँभाल, बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न बना। बाँकों के मुँह लगता है? और सुनिए, हमारा सिर टेढ़ा है। अबे, तेरा सिर साँचे का ढला है? तेरे ऐसे दर्ज़ी मेरी जेब में पड़े रहते हैं, मुँह बंद कर, नहीं दूँगा उलटा हाथ, मुँह टेढ़ा हो जायगा। और तमाशा देखिए, हमारा सिर गोया कद्दू हो गया है।

दर्ज़ी--आप मालिक हैं, मुल मेरी खता नहीं। जैसा सिर वैसी टोपी। ऐसा सिर तो मैंने देखा ही नहीं; यह नयी गढ़ंत का सिर है, आप फरे लें, बस, मैं सी चुका। जब दाम देने का वक्त आया, तो यह झमेला किया।

यह सुनते ही बाँके ने दर्जी को इतना पीटा कि वह बेचारा बेदम हो गया। आखिर कफ़न फाड़ कर चीखा, दोहाई मियाँ आज़ाद की, दोहाई मेरे उस्ताद की। आज़ाद तो दूर से खड़े देख ही रहे थे, झट तलवार सैंत दूकान पर पहुँच गये। बाँके ने पीछे फिर कर देखा, तो मियाँ आज़ाद।

आज़ाद–वाह भाई बाँके, तुम सचमुच रुस्तम हो। बेचारे दर्ज़ी पर सारी चोटें साफ कर दीं। कभी किसी कड़ेखाँ से भी पाला पड़ा है? कहीं गोहार भी लड़ा है? या गरीबों ही पर शेर हो? बड़े दिलेर हो तो आओ, हमसे भी दो-दो हाथ हो जायँ। तुम ढेर हो जाओ, या हम चरका खायँ। आइए, फिर पैतरा बदलिए, लगा बढ़ कर हाथ, इधर या उधर।

बाँके--हैं, हैं, उस्ताद, हमीं पर हाथ साफ़ करोगे, हम नौसिखिये तुम गुरु-घंटाल। मगर आप इस कमीने दर्ज़ी की तरफ से बोलते हैं और शरीफ़ों पर तलवार तौलते हैं! सुभान अल्लाह! आइए, आपसे कुछ कहना है।

आज़ाद—अच्छा, तोबा करो कि अब किसी ग़रीब को न धमकायेंगे।

बाँके--अजी हज़रत, धमकाना कैसा, हम तो खुद ही बला में फँसे हैं; खुदा ही बचाये, तो बचें। यहाँ एक फिकैत है, उससे हमसे लाग-डाँट हो गयी है। कल नौचंदी के मेले में हमें घेरेगा, कोई दो सौ बाँकों के जत्थे से हम पर हरबा करना चाहता है। हम सोचते हैं कि दरगाह न जायँ, तो बाँकपन में बट्टा लगता है, और जायँ, तो किस बिरते पर? यार, तुम साथ चलो तो जान बचे, नहीं तो बेमौत मरे।

आज़ाद—अच्छा, तुम भी क्या कहोगे! लो, बीड़ा उठा लिया कि कल तुमको ले चलेंगे और सबसे भिड़ पड़ेंगे, दो सौ हों, चाहे हज़ार, हम हैं और हमारी कटार, इतनी कटारें भोकूँ कि दम बंद हो जाय। मगर यह बता दो कि कुसूर तुम्हारा तो नहीं है?

बाँके—नहीं उस्ताद, कसम ले लो, जो मेरी तरफ़ से पहल हुई हो। मुझसे उन्होंने एक दिन अकड़ कर कहा कि तू तलवार न बाँधा कर। मैं भी, आप जानिए,

इनसान हूँ। पित्ता तो मछली के भी होता है। मुझे भी गुस्सा आ गया। मैंने कहा, धत् ! तू और हमसे हथियार रखवा ले ? बस, बिगड़ ही तो गया और पंद्रह-बीस आदमी उसकी तरफ़ से बोलने लगे। मैंने भी जवाब दिया, दबा नहीं। मगर लड़ पड़ना मसलहत न थी। बाँका हूँ, तो क्या हुआ, बिना समझे-बूझे बात नहीं करता। खैर, उसने ललकार कर कहा—अच्छा बचा, दरगाह में समझ लेंगे, अब की नौचंदी में हमीं न होंगे, या तुम्हीं न होगे।

आज़ाद—अच्छा, तुम लैस रहना, मैं दो घड़ी दिन रहे आऊँगा, घबराओ नहीं, तुम्हारा बाल-बाँका हो, तो मूँछ मुड़ा दूँ। ये दो सो आदमी देखने ही भर के होंगे। सच्चे दिलेर उनमें दो-ही चार होंगे, जो आज़ाद की तलवार का सामना करें। मौत से लड़ना दिल्लगी नहीं है; कलेजा चाहिए !

दूसरे दिन आज़ाद हथियार बाँध कर चले, तो रास्ते में बाँके मिल गये और दोनों साथ-साथ टहलते हुए दरगाह पहुँचे।

नौचंदी जुमेरात, बनारस का बुढवामंगल मात; चारों तरफ चहल-पहल; कहीं 'तमाशाइयों' का हुजूम, हटो-बचो की धूम; आदमी पर आदमी टूटे पड़ते हैं, कोसों का ताँता लगा हुआ है, मेवेवाले आवाज़ लगा रहे हैं, तंबोली बीड़े बना रहे हैं, गँड़ेरिया हैं केवड़े की, रेवड़ियाँ हैं गुलाब की। आज़ाद घूरते-घारते फाटक पर दाखिल हुए, तो देखा, सामने तीस-चालीस आदमियों का गोल है। बाँके ने कान में कहा कि यही हजरत हैं, देख लीजिए, दंगे पर आमादा हैं या नहीं।

आज़ाद—भला, यहाँ तुम्हारा भी कोई जान-पहचान है ? हो, तो दस-पाँच को तुम भी बुला लो; भीड़-भड़क्का तो हो जाय। लड़नेवाले हम क्या कम हैं—मगर दो-चार जमाली खरबूज़े भी चाहिए, डाली की रौनक़ हो जाय।

बाँके—अभी लाया, आप ठहरें; मगर बाहर टहलिए, तो अच्छा है, यहाँ जोखिम है।

आज़ाद फाटक के बाहर टहलने लगे। फिकैत ने जो देखा कि दोनों खिसके, तो आपस में हाँड़ियाँ पकने लगीं—वह भगाया ! वह हटाया ! भागा है ! उनके साथियों में से एक ने कहा—अजी, वह भागा नहीं है, एक ही काइयाँ है, किसी टोह में गया है। एक बिगड़ेदिल बाहर गये, तो देखा, बाँके पश्चिम की तरफ गर्दन उठाये चले जाते हैं, और मियाँ आज़ाद फाटक से दस क़दम पर टहल रहे हैं। उलटे पाँव आ कर खबर दी—उस्ताद, बस, यही मौक़ा है, चलिए, मार लिया है, बायें हाथ चला जाता है, और अकेला है। सब दूसरे फाटक से चढ़ दौड़े। ठहर बे, ठहर ! बस, रुक जा, आगे क़दम बढ़ाया, और ढेर हुए ! हिले, और दिया तुला हुआ हाथ। याद है कि नहीं, आज नौचंदी है। लोगों ने चारों तरफ से घेर लिया। बाँके का रंग फ़क़ कि ग़ज़ब ही हो गया ! अब कुत्ते की मौत मरे। किस-किससे लड़ूँगा ? एक की दवा दो कि सौ। मियाँ आज़ाद को कोई खबर कर देता, तो वह झपट ही पड़ते; मगर जब

तक कोई जाय-जाय, हमारा काम तमाम हो जायगा। एक यार ने बढ़कर बेचारे मुसीबत के मारे बाँके के एक लठ लगा दिया, बायें हाथ की हड्डी टूट गयी। गुल-गपाड़े की आवाज़ आज़ाद ने भी सुनी। भीड़ काट कर पहुँचे, तो देखा, बाँके फँसे हुए हैं। तलवार को टेका और दन से उस पार हुए। ख़बरदार खिलाड़ी! हाथ उठाया और मैंने टेटुआ लिया। बाँके के दिल में ढाढ़स हुआ, जान बची, नयी जिन्दगी हुई। इतने में मियाँ आज़ाद ने तलवार म्यान से निकाली और पिल पड़े। तलवार का चमकना था कि फिकैत के सब साथी हुर्र हो गये, मैदान खाली, मियाँ आज़ाद और बाँके एक तरफ, फिकैत और दो साथी दूसरी तरफ, बाक़ी रफूचक्कर। एक ने आजाद पर तमंचा चलाया, मगर ख़ाली गया। आज़ाद ने झपट कर उसको ऐसा चरका दिया कि तिलमिला कर गिर पड़ा। दूसरे जवान दस कदम पीछे हट गये। बाँके भी खिसक गये। अब आज़ाद और फिकैत आमने-सामने रह गये। वह कड़क कर झुका, इन्होंने चोट रोक कर सिर पर हाथ लगाना चाहा, उसने रोका और चाकी का हाथ दिया। आध घंटे तक शपाशप तलवार चला की। आखिर आज़ाद ने बढ़ कर 'जनेऊ' का वह हाथ लगाया कि 'भंडारा' तक खुल गया, मगर फिकैत भी गिरते-गिरते 'बाहरा' दे ही गया। इधर यह, उधर वह धम से गिरे। तब बाँके दौड़े और आज़ाद को उठा कर घर ले गये।

२

आज़ाद की धाक ऐसी बँधी कि नवाबों और रईसों में भी उनका ज़िक्र होने लगा। रईसों को मरज होता है कि पहलवान, फिकैत, बिनवटिये को साथ रखें, बग्घी पर ले कर हवा खाने निकलें। एक नवाब साहब ने इनको भी बुलवाया। यह छैला बने हुए, दोहरी तलवार कमर से लगाये जा पहुँचे। देखा, नवाब साहब, अपनी माँ के लाड़ले, भोले-भाले, अँधेरे घर के उजाले, मसनद पर बैठे पेचवान गुड़ागुड़ा रहे हैं। सारी उम्र महल के अन्दर ही गुज़री थी, कभी घर के बाहर जाने तक की भी नौबत न आयी थी, गोया बाहर क़दम रखने की क़सम खायी थी। दिनभर कमरे में बैठना, यारों-दोस्तों से गपें उड़ाना, कभी चौसर रंग जमाया, कभी बाजी लड़ी, कभी पौ पर गोट पड़ी, फिर शतरंज बिछी, मुहरे खट-खट पिटने लगे। किश्त! वह घोड़ा पीट लिया, वह प्यादा मार लिया। जब दिल घबराया, तब मदक का दम लगाया, चंडू के छींटे उड़ाये, अफ़ीम की चुसकी ली। आज़ाद ने झुक कर सलाम किया। नवाब साहब खुश हो कर गले मिले, अपने करीब बिठाया और बोले—मैंने सुना है, आपने सारे शहर के बाँकों के छक्के छुड़ा दिये।

आज़ाद—यह हुजूर का इक़बाल है, वरना मैं क्या हूँ।

नवाब—मेरे मुसाहबों में आप ही जैसे आदमी की कमी थी, वह पूरी हो गयी, अब खूब छनेगी।

इतने में मीर आगा बटेर को मूठ करते हुए आये और सलाम कर के बैठ गये। जरा देर के बाद अच्छे मिर्ज़ा गन्ना छीलते हुए आये और एक कोने में जा डटे। मियाँ झम्मन अँगरखे के बंद खोले, गुद्दी पर टोपी रखे खट से मौजूद। फिर क्या था, तू आ, मैं आ। दस-पंद्रह आदमी जमा हो गये, मगर सब झंडे-तले के शोहदे, छटे हुए गुरगे थे। कोइ चीनी के प्याले में अफ़ीम घोल रहा है, कोई चंडू का क़िवाम बना रहा है, किसी ने गँड़ेरियाँ बनायीं, किसी ने अमीर-हमजा का किस्सा छेड़ा, सब अपने-अपने धंधे में लगे। नवाब साहब ने मीर आग़ा से पूछा—मीर साहब, आपने खुश्के का दरख्त भी देखा है?

मीर आग़ा—हजूर, क़सम है जनाब अमीर की, सत्तर और दो बहत्तर बरस की उम्र होने को आयी, गुलाम ने आज तक आँखों से नहीं देखा, लेकिन होगा बड़ा दरख्त। सारी दुनिया की उससे परवरिश होती है, जिसे देखो, खुश्के पर हत्थे लगाता है।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ, दरख्त के बड़े होने में क्या शक है। कश्मीर से ले कर, कुरबान जाऊँ, बड़े गाँव तक और लंदन से ले कर विलायत तक, सबका इसी पर दारमदार है।

नवाब—मेरा भी ख़याल यही है कि दरख्त होगा बहुत बड़ा; लेकिन देखने की बात यह है कि आख़िर किस दरख्त से ज़्यादा मिलता है। अगर यह बात मालूम हो जाय, तो फिर जानिए कि एक नयी बात मालूम हुई। और भाई, सच पूछो, तो छान-बीन करने ही में ज़िंदगी का मज़ा है।

अच्छे मिर्ज़ा—सुना बरगद का दरख्त बहुत बड़ा होता है। झूठ-सच का हाल ख़ुदा जाने; नीम का पेड़ तो हमने भी देखा है, लेकिन किसी शायर ने नीम के दरख्त की बड़ाई की तारीफ नहीं की।

छुट्टन—हमने केले का पेड़, अमरूद का पेड़, ख़रबूज़े का पेड़ सब इन्हीं आँखो देख डाले।

आज़ाद—भला, यहाँ किसी ने वाहवाह की फलियों का पेड़ भी देखा है?

छुट्टन—जी हाँ, एक दफ़े नैपाल की तराई में देखा था, मगर शेर जो डकारा, तो मैं झप से गेंदे के दरख्त पर चढ़ गया। कुछ याद नहीं कि पत्ती कैसी होती है।

नवाब—ख़ुश्के के दरख्त का कुछ हाल दरियाफ़्त करना चाहिए।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ, इन लोगों का एतबार क्या? सब सुनी-सुनायी कहते हैं! कुरबान जाऊँ, गुलाम ने वह बात सोची है कि सुनते ही फड़क जाइये।

नवाब—क़हिए, कहिए! ज़रूर कहिए! आपको क़सम है। मुझे यक़ीन हो गया कि आप दूर की कौड़ी लाये होंगे।

अच्छे मिर्ज़ा—(कतारे को खड़ा करके) कुरबान जाऊँ, अगर ख़ुश्के का दरख्त होगा, तो इस कतारे के बराबर ही होगा, न जौ भर बड़ा, न तिल भर छोटा।

नवाब—वाह मीर साहब, वाह, क्या बात निकाली!

मुसाहब—सुभान अल्लाह मीर साहब, क्या सूझ-बूझ है!

आज़ाद—आप तो अपने वक्त के लाल बुझक्कड़ निकले! मालूम होता है, सफ़र बहुत किया है।

अच्छे मिर्ज़ा—कौन, मैंने सफ़र! क़सम लो, जो नख़ास से बाहर गया हूँ। मगर, कुरबान जाऊँ, लड़कपन ही से ज़हीन था। अब्बाजान तो बिलकुल बेवक़ूफ़ थे, मगर अम्माँजान तो बला की औरत थीं, बात में बात पैदा करती थीं।

इतने में गुल-गपाड़े की आवाज आयी। अंदर से मुबारकक़दम लौंडी सिर पीटती हुई आयी—हुज़ूर, मैं सदक़े, जल्दी चलिए, यह हंगामा कहाँ हो रहा है? बड़ी बेगम साहबा खड़ी रो रही हैं कि मेरे बच्चे पर आँच न आ जाय।

नवाब साहब जूतियाँ छोड़कर अंदर भागे। दरवाजे सब बंद! अब किसी को हुक्म नहीं कि ज़ोर से बोले। इतने में एक मुसाहब ने ड्योढ़ी पर से पुकारा—हुज़ूर, फिर आखिर मियाँ आज़ाद किस मरज की दवा हैं? गँड़ेरी छीलने के काम के नहीं, क़िवाम बनाना नहीं जानते, बटेर मुठियाना नहीं आता, इनको भेज कर दरियाफ़्त न कराइये कि दंगा कहाँ हो रहा है।

मुबारकक़दम—हाँ, हाँ भेज दीजिए; कहिए, कुत्ते की चाल जायें और बिल्ली की चाल आयें।

मियाँ आज़ाद ने कटार सँभाली और बाहर निकले। राह में लोगों से पूछते जाते हैं कि भाई, यह फ़िसाद क्या है? एक ने कहा, अजी चिकमंडी में छुरी चली। पाँच-चार क़दम आगे बढ़े, तो दो आदमी बातें करते जाते थे कि पंसारी ने पुड़िया में कद्दू के बीजों की जगह जमाल-गोटा बाँध दिया। गाहक ने बिगड़ कर पंसारी की गर्दन नापी। और दस क़दम चले तो एक आदमी ने कहा, वह तो कहिए ख़ैरियत गुज़री कि जाग हो गयी नहीं तो भेड़िया घर भर को उठा ले जाता। यह भेड़िया कैसा जी? हुज़ूर, एक मनिहार के घर से भेड़िया तीन बकरियाँ, दो मेंढे, एक खरहा और एक खाली पिंजड़ा उड़ा ले गया। उसकी औरत को भी पीठ पर लाद चुका था कि मनिहार जाग उठा। अब आज़ाद चकराये कि भाई अजब बात है, जो है नयी सुनाता है। क़रीब पहुँचे तो देखा, पंद्रह-बीस आदमी मिल कर छप्पर उठाते हैं और गुल मचा रहे हैं। जितने मुँह उतनी बातें। और हँसी तो यह आती है कि नवाब साहब बदहवास हो कर घर के अंदर हो रहे। वहाँ से लौट कर यह क़िस्सा बयान किया, तो लोगों की जान में जान आयी, दरवाज़े खुले, फिर नवाब साहब बाहर आये।

नवाब—मियाँ आज़ाद, तुम्हारी दिलेरी से आज जी ख़ुश हो गया। आज मेरे यहाँ खाना खाना। आप ढाल नहीं बाँधते।

आज़ाद—हुज़ूर, ढाल तो जनानों के लिए है, हम उम्र भर एक-अंग लड़ा किये, तलवार ही से चोट लगायी और उसी पर रोकी, या खाली दी या काट गये। एक दिन आपको तलवार का कुछ हुनर दिखाऊँगा, आपकी आँखों में तलवार की बाढ़ से सुरमा लगाऊँगा।

नवाब—ना साहब, यह खेल उजड्डपन के हैं, मेरी रूह काँपती है, तलवार की सूरत देखते ही जूड़ी चढ़ आती है। हाँ, मिर्ज़ा साहब जीवट के आदमी हैं। इनकी आँखों में सुरमा लगाइये, यह उफ़ करने वाले नहीं।

अच्छे मिर्ज़ा—क़ुरबान जाऊँ हुज़ूर, अब तो बाल पक गये, दाँत चूहों की नज़र हुए, कमर टेढ़ी हुई, आँखों ने टका सा जवाब दिया, होश-हवास चंपत हुए। क्या कहूँ हुज़ूर, जब लोगों को गँड़ेरियाँ चूसते देखता हूँ, तो मुँह देख कर रह जाता हूँ।

इतने में मियाँ कमाली, मियाँ झम्मन और मियाँ दुन्नी भी आ पहुँचे।

कमाली—खुदावंद, आज तो अजीब ख़बर सुनी, हवास जाते रहे। शहर भर में खलबली मची है, अल्लाह बचाये, अबकी गरमी की फ़सल ख़ैरियत से गुज़रती नहीं नज़र आती, आसार बुरे हैं।

नवाब—क्यों? क्यों? ख़ैर तो है? क्या क़यामत आने वाली है या आफ़ताब सवा नेज़े पर हो रहा? आख़िर माजरा क्या है, कुछ बताओ तो सही।

अच्छे मिर्ज़ा—ऐ हुज़ूर, यह जब आते हैं, एक नया शिगोफा छोड़ते हैं। ख़ुदा जाने, कौन इनके कान में फूँक जाता है। ऐसी सुनायी की नशा हिरन हो गया, जम्हाइयाँ आने लगीं।

कमाली—अजी, आप किस खेत की मूली हैं, हमसे तो बड़े-बड़ों के नशे हिरन हुए हैं। जब पहली तारीख़ आयेगी, तो आँखें खुल जायँगीं, आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा। और दो-चार दिन मीठे टुकड़े उड़ा लो। वाह साहब, हम तो ढूँढ़-ढाँढ़ कर ख़बरें लायें, आप दिनभर पीनक में ऊँघा करें, और हमी को उल्लू बनायें। पहली को कलई खुल जायगी, बचा, सूरत बिगड़ जाय तो सही।

नवाब—क्या! क्या! पहली तारीख़ कैसी? अरे मियाँ, तुम तो पहेलियाँ बुझ-वाते हो, आखिर पहली को क्या होनेवाला है?

कमाली—ऐ हुज़ूर, यह न पूछिए, बस, कुछ कहा नहीं जाता। एक हलवाइन अभी जवान-जहान है। मारे हौंके के औटा हुआ दूध जो पी गयी तो पेट फूल कर कुप्पा हो गया। किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ नुस्ख़ा पिलाया; मगर वह अंटा-ग़ाफ़िल हो गयी। अब सुनिए कि जब चिता पर जाने लगी, कुलबुला कर उठ बैठी। अरे राम! अरे बाप-रे-बाप! यू का भवा? हलवाइयों ने वह बम-चख मचायी कि कुछ न पूछिए। 'यू देखो, लहास हिलत है! अरे यू का अंधेर भवा?' आख़िरकार दो-चार हलवाइयों ने जी कड़ा करके लाश को घसीट लिया और झटपट कफ़न फाड़ कर उसे निकाला, तो टैयाँ सी उठ बैठी। हुज़ूर, क़सम है ख़ुदा की, उसने वह वह बातें बयान कीं कि कही नहीं जातीं। जब मरी तो जमराज के दूतों ने मुझे उठा कर भगवान के पास पहुँचाया, सीता जी बैठी पूरी बेलत रहैं, हमका देखकै भगवान बोले कि इसको ले जाओ। मुझे उसकी बोली तो याद नहीं, मगर मतलब यह था कि पहली को बड़ा अँधेरा घुप छा जायगा और तूफान आयेगा, जितने गुनहगार बंदे हैं सब जलाये जायँगे, और अफ़ीमची जिस घर में होंगे उसको फ़रिश्ते जला कर ख़ाक-सियाह कर देंगे।

नवाब—मिर्ज़ा साहब, ये बोरिया-बँधना उठाइए, आपका यहाँ ठिकाना नहीं। नाहक़ कहीं फ़रिश्ते मेरी कोठी फूँक दें तो कहीं का न रहूँ। बस, बक़चा सँभालिए, कहीं और बिस्तर जमाइए।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ हुज़ूर, यह बड़ा बेईमान आदमी है। हुज़ूर तो भोलेभाले रईस हैं, जिसने जो कहा मान लिया। भला कहीं फ़रिश्ते घर फूँका करते हैं? मुझ बुड्ढे को न निकालिए, कई पुश्तें इसी दरबार में गुजर गयीं, अब किसका दामन पकड़ूँ? अरे वाह रे झूठे, अच्छी बेपर की उड़ायी, हलवाइन मरी भी और जी भी उठी, बेसिरपैर की बात।

नवाब—ख़ैर, कुछ भी हो, आप अपना सुबीता करें। मेरे बाप-दादा की मिल-कियत कहीं फ़रिश्ते फूँक दें तो बस! आप हैं किस मरज की दवा? चारपाइयाँ तोड़ा करते हैं।

अच्छे मिर्ज़ा—वाह री किस्मत ? यहाँ जान लड़ा दी, बकरे की जान गयी, खानेवाले को मज़ा न आया। इस शैतान से ख़ुदा समझे, जिसने मेरे हक़ में काँटे बोये। ख़ुदा करे, इसका आज के सातवें ही दिन जनाज़ा निकले। जैसे ही आ कर बैठा, मेरी बायीं आँख फड़कने लगी, तो यह गुल खिला।

नवाब साहब मुसाहबों को यह नादिरी हुक्म दे कर ज़नानख़ाने में चले गये कि मिर्ज़ा को निकलवा दो। उनके जाते ही मिर्ज़ा की ले-दे शुरू हो गयी।

क़माली—मिर्ज़ा साहब, अफ़ीम का डब्बा बगल में दबाइए और चलते-फिरते नज़र आइए। सरकार का नादिरी हुक्म है और छोटी बेगम साहिबा महनामथ मचा रही हैं कि इस बुड्ढे को खड़े-खड़े निकाल दो। सो अब खिसकिए, नहीं बुरी होगी।

झम्मन—वाजिबी बात है, सरकार चलते-चलते हुक्म दे गये थे। हम लोग मजबूर हैं, अब आप अपना सुबीता कीजिए, अभी सबेरा है, नहीं हम पर पिट्टस पड़ेगी। और भाई, जब फ़रिश्तों के आने का डर है तो कोई तुमको क्योंकर अपने घर में रहने दे ? कहीं एक जरा सी चिनगारी रख दें, तो कहिए मकान जल कर ख़ाकसियाह हो गया कि नहीं, फिर कैसी होगी ?

अच्छे मिर्ज़ा—अबे, तो फ़रिश्ते कहीं गाँव जलाया करते हैं। वह ऊटपटाँग बातें बकता है। लो साहब, हमारे रहने में जोखिम है, जो आठों पहर ड्योढ़ी पर बने रहते है। अच्छा अड़ंगा दिया।

झम्मन—अड़ंगा-वड़ंगा मैं नहीं जानता, अब आप खसकंत की ठहराइए, बहुत दिन मीठे टुकड़े उड़ाये, चुगलियाँ खा-खा कर रईस का मिज़ाज बिगाड़ दिया, किसी से ज़रा सी ख़ता हुई और आपने जड़ दी। 'भुस में चिनगी डाल जमालो अलग खड़ी।' पचासों भलेमानसों की रोटी ली। इनसान से गलती हो ही जाती है, यह चुग़ली खाना क्या माने। ओ ग़फ़ूर मिर्ज़ा ने तुम्हें भी तो उखाड़ना चाहा था ?

ग़फ़ूर—अरे, यह तो अपने बाप की जड़ खोदनेवाले आदमी हैं, भीतर से बाहर तक कोई तो इनसे ख़ुश नहीं।

दुन्नी—मिर्ज़ा, अगर कुछ हया है तो इस मुसाहबी पर लात मारो; जिस अल्लाह ने मुँह चीरा है वह रोज़ी भी देगा।

मुबारकक़दम—ग़फ़ूर। ग़फ़ूर ! छोटी बेगम साहबा का हुक्म है कि इस मुए अफ़ीमची को शहर से निकाल दो। कहती हैं, जब तक यह न टलेगा दाहने हाथ का खाना हराम है।

अच्छे मिर्ज़ा—शहर से निकाल दो। तमाम शहर पर बेगम साहब का क्या इजारा है ? वह अभी कल आयीं, यहाँ इस घर में उम्र बीत गयी।

क़माली—अबे ओ नमकहराम, छोटा मुँह बड़ी बात ! बेगम साहबा के कहने को दुलखता है। इतनी पड़ेंगी बेभाव की कि याद करोगे, चाँद गंजी कर दी जायगी।

अच्छे मिर्ज़ा—अब जो यहाँ पानी पिये उस पर लानत !

यह कह कर मिर्ज़ा ने अफ़ीम की डिबिया उठायी और चले। मुसाहबों ने उनके जलाने के लिए कहना शुरू किया—मिर्ज़ा जी, कभी-कभी आ जाया कीजिएगा। एक बोला—लाइए डिबिया, मैं पहुँचा दूँ। दूसरा बोला—कहिए तो घोड़ा कसवा दूँ। मिर्ज़ा ने किसी को कुछ जबाब न दिया, चुपके से चले ही गये।

इधर पहली तारीख़ आयी तो मियाँ कमाली चकराये कि अब मैं झूठा बना, और साख गयी। लोगों ने नवाब को चंग पर चढ़ाया कि हुजूर, जो हम कहें वह कीजिए, तो आज की बला टल जाय। नवाब ने मुसाहबों को सारा अख्तियार दे दिया। फिर क्या था, एक तरफ ब्राह्मण देवता बैठे मंत्रों का जप कर रहे हैं, हवन हो रहा है, और स्वाहा-स्वाहा की आवाज़ आ रही है, दूसरी तरफ हाफ़िज़ जी कुरान पढ़ रहे हैं, और दीवानख़ाने में महफ़िल जमी हुई है कि फ़रिश्तों को झँझोटी की धुन सुना कर खुश कर लिया जाय।

झम्मन—मिर्ज़ा जी न सिधारते तो ख़ुदा जाने इस वक्त क्या कुछ हो गया होता।

नवाब—होता क्या, कोठी की कोठी भक से उड़ जाती। अब किसी अफ़ीमची को आने तक न दूँगा।

२

३

नवाब साहब के दरबार में दिनोंदिन आज़ाद का सम्मान बढ़ने लगा। यहाँ तक कि वह अक्सर खाना भी नवाब के साथ ही खाते। नौकरों को ताकीद कर दी गयी कि आज़ाद का जो हुक्म हो, वह फौरन बजा लायें, ज़रा भी मीनमेख न करें। ज्यों-ज्यों आज़ाद के गुण नवाब पर खुलते जाते थे, और मुसाहबों की किरकिरी होती जाती थी। अभी लोगों ने अच्छे मिर्ज़ा को दरबार से निकलवाया था, अब आज़ाद के पीछे पड़े। यह सिर्फ़ पहलवानी ही जानते हैं, गदके और बिनवट के दो-चार हाथ कुछ सीख लिये हैं, बस, उसी पर अकड़ते फिरते हैं कि जो कुछ हूँ, बस, मैं ही हूँ। पढ़े-लिखे वाजिबी ही वाजिबी हैं, शायरी इन्हें नहीं आती, मज़हबी मुआमिलों में बिलकुल कोरे हैं।

एक दिन नवाब साहब के सामने एक साहब बोल उठे—हुज़ूर, इस शहर में एक आलिम आया है, जो मंतिक (न्याय) के ज़ोर से झूठ को सच कर दिखाता है। मगर ख़ुदा को नहीं मानता, पक्का मुनकिर (नास्तिक) है। मियाँ आज़ाद को तो मंतकी बनने का दावा है। कहिए, उस आलिम को नीचा दिखायें।

आज़ाद—हाँ! हाँ, जब कहिए तब, मुझे तो ऐसे मुनकिरों की तलाश रहती है। लाइए मंतकी साहब को, ख़ुदा का वह पक्का सबूत दूँ कि वह ख़ुद फड़क जायँ, ज़रा यहाँ तक लाइए तो सही, भागे राह न मिले। जो फिर इस शहर में मुँह दिखायें, तो आदमी न कहना।

नवाब—हाँ! हाँ! मीर साहब, ज़रा उनको फाँस-फूँस कर लाइए, तो मियाँ आज़ाद के जौहर तो खुलें।

मीर साहब ने ज़ोर से हुक्के के दो-चार दम लगाये और झप से उस आलिम को बुला लाये। हज़ारों आदमी बहस सुनने के लिए जमा हो गये, गोया बटेरों की पाली है। इतनी भीड़ थी कि थाली उछालिए तो सिर ही सिर जाय। आलिम ने आते ही पूछा कि कौन साहब बहस करेंगे? मियाँ आज़ाद बोले—हम हैं। अब सब लोग बेक़रार हो रहे हैं कि देखें, क्या सवाल-जवाब होते हैं, चारों तरफ़ खिचड़ी पक रही है।

आलिम—जनाब, आप तो किसी अखाड़े के पट्ठे मालूम होते हैं, सूरत से तो ऐसा मालूम होता है कि आपको मंतिक छू भी नहीं गयी।

आज़ाद—जी, सूरत पर न जाइएगा, कोई सवाल कीजिए, तो हम जवाब दें।

आलिम—अच्छा, पहले इन तीन सवालों का जवाब दीजिए—

(१) ख़ुदा है, तो हमें नज़र क्यों नहीं आता?

(२) शैतान दोज़ख़ में जलाया जायगा। भला नारी (आग से बने हुए) को आग का क्या डर? आग आग में नहीं जल सकती।

(३) जो करता है, ख़ुदा करता है, फिर इन्सान का क़सूर क्या।

चारों तरफ सन्नाटा पड़ गया कि वाह, क्या आलिम है, कैसे कड़े सवाल किये हैं कि कुछ जवाब ही नहीं सूझता। बिगड़े दिल लोग दाँत पीस रहे हैं कि बाहर निकले तो गरदन भी नापें। मियाँ आज़ाद कुछ देर तक तो चुपचाप खड़े रहे, फिर एक ढेला उठा कर उस आलिम की खोपड़ी पर मारा, बेचारा हाय कर के बैठ गया। अच्छे जंगली से पाला पड़ा, मैं बहस करने आया था या लप्पा-डुग्गी। जब कुछ जवाब न सूझा तो पत्थर मारने लगे। जो मैं भी एक पत्थर खींच मारूँ तो कैसी हो? नवाब साहब, आप ही इन्साफ कीजिए।

नवाब—भाई आज़ाद, हमें यह तुम्हारी हरकत पसंद नहीं आयी। इस ढेलेबाज़ी के क्या माने? माना कि मुनकिर गरदन मारने लायक होता है; मगर बहस करके क़ायल कीजिए, यह नहीं कि जूता खींच मारा या ढेला तान कर मारा।

कमाली—हुजूर, आलिम का जवाब देना कारेदारद है। ढेलेबाज़ी करना दूसरी बात है।

झम्मन—अजी, इसने बड़े-बड़े आलिमों को सर कर दिया, भला आज़ाद क्या इसके मुँह आयँगे।

नवाब—यह पत्थर क्यों फेंका जी, बोलते क्यों नहीं?

आज़ाद—हुजूर, मैंने तो इनके तीनों सवालों का वह जवाब दिया कि अगर कोई कदरदाँ होता तो गले से लगा लेता और करोड़ों रुपये इनाम भी देता, सुनिए—

(१) खुदा है, सो हमें नजर क्यों नहीं आता?

जवाब—अगर उस ढेले से उनको चोट लगी, तो चोट नज़र क्यों नहीं आती?

सुभान अल्लाह का दौंगड़ा बरस गया। वाह उस्ताद! क्या जवाब दिया है कि दाँत खट्टे कर दिये।

(२) शैतान को जहन्नुम में जलाना बेकार है, वह तो खुद नारी (अग्नि मय) है।

जवाब—इनसे पूछिए कि यह मिट्टी के ही पुतले हैं या नहीं? इनकी खोपड़ी मिट्टी की बनी है या रबड़ की? फिर मिट्टी का ढेला लगा, तो सिर क्यों भन्ना गया?

तमाशाइयों ने गुल मचाया—सुभान अल्लाह! वाह मियाँ आज़ाद! क्या मुँह तोड़ ज़वाब दिया है।

(३) जो करता है खुदा करता है।

जवाब—फिर ढेले मारने का इलज़ाम हम पर क्यों है?

चारों तरफ टोपियाँ उछलने लगीं—वाह मेरे शेर! क्या कहना है! कहिए, अब तो आप खुदा के कायल हुए, या अब भी कुछ मीनमेख है? लाख बातों की एक बात यह है कि जब आपका सिर मिट्टी का है और मिट्टी ही का ढेला मारा, तब आपकी खोपड़ी क्यों भन्नायी? मियाँ मुनकिर बहुत झेंपे, समझ गये कि यहाँ शोहदों का जमघट है, चुपके से अपने घर की राह ली। आज़ाद की और भी धाक बँधी। अब तक तो पहलवान

और फिकैत ही मशहूर थे, अब आलिम भी मशहूर हुए। नवाब ने पीठ ठोंकी—वाह, क्यों न हो! पहले तो मैं झल्लाया कि ढेलेबाज़ी कैसी; मगर फिर तो फड़क गया।

मुसाहबों का यह वार भी ख़ाली गया, तो फिर हँड़िया पकने लगी कि आज़ाद को उखाड़ने की कोई दूसरी तदबीर करनी चाहिए। अगर यह यहाँ जम गया, तो हम सभी को निकलवा कर छोड़ेगा। यह राय हुई कि नवाब साहब से कहा जाय, हुज़ूर, आज़ाद को हुक्म दें कि बटेरों को मुठियायें, बटेरों को लड़ायें। फिर देखें, बचा क्या करते हैं। बगलें न झाँकने लगें तो सही। यह हुनर ही दूसरा है।

आपस में यह सलाह कर एक दिन मियाँ कमाली बोले—हुज़ूर, अगर मियाँ आज़ाद बटेर लड़ायें, तो सारे शहर में हुज़ूर की धूम हो जाय।

नवाब—क्यों मियाँ आज़ाद, कभी बटेर भी लड़ाये हैं?

झम्मन—आज हमारी सरकार में जितने बटेर हैं, उतने तो मटियाबुर्ज़ के चिड़िया-ख़ाने में भी न होंगे। एक-एक बटेर हज़ार-हज़ार की ख़रीद का, नोकदम के बनाने में तोड़े-के-तोड़े उड़ गये, सेरों मोती तो पीस कर मैंने अपने हाथों खिला दिये हैं, कुछ दिनों रोज़ खरल चलता था। मगर आप भी कहेंगे कि हम आदमी हैं! इस ड्योढ़ी पर इतने दिनों से हो, अब तक बटेरख़ाना भी न देखा? लो आओ, चलो, तुमको सैर करायें।

यह कह कर आज़ाद को बटेरख़ाने ले गये। मियाँ आज़ाद क्या देखते हैं कि चारों तरफ़ काबुकें ही काबुकें नज़र आती हैं, और काबुकें भी कैसी, हाथीदाँत की तीलियाँ, उन पर गंगाजमुनी कलस, कारचोबी छतें, कामदार मख़मली गिलाफ़ें, रंगबिरंग सोने-चाँदी की नन्हीं-नन्हीं कटोरियाँ, जिनमें बटेर अपनी प्यारी-प्यारी चोंचों से पानी पियें, पाँच-पाँच छह-छह सौ लागत की काबुकें थीं, खूँटियाँ भी रंगबिरंगी। दुन्नी मियाँ एक-एक काबुक उतार कर बटेर की तारीफ़ करने लगे, तो पुल बाँध दिये। एक बटेर को दिखा कर कहा—अल्लाह रखे, क्या मझोला जानवर है! सफ़शिकन (दलसंहार) जो आपने सुना हो, तो यही है। लंदन तक ख़बर के काग़ज़ में इनका नाम छप गया। मेरी जान की कसम, ज़रा इसकी आनबान तो देखिएगा। हाय, क्या बाँका बटेर है! यह नवाब साहब के दादाजान के वक्त का है। ऐसे रईस पैदा कहाँ होते हैं! दम के दम में लाखों फूँक दिये, रुपये को ठीकरा समझ लिया। पतंगबाज़ी का शौक हुआ, तो शहर भर के पतंगबाज़ों को निहाल कर दिया, कनकौवेवाले बन गये। अजी, और तो और, लौंडे, जो गली-कूचों में लंगर और लग्गे ले लेकर डोर लूटा करते हैं, रोज डोर बेच-बेच कर चखौतियाँ करते थे। अफ़ीम का शौक हुआ, तो इतनी खरीदी कि टके सेर से सोलह रुपये सेर तक बिकने लगी। मालवा खाली, चीन खुक्खल, बंबई तक के गन्ने आते थे।

आज़ाद—ऐसे ही कितने रईस बिगड़ गये!

कमाली—रईसों के बनने-बिगड़ने की क्या फ़िक्र! यहाँ तो जो शौक़ किया, ऐसा ही किया; फिर भला बटेरबाज़ी में उनके सामने कौन ठहरता। उनके वक्त़ का अब यह

एक सफ़शिकन बाक़ी रह गया है। बुज़ुर्गों की निशानी है। बस, यह समझिए कि मुहम्मद-अली शाह के वक़्त में ख़रीदा गया था। अब कोई सौ वर्ष का होगा, दो कम या दो ऊपर, मगर बुढ़ापे में भी वह दमख़म है कि मुर्ग़ को लपक कर लात दे तो वह भी चें बोल जाय। पारसाल की दिल्लगी सुनिए, नवाब साहब के मामूँ तशरीफ़ लाये। उनमें भी रियासत की बू है। कनकौवा तो ऐसा लड़ाते हैं कि मियाँ विलायत उनके आगे पानी भरें। दो-दो तोले अफ़ीम पी जायँ और वही ख़मदम! बटेरबाज़ी का भी परले सिरे का शौक़ है। उनका ज़फ़रपैकर तो बला का बटेर है, बटेर क्या है, शेर है। मेरे मुँह से निकल गया कि हुज़ूर को तो बटेरों का बहुत शौक़ है, करोड़ों ही बटेर देख डाले होंगे, मगर सफ़-शिकन सा बटेर तो हुज़ूर ने भी न देखा होगा। बोले, इसकी हक़ीक़त क्या है, ज़फ़र-पैकर को देखो तो आँखें खुल जायँ, बढ़कर एक लात दे, तो सफ़शिकन क्या, आपको नोकदम पाली बाहर कर दे। हौसला हो, तो मँगवाऊँ।

'दूसरे दिन पाली हुई। हज़ारों आदमी आ पहुँचे। शहर भर में धूम थी कि आज बड़े मार्के का जोड़ है। ज़फ़रपैकर इस ठाट से आया कि ज़मीन हिल गयी, और मेरा तो कलेजा दहलने लगा। मगर शफ़शिकन ने उस दिन आबरू रख ली, जभी तो नवाब साहब इसको बच्चों से भी ज़्यादा प्यार करते हैं। पहले इसको दाना खिलवा लेते हैं, फिर कहीं आप खाते हैं। एक दिन ख़ुदा जाने; बिल्ली देखी या क्या हुआ कि अपने आप फड़कने लगा। नवाब समझे कि बूँदा हो गया, फिर तो ऐसे धारोधार रोये कि घर भर में कुहराम मच गया। मैंने नवाब साहब को कभी रोते नहीं देखा। मुहर्रम की मजलिसों में एक आँसू नहीं निकलता। जब बड़े नवाब साहब सिधारे तो आँसू की एक बूँद न गिरी। यह बटेर ही ऐसा अनमोल है। सच तो यह है कि उसने उस दिन नवाब की सात पीढ़ियों पर एहसान किया। वल्लाह, जो कहीं घट जाता, तो मैं तो जंगल की राह लेता। मियाँ, जग में आबरू ही आबरू तो है, और क्या। ख़ैर साहब, जैसे ही दोनों चक्की खा चुके, ज़फ़रपैकर बिजली की तरह सफ़शिकन की तरफ़ चला। आते ही दबोच बैठा, चोटी को चोंच से पकड़ कर ऐसा झपेटा कि दूसरा होता तो एक रगड़े में फुर्र से भाग निकलता। नवाब का चेहरा फ़क़ हो गया, मुँह पर हवाइयाँ छूटने लगीं कि इतने में सफ़शिकन लौट ही तो पड़ा। वाह मेरे शेर! ख़ूब फिरा!! पाली भर में आवाज गूँजने लगी कि वह मारा है! एक लात ऐसी जमायी कि ज़फ़रपैकर ने मुँह फेर लिया। मुँह का फेरना था कि सफ़शिकन ने उचक कर एक झँझौटी बतलायी। वाह पट्ठे, और लगा! आख़िर ज़फ़रपैकर नोकदम पाली बाहर भागा। चारों तरफ टोपियाँ उछल गयीं! आज यह बटेर अपना सानी नहीं रखता! मियाँ आज़ाद, अब आप बटेरख़ाना अपने हाथ में लीजिए।'

नवाब—वल्लाह, यही मैं भी कहनेवाला था।

झम्मन—काम जरा मुश्किल है।

दुन्नी—बटेरों का लड़ाना दिल्लगी नहीं, बड़े तजरबे की जरूरत है।

आज़ाद—हुजूर फ़रमाते हैं, तो बटेरख़ाने की निगरानी मैं ही करूँगा।

कहने को तो आज़ाद ने यह कह दिया; मगर न कभी बटेर लड़ाये थे, न जानते थे कि इनको कैसे लड़ाया जाता है। घबराये, अगर कहीं नवाब के बटेर हारे तो सारी बला मेरे सिर पर पड़ेगी। कुछ ऐसी तदबीर करनी चाहिए कि यह बला टल जाय। जब शाम हुई तो वह सबकी नज़रें बचा कर बटेरख़ाने में गये और काबुकों की खिड़कियाँ खोल दीं बटेर सब फ़ुर्र से भाग गये। पिंजरे ख़ाली हो गये। कई पुश्तों की बसायी हुई बस्ती उजड़ गयी। बटेरों को उड़ा कर आज़ाद ने घर की राह ली।

दूसरे दिन मियाँ आज़ाद सवेरे मुँह अँधेरे बाज़ार में मटरगश्त करते हुए नवाब साहब की तरफ़ चले। बाज़ार भर में सन्नाटा! हलवाई भट्ठी में सो रहा है, नानबाई बरतन धो रहा है, बज़ाज़ा बंद, कुँजड़ों की दूकान पर अरुई न शकरकंद, जौहरियों की दूकान में ताला पड़ा हुआ है। मगर तंबाकूवाला जगा हुआ है। मेहतर सड़क पर झाड़ू दे रहा है। मैदेवाला पिसनहारियों से आटा ले रहा है। इतने में देखते क्या हैं कि एक आदमी लुंगी बाँधे, हाथ में चिलम लिये, बौखलाया हुआ घूम रहा है कि कहीं से एक चिनगारी मिल जाय तो दम लगे, धुआँधार हुक्क़ा उड़े। जहाँ जाते हैं, 'फिर'-'भाग' की आवाज़ आती है। भाई, ऐसा शहर नहीं देखा जहाँ आग माँगे न मिले, जानों इसमें छप्पन टके खर्च होते हैं! मुहल्लेवालों को गालियाँ देते हुए नानबाई की दूकान पर पहुँचे और बोले—बड़े भाई, एक जरी आग तो झप से दे देना, मेरा यार, ला तो झटपट।

नानबाई—अच्छा, अच्छा, तो दूकान से अलग रहो, छाती पर क्यों चढ़े बैठते हो? यहाँ सौ धंधे करने हैं, आपकी तरह कोई बेफ़िकर तो हूँ नहीं कि तड़का हुआ, चिलम ली, और लगे कौड़ी दूकान माँगने! मिल गयी तो ख़ैर, नहीं तो गालियाँ देनी शुरू कीं। सबेरे-सबेरे अल्लाह का नाम न रामराम। चिलम लिये दूकान पर डट गये। वाह, अच्छी दिल्लगी है! ऐसी ही तलब है तो एक कंडी क्यों नहीं गाड़ रखते कि रात भर आग ही आग रहे। ऐसे ही उचक्के तो चोरी करते हैं। आँख चूकी, और माल गायब! क्या सहल लटका है कि चिलम ले कर आग माँगने आये हैं। किसी दिन मैं चिलमविलम न तोड़ताड़ कर फेंक दूँ! तुम तड़के-तड़के दूकान पर न आया करो जी, नहीं तो किसी दिन ठायँ-ठायँ हो जायेगी।

हज़रत की आँखों से ख़ून टपकने लगा, दाँत पीस कर रह गये। यहाँ से चले, तो हलवाई की दूकान पर पहुँचे और बोले—मियाँ एक जरा सी आग देना, भाई हो न! हलवाई का दूध बिल्ली पी गयी थी, झल्लाया बैठा था, समझा कि कोई फ़क़ीर भीख माँगने आया है। झिड़क कर बोला कि और दूकान देखो। सवेरे-सवेरे कौड़ी की पड़ गयी। जाता है, कि दूँ धक्का! रहे कहीं, मरे कहीं, कौड़ी माँगने यहाँ मौजूद। 'दुनिया भर के मुर्दे नानामऊ घाट!' अब खड़ा घूरता क्या है?

चिलमबाज़—कुछ वाही हुआ है बे! अबे, हम कोई फ़क़ीर हैं, कहीं मैं आ कर एक

घस्सा दूँ न ! लो साहब ! हम तो आग माँगने आये हैं, यह हमको भिखमंगा बनाता है ! अंधा है क्या ?

हलवाई—भिखमंगा नहीं, तू है कौन ? लँगोटी बाँध ली और चले आग माँगने ! तुम्हारे बाबा का कर्ज खाया है क्या ?

बेचारे यहाँ से भी निराश हुए, चुपके से कान दबाये चल खड़े हुए। आज तड़के-तड़के किसका मुँह देखा था कि जहाँ जाते हैं, झौड़ हो जाती है। इतने में देखा कि एक सुनार की दूकान पर आग दहक रही है। उधर लपके। सुनार दूकान पर न था। यह तो हुक़्के की फ़िक्र में चौंधियाये हुए थे ही, झप से दूकान पर चढ़ गये। सुनार भी उसी वक़्त आ गया और इनको देख कर आगभभूका हो गया। तू कौन है बे ? वाह, ख़ाली दूकान पर क्या मज़े से चढ़ आये ! (एक धप जमा कर) और जो कोई अदद जाता रहता ? इतने में दस-पाँच आदमी जमा हो गये। क्या है मियाँ, क्या है ? क्यों भले आदमी की आबरू बिगाड़े देते हो ?

सुनार—है क्या ! यह हमारी दूकान पर चोरी करने आये थे।

चिलमबाज़—मैं चोर हूँ, चोर की ऐसी ही सूरत होती है ?

एक आदमी—कौन ! तुम ! तुम तो हमें पक्के चोर मालूम होते हो। अच्छा, तुम फिर उनकी दूकान पर गये क्यों ? दूकानदार नहीं था, तो वहाँ तुम्हारा क्या काम ? जो कोई गहना ले भागते, तो यह तुम्हें कहाँ ढूँढ़ते फिरते ?

सुनार—साहब, इनका फिर पता कहाँ मिलता, जाते जमुना उस पार। चलो थाने पर।

लोगों ने सुनार को समझाया, भाई, अब जाने दो। देखो जी, ख़बरदार, अब किसी की दूकान पर न चढ़ना, नहीं पथे जाओगे। सुनार ने छोड़ दिया। जब आप चलने लगे, तो उसे इन पर तरस आ गया। बोला, अच्छा आग लेते जाओ। हज़रत ने आग पायी और घर की राह ली। तड़के-तड़के अच्छी बोहनी हुई, चोर बने, मार खायी, झिड़के गये, थाने जाते-जाते बचे, तब कहीं आग मिली।

मियाँ आज़ाद यह दिल्लगी देख कर आगे बढ़े और नवाब की ड्योढ़ी पर आये।

नवाब—आज इतना दिन चढ़ गया, कहाँ थे ?

आज़ाद—हुज़ूर, आज बड़ी दिल्लगी देखने में आयी, हँसते-हँसते लोट जाइएगा। तलब भी क्या बुरी चीज है।

यह कह कर आज़ाद ने सारी दास्तान सुनायी।

नवाब—खूब दिल्लगी हुई। आग के बदले चपतें पड़ीं। अरे मियाँ, ज़रा खोजी को बुलाना। हाँ, जरा खोजी के सामने सुनाना। किसी दिन यह भी न पिटें।

खोजी नवाब के दरबार के मसख़रे थे। ठेंगना क़द, काले कौए का सा रंग, बदन पर मांस नहीं, पर आँखों में सुरमा लगाये हुए। लुढ़कते हुए आये और बोले—गुलाम को हुज़ूर ने याद किया है ?

नवाब—हाँ, इस वक़्त किस फ़िक्र में थे ?

खोजी—ख़ुदावंद, अफ़ीम घोल रहा था, और कोई फ़िक्र तो हुजूर की बदौलत क़रीब नहीं फटकने पाती। मैं फ़िक्र क्या जानूँ, 'जोरू न जाँता, अल्लाह मियाँ से नाता।'

नवाब—अच्छा खोजी, इस हौज़ में नहाओ तो एक अशर्फ़ी देता हूँ।

खोजी—हुजूर, अशर्फ़ियाँ तो आपकी जूतियों के सदक़े से बहुत सी मिल जायँगी, मगर फिर जीना कठिन हो जायगा। न मरे सही, लेकिन 'नकटा जिया बुरे हवाल!' न साहब, मुझे तो कोई एक गोते पर एक अशर्फ़ी दे, तो भी पानी में न पैठूँ, पानी की सूरत देखे बदन काँप उठता है।

दुन्नी—कैसे मर्द हो कि नहाने से डरते हो!

खोजी—हम नहीं नहाते तो आप कोई क़ाज़ी हैं ?

आज़ाद—अजी, सरकार का हुक्म है।

खोजी—चलिए, आपकी बला से। कहने लगे सरकार का हुक्म है। फिर कोई अपनी जान दे।

आज़ाद—हुजूर, जो इस वक़्त यह हौज़ में धम से न कूद पड़ें, तो अफ़ीम इन्हें न मिले।

खोजी—आप कौन बीच में बोलनेवाले होते हैं ? अरसठ बरस से तो मैं अफ़ीम खाता आया हूँ, अब आपके कहने से छोड़ दूँ, तो कहिए, मरा या जिया ?

नवाब—अच्छा भाई, जाने दो। दूध खाओगे ?

खोजी—वाह ख़ुदावंद, नेकी और पूछ-पूछ। लेकिन जरी मिठास खूब हो। शाहजहाँपुर की सफ़ेद शक्कर या कालपी की मिश्री घोलिएगा। अगर थोड़ा सा केवड़ा भी गबड़ दीजिए तो पीते ही आँखें खुल जायँ।

इतने में एक चोबदार घबराया हुआ आया और बोला—ख़ुदावंद, ग़ज़ब हो गया। जाँबख़्शी हो तो अर्ज़ करूँ, सब बटेर उड़ गये।

नवाब—अरे ! सब उड़ गये ?

चोबदार—क्या कहूँ, हुजूर, एक का भी पता नहीं।

मुसाहबों ने हाय-हाय करनी शुरू की, कोई सिर पीटने लगा, कोई छाती कूटने लगा। नवाब ने रोते हुए कहा, भाई और जो गये सो गये, मेरे सफ़शिकन को जो कोई ढूँढ़ लाये, हज़ार रुपये नक़द दूँ। इस वक़्त मैं जीते जी मर मिटा। अभी साँड़नी-सवारों को हुक्म दो कि पचकोसी दौरा करें। जहाँ सफ़शिकन मिले, समझा-बुझा कर ले ही आयें।

झम्मन—उनको समझाना, हुजूर, मुशकिल है। वह तो अरबी में बातें करते हैं। सारा क़ुरान उन्हें याद है। उनसे कौन बहस करेगा ?

नवाब—मुझे तो उससे इश्क़ हो गया था जी, वह नोकीली चोंच, वह अकड़-अकड़

कर काकुन चुनना ! सैकड़ों पालियाँ लड़ीं, मगर कोरा आया। किस बाँकपन से झपट कर लात देता था कि पाली भर थर्रा उठती थी। उसकी बिसात ही क्या थी, मझोला जानवर, लेकिन मैदान का शेर। यह तो मैं पहले ही से जानता था कि यह बटेर की सूरत में किसी फ़क़ीर की रूह है। अब सुना कि नमाज़ भी पढ़ता था।

झम्मन—हुज़ूर को याद होगा कि रमज़ान के महीने में उसने दिन के वक़्त दाना तक न छुआ; हुज़ूर समझे थे कि बूँदा हो गया, मगर मैं ताड़ गया कि रोज़े से है।

खोजी—खुदावंद, अब मैं हुज़ूर से कहता हूँ कि दस-पाँच दफ़ा मैंने अफ़ीम भी पिला दी; मगर वल्लाह, जो ज़रा भी नशा हुआ हो।

कमाली—हुज़ूर, यक़ीन जानिए, पिछले पहर से सुबह तक काबुक से हक़-हक़ की आवाज़ आया करती थी। ग़फ़ूर, तुमको भी तो हमने कई बार जगा कर सुनाया था कि सफ़शकिन खुदा को याद कर रहे हैं।

नवाब—अफ़सोस, हमने उसे पहचाना ही नहीं। दिल डूबा जाता है, कोई पंखा झलना।

मुसाहब—जल्दी पंखा लाओ।

नवाब—

> प्रीतम जो मैं जानती कि प्रीत किये दुख होय;
> नगर ढिंढोरा पीटती कि प्रीत करै जनि कोय।

खोजी—(पीनक से चौंक कर) हाँ उस्ताद, छेड़े जा। इस वक़्त तो मियाँ शोरी की रूह फड़क गयी होगी।

नवाब—चुप, नामाकूल। कोई है ? इसको यहाँ से टहलाओ। यह रईसों की सोहबत के क़ाबिल नहीं। मुझको भी कोई गवैया समझा है। यहाँ तो जी जलता है, इनके नज़दीक़ क़ौवाली हो रही है।

खोजी—खुदावंद, गुलाम तो इस दम अपने आपे में नहीं। हाय, सफ़शिकन की काबुक खाली हो और मैं अपने आपे में रहूँ ! हुज़ूर ने इस वक़्त मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया।

नवाब—शाबाश खोजी, शाबाश ! मुआफ़ करना, मैं कुछ और ही समझा था। क्यों जी, साँड़नी-सवार दौड़ाया गया कि नहीं ?

सवार—हुज़ूर, जाता तो हूँ, मगर वह मेरी क्या सुनेंगे, कोई मौलवी भी तो साथ भेजिए, मैं तो कुछ ऊँट ही चढ़ना जानता हूँ , उनसे दलील कौन करेगा भला !

आज़ाद—किसी अच्छे मौलवी को बुलवाना चाहिए।

मुसाहिबों ने एक मौलाना साहब को तजवीजा। मगर यारों ने उनसे कुल दास्तान नहीं बयान की। चोबदार ने मकान पर जा कर सिर्फ़ इतना कहा कि नवाब साहब ने आपको याद किया है। मौलवी साहब उसके साथ हो लिये और दरबार में आ कर नवाब साहब को सलाम किया।

नवाब—आपको इसलिए तकलीफ़ दी कि मेरी आँखों का नूर, मेरे कलेजे का टुकड़ा नाराज़ हो कर चला गया है। बड़ा आलिम और दीनदार है, बहस करने में कोई उससे पेश नहीं पाता, आप जाइए और उसको माक़ूल करके ले आइये।

मौलाना—माँ-बाप का कड़ा हक़ होता है। वह कैसे नादान आदमी हैं?

खोजी—मौलाना साहब, वह आदमी नहीं हैं, बटेर हैं। मगर इल्म और अक़्ल में आदमियों के भी कान काटते हैं।

कमाली—सफ़शिकन का नाम तो मौलाना साहब, आपने सुना होगा। वह तो दूर-दूर तक मशहूर थे। जनाब, बात यह है कि सरकार का बटेर सफ़शिकन कल काबुक से उड़ गया। अब यह तजबीज हुई है कि एक-एक साँड़नी-सवार जाय और उसे समझा-बुझा कर ले आये। मगर ऊँटवान तो फिर ऊँटवान, वह दलील करना क्या जाने, इसलिए आप बुलाये गये हैं कि साड़नी पर सवार हों, और उनको किसी तदबीर से ले आयें।

मौलाना—ठीक, आप सब के सब नशे में तो नहीं हैं? होश की बातें करो। खुद मसख़रे बनते हो। बटेर भी आलिम होता है, वह भी कोई मौलवी है, ला हौल! अच्छे-अच्छे गाउदी जमा हैं। बंदा जाता है।

नवाब—यह किस कोढ़मग़ज को लाये थे जी? खासा जाँगलू है।

आज़ाद—अच्छा, हुजूर भी क्या याद करेंगे कि इतने बड़े दरबार में एक भी मंतकी न निकला। अब गुलाम ने बीड़ा उठा लिया कि जाऊँगा और सफ़शिकन को लाऊँगा। मुझे एक साँड़नी दीजिए, मैं उसे खुद ही चला लूँगा। खर्च के लिए कुछ रुपये भी दिलवाइये, न जाने कितने दिन लग जायँ।

नवाब—अच्छा, आप घर जाइये और लैस हो कर आइए।

मियाँ आज़ाद घर गये तो औंर मुसाहिबों में खिचड़ी पकने लगी—यार, यह तो बाजी जीत ले गया। कहीं से एकआध बटेर पकड़ कर लायेगा और कहेगा, यही सफ़शिकन है। फिर तो हम सब पर शेर हो जायगा। हमको-आपको कोई न पूछेगा। खोजी जा कर नवाब साहब से बोले—हुजूर, अभी मियाँ आज़ाद दो दिन से इस दरबार में आये हैं, उनका एतबार क्या? जो साँड़नी ही लेकर रफ़ूचक्कर हों, तो फिर कोई कहाँ उनका पता लगाता फिरेगा?

कमाली—हाँ खुदावंद, कहते तो सच हैं।

झम्मन—खोजी सूरत ही से अहमक़ मालूम होते हैं, मगर बात ठिकाने की कहते हैं। ऐसे आदमी का ठिकाना क्या?

दुन्नी—हम तो हुजूर को सलाह न देंगे कि मियाँ आज़ाद को साँड़नी और सफ़र-खर्च दीजिए। जोखिम की बात है।

नवाब—चलो, बस, बहुत न बको। तुम खुद जैसे हो, वैसा ही दूसरों को समझते हो। आज़ाद की सूरत कहे देती है कि कोई शरीफ़ आदमी है, और मान लिया कि

साँड़नी जाती ही रहे, तो मेरा क्या बिगड़ जायगा? सफ़शिकन पर से लाखों सदके हैं। साँड़नी की हक़ीक़त ही क्या।

इतने में मियाँ आज़ाद घर से तैयार होकर आ गये। अशर्फ़ियों की एक थैली ख़र्च के लिए मिली। नवाब ने गले लगा कर रुख़सत किया। मुसाहब भी सलाम बजा लाये। आज़ाद साँड़नी पर बैठे और साँड़नी हवा हो गयी।

४

आज़ाद यह तो जानते ही थे कि नवाब के मुसाहबों में से कोई चौक के बाहर जानेवाला नहीं इसलिए उन्होंने साँड़नी तो एक सराय में बाँध दी और आप अपने घर आये। रुपये हाथ में थे ही, सवेरे घर से उठ खड़े होते, कभी साँड़नी पर, कभी पैदल, शहर और शहर के आस-पास के हिस्सों में चक्कर लगाते, शाम को फिर साँड़नी सराय में बाँध देते और घर चले आते। एक रोज़ सुबह के वक़्त घर से निकले तो क्या देखते हैं कि एक साहब केचुललेट का धानी रँगा हुआ कुरता, उस पर रुपये गज़वाली महीन शरबती का तीन कमरतोई का चुस्त अँगरखा, गुलबदन का चूड़ीदार घुटन्ना पहने, माँग निकाले, इत्र लगाये, माशे भर की नन्ही सी टोपी आलपीन से अटकाये, हाथों में मेंहदी, पोर-पोर छल्ले, आँखों में सुर्मा, छोटे पंजे का मखमली जूता पहने, एक अजब लोच से कमर लचकाते, फूँक-फूँक कर क़दम रखते चले आते थे। दोनों ने एक दूसरे को खूब जोर से घूरा। छैले मियाँ ने मुसकिराते हुए आवाज़ दी—ऐ, जरी इधर तो देखो, हवा के घोड़े पर सवार हो! मेरा कलेजा बल्लियों उछलता है। भरी बरसात के दिन, कहीं फिसल न पड़ो, तो कहकहा उड़े।

आज़ाद—आप अपना मतलब कहिए, मेरे फिसलने की फ़िक्र न कीजिए।

छैला—गिरिएगा, तो मुझसे जरूर पूछ लीजिएगा।

आज़ाद—बहुत खूब, ज़रूर पूछूँगा, बल्कि आपको साथ ले कर, गिरूँ तो सही।

छैला—खुदा की क़सम, आपके काले कपड़ों से मैं समझा कि बनैला कुसुम के खेत से निकल पड़ा।

आज़ाद—और मैं आपको देख कर यह समझा कि कोई ज़नाना मटकता जाता है।

छैला—वल्लाह, आपकी धज ही निराली है। यह डबल कोट और लक्कड़तोड़ बूट! जाँगलू मालूम होते हो। इस वक़्त ऐसे बदहवास कहाँ बगटुट भागे जाते हो? सच कहिएगा, आपको हमारी जान की कसम।

आज़ाद—आज प्रोफेसर लॉक संस्कृत पर एक लेक्चर देनेवाले हैं, बड़े मशहूर आलिम हैं। योरप में इनकी बड़ी शोहरत है।

छैला—भाई, कसम खुदा की, कितने भोंडे हो। प्रोफ़ेसर के मशहूर होने की एक ही कही। हम इतने बड़े हुए, क़सम ले लो, जो आज तक नाम भी सुना हो। क्या दुन्नीखाँ से ज्यादा मशहूर हैं? भाई, जो कहीं 'तुम्हारे घूँघरवाले बाल' एक दफ़ा भी उसकी जबान से सुन लो, तो उम्र-भर न भूलो। वल्लाह, क्या टीपदार आवाज है; मगर तुम ऐसे कोढ़मग़ज़ों को गलेबाज़ी से क्या वास्ता, तुम तो प्रोफ़ेसर साहब के फेर में हो।

आज़ाद—तुम्हारी ज़िंदगी राग और लै ही में गुजरेगी। इस नाच और रंग ने

आपकी यह गति बनायी कि मूँछ और दाढ़ी कतरवायी, मेंहदी लगवायी और मर्द से औरत बन गये। अरे, अब तो मर्द बनो, इन बातों से बाज़ आओ।

छैला—जी, तो आपके प्रोफ़ेसर लॉक के पास चला जाऊँ? अपने को आपकी तरह गड्डामी बनाऊँ। किसी गली-कूचे में निकल जाऊँ तो तालियाँ पड़ने लगें।

आज़ाद—अब यह फ़रमाइए कि इस वक़्त आप कहाँ के इरादे से निकले हैं?

छैला—कल रात का तीन बजे तक एक रँगीले दोस्त के यहाँ नाच देखता रहा। वह प्यारी-प्यारी सूरतें देखने में आयीं कि वाह जी वाह! किस काफ़िर का उठने को जी चाहता हो। जलसा बरख़ास्त हुआ तो बस, कलेजे को दोनों हाथों से थाम कर निकले; लेकिन रात भर कानों में छमाछम की आवाज़ आया की। परियों की प्यारी-प्यारी सूरत आँखों में फिरा की। अब इस वक़्त फिर जाते हैं, ज़रा सेक आयें, भैरवी उड़ रही होगी—

'रसीले नैनों ने फंदा मारा।'

आज़ाद—कल फ़ुरसत हो तो हमसे मिलिएगा।

छैला—कल तक तो मेरी नींद का खुमार ही रहेगा।

आज़ाद—अच्छा, परसों सही।

छैला—परसों! परसों तो ख़ुदा भी बुलाये तो बंदा न जाने का। परसों नवाब साहब के यहाँ बटेरों की पाली है, महीनों से बटेर तैयार हो रहे हैं।

आज़ाद—अच्छा साहब, परसों न सही, मंगल को सही।

छैला—मंगल को तड़के से बाने की कनकइयाँ लड़ेंगी, अभी बनारस से बाना मँगाया है, माही जाल की कनकइयाँ ऐसी सधी हैं कि हरदम काबू में, मोड़ो, गोता दो, खींचो, जो चाहे सो करो, जैसे खेत का घोड़ा।

आज़ाद—अच्छा, बुद्ध को फ़ुरसत है!

छैला—वाह-वाह, बुद्ध को तो बड़े ठाट से भटियारियों की लड़ाई होगी। देखिए तो, कैसी-कैसी भटियारियाँ किस बाँकी अदा से हाथ चमका कर, उँगलियाँ मटका कर लड़ती हैं और कैसी-कैसी गालियाँ सुनाती हैं कि कान के कीड़े मर जायँ।

आज़ाद—बिरस्पत को तो जरूर मिलिएगा?

छैला—जनाब, आप तो पीछे पड़ गये, मिलूँ तो सब कुछ, जब फ़ुरसत भी हो। यहाँ मरने तक की तो फ़ुरसत नहीं, अब की नौचंदी जुमेरात है, बरसों से मन्नतें मानी हैं, आपको दीनदुनिया की खबर तो है नहीं।

आज़ाद—तो मालूम हुआ, आपसे मुलाक़ात नहीं होगी। आज मुर्ग़ लड़ाइएगा, कल पतंग लड़ाइएगा, कहीं गाना होगा, कहीं नाच होगा, आप न हों तो रंग क्यों-कर जमे। मेला-ठेला तो आपसे कोई काहे को छूटता होगा फिर भला मिलने की कहाँ फ़ुरसत? रुख़सत।

छैला—ऐं, तो अब रूठे क्यों जाते हैं!

आज़ाद—अब मुझे जाने दीजिए, आपका और हमारा मेल जैसे गन्ना और मदार का साथ। जाइए, देखिए, भैरवी का लुत्फ़ जाता है।

छैला—जनाब, अब नाच-गाने का लुत्फ़ कहाँ, वह चमक-दमक अब कहाँ, दिल ही बुझ गया। जो लुत्फ़ हमने देखे हैं, वह बादशाहों को ख्वाब में नसीब न हुए होंगे। यह कैसरबाग़ अदन को मात करता था। परियों के झुंड, हसीनों के जमघट, रात को दिन का समाँ रहता था। अब यहाँ क्या रह गया! गली कूचों में कुत्ते लोटते हैं। एक वह ज़माना था कि साक़िनों के मिज़ाज न मिलते थे। बाँके-तिरछे रईसज़ादे एक-एक दम की दो-दो अशर्फ़ियाँ फेंक देते थे। अब तो शहर भर में इस सिरे से उस सिरे तक चिराग़ लेकर ढूँढ़िए तो मैदान खाली है। कल नयी सड़क की तरफ़ जो निकला, तो नुक्कड़ पर एक हाथी बँधा देखा। पूछा, तो मालूम हुआ कि बी हैदरजान का हाथी है। क़सम खुदा की, ऐसा खुश हुआ कि आँखों में आँसू आ गया।

खुदा आबाद रक्खे लखनऊ को फिर ग़नीमत है;
नज़र कोई न कोई अच्छी सूरत आ ही जाती है।

आज़ाद—अच्छा, यह सब जलसे आपने देखे और अब भी आँखें सेका ही करते हैं; मगर सच कहिएगा, बने या बिगड़े, बसे या उजड़े, नेकनाम हुए या बद-नाम? यहाँ तो नतीजा देखते हैं।

छैला—जनाब यह तो बड़ा कड़ा सवाल है। सच तो यों है कि उम्र भर इस नाचरंग ही के फंदे में फँसे रहे, दिनरात तबला, सारंगी, बायाँ, ढोल, सितार की धुन में मस्त रहे। खुदा की याद ताक़ पर, इल्म छप्पर पर, छटे हुए शोहदे बन बैठे; लेकिन अब तो पानी में डूब गये, ऊपर एक अंगुल हो तो, और एक हाथ हो तो, बराबर है। आप लोग इस भरोसे में हों कि हमें आदमी बनायें तो यह खैर-सलाह है। बूढ़े तोते भी कहीं राम-राम पढ़ते हैं?

आज़ाद—खैर, शुक्र है कि आप अपने को बिगड़ा हुआ समझते तो हैं। कडुए न हूजिए तो कहूँ कि इस जनाने भेस पर लानत भेजिए, यह लोच, यह लचक, यह मेंहदी, यह मिस्सी, कुछ औरतों ही को अच्छी मालूम होती है। ज़रा तो इस दाढ़ी-मूँछ का खयाल करो।

छैला—यह भरें किसी ऐसे-वैसे को दीजिए, यहाँ बड़े-बड़ों की आँखें देखी हैं। आपके झाँसे में कोई अनारी आये, हम पर चकमा न चलने का।

आज़ाद—आपको डोम-डारियों ही की सोहबत पसंद आयी या किसी और की भी? लखनऊ में तो हर फ़न के आदमी मौजूद हैं।

छैला—हम तो हमेशा ऐसी ही टुकड़ी में रहे। घरफूँक तमाशा देखा। लँगोटी में फाग खेला। मियाँ शोरी के टप्पे, क़दर मियाँ की ठुमरियाँ, घसीटखाँ की टीपदार आवाज़ प्यारेखाँ का खयाल छोड़ कर जायँ कहाँ? सारंगी-मँजीरे की आवाज सुनी तो छप से घुस पड़े, मसजिद में अज़ान हुआ करे, सुनता कौन है। बहुत गुज़र गयी, थोड़ी बाक़ी है।

आज़ाद—लखनऊ में ऐसे-ऐसे आलिम पड़े हैं कि जिनका नाम आफ़ताब की तरह सारी खुदाई में रोशन है। कर्बला और मदीने तक के समझदार लोग इन बुज़ुर्गों का कलाम शौक़ से पढ़ते हैं। मुफ्ती सादुल्लाह साहब, सैयद मुहम्मद साहब, वग़ैरह उल्मा का नाम बच्चे-बच्चे की ज़बान पर है। अब शायरों को देखिए, ख्वाजा हैदरअली आतश, शेख़ नासिख़ अपने फ़न के खुदा थे। मरसिया कहना तो लखनऊ वालों का हिस्सा है। मीर अनीस साहब को खुदा बख्शे, ज़बान की सफ़ाई तो यहाँ खत्म हो गयी। मिर्ज़ा दबीर तो गोया अपने फ़न के मवजिद थे। नसीम और सबा ने आतश को भड़का दिया। गोया तो गोया शायरी के चमन का बुलबुल था। मिर्ज़ा रजबअली बेग सरूर ने वह नस्र लिखी कि क़लम तोड़ दिये। यहाँ के कारीगरों के भी झंडे गड़े हैं। कुम्हार तो ऐसे दुनिया के पर्दे पर न होंगे। मिट्टी की मूरतें ऐसी बनायी कि मुसव्विरों कि किरकिरी हो गयी। बस, यही मालूम होता है कि मूरत बोला ही चाहती है। जिस अजायबघर में जाइएगा, लखनऊ के कुम्हारों की कारीग़री जरूर पाइएगा। खुशनवीसों ने वह कमाल पैदा किया कि एक-एक हर्फ़ की पाँच-पाँच अशर्फ़ियाँ लीं। बाँके ऐसे कि शेर का पंजा तोड़ डालें, हाथी को डपटें तो चिग्घाड़ कर मंज़िलों भागे। रुस्तम और इस्फंदियार को चुटकियों में लड़ा दें। उस्ताद मुहम्मदअली खाँ फिकैत, छरहरा बदन, लेकिन गदका हाथ में आने की देर थी। परे के परे दम में साफ़ कर दिये। कड़क कर तमाचे का तुला हाथ लगाया, तो दुश्मन का मुँह फिर गया। अखाड़े में गदका लेकर खड़े हुए, तो मालूम हुआ, बिजली चमक गयी। एक दफ़ा ललकार दिया कि रोक, बैठ गयी! देख सँभल। खबरदार, यह आयी, वह आयी, वह पड़ गयी! वाह-वाह की आवाज़ सातवें आसमान जा पहुँची। बला की सफ़ाई, ग़ज़ब की सफ़ाई थी। जो मुँह चढ़ा, उसने मुँह की खायी। सामने गया और शामत आयी। कामदानी वह ईजाद की कि उड़ीसा और कोचीन तक धूम हो गयी। लेकिन आपको तो न इल्म से सरोकार, न फ़न से मतलब; आप तो ताल-सुर के फेर में पड़े हैं

छैला—हज़रत, इस वक्त भैरवी सुनने जाता था और 'जागे भाग प्यारा नज़र आया' सुनने का शौक़ चर्राया था; लेकिन आपने पादरियों की तरह बकवास करके काया पलट दी। आप जो हमें राह पर लाते हों, तो इतना मान जाओ कि ज़रा क़दम बढ़ाये हुए, हमारे साथ हाथ में हाथ दिये हुए, पाटेनाले तक चले चलो; देखूँ तो परिस्तान से क्योंकर भाग आते हो? उन्हीं हसीनों का सिजदा ना करो, तो कुछ जुर्माना दूँ। उस इंद्र के अखाड़े से कोरे निकल आओ, तो टाँग की राह निकल जाऊँ।

आज़ाद—(घड़ी जेब से निकाल कर) एँ! आठ पर इक्कीस मिनट! इस खुशगप्पी ने आज बड़ा सितम ढाया, लेक्चर सुनने में न आया। मुफ़्त की बकबक झकझक! लेक्चर सुनने क़ाबिल था।

छैला—अल्लाह जानता है, इस वक़्त कलेजे पर साँप लोट रहे हैं! न जाने तड़के-तड़के किस मनहूस का मुँह देखा है कि भैरवी के मज़े हाथ से गये?

आज़ाद—आप भी निरे चोंच ही रहे। इतनी देर तक समझाया, सिरमग़ज़न की, मगर वाह रे कुत्ते की दुम, बारह बरस बाद भी वह टेढ़ी ही निकली।

छैला—तो मेरे साथ आइए न, बगलें क्यों झाँकते हो? जब जाने कि निलोह निकल आओ।

आज़ाद—अच्छा, चलिए। देखें, कौन सा हसीन अपनी निगाहों के तीर से हमें घायल करता है! बरसों के खयालों को कोई क्या मिटा देगा? हम, और किसी के थिरकने पर फ़िदा हो जायँ! तोबा! कोई ऐसा माशूक़ तो दिखाइए, जिसे हम प्यार करें। हमारा माशूक़ वह है जिसमें कमाल हो। जुल्फ़ और चोटी पर कोई और सिर धुनते हैं।

खुलासा यह कि आज़ाद छैले मियाँ के साथ हाफ़िज़ जी के मकान में जा पहुँचे। महफ़िल सजी हुई थी। तीन-चार हसीनें मिल कर मुबारकबाद गाती थीं। यही मालूम होता था कि राग और रागिनी हाथ बाँधे खड़ी हैं। जिसे देखो, गर्दन हिलाता है। पाजेब की छमाछम दिल को रौंदती है, कोई इधर से उधर चमक जाती है, कोई ऊँचे सुरों में तान लगाती है, कोई सीने पर हाथ रख कर 'गहरी नदिया' बताती है, कोई नशीली आँखों के इशारे से 'नैना रसीले' की छवि दिखाती है, धमा-चौकड़ी मची हुई है। छैले मियाँ ने एक हसीन से फरमाइश की कि हज़रत मीर की यह ग़ज़ल गाओ—

ग़ैर के कहने से मारा उसने हम को बे-गुनाह;
यह न समझा वह कि वाक़या में भी कुछ था या न था।
याद ऐयामे कि अपनी रोजोशब की जायबाश;
था दरे बाजे बयाबाँ, या दरे मयखाना था।

इस ग़ज़ल ने वह लुत्फ दिखाया और ऐसा रँग जमाया कि मियाँ आज़ाद तक 'ओ हो!' कह उठते थे; इसके बाद एक परी ने यह ग़ज़ल गायी—

हाल खुले तो किस तरह यार की वज्दे-नाज़ का;
जो है यहाँ वह मस्त है अपनी ही सोजोसाज़ में।

इस ग़ज़ल पर जलसे में कुहराम मच गया। एक तो ग़ज़ल हक्क़ानी, दूसरे हसीना की उठती जवानी, तीसरे उसकी नाज़ुकबयानी। लोग इतने मस्त हुए कि झूम-झूम कर यही शेर पढ़ते थे—

हाल खुले तो किस तरह यार की वज्दे-नाज़ का;
जो है यहाँ वह मस्त है अपनी ही सोजोसाज़ में।

अब सबको शक की जगह यक़ीन हो गया कि अब किसी का रंग न जमेगा। हर तरफ़ से हक्क़ानी ग़ज़लों की फ़रमाइश है। न धुर्पद का खयाल, न टप्पे की फ़िक्र, न भैरवी की धुन, न पक्के गाने का ज़िक्र, बस हक्क़ानी ग़ज़लों की धूम है।

अब दिल्लगी देखिए कि बुड्ढे-जवान सब के सब बेधड़क उस मोहनी को घूर रहे हैं। कोई उससे आखें लड़ाता है, कोई सिर धुनता है, कोई ठंडी आहें खींचता है।

दो-चार मनचले रईसों ने हसीनों को बुला कर बड़े शौक़ से पास बैठाया। नोंक-झोंक, हँसी मज़ाक, चुहल-दिल्लगी, धोल-धप्पा होने लगा। हाफ़िज़ जी भी बेसींग के बछड़े बने हुए मजे से चौमुखी लड़ रहे हैं।

बूढ़े मियाँ—आजकल के लड़कों को भी हवा लगी है।

एक जवान—जनाब, अब तो हवा ही ऐसी चली है कि जवान तो जवान, बुड्ढों तक को बुढ़भस लगा है। सौ बरस का सिन, चार के कंधों पर लदने के दिन, मगर जवानी ही के दम भरते हैं।

बूढ़े मियाँ—अजी, हम तो जमाने भर के न्यारिये हैं, हमें कोई क्या चंग पर चढ़ायगी; मगर तुम अभी जुमा-जुमा आठ दिन की पैदायश, ऐसा न हो, उनके फेर में आ जाओ; फिर दीनदुनिया दोनों को रो बैठो। -

जवान—वाह जनाब, आपकी सोहबत में हम भी पक्के हो गये हैं; ऐसे कच्चे नहीं कि हम पर किसी के दाँव-पेंच चलें।

बूढ़े मियाँ—कच्चे-पक्के के भरोसे न रहिएगा, इन हसीनों का बड़े-बड़े ज़ाहिदों ने सिजदा किया है; तुम किस खेत की मूली हो।

जवान—इन बुतों को हम फ़क़ीरों से भला क्या काम है, ये तो तालिब ज़र के हैं और याँ ख़ुदा का नाम है।

हसीना—इन बड़े मियाँ से कोई इतना तो पूछो कि बाल-बाल गल कर बर्फ़ सा सफ़ेद हो गया और अब तक सियाहकारी न छोड़ी, यह समझाते किस मुँह से हैं? इनकी सुनता कौन है! ज़रा शेख़ जी, बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न बनाया कीजिए; शाहछड़ेवाली गली में रोज़ बीस-बीस चक्कर होते हैं; ऐ, तुम थकते भी नहीं?

हाफ़िज़ जी—शेख जी जहाँ बैठते हैं, झगड़ा जरूर ख़रीदते हैं। आप हैं कौन? आये कहाँ से नासेह बन के! अच्छा, बी साहब, अपना कलाम सुनाइए; मगर शर्त यह है कि जब हम तारीफ़ करें तो झुक के सलाम कीजिए।

हसीना—आप हैं तो इसी लायक कि दूर ही से झुक कर सलाम कर लें।

इधर तो यह बातें हो रही थीं, उधर दूसरी टुकरी में गाली और फक्कड़ का छर्रा चलता था। तीसरे में धौल-धप्पा होता था। लड़के, जवान, बूढ़े बेधड़क एक दूसरे पर फबतियाँ कसते थे। इतने में दोपहर की तोप दगी, जलसा बरख़ास्त, तबल्चियों ने बोरिया-बँधना उठाया। चलिए, सन्नाटा हो गया।

५

मियाँ आज़ाद की साँड़नी तो सराय में बँधी थी। दूसरे दिन आप उस पर सवार हो कर घर से निकल पड़े। दोपहर ढले एक क़स्बे में पहुँचे। पीपल के पेड़ के साये में बिस्तर जमाया। ठंडे-ठंडे हवा के झोंकों से ज़रा दिल को ढारस हुई, पाँव फैला कर लंबी तानी, तो दीनदुनिया की ख़बर नहीं। जब ख़ूब नींद भर कर सो चुके, तो एक आदमी ने जगा दिया। उठे, मगर प्यास के मारे हलक में काँटे पड़ गये। सामने इदारे पर एक हसीन औरत पानी भर रही थी। हज़रत भी पहुँचे।

आज़ाद—क्यों नेकबख़्त, हमें एक ज़रा सा पानी नहीं पिलातीं। भरते न बनता हो तो लाओ हम भरें। तुम भी पियो, हम भी पियें, एहसान होगा।

औरत ने कोई जवाब न दिया, तीखी चितवन से देख कर पानी भरती रही।

आज़ाद—'सखी से सूम भला, जो देवे तुरत जवाब।' पानी न पिलाओ, जवाब तो दे दो। यह क़स्बा तो अपने हक़ में कर्बला का मैदान हो गया। एक बूँद पानी को तरस गये।

औरत ने फिर भी जवाब न दिया। पानी भर कर चली।

आज़ाद—भई, अच्छा गाँव है! जो बात है, निराली! एक लुटिया पानी न मिला, वाह री क़िस्मत! लोग तो इस भादों की जलती-बलती धूप में पौसरे बैठाते हैं, केवड़ा पड़ा हुआ पानी पिलाते हैं, यहाँ कोई बात तक नहीं सुनता।

मियाँ आज़ाद को हैरत थी कि इस कमसिन नाज़नीन का यहाँ इस वीराने में क्या काम। साये की तरह साथ हो लिये। वह कनखियों से देखती जाती थी; मगर मुँह नहीं लगाती थी। बारे, सड़क से दायें हाथ पर एक फाटक के सामने वह बैठ गयी और पेड़ के साये में सुस्ताने लगी। आज़ाद ने कहा—अगर यह बर्तन भारी हो तो लाओ मैं ले चलूँ, इशारे की देर है। क़सम लो, जो एक बूँद भी पीऊँ, गो प्यास के मारे कलेजा मुँह को आता है और दम निकला जाता है; लेकिन तुम्हारा दिल दुखाना मंजूर नहीं।

हसीना ने इसका भी जवाब न दिया। फिर हिम्मत करके उस बर्तन को उठाया और फाटक के अंदर हो रही। मियाँ आज़ाद भी चुपके-चुपके दबे पाँव उसके पीछे-पीछे गये। हसीना एक खुले हुए छोटे से बँगले में जा बैठी और आज़ाद दरख़्तों की आड़ में दबक रहे कि देखें, यहाँ क्या गुल खिलता है। उस बँगले के चारों तरफ खाई खुदी हुई थी, इर्द-गिर्द सरपत बोई हुई थी, ऐसी घनी कि चिड़िया तक का गुज़र न हो; और वह तेज़ कि तलवार मात। बड़ा ऊँचा मेहराबदार फाटक लगा हुआ था। वह जौहरदार शीशम की लकड़ी थी फि बायद व शायद। क्यारियाँ रोज़ सींची जाती थीं, रविशों पर सुर्ख़ी कटी थी, हरे-भरे दरख़्त आसमान से बातें कर रहे थे। कहीं अनार की कतार, कहीं लखवट की बहार, इधर आम के बाग़, अमरूद और चकोतरों से टह-

नियाँ फटी पड़ती थीं, नारंगियाँ शाखों पर लदी हुई थीं, फूलों की बू-बास, कहीं गुल-मेंहदी, कहीं गुल-अब्बास, नेवाड़ी फूली हुई, ठंडी-ठंडी हवा, ऊदी-ऊदी घटा, कलियों की चिटक, जूही की भीनी महक, कनैल की दमक। बाग के बीचो-बीच में एक तीन फुट का ऊँचा पक्का चबूतरा बना था। यह तो सब कुछ था; मगर रहने-वाले का पता नहीं। उस हसीना की चालढाल से भी बेगानापन बरसता था। एकाएक उसने बर्तन जमीन पर रख दिया और एक नेवाड़ की पलँगरी पर सो रही। इनको दाँव मिला, तो खूब छक कर मेवे खाये और बर्तन को मुँह से लगाया, तो एक बूँद भी न छोड़ा। इतने में पाँव की आहट सुनाई दी। आज़ाद झट अंगूर की टट्टी में छिप रहे; मगर ताक लगाये बैठे थे कि देखें, है कौन! देखा कि फाटक की तरफ से कोई आहिस्ता-आहिस्ता आ रहा था। बड़ा लंबा-तड़ंगा, मोटा-ताज़ा आदमी था। लंगोट बाँधे, अकड़ता उस बँगले की तरफ जा रहा था। समझे कि कोई पहलवान अपने अखाड़े से आया है। नज़दीक आया, तो यह गुमान दूर हो गया। मालूम हुआ कि कोई शाह जी हैं। वह लंगोट, जिससे पहलवान का धोखा हुआ था, तहमद निकला। शाह साहब सीधे बँगले में दाखिल हुए। औरत को पलंग पर सोता पाया, तो पलंग पर हाथ मार कर चिल्ला उठे—उठ। हसीना घबरा कर उठ बैठी और शाह जी के कदम चूमे। शाह जी एक तिरपाई पर बैठ गये और उससे यों बातें करने लगे—बेटी, आज तुमको हमारे सबब से बहुत राह देखनी पड़ी। यहाँ से दस कोस पर एक गाँव में एक राजा रहता है। अस्सी बरस का हो गया; मगर अल्लाह ने न लड़का दिया, न लड़की। एक दिन मुझे बुलवाया। मैं कहीं आता-जाता तो हूँ नहीं, साफ़ कहला भेजा कि तुम्हें ग़रज़ हो तो आओ, ख़ुदा के बंदे ख़ुदा के सिवा और किसी के द्वार पर नहीं जाते। आखिर रानी को लेकर वह आप आया और मेरे क़दमों पर गिर पड़ा। मैंने रानी के सिर पर एक बिना सूँघा गुलाब का फूल दे मारा। पाँचवें महीने अल्लाह ने लड़का दिया और राजा मेरे पास दौड़ा आता था कि मैं राह में मिला। देखते ही मुझे रथ पर बिठा लिया। अब कहता है, रुपया लो, जागीर लो, गाँव लो, हाथी-घोड़े लो। मगर मैं कब माँगता हूँ। फ़क़ीरों को दुनियाँ से क्या काम। इस वक्त जा कर पीछा छूटा। तुम पानी तो लायी होगी?

हसीना—मैं आपकी लौंडी हूँ, यह क्या कम है कि आप मेरा इतना ख़याल रखते हैं। वह पानी रखा हुआ है। आप फूँक डाल दें, तो मैं चली जाऊँ।

यह कह कर वह उठी; मगर बर्तन देखा, तो पानी नदारत। ऐं! यह पानी क्या हुआ! ज़मीन पी गयी, या आसमान! अभी पानी भर कर रखा था, देखते-देखते उड़ गया। ग़ज़ब ख़ुदा का, एक बूँद तक नहीं; लबालब भरा हुआ था!

शाह जी—अच्छा, तो बता दूँ; मुझे जोग-बल से मालूम हो गया कि तुम आती हो। जब तुम सो रहीं, तो मैंने आँख बंद की, और यहाँ पहुँच गया। पानी पिया, तो फिर आँख बंद की और फिर राजा साहब के पास हो रहा। फूँक डालने की साइत

उसी वक़्त थी। टल जाती, तो फिर एक महीने बाद आती। अब तुम यह इलायची लो और कल आधी रात को मरघट में गाड़ दो। तुम्हारी मुराद पूरी हो जायगी।

युवती ने इलायची ले ली। मियाँ आज़ाद चुपके-चुपके सब सुन रहे थे। अब उन्हें खूब ही मालूम हो गया कि शाह जी रँगे सियार हैं। लोटे का पानी तो मैंने पिया, और आपने यह गढ़ा कि आँख बंद करते ही यहाँ आये, और पानी पी कर फिर किसी तरकीब से चल दिये। खूब खिल-खिला कर हँस पड़े। वाहरे मक्कार! जालिये! इतना बड़ा झूठा न देखा, न सुना। ऐसे बड़े वली हो गये कि इनकी दुआ से एक रानी पाँचवें ही महीने बच्चा जन पड़ी। झूठ भी तो कितना! हद तो यों है कि झूठों के सरदार हैं। पट्टे बढ़ा लिये, तहमद बाँध कर शाहजी बन गये। लगे पुजने। कोई बेटा माँगता है, कोई तावीज़ माँगता है, कोई कहता है मेरा मुक़दमा जितवा दो तो नयाज़ चढ़ाऊँ, कोई कहता है नौकरी दिलवा दीज़िए तो मिठाई खिलाऊँ। संयोग से कहीं उसकी मुराद पूरी हो गयी, तो शाह साहब की चाँदी है, वरना किसकी मजाल कि शिकायत का एक हर्फ़ मुँह से निकाले। डर है कि कहीं ज़बान न सड़ जाय। अल्लाह री धाक! बहुत से अक़्ल के दुश्मन इन बने हुए फ़क़ीरों के जाल में फँस जाते हैं। आज़ाद ऐसे बने हुए सिद्ध और रँगेसियार फ़क़ीरों की क़ब्र तक से वाक़िफ़ थे। सोचे, इनकी मरम्मत कर देनी चाहिए।

शाह साहब ने चबूतरे पर लुंगी बिछायी और उस पर लेट कर दुआ पढ़ने लगे; मगर पढ़े-लिखे तो थे नहीं, शीन-काफ़ तक दुरुस्त नहीं, अनाप-शनाप बकने लगे। अब मियाँ आज़ाद से न रहा गया, बोल उठे—क्या कहना है शाह जी, वल्लाह, आपने तो कमाल कर दिया। अब तो शाह जी चकराये कि यह आवाज़ किसने कही, यह दुश्मन कौन पैदा हुआ। इधर-उधर आँखें फाड़-फाड़ कर देखा; मगर न आदमी, न आदमजाद, न इनसान, न इनसान का साया। या खुदा, यह कौन बोला? यह किसने टोका? समझे कि यह आसमानी ढेला है। किसी जिन्न की आवाज़ है। डरपोक तो थे ही, बदन थरथराने लगा, हाथ-पाँव फूल गये, करामातें सब भूल गये, हवास ग़ायब, होश कलाबाज़ी खाने लगे। कुरान की आयतें गलत-सलत पढ़ने लगे। आख़िर चिल्ला उठे—महजरूल अजायब। तो इधर यह बोल उठे—लुंगी मयशाह जी ग़ायब। अब शाह जी की घबराहट का हाल न पूछिए, चेहरा फ़क़, काटो तो लहू नहीं बदन में। मियाँ आजाद ने भाँप लिया कि शाह साहब पर रोब छा गया, झट निकल कर पत्तों को खूब खड़खड़ाया। शाह जी काँप उठे कि प्रेतों का लश्कर का लश्कर आ खड़ा हुआ। अब जान से गये। तब आज़ाद ने एक फारसी ग़ज़ल खूब लै के साथ पढ़ी, जैसे कोई ईरानी पढ़ रहा हो। शाह जी मस्त हो गये, समझे कि यह तो कोई फ़क़ीर है। अब तो जान में जान आयी। मियाँ आज़ाद के कदम लिये। उन्होंने पीठ ठोंकी। शाह जी उस वक्त नशे की तरंग में थे; खयाल बँध गया कि कोई आसमान से उतरा है।

आज़ाद—कीस्ती वो अज कुजाई व वामनत चे कार अस्त।

(कौन है, कहाँ से आता है और मुझसे क्या काम है ?)

शाह जी के रहे-सहे हवास और ग़ायब हो गये। ज़बान समझ में न आयी। समझे कि जरूर आसमान का फ़रिश्ता है। हमारी जान लेने को आया है। दबे दाँतों बोले— समझता नहीं हूँगा कि आप क्या हुक्म देंगे। हमने बहुत गुनाह किये, अब माफ़ फ़रमाओ। कुछ दिन और जीने दो, तो यह ठगविद्या छोड़ दूँ। मैं समझ गया कि आप मेरी जान लेने आये हैं।

आज़ाद—यह बुढ़ापा और इतनी बदकारी, यह सिन और साल और यह चाल-ढाल। याद रख कि जहन्नुम के गड्ढे में गिरेगा और दोज़ख़ की आग में जलाया जायगा। सुन, मैं न आसमान का फ़रिश्ता हूँ, न कोई जिन्न हूँ। मैं हकीम बलीनास की पाक रूह हूँ, हकीम हूँ, ख़ुदा से डरता हूँ, मेरे कब्जे में बहुत से तिलस्म हैं, मेरा मज़ार इसी जगह पर था जहाँ तेरा चबूतरा है और जहाँ तू नापाक रहता है और शोरबा लुढ़काता है। ख़ैर, तेरी जहालत के सबब से मैंने तुझे छोड़ दिया; लेकिन अब तूने यह नया फरफंद सीखा कि हसीनों को फाँसता है और उनसे कुछ ऐंठता है। उस जमाने में यह औरत मेरी बीबी थी। ले, अब यह हथकंडे छोड़, मक्र और दग़ा से मुँह मोड़, नहीं तो तू है और हम। अभी ठीक बनाऊँगा और नाच नचाऊँगा। तेरी भलाई इसी में है कि अपना कुल हाल कह चल, नहीं, तू जानेगा। मेरा कुछ न जायगा।

शाह जी ने शराब की तरंग में मारे डर के अपनी बीती कहानी शुरू की—चौदह बरस के सिन से मुझे चोरी करने की लत पड़ी और इतना पक्का हो गया कि आँख चूकी और गठरी उड़ायी, ग़ाफ़िल हुआ और टोपी खिसकायी। पहले कुछ दिन तो लुटियाचोर रहे, मगर यह तो करती विद्या है, थोड़े ही दिनों में हम चोरों के गुरू-घंटाल हो गये। सेंद लगाना कोई हमसे सीखे, छत की कड़ियों में यों चिमट रहूँ, जैसे कोई छिपकली, उचकफाँद में बंदर मेरे मुकाबले में मात है, दबे पाँव कोसों निकल जाऊँ, क्या मज़ाल किसी को आहट हो। शहर भर के बदमाश, लक्के, लुच्चे, शोहदे हमारी टुकड़ी में शामिल हुए। जिसने हेकड़ी की उसको नीचा दिखाया; जो टेढ़ा हुआ उसको सीधा बनाया। खूब चोरियाँ करने लगे। आज इसका माल मारा, कल उसकी छत काटी, परसों किसी नवाब के घर में सेंद दी। यहाँ तक कि डाके मारने लगे, सड़कों पर लूटमार शुरू कर दी। गोल में दुनियाभर के बेफ़िक्रे जमा हैं, कोई चंडू उड़ाता है, कोई चरस के दम लगाता है। गाँजे, भाँग, ठर्रे सबका शौक़ है। तानें उड़ रही हैं, बोतलें चुनी हुई हैं, गड़ेरियों के ढेर लगे हुए हैं, मक्खियाँ भिन-भिन करती हैं, सबको यही फ़िक्र है कि किसी का माल तारें। एक दिन शामत आयी, एक नवाब साहब के यहाँ चोरी करने का शौक़ चर्राया। उनके ख़िदमतगार को मिलाया, नौकरानियों को भी कुछ चटाया, और एक बजे के वक़्त घर से निकले। उसी मुहल्ले में एक महीने पहले ही एक मकान किराये पर ले रखा था। पहले उसी मकान में पैठे। नवाब का मकान कोई पचास ही क़दम होगा। तीन आदमी दस क़दम पर और पाँच बीस

क़दम पर खड़े हुए। हम, ख़िदमतगार और एक चोर साथ चले कि घर में धँस पड़ें। क़रीब गये तो ड्योढ़ी पर चौकीदार ने पुकारा, कौन ? सन से जान निकल गयी ! उम्र-भर में यही ख़ता हुई कि चौकीदार को पहले से न मिला लिया। अब क्या करें। 'पिछली बुद्धि गँवार की !' फिर चौकीदार ने ललकारा, कौन आता है ? हमने कहा—हम हैं भाई। चौकीदार बोला—हम की एक ही कही, हम का कुछ नाम भी है ? आख़िर, हमने चौकीदार को उसी दम कुछ चटा कर सेंद दी। घर में घुसे, तो क्या देखते हैं कि एक पलँग पर नवाब साहब सोते हैं, और दूसरे पलँग पर उनकी बेगम साहबा मीठी नींद में मस्त हैं, मगर शमा रोशन है। अपने साथी से इशारा किया कि शमा को गुल कर दे। वह ऐसा घबराया कि बड़े ज़ोर से फूँक मारी। मैंने कहा, ख़ुदा ही ख़ैर करे, ऐसा न हो कि नवाब जाग उठें तो लेने के देने पड़ें। आगे बढ़ कर मैंने बत्ती को तेल में खिसका दिया, चलिए, चिराग़ गुल, पगड़ी ग़ायब। बेगम साहबा के सिरहाने ज़ेवर का संदूक रखा था, मगर आड़ में। हम तो महरी की ज़बानी कच्चा चिट्ठा सुन चुके थे, 'घर का भेदी लंका ढाय', फ़ौरन संदूक उठाया और दूसरे साथी को दिया कि बाहर पहुँचाये। वह कुछ ऐसा घबराया कि मारे बौखलाहट के काँपने लगा और धम से गिर पड़ा। धमाके की आवाज सुनते ही नवाब चौंक पड़े, शेरबच्चा सिरहाने से उठा, पैतरे बदल-बदल कर फिकैती के हाथ दिखाने लगे। मैंने एक चाकी का हाथ दिया, और झट कमरे से निकल, दीवाल पर चढ़, पिछवाड़े कूदा और 'चोर-चोर' चिल्लाता हुआ नाके बाहर। वे दोनों सिरबोझिये नौसिखिये थे, पकड़ लिये गये। मगर वाह रे नवाब ! बड़ा ही दिलेर आदमी है ! दोनों को घेर लिया। वे तो जेलखाने गये, मैं बेदाग़ बच गया। अब मैंने वह पेशा छोड़ा और ख़ून पर कमर बाँधी। एक महीने में कई ख़ून किये। पहले एक सौदागर के घर में घुस कर उसे चारपाई पर ढेर कर दिया; जमा-जथा हमारे बाप की हो गयी। फिर रेल पर एक माल-दार जौहरी का गला घोट डाला और जवाहिरात साफ़ उड़ा लिये। तीसरी दफ़ा दो बनजारे सराय में उतरे थे। हमें ख़बर मिली कि उनके पास सोने की ईंटें हैं। उनको सराय ही में अंटा-ग़फ़ील करना चाहा। भठियारे ने देख लिया, पकड़े गये और क़ैदख़ाने गये। वहाँ आठ दिन रहे थे, नवें दिन रात को मौका पा कर कालकोठरी का दरवाजा तोड़ा, एक बरकंदाज़ का सिर ईंट से फोड़ा, पहरे के चौकीदार को उसी की बंदूक से शहीद किया और साफ़ निकल भागे। अब सोचा, कोई नया पेशा अख़्तियार करें, सोचते-सोचते सूझी कि शाह जी बन जाओ। चट फ़क़ीरों का भेस बदल कर एक पेड़ के नीचे बिस्तर जमा दिया। पुजने लगे। एक दिन इस गाँव के ठाकुर का लड़का बीमार हुआ। यहाँ हकीम, न डाक्टर ! किसी ने कह दिया कि एक फ़क़ीर पकरिया के नीचे बैठे ख़ुदा को याद किया करते हैं, चेहरे से नूर बरसता है, किसी से लेते हैं न देते हैं। ठाकुर ने सुनते ही अपने भाई को भेजा। हम साथ गये। ख़ुशी से फूले न समाते थे कि आज पाला हमारे हाथ रहा तो उम्र भर चैन से गुज़रेगी। हमारा पहुँचना था कि सब उठ खड़े हुए। हम किसी से बोले न चाले,

जा कर लड़के के पास बैठ गये और कुछ बुदबुदा कर उठ खड़े हुए। देखा, लड़के का बुरा हाल है, बचना मुहाल है। ठाकुर क़दमों पर गिर पड़ा। हमने पीठ ठोंकी और लंबे-लंबे डग बढ़ाते चल दिये। संयोग से एक योरोपियन डाक्टर दौरा करता हुआ उस गाँव में आया और उसकी दवा से मरीज़ चंगा हो गया। अब मज़ा देखिए, डाक्टर का कोई नाम भी नहीं लेता, सब हमारी तारीफ़ करते हैं। ठाकुर ने हमें एक हाथी और हज़ार रुपये दिये। यह हमने क़बूल न किया। सुभानअल्लाह! फिर तो हवा बँध गयी। अब चारों तरफ़ हम ही हम हैं, कोई बीमार हो, तो हम पूछे जायँ, कोई मरे तो हम बुलाये जायँ। मियाँ-बीवी के झगड़ों में हम क़ाज़ी बनते हैं, बाप-बेटे का झगड़ा हम फ़ैसला करते हैं। सुबह से शाम तक डालियों पर डालियाँ आती रहती हैं।

आज़ाद ने यह क़िस्सा सुन कर शाह जी को खूब डाँटा—तू काफ़िर है, मलऊन है, तू अपनी मक्कारी से खुदा के बंदों को ठगता है, अब हमारी बात सुन, हमारा चेला बन जा, तो तुझे छोड़ दें। कल तड़के गजरदम गाँव भर में कह दे कि हमारे पीर आये हुए हैं। दो सौ ग्यारह बरस की उम्र बताना। जिसे ज़ियारत करनी हो, आये। शाह जी की बाछें खिल गयीं कि चलो, किसी तरह जान तो बची। नूर के तड़के गाँव भर में पुकार आये कि हमारे पीर आये हैं, जिसे देखना हो, देख ले। शाह जी की तो वहाँ धाक बँधी ही थी, जब लोगों ने सुना कि इनके भी वली-खंगड़ आये हैं, तो शौक़ चर्राया कि ज़ियारत को चलें। दो दिन और दो रात मियाँ आज़ाद अपने घर पर आराम करते रहे। तीसरे दिन फ़क़ीराना वेष बदले हुए हरे-हरे पेड़ों के साये में आ बैठे। देखते क्या हैं, पौ फटते ही औरत-मर्द, ठट के ठट जमा हो गये। हिंदू और मुसलमान, जवान औरतें, गहनों से लदी हुई आ कर बैठी हुई हैं। तब आज़ाद ने खड़े हो कर कुरान की आयतें पढ़ना शुरू कीं और बोले—ऐ खुदा के बंदो, मैं कोई वली नहीं हूँ, तुम्हारी ही तरह खुदा का एक नाचीज़ बंदा हूँ। अगर तुम समझते हो कि कोई इनसान चाहे कितना ही बड़ा फ़क़ीर क्यों न हो, खुदा की मरज़ी में दखल दे सकता है, तो तुम्हारी ग़लती है। होता वही है, जो खुदा को मंजूर होता है। हमारा फ़र्ज़ यही है कि तुम्हें खुदा की याद दिलायें। अगर कोई फ़क़ीर, कोई करामात दिखा कर अपना सिक्का जमाना चाहता हो, तो समझ लो कि वह मक्कार है। जाओ, अपना-अपना धंधा देखो।

६

मियाँ आज़ाद मुँह-अँधेरे तारों की छाँह में बिस्तर से उठे, तो सोचे; साँड़नी के घास-चारे की फ़िक्र करके ज़रा अदालत और कचहरी की भी दो घड़ी सैर कर आयें। पहुँचे तो क्या देखते हैं, एक घना बाग़ है और पेड़ों की छाँह में मेला-सा लगा है। कोई हलवाई से मीठी-मीठी बातें करता है। कोई मदारिये को ताजा कर रहा है। कुँजड़े फलों की डालियाँ लगाये बैठे हैं। पानवाले की दूकान पर वह भीड़ है कि खड़े होने की जगह नहीं मिलती। चूरनवाला चूरन बेच रहा है। एक तरफ़ एक हकीम साहब दवाओं की पुड़िया फैलाये जिरियान की दवा बेच रहे हैं। बीसों मुंशी-मुतसद्दी चटाइयों पर बैठे अर्ज़ियाँ लिख रहे हैं। मुस्तग़ीस हैं कि एक-एक के पास दस-दस बैठे क़ानून छाँट रहे हैं—अरे मुंशी जी, यो का अंट-संट चिघटियाँ सी खँचाय दिहो? हम तो आपन मज़मून बतावत हैं, तुम अपने अढ़ाई चाउर अलग चुरावत हौ। ले मोर मुंसी जी, तनिक अस सोच-विचार के लिखो कि फ़रीक़ सानी क्यार मुक़द्दमा ढिसमिसाय जाय। ले तोहार गोड़ धरित है, दुइ कच्चा अउर लै लेव। आज़ाद ने जो गवाह-घर की ओर रुख़ किया, तो सुभानअल्लाह! काले-काले चोगों की बहार नज़र आयी। कोई इधर से उधर भागा जाता है, कोई मसनद लगाये बैठा गँवारों से डींग मार रहा है। ज़रा और आगे बढ़े थे कि चपरासी ने कड़क कर आवाज़ लगायी—सत्तारखाँ हाज़िर हैं? एक अफीमची के पाँव लड़खड़ाये, सीढ़ियों से लुढ़कते हुए धम से नीचे! एक टठोल ने कहा—वाह जनाब, गिरे तो मुझसे पूछ क्यों न लिया? आज़ाद ज़रा और आगे बढ़े, तो एक आदमी ने डाँट बतायी—कौन हो? क्या काम है?

आज़ाद—इसी शहर में रहता हूँ। ज़रा सैर करने चला आया।

आदमी—कचहरी में खड़े रहने का हुक्म नहीं है, यहाँ से जाइए, वरना चपरासी को आवाज़ देता हूँ।

आज़ाद—बिगड़िए नहीं, बस इतना बता दीजिए कि आपका ओहदा क्या है?

आदमी—हम उम्मेदवारी करते हैं। तीन महीने से रोज़ यहाँ काम सीखते हैं। अब फर्राटे उड़ाता हूँ। डाकेट तड़ से लिख लूँ, नक़शा चुटकियों में बनाऊँ। किसी काम में बंद नहीं। पंद्रह रुपये की नौकरी हमें मिला ही चाहती है। मगर पहले तो घास छीलना मुशकिल मालूम होता था, अब लुक़मान बन गया।

आज़ाद—क्यों मियाँ, तुम्हारे वालिद कहाँ नौकर हैं?

उम्मेदवार—जनाब, वह नौकर नहीं हैं, दस गाँव के जमींदार हैं।

आज़ाद—क्या तुमको घर से निकाल दिया, या कुछ खटपट है?

उम्मेदवार—तो जनाब हम पढ़े-लिखे हैं कि नहीं!

आज़ाद—हज़रत, जिसे खाने को रोटियाँ न हों, वह सत्तू बाँध कर नौकरी के पीछे पड़े, तो मुज़ायक़ा नहीं। तुम ख़ुदा के करम से ज़मींदार हो, रुपयेवाले हो, तुमको यह क्या सूझी कि दस-पाँच की नौकरी के लिए एड़ियाँ रगड़ते हो ? इसी से तो हिंदुस्तान ख़राब है; जिसे देखो, नौकरी पर आशिक़। मियाँ, कहा मानो, अपने घर जाओ, घर का काम देखो, इस फेर में न पड़ो। यह नहीं कि आमामा बाँधा और कचहरी में जूतियाँ चटकाते फिरते हैं ! मुहर्रिर पर लोट, अमानत पर उधार खाये बैठे हैं।

दूसरे उम्मेदवार की निस्बत मालूम हुआ कि एक लखपती महाजन का लड़का है। बाप की कोठी चलती है। लाखों का वारा-न्यारा होता है। बेटा बारह रुपये की नौकरी के लिए सौ-सौ चक्कर लगाता है। चौथे दर्जे से मदर्सा छोड़ा और अपरेंटिस हुए। काम ख़ाक नहीं जानते। बाहर जाते हैं, तो मुंसरिम साहब से पूछ कर। इस वक़्त जब दफ्तरवाले अपने-अपने घर जाने लगे, तो हज़रत पूछते क्या हैं— क्यों जी, यह सब चले जाते हैं, अभी छुट्टी की घंटी तो बजी ही नहीं।

स्कूल की घंटी याद आ गयी !

मियाँ आज़ाद दिल ही दिल में सोचने लगे कि ये कमसिन लड़के, पंद्रह-सोलह बरस का सिन; पढ़ने-लिखने के दिन, मदर्सा छोड़ा, कॉलेज से मुँह मोड़ा और उम्मेदवारों के गोल में शामिल हो गये। 'अलिफबे नगाड़ा, इल्म को चने के खेत में पछाड़ा !' मेहनत से जान निकलती है, किताब को देख कर बुख़ार चढ़ आता है। जिससे पूछो कि भाई, मदर्सा क्यों छोड़ बैठे, तो यही जवाब पाया कि उकलेदिस की अक़्ल से नफ़रत है। तवारीख़ किसे याद रहे, यहाँ तो घर के बच्चों का नाम नहीं याद आता। हम भी सोचे, कहाँ का झंझट ! अलग भी करो, चलता धंधा करो, जिसे देखिए, नौकरी के पीछे पड़ा हुआ है। ज़मींदार के लड़के को यह ख्वाहिश होती है कि कचहरी में घुसूँ, सौदागर के लड़के को जी से लगी है कि कॉलेज से चंपत हूँ और कचहरी की कुर्सी पर जा डटूँ। और मुहर्रिर, मुंशी, अमले तो नौकरी के हाथों बिक ही गये हैं। उनकी तो घूँटी ही में नौकरी है। बाबू बनने का शौक़ ऐसा चर्राता है कि अक़्ल को ताक़ पर रख कर गुलामी करने को तैयार हो जाते हैं।

यह सोचते हुए मियाँ आज़ाद और आगे चले, तो चौक में आ निकले। देखते क्या हैं, पंद्रह-बीस कमसिन लड़के बस्ते लटकाये, स्लेटें दबाये, परे जमाये, लपके चले आते हैं। पंद्रह-पंद्रह बरस का सिन, उठती जवानी के दिन, मगर कमर बहत्तर जगह से झुकी हुई, गालों पर झुर्रियाँ, आँखें गड्ढे में धँसी हुई। यह झुका हुआ सीना, नयी जवानी में यह हाल ! बुढ़ापे में तो शायद उठ कर पानी भी न पिया जायगा ! एक लड़के से पूछा, क्यों मियाँ, तुम सब के सब इतने कमज़ोर क्यों दिखलायी देते हो ? लड़के ने जवाब दिया, जनाब, ताकत किसके घर से लायें ? दवा तो है नहीं कि अत्तार की दूकान पर जायँ, दुआ नहीं कि किसी शाह जी से सवाल करें, हम तो बिना मौत ही मरे। दस बरस के सिन में तो बीबी छम-छम करती हुई घर में

आयी। चलिए, उसी दिन से पढ़ना-लिखना छप्पर पर रखा। नयी धुन सवार हुई। तेरहवें बरस एक बच्चे के अब्बाजान हो गये। रोटियों की फ़िक्र ने सताया। हम दुबले-पतले न हों, तो कौन हो? फिर अच्छी गिज़ा भी मयस्सर नहीं; आज तक कभी दूध की सूरत न देखी, घी का सिर्फ नाम सुनते हैं।

मियाँ आज़ाद दिल में सोचने लगे, इन ग़रीबों की जवानी कैसी बर्बाद हो रही है! इसी धुन में टहलते हुए हज़रतगंज की तरफ़ निकल गये, तो देखा, एक मैदान में दस-दस पंद्रह-पंद्रह बरस के अँगरेजों के लड़के और लड़कियाँ खेल रहे हैं। कोई पेड़ की टहनी पर झूलता है, कोई दीवार पर दौड़ता है। दो-चार गेंद खेलने पर लट्टू हैं। एक जगह देखा, दो लड़कों ने एक रस्सी पकड़ कर तानी और एक प्यारी लड़की बदन तौल कर ज़मीन से उस पार उचक गयी। सब के सब खुश और तंदुरुस्त हैं। आज़ाद ने उन होनहार लड़कों और लड़कियों को दिल से दुआ दी और हिंदुस्तान की हालत पर अफ़सोस करते हुए घर आये।

७

मियाँ आज़ाद साँड़नी पर बैठे हुए एक दिन सैर करने निकले, तो एक सराय में जा पहुँचे। देखा, एक बरामदे में चार-पाँच आदमी फ़र्श पर बैठे धुआँधार हुक्के उड़ा रहे हैं, गिलौरी चबा रहे हैं और ग़ज़लें पढ़ रहे हैं। एक कवि ने कहा, हम तीनों के तख़ल्लुस का क़ाफ़िया एक है—अल्लामी, फ़हामी और हामी; मगर तुम दो ही हो—वकाद और जवाद। एक शायर और आ जायँ, तो दोनों तरफ़ से तीन-तीन हो जायँ। इतने में मियाँ आज़ाद तड़ से पहुँच गये।

एक ने पूछा—आप कौन ?

आज़ाद—मैं शायर हूँ।

आप तख़ल्लुस क्या करते हैं ?

आज़ाद ने कहा—आज़ाद। तब तो इन सबकी बाँछें खिल गयीं। जवाद, वकाद और आज़ाद का तुक मिल गया। अब लोग ग़ज़लें पढ़ने लगे। एक आदमी शेर पढ़ता है, बाकी तारीफ़ करते हैं—सुभान-अल्लाह, क्या तबीयत पायी है, वाह-वाह ! फिर फ़रमाइएगा; क़लम तोड़ दिये, कितनी साफ़ ज़बान है ! इस बोल-चाल पर कुरबान। कोई झूमता है, कोई टोपियाँ उछालता है।

आज़ाद—मियाँ, सुनो, हम शायरी के क़ायल नहीं। आप लोग तो ज़बान पर मरते हैं और हम ख़यालों पर जान देते हैं। हमें तो नेचर की शायरी पसंद है।

फ़हामी—अल्लाह, आप नेचरिए हैं ! अनीसिए और दबीरिए तो सुनते थे, अब नेचरिए पैदा हुए। ग़ज़ब ख़ुदा का ! आपको इन उस्तादों का क़लाम पसंद नहीं आता, जो अपना सानी नहीं रखते थे !

आज़ाद—मैं तो साफ़ कहता हूँ, यह शायरी नहीं, ख़ब्त है, बेतुकापन है, इसका भी कुछ ठिकाना है, झूठ के छप्पर उड़ा दिये। अब कान खोल कर नेचरी शायरी सुनो।

यह कह कर आज़ाद ने अँगरेजी की एक कविता सुनायी तो वह क़हक़हा पड़ा कि सराय भर गूँज उठी।

फ़हामी—वाह जनाब, वाह, अच्छी गिट-पिट है ! इसी को आप शायरी कहते हैं ?

आज़ाद—'शेख क्या जाने साबुन का भाव !' 'भैंस के आगे बीन बजाये, भैंस खड़ी पगुराय।'

आज़ाद तो नेचरल शायरी की तारीफ़ करने लगे, उधर वे पाँचों उर्दू की शायरी पर लोट-पोट थे। आतश और मीर की ज़बान, नासिख़, अनीस, जौक, ग़ालिब, मोमिन-जैसे उस्तादों के क़लाम पढ़-पढ़ कर सुनाते थे। अब बताइए, फ़ैसला कौन करे ? भठियारिन झगड़ा चुकाने से रही, भठियारा घास ही छीलना जाने, आखिर यह राय तय पायी कि शहर चलिए ! जो पढ़ा-लिखा आदमी पहिले मिले, उसी का फ़ैसला सबको मंजूर। सबने

हाथ पर हाथ मारा। चलने ही को थे कि भठियारिन ने इनको ललकारा और चमक कर मियाँ जवाद का दामन पकड़ा--मियाँ, यह बुत्ते किसी और को बताना, हम भी इसी शहर में बढ़ कर इतने बड़े हुए हैं। हूँ तो अभी आपकी लड़की के बराबर, मुल सैकड़ों ही कुओं का पानी पी डाला। पहले कौड़ी-कौड़ी बायें हाथ से रख जाइए, फिर असबाब उठाइए।

अल्लामी--नेकबख्त, हम शरीफ़ भलेमानस हैं। शरीफ़ लोग कहीं दो पैसे के लिए ईमान बेचा करते हैं ? चलो, दामन छोड़ दो, अभी दम के दम में आये।

भठियारिन--इस दाम में बंदी न आयेगी। ऐसे बड़े साहूकार खरे असामी हो, तो एक गंडा चुपके से निकाल दो न ?

वकाद—यह मुड़चिरी है या भठियारिन ? साहब, इससे पीछा छुड़ाओ। ऐसी भठियारिन तो कहीं देखी न सुनी।

भठियारिन—मियाँ, कुछ बेधे तो नहीं हुए हो, या बिल्ली नाँघ कर घर से चले थे ? चुपके से पैसे रख कर तब क़दम उठाइए।

मियाँ जवाद सीधे-सादे आदमी थे। जब उन्होंने देखा कि मुफ़्त में घेरे गये, तो कहा—भाई, तुम पाँचों जाओ, हम यहाँ बी भठियारिन की ख़ातिर से बैठे हैं। तुम लोग निपट आओ। वे सब तो उधर चले और जवाद सराय ही में भठियारी की हिरासत में बैठे, मगर एक आने पैसे न दे सके। दो-चार मिनट के बाद पुकारा–भठियारी-भठियारी ! मैं लेटा हूँ। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे पेट में चूहे दौड़ें कि रफ़ू-चक्कर हुए। फिर तीन मिनट के बाद गला फाड़-फाड़ चिल्लाने लगे—भठियारिन, हम भागनेवाले असामी नहीं हैं, तुम मज़े से अपनी दाल बघारो। जब इन्होंने बार-बार छेड़ना शुरू किया, तो वह आग-भभूका हो गयी और बोली—मियाँ, ऐसे दो पैसे से दरगुज़री, तुमने तो गुल मचा-मचा कर मेरा कलेजा पका दिया। आप जायँ, बल्कि खटिया समेत दफ़न हों, तो मैं ख़ुश, मेरा अल्लाह ख़ुश। ऐ वाह, 'देखी तेरी कालपी और बावन पुरे उजाड़।' मियाँ, हूँ तो अभी जुमा-जुमा आठ दिन की, मुल नाक पर तो मक्खी बैठने नहीं देती !

इधर मियाँ जवाद भठियारिन से चुहल कर रहे थे, उधर वे पाँचों आदमी सराय से चले, तो रास्ते में एक बुज़ुर्ग से मुलाकात हुई।

हामी ने कहा—या मौलाना, एक मसला हल कीजिए, तो एहसान होगा।

बुज़ुर्ग—मियाँ, मैं एक ज़ाहिल, बेवकूफ़, बेसमझ, गुमराह आदमी हूँ, मौलाना नहीं; मौलाना होना दुश्वार बात है। मुझे मौलाना कहना इस लफ़्ज़ को बदनाम करना है।

हामी—अच्छा साहब, आप मौलाना न सही, मुंशी सही, मियाँ सही, आप एक झगड़े का फ़ैसला कर दीजिए और घर का रास्ता लीजिए। आपका हमारे बुज़ुर्गों पर और बुज़ुर्गों के बुज़ुर्गों पर एहसान होगा। झगड़ा यह है कि यह साहब (आज़ाद की तरफ़ इशारा करके) नेचरी शायरी के तरफ़दार हैं, और हम चारों उर्दू-शायरी पर जान देते हैं। अब बतलाइए, हममें से कौन ठीक कहता है और कौन ग़लत ?

बुज़ुर्ग—यह तो बहुत ग़ौर करने की बात नहीं। आप चारों मुफ़्त में झगड़ा करते हैं। आप सीधे अस्पताल जाइए और फ़स्द खुलवाइए, शायरी पर जान देना समझदारों का काम नहीं। जान ख़ुदा की दी हुई है, उसी की याद में लगानी चाहिए। बाक़ी रही दूसरे क़िस्म की शायरी, मैंने उसका नाम भी नहीं सुना, उसके बारे में क्या अर्ज़ करूँ?

पाँचों आदमी यहाँ से निराश हो कर आगे बढ़े, तो एक मकतबख़ाना नज़र से गुज़रा। टूटा-फूटा मकान, पुरानी-धुरानी दालान, दीवारें बाबा आदम के वक़्त की। एक मौलवी साहब लंबी दाढ़ी लटकाये, हाथ में छड़ी लिये, हिल-हिल कर पढ़ा रहे हैं और बीस-पचीस लड़के जदल-क़ाफ़िया उड़ा रहे हैं। एक लड़के ने दूसरे की चाँद पर तड़ से धप जमायी। मौलवी साहब पूछते हैं—अबे, यह क्या हुआ? लड़के कहते हैं—जी, कुछ नहीं, तख़्ती गिर पड़ी। अबे, यह तख़्ती की आवाज़ थी? जी हाँ, और नहीं तो क्या? इतने में दो-चार शरीर लड़कों ने मुँह चिढ़ाना शुरू किया। देखिए मौलवी साहब, यह मुँह चिढ़ाता है। नहीं मौलवी साहब, यह झक मारता है, मैं तो बाहर गया था। गुल-गपाड़े की आवाज़ ऐसी बुलंद है कि आसमान की ख़बर लाती है, कान-पड़ी आवाज़ नहीं सुनायी देती। जिधर देखो, चिल्ल-पों, जूती-पैज़ार! मगर सब के सब हिल-हिल कर बड़बड़ाते जाते हैं। किताब तो दो ही चार पढ़ रहे हैं; मगर वाही-तबाही, अनाप-शनाप बहुतों की ज़बान पर है।

एक—आज शाम को मैं बाने की कनकइया ज़रूर लड़ाऊँगा।

दूसरा—आग़ा तक़ी के बाग़ में कौवा हलाल है।

तीसरा—अरे माली, तुझे गुलबूटे की पहचान रहे।

चौथा—मौलवी साहब, गो पीर हुए, नादान रहे।

पाँचवाँ—पढ़ोगे-लिखोगे, तो होगे ख़राब,
खेलोगे-कूदोगे, होगे नवाब।

मगर सबकी आवाज़ें ऐसी मिल-जुल गयी हैं कि ख़ाक समझ में नहीं आता, क्या ख़ुराफ़ात बकते हैं। लौंडे तो जदल-क़ाफ़िया उड़ा रहे हैं, उधर मौलवी साहब मज़े से ऊँघते हैं। जब नींद खुली, तो एक लड़के को बुलाया—आओ, किताब लाओ, सबक पढ़ लो। वह सिर खुजलाता हुआ मौलवी साहब के क़रीब जा बैठा, और सबक़ शुरू हुआ, मगर न तो लड़के ने कुछ समझा कि मैंने क्या पढ़ा और न मौलवी साहब को मालूम हुआ कि मैंने क्या पढ़ाया। दोपहर के वक़्त लड़के तख़्ती ले कर बैठे, कोई गेंदे की पत्ती तख़्ती पर मलता है, कोई कौड़ी से तख़्ती को चिकनाता है। आध घंटे तक यही हुआ किया। फिर लड़के लिखने बैठे, मौलवी साहब कोठरी से मक्खियों को निकाल और दरवाज़ा बंद करके सो रहे। यहाँ ख़ूब लप्पा-डुग्गी हुई। दो घंटे के बाद मौलवी साहब चौंके। कोठरी खोलते हैं, तो यहाँ दो लड़कों में चट-पट हो रही है, दोनों गुँथे पड़े हैं। निकलते ही एक के तमाचे लगाने शुरू किये।

जो अमीर का लड़का था और मौलवी साहब को त्यवहारी और जुमेराती खूब दिया करता था, उससे तो न बोले, बेचारे ग़रीब पर खूब हाथ साफ़ किया। आज़ाद ने दिल में कहा—

गर हमीं मकतब अस्त वईं मुल्ला,
कारे तिफ़्लों तमाम ख्वाहद शुद।

(अगर यही मकतब है और यही मौलवी, तो लड़के पढ़ चुके।)

८

एक दिन मियाँ आज़ाद सराय में बैठे सोच रहे थे, किधर जाऊँ कि एक बूढ़े मियाँ लठिया टेकते आ खड़े हुए और बोले—मियाँ, जरी यह खत तो पढ़ लीजिए, और इसका जवाब भी लिख दीजिए। आज़ाद ने खत लिया और पढ़ कर सुनाने लगे—

मेरे खूसट शौहर, खुदा तुमसे समझे !

आज़ाद—वाह ! यह तो निराला खत है। न सलाम, न बंदगी। शुरू ही से कोसना शुरू किया।

बूढ़े—जनाब, आप खत पढ़ते हैं कि मेरे घर का क़ज़िया चुकाते हैं ? पराये झगड़े से आपका वास्ता ? जब मियाँ-बीबी राजी है, तब आप कोई क़ाज़ी हैं !

आज़ाद—अच्छा, तो यह कहिए कि आपकी बीबी-जान का खत है। लीजिए, सुनाये देता हूँ—

'मेरे खूसट शौहर, खुदा तुमसे समझे ! सिकंदर पाताल से प्यासा आया; मगर तुमने अमृत की दो-चार बूँदें जरूर पी ली हैं, जभी मरने का नाम नहीं लेते। कुछ ऊपर सौ बरस के तो हुए, अब आखिर क्या आक़बत के बोरिये बटोरोगे ? ज़रा दिल में शरमाओ, हज़ारों नौजवान उठते जाते हैं, और तुम टैयाँ से मौजूद हो। डंकूफीवर भी आया, मगर तुम मूँछों पर ताव ही देते रहे। हैज़े ने लाखों आदमी चट किये, मगर आप तो हैज़े को भी चट कर जायँ और डकार तक न लें। बुखार में हज़ारों हयादार चल बसे; मगर तुम और भी मोटे हो गये। तुम्हें लक़वा भी नहीं मारता, लू के झोंके भी तुम्हें नहीं झुलसाते, दरिया में भी तुम नहीं फिसल जाते, और सौ बात की एक बात यह है कि अगर हयादार होते, तो एक चिल्लू काफी था; मगर तुम वह चिकने घड़े हो कि तुम पर चाहे हज़ारों ही घड़े पड़ें; लेकिन एक बूँद न थम सके। वाह पट्ठे, क्यों न हो ! किस बुरी साइत में तुम्हारे पाले पड़ी। किस बुरी घड़ी में तुम्हारे साथ ब्याह हुआ। माँ-बाप को क्या कहूँ, मगर मेरी गरदन तो कुंद छुरी से रेत डाली। इससे तो किसी कुएँ ही में ढकेल देते, कसाई ही के हवाले कर देते, तो यह रोज़-रोज़ का कुढ़ना तो न होता। तुम खुद ही इंसाफ करो। तुम्हारे बुढ़भस से मुझ पर क्या गाज पड़ी। हाथ तो आपके काँपते हैं, पाँव में सकत नहीं, मुँह में दाँत न पेट में आँत, कमर कमान की तरह झुकी हुई, आँखों की यह कैफ़ियत कि दिन को ऊँट नहीं सूझता। लाठी टेक कर दस क़दम चले भी तो साँस फूल गयी, दम टूट गया। सुस्ताने बैठे, तो उठने का नाम नहीं लेते। सुबह को नन्हीं-नहीं दो चपातियाँ खा लीं, तो शाम तक खट्टी डकारें आ रही हैं, तोला भर सिकंजबीन का सत्यनाश किया; मगर हाज़मा ठीक न हुआ ! हाफ़िज़े का यह हाल कि अपने बाप का भी नाम याद नहीं। फिर सोचो तो कि ब्याह करने का शौक़ क्यों चर्राया। एक पाँव तो क़ब्र में लटकाया है और खयाल यह

गुदगुदाया है कि दूल्हा बनें, दुलहिन लायें। खुदा-क़सम, जिस वक़्त तुम्हारा पोपला मुँह, सफेद भौंह, गालों की झुर्रियाँ, दोहरी कमर, गंजी चाँद और मनहूस सूरत याद आती है, तो खाना हराम हो जाता है। वाह बड़े मियाँ, वाह! खुदा झूठ न बुलाये, तो हमारे अब्बाजान से पचास-साठ बरस बड़े होंगे, और अम्माजान को तुमने गोद में खिलाया हो तो ताज्जुब नहीं। खुदा गवाह है, तुम मेरे दादा के बाप से भी बड़े हो, मगर वाह री क़िस्मत, कि आप मेरे शौहर हुए! जमीन फट जाय, तो मैं धँस जाऊँ।

—तुम्हारी जवान बीबी'

आज़ाद—जनाब, इसका जवाब किसी बड़े मुंशी से दिलवाइए।

बूढ़ा—बुढ़ापे में अब कभी शादी न करेंगे।

आज़ाद—वाह, क्या अभी शादी करने की हवस बाकी है? अभी पेट नहीं भरा!

बूढ़ा—अब इसका ऐसा जवाब लिखिए कि दाँत खट्टे हो जायँ।

आज़ाद—आप औरत के मुँह नाहक़ लगते हैं।

बूढ़ा—जनाब, उसने तो मेरी नाक में दम कर दिया, और सच पूछो, तो जिस दिन उसको ब्याह लाये, नाक ही कट गयी। ऐसी चंचल औरत देखी न सुनी। मजाल क्या कि नाक पर मक्खी बैठ जाय।

आखिर, आज़ाद ने पत्र का जवाब लिखा—

'मेरी अलबेली, छैल-छबीली, नादान बीवी को उसके बूढ़े शौहर की उठती जवानी देखनी नसीब हो। वह जुग-जुग जिये और तुम पूतों फलो, दूधों नहाओ, अठारह लड़के हों और अठारह दूनी छत्तीस छोकरियाँ। जब मैं दालान में क़दम रखूँ, तो सब बच्चे, 'अब्बा आये, अब्बा आये, खिलौने लाये, पटाखा लाये' कह कर दौड़ें। मगर डर यह है कि तुम भी अभी कमसिन हो, उनकी देखा-देखी कहीं मुझे अब्बा न कह उठना कि पास-पड़ोस की औरतें मुझे उँगलियों पर नचायें। मुझे तुमसे इतनी ही मुहब्बत है, जितनी किसी को अपनी बेटी से होती है। अपनी नानी को मैं ऐसा प्यारा न था, जितनी तुम मुझे प्यारी हो। और क्यों न हो, तुम्हारी परदादी को मैंने गोदियों में खिलाया है और मेरी बहन ने उसे दूध पिलाया है। मुझे तुम्हारी दादी का गुड़िया खेलना इस तरह याद है, जैसे किसी को सुबह का खाना याद हो। तुम्हारे खत ने मेरे दिल के साथ वह किया, जो बिजली खलियान के साथ करती है, लेकिन मुझमें एक बड़ी सिफ़त यह है कि परले सिरे का बेहया हूँ। और क्यों न हो, शर्म औरतों को चाहिए, मैं तो चिकना घड़ा हूँ। माना कि आँखों में नूर नहीं, मगर निगाह बड़ी बारीक रखता हूँ, बहरा सही, लेकिन मतलब की बात खूब सुनता हूँ, बुड्ढा हूँ, कमज़ोर हूँ, मगर तुम्हारी मुहब्बत का दम भरता हूँ। तुम्हारा प्यारा-प्यारा मुखड़ा, रसीली अँखियाँ, गोरी-गोरी बहियाँ जिस वक़्त याद आती हैं, कलेजे पर साँप लोटने लगता है। तुम्हारा चाँदनी रात में निखर कर निकलना, कभी मुसकिराना, कभी खिलखिलाना—कितना शरमाना? कैसा लजाना? और तो और, तुम्हारी फुर्ती से दिल लोट-पोट है, कलेजे पर चोट है। तुम्हारा

फिरकी की तरह चारों ओर घूमना, मोरों की तरह झूमना, कभी खेलते-खेलते मेरी चपतगाह पर टीप जमायी, कभी शोखी से वह डाँट बतायी कि कलेजा काँप उठा, कभी आप ही आप रोना, कभी दिन-दिन भर सोना, अल्हड़पन के दिन, बारह बरस का सिन, बीबीजान, तुम पर कुरबान, ले कहा मानो, हमें ग़नीमत जानो। मैं सुबह का चिराग़ हूँ, हवा चले या न चले, अब गुल हुआ, अब गुल हुआ। डूबता हुआ आफ़ताब हूँ, अब डूबा, अब डूबा। मुझे सताना, मुए पर सौ दुर्रे! तुम खूब जानती हो कि मेरी बातें कितनी मीठी होती हैं। सत्तर बरस हो गये कि दाँत चूहे ले गये, तब से हलुए पर बसर है, फिर जो रोज़ हलुआ खायगा, उसकी बातें मीठी क्यों न होंगी। तुम लाख रूठो, फिर भी हमारी हो, बीबी हो, वह शुभ घड़ी याद करो; जब हम दूल्हा बने, पुराने सिर पर नयी पगड़ी जमाये, सेहरा लटकाये, मेंहदी लगाये, मुर्गी के बराबर घोड़िया पर सवार, 'मीठी पोई' जाते थे, और तुम दुलहिन बनी, सोलह सिंगार किये पालकी में से झाँक रही थीं। हमारे गालों की झुर्रियाँ, हमारा पोपला मुँह, हमारी टेढ़ी कमर देख कर खुश तो न हुई होगी? और क्या लिखूँ, एक नसीहत याद रखो, एक तो मेले-ठेले न जाना, दूसरे आस-पास की छोकरियों को गुइयाँ न बनाना। खुदा करे, जब तक जमीन और आसमान क़ायम है, तुम जवान रहो, और नादान रहो; हमारे सफ़ेद बाल तुम्हें भायें, हासिद खार खायें।

तुम्हारा बूढ़ा शौहर'

बूढ़ा—माशा-अल्लाह! आपने खूब लिखा, मगर इस खत को ले कौन जाय? अगर डाक से भेजता हूँ, तो गुम होने का डर, उस पर तीन दिन की देर। अगर आप इतना एहसान करें कि इसे वहाँ पहुँचा भी दें, तो क्या पूछना।

आज़ाद सैलानी तो थे ही, समझे, क्या हर्ज़ है, साँड़नी मौजूद है, चलूँ, इसी बहाने ज़रा दिल्लगी देख आऊँ। कुछ बहुत दूर भी नहीं, साँड़नी पर मुश्किल से दो घंटे की राह है। बोले—आप बुज़ुर्ग आदमी हैं, आपका हुक्म बजा लाना मेरा फ़र्ज़ है, लीजिए जाता हूँ।

यह कह कर साँड़नी पर बैठे और छुन-छुन करते जा पहुँचे। दरवाज़े पर आवाज़ दी, तो एक कहारिन ने बाहर निकल कर पूछा—मियाँ कौन हो, कहाँ से आना हुआ, किसकी तलाश है?

आज़ाद—बी महरी साहबा, सलाम। हम मुसाफ़िर परदेशी हैं।

कहारिन—वाह! अच्छे आये मियाँ, यह क्या कुछ सराय है?

आज़ाद—खुदा के लिए बेगम साहबा से कह दो कि बड़े मियाँ ने एक खत भेजा है।

महरी ने एक चौकड़ी भरी, तो घर के अंदर थी। जा कर बोली—बीबी, मियाँ के पास से एक साहब आये हैं, खत लाये हैं।

वह चौंक उठी—चल झूठी, किसी और को जा कर उड़ाना, यहाँ कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं। मियाँ किसी क़ब्रस्तान में मीठी नींद सो रहे होंगे कि खत भेजेंगे?

महरी— जरी, झरोखे से झाँकिए तो; वह क्या सामने खड़े हैं।

बेगम साहबा झरोखे की तरफ़ चलीं, तो अपनी बूढ़ी अम्माँ को आइना सामने रखे, बाल सँवारते देखा। छेड़ कर बोलीं— ऐ अम्माँ, आज तो बेतौर चोटी-कंघी की फ़िक्र है। कोई घूरे; तो इंसान निखार करे। कोई मरे, तो आदमी शिकार करे। तुम दो ऊपर अस्सी बरस की हुईं, मगर जवानी की हवस न गयी। ख़ुदा ही ख़ैर करे।

अम्माँ—मुझ नसीबों-जली की किस्मत में यही बदा था कि बेटी की ज़बान से ऐसी-ऐसी बातें सुनूँ। कोई और कहती, तो उसकी ज़बान निकाल लेती; लेकिन तुम तो मेरी आँखों की पुतली हो। हाय! ममता बुरी चीज़ है! बेटा, तुम ये बातें क्या जानो, अभी जवान हो, नादान हो, बनावट-सजावट तो मेरी घूँटी में पड़ी थी, और मैं न बनती-टनती, तो तुम्हारी आँखों को तिरछी चितवन कौन सिखाता? बाहर जाओ, तुम्हारे मियाँ का आदमी आया है।

बीबी ने झरोखे से जो देखा, एक आदमी सचमुच खड़ा है, और है भी अलबेला, छैला, जवान, तो तुरंत महरी को भेजा कि जा कर उन्हें बैठने के लिए कुर्सी निकाल दे। आज़ाद तो कुर्सी पर बैठे और चिक के उधर आप जा बैठीं। आजाद की उन पर निगाह पड़ी, तो तीर सा लग गया। कमर ऐसी पतली कि साये के बोझ से बल खाये, मुखड़ा बिन घने चाँद को लजाये, उस पर सियाह रेशमी लिबास और हिना की बू-बास। जोबन फटा पड़ता था, निगाह फिसली जाती थी।

महरी ने आज़ाद से पूछा—बड़े मियाँ तो आराम से हैं?

आज़ाद—हाँ, मैं उनका ख़त लाया हूँ। अपनी बेगम साहबा से मेरा सलाम कहो और यह ख़त उनको दो।

महरी—बेगम साहबा कहती हैं, आप ख़त लाये हैं, तो पढ़ कर सुना भी दीजिए।

आज़ाद ने ख़त पढ़ कर सुनाया, तो उस नाज़नीन का चेहरा मारे ग़ुस्से के सुर्ख़ हो गया। बिना कुछ कहे-सुने समझ कर वहाँ से उठीं और अपनी माँ के पास आ कर खड़ी हो गयीं। अम्माँजान इस वक़्त चाँदनी की बहार देखने में मसरूफ़ थीं। बोलीं—बेटी, देख तो क्या नूर की चाँदनी छिटकी हुई है, चाँद इस वक़्त दुलहिन बना हुआ है!

बेटी—अम्मीजान, तुम्हारी भी अनोखी बातें हैं। सरदी की चाँदनी, जैसे बूढ़े की नसीबों-जली बीबी की जवानी। आज तो असमान यों ही झक-झक कर रहा है, आज निकला तो क्या, जब जानें कि अँधेरे-धुप में शक्ल दिखाये। बुढ़िया ताड़ गयी। बोली—बेटी, जरी सब्र करो, अपनी जवानी की कसम, बुड्ढा तो क़ब्र में पाँव लटकाये बैठा है, आज मुआ, कल दूसरा दिन, फिर हम तुमको किसी अच्छे घर ब्याहेंगे। अबकी ख़ुदाई भर की ख़ाक छान कर वह ढूँढ़ निकालूँ, जो लाखों में एक हो। सुबह-शाम ख़बर आना ही चाहती है कि बुड्ढा चल बसा।

यह सुन कर बेटी खिलखिला कर हँस पड़ी। बोली—अम्माँ, जब तुम अपनी जवानी

की क़सम खाती हो, तो मुझे बेअख्तियार हँसी आती है। तुम तो अपने को बिलकुल नन्हीं ही समझती हो। करोड़ों तो आपके गालों पर झुर्रियाँ, बगुले के पर का सा सफेद जूड़ा, सिर घड़ी का खटका बना हुआ, कमर टेढ़ी, मगर मेंहदी का लगाना न छूटा, न छूटा। रंगीन दुपट्टा ही उम्र भर ओढ़ा, जब देखो, कंघी-चोटी से लैस। खुदा-क़सम, ऐसी अनगढ़ बूढ़ी देखी न सुनी।

बुढ़िया ने टुइयाँ तोते की तरह पोपले मुँह से कहा—प्यारी, तुम्हारी बातों से मुझे हौल होता है, अल्लाह मेरी बच्ची पर रहम खाये, बूढ़े के मरने की खबर सुनाये।

महरी—बड़ी बेगम, आपके नमक की क़सम, साहबज़ादी को दिलोजान से आपका प्यार है; मगर भोली नादान हैं, जो अनाप-शनाप मुँह में आया, कह सुनाया। अल्हड़-पने के तो इनके दिन ही हैं, जुमा-जुमा आठ दिन की पैदायस, नेक-बद, ऊँच-नीच क्या जानें। जब सयानी होंगी, तो शहूर आपी-आप सीख जायँगी। बुढ़िया ने एक ठंडी साँस भरके कहा—जो मुझे इनकी बातों से रंज हुआ हो, तो खुदा मुझे जन्नत न दे। मगर करूँ क्या, बुरा तो यह मालूम होता है कि मुझको यह आये-दिन ताने देती है कि तुम बुढ़िया हो, बुढ़ापे में निखरती क्यों हो? मैं किससे कहूँ कि इसके ग़म ने मेरी कमर तोड़ डाली, इसको कुढ़ते देख कर घुली जाती हूँ, नहीं, अभी मेरा सिन ही क्या है! अच्छा, तू ही ईमान से कह, कोई और भी मुझे बूढ़ी कहता है?

महरी दिल में तो हँसती थी कि इन्हें जवान बनने का शौक़ चर्राया है, हौवा के साथ खेली होंगी, मगर अभी नन्हीं ही बनी जाती हैं; लेकिन छटी हुई औरत थी, बात बना कर बोली—ऐ तोबा, बुढ़ापे की आप में तो छाँह भी नहीं, मेरा अल्लाह जानता है, जब आप और बिटिया को कोई साथ देख लेता है, तो पहले आप पर नज़र पड़ती है, पीछे इन पर। बल्कि, एक मुई दिलजली ने परसों चुटकी ली थी कि "छोटी बी तो छोटी बी; बड़ी बी सुभान-अल्लाह।" लड़की तो खैर, इसकी माँ ने तो खूब काठी पायी है। आपका चेहरा कुंदन की तरह दमकता है, जो देखता है, तरसता है।

बुढ़िया तो खिल गयी लेकिन बेटी जल उठी। कड़क कर बोली—चल, चुप खुशा-मदिन! अल्लाह करे, तेरा मियाँ भी मेरे मियाँ का सा बुड्ढा हो जाय। और तुम खुशा-मद न करो, तो खाओ क्या? अम्माँ पर लोगों की नज़र पड़ती है! झूठे पर शैतान की फटकार! बूढ़ी औरत, कुछ ऊपर सौ बरस का सिन, लठिया टेक कर दस क़दम चलती हैं, तो घंटों हाँफा करती हैं। दिन को ऊँट और सारस नहीं सूझता, इनके बूढ़े नखरे देख कर हमको हँसी आती है। जी जलता है कि यह किस बिरते पर इतराती हैं, मुँह में दाँत न पेट में आँत; भला कमर तो मेरे सबब से झुक गयी, और दाँत क्या हुए?

आखिर, महरी ने उसे समझा-बुझा कर बात टाल दी, और बोली—वह मियाँ बाहर बैठे हैं, उनके लिए आप क्या कहती हैं? उसने महरी की बात का कुछ जवाब न दिया। वहाँ से उठ कर बगीचे में आयी और इठला-इठला कर टहलने लगी। बाल बिखरे हुए, यही मालूम होता था कि साँप लहरा रहा है। कमर लाखों बल खा रही है। मियाँ आज़ाद

ने चिक की दराजों से जो उसे बेनक़ाब देखा, तो सन से जान निकल गयी! कलेजे पर साँप लोटने लगा। संयोग से उस रमणी ने कहीं इनको देख लिया कि आँखें सेक रहे हैं और दूर ही से जोबन लूट रहे हैं, तो बदन को छिपाये, आँख चुराये, बिजली की तरह लौंक कर नज़र से ग़ायब हो गयीं। आज़ाद हैरान कि अब क्या करूँ। आख़िर, दिल की बेक़रारी ने ऐसा मजबूर किया कि आठ-आठ आँसू रो कर यह ग़ज़ल गाने लगे—

क्या जानिए कि वस्ल में क्या बात हो गयी;
आँखें नहीं मिलाते हैं शरमाये जाते हैं।
दिल मेरा लेके क्या कहीं भूल आये हैं हुज़ूर ?
खोये हुए से आप जो कुछ पाये जाते हैं।
काले डसें जो ज़ुल्फ़ तुम्हारी कभी छुएँ!
लो, अब तुम्हारे सिर की क़सम खाये जाते हैं।
तमकनत को न काम फ़रमाओ;
एक नज़र मुड़के देखती जाओ।
आशिक़ों से न इस क़दर शरमा;
एक निगह के लिए न आँख चुरा।
जाने-जाँ, कुछ तरस न खाओगी ?
यों तड़पता ही छोड़ जाओगी ?

वह इन-ऐसों की कब सुननेवाली थी, मुड़ कर देखना गाली थी। आज़ाद ने जब देखा कि यहाँ दाल गलने की नहीं, कोई यों टहलते हुए देख ले, तो लेने के देने पड़ें, तो बेचारे रोते हुए घर आये।

उधर उस नाज़नीं ने जवानी की उमंग में यह ठुमरी भैरवी की धुन में लहरा-लहरा कर गायी—

पिया के आवन की भयी बिरियाँ, दरवजवा ठाढ़ी रहूँ;
मोरे पिया को बेगि ले आओ री, निकसत जियरा जाय;
पिया दरवजवा ठाढ़ी रहूँ!

इसके जवाब में उनकी अम्माँजान टीपदार आवाज़ में क्या कहती हैं—

जोबनवाँ हो, चार दिना दीन्हों साथ।
जोबन रितु जात सभी मुख मोरत, 'कदर' न पूछे बात रे।
जोबनवाँ हो, चार दिना दीन्हों साथ।

मियाँ आज़ाद ने चलते-चलाते बाहर से यह तान लगायी—

तेरे नैनों ने मुझे मारा, रसीली मतवारियों ने जादू डारा।

महरी ने देखा कि सबने अपने-अपने हाल के मुताबिक हाँक लगायी। एक मैं ही फिसड्डी रह गयी, तो वह भी कफ़न फाड़कर चीख उठी—

जाओ-जाओ, काहे टाढ़े डारे गल-बाहीं रे !
घेरे रहत नित नेरे जैसे छाईं रे।

जानत हूँ जो हमसे चहत हो
नाहक इतनी बिनती करत हो,

'कदर' करत हो अरे नाहीं-नाहीं रे।
जाओ चलो, काहे टाढ़े डारे गल-बाहीं रे !

९

आज़ाद को नवाब साहब के दरबार से चले महीनों गुज़र गये, यहाँ तक कि मुहर्रम आ गया। घर से निकले, तो देखते क्या हैं, घर-घर कुहराम मचा हुआ है, सारा शहर हुसेन का मातम मना रहा है। जिधर देखिए, तमाशाइयों की भीड़, मजलिसों की धूम, ताज़िया-खानों में चहल-पहल और इमामबाड़ों में भीड़-भाड़ है। लखनऊ की मजलिसों का क्या कहना! यहाँ के मर्सिये पढ़नेवाले रूम और शाम तक मशहूर हैं। हुसेनाबाद का इमामबाड़ा चौदहवीं रात का चाँद बना हुआ था। उनके साथ एक दोस्त भी हो लिये थे। उनकी बेक़रारी का हाल न पूछिए। वह लखनऊ से वाक़िफ़ न थे, लोटे जाते थे कि हमें लखनऊ का मुहर्रम दिखा दो; मगर कोई जगह छूटने न पाये। एक आदमी ने ठंडी साँस खींच कर कहा—मियाँ; अब वह लखनऊ कहाँ? वे लोग कहाँ? वे दिन कहाँ? लखनऊ का मुहर्रम रंगीले पिया जानआलम के वक्त में अलबत्ता देखने क़ाबिल था। जब देखो, बाँकों की तलवार मियान से दो उंगल बाहर। किसी ने जरा तीखी चितवन की, और उन्होंने खट से सिरोही का तुला हुआ हाथ छोड़ा, भंडारा खुल गया। एक-एक घंटे में बीस-बीस वारदातों की खबर आती थी, दूकानदार जूतियाँ छोड़ छोड़ कर सटक जाते थे। वह धक्कमधक्का, वह भीड़-भड़ाका होता था कि वाह जी वाह! इंतिज़ाम करना खालाजी का घर न था। 'अब कोई चूँ भी नहीं करता, तब छोटे-छोटे आदमी हज़ारों लुटाते थे, अब कोई पैसा भी खर्च नहीं करता। अब न अनीस हैं, न दबीर, न जमीर हैं, न दिलगीर। ❀

> अफ़सोस जहाँ से दोस्त क्या-क्या न गये;
> इस बाग़ से क्या-क्या गुलेराना न गये।
> था कौन सा बाग, जिसने देखी न खिज़ाँ,
> वो कौन से गुल खिले धो मुरझा न गये।

दबीर का क्या कहना था, एक बंद पढ़ा और सुननेवाले लोट गये। अनीस को खुदा बख्शे, क्या कलाम था, गोया जवाहिरात के टुकड़े हैं। लेकिन हाथी लुटेगा भी, तो कहाँ तक! अब भी इस शहर की ऐसी ताज़ियादारी दुनियाँ भर में कहीं नहीं होती।

आज़ाद और उनके दोस्त चले जाते थे। राह में वह भीड़ थी कि कंधे से कंधा छिलता था। हवा भी मुश्किल से जगह पाती थी। ग़रीब-अमीर, बूढ़े-जवान उमड़े चले आते हैं। जिधर देखो, निराली ही सज-धज। कोई हुसेन के मातम में नंगे ही सिर चला जाता है, कोई हरा-हरा जोड़ा फड़काता है। हसीनों की मातमी पोशाक, बिखरे हुए बाल, कभी लजाना, कभी मुसकिराना। शोहदों का सौ-सौ चकफेरियाँ लगाना,

---

❀ लखनऊ के मशहूर मर्सिया कहने वाले।

तमाशाइयों की बातें, दिहातिनें बेंदी लगाये, फरिया फड़काये, गोंद से पटिया जमाये बातें कर रही हैं। लीजिए, आग़ा बाक़र के इमामबाड़े में खट से दाख़िल। वाह मियाँ बाक़र, क्यों न हो, नाम कर गये। चकाचौंध का आलम है। लेकिन गली तंग, तमाशाइयों की अक़्ल दंग। मगर लोग घुस-पैठ कर देख ही आते हैं। नाक टूटे या सिर फूटे, आग़ा बाक़र का इमामबाड़ा जरूर देखेंगे।

दोनों आदमी वहाँ से आगे बढ़े, तो कच्चे पुल पहुँचे। देखते क्या हैं, एक बाबा आदम के ज़माने के बूढ़े अगले वक़्तों के लोगों को रो रहे हैं। वाह-वाह! लखनऊ के कुम्हार, क्या क़माल हैं। बुड्ढा ऐसा बनाया कि मालूम होता है, पोपले मुँह से अब बोला, और अब बोला। वही सन के से बाल, वही सफेद भौंहें, वही चितवन, वही माथे की शिकन, वही हाथों की झुर्रियाँ, वही टेढ़ी कमर, वही झुका हुआ सीना। वाह रे कारीगर, तू भी अपने फ़न में यकता है। वहाँ से जो चले, तो दारोग़ा वाजिदअली के इमामबाड़े में आये। यहाँ सूरज-मुखी पर वह जोबन था कि आफ़ताब अगर एक नज़र छिप कर देख पाता, तो शर्म के मारे मुँह छिपा लेता। बेधड़क जा कर कुर्सियों पर बैठ गये। इलायची, चिकनी डली पेश की गयी। वहाँ से हुसेनाबाद पहुँचे। सुभान-अल्लाह! यह इमामबाड़ा है या जन्नत का मकान! क्या सजावट थी; बुर्ज़ों पर कंदीलें रोशन थीं, मीनारों पर शमा जलती हुई चिराग़ों की कतार हवा के झोंकों से लहरा-लहरा कर अजब समाँ दिखाती थी। नजर जो देखी, तो आँखें ठंडी हो गयीं।

अब इनके दोस्त को शौक़ चर्राया कि तवायफ़ों के इमामबाड़ों की ज़ियारत करें। पहले मियाँ आज़ाद झिझके और बोले—बंदा ऐसी जगह नहीं जाने का, अपनी शान के ख़िलाफ़ है। दोस्त ने कहा—भाई, तुम बड़े रूखे-फीके आदमी हो। हैदर, मुश्तरी, गौहर और आबादी के मर्सिये न सुने, तो किसी से क्या कहेंगे कि लखनऊ का मुहर्रम देखा। आजकल वहाँ जाना हलाल है! इन दस दिनों में मजे से जहाँ चाहे जाइए, रंगीन कमरों में दो गाल हँस-बोल आइए, कोई कुछ नहीं कह सकता।

आज़ाद—यह कहिए तो ख़ैर, बंदा भी लहू लगा कर शहीदों में दाख़िल हो जाय। पहले ग़ौहर के यहाँ पहुँचे। अच्छे-अच्छे रईस-ज़ादे बैठे हुए हैं। एक बड़े मालदार जौहरी साहब मटकते हुए आये। दस रुपये की कारचोबी टोपी सिर पर, प्याज़ी अतलस की भड़कीली अचकन पहने हुए। ख़िदमतगार के कंधे पर क़ीमती दुशाला। यह ठाट-बाट, मगर बैठते ही टोके गये। बैठे तो जरीह (ताज़िया) की तरफ पीठ करके! ग़ौहर ने एक अजीब अदा से झिड़क दिया—ऐ वाह, बड़े तमीज़दार हो। जरीह की तरफ़ पीठ कर ली। सीधे बैठो, आदमियत के साथ!

मियाँ आज़ाद ने चुपके से दोस्त के कान में कहा—मियाँ, इस टीम-टाम से तो आये, मगर घुड़की खा कर मिनके तक नहीं।

दोस्त—भाईजान, ग़ौहर लखनऊ की जान है, लखनऊ की शान है। ऐसा ख़ुशनसीब कोई हो तो ले कि इसकी घुड़कियाँ सहे।

लोग अदब से गरदन झुकाये बैठे कनखियों से आँखों को सेक रहे थे, लेकिन किसी के मुँह से बात न निकलती थी। यहाँ से उठे, तो फिरंगी-महल में हैदरजान के यहाँ पहुँचे। वहाँ मर्सिया हो रहा था—

निकले ख़ेमे से जो हथियार लगाये अब्बास,
चढ़ के रहवार पर मैदान में आये अब्बास।

इस शेर को ऐसी प्यारी आवाज़ से अदा किया कि सुननेवाले लोटन कबूतर हुए जाते थे। राग और रागिनी तो उसकी लौंडियाँ थीं। सबके सब सिर धुनते थे, क्या प्यारा गला पाया है! मियाँ आज़ाद की बाँछें खिली जाती थीं और गरदन तो घड़ी का खटका हो गयी थी।

यहाँ से उठे, तो मुश्तरी के कमरे में पहुँचे। देखनेवालों का वह हुजूम था कि तिल रखने की जगह नहीं।

'खंजर जो बोसा गाहे पयंबर पै चल गया' इसको झँझौटी की धुन में इस लुत्फ़ से पढ़ा कि लोग फड़क उठे।

दोस्त—क्यों यार, क्या लखनऊ में ज़ेवर पहनने की क़सम है?

आज़ाद—भाई, तुम बिलकुल ही गँवार हो। मातम में ज़ेवर का क्या ज़िक्र है? गोरे-गोरे कानों में काले-काले करनफूल, हाथों में सियाह चूड़ियाँ, बस यही काफ़ी है। लेकिन यह सादगी भी अज़ीब लुत्फ़ दिखाती है।

यहाँ से उठ कर दोनों आदमी मातम की मजलिसों में पहुँचे। जिधर जाते हैं, रोने-पीटने की आवाज आती है; जिसे देखिए, आँखों से आँसू बहा रहा है। सारी रात मजलिसों में घूमते रहे, सुबह अपने घर पहुँचे।

वसंत के दिन आये। आज़ाद को कोई फ़िक्र तो थी ही नहीं, सोचे, आज वसंत की बहार देखनी चाहिए। घर से निकल खड़े हुए, तो देखा कि हर चीज़ ज़र्द है, पेड़-पत्ते ज़र्द, दरोदीवार ज़र्द, रंगीन कमरे ज़र्द, लिबास ज़र्द, कपड़े ज़र्द। शाहमीना की दरगाह में धूम है, तमाशाइयों का हुजूम है। हसीनों के झमकड़े, रँगीले जवानों की रेल-पेल, इंद्र के अखाड़े की परियों का दंगल है, जंगल में मंगल है। वसंत की बहार उमंग पर है, ज़ाफ़रानी दुपट्टों और केसरिये पाजामों पर अजब जोबन है। वहाँ से चौक पहुँचे। जौहरियों की दूकान पर ऐसे सुंदर पुखराज हैं कि पुखराज-परी देखती, तो मारे शर्म के हीरा खाती और इंद्र का अखाड़ा भूल जाती। मेवा बेचनेवाली ज़र्द आलू, नारंगी, अमरूद, चकोतरा, महताबी की बहार दिखलाती है, चंपई दुपट्टे पर इतराती है। मालिन गेंदा, हज़ारा, ज़र्द गुलाब की बू-बास से दिल खुश करती है। और पुकार-पुकार कर लुभाती है, गेंदे का हार है, गले की बहार है। हलवाई खोपड़े की ज़र्द बर्फ़ी, पिस्ते की बर्फ़ी, नानखताई, बेसन के लड्डू, चने के लड्डू दूकान पर सजाये बैठा है। खोंचेवाले पापड़, दालमोट, सेव वगैरह बेचते फिरते हैं। आज़ाद यही बहार देखते, दिल बहलाते चले जाते थे। देखते क्या हैं, लाला वसंतराय के मकान में कई रँगीले जवान बाँकी टोपियाँ जमाये, वसंती पगिया बाँधे, केसरिये कपड़े पहने बैठे हैं। उनके सामने चंद्रमुखी औरतें बैठी नौबहार की धुन में वसंत गा रही हैं। क़ालीन ज़र्द है, छत-पोश ज़र्द, कंबल ज़र्द, ज़र्द झालर से मकान सजाया है, वसंत-पंचमी ने दरोदीवार तक को वसंती लिबास पहनाया है। कोई यह गीत गाती है—

ऋतु आयी बसंत अजब बहार ;
खिले ज़र्द फूल बिरवों की डार।
चटक्यो कुसुम, फूलै लागी सरसों;
झूमत चलत गेहूँ की बार।
हर के द्वारे माली का छोहरा ;
गरवा डारत गेंदों के हार।
टेसू फूले, अंबा बौरे ;
चंपा के रूख कलियन की बहार।
गरवा डारे उस्ताद के द्वारे ;
चलो सब सखियाँ कर-कर सिंगार।

कोई मियाँ अमानत की यह ग़ज़ल गाती है—

है जलवए तन से दरोदीवार बसंती ;
पोशाक जो पहने है मेरा यार बसंती।

क्या फ़स्ले बहारी में शिगूफे हैं खिलाये ;
माशूक़ हैं फिरते सरे-बाजार बसंती।
गेंदा है खिला बाग़ में, मैदान में सरसों ;
सहरा वह बसंती है, यह गुलज़ार बसंती।
मुँह ज़र्द दुपट्टे के न आँचल से छिपाओ ;
हो जाय न रंगे गुले-रुख़सार बसंती।

आज़ाद चले जाते थे कि एक नयी सज-धज़ के बुज़ुर्ग से मुठभेड़ हुई। बड़े तजुर्बेकार, खर्राट आदमी थे। आज़ाद को देखते ही बोले—आइए-आइए ख़ूब मिले। वल्लाह, शरीफ़ की सूरत पर आशिक़ हूँ। चीन, माचीन, हिंद और सिंध, रूम और शाम, अलग़रज़, सारी ख़ुदाई की बंदे ने ख़ाक छानी है, और तू यार जानी है। सफ़र का हाल सुन, घुँघरू बोले छुन-छुन। ऐसी बात सुनाऊँ, परी को लुभाऊँ, जिन को रिझाऊँ, मिसर की दास्तान सुनाऊँ।

यह तक़रीर सुन कर आज़ाद के होश पैंतरे हो गये, समझ में न आया, कोई पागल है, या पहुँचा हुआ फ़क़ीर। मगर आसार तो दीवानेपन के ही हैं।

खुर्राट ने फिर बड़-बड़ाना शुरू किया—सुनो यार, कहता है ख़ाकसार, हम सो रहें तुम जागो, फिर हम उठ बैठें, तुम सो रहो, सफ़र यार का है, सोते-जागते राह काटें, सफ़र का अंधा कुआँ उन्हीं ईंटों से पाटें।

यह कह कर खुर्राट ने एक खोंचेवाले को बुलाया और पूछा—खुटियाँ कितने सेर? बर्फ़ी का क्या भाव? लड्डू पैसे के कै? बोलो झटपट, नहीं हम जाते हैं। खोंचेवाले ने समझा, कोई दीवाना है। बोला—पैसे भी हैं या भाव ही से पेट भरोगे?

खुर्राट—पैसे नहीं हैं, तो क्या मुफ़्त माँगते हैं? तौल दे सेर भर मिठाई।

मिठाई ले कर आज़ाद को ज़िद करके खिलायी, ठंडा पानी पिलवाया और बोले—शाम हुई, अब सो रहो, हम असबाब ताकते हैं। मियाँ आज़ाद एक दरख़्त के नीचे लेटे, खुर्राट ने ऐसी मीठी-मीठी बातें कीं कि उन्हें उस पर यक़ीन आ गया। दिन भर के थके थे ही, लेटते ही नींद आ गयी। सोये तो घोड़े बेच कर, सिर-पैर की खबर नहीं, गोया मुर्दों से शर्त लगायी है। वह एक काइयाँ, दुनिया-भर का न्यारिया, उनको ग़ाफ़िल पाया, तो घड़ी, सोने की चेन, चाँदी की मूठवाली छड़ी, चाँदी का गिलौरीदान ले कर चलता हुआ। आध घंटे में आज़ाद की नींद खुली, तो देखा कि खुर्राट ग़ायब है, घड़ी और चेन, डब्बा और छड़ी भी ग़ायब। चिल्लाने लगे—लूट लिया, ज़ालिम ने लूट लिया। झाँसा दे गया। ऐसा चकमा कभी न खाया। दौड़ कर थाने में इत्तला की। मगर खुर्राट कहाँ, वह तो यहाँ से दस कोस पर था। बेचारे रो-पीट कर बैठ रहे। थोड़ी ही दूर गये होंगे कि एक चौराहे पर एक जवान को मुश्की घोड़े पर सवार आते देखा। घोड़ा ऐसा सरपट जा रहा था कि हवा उसकी गर्द तक को न पहुँचती थी। अँधेरा हो ही गया था, एक कोने में दबक रहे कि ऐसा न हो, कहीं झपेट में आ जायँ। इतने

में सवार उनके सिर पर आ खड़ा हुआ। झट घोड़े की बाग रोकी और इनकी तरफ़ नज़र भर कर देखने लगा। यह चकराये, माजरा क्या है ? यह तो बेतरह घूर रहा है, कहीं हंटर तो न देगा।

जवान—क्यों हज़रत, आप किसी को पहचानते भी हैं ? खुदा की शान, आप और हमको भूल जाँय !

आज़ाद—मियाँ, तुमको धोखा हुआ होगा। मैंने तो कभी तुम्हारी सूरत भी नहीं देखी।

जवान—लेकिन मैंने तो आपकी सूरत देखी है; और आपको पहचानता हूँ। क्या इतनी जल्दी भूल गये ? यह कह कर वह जवान घोड़े से उतर पड़ा और आज़ाद से चिमट गया।

आज़ाद—आपको सचमुच धोखा हुआ।

जवान—भाई, बड़े भुलक्कड़ हो ! याद करो, कॉलेज में हम-तुम, दोनों एक ही दर्जे में पढ़ते थे। वह किश्ती पर हवा खाने जाना और दरिया के मज़े उड़ाना; वह मदारी खोंचेवाला, वह उकलैदिस के वक्त उड़ भागना; सब भूल गये ? अब मियाँ आज़ाद को याद आयी। दोस्त के गले से लिपट गये और मारे खुशी के रो दिये।

जवान—तुम्हें याद होगा, जब मैं इंटरमीडिएट का इम्तिहान देने को था, तो मेरे पास फीस का भी ठिकाना न था। रुपये की तलाश में इधर-उधर भटकता फिरता था कि राह में अस्पताल के पास तालाब पर तुमसे मुलाक़ात हुई और तुमने मेरे हाल पर रहम करके मुझे रुपये दिये। तुम्हारी मदद से मैंने बी० ए० तक पढ़ा। लेकिन इस वक़्त तुम बड़े उदास नज़र आते हो, इसका क्या सबब है ?

आज़ाद—यार, कुछ न पूछो। एक खुर्राट के चकमे में आ गया। यहीं घास पर लेट रहा, और वह मेरी घड़ी-चेन वगैरह ले कर चलता हुआ।

जवान—भई वाह ! इतने घाघ बनते हो, और एक खुर्राट के भर्रे में आ गये ! आप के बटन तक उतार ले गया और आप को खबर नहीं। ले अब कान पकड़िए कि अब फिर किसी मुसाफ़िर की दोस्ती का एतबार न करेंगे। मिठाई तो आप खा ही चुके हैं, चलिए, कहीं बैठ कर वसंतो गाना सुनें।

११

एक दिन आज़ाद शहर की सैर करते हुए एक मकतबख़ाने में जा पहुँचे । देखा, एक मौलवी साहब खटिया पर उकड़ू बैठे हुए लड़कों को पढ़ा रहे हैं। आपकी रँगी हुई दाढ़ी पेट पर लहरा रही है । गोल-गोल आँखें, खोपड़ी घुटी-घुटाई, उस पर चौगोशिया टोपी जमी-जमायी। हाथ में तसबीह लिये खटखटा रहे हैं। लौंडे इर्द-गिर्द गुल मचा रहे हैं। हू-हक़ मची हुई है, गोया कोई मंडी लगी हुई है। तहज़ीब कोसों दूर, अदब काफ़ूर, मगर मौलवी साहब से इस तरह से डरते हैं, जैसे चूहा बिल्ली से, या अफ़ीमची नाव से। ज़री चितवन तीखी हुई, और खलबली मच गयी। सब किताबें खोले झूम-झूम कर मौलवी साहब को फुसला रहे हैं। एक शेर जो रटना शुरू किया, तो बला की तरह उसको चिमट गये। मतलब तो यह कि मौलवी साहब मुँह का खुलना और ज़बान का हिलना और उनका झूमना देखें, कोई पढ़े या न पढ़े, इससे मतलब नहीं। मौलवी साहब भी वाजबी ही वाजबी पढ़े-लिखे थे, कुछ शुद-बुद जानते थे। पढ़ाने के फ़न से कोरे। एक शागिर्द से चिलम भरवायी, दूसरे से हुक्क़ा ताजा कराया; दम-झाँसे में काम लिया, हुक्क़ा गुड़-गुड़ाया और धुँआ उड़ाया। शामत यह थी कि आप अफ़ीम के भी आदी थे। चीनी की प्याली आयी, अफ़ीम घोली और उड़ायी। एक महाजन के लड़के ने बर्फ़ी मँगवायी, आपने खूब डट कर चखी, तो पीनक ने आ दबोचा। ऊँघे, हुक्का टेढ़ा हो गया, गरदन अब ज़मीन पर आयी, और अब जमीन पर आयी। हुक्क़ा गिरा और चकनाचूर हो गया। दो-एक लड़कों की किताबों पर चिनगारियाँ गिरीं। अब पीनक से चौंके, तो ऐसे झल्लाये कि किसी लड़के के चपत लगायी, किसी की खोपड़ी पर धप जमायी, एक के कान गर-माये। पीनक में आ कर खुद तो हुक्क़ा गिराया और शागिर्दों को बेक़सूर पीटना शुरू किया। खैर, इतने में एक लड़का किताब ले कर पढ़ने आया। उसने पढ़ा—

दिलम कुसूद कुसादम चु नामा अत गोई,
क़लीदे बाग़े गुलिस्तान दिल कुसाई बूद ।

(जब मैंने तेरा ख़त खोला, तो मेरा दिल खुल गया; गोया वह पत्र ख़ुशी के बाग़ के दरवाज़े की कुंजी था ।)

अब मौलवी साहब का तरजुमा सुनिए—

तरजुमा— दिल तेरा खुला, खोला मैंने जो ख़त तेरा, कहे तू कुंजी दरवाज़े बाग़-दिल खोलने की थी ।

माशा-अल्लाह, क्या तरजुमा था ! न मौलवी साहब ने ख़ुद समझा, न लड़के ने। और दिल्लगी सुनिए कि मौलवी साहब भी शागिर्द के साथ पढ़ते जाते हैं और दोनों हिलते जाते हैं। जब यह पढ़ चुके, तो दूसरे साहब किताब बगल में दबाये आ बैठे।

मौलवी साहब—अरे गावदी, नयी किताबें शुरू कीं, और चिराग़ी नदारद, शुक-राना छप्पर पर ! जा, दौड़ कर दो आने घर से ले आ ।

लड़का—मौलवी साहब, कल लेता आऊँगा । आप तो हत्थे ही पर टोक देते हैं । आपको अपनी मिठाई ही से मतलब है कि मुफ़्त के झगड़े से ?

मौलवी—ये झाँसे किसी और को देना ! अच्छा, अपने बाप की क़सम खा कि कल ज़रूर लाऊँगा ।

लड़का—मौलवी साहब के बड़े सिर की क़सम, चढ़ते चाँद तक जरूर लाऊँगा ।

इस पर सब लड़के हँस पड़े कि कितना ढीठ लड़का है ! क़सम भी खायी तो मौलवी साहब के सिर की, और सिर भी छोटा नहीं, बड़ा ।

मौलवी—चुप गधे, मेरा सिर क्या कद्दू है ? अच्छा, पढ़ ।

लड़का तो ऊटपटाँग पढ़ने लगा, मगर मोलाना साहब चूँ भी नहीं करते । उन्हें मिठाई की फ़िक्र सवार है । सोच रहे हैं, जो कल दो आने न लाया, तो खूब कोड़े फटकारूँगा, तस्मा तक तो बाक़ी रखूँगा नहीं ।

दस-पाँच लड़के एक दूसरे को गुदगुदा रहे हैं और मौलवी साहब को दिखाने के लिए जोर-जोर से चिल्ला कर कोई शेर पढ़ रहे हैं ।

आज़ाद को मकतब की यह हालत और लौंडों की यह चिल्ल-पों देख सुन कर ऐसा ग़ुस्सा आया कि अगर पाते, तो मौलवी साहब को कच्चा ही खा जाते । दिल में सोचे, यह मकतबखाना है या पागलखाना ? जिधर देखिए, गुल-गपाड़ा, धौल-धप्पा हो रहा है। मालूम होता है, भरी बर्सात में मेढक गाँव-गाँव या पिछले पहर कौवे काँव-काँव कर रहे हैं । घर पर आते ही मकतबों की हालत पर यह कैफ़ियत लिख डाली—

(१) नूर के तड़केसे झुटपुटे तक लड़कों को मकतबखाने में कैद रखना बेहूदगी है । लड़के दस बजे आयें, चार बजे छुट्टी पायें, यह नहीं कि दिन भर दाँता-किल-किल, पढ़ना भी अजीरन हो जाय, और यही जी चाहे कि पढ़ने-लिखने की दुम में मोटा सा रस्सा बाँधें, मौलवी साहब को हवा बतायें और दिल खोल कर गुलछर्रे उड़ायें ।

(२) यह क्या हिमाक़त है कि जितने लड़के हैं, सबका सबक़ अलग दो-दो चार-चार, दस-दस का एक-एक दर्जा बना लीजिए, मेहनत की मेहनत बचेगी और काम ज़्यादा होगा ।

(३) जिधर देखता हूँ, अदब (साहित्य) की तालीम हो रही है । तालीम में सिर्फ अदब ही शामिल नहीं, हिसाब है, तवारीख़ है, जुगराफिया है, उकलैदिस है; मगर पढ़ाये कौन ? मौलवी साहब को तो सौ तक गिनती नहीं आती ।

(४) सब लड़कों का गुल मचा-मचा कर आवाज़ लगाना महज़ फ़ज़ूल है। कोई खोंचेवाला, गँड़ेरीवाला, चने-परमलवाला इस तरह चिल्लाये, तो मुज़ायक़ा नहीं; मटर-सटर, गोल-गप्पे, मसालेदार बैगन, मूली, तुरई, लो तरकारी—यह तो फेरी देनेवालों की सदा है, मकतब को मंडी बनाना हिमाक़त है ।

(५) तरजुमे पर खुदा की मार और शैतान की फटकार। 'जाता हूँ बीच एक बाग के, वास्ते लाने अच्छी चीजों के, मैंने देखा मैंने, तू जाता है तू।' वाह, क्या तू-तू मैं-मैं है! तरजुमा सही होना चाहिए, यह तो न कोई आवाज़ कसे कि लड़के बँगला बोल रहे हैं।

(६) पढ़ते वक़्त लड़कों को हिलना ऐब है। मगर कहें किससे? मौलवी साहब तो खुद झूमते हैं।

(७) मतलब ज़रूर समझाना चाहिए; लड़का मतलब ही न समझेगा, तो उसको फ़ायदा क्या खाक होगा?

(८) सबक़ को बरज़बान रटना बुरी बात है। किताब बन्द की और फर-फर दस सफ़े सुना दिये। हाफ़िज़ा कुछ मज़बूत हुआ सही, मगर सितम यह है कि फिर तोते की तरह बात के सिवा कुछ याद नहीं रहता।

(९) छोटे-छोटे लड़कों को बड़ी-बड़ी किताबें पढ़ाना उनकी ज़िंदगी खराब करना है। ज़रा से टट्टू पर जब दो हाथियों का बोझ लादोगे, तो टट्टू बेचारा आँखें माँगने लगेगा, या नहीं? ज़रा सा बच्चा और पढ़े 'मीना बाज़ार'!

(१०) लड़के को शुरू ही से फ़ारसी पढ़ाना उसका गला घोटना है। पहले उर्दू पढ़ाइए इसके बाद फ़ारसी। शुरू ही से करीमा-मामकीमाँ पढ़ाना उसकी मिट्टी खराब करना है।

(११) मौलवी साहब लड़कों से चिलम भरवाना, हुक्का ताज़ा करवाना छोड़ दें। इसकी जगह इनको बात-चीत करने और मिलने-जुलने का आदाब सिखायें।

(१२) अफीमची मौलवी छप्पर पर रखे जायँ। मौलवी ने अफीम खायी और लड़कों को शामत आयी। वह पीनक में झूमा करेंगे।

यह इश्तिहार मोटे क़लम से लिख कर मियाँ आज़ाद रातोरात मकतब के दरवाज़े पर चिपका आये। झट से निकल करके शहर में भी दो-चार जगह चिपका दिया। दूसरे दिन इश्तिहार के पास लोग ठट के ठट जमा हुए। किसी ने कहा, सम्मन चिपकाया गया है; कोई बोला, ठेठर का इश्तिहार है। बारे एक पढ़े-लिखे साहब ने कहा—यह कुछ नहीं है, मौलवी साहब के किसी दुश्मन का काम है। अब जिसे देखिए, क़हक़हा उड़ाता है। भाई वल्लाह, किसी बड़े ही फ़िकरेबाज़ का काम है। मौलवी बेचारे को ले ही डाला, पटरा कर दिया। मकतबखाने में लड़कों के चेहरे गुलनार हो गये। धत् तेरे की! बचा रोज कमचियाँ जमाते थे, चपतें लगाते थे, अफीम घोली और सिर पर शेख-सद्दो सवार। अब आटे-दाल का भाव मालूम होगा। मौलवी साहब तशरीफ़ का बक्चा लाये, तो लड़के उनका कहना ही नहीं मानते। मौलवी साहब कहते हैं, किताब खोलो। शागिर्द जवाब देते हैं, बस मुँह बंद करो। फर्माया कि अब बोला, तो हम बिगड़ जायँगे। शागिर्दों ने कहा, हम खूब बनायेंगे। तब तो झल्लाये और डपट कर कहा, मैं बड़ा गर्म-मिज़ाज हूँ। एक गुस्ताख ने मुसकिरा कर कहा, फिर हम

ठंडा बनायेंगे। दूसरा बोला, किसी ठंडे मुल्क में जाइए। तीसरा बोला, दिमाग़ में गर्मी चढ़ गयी है। मौलवी साहब घबराये कि माजरा क्या है। बाहर की तरफ़ नज़र डाली, तो देखा, गोल के गोल तमाशाई खड़े क़हक़हे लगा रहे हैं। बाहर गये, तो इश्तिहार नज़र आया। पढ़ा, तो कट गये। दिल ही दिल से लिखनेवाले को गालियाँ देने लगे। पाऊँ, तो कच्चा ही खा जाऊँ। इतने डंडे लगाऊँ कि छठी का दूध याद आ जाय। बदमाश ने कैसा ख़ाका उड़ाया है! जभी तो लड़के इतने ढीठ हो गये हैं। मैं कहता हूँ आम, वे क़हते हैं इमली। अब इज्ज़त डूबी। मकतबख़ाने में जाता हूँ, तो ख़ौफ़ है, कहीं लौंडे रोज़ की कसर न निकालें और अंजर-पंजर ढीले कर दें। भाग जाऊँ, तो रोटियों के लाले पड़ें। खाऊँ क्या, अंगारे? आख़िर ठान ली कि बोरिया-बँधना छोड़ो मुल्लागीरी से मुँह मोड़ो। भागे, तो घर पर दम लिया। लड़कों ने जो देखा कि मौलवी साहब पत्ता-तोड़ भागे जाते हैं, तो जूतियाँ बगल में दबा, तख़्तियाँ और बस्ते सँभाल, दुम के पीछे चले। तमाशाइयों में बातें होने लगीं—

एक—अरे मियाँ यह भागा कौन जाता है बगटुट?

दूसरा—शैतान है, शैतान। आज लड़कों के दाँव पर चढ़ गया है, कैसा दुम दबाये भागा जाता है!

अब सुनिए कि महल्ले भर में खलबली मच गयी। अजी, ऐसे मकतब की ऐसी-तैसी। बरसों से लौंडे पीटते हैं, एक हरफ़ न आया। लड़कों की मिट्टी पलीद की। पढ़ाना-लिखाना ख़ैरसल्लाह, चिलमें भरवाया किये। सबने मिल कर कमेटी की कि मौलवी साहब का आम जलसे में इम्तिहान लिया जाय, और मनादी हो कि जिन साहब ने यह इश्तिहार लिखा है, वह जरूर आयें। ढिंढोरिया महल्ले भर में कहता फिरा कि ख़ल्क़ ख़ुदा का, मुल्क सरकार का, हुक्म कमेटी का कि आज एक जलसा होगा और मौलवी साहब का इम्तिहान लिया जायगा। जिसने इश्तिहार लिखा है, वह भी हाजिर हो।

मियाँ आज़ाद बहुत खुश हुए, शाम को जलसे में जा पहुँचे। जब दो-तीन सौ आदमी, अहाली-मवाली, डोम-डफाली, ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे, सब जमा हुए, तो एक मेंबर ने कहा—हज़रत, यह तो सब कुछ है; मगर मौलवी साहब इस वक़्त नदारद हैं। एकतरफा डिगरी न दीजिए। उन्हें बुलवाइए, तब इम्तिहान लीजिए। यों तो वह आयेंगे नहीं। हम एक तदबीर बतायें, जो दौड़े न आयें, तो मूँछ मुड़ा डालें, हाथ क़लम करा डालें। कहला भेजिए कि किसी के यहाँ शादी है, निकाह पढ़ने के लिए अभी बुलाते हैं! लोगों ने कहा, खूब सूझी, दूर की सूझी। आदमी मौलवी साहब के दरवाजे पर गया और आवाज़ दी—मौलवी साहब, अजी मौलवी साहब! क्या मर गये? इस घर में कोई है, या सबको साँप सूँघ गया? दरवाज़ा धमधमाया, कुंडी खटखटायी, मगर जवाब नदारद। तब तो आदमी ने झल्ला कर पत्थर फेंकने शुरू किये। दो-एक मौलवी साहब के घुटे हुए सिर पर भी पड़े। मौलवी साहब बोले, कौन है? आदमी ने कहा—बारे आप जिंदा तो हुए। मैंने तो समझा था, कफ़न की ज़रूरत पड़ी। चलिए, ईदूख़ाँ के यहाँ

शादी है, निकाह पढ़ दीजिए। निकाह का नाम सुनते ही मौलाना खमीरी रोटी की तरह फूल गये, अंगरखे का बंद तड़ से टूट गया। कफ़न फाड़ कर चिल्ला उठे—आया, आया, ठहरे रहो, अभी आया। शिमला खोपड़ी पर जमा, अक़ीक़ का कंठा हाथ में ले, सुरमा लगा घर से चले। आदमी साथ है, दिल में कहते जाते हैं, आज-पौ-बारह हैं, बढ़ कर हाथ मारा है, छप्पन करोड़ की तिहाई, हाथी के हौदे में घुटे। लंबे-लंबे डग भरते आदमी से पूछते जाते हैं—क्यों मियाँ, अब कितनी दूर मकान है? पास ही है न? देखें, निकाह पढ़ाई क्या मिलती है? सवा रुपये तो मामूली है; मगर खुदा ने चाहा तो बहुत कुछ ले मरूँगा। आदमी पीछे-पीछे हँसता जाता है कि मियाँ हैं किस खयाल में! बारे खुदा-खुदा करके वह मंजिल तय हुई, मकान में आये, तो होश उड़ गये। यह कैसा ब्याह है भाई, न ढोल, न शहनाई, हमारी शामत आयी। कनखियों से इधर-उधर देख रहे हैं, अक़्ल दंग है कि ये सब के सब हमीं को क्यों घूर रहे हैं। इतने में मीर-मजलिस ने कहा—जिन साहब ने इश्तिहार लिखा था, वह अगर आये हों तो कुछ फर्मायें।

आज़ाद ने खड़े हो कर कहा—यह जो मौलवी साहब आप लोगों के सामने खड़े हैं, इनसे पूछिए कि मकतबखाने में अफीम क्यों पीते हैं? जब देखिए, पीनक में ऊँघ रहे हैं या मिठाई टूँग रहे हैं। लड़कों का पढ़ाना खाला जी का घर नहीं कि सिर घुटाया और मुल्ला बन गये, चूड़ी निगली और पीर जी बन गये।

मौलवी साहब ताड़ गये कि यहाँ मेरी दुर्गति होनेवाली है। भागने ही को थे कि एक आदमी ने टाँग पकड़ कर आँटी बतायी, तो फ़ट से जमीन पर आ रहे। अच्छे फँसे। खूब निकाह पढ़ाया। मुफ़्त में उल्लू बने। खैर, मियाँ आज़ाद ने फिर कहा—

'मौलवी साहब को किसी मज़ार का मुजाविर या कहीं का तकियेदार बना दीजिए, तो खूब मीठे टुकड़े उड़ायें और डंड पेलें। यह मकतबखाने में लल्लू का दसहरा उनको क्यों बना दिया? लड़कों की कैफ़ियत सुनिए कि दिन भर गुल्ली-डंडा खेला करते हैं, चीखते हैं, चिल्लाते हैं, और दिन भर में अठारह मर्तबा पेशाब करने और पानी पीने जाते हैं। कोई कहता है, मौलवी साहब, देखिए, यह हमारी नाक पकड़ता है, कोई कहता है, यह हमसे लड़ता है। मौलवी साहब को इससे कुछ मतलब नहीं कि लड़के पढ़ते हैं या नहीं। वहाँ तो हिलते जाओ और ऐसा गुल मचाओ कि कान पड़े आवाज़ न सुनाई दे, उसमें चाहे जो कुछ ऊल-जलूल बको।'

मौलवी साहब फिर रस्सी तुड़ा कर भागने लगे। लोग लेना-लेना करके दौड़े। गये थे रोज़े बख्शाने, नमाज़ गले पड़ी। चिल्ला कर बोले—तुम कौन होते हो जी हमारा ऐब निकालनेवाले, हम पढ़ायें या न पढ़ायें, तुमसे मतलब?

आज़ाद—हज़रत, आज ही तो पंजे में फँसे हो। रोज़ तोंद निकाले बैठे रहा करते थे। यह तोंद है या बेईमान की कब्र? या हवा का तकिया? अब पचक जाय, तो सही। खुदा जाने, कहाँ का गँवार बिठा दिया है। कल सुबह को इनका इम्तिहान लिया जाय।

मौलवी साहब—आप बड़े शैतान हैं!

आज़ाद—आप लंगूर हैं; मगर हैरत है कि यह ठुड्डी से दुम की कोंपल क्योंकर फूटी !

इस तरह जलसा खतम हुआ। लोगों ने दिल में ठान ली कि कल चाहे ओले पड़ें, चाहे कड़कड़ाती धूप हो, चाहे भूचाल आये; मगर हम आयेंगे और जरूर आयेंगे। मौलवी साहब से ताकीद की गयी कि हज़रत, कल न आइएगा, तो यहाँ रहना मुश्किल हो जायगा—मौलवी साहब का चेहरा उतर गया था, मगर कड़क कर बोले—हम और न आयें, आयें और बीच खेत आयें। हम क्या कोई चोर हैं, या किसी का माल मारा है?

मौलवी साहब घर पहुँचे, तो आज़ाद को लगे पानी पी-पी कर कोसने। इसकी ज़बान सड़े, मुँह फूल जाय; सारी चौकड़ी भूल जाय; आसमान से अंगारे बरसें; ऐसी जगह मरे, जहाँ पानी न मिले; डंकू फीवर चट करे; एंजिन के नीचे दब कर मरे। मगर इन गालियों से क्या होता था। रात किसी तरह कटी, दूसरे रोज़ नूर के तड़के लोग फिर जलसे में आ पहुँचे। मगर मौलाना ऐसे ग़ायब हुए, जैसे गधे के सिर से सींग। बारे यारों ने तत्तो-थंभो करके सिर सुहलाते, सब्ज़ बाग़ दिखलाते घसीट ही लिया। मियाँ आज़ाद ने पूछा—क्यों मौलवी साहब, किस मनसूबे में हो?

मौलवी साहब—सोचता हूँ कि अब कौन चाल चलूँ? सोच लिया है कि अब मुल्लागीरी छोड़ प्यादों में नौकरी करेंगे। बस, वतन से जायेंगे, तो फिर लौट कर घर न आयेंगे। अमीर-ग़रीब सब पर मुसीबत पड़ती है। फिर हमारी बिसात क्या? चारखाने का अँगरखा न सही, गाढ़े की मिरजई सही। मगर आप एक ग़रीब के पीछे नाहक क्यों पड़े हुए हैं? 'कहाँ राजा भोज, कहाँ गँगुआ तेली?'

आज़ाद—ये झाँसे रहने दीजिए, ये चकमे किसी और को दीजिए।

मौलवी साहब—खुदा की पनाह! मैं आपका गुलाम और आपको चकमे दूँगा? आपसे क्या अर्ज़ करूँ कि कितना जी तोड़ कर लड़कों को पढ़ाता हूँ। इधर सूरज निकला और मैंने मकतब का रास्ता लिया। दिन भर लड़कों को पढ़ाया। क्या मजाल कि कोई लड़का गरदन तक उठा ले। कोई बोला, और मैंने टीप जमायी, खेला, और शामत आयी। समझ-बूझकर चलता था, अगर कोई लड़का मकतब में खिलौना लाता, तो उसे तुरत अँगीठी में डलवा देता। मगर आपने सारी मेहनत पर पानी फेर दिया। आपके सामने मेरी कौन सुनता है।

मीर-मजलिस ने कहा—मियाँ आज़ाद इन्हें बकने दीजिए, आप इनका इम्तिहान लीजिए।

मियाँ आज़ाद तो सवाल पूछने के लिए खड़े हुए, उधर मौलवी साहब का बुरा हाल हुआ। रंग फ़क़, कलेजा धक, आँखों में आँसू, मुँह पर हवाइयाँ छूट रही हैं, कलेजा धक-धक करता है, हाथ-पाँव काँपने लगे। किसी तरह खड़े तो हुए, मगर क़दम न जमा। पाँव डगमगाये और लड़खड़ा कर गिरे। लोगों ने उन्हें उठा कर फिर खड़ा किया।

आज़ाद—यह शेर किस बहर में है—

मैंने कहा जो उससे ठुकराके चल न ज़ालिम;
हैरत में आके बोला—क्या आप जी रहे हैं!

मौलवी साहब—बहर (दरिया) में आप ही गोते लगाइए, और ख़ुदा करे, डूब जाइए। जिसे देखो, हमीं पर शेर है। नामाकूल इतना नहीं समझते कि हम मौलवी आदमी लौंडे पढ़ाना जानें या शायरी करना। हमें शेर से मतलब? आये वहाँ से बहर पूछने!

आज़ाद—बेशुनो अज नैचूँ हिकायत मी कुनद;
वज जुदाईहा शिकायत मी कुनद।

इस शेर का मतलब बतलाइए!

मौलवी साहब—इसका बताना क्या मुश्किल है? नै कहते हैं चंडू की नै को। बस, उस ज़माने में लोग चंडू पीते थे और शिकायत करते थे।

आज़ाद—बकरी की पिछली टाँगों को फ़ारसी में क्या कहते हैं?

मौलवी साहब—यह किसी अपने भाई-बंद, बूचड़-क़स्साब से पूछिए। बंदा न छीछड़े खाय; न जाने। वाह, अच्छा सवाल है! अब मुल्लाओं को बूचड़ों की शागिर्दी भी करनी चाहिए!

आज़ाद—हिंदुस्तान के उत्तर में कौन मुल्क है?

मौलवी—ख़ुदा ज़ाने, मैं क्या देखने गया था कि आपकी तरह मैं भी सैलानी हूँ?

आज़ाद—सबसे बड़ा दरिया हिंदोस्तान में कौन है?

मौलवी—फ़िरात, नहीं, वह देखिए, भूला जाता हूँ, अजी वही, दज़ला, दज़ला, ख़ूब याद आया।

हाजिरीन—वाह रे गावदी, अच्छी उलटी गंगा बहायी। फ़िरात और दज़ला हिंद में है? इतना भी नहीं जानता।

आज़ाद—चाँद के घटने-बढ़ने का सबब बताओ?

मौलवी—वाह, क्या ख़ूब, ख़ुदाई कारखानों में दख़ल दूँ? इतना तो किसी की समझ में आता नहीं कि फ्रीमिशन क्या है, फिर भला यह कौन जाने कि चाँद कैसे घटता-बढ़ता है। ख़ुदा का हुक्म है, वह जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—पानी क्योंकर बरसता है?

मौलवी—यह तो दादीजान तक को मालूम था। बादल तालाबों, नदियों, कुओं, गढों, हौजों से घुस-पैठ कर दो-तीन रोज़ ख़ूब पानी पीता है; जब पी चुका, तब आसमान पर उड़ गया, मुँह खोला तो पानी रिम-झिम बरसने लगा। सीधी-सी तो बात है।

हाजिरीन—वल्लाह, क्या बेपर की उड़ायी है! आदमी हो या चोंच! कहने लगे, बादल पानी पीता है।

आज़ाद—गिनती आपको कहाँ तक याद है और पहाड़े कहाँ तक?

मौलवी—जवानी में रुपये के टके गिन लेता था; अब भी आठ-आठ आने एक दफ़े में गिन सकता हूँ। मगर पहाड़े किसी हलवाई के लड़के से पूछिए।

आज़ाद—एक आदमी ने तीन सौ पछत्तर मन ग़ल्ला ख़रीदा, रात को चोरों ने मौक़ा ताक कर एक सौ पचीस मन उड़ा लिया, तो बताओ उस आदमी को कितना घाटा हुआ ?

मौलवी—यह झगड़ा जौनपुर के क़ाज़ी चुकायेंगे। मैं किसी के फटे में पाँव नहीं डालता। मुझे किसी के टोटे-घाटे से मतलब ? चोरी-चकारी का हाल थानेदारों से पूछिए। बंदा मौलवी है। मुल्ला की दौड़ मसजिद तक।

आज़ाद—शाहजहाँ के वक़्त में हिंदोस्तान की क्या हालत थी और अकबर के वक़्त में क्या ?

मौलवी—अजी, आप तो गड़े मुर्दे उखाड़ते हैं ! अकबर और शाहजहाँ, दोनों की हड्डियाँ गल कर ख़ाक हो गयी होंगी। अब इस पचड़े से मतलब ?

आज़ाद ने हाजिरीन से कहा—आप लोगों ने मौलवी साहब के जवाब सुन लिये, अब चाहे जो फ़ैसला कीजिए।

हाजिरीन—फैसला यही है कि यह इसी दम अपना बोरिया-बँधना सँभाले। यह चरकटा है। इसे यही नहीं मालूम कि बहर किस चिड़िया का नाम है, बादल किसे कहते हैं, दो तक का पहाड़ा नहीं याद, गिनती जानता ही नहीं, दज़ला और फ़िरात हिंदोस्तान में बतलाता है ! और चला है मौलवी बनने। लड़कों की मुफ्त में मिट्टी ख़राब करता है।

१२

आज़ाद तो इधर साँड़नी को सराय में बाँधे हुए मज़े से सैर-सपाटे कर रहे थे, उधर नवाब साहब के यहाँ रोज़ उनका इंतिज़ार रहता था कि आज आज़ाद आते होंगे और सफ़शिकन को अपने साथ लाते होंगे। रोज़ फ़ाल देखी जाती थी, सगुन पूछे जाते थे। मुसाहब लोग नवाब को भड़काते थे कि अब आज़ाद नहीं लौटने के; लेकिन नवाब साहब को उनके लौटने का पूरा यक़ीन था।

एक दिन बेगम साहबा ने नवाब साहब से कहा—क्यों जी, तुम्हारा आज़ाद किस खोह में धँस गया? दो महीने से तो कम न हुए होंगे।

महरी—ऐ, वह चंपत हुआ, मुआ चोर।

बेगम—ज़बान सँभाल, तेरी इन्हीं बातों पर तो मैं झल्ला उठती हूँ। फिर कहती है कि छोटी बेगम मुझसे तीखी रहती हैं।

नवाब—हाँ, आज़ाद का कुछ हाल तो नहीं मालूम हुआ; मगर आता ही होगा।

बेगम—आ चुका।

नवाब—चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मेरा आज़ाद सफ़शिकन को ला ही छोड़ेगा। दोनों में इल्मी बहस हो रही होगी। फिर तुम जानो, इल्म तो वह समंदर है, जिसका ओर न छोर।

बेगम—(क़हक़हा लगा कर) इल्मी बहस हो रही होगी? क्यों साहब, मियाँ सफ़शिकन इल्म भी जानते हैं? मैं कहती हूँ, आख़िर अल्लाह ने तुमको कुछ रत्ती, तोला, माशा अक़्ल भी दी है? मुआ बटेर, जरी सी जानवर, काकुन के तीन दानों में पेट भर जाय, उसे आप आलिम कहते हैं। मेरे मैके पड़ोस में एक सिड़ी सौदाई दिन-रात वाही-तवाही बका करता है। उसकी और तुम्हारी बातें एक सी हैं।

महरी—क्या कहती हो बीबी, उस सौदाई निगोड़े को इन पर से सदक़े कर दूँ!

नवाब—तुम समझी नहीं महरी, अभी तो अल्हड़पने ही के न दिन हैं इनके। ख़ुदा की क़सम, मुझे इनकी ये ही बातें तो भाती हैं। यह कमसिनी का सुभाव है और दो-तीन बरस, फिर यह शोख़ी और चुलबुलापन कहाँ? यह जब झिड़कती या घुड़कती हैं, तो जी खुश हो जाता है।

महरी—हाँ, हाँ, जवानी तो फिर बावली होती ही है।

बेगम—अच्छा, महरी, तुझे अपने बुढ़ापे की कसम, जो झूठ बोले, भला बटेर भी पढ़े-लिखे हुआ करते हैं? मुँह-देखी न कहना, अल्लाह लगती कहना।

महरी—बुढ़ापा! बुढ़ापा कैसा? बीबी, बस ये ही बातें तो अच्छी नहीं लगतीं, जब देखो, तब आप बूढ़ी कह देती हैं! मैं बूढ़ी काहे से हो गयी? बुरा न मानिए तो कहूँ, आपसे भी टाँठी हूँ।

इतने में ग़फ़ूर ख़िदमतगार ने पुकारा—हुज़ूर, पेचवान भरा रखा है, वहाँ भेज दूँ या बग़ीचे में रख दूँ ?

नवाब—यह चाँदीवाली छोटी गुड़गुड़ी बेगम साहबा के वास्ते भर लाओ। कल बिसवाँ तंबाकू आया है, वही भरना। और पेचवान बाहर लगा दो, हम अभी आये।

यह कह कर नवाब ने बेगम साहबा के हँसी-हँसी में एक चुटकी ली और बाहर आये। मुसाहबों ने खड़े हो-हो कर सलाम किये। आदाब बजा लाता हूँ हजूर, तसलीमात अर्ज़ करता हूँ, खुदावंद। नवाब साहब जा कर मसनद पर बैठे।

खोजी—उफ् ! मौत का सामना हुआ, ऐसा धचका लगा कि कलेजा बैठा जाता है, हत् तेरे गीदी चोर की।

नवाब—क्यों, क्यों, ख़ैर तो है ?

खोजी—हुज़ूर, इस वक्त़ बटेरख़ाने की ओर गया था।

नवाब—उफ़, भई, दिल बेक़रार है। खोजी मियाँ, तुमको तो हमारी तसल्ली करनी चाहिए थी, न कि उल्टे खुद ही रोते हो, जिसमें हमारे हाथ-पाँव और फूल जायँ। अब सफ़शिकन से हाथ धोना चाहिए। हम जानते हैं कि वह ख़ुदा के यहाँ पहुँच गये।

मुसाहब—ख़ुदा न करे, ख़ुदा न करे।

खोजी—(पीनक से चौंक कर) इसी बात पर फिर कुछ मिठाई नहीं खिलवाते।

नवाब—कोई है, इस मरदक की गरदन तो नापता। हम तो अपनी क़िस्मतों को रो रहे हैं, यह मिठाई माँगता है। बेतुका, नमकहराम !

खोजी – देखिए, देखिए, फिर मेरी गरदन कुंद छुरी से रेती जाती है। मैं मिठाई कुछ खाने के वास्ते थोड़े ही मँगवाता हूँ। इसलिए मँगवाता हूँ कि सफ़शिकन का फ़ातिहा पढ़ूँ।

नवाब—शाबाश, जी खुश हो गया ! माफ़ करना, बेअख्तियार नमकहराम का लफ़्ज़ मुँह से निकल गया, तुम बड़े...

मुसाहब—तुम बड़े हलालख़ोर हो।

इस पर वह क़हक़हा पड़ा कि नवाब साहब भी लोटने लगे, और बेगम ने घर से लौंडी को भेजा कि देखना तो, यह क्या हँसी हो रही है।

नवाब—भई, क्या आदमी हो, वल्लाह, रोते को हँसाना इसी का नाम है। खोजी बेचारे को हलालख़ोर बना दिया।

खोजी—हुज़ूर, अब मैं यहाँ न रहूँगा। क्या बेवक्त़ की शहनाई सब के सब बजाने लगे ! अफ़सोस, सफ़शिकन का किसी को ख़याल तक नहीं।

नवाब साहब मारे रंज के मुँह ढाँप कर लेट रहे। मुसाहबों में से कोई चंडूख़ाने पहुँचा, कोई अफ़ीम घोलने लगा।

१३

इधर शिवाले का घंटा बजा ठनाठन, उधर दो नाक़ों से सुबह की तोप दगी दनादन। मियाँ आज़ाद अपने एक दोस्त के साथ सैर करते हुए बस्ती के बाहर जा पहुँचे। क्या देखते हैं, एक बेल-बूटों से सजा हुआ बँगला है। अहाता साफ़, कहीं गंदगी का नाम नहीं। फूलों-फलों से लदे हुए दरख़्त खड़े झूम रहे हैं। दरवाज़ों पर चिकें पड़ी हुई हैं। बरामदे में एक साहब कुर्सी पर बैठे हुए हैं, और उनके क़रीब दूसरी कुर्सी पर उनकी मेम साहबा बिराज रही हैं। चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। न कहीं शोर, न कहीं गुल। आज़ाद ने कहा—जिंदगी का मज़ा तो ये लोग उठाते हैं।

दोस्त—बेशक, देख कर रश्क आता है।

दोनों आदमी आगे बढ़े। कई छोटे-छोटे टट्टू तेज़ी से दौड़ते हुए नज़र आये। उन पर ख़ूबसूरत काठियाँ कसी हुई थीं और कई लड़के बैठे हुए हँसते-बोलते चले जाते थे। कपड़े सफ़ेद, जैसे बगुले के पर; चेहरे सुर्ख़, जैसे गुलाब का फूल। मियाँ आज़ाद कई मिनट तक उन अँगरेज-लड़कों का उछलना-कूदना देखते रहे। फिर अपने दोस्त से बोले—देखा आपने, इस तरह बच्चों की परवरिश होती है। कुछ और आगे बढ़े, तो सौदागरों की बड़ी-बड़ी कोठियाँ दिखायी दीं। इतनी ऊँची गोया आसमान से बातें कर रही हैं। दोनों आदमी अंदर गये, तो चीज़ों की सफ़ाई और सज़ावट देख कर दंग रह गये। सुभान-अल्लाह! यह कोठी है या शीश-महल। दुनिया भर की चीज़ें मौजूद। आज़ाद ने कहा—यह तिजारत की बरकत है। वाह री तिजारत! तेरे क़दम धो-धो कर पिये। इतने में सामने से कई बग्घियाँ आयीं। सब पर अँगरेज बैठे हुए थे। किसी हिंदुस्तानी का कोसों तक पता ही नहीं। गोया उनके लिए घर से निकलना ही मना है। और आगे बढ़े, तो एक कुतुबख़ाना नज़र आया। लाखों किताबें चुनी हुईं, साफ-सुथरी, सुनहरी जिल्दें चढ़ी हुईं। आदमी अगर साल भर जम कर बैठे, तो आलिम हो जाय। सुबह से आठ बजे तक लोग आते हैं, अख़बार और किताबें पढ़ते हैं और दुनिया के हालात मालूम करते हैं। मगर हिंदुस्तानियों को इन बातों से क्या सरोकार?

दस बजे का वक़्त आ गया। अब घर की सूझी। बस्ती में दाख़िल हुए। राह में एक अमीर आदमी के मकान के दरवाज़े पर दो लड़कों को देखा। नख-सिख से तो दुरुस्त हैं; मगर कानों में बाले, भद्दे-भद्दे कड़े पड़े हैं, अँगरखा मैला-कुचैला, पाजामा गंदा, हाथों पर गर्द, मुँह पर ख़ाक, दरवाज़े पर नंगे पाँव खड़े हैं। मौलवी साहब ड्योढ़ी में बैठे दो और लड़कों को पढ़ा रहे हैं। मगर ड्योढ़ी और पाख़ाना मिला हुआ है।

मियाँ आज़ाद—कहिए जनाब, वे टट्टुओं पर दौड़नेवाले अँगरेजों के बच्चे भी

याद हैं ? इनको देखिए, मैले-गंदे, दिन भर पाखाने का पड़ोस। भला ये कैसे मज़बूत और तंदुरुस्त हो सकते हैं ? हाँ, ज़ेवर से अलबत्ते लसे हुए हैं ! सच तो यह है कि चाहे लड़का जितने ज़ेवर पहने हो, उसको वह सच्ची ख़ुशी नहीं हासिल हो सकती, जो उन प्यारे बच्चों को हवा के झोंकों और टापों की खटपट से मिलती थी। लड़का तड़के गजरदम उठा, हम्माम में गया, साफ-सुथरे कपड़े पहने। यह अच्छा, या यह अच्छा कि लचके, पट्टे और बिनट्ट के कपड़ों में जकड़ दिया जाय, ज़ेवर सिर से पाँव तक लाद दिया जाय और गदेया पर बिठा दिया जाय कि कूड़े के टोकरे गिना करे।

ये बातें हो ही रही थीं कि सात-आठ जवान सामने से गुजरे। अभी उन्नीस ही बरस का सिन है, मगर गालों पर झुर्रियाँ, किसी की कमर झुकी हुई, किसी का चेहरा ज़र्द। सुर्ख़ और सफ़ेद रंग धुआँ बन कर उड़ गया। और तुर्रा यह कि अलिफ के नाम वे नहीं जानते। एक नम्बर अव्वल के चंडूबाज़ हैं, दूसरे बला के बातूनी। वह फर्राटे भरें कि भला-चंगा आदमी घनचक्कर हो जाय। एक साहब क़ॉलेज में तालीम पाते थे, मगर प्रोफेसर से तकरार हो गयी, झट मदरसा छोड़ा। दूसरे साहब अपने दाहिने हाथ की दो उँगलियों से बायें हाथ पर ताल बजा रहे हैं—धिन ता धिन ता। दो साहब बहादुर नामी बटेर के घट जाने का अफ़सोस कर रहे हैं। किसी को नाज़ है कि मैं बाने की कनकइया ख़ूब लड़ाता हूँ, तुक्कल ख़ूब बढ़ाता हूँ।

मियाँ आज़ाद ने कहा—इन लोगों को देखिए, अपनी ज़िंदगी किस तरह ख़राब कर रहे हैं। शरीफ़ों के लड़के हैं, मगर बुरी सोहबत है। पढ़ना-लिखना छोड़ बैठे। अब मटर-गश्ती से काम है। किसी को क़लम पकड़ने का शऊर नहीं।

इतने में दो साहब और मिले। तोंद निकाले हुए, मोटे थलथल। आज़ाद ने कहा—इन दोनों को पहचान रखिए। इन अक़्ल के दुश्मनों ने रुपये को दफ़न कर रखा है। एक के पास दो लाख से ज़्यादा हैं और दूसरे के पास इससे भी ज़्यादा; मगर ज़मीन के नीचे। बीबी और लड़कों को कुछ ज़ेवर तो बनवा दिये हैं, बाक़ी अल्लाह-अल्लाह, ख़ैर-सल्लाह ! अगर तिजारत करें, तो अपना भी फ़ायदा हो, और दूसरों का भी। मगर यह सीखा ही नहीं। बंगाल-बंक और दिल्ली-बंक तो पहले सुना करते थे, यह जमीन का बंक आज नया सुना।

दोनों आदमी घर पहुँचे। खाना खा कर लेटे। शाम को फिर सैर करने की सूझी। एक बाग़ में जा पहुँचे। कई आदमी बैठे हुक्के उड़ाते थे और किसी बात पर बहस करते थे। बहस से तकरार शुरू हुई। मिर्ज़ा सईद ने कहा—भई, कलजुग है, कलजुग। इसमें जो न हो, वह थोड़ा। अब पुराने रस्मों को लोग दक़ियानूसी बताते हैं, शादी-ब्याह के खर्च को फ़िज़ूल कहते हैं। बच्चों को ज़ेवर पहनाना गाली है। अब कोई इन लोगों से इतना तो पूछे कि जो रस्म बाप-दादों के वक़्त से चली आती है, उसको कोई क्योंकर मिटाये ?

यकायक पूरब की तरफ़ से शोर-गुल की आवाज सुनायी दी। किसी ने कहा, चोर

आया, लेना, जाने न पाये। कोई बोला, साँप है। कोई भेड़िया-भेड़िया चिल्ला उठा। किसी को शक हुआ कि आग लगी। सब के सब भड़भड़ा कर खड़े हुए, तो चोर न चकार, भेड़िया न सियार। एक मियाँ साहब लँगोट कसे लठ हाथ में लिये अकड़े खड़े हैं, और उनसे दस क़दम के फ़ासले पर कोई लाला जी बाँस की खपाच लिये डटे खड़े हैं। इर्द-गिर्द तमाशाइयों की भीड़ है। इधर मियाँ साहब पैंतरे बदल रहे हैं, उधर लाला उँगलियाँ मटका-मटका कर गुल मचा रहे हैं। मिर्ज़ा सईद ने पूछा—मियाँ साहब, खैर तो है? मियाँ—क्या अर्ज़ करूँ मिर्ज़ा साहब, आपको दिल्लगी सूझती है और यहाँ जान पर बन गयी है। यह लाला मेरे पड़ोसी हैं। इनका क़ायदा है कि ठर्रा पी कर हज़ारों गालियाँ मुझे दिया करते हैं। आज कोठे पर चढ़ कर खुदा के वास्ते लाखों बातें सुनायीं। अब फ़रमाइए, आदमी कहाँ तक ज़ब्त करे? लाख समझाया कि भाई, आदमी से ऊँट और इंसान से बेदुम के गधे न बन जाओ, मगर यह बादशाह की नहीं सुनते, मैं किस गिनती में हूँ। ताल ठोक कर लड़ने को तैयार हो गये। खुदा न करे, किसी भलेमानस को अनपढ़ से साबिक़ा पड़े।

लाला—और सुनिएगा, हम चार-पाँच बरस लखनऊ में रहे, अनपढ़ ही रहे।

मियाँ—बारह बरस दिल्ली में रह कर तुमने क्या सीख लिया, जो अब चार बरस लखनऊ में रहने से फ़ाज़िल हो गये।

लाला—यह साठ बरस से हमारे पड़ोसी हैं, खूब जानते हैं कि बरस दिन का त्योहार है; हम शराब ज़रूर पियेंगे; चुस्की ज़रूर लगायेंगे, नशे में गालियाँ ज़रूर सुनायेंगे। अब अगर कोई कहे, शराब-क़लिया छोड़ दो, तो हम अपनी पुरानी रस्म को क्योंकर छोड़ें?

मिर्ज़ा सईद—अजी लाला साहब, बहुत बहकी-बहकी बातें न कीजिए। हमने माना कि पुरानी रस्म है, मगर ऐसी रस्म पर तीन हरफ़! आप देखें तो कि इस वक्त आपकी क्या हालत है? कीचड़ में लतपत, सिर-पैर की ख़बर नहीं, भलेमानसों को गालियाँ देते हो और कहते हो कि यह तो हमारी रस्म है।

आज़ाद—मिर्ज़ा सईद, ज़रा मुझसे तो आँखें मिलाइए। शर्माये तो न होंगे? अभी तो आप कहते थे कि पुरानी रस्म को कोई क्योंकर मिटाये। यह भी तो लाला जी की पुरानी रस्म है; जिस तरह होती आयी है, उसी तरह अब भी होगी। यह धूप-छाँह की रंगत आपने कहाँ पायी? गिरगिट की तरह रंग क्यों बदलने लगे? जनाब, बुरी रस्म का मानना हिमाक़त की निशानी है।

मिर्ज़ा सईद बगलें झाँकने लगे। आज़ाद और उनके दोस्त और आगे बढ़े, तो देखते क्या हैं कि एक गँवार औरत रोती चली जाती है, और एक मर्द चुपके-चुपके समझा रहा है—चुपाई मार, चुपाई मार। मियाँ आज़ाद समझे, कोई बदमाश है। ललकारा, कौन है बे तू, इस औरत को कहाँ भगाये लिये जाता है? उस गँवार ने कहा—साहब, भगाये नहीं लिये जात हौं; यो हमार मिहरिया आय, हमरे इहाँ रसम है कि जब मिहरिया मइका से ससुरार जात है, तो दुइ-तीन कोस लौं रोवत है।

सईद—वल्लाह, मैं कुछ और ही समझा था। ख़ुदा की पनाह, रस्म की मिट्टी ख़राब कर दी।

आज़ाद—बजा है, अभी आप उस बाग़ में क्या कह रहे थे? बात यह है कि पढ़े-लिखे आदमियों को बुरी रस्मों का मानना मुनासिब नहीं। यह क्या ज़रूरी है कि अक़्ल की आँखों को पाकेट में बंद करके पुरानी रस्मों के ढर्रे पर चलना शुरू करें; और इतनी ठोकरें खायँ कि क़दम-क़दम पर मुँह के बल गिरें। ख़ुदा ने अक़्ल इसलिए नहीं दी कि पुरानी रस्मों में सुधार न करें, बल्कि इसलिए कि ज़माने के मुताबिक़ अदल-बदल करते रहें। अगर पुरानी बातों की पूरी-पूरी पैरवी की जाती, तो ये जामदानी के कुरते और शरबती के अँगरखे नज़र न आते। लोग नंगे फिरते होते। पुलाव और कबाब के बदले हम पाढ़े और हिरन का कच्चा गोश्त खाते होते। ख़ुदा ने आँखें दी हैं; मगर अफ़सोस कि हमने बंद कर लीं।

मिर्ज़ा सईद—तो आप नाच-रंग के जलसों के भी दुश्मन होंगे? आप कहेंगे कि यह भी बुरी रस्म है?

आज़ाद—बेशक बुरी रस्म है। मैं उसका दुश्मन तो नहीं हूँ, मगर ख़ुदा ने चाहा, तो बहुत जल्द हो जाऊँगा। यह कितनी बेहूदा बात है कि हम लोग औरतों को रुपये का लालच दे कर इस तरह ज़लील करते हैं।

मिर्ज़ा सईद—तो यह कहिए कि आप कोरे मुल्ला हैं। यह समझ लीजिए कि इन हसीनों का दम ग़नीमत है। दुनिया की चहल-पहल उनके दम से, महफ़िल की रौनक़ उनके क़दम से। यहाँ तो जब तक तबले की गमक न हो, चाँद से मुखड़े की झलक न हो, कड़ों की झनकार न हो, छड़ों की छनकार न हो, छमाछम की आवाज़ न आये, कमरा न सजे, ताल न बजे, धमा-चौकड़ी न मचे, मेंहदी न रचें, रँगरलियाँ न मनायें, शादियाने न बजायें, आवाज़ें न करें, इत्र में न बसें, ताने न सुनें, सिर न धुनें, गलेबाज़ी न हो, आँखों में लाल डोरे न हों, शराब-कबाब न हो, परियाँ बुलबुल की तरह चहकती न हों, सेवती के फूल और हिना की टट्टियाँ महकती न हों, क़हक़हे न हों, चहचहे न हों, तो किस गौखे का दम भर जीने को जी चाहे? वल्लाह, महफ़िल बावले कुत्ते की तरह काट खाय—

महफ़िल में गुदगुदाती हो, शोख़ी निगाह की;
शीशों से आ रही हो, सदा वाह-वाह की।

इधर जामेमुल (शराब) हो, उधर सुराही की कुल-कुल हो, इधर गुल हो, उधर बुलबुल हो, महफ़िल का रंग ख़ूब जमा हो, समा बँधा हो, फिर जो आपकी गरदन भी न हिल जाय, तो झुक कर सलाम कर लूँ। अब ग़ौर फ़रमाइए कि ऐसे तायफ़े को, जो डिबिया में बंद कर रखने क़ाबिल है, आप एक क़लम मिटा देना चाहते हैं?

आज़ाद—जनाब, आपको अपनी तवायफ़ें मुबारक हों। यहाँ इस फेर में नहीं पड़ते।

ये बातें करते हुए लोग और आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं कि मस्त हाथी पर

एक महंत जी सवार, गेरुए कपड़े पहने, भभूत रमाये, पालथी मारे, बड़े ठाठ से बैठे हैं। चेले-चापड़ साथ हैं। कोई घोड़े की पीठ पर सवार, कोई पैदल। कोई पीछे बैठा मुरछल हिलाता है, कोई नरसिंघा बजाता है। आज़ाद बोले—कोई इन महंत जी से पूछे कि आप खुदा की इबादत करते हैं, या दुनिया के मज़े उड़ाते हैं? आपको इस टीम-टाम से क्या मतलब?

मिर्ज़ा सईद—कुछ बाप की कमाई तो है नहीं, अहमक़ों ने जागीरें दे दीं, महंत बना दिया। अब ये मौजें करते हैं।

आज़ाद—जागीर देनेवालों को क्या मालूम था कि उनके बाद महंत लोग यों गुलछर्रे उड़ायेंगे? यह तो हमारा काम है कि इन महंतों की गरदन पकड़ें, और कहें, उतर हाथी से, ले हाथ में कमंडल।

यकायक किसी ने छींक दिया। सईद बोले—हात्तेरे छींकनेवाले की नाक का टूँ। यार, ज़रा ठहर जाओ, छींकते चलना बदशगूनी है।

आज़ाद—तो जनाब, हमारा और आपका साथ हो चुका। यहाँ छींक की परवा नहीं करते। आप पर कोई आफ़त आये, तो हमारा ज़िम्मा।

अभी दस क़दम भी न गये थे कि बिल्ली रास्ता काट गयी। सईद ने आज़ाद का हाथ पकड़ कर अपनी तरफ खींच लिया। भई अजब बेतुके आदमी हो, बिल्ली राह काट गयी और तुम सीधे चले जाते हो! ज़रा ठहरो, पहले कोई और जाय, तब हम भी चलें।

अब सुनिए कि आध घंटे तक मुँह खोले खड़े हैं। या खुदा, कोई इधर से आये। आज़ाद ने झल्ला कर कहा - भई, हमको आपका साथ अजीरन हो गया। यहाँ इन बातों के क़ायल नहीं। खैर वहाँ से खुदा-खुदा करके चले, तो थोड़ी देर के बाद सईद ने फिर आज़ाद को रोका—हाँय-हाँय, खुदा के वास्ते उधर से न जाना। मियाँ अंधे हो, देखते नहीं, गधे खड़े हैं। आज़ाद ने कहा—गधे तो आप खुद हैं। डंडा उठाया, तो दोनों गधे भागे। फिर जो आगे बढ़े, तो सईद की बायीं आँख फड़की। ग़ज़ब ही हो गया। हाथ-पाँव फूल गये, सारी चौकड़ी भूल गये। बोले—यार, कोई तदबीर बताओ, बायीं आँख बेतरह फड़क रही है। मर्द की बायीं और औरत की दाहनी आँख का फड़कना बुरा शगून है। आज़ाद खिलखिला कर हँस पड़े कि अजीब आदमी हैं आप! छींक हुई और हवास ग़ायब; बिल्ली ने रास्ता काटा, और होश पैतरे; गधे देखे और औसान खता; और जो बायीं आँख फड़की, तो सितम ही हुआ! मियाँ, कहना मानो, इन खुराफ़ात बातों में न जाओ। यह वहम है, जिसकी दवा लुक़मान के पास भी नहीं। मेरा और आपका साथ हो चुका। आप अपना रास्ता लीजिए, बंदा रुखसत होता है।

१४

मियाँ आज़ाद ठोकरें खाते, डंडा हिलाते, मारे-मारे फिरते थे कि यकायक सड़क पर एक खूबसूरत जवान से मुलाक़ात हुई। उसने इन्हें नज़र भर कर देखा, पर यह पहचान न सके। आगे बढ़ने ही को थे कि जवान ने कहा—

हम भी तसलीम की खू डालेंगे ;
बेनियाज़ी तेरी आदत ही सही ।

आज़ाद ने पीछे फिर कर देखा, जवान ने फिर कहा—

गो नहीं पूछते हरगिज़ वो मिज़ाज;
हम तो कहते हैं, दुआ करते हैं ।

'कहिए जनाब, पहचाना या नहीं ? यह उड़नघाइयाँ, गोया कभी की जान-पहचान ही नहीं'। मियाँ आज़ाद चकराये कि यह कौन साहब हैं ! बोले—हज़रत, मैं भी इस उठती ही जवानी में आँखें खो बैठा। वल्लाह, किस मरदूद ने आपको पहचाना हो।

जवान—ऐं, कमाल किया ! वल्लाह, अब तक न पहचाना ! मियाँ, हम तुम्हारे लँगोटिये यार हैं अनवर।

आज़ाद—अल्लाह, अनवर ! अरे यार, तुम्हारी तो सूरत ही बदल गयी।

यह कह कर दोनों गले मिले और ऐसे खुश हुए कि दोनों की आँखों से आँसू निकल आये। आज़ाद ने कहा—एक वह ज़माना था कि हम-तुम बरसों एक जगह रहे, साथ-साथ मटर-गश्ती की ; कभी बाग़ में सैर कर रहे हैं, कभी चाँदनी रात में विहाग उड़ा रहे हैं, कभी जंगल में मंगल गा रहे हैं, कभी इल्मी बहस कर रहे हैं ; कभी बाँक का शौक़, कभी लकड़ी की धुन। वे दिन अब कहाँ !

अनवर ने कहा—भाई, चलो, अब साथ-साथ रहें, जियें या मरें, मगर चार दिन की जिंदगी में साथ न छोड़ें। चलो, ज़रा बाज़ार की सैर कर आयें। मुझे कुछ सौदा लेना है। यह कह कर दोनों चौक चले। पहले बज़ाज़े में धँसे। चारों तरफ़ से आवाजें आने लगीं—आइए, आइए, अजी मियाँ साहब, क्या खरीदारी मंजूर है ? क्यों साहब, कपड़ा खरीदिएगा ? आइए, बढ़-बढ़ कपड़े दिखाऊँ कि बाज़ार भर में किसी के पास न निकलें। दोनों एक दूकान में जा कर बैठ गये। दूकान में टाट बिछा है, उस पर सफ़ेद चाँदनी, और लाला नैनसुख या डोरिये का अँगरखा डाटे बड़ी शान से बैठे हैं। तोंद वह फ़रमायशी, जैसे रुपये के दो वाले तरबूज़ ! एक तरफ़ तनजेब, शरबती, अद्धी के थानों की कतार है, दूसरी तरफ़ मोमी छींट और फलालैन की बहार है। अलगनी पर रूमाल क़रीने से लटके हुए लाल-भभूका या सफ़ेद जैसे बगले के पर, या हरे-हरे धानी, जैसे लहबर। दरवाज़ा लाल रँगा हुआ, पन्नी से मढ़ा हुआ। दीवार पर सैकड़ों चिड़ियाँ टँगी हुई।

अनवर—भई, स्याह मखमल दिखाना।

बज़ाज़—बदलू, बदलू, जरी ख़ाँ साहब को काली मख़मल का थान दिखाओ, बढ़िया।

लाला बदलू कई थान तड़ से उठा लाये—सूती, बूटीदार। अनवर ने कई थान देखे, और तब दाम पूछे।

लाला—ग़ज़ों के हिसाब से बताऊँ, या थान के दाम।

अनवर—भई, ग़ज़ों के हिसाब से बताओ। मगर लाला, झूठ कम बोलना।

लाला ने क़हक़हा उड़ाया—हजूर, हमारी दूकान में एक बात के सिवा दूसरी नहीं कहते। कौन मैल पसंद है? अनवर ने एक थान पसंद किया, उसकी क़ीमत पूछी।

लाला—सुनिए खुदावंद, जी चाहे लीजिए, जी चाहे न लीजिए, मुल दस रुपये ग़ज़ से कम न होगी।

अनवर—ऐं, दस रुपये ग़ज़! यार ख़ुदा से तो डरो। इतना झूठ!

लाला—अच्छा, तो आप भी कुछ फर्माओ।

अनवर—हम चार रुपये ग़ज़ से टका ज़्यादा न देंगे।

आज़ाद ने अनवर से कहा—चार रुपये ग़ज़ में न देगा।

अनवर—आप चुपके बैठ रहें, आपको इन बातों में ज़रा भी दख़ल नहीं है। 'शेख़ क्या जाने साबुन का भाव?'

लाला—चार रुपये ग़ज़ तो बाजार भर में न मिलेगी। अच्छा, आप सात के दाम दे दीजिए। बोलिए, कितनी ख़रीदारी मंजूर है? दस ग़ज़ उतारूँ?

अनवर—क्या ख़ूब, दाम चुकाये ही नहीं और ग़ज़ों की फ़िक्र पड़ गयी। वाजबी बताओ, वाजबी। हमें चकमा न दो, हम एक घाघ हैं।

लाला—अच्छा साहब, पाँच रुपये ग़ज़ लीजिएगा? या अब भी चकमा है?

अनवर—अब भी मँहगी है, तुम्हारी ख़ातिर से सवा चार सही। बस पाँच ग़ज़ उतार दो।

लाला ने नाक भौं चढ़ा कर पाँच ग़ज़ मख़मल उतार दी, और कहा—आप बड़े कड़े ख़रीदार हैं। हमें घाटा हुआ। इन दामों शहर भर में न पाइएगा।

आज़ाद—भई, क़सम है ख़ुदा की, मेरा ऐसा अनाड़ी तो फँस ही जाय और वह गच्चा खाय कि उम्र भर न भूले।

अनवर—जी हाँ, यहाँ का यही हाल है। एक के तीन माँगते हैं।

यहाँ से दोनों आदमी अनवर के घर चले। चलते-चलते अनवर ने कहा—लो ख़ूब याद आया। इस फ़ाटक में एक बाँके रहते हैं। जरी मैं उनसे मिल लूँ। मियाँ आज़ाद और अनवर, दोनों फाटक में हो रहे, तो क्या देखते हैं, एक अधेड़ उम्र का कड़ियल आदमी कुर्सी पर बैठा हुआ है। घुटन्ना चूड़ीदार, चुस्त, ज़रा शिकन नहीं। चुन्नटदार अँगरखा एड़ी तक, छाता गोल कटा हुआ, चोली ऊँची, नुक्केदार माशे भर की कटी हुई टोपी। सिरोही सामने रखी है और जगह-जगह करौली कटार, खाँड़ा, तलवारें चुनी हुई हैं। सलाम-कलाम के बाद अनवर ने कहा—

जनाब, वह बंदूक आपने पचास रुपये की खरीदी थी; दो दिन का वादा था, जिसके छः महीने हो गये; मगर आप साँस-डकार तक नहीं लेते। बंदूक हज़म करने का इरादा हो, तो साफ़-साफ़ कह दीजिए, रोज़ की ठाँय-ठाँय से क्या फ़ायदा?

बाँके—कैसी बंदूक, किसकी बंदूक? अपना काम करो, मेरे मुँह न चढ़ना मियाँ, हम बाँके लोग हैं, सैकड़ों को गचे, हज़ारों को झाँसे दिये, आप बेचारे किस खेत की मूली हैं? यहाँ सौ पुश्त से सिपहगरी होती आयी है। हम, और दाम दें!

अनवर—वाह, अच्छा बाँकपन है कि आँख चूकी, और कपड़ा ग़ायब; कम्मल डाला और लूट लिया। क्या बाँकपन इसी का नाम है? ऐसा तो लुक्के-लुच्चे किया करते हैं। आज के सातवें दिन बायें हाथ से रुपये गिन दीजिएगा, वरना अच्छा न होगा।

बाँके ने मूँछों पर ताव दे कर कहा—मालूम होता है, तुम्हारी मौत हमारे हाथ बदी है! बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न बनाओ। बाँकों से टर्राना अच्छा नहीं।

इस तकरार और तू तू, मैं-मैं के बाद दोनों आदमी घर चले। इधर इन बाँके का भांजा, जो अखाड़े से आया और घर में गया, तो क्या देखता है कि सब औरतें नाक-भौं चढ़ाये, मुँह बनाये, गुस्से में भरी बैठी हैं। ऐ ख़ैर तो है? यह आज सब चुपचाप क्यों बैठे हैं? कोई मिनकता ही नहीं। इतने में उसकी मुमानी कड़क कर बोली—अब चूड़ियाँ पहनो, चूड़ियाँ! और बहू-बेटियों में दब कर बैठ रहो। वह मुआ करोड़ों बातें सुना गया, पक्के पहर भर तक ऊल-जलूल बका किया और तुम्हारे मामू बैठे सब सुना किये। 'फेरी मुँह पर लोई, तो क्या करेगा कोई!' जब शर्म निगोड़ी भून खायी, तो फिर क्या। यह न हुआ कि मुए कलजिभे की ज़बान तालू से खींच लें।

भांजे को जवानी का ज़ोम था; शेर की तरह बफरता हुआ बाहर आया और बोला—मामूजान, यह आज आपसे किससे तकरार हो गयी? औरतें तक झल्ला उठीं और आप चुपके बैठे सुना किये? वल्लाह, इज्ज़त डूब गयी। ले, अब जल्दी उसका नाम बताइए, अभी आँतों का ढेर किये देता हूँ।

मामू—अरे, वही अनवर तो है। उसका क़र्ज़दार हूँ। दो बातें सुनाये तो भी क्या? और वह है ही बेचारा क्या कि उससे भिड़ता! वह पिद्दी, मैं बाज़, वह दुबला-पतला आदमी, मैं पुराना उस्ताद। बोलने का मौक़ा होता तो इस वक्त उसकी लाश न फ़ड़कती होती? ले गुस्सा थूक दो; जाओ, खाना खाओ; आज मीठे टुकड़े पके हैं।

भांजा—क़सम ख़ुदा की, जब तक उस मरदूद का ख़ून न पी लूँ, तब तक खाना हराम है। मीठे टुकड़ों पर आप ही हत्थे लगाइए। यह कह कर घर से चल खड़े हुए। मामू ने लाख समझाया, मगर एक न मानी।

इधर अनवर जब घर पहुँचे, तो देखते क्या हैं, उनका लड़का तड़प रहा है। घबराये, वह क्या, ख़ैरियत तो है? लौंडी ने कहा—भैया यहाँ खेल रहे थे कि बिच्छू ने काट लिया। तभी से बच्चा तड़प कर लोट रहा है। अनवर ने आज़ाद को वहीं छोड़ा और ख़ुद अस्पताल चले कि झटपट डॉक्टर को बुला लायें। मगर

अभी पचास क़दम भी न गये होंगे कि सामने से उस बाँके का भांज़ा आ निकला। आँखें चार हुई। देखते ही शेर की तरह गरज कर बोला—ले सँभल जा। अभी सिर खून में लोट रहा होगा। हिला और मैंने हाथ दिया। बाँकों के मुँह चढ़ना ख़ाला जी का घर नहीं। बेचारे अनवर बहुत परेशान हुए। उधर लड़के की वह हालत, इधर अपनी यह गत। जिस्म में ताक़त नहीं, दिल में हिम्मत नहीं। भागें, तो क़दम नहीं उठते; ठहरें तो पाँव नहीं जमते। सैकड़ों आदमी इर्द-गिर्द जमा हो गये और बाँके को समझाने लगे--जाने दीजिए, इनके मुक़ाबिले में खड़े होना आपके लिए शर्म की बात है। अनवर की आँखें डबडबा आयीं। लोगों से बोले--भाई, इस वक्त मेरा बच्चा घर पर तड़प रहा है, डॉक्टर को बुलाने जाता था कि राह में इन्होंने घेरा। अब किसी सूरत से मुझे बचाओ। मगर उस बाँके ने एक न मानी। पैतरा बदल कर सामने आ खड़ा हुआ। इतने में किसी ने अनवर के घर ख़बर पहुँचायी कि मियाँ से एक बाँके से तलवार चल गयी। जितने मुँह उतनी बातें। किसी ने कह दिया कि चरका खाया और गरदन खट से अलग हो गयी। यह सुनते ही अनवर की बीबी सिर पीट-पीट कर रोने लगी--लोगो, दौड़ो, हाय, मुझ पर बिजली गिरी। हाय, मैं जीते-जी मर मिटी। फिर बच्चे से चिमट कर विलाप करने लगी—मेरे बच्चे, अब तू अनाथ हो गया, तेरा बाप दगा दे गया। हाय, मेरा सोहाग लुट गया।

मियाँ आज़ाद यह ख़बर पाते ही तीर की तरह घर से निकल कर उस मुक़ाम पर जा पहुँचे। देखा, तो वह ज़ालिम तलवार हाथ में लिये मस्त हाथी की तरह चिंघाड़ रहा है। आज़ाद ने झट से झपट कर अनवर को हटाया और पैतरा बदल कर बाँके के सामने आ खड़े हुए। वह तो जवानी के नशे में मस्त था, पहले, हथकटी का हाथ लगाना चाहा, मगर आज़ाद ने ख़ाली दिया। वह फिर झपटा और चाहा कि चाकी का हाथ जमाये, मगर यह आड़े हो गये।

आज़ाद--बचा, यह उड़नघाइयाँ किसी गँवार को बताना। मेरे सामने छक्के छूट जायँ, तो सही। आओ चोट पर। वह बाँका झल्ला कर झपटा और घुटना टेक कर पालट का हाथ लगाने ही को था कि आज़ाद ने पैतरा बदला और तोड़ किया—मोढ़ा। मोढ़ा तो उसने बचाया, मगर आज़ाद ने साथ ही जनेवे का वह तुला हुआ हाथ जमाया कि उसका भंडारा तक खुल गया। धम से जमीन पर आ गिरा। मियाँ आज़ाद को सबने घेर लिया, कोई पीठ ठोकने लगा, कोई डंड मलने लगा। अनवर लपके हुए घर गये। बीबी की बाछें खिल गयीं, गोया मुर्दा जी उठा।

दूसरे दिन अनवर और आज़ाद कमरे में बैठे चाय पी रहे थे कि डाकिया हरी-हरी वरदी फड़काये, लाल-लाल पगिया जमाये, खासा टैयाँ बना हुआ आया और एक अख़बार दे कर लंबा हुआ। अनवर ने झटपट अख़बार खोला, ऐनक लगायी और अख़बार पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते आख़िरी सफ़े पर नज़र पड़ी, तो चेहरा खिल गया।

आज़ाद--यह क्यों ख़ुश हो गये भई? क्या ख़बर है?

अनवर—देखता हूँ कि यह इश्तिहार यहाँ कैसे आ पहुँचा ? अखबारों में इन बातों का क्या ज़िक्र ? देखिए—

'ज़रूरत है एक अरबी प्रोफेसर की नजीरपुर-कॉलेज के लिए। तनख्वाह दो सौ रुपये महीना।'

आज़ाद—अखबारों में सभी बातें रहती हैं, यह कोई तो नयी बात नहीं। अखबार लड़कों का उस्ताद, जवानों को सीधी राह बतानेवाला, बुड्ढों के तजुर्बे की कसौटी, सौदागरों का दोस्त, कारीगरों का हमदर्द, रिआया का वकील, सब कुछ है। किसी कालम में मुल्की छेड़-छाड़, कहीं नोटिस और इश्तिहार, अँगरेजी अखबारों में तरह-तरह की बातें दर्ज होती हैं और देसी अखबार भी इनकी नक़ल करते हैं। शतरंज के नक़शे क़ौमी तमस्सुकों का निर्ख, घुड़दौड़ की चर्चा, सभी कुछ होता है। जब कभी कोई ओहदा खाली हुआ और अच्छा आदमी न मिला, तो हुक्काम इसका इश्तिहार देते हैं। लोगों ने पढ़ा और दरख्वास्त दाग़ दी; लगा तो तीर, नहीं तुक्का।

अनवर—अब तो नये-नये इश्तिहार छपने लगेंगे। कोई नया गंज आबाद करे, तो उसको छपवाना पड़ेगा—एक नौजवान साक़िन की ज़रूरत है, नये गंज में दूकान जमाने के लिए; क्योंकि जब तक धुआँधार चिलमें न उड़ें, चरस की लौ आसमान की खबर न लाये, तब तक गंज की रौनक़ नहीं। अफीमची इश्तिहार देंगे कि एक ऐसे आदमी की ज़रूरत है, जो अफीम घोलने में ताक हो, दिन-रात पीनक में रहे; मगर अफीम घोलने के वक़्त चौंक उठे। आराम-तलब लोग छपवायेंगे कि एक ऐसे क़िस्सा कहनेवाले की जरूरत है, जिसकी ज़बान कतरनी की तरह चली जाय, जिसके अमीर-हमजा की दास्तान ज़बान पर हो, ज़मीन और आसमान के कुलाबे मिलाये, झूठ के छप्पर उड़ाये, शाम से जो बकना शुरू करे, तो तड़का कर दे। खुशामदपसंद लोग छपवायेंगे कि एक ऐसे मुसाहब की ज़रूरत है, जो आठों गाँठ कुम्मैत हो, हाँ में हाँ मिलाये, हमको सखावत में हातिम; दिलेरी में रुस्तम, अक़्ल में अरस्तू बनाये – मुँह पर कहे कि हुज़ूर ऐसे और हूज़ूर के बाप ऐसे, मगर पीठ-पीछे गालियाँ दे कि इस गधे को मैंने खूब ही बनाया। बेफ़िक्रे छपवायेंगे कि एक बटेर की ज़रूरत है, जो बढ़-बढ़ कर लात लगाता हो; एक मुर्ग़ की, जो सवाये-ड्योढ़े को मारे; एक मेंढ़े की, जो पहाड़ से टक्कर लेने में बंद न हो।

इतने में मिर्ज़ा सईद भी आ बैठे। बोले—भई, हमारी भी एक ज़रूरत छपवा दो। एक ऐसी जोरू चाहिए जो चालाक और चुस्त हो, नख-सिख से दुरुस्त हो, शोख और चंचल हो, कभी-कभी हँसी में टोपी छीनकर चपत भी जमाये, कभी रूठ जाये, कभी गुदगुदाये; खर्च करना न जानती हो, वरना हमसे मीज़ान न पटेगी; लाल मुँह हो; सफ़ेद हाथ-पाँव हों, लेकिन ऊँचे क़द की न हो, क्योंकि मैं नाटा आदमी हूँ; खाना पकाने में उस्ताद हो, लेकिन हाज़मा खराब हो, हल्की-फुल्की दो चपातियाँ खाय, तो तीन दिन में हज़म हो; सादा मिज़ाज ऐसी हो कि गहने-पाते से मतलब

ही न रखे,-हँसमुख हो, रोते को हँसाये, मगर यह नहीं कि फटी जूती की तरह बेमौक़ा दाँत निकाल दे, दरख़्वास्त खटाखट आयें, हाँ, यह भी याद रहे कि साहब के मुँह पर दाढ़ी न हो।

आज़ाद—और तो खैर, मगर यह दाढ़ी की बड़ी कड़ी शर्त है। भला क्यों साहब औरतें भी मुछक्कड़ हुआ करती हैं ?

सईद—कौन जाने भई, दुनिया में सभी तरह के आदमी होते हैं। जब बेमूँछ के मर्द होते हैं, तो मूँछवाली औरतों का होना भी मुमकिन है। कहीं ऐसा न हो कि पीछे हमारी मूँछ उसके हाथ में और उसकी दाढ़ी हमारे हाथ में हो।

आज़ाद—अजी, जाइए भी औरत के भी कहीं दाढ़ी होती है ?

सईद—हो या न हो, मगर यह पख हम जरूर लगायेंगे।

आपस में यही मज़ाक़ हो रहा था कि पडोस से रोने-पीटने की आवाज़ आयी। मालूम हुआ कोई बूढ़ा आदमी मर गया। आज़ाद भी वहाँ जा पहुँचे। लोगों से पूछा इन्हें क्या बीमारी थी ? एक बूढ़े ने कहा—यह न पूछिए, हुकुम की बीमारी थी।

आज़ाद—यह कौन बीमारी है ? यह तो कोई नया मरज़ मालूम होता है। इसकी अलामतें तो बताइए।

बूढ़ा—क्या बताऊँ, अक़्ल की मार इसका ख़ास सबब है। अस्सी बरस के थे, मगर अक़्ल के पूरे, तमीज़ छू नहीं गयी ! ख़ुदा जाने, धूप में बाल सफ़ेद किये थे या नज़ला हो गया था। हज़रत की पीठ पर एक फोड़ा निकला। दस दिन तक इलाज नदारद। दसवें दिन किसी गँवार ने कह दिया कि गुलेअब्बास के पत्ते और सिरका बाँधो। झट-से राज़ी हो गये। सिरका बाज़ार से ख़रीदा, पत्ते बाग़ से तोड़ लाये, और सिरके में पत्तों को खूब तर करके पीठ पर बाँधा। दूसरे रोज़ फोड़ा आध अंगुल बढ़ गया। किसी और गौखे ने कह दिया कि भटकटैया बाँधो, यह टोटका है। इसका नतीजा यह हुआ कि दर्द और बढ़ गया। किसी ने बताया कि इमली की पत्ती, धतूरा और गोबर बाँधो। वहाँ क्या था, फ़ौरन मंजूर। अब तड़पने लगे। आग लग गयी ! महल्ले की एक औरत ने कहा—मैं बताउँ, मुझसे क्यों न पूछा। सहल तरकीब है, मूली के अचार के तीन क़तले लेकर जमीन में गाड़ दो। तीन दिन के बाद निकालो और कुएँ में डाल दो। फिर उसी कुएँ का पानी अपने हाथ भर कर पी जाओ। उसी दम चंगे न हो जाओ, तो नाक कटा डालूँ। सोचे, भई, इसने शर्त बड़ी कड़ी की है। कुछ तो है कि नाक बद ली। झट मूली के क़तले गाड़े और कुएँ में डाल पानी भरने लगे उस पर तुर्रा यह कि मारे दर्द के तड़प रहे थे। रस्सी हाथ से छूट गयी धम से गिरे, फोड़े में ठेस लगी, तिलमिलाने लगे यहाँ तक कि जान निकल गयी।

आज़ाद—अफ़सोस, बेचारे की जान मुफ्त में गयी। इन अक़्ल के दुश्मनों से कोई इतना तो पूछे कि हर ऐरे ग़ैरे की राय पर क्यों इलाज कर बैठते हो ? नतीजा यह होता है, या तो मरज़ बढ़ जाता है, या जान निकल जाती है।

१५

मियाँ आज़ाद एक दिन चले जाते थे। क्या देखते हैं, एक पुरानी-धुरानी गड़हिया के किनारे एक दढ़ियल बैठे काई की कैफ़ियत देख रहे हैं। कभी ढेला उठाकर फेंका, छप। बुड्ढे आदमी और लौंडे बने जाते हैं। दाढ़ी का भी ख़याल नहीं। लुत्फ़ यह कि मुहल्ले भर के लौंडे इर्द-गिर्द खड़े तालियाँ बजा रहे हैं, लेकिन आप गड़हिया की लहरों ही पर लट्टू हैं। कमर झुकाये चारों तरफ़ ढेले और ठीकरे ढूँढ़ते फिरते हैं। एक दफ़ा कई ढेले उठा कर फेंके। आज़ाद ने सोचा, कोई पागल है क्या। साफ़-सुथरे कपड़े पहने, यह उम्र, यह वज़ा, और किस मज़े से गड़हिया पर बैठे रँगरलियाँ मना रहे हैं। यह ख़बर नहीं कि गाँव भर के लौंडे पीछे तालियाँ बजा रहे हैं। एक लौंडे ने चपत जमाने के लिए हाथ उठाया, मगर हाथ खींच लिया। दूसरे ने पेड़ की आड़ से कंकड़ी लगायी। तीसरे ने दाढ़ी पर घास फेंकी। चौथे ने कहा--मियाँ, तुम्हारी दाढ़ी में तिनका; मगर मेरा शेर ज़रा न मिनका। गड़हिया से उठे, तो दूर की सूझी। झप से एक पेड़ पर चढ़ गये, फुनगी पर जा बैठे और बंदर की तरह लगे उचकने। उस टहनी पर से उचके, तो दूसरी डाल पर जा बैठे। उस पर लड़कों को भी बुलाते जाते हैं कि आओ, ऊपर आओ। इमली का दरख़्त था, इतना ऊँचा कि आसमान से बातें कर रहा था। हज़रत मज़े से बैठे इमली खाते और चियें लड़कों पर फेकते जाते हैं। लौंडे गुल मचा रहे हैं कि मियाँ, मियाँ, एक चियाँ हमको इधर फेंको, इधर; हाथ ही टूटे, जो उधर फेंके। क्या मज़े से गपर-गपर करके खाते जाते हैं, इधर एक चियाँ भी नहीं फेंकते। ओ कंजूस, ओ मक्खीचूस, ओ बंदर, अरे मुछंदर, एक इधर भी। थोड़ी देर में खटखट करते पेड़ से उतरे। इतने में कमसरियट के तीन-चार हाथी चारे और गन्ने से लदे झूमते हुए निकले। आपने लड़कों को सिखाया कि गुल मचा कर कहो—हाथी, हाथी गन्ना दे। लौंडों ने जो इतनी शह पायी, तो आसमान सिर पर उठा लिया। सब चीखने लगे—हाथी, हाथी, गन्ना दे। एकाएक एक रीछवाला आ निकला। आपने झट रीछ की गरदन पकड़ी और पीठ पर हो रहे। टिक-टिक-टिक, क्या टट्टू है! रीछवाला चिल्ल-पों मचाया ही किया, आपने दो-तीन लड़कों को आगे-पीछे अगल-बगल बिठा ही लिया। मज़े से तने बैठे हैं, गोया अपने वक्त के बादशाह हैं। थोड़ी देर के बाद लड़कों को ज़मीन पर पटका, खुद भी धम से ज़मीन पर कूद पड़े, और झट लँगोट कस, ताल ठोक, रीछ से कुश्ती लड़ने पर आमादा हो गये। तब तो रीछवाला चिल्लाया—मियाँ, क्यों जान के दुश्मन हुए हो! चबा ही डालेगा! यह तो हवा के घोड़े पर सवार थे, आव देखा न ताव, चिमट ही तो गये और एक अंटी बतायी तो रीछ चारों खाने चित। लौंडों ने वह गुल मचाया कि रीछ पूरब भागा, और रीछवाला पश्चिम। मुहल्ले भर में क़हक़हा उड़ने

लगा। थोड़ी ही देर के बाद एक भड्डुरी आ निकला। धोती बाँधे, पोथी बग़ल में दबाये, रुद्राक्ष की माला पहने, आवाज़ लगाता जाता है—साइत बिचारें, सगुन बिचारें। दढ़ियल के क़रीब से गुज़रा, तो शिकार इनके हाथ आया। बोले—भई, इधर आना। उसकी बाँछें खिल गयीं कि पौ बारह है। अच्छी बोहनी हुई। दढ़ियल ने हाथ दिखाया और पूछा—हमारी कितनी शादियाँ होंगी? उसने कन्या, मकर, सिंह, वृश्चिक करके बहुत सोच के कहा—पाँच। आपने उसकी पगड़ी उछाल दी। लड़कों को दिल्लगी सूझी, किसी ने सिर सुहलाया तो किसी ने चपत लगाया। अच्छी तरह बोहनी हुई। दढ़ियल ने कहा—सच कहना, आज साइत देख कर चले थे या यों ही? अपनी साइत देख लेते हो या औरों ही को राह बताते हो? अच्छा, ख़ैर, बताओ, हमारे यहाँ लड़का कब तक होगा? भड्डुरी ने कहा—बस, बस, आप और किसी से पूछिएगा। भर पाया। यह कह कर चलने ही को था कि दढ़ियल ने लड़कों को इशारा किया। वे तो इनको अपना गुरू ही समझते थे। एक ने पोथी ली, दूसरे ने माला छिपायी, तीसरे ने पगिया टहला दी। दस-पाँच चिमट गये। बेचारा बड़ी मुश्किल से जान छुड़ा कर भागा और क़सम खायी कि अब इस मुहल्ले में क़दम न रखूँगा। इतने में खोंचेवाले ने आवाज़ दी—गुलाबी रेवड़ियाँ, करारी खुटियाँ, दालमोट सलोने, मटर तिकोने। लौंडे अपने-अपने दिल में ख़ुश हो गये कि दढ़ियल के हुक्म से खोंचा लूट लेंगे और ख़ूब मिठाइयाँ चखेंगे। मगर उन्होंने मना कर दिया—ख़बरदार, हाथ मत बढ़ाना। जब खोंचेवाला पास आया, तब उन्होंने मोल-तोल करके दो रुपये में सारा खोंचा मोल ले लिया और लड़कों को ख़ूब छका कर खिलाया। एक दस मिनट के बाद आवाज़ आयी—खीरे लो, खीरे। आपने उचक कर टोकरा उलट दिया। खीरे ज़मीन पर गिर पड़े। जैसे ही लड़कों ने चाहा, खीरे बटोरें कि उन्होंने डाँट बतायी। खीरेवाले के दोनों हाथ पकड़ लिये और लड़कों से कहा—खीरे उठा उठा कर इसी गड़हिया में फेंकते जाओ! पचास-साठ खीरे आनन-फानन गड़हिया में पहुँच गये। अभी यह तमाशा हो ही रहा था कि एक चिड़ीमार कंपा-जाल लिये हुए आ निकला। हाथ में तीन-चार जानवर, कुछ झोले के अंदर। सब फड़फड़ा रहे हैं। कहता जाता है—काला भुजंगा मंगल के रोज। दढ़ियल ने पुकारा—आओ मियाँ, इधर आओ। एक भुजंगा ले कर अपने ऊपर से उतार कर छोड़ दिया। चिड़ीमार ने कहा—टका हुआ। दूसरा जानवर एक लड़के पर से उतार कर छोड़ा। इसी तरह दस-पंद्रह चिड़ियाँ छोड़ कर चुपचाप खड़े हो गये। गोया कुछ मतलब ही नहीं। चिड़ीमार ने कहा—हुज़ूर, दाम। आपने फ़र्माया—तुम्हारा नाम? तब तो वह चकराया कि अच्छे मिले। बोला—हुज़ूर, धेली के जानवर थे। आप बोले—कैसी धेली और कैसा धेला! कुछ घास तो नहीं खा गया? भंग पी गया है या शराब का नशा है? इधर लड़कों ने जाल-कंपा सब टहला दिया। थोड़ी देर रो-पीट कर उसने भी अपनी राह ली।

दढ़ियल ने लड़कों को छोड़ा और वहाँ से किसी तरफ़ जाना ही चाहते थे कि

आज़ाद ने क़रीब आ कर पूछा—हज़रत, मैं बड़ी देर से आपका तमाशा देख रहा हूँ, कभी खीरे गड़हिया में फेंके, कभी इमली पर उचक रहे, कभी चिड़ीमार की खबर ली, कभी भड़ुरी को आड़े हाथों लिया। मुझे खौफ़ है कि आप कहीं पागल न हो जायँ, जल्दी फ़स्द खुलवाइए।

दढ़ियल—मुझे तो आप ही पागल मालूम होते हैं। इन बातों के समझने के लिए बड़ी अक़्ल चाहिए। सुनिए, आपको समझाऊँ। गड़हिया पर बिस्तर जमा कर ढेले फेकने और पेड़ पर उचक कर इमली खाने और हाथी से गन्ने माँगने का सबब यह है कि लौंडे भी हमारी देखा-देखी उचक-फाँद में बर्क़ हो जायँ, यह नहीं कि मरियल टट्टू की तरह जहाँ बैठे, वहीं जम गये। लड़कों को कम से कम दो घंटे रोज़ खेलना-कूदना चाहिए, वरना बीमारी सतायेगी। रीछवाले के रीछ पर उचक बैठने, रीछ को भगा देने और चिड़ीमार के जानवरों को मुफ़्त बे कौड़ी-बेदाम छुड़ा देने का सबब यह है कि जब हम जानवरों को तकलीफ़ में देखते हैं, तो कलेजे पर साँप लोटने लगता है और इन चिड़ीमारों का तो मैं जानी दुश्मन हूँ। बस चले, तो कालेपानी भिजवा दूँ। जहाँ देखा कि दो-चार भले मानुस खड़े हैं, लगे जानवरों को जोर से दबाने, जिसमें वे चीखें, और लोग उनकी हालत पर कुछ दे निकलें, इनकी हड्डियाँ चढ़ जायँ। खीरे इसलिए गड़हिया में फिकवा दिये कि आजकल हवा खराब है, खीरे खाने से भला-चंगा आदमी बीमार हो जाय। मगर इन कुँजड़ों-कबाड़ियों को इन बातों से क्या वास्ता? उन्हें तो अपने टकों से मतलब। मैंने समझा, एक कबाड़िये के नुक़सान से पचासों आदमियों की जान बच जाय, तो क्या बुरा? देख लो, खोंचेवाले को हमने अपने पास से दो रुपये खनाखन गिन दिये। अब समझे, इस तमाशे का हाल?

यह कह कर उन्होंने अपनी राह ली और आज़ाद ने भी दिल में उनकी नेकनीयती की तारीफ़ करते हुए दूसरी तरफ़ का रास्ता लिया। अभी कुछ ही दूर गये थे कि सामने से एक साहब आते हुए दिखायी दिये। उन्होंने आज़ाद से पूछा—क्यों साहब, आप अफ़ीम तो नहीं खाते?

आज़ाद—अफ़ीम पर खुदा की मार! क़सम ले लीजिए, जो आज तक हाथ से भी छुई हो। इसके नाम से नफ़रत है।

यह कह कर आज़ाद नदी के किनारे जा बैठे। वहाँ से पलट कर जो आये, तो क्या देखते हैं कि वही हज़रत जमीन पर पड़े आँखें माँग रहे हैं। चेहरे पर मुर्दनी छायी है, होंठ सूख रहे हैं, आँखों से आँसू बह रहे हैं। न सिर की फ़िक्र है, न पाँव की। आज़ाद चकराये, क्या माजरा है। पूछा—क्यों भई, खैर तो है? अभी तो भले-चंगे थे, इतनी जल्द कायापलट कैसे हो गयी?

अफ़ीमची—भई, मैं तो मर मिटा। कहीं से अफ़ीम ले आओ। पिऊँ, तो आँखें खुलें; जान में जान आये। छुटपन ही से अफ़ीम का आदी हूँ। वक़्त पर न मिले, तो जान निकल जाय।

आज़ाद—अरे यार, अफ़ीम छोड़ो, नहीं, इसी तरह एक दिन दम निकल जायगा।

अफ़ीमची—तो क्या आप अमृत पी कर आये हैं? मरना तो एक दिन सभी को है।

आज़ाद—मियाँ, हो बड़े तीखे; 'रस्सी जल गयी, मगर बल न गया।' पड़े सिसक रहे हो, मगर जवाब, तुर्की ब तुर्की ज़रूर दोगे।

अफ़ीमची—जनाब, अफ़ीम लानी हो तो लाइए, वर्ना यहाँ बक-बक सुनने का दिमाग़ नहीं।

आज़ाद—अफ़ीम लानेवाले कोई और ही होंगे, हम तो इस फ़िक्र में बैठे हैं कि आप मरें, तो मातम करें। हाँ, एक बात मानो तो अभी लपक जाऊँ, ज़रा लकड़ी के सहारे से उस हरे-भरे पेड़ के तले चलो; वहाँ हरी-हरी घास पर लोट मरो, ठंडी-ठंडी हवा खाओ, तब तक मैं आता हूँ।

अफ़ीमची—अरे मियाँ, यहाँ जान भारी है। चलना-फिरना उठना-बैठना कैसा!

आख़िर आज़ाद ने उन्हें पीठ पर लादा और ले चले। उनकी यह हालत कि आँखें बंद, मुँह खुला हुआ; मालूम ही नहीं कि जाते कहाँ हैं। आज़ाद ने उनको नदी में ले जा कर गोता दिया। बस क़यामत आ गयी। अफ़ीमची आदमी, पानी की सूरत से नफ़रत, लगे चिल्लाने—बड़ा गच्चा दे गया, मारा, पटरा कर दिया! उम्र भर में आज ही नदी में क़दम रखा; ख़ुदा तुझसे समझे; सन से जान निकल गयी ठिठुर गया; अरे ज़ालिम, अब तो रहम कर। आज़ाद ने एक गोता और दिया। फिर ताबड़तोड़ कई गोते दिये। अब उनकी कैफ़ियत कुछ न पूछिए। करोड़ों गालियाँ दी। आज़ाद ने उनको रेती में छोड़ दिया और लंबे हुए। चलते-चलते एक बरगद के पेड़ के नीचे पहुँचे, जिसकी टहनियाँ आसमान से बातें करती थीं और जटाएँ पाताल की ख़बर लेती थीं। देखा, एक हज़रत नशे में चूर एक दुबली-पतली टट्टुई पर सवार टिक-टिक करते जा रहे हैं।

आज़ाद—इस टट्टुई पर कौन लदा है?

शराबी—अच्छा जी, कौन लदा है! ऐसा न हो कि कहीं मैं उतर कर अंजर-पंजर ढीले कर दूँ। यों नहीं पूछता कि इस हवाई घोड़े पर आसन जमाये, बाग उठाये कौन सवार जाता है। आँखों के आगे नाक, सूझे क्या ख़ाक। टट्टू ऐसे ही हुआ करते हैं?

आज़ाद—जनाब, कसूर हुआ, माफ़ कीजिए। सचमुच यह तो तुर्की नस्ल का पूरा घोड़ा है। ख़ुदा झूठ न बुलाये, जमना पार की बकरी इससे कुछ ही बड़ी होगी।

शराबी—हाँ, अब आप आये राह पर। इस घोड़े की कुछ न पूछिए। माँ के पेट से फुदुकता निकला था।

आज़ाद—जी हाँ, वह तो इसकी आँखें ही कहे देती हैं। घोड़ा क्या, उड़न-खटोला है।

शराबी—इसकी क़ीमत भी आपको मालूम है?

आज़ाद—ना साहब! भला मैं क्या जानूँ। आप तो ख़ैर गधे पर सवार हुए हैं,

यहाँ तो टाँगों की सवारी के सिवा और कोई सवारी मयस्सर ही न हुई। मगर उस्ताद कितनी ही तारीफ़ करो, मेरी निगाह में तो नहीं जँचता।

शराबी—अच्छा, तो इसी बात पर कड़कड़ाये देता हूँ।

यह कह कर एड़ लगायी मगर टट्टू ने जुंबिश तक न की। वह और अचल हो गया। अब चाबुक पर चाबुक मारते हैं, एड़ लगाते हैं और वह टसकने का नाम तक नहीं लेता। आज़ाद ने कहा—बस ज़्यादा शेखी में न आइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइए।

यह कह कर आज़ाद तो चले, मगर शराबी के पाँव डगमगाने लगे। बाग अब छूटी और अब छूटी। दस क़दम चले और बाग रोक ली। पूछा—मियाँ मुसाफिर, मैं नशे में तो नहीं हूँ?

आज़ाद—जी नहीं, नशा कैसा? आप होश की बातें कर रहे हैं?

शराबी इसी तरह बार-बार आज़ाद से पूछता था। आख़िर जब आज़ाद ने देखा कि यह अब घुड़िया पर से लुढ़का ही चाहते हैं, तो झट घुड़िया को एक खेत में हाँक दिया, और गुल मचाया कि ओ किसान, देख, यह तेरा खेत चराये लेता है। किसान के कान में भनक पड़ी, तो लठ काँधे पर रख लाखों गालियाँ देता हुआ झपटा। आज चचा बनाके छोड़ूँगा; रोज़ सुअरिया चरा ले जाते थे, आज बहुत दिन के बाद हत्थे चढ़े हो। नज़दीक गया, तो देखता है कि टटुई है और एक आदमी उस पर लदा है। किसान चालाक था। बोला—आप हैं बाबू साहब! चलिए, आपको घर ले चलूँ। वहीं खाना खाइए और आराम से सोइए। यह कह कर घुड़िया की रास थामे हुए, काँजीहाउस पहुँचा और टटुई को काँजीहाउस में ढकेल कर चंपत हुआ। यह बेचारे रात भर काँजीहाउस में रहे, सुबह को किसी तरह घर पहुँचे।

१६

मियाँ आज़ाद के पाँव में तो आँधी रोग था। इधर-उधर चक्कर लगाये, रास्ता नापा और पड़ कर सो रहे। एक दिन साँड़नी की ख़बर लेने के लिए सराय की तरफ़ गये, तो देखा, बड़ी चहल-पहल है। एक तरफ़ रोटियाँ पक रही हैं, दूसरी तरफ़ दाल बघारी जाती है। भठियारियाँ मुसाफ़िरों को घेर-घार कर ला रही हैं, साफ़-सुथरी कोठरियाँ दिखला रही हैं। एक कोठरी के पास एक मोटा-ताज़ा आदमी जैसे ही चारपाई पर बैठा, पट्टी टूट गयी। आप गड़ाप से झिलँगे में हो रहे। अब बार-बार उचकते हैं; मगर उठा नहीं जाता। चिल्ला रहे हैं कि भाई, मुझे कोई उठाओ। आख़िर भठियारों ने दाहना हाथ पकड़ा, बायीं तरफ मियाँ आज़ाद ने हाथ दिया और आपको बड़ी मुश्किल से खींच-खाँच के निकाला। झिलँगे से बाहर आये, तो सूरत बिगड़ी हुई थी। कपड़े कई जगह मसक गये थे। झल्ला कर भठियारी से बोले—वाह, अच्छी चारपाई दी! जो मेरे हाथ-पाँव टूट जाते, या सिर फूट जाता, तो कैसी होती?

भठियारी—ऐ वाह मियाँ, 'उलटा चोर कोतवाल को डाँटे!' एक तो छपरखट को चकनाचूर कर डाला, पट्टी के बहत्तर टुकड़े हो गये, देंगे टका और छह रुपये पर पानी फेर दिया, दूसरे हमीं को ललकारते हैं!

आज़ाद—जनाब, इन भठियारियों के मुँह न लगिए, कहीं कुछ कह बैठें, तो मुफ़्त की झेंप हो। देख भाल कर बैठा कीजिए। कहाँ से आ रहे हैं?

हकीम—यहीं तक आया हूँ।

आज़ाद—आप आये कहाँ से हैं?

हकीम—जी गोपामऊ मकान है।

आज़ाद—यहाँ किस ग़रज़ आना हुआ?

हकीम—हकीम हूँ।

आज़ाद—यह कहिए कि आप तबीब है।

हकीम—तबीब आप ख़ुद होंगे, हम हकीम हैं।

आज़ाद—अच्छा साहब, आप हकीम ही सही; क्या यहाँ हिकमत कीजिएगा?

हकीम—और नहीं तो क्या, भाड़ झोकने आया हूँ? या सनीचर पैरों पर सवार था? भला यह तो फ़र्माइए कि यह कैसी जगह है? लोग किस फैसन के हैं? आब-हवा कैसी है?

आज़ाद—यह न पूछिए जनाब। यहाँ के बाशिंदे पूरे घुटे हुए, आठों गाँठ कुम्मैत हैं। और आब-हवा तो ऐसी है कि बरसों रहिए, पर सिर में दर्द तक न हो। पाव भर की ख़ुराक हो, तो तीन पाव खाइए। डकार तक आये, तो मुझे सज़ा दीजिए।

यह सुन कर हकीम साहब ने मुँह बनाया और बोले—तब तो बुरे फँसे!

आज़ाद—क्यों, बुरे क्यों फँसे ? शौक़ से हिकमत कीजिए। आब-हवा अच्छी है, बीमारी का नाम नहीं।

हकीम—हज़रत, आप निरे बुद्धू हैं। एक तो आपने यह गोला मारा कि आब-हवा अच्छी है। इतना नहीं समझते कि आब-हवा अच्छी है, तो हमसे क्या वास्ता, हमें कौन पूछेगा। बस, हाथ पर हाथ रखे मक्खियाँ मारा करेंगे। हम तो ऐसे शहर जाना चाहते हैं, जहाँ हैज़े का घर हो, बुख़ार पीछा न छोड़ता हो, दस्त और पेचिश की सबको शिकायत हो, चेचक का वह ज़ोर हो कि ख़ुदा की पनाह। तब अलबत्ता हमारी हँड़िया चढ़े। आपने तो वल्लाह, आते ही गोला मारा। आप फ़रमाते हैं कि यहाँ पाव भर के बदले तीन पाव ग़िज़ा हज़म होती है। आमदनी टका नहीं और खायँ चौगुना। तो कहिए, मरे या जिये ? बंदा सबेरे ही बोरिया-बँधना उठा कर चंपत होगा। ऐसी जगह मेरी बला रहे, जहाँ सब हट्टे-कट्टे ही नज़र आते हैं। भला कोई ख़ास मरज़ भी है यहाँ ? या मरज़ का इस तरफ़ गुज़र ही नहीं हुआ ?

आज़ाद—हज़रत, यहाँ के पानी में यह असर है कि बरसों का मरीज़ आये, और एक क़तरा पी ले, तो बस, ख़ासा हट्टा-कट्टा हो जाय।

हकीम—पानी क्या अमृत है ! तो सही, जो पानी में ज़हर न मिला दिया हो।

आज़ाद—जनाब, हज़ारों कुएँ और पचासों बावलियाँ हैं, किस-किस में ज़हर मिलाते फिरएगा ?

हकीम—ख़ैर भाई, समझा जायगा; मगर बुरे फँसे ! इस वक़्त होश ठिकाने नहीं है ! ओ भठियारी, जरी हमको पंसारी की दूकान से तोला भर सिकंजबीन तो ला देना।

भठियारी—ऐ मियाँ, पंसारी यहाँ कहाँ ? किसी फ़क़ीर की दुआ ऐसी है कि यहाँ हकीम और पंसारी जमने ही नहीं पाता। कई हकीम आये, मगर क़ब्र में हैं। कई पंसारियों ने दूकान जमायी मगर चिता में फूँक दिये गये। यहाँ तो बीमारी ने आने की क़सम खायी है।

हकीम—भई, बड़ा निकम्मा शहर है। ख़ुदा के लिए हमें टट्टू किराये पर कर दो, तो रफ़ू-चक्कर हो जायँ। ऐसे शहर की ऐसी-तैसी।

इन्हें धता बता कर आज़ाद सराय के दूसरे हिस्से में जा पहुँचे। क्या देखते हैं, एक बुज़ुर्ग आदमी बिस्तर जमाये बैठे हैं। आज़ाद बेतक़ल्लुफ़ तो थे ही, 'सलाम अलेक' कह कर पास जा बैठे। वह भी बड़े तपाक से पेश आये। हाथ मिलाया, गले मिले, मिज़ाज पूछा।

आज़ाद—आप यहाँ किस ग़रज़ से तशरीफ़ लाये हैं ?

उन्होंने जवाब दिया—जनाब, मैं वकील हूँ। यहाँ वकालत करने का इरादा है। कहिए, यहाँ की अदालत का क्या हाल है ?

आज़ाद—यह न पूछिए। यहाँ के लोग भीगी बिल्ली हैं; लड़ना-भिड़ना जानते ही नहीं। साल भर में दो-चार मुक़दमे शायद होते हों। चोरी-चकारी यहाँ कभी सुनने ही

में नहीं आती। ज़मीन, आराज़ी, लगान, पट्टीदारी के मुक़दमे कभी सुने ही नहीं। क़र्ज़ कोई ले न दे।

वकील साहब का रंग उड़ गया। मगर हकीमजी की तरह झल्ले तो थे नहीं, आहिस्ता से बोले—सुभान अल्लाह, यहाँ के लोग बड़े भले आदमी हैं। खुदा उनको हमेशा नेक रास्ते पर ले जाय। मगर दिल में अफ़सोस हुआ कि इस टीम-टाम, धूम-धाम से आये, और यहाँ भी वही ढाक के तीन पात। जब मुक़दमे ही न होंगे, तो खाऊँगा क्या, दुश्मन का सिर। इन्हें भी झाँसा दे कर आज़ाद आगे बढ़े, तो देखा, चारपाई बिछाये शहतूत के पेड़ के नीचे एक साहब बैठे हुक्क़ा उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने पूछा—आपका नाम ?

वह बोले—गुम-नाम हूँ।

आज़ाद—वतन कहाँ है ?

वह—फ़क़ीर जहाँ पड़ रहे, वहीं उसका घर।

आज़ाद—आपका पेशा क्या है ?

वह—खूने-जिगर खाना।

आज़ाद—तो आप शायर हैं, यह कहिए।

आज़ाद चारपाई के एक कोने पर बैठ गये और बेतक़ल्लुफ़ हो कर बोले—जनाब, हुक्क़ा तो मेरे हवाले कीजिए और आप अपना कलाम सुनाइए। शायर साहब ने बहुत कुछ चुना-चुनी के बाद दूसरे का कलाम अपना कह कर सुनाया—

क्या हाल हो गया है दिले-बेक़रार का
आज़ार हो किसी को इलाही, न प्यार का।
मशहूर है जो रोज़े-क़यामत जहान में;
पहला पहर है मेरी शबे-इंतिज़ार का।
इमतास देखना मेरी वहशत के बलबले;
आया है धूमधाम से मौसम बहार का।
राह उनकी तकते-तकते जो मुद्दत गुज़र गयी;
आँखों को हौसला न रहा इंतिज़ार का।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह, आपका कलाम बहुत ही पाकीज़ा है। कुछ और उस्तादों के कलाम सुनाइए।

शायर—बहुत खूब; सुनिए—

दाग़ दे जाते हैं जब आते हैं;
यह शिगूफ़ा नया वह लाते हैं।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह ! दाग़ के लिए शिगूफ़ा, क्या खूब !

शायर—यार तक बार कहाँ पाते हैं;
रास्ता नाप के रह जाते हैं।

आज़ाद—वाह, क्या बोलचाल है !

शायर—फिर जुनूँ दस्त न दिखलाये हमें;
आज तलवे मेरे खुजलाते हैं।

आज़ाद—वाह-वाह, क्या ज़बान है!

शायर—फूल का जाम पिलाओ साक़ी;
काँटे तालू में पड़े जाते हैं।

आज़ाद—फूल के लिए काँटे क्या ख़ूब।

शायर—कंघी के नाम से होते हैं ख़फ़ा;
बात सुलझी हुई उलझाते हैं।

आज़ाद—बहुत ख़ूब।

शायर—अच्छा जनाब, यह तो फ़र्माइए, यहाँ के रईसों में कोई शायरी का क़द्रदान भी है?

आज़ाद—क़िब्ला, यह न पूछिए। यहाँ मारवाड़ी अलबत्ता रहते हैं। शायर या मुंशी की सूरत से नफ़रत है। यहाँ के रईसों से कुछ भी भरोसा न रखिए।

शायर—तब तो यहाँ आना ही बेकार हुआ। आख़िर, क्या एक भी रंगीन मिज़ाजे रईस नहीं है?

आज़ाद—अब आप तो मानते ही नहीं। यहाँ क़द्रदाँ ख़ुदा का नाम है।

१७

आज़ाद के दिल में एक दिन समायी कि आज किसी मसजिद में नमाज़ पढ़ें, जुमे का दिन है, जामे-मसजिद में खूब जमाव होगा। फ़ौरन मसजिद में आ पहुँचे। क्या देखते हैं, बड़े-बड़े ज़ाहिद और मौलवी, क़ाज़ी और मुफ़्ती बड़े-बड़े अमामे सिर पर बाँधे नमाज़ पढ़ने चले आ रहे हैं; अभी नमाज़ शुरू होने में देर है, इसलिए इधर-उधर की बातें करके वक़्त काट रहे हैं। दो आदमी एक दरख़्त के नीचे बैठे जिन्न और चुड़ैल की बातें कर रहे हैं। एक साहब नवजवान हैं, मोटे-ताज़े; दूसरे साहब बुड्ढे हैं, दुबले-पतले।

बुड्ढे—तुम तो दिमाग़ के कीड़े चाट गये। बड़े बक्की हो। लाखों दफ़े समझाया कि यह सब ढकोसला है, मगर तुम्हें तो कच्चे घड़े की चढ़ी है, तुम कब सुननेवाले हो।

जवान—आप बुड्ढे हो गये, मगर बच्चों की सी बातें करते हैं। अरे साहब, बड़े-बड़े आलिम, बड़े-बड़े माहिर भूतों के क़ायल हैं। बुढ़ापे में आपकी अक़्ल भी सठिया गयी?

बुड्ढे—अगर आप भूत-प्रेत दिखा दें, तो टाँग के रास्ते निकल जाऊँ। मेरी इतनी उम्र हुई, कभी किसी भूत की सूरत न देखी। आप अभी कल के लौंडे हैं, आपने कहाँ देख ली?

जवान—रोज ही देखते हैं जनाब! कौन सा ऐसा मुहल्ला है, जहाँ भूत और चुड़ैल न हों? अभी परसों की बात है, मेरे एक दोस्त ने आधी रात के वक़्त दीवार पर एक चुड़ैल देखी। बाल-बाल मोती पिरोये हुए, चोटी कमर तक लटकती हुई, ऐसी हसीन कि परियाँ झख मारें। वह सन्नाटा मारे पड़े रहे, मिनके तक नहीं। मगर आप कहते हैं, झूठ है।

बुड्ढे--जी हाँ झूठ है—सरासर झूठ। हमारा खयाल वह बला है, जो सूरत बना दे, चला-फिरा दे, बातें करते सुना दे। आप क्या जानें, अभी जुमा-जुमा आठ दिन की तो पैदाइश है। और मियाँ, करोड़ बातों की एक बात तो यह है कि मैं बिना देखे न पतियाऊँगा। लोग बात का बतंगड़ और सुई का भाला बना देते हैं। एक सही, तो निन्यानबे झूठ। और आप ऐसे ढुलमुलयक़ीन आदमियों का तो ठिकाना ही नहीं। जो सुना, फौरन मान लिया। रात को दरख़्त की फुनगी पर बंदर देखा और थरथराने लगे कि प्रेत झाँक रहा है। बोले और गला दबोचा। हिले और शामत आयी। अँधेरे-घुप में तो यों ही इनसान का जी घबराता है। जो भूत-प्रेत का ख़याल जम गया, तो सारी चौकड़ी भूल गये। हाथ-पाँव सब फूल गये। बिल्ली ने म्याऊँ किया और जान निकल गयी। चूहे की खड़बड़ सुनी और बिल ढूँढ़ने लगे। अब जो चीज़ सामने आयेगी, प्रेत बन जायगी। यहाँ सब पापड़ बेल चुके हैं। कई जिन्न हमने उतारे, कई चुड़ैलों से हमने महल्ले ख़ाली कराये। जहाँ दस जूते खोपड़ी

पर जमाये और प्रेत ने चक़चा सँभाला। यों गप उड़ाने को कहिए, तो हम भी गप बेपर की उड़ाने लगें। याद रखो, ये ओझे-सयाने सब रँगे सियार हैं। सब रोटी कमा खाने के लटके हैं। बंदर न नचाये, मुर्ग़ा न लड़ाये, पतंग न उड़ाये, भूत-प्रेत ही झाड़ने लगे।

जवान—ख़ैर, इस तू-तू मैं-मैं से क्या वास्ता? चलिए हमारे साथ। कोई दो-तीन कोस के फ़ासले पर एक गाँव है, वहाँ एक साहब रहते हैं। अगर आपकी खोपड़ी पर उनके अमल से भूत न चढ़ बैठे, तो मूँछ मुड़वा डालूँ। कहिएगा, शरीफ़ नहीं चमार है। बस, अब चलिए, आपने तो जहाँ जरा सी चढ़ायी और कहने लगे कि पीर, पयंबर, देवी, देवता, भूत-प्रेत सब ढकोसला है। लेकिन आज ठीक बनाये जाइएगा।

यह कह कर दोनों उस गाँव की तरफ़ चले। मियाँ आज़ाद तो दुनिया भर के बेफ़िक्रे थे ही, शौक़ चर्राया कि चलो, सैर देख आओ। यह भी पुराने ख़यालों के जानी दुश्मन थे। कहाँ तो नमाज़ पढ़ने मसजिद आये थे, कहाँ छू-छक्का देखने का शौक़ हुआ; मसजिद को दूर ही से सलाम किया और सीधे सराय चले। अरे, कोई इक्का किराये का होगा? अरे मियाँ, कोई भठियारा इक्का भाड़े करेगा?

भठियारा—जी हाँ, कहाँ जाइएगा?

आज़ाद—सकजमलदीपुर।

भठियारा—क्या दीजिएगा?

आज़ाद—पहले घोड़ा-इक्का तो देखें—'घर घोड़ा नख़ास मोल!'

भठियारा—वह क्या कमानीदार इक्का खड़ा है और यह सुरंग घोड़ी है, हवा से बातें करती जाती है; बैठे और दन से पहुँचे।

इक्का तैयार हुआ। आज़ाद चले, तो रास्ते में एक साहब से पूछा—क्यों साहब, इस गाँव को सकजमलदीपुर क्यों कहते हैं? कुछ अजीब बेढंग सा नाम है। उसने कहा—इसका बड़ा क़िस्सा है। एक साहब शेख़ ज़मालुद्दीन थे। उन्होंने गाँव बसाया और इसका नाम रक्खा शेख़ज़मालुद्दीनपुरा। गँवार आदमी क्या जानें, उन्होंने शेख़ का सक़, ज़माल का जमल और उद्दीन का दी बना दिया।

इक्केवाले से बातें होने लगीं। इक्केवाला बोला—हुज़ूर, अब रोज़गार कहाँ! सुबह से शाम तक जो मिला, खा-पी बराबर। एक रुपया जानवर खा गया, दस-बारह आने घर के ख़र्च में आये, आने दो आने सुलफ़े-तमाखू में उड़ गये। फिर मोची के मोची। महाजन के पचीस रुपये छह महीने से बेबाक़ न हुए। जो कहीं कच्ची में चार-पाँच कोस ले गये, तो पुट्ठियाँ धँस गयीं पैंजनी, हाल, धुरा सब निकल गया। दो-चार रुपये के मत्थे गयी। रोज़गार तो तुम्हारी सलामती से तब हो, जब यह रेल उड़ जाय। देखिए, आप ही ने सात गंडे जमलदीपुर के दिये, मगर तीन चक्कर लगा कर।

कोई पौने दो घंटे में आज़ाद सक़ज़मलदीपुर पहुँचे। पता-वता तो इनको मालूम

था ही, सीधे शाह साहब के मकान पर जा पहुँचे। ठट के ठट आदमी जमा थे। औरत-मर्द टूटे पड़ते थे। एक आदमी से उन्होंने पूछा--क्या आज यहाँ कोई मेला है? उसने कहा--मेला-वेला नाहीं, एक मनई के मूड़ पर देवी आयी हैं, तौन मेहरारू, मनसेधू सब देखै आवत हैं। इसी झुंड में आज़ाद को वह बूढ़े मियाँ भी मिल गये, जो भूत-चुड़ैल को ढकोसला कहा करते थे। अकेले एक तरफ़ ले जा कर कहा--जनाब, मैंने मसजिद में आपकी बातें सुनी थीं। क़सम खाता हूँ, जो कभी भूत-प्रेत का क़ायल हुआ हूँ। अब ऐसी कुछ तदबीर करनी चाहिए कि इन शाह साहब की क़लई खुल जाय।

इतने में शाह साहब नीले रंग का तहमद बाँधे, लंबे-लंबे बालों में हिना का तेल डाले, माँग निकाले, खड़ाऊँ पहने तशरीफ़ लाये। आँखों में तेज भरा हुआ था। जिसकी तरफ़ नज़र भर कर देखा, वही काँप उठा। किसी ने क़दम लिये, किसी ने झुक कर सलाम किया। शाह साहब ने गुल मचाना शुरू किया--धूनी मेरी जलती है, जलती है और बलती है, धूनी मेरी जलती है। खड़ी मूँछोंवाला है, लंबे गेसूवाला है, मेरा दरजा आला है। झूम-झूम कर जब उन्होंने यह आवाज़ लगायी तो सब लोग सन्नाटे में आ गये। एकाएक आपने अकड़ कर कहा--किसी को दावा हो, तो आ कर मुझसे कुश्ती लड़े। हाथी को टक्कर दूँ, तो चिग्घाड़ कर भागे; कौन आता है?

अब सुनिए, पहले से एक आदमी को सिखा-पढ़ा रखा था। वह तो सधा हुआ था ही, झट सामने आकर खड़ा हो गया और बोला—हम लड़ेंगे। बड़ा कड़ियल जवान था; गैंडे की सी गरदन, शेर का सा सीना; मगर शाह साहब की तो हवा बँधी हुई थी। लोग उस पहलवान की हालत पर अफ़सोस करते थे कि बेधा है; शाह साहब चुटकियों में चुर्र-मुर्र कर डालेंगे।

ख़ैर दोनों आमने-सामने आये और शाह साहब ने गरदन पकड़ते ही इतनी ज़ोर से पटका कि वह बेहोश हो गया। आज़ाद ने बूढ़े मियाँ से कहा--जनाब, यह मिली भगत है। इसी तरह गँवार लोग मूड़े जाते हैं। मैं ऐसे मक्कारों की क़ब्र तक से वाक़िफ़ हूँ। ये बातें हो ही रही थीं कि शाह साहब ने फिर अकड़ते हुए आवाज़ लगायी—कोई और ज़ोर लगाएगा? मियाँ आज़ाद ने आव देखा न ताव, झट लँगोट बाँध; चट से कूद पड़े। आओ उस्ताद; एक पकड़ हमसे भी हो जाय। तब तो शाह साहब चकराये कि यह अच्छे बिगड़े दिल मिले। पूछा--आप अँगरेजी पढ़े हैं? आज़ाद ने कड़क कर कहा--अँगरेज़ी नहीं, अँगरेज़ी का बाप पढ़ा हूँ। बस, अब सँभलिए, मैं आ गया। यह कह कर, घुटना टेक कलाजंग के पेच पर मारा, तो शाह साहब चारों खाने चित ज़मीन पर धम से गिरे। इनका गिरना था कि मियाँ आज़ाद छाती पर चढ़ बैठे। अब बताओ बच्चा, काट लूँ नाक, कतर लूँ कान, बाँधू दुम में नमदा! बदमाश कहीं का! बूढ़े मियाँ ने झपट कर आज़ाद को गोद में उठा लिया। वाह उस्ताद, क्यों न हो। शाह साहब उसी दिन गाँव छोड़ कर भागे।

शाह साहब को पटकनी दे कर और गाँव के दुलमुल-यक़ीन गँवारों को समझा-

बुझा कर आज़ाद बूढ़े मियाँ के साथ-साथ शहर की तरफ़ चल खड़े हुए। रास्ते में उन्हीं शाह साहब की बातें होने लगीं—

आज़ाद—क्यों, सच कहिएगा, कैसा अड़ंगा दिया? बहुत बिलबिला रहे थे। यहाँ उस्तादों की आँखें देखी हैं। पोर-पोर में पेंचैती कूट-कूट कर भरी है। एक-एक पेंच के दो-दो सौ तोड़ याद हैं। मैं तो उसे देखते ही भाँप गया कि यह बना हुआ है। लड़ंतिए का तो कैंडा ही उसका न था। गरदन मोटी नहीं, छाती चौड़ी नहीं, बदन कटा-पिटा नहीं, कान टूटे नहीं। ताड़ गया कि घामड़ है। गरदन पकड़ते ही दबा बैठा।

बूढ़े मियाँ—अब इस गाँव में भूल कर भी न आयेगा। एक मर्तबा का ज़िक्र सुनिए, एक बने हुए सिद्ध पलथी मार कर बैठे और लगे अकड़ने की कोई छिपा कर हाथ में फूल ले, हम चुटकियों में बता देंगे। मेरे बदन में आग लग गयी मैंने कहा—अच्छा, मैंने फूल लिया, आप बतलाइये तो सही। पहले तो आँखें नीली-पीली करके मुझे डराने लगे। मैंने कहा—हज़रत; मैं इन गीदड़-भभकियों में नहीं आने का। यह पुतलियों का तमाशा किसी नादान को दिखाओ। बस, बताओ, मेरे हाथ में क्या है? थोड़ी देर तक सोच-साच कर बोले—पीला फूल है। मैंने कहा—बिलकुल झूठ। तब तो घबराये और कहने लगे—मुझे धोखा हुआ। पीला नहीं, हरा फूल है। मैंने कहा—वाह भाई लालबुझक्कड़ क्यों न हो! हरा फूल आज तक देखा न सुना, यह नया गुल खिला। मेरा यह कहना था कि उनका गुलाब सा चेहरा कुम्हला गया। कोई उस वक़्त उनकी बेकली देखता। मैं जामे में फूला न समाता था। आख़िर इतने शर-मिंदा हुए कि वहाँ से पत्तातोड़ भागे। हम ये सब खेल खेले हुए हैं।

आज़ाद—ऐसे ही एक शाह साहब को मैंने भी ठीक किया था। एक दोस्त के घर गया, तो क्या देखता हूँ कि एक फ़क़ीर साहब शान से बैठे हुए हैं और अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखे आदमी उन्हें घेरे खड़े हैं। मैंने पूछा—आपकी तारीफ़ कीजिए, तो एक साहब ने, जो उस पर ईमान ला चुके थे, दबे दाँतों कहा—शाह साहब ग़ैबदाँ (त्रिकाल-दर्शी) हैं। आपके कमालों के झंडे गड़े हुए हैं। दस-पाँच ने तो उन्हें आसमान ही पर चढ़ा दिया। मैंने दिल में कहा—बचा, तुम्हारी ख़बर न ली, तो कुछ न किया। पूछा, क्यों शाह जी, यह तो बताइए, हमारे घर में लड़का कब तक होगा? शाह जी समझे, यह भी निरे चोंगा ही हैं। चलो, अनाप-सनाप बता कर उल्लू बनाओ और कुछ ले मरो। मेरे बाप, दादे और उनके बाप के परदादे का नाम पूछा। यहाँ याद का यह हाल है कि बाप का नाम तो याद रहता है, दादाजान का नाम किस गधे को याद हो। मगर ख़ैर, जो ज़बान पर आया, ऊल-जलूल बता दिया। तब फ़र्माते क्या हैं, बचा दो महीने के अंदर ही अंदर बेटा ले। मैंने कहा—हैं शाह साहब, जरा सँभले हुए। अब तो कहा, अब न कहिएगा। पंद्रह दिन तो बंदे की शादी को हुए और आप फ़र्माते हैं कि दो महीने के अंदर ही अंदर लड़का ले। वल्लाह, दूसरा कहता, ख़ून पी लेता। इस फ़िक़रे पर यार लोग खिलखिला कर हँस पड़े और शाह जी के हवास ग़ायब हो गये। दिल में तो करोड़ों ही गालियाँ दी होंगी, मगर मेरे सामने एक न चली। जनाब, उस

दयार में लोग उन्हें खुदा समझते थे। शाह जी कभी रुपये बरसाते थे, कभी बेफ़स्ल के मेवे मँगवाते थे, कभी घड़े को चकनाचूर करके फिर जोड़ देते थे। सैकड़ों ही अलसेंटे याद थीं, मेरा जवाब सुना, तो हक्का-बक्का हो गये। ऐसे भागे कि पीछे फिर कर भी न देखा। जहाँ मैं हूँ, भला किसी सिद्ध या शाह जी का रंग जम तो जाय।

यही बातें करते हुए लोग फिर अपने-अपने घर सिधारे।

१८

मियाँ आज़ाद एक दिन चले जाते थे, तो देखते क्या हैं, एक चौराहे के नुक्कड़ पर भंगवाले की दूकान है और उस पर उनके एक लँगोटिये यार बैठे डींग की ले रहे हैं—हमने जो खर्च कर डाला, वह किसी को पैदा करना भी नसीब न हुआ होगा, लाखों कमाये, करोड़ों लुटाये, किसी के देने में न लेने में। आज़ाद ने झुक कर कान में कहा—वाह भई उस्ताद, क्यों न हो, अच्छी लंतरानियाँ हैं। बाबा तो आपके उम्र भर बर्फ़ बेचा किये और दादा जूते की दूकान रखते-रखते बूढ़े हुए। आपने कमाया क्या, लुटाया क्या? याद है, एक दफ़े साढ़े छह रुपये की मुहर्रिरी पायी, मगर उससे भी निकाले गये। उसने कहा—आप भी निरे गावदी हैं। अरे मियाँ, अब गप उड़ाने से भी गये? भंगवाले की दूकान पर गप न मारूँ, तो और कहाँ जाऊँ? फिर इतना तो समझो कि यहाँ हमको जानता कौन है। मियाँ आज़ाद तो एक सैलानी आदमी थे ही, एक तिपाई पर टिक गये। देखते क्या हैं, एक दरख़्त के तले सिरकी का छप्पर पड़ा है, एक तख़्त बिछा है, भंगवाला सिल पर रगड़ें लगा रहा है। लगे रगड़ा, मिटे झगड़ा। दो-चार बिगड़े-दिल बैठे गुल मचा रहे हैं—दाता तेरी दूकान पर हुन बरसे, ऐसी चकाचक पिला, जिसमें जूती खड़ी हो। थोड़ा सा धतूरा भी रगड़ दो, जिसमें खूब रंग जमे। इतने में मियाँ आज़ाद के दोस्त बोल उठे—उस्ताद, आज तो दूधिया डलवाओ। पीते ही ले उड़ें। चुल्लू में उल्लू हो जायँ। दूकानवाले ने उन्हें मीठी केवड़े से बसी हुई भंग पिलवायी। आप पी चुके, तो अपने दोस्त हरभज को भंग का एक गोला खिलाया और फिर वहाँ से सैर करने चले। इन्हें मुटापे के सबब से लोग भदभद कहा करते थे। चलते-चलते हरभज ने पूछा—क्यों यार, यह कौन मुहल्ला है?

भदभद—चीनीबाज़ार।

हरभज—वाह, कहीं हो न, यह चिनियाबाज़ार है।

भदभद—चिनियाबाज़ार कैसा, चीनीबाज़ार क्यों नहीं कहते।

हरभज—हम गली-गली, कूचे-कूचे से वाक़िफ़ हैं, आप हमें रास्ता बताते हैं! चिनियाबाज़ार तो दुनिया कहती है, आप कहने लगे चीनीबाज़ार है।

भदभद—अच्छा तो खबरदार, मेरे सामने अब चिनियाबाज़ार न कहिएगा।

हरभज—अच्छा किसी तीसरे आदमी से पूछो।

आज़ाद ने दोनों को समझाया—क्यों लड़े मरते हो? मगर सुनता कौन था। सामने से एक आदमी चला आता था। आज़ाद ने बढ़ कर पूछा—भाई, यह कौन मुहल्ला है? उसने कहा—चिनियाबाज़ार। अब हरभज और भदभद ने उसे दिक़ करना शुरू किया। चीनीबाज़ार है कि चिनियाबाज़ार, यही पूछते हुए आध कोस तक उसके साथ गये। उस बेचारे को इन भंगड़ों से पीछा छुड़ाना मुश्किल हो गया। बार-बार

कहता था कि भई, दोनों सही हैं। मगर ये एक न सुनते थे। जब सुनते-सुनते उसके कान पक गये, तो वह बेचारा चुपके से एक गली में चला गया।

तीनों आदमी फिर आगे चले। मगर वह मसला हल न हुआ। दोनों एक दूसरे को बुरा-भला कहते थे; पर दो में से एक को भी यह तसकीन न होती थी कि चिनियाबाज़ार और चीनीबाज़ार में कौन सा बड़ा फ़र्क़ है।

हरभज—जानते भी हो, इसका नाम चिनियाबाज़ार क्यों पड़ा?

भदभद—जानता क्यों नहीं। पहले यहाँ दिसावर से चीनी आ कर बिका करती थी!

हरभज—तुम्हारा सिर! यहाँ चीन के लोग आ कर आबाद हो गये थे, जभी से यह नाम पड़ा;

भदभद—गावदी हो!

इस पर दोनों गुथ गये। इसने उसको पटका, उसने इसको पटका। भदभद मोटे थे, खूब पिटे।

आजाद ने उन दोनों को यहीं छोड़ा और खुद घूमते-घामते जौहरी बाज़ार की तरफ़ जा निकले। देखा, एक लड़का झुका हुआ कुछ लिख रहा है। आज़ाद ने लिफ़ाफ़ा दूर से देखते ही खत का मज़बून भाँप लिया। पूछा—क्यों भई इस गाँव का क्या नाम है?

लड़का—दिन को रतौंधी तो नहीं होती? यह गाँव है या शहर?

आज़ाद—हाँ, हाँ वही शहर। मैं मुसाफ़िर हूँ, सराय का पता बता दीजिए।

लड़का—सराय किस लिए जाइएगा? क्या किसी भठियारी से रिश्तेदारी है?

आज़ाद—क्यों साहब, मुसाफिरों से भी दिल्लगी! हम तरजुमा करते हैं! खत हो, अर्ज़ी हो, दरख्वास्त हो, उसका वह तरजुमा कर दें कि पढ़नेवाला दंग रह जाय।

लड़का—तब तो जनाब, आप बड़े काम के आदमी हैं। लो, हमारी इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दो। एक चवन्नी दूँगा।

आज़ाद—खैर, लाइए, बोहनी कर लूँ। अर्ज़ी पढ़िए।

लड़का—आप ही पढ़ लीजिए।

आज़ाद—(अर्ज़ी पढ़ कर) सुभान-अल्लाह, यह अर्ज़ी है या घर का दुखड़ा। भला तुम्हारे कितने लड़के-लड़कियाँ होंगी?

लड़का—अजी, अभी यहाँ तो शादी ही नहीं हुई।

आज़ाद—तो फिर यह क्या लिख मारा कि सारे कुनबे का भार मेरे सिर है। और नौकरी भी क्या माँगते हो कि ज़माने भर का कूड़ा साफ करना पड़े! लड़का हुआ और बंपुलिस झाँकने लगे; कभी भंगियों से तकरार हो रही है; कभी भंगिनों से चख चल रही है। अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है, पढ़ो-लिखो, जम कर मेहनत करो, नौकरी की तुम्हें क्या फ़िक्र है?

लड़का—आप अर्ज़ी लिखते हैं कि सलाह बताते हैं? मैं तो आपसे सलाह नहीं पूछता।

आज़ाद—मियाँ, पढ़ने-लिखने का यह मतलब नहीं है कि नौकरी ही करे। और

नहीं, तो बंपुलिस का दारोग़ा ही सही। ख़ासे जौहरी बने हो, ऐसी कौन सी मुसीबत आ पड़ी है कि इस नौकरी पर जान देते हो ?

इतने में एक लाला साहब क़लमदान लिये, ऐनक लगाये, आ कर बैठ गये।

आज़ाद—कहिए, आपको भी कुछ तरजुमा कराना है ?

लाला—जी हाँ, इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दीजिए। मेरे बुढ़ापे पर तरस खाइए।

आज़ाद—अच्छा, अपनी अर्ज़ी पढ़िए।

लाला—सुनिए—

'ग़रीबपरवर सलामत,

अपना क्या हाल कहूँ, कोई दो दर्जन तो बाल-बच्चे हैं। आख़िर, उन्हें सेर-सेर भर आटा चाहिए या नहीं। जोड़िए कितना हुआ। और जो यह कहिए कि सेर भर कोई लड़का नहीं खा सकता, तो जनाब, मेरे लड़के बच्चे नहीं हैं, कई-कई बच्चों के बाप हैं। इस हिसाब से ८० रु० का तो आटा ही हुआ। १० रु० की दाल रखिए। बस, मैं और कुछ नहीं चाहता। मगर जो यह कहिए कि इससे कम में गुज़र करूँ, तो जनाब, यह मेरे किये न होगा। रोटियों में ख़ुदा का भी साझा नहीं।

'मेरे लियाक़त का आदमी इस दुनिया में तो आपको मिलेगा नहीं, हाँ शायद उस दुनिया में मिल जाय। बच्चे मैं खेला सकता हूँ, बाज़ार से सौदे ला सकता हूँ, बनिये के कान कतर लूँ, तो सही। क़िस्से-कहानियों का तो मैं ख़ज़ाना हूँ। नित्य नयी कहानियाँ कहूँ। मौक़ा आ पड़े, तो जूते साफ़ कर सकता हूँ; मेम साहब और बाबा लोगों को गा कर ख़ुश कर सकता हूँ। ग़रज़, हरफ़न-मौला हूँ। पढ़ा-लिखा भी हूँ। बदनसीबी से मिडिल पास तो नहीं हूँ; लेकिन अपने दस्तख़त कर लेता हूँ। जी चाहे इम्तहान ले लीजिए।

'अब रही ख़ानदान की बात। तो जनाब, कमतरीन के बुज़ुर्ग हमेशा बड़े-बड़े ओहदों पर रहे। मेरे बड़े भाई की बीबी जिसे फूफी कहते हैं और जिससे मज़ाक़ का भी रिश्ता है, उसके बाप के ससुर के चचेरे भाई नहर के मोहकमे में २० रु० महीने पर दारोगा थे। मेरे बाबाजान म्युनिसिपलिटी में सफ़ाई के जमादार थे और १० रु० महीना मुशहरा पाते थे। चूँकि सरकार का हुक्म है कि अच्छे ख़ानदान के लोगों की परवरिश की जाय, इसलिए दो-एक बुज़ुर्गों का ज़िक्र कर दिया। वरना यहाँ तो सभी ओहदेदार थे। कहाँ तक गिनाऊँ।

'अब तो अर्ज़ी में और कुछ लिखना नहीं बाक़ी रहा। अपनी ग़रीबी का ज़िक्र कर ही दिया। लियाक़त की भी कुछ थोड़ी सी चर्चा कर दी और अपने ख़ानदान का भी कुछ ज़िक्र कर दिया।

'अब अर्ज़ है कि हुज़ूर, जो हमारे आक़ा हैं, मेरी परवरिश करें। अगर मुझ पर हुज़ूर की निगाह न हुई, तो मजबूर हो कर मुझे अपने बाल-बच्चों को मिर्च के टापू में भरती करना पड़ेगा।'

मियाँ आज़ाद ने जो यह अर्ज़ी सुनी तो लोटने लगे। इतना हँसे कि पेट में बल पड़-पड़ गये। जब ज़रा हँसी कम हुई, तो पूछा—लाला साहब, इतना और बता

दीजिए कि आप हैं कौन ठाकुर ?

लाला--जी, बंदा तो अगिनहोत्री है।

आज़ाद—तो फिर आपके शरीफ़-खानदान होने में क्या शक है। मियाँ, आदमी बनो। जा कर बाप-दादों का पेशा करो। भाड़ झोंकने में जो आराम है, वह गुलामी करने में नहीं। मुझसे आपकी अर्ज़ी का तरजुमा न होगा।

१९

एक दिन मियाँ आज़ाद साँड़नी पर सवार हो घूमने निकले, तो एक थिएटर में जा पहुँचे। सैलानी आदमी तो थे ही, थिएटर देखने लगे, तो वक़्त का ख़याल ही न रहा। थिएटर बंद हुआ, तो बारह बज गये थे। घर पहुँचना मुश्किल था। सोचे, आज रात को सराय ही में पड़ रहें। सोये, तो घोड़े बेच कर। भठियारी ने आ कर जगाया—अजी, उठो, आज तो जैसे घोड़े बेच कर सोये हो! ऐ लो, वह आठ का गजर बजा। अँगड़ाइयों पर अँगड़ाइयाँ ले रहे हैं, मगर उठने का नाम नहीं लेते।

एक चंडूबाज़ भी बैठे हुए थे। बोले—तो तुमको क्या पड़ी है? सोने नहीं देतीं। क्या जाने, किस मौज़ में पड़े हैं। लहरी आदमी तो हई हैं। मगर सच कहना, कैसा धावत सैलानी है। दूसरा इतना घूमे, तो हलकान हो जाय। और जो जगाना ही मंजूर है, तो लोटे की टोंटी से जरा सा पानी कान में छोड़ दो। देखो, कैसे कुलबुला कर उठ बैठते हैं।

भठियारी ने चुल्लू से मुँह पर छींटे देने शुरू किये। दस ही पाँच बूँदें गिरी थीं कि आज़ाद हाँय-हाँय करते उठ खड़े हुए और बोले—यह क्या दिल्लगी है! कैसी मीठी नींद सो रहा था, लेके जगा दिया!

भठियारी—इतनी रात तक कहाँ घूमते रहे कि अभी नींद ही नहीं पूरी हुई?

आज़ाद—कहीं नहीं, जरा थिएटर देखने लगा था।

चंडूबाज़—सुना, तमाशा बहुत अच्छा होता है। आज हमें भी दिखा देना। भई, तुम्हारी बदौलत थिएटर तो देख लें। कै बजे शुरू होता है?

आज़ाद—यही; कोई नौ बजे।

चंडूबाज़—तो फिर मैं चल चुका। नौ बजे शुरू हो, बारह बजे ख़त्म हो। कहीं एक बजे घर पहुँचें। मुहल्ले भर में आग ढूँढ़ें, हुक्क़ा भरें, तवा जमायें, घंटा भर गुड़-गुड़ायें। पलँग पर जायँ, तो नींद उचाट। करवटों पर करवटें लें, तब कहीं चार बजते-बजते आँख लगे। फिर जो भलेमानुस चार बजे सोये, वह दोपहर तक उठने का नाम न लेगा। लीजिए, दिन यों गया। रात यों गयी। अब इंसान चंडू कब पिये, दास्तान कब सुने, पीनक के मज़े कब उड़ाये? कौन जाय! क्या गुलाबो-शिताबो के तमाशे से अच्छा होता होगा? रीछवाले ही का तमाशा न देखे? मियाँ ऐंठा सिंह के मज़े न उड़ाये, बकरी पर तने बैठे हैं, छींक पड़ी और खट से फुँदनीदार टोपी अलग। भई, कोई बेधा हो, जो वहाँ जाय। और फिर रुपये किसके घर से आयें? जब से अफीम सोलह रुपये सेर हो गयी, तब से तो गरीबों का और भी दिवाला निकल गया। और चंडू के ठेकों ने तो सत्यानास ही कर दिया। सैलानी तो शहर का चूहा-चूहा है, मगर टिकट का नाम न हो। और भई, साफ़ तो यों है कि हम लोग मुफ़्त के तमाशा देखने-वालों में से हैं। मेला-ठेला तो कोई छूटने ही नहीं पाता। सावन भर ऐशबाग़ के मेले

न छोड़े; कभी इमलियों में झूल रहे हैं, कभी बंदरों की सैर देख रहे हैं। बहुत किया, तो एक गंडे के पौड़े लिये। दो पैसे बढ़ाये और साक़िन की दूकान पर दम लगाया। चलिए, पाँच-छः पैसे में मेला हो गया। सबसे बड़ी मुसीबत तो यह है कि वहाँ नादिरी हुक्म है कि कोई धुआँ न उड़ाये, नहीं तो हम सोचे थे कि चंडू का सामान लेते चलेंगे और मज़े से किसी कोने में लेटे हुए उड़ाते जायँगे। इसमें किसी के बाप का क्या इजारा!

भठियारिन—भई, टिकट माफ़ हो जाय, तो मैं भी चलूँ।

आज़ाद—उनको क्या पड़ी है भला, जो बंबई से अंगड़-खंगड़ ले कर इतनी दूर बेगार भुगतने आयें! वही बेठिकाने बात कहती हो, जिसके सिर न पैर।

चंडूबाज़—अच्छा, तो तुम्हारी खातिर ही सही। तुम भी क्या याद करोगी। एक दिन हम भी चवन्नी गलायेंगे। तमाशा होता कहाँ है?

आज़ाद—यही छतरमंज़िल में, दस क़दम पर।

चंडूबाज़—दस क़दम की एक ही कही। तुम्हारी तरह यहाँ किसी के पाँव में सनीचर तो है नहीं। सात बजे से चलना शुरू करें, तो दस बजे पहुँचें। बग्घी किराये पर करें, तो एक रुपया आने का और एक रुपया जाने का और ठुक जाय। 'मुफ़लिसी में आटा गीला।'

आज़ाद—अजी, मेरी साँड़नी पर बैठ लेना।

भठियारिन—मुझे भी उसी पर बिठा लेना। रात का वक़्त है, कौन देखता है।

शाम हुई, तो मियाँ आज़ाद ने साँड़नी कसी और सराय से चले। भठियारी भी पीछे बैठ गयी। मगर चंडूबाज़ ने साँड़नी की सूरत देखी, तो बैठने की हिम्मत न पड़ी। जब साँड़नी ने तेज़ चलना शुरू किया, तो भठियारी बोली—इस मुई सवारी पर ख़ुदा की सँवार! अल्लाह की क़सम, मारे हचकोलों के नाक में दम आ गया। आज़ाद को शरारत सूझी, तो एक एड़ लगायी वह और भी तेज़ हुई। तब तो भठियारी आग भभूका हो गयी—यह दिल्लगी रहने दीजिए; मुझे भी कोई और समझे हो? मैं लाखों सुनाऊँगी। ले बस, सीधी तरह चलना हो तो चलो; नहीं मैं चीखती हूँ। पेट का पानी तक हिल गया। ऐसी सवारी को आग लगे। मियाँ आज़ाद ने ज़रा लगाम को खींचा, तो साँड़नी बलबलाने लगी। बी भठियारी तो समझीं कि अब जान गयी। देखो, यह छेड़छाड़ अच्छी नहीं। हमें उतार ही दो। लो, और सुनो, ज़रा से हचकोले में मुँह के बल आ रहूँ, तो चकनाचूर ही हो जाऊँ। तुम मुसंडों को इसका क्या डर! रोको, रोको, रोको। हाय, मेरे अल्लाह, मैं किस बला में फँस गयी! मियाँ, अपने ख़ुदा से डरो, बस हमें उतार ही दो। इत्तफ़ाक से साँड़नी एक दरख्त की परछाहीं देख कर ऐसी भड़की कि दस क़दम पीछे हट आयी। उसका बिचकना था कि बी भठियारी धम से ज़मीन पर गिर पड़ी। ख़ुदा की मार! वह तो कहो, पक्की सड़क न थी। नहीं तो हड्डी-पसली चूर-चूर हो जाती।

चंडूबाज़—शाबाश है तेरी माँ को, पटकनी भी खायी, मगर वही तेवर। दूसरी हयादार होती, तो लाख बरस तक सवार होने का नाम न लेती। सवारी क्या है, जनाज़ा है।

भठियारी—चलिए, आपकी जूती की नोक से। हम बेहया ही सही। क्या झाँसे देने आये हैं, जिसमें मैं उतर पड़ूँ और आप मज़े से जम जायँ। मुँह धो रखिए, हमने कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं।

मगर इस झमेले में इतनी देर हो गयी कि जब थिएटर पहुँचे, तो तमाशा ख़त्म हो गया था। तमाशाई लोग बाहर निकल रहे थे।

आज़ाद—लीजिए, सारा मज़ा किरकिरा हो गया। इसी से मैं तुम लोगों को साथ न ले आता था।

चंडूबाज़—औरतों को तो मेले-ठेले में ले ही न जाना चाहिए। हमेशा अलसेट होती है।

भठियारी—जी हाँ, और क्या। मेले-ठेले तो आप जैसे खुर्राटों ही के लिए होते हैं। आज़ाद तमाशाइयों की बातें सुनने लगे—

एक—यार, इनके पास तो सामान खूब लैस है।

दूसरा—वाह, क्या कहना, परदे तो ऐसे कि देखे न सुने। बस, यही यक़ीन होता है कि बारहदरी का फाटक है या परीख़ाना! जंगल का सामान दिखाया, तो वही बेल-बूटे, वही दूब, वही पेड़, वही झाड़ियाँ, बस, बिलकुल सुंदरवन मालूम होता है।

तीसरा—और सब्ज़परी की तारीफ़ ही न करोगे?

चौथा—हज़रत, वह कहीं लखनऊ में छह महीने भी तालीम पाये, तो फिर आफ़त ही ढाये। लाखों लूट ले जाय, लाखों।

दूसरी तरफ़ गये, तो दो आदमी और ही तरह की बातें कर रहे थे—

एक़—अजी, धोखा है, धोखा, और कुछ नहीं।

दूसरा—हाँ, टन-टन की आवाज़ तो आती है, बाक़ी खैर-सल्लाह।

अब आज़ाद यहाँ बैठ कर क्या करते। सोचे, आओ, साँड़नी पर बैठें और चल कर सराय में मीठी नींद के मजे लें। मगर बाहर आकर देखते हैं, तो साँड़नी ग़ायब। थिएटर के अहाते में एक दरख़्त से बाँध दिया था। मालूम नहीं, तड़प कर भागी या कोई चुरा ले गया। बहुत देर तक इधर-उधर ढूँढ़ा किये, मगर साँड़नी का पता न लगा। उधर और सवारियाँ भी तमाशाइयों को ले-ले कर चली गयीं। तब आज़ाद ने भठियारी से कहा—अब तो पाँव-पाँव चलने की ठहरेगी।

भठियारी—ना साहब, मुझसे पाँव-पाँव न चला जायगा।

चंडूबाज़—देखिए, कहीं कोई सवारी मिले, तो ले आइए। यह बेचारी पाँव-पाँव कहाँ तक चलेगी?

आज़ाद—तो तुम्हीं क्यों नहीं लपक जाते?

भठियारी (अलारक्खी)—ऐ हाँ, और क्या! चढ़ने को तो सब से पहले तुम्हीं दौड़ोगे। तुम्हें बात-चीत करने की भी तमीज़ नहीं।

आज़ाद—सवारी न मिलेगी, ठंडे-ठंडे घर की राह लो, बात-चीत करते-करते चले चलेंगे।

दूसरे दिन आज़ाद ने साँड़नी के खोने की थाने में रपट कर दी। मगर जिस आदमी को भेजा था, उसने आकर कहा—हुजूर थानेदार ने रपट नहीं लिखी और आपको बुलाया है।

आजाद—कौन, थानेदार? हमसे थानेदार से वास्ता? उनसे कहो कि आपको खुद मियाँ आज़ाद ने याद किया है, अभी हाजिर हों।

अलारक्खी—ले, बस बैठे रहो। बहुत उजड्डपना अच्छा नहीं होता। वाह, कहने लगे, हम न जायँगे। बड़े वह बने हैं। आखिर साँड़नी की रपट लिखवायी है कि नहीं? फिर अब दौड़ो-धूपोगे नहीं, तो बनेगी क्योंकर? और वहाँ तक जाते क्या चूड़ियाँ टूटती हैं, या पाँव की मेंहदी गिर जायगी?

आज़ाद—भई, हमसे थानेदार से एक दिन चख़ चल गयी थी। ऐसा न हो, वह कोतवाली के चबूतरे पर बैठ कर ज़ोम में आ जायँ तो फिर मैं ले ही पड़ूँगा। इतना समझ लेना, मैं आधी बात सुनने का रवादार नहीं। साँड़नी मिले या जहन्नुम में जाय, इसकी परवाह नहीं, मगर कोई एँड़ा-बेंड़ा फ़िक़रा सुनाया और मैंने कुर्सी के नीचे पटका। क्यों सुनें, चोर नहीं कि कोतवाल से डरूँ, जुवाड़ी नहीं कि प्यादे की सूरत देखते ही जान निकले, बदमाश नहीं कि मुँह छिपाऊँ, मरियल नहीं कि दो बातें सह जाऊँ। कोई बोला और मैंने तलवार निकाली; फिर वह नहीं या मैं नहीं।

अलारक्खी—अरे, वह बेचारा तो एक हँसमुख आदमी है। लड़ाई क्यों होने लगी।

आज़ाद—खैर, तुम्हारी खुशी है, तो चलता हूँ। मगर चलो तुम भी साथ, रास्ते में दो घड़ी दिल्लगी ही होगी।

आख़िर मियाँ आज़ाद और अलारक्खी दोनों थाने चले। एक कानिस्टिबिल भी साथ था। राह में एक आदमी अकड़ता हुआ जा रहा था। आज़ाद उसका अकड़ना देख कर आग हो गये। क़रीब जा कर एक धक्का जो दिया, तो उसने पचास लुढ़कनियाँ खायीं। थोड़ी दूर और चले थे कि एक आदमी चादर बिछाये, उस पर जड़ी-बूटी फैलाये बैठा गप उड़ा रहा था। इस बूटी से अस्सी बरस का बूढ़ा जवान हो जाय, इस जड़ी को पानी में घिस कर एक तोला पिये, तो शेर का पंजा फेर दे। आज़ाद उसकी तरफ़ झुक पड़े—कहो भाई खिलाड़ी, यह क्या स्वाँग रचा है? आज कितने अक़्ल के अंधे, गाँठ के पूरे जाल में फँसे? यह कह कर एक ठोकर जो मारी, तो सारी बूटियाँ, पत्तियाँ, जड़ें एक में मिल गयीं। और आगे चले, तो गुल-गपाड़े की आवाज़ आयी। एक हलवाई ग्राहक से तकरार कर रहा था।

हलवाई—खाली भजिया नाहीं बिकत है हमरी दुकान पर, कस-कस देई भला।

ग्राहक—अबे, मैं कहता हूँ, कहीं एक गुद्दा न दूँ।

आज़ाद—गुद्दा तो पीछे दीजिएगा, मैं एक गुद्दा कहीं आपकी गुद्दी पर न जमाऊँ।

ग्राहक—आप कौन हैं बोलनेवाले?

आज़ाद—उस बेचारे हलवाई को तुम क्यों ललकारते हो?

आलारक्खी—ऐ है, मियाँ, तुम कोई खुदाई फ़ौज़दार हो? किसी के फटे में तुम कौन हो पाँव डालनेवाले?

कानिस्टिबिल—भइया, हो बड़े लड़ाका, बस काव कहों।

यहाँ से चले, तो थाने आ पहुँचे।

कानिस्टिबिल—हुजूर, ले आया, वह खड़े हैं।

थानेदार—अल्लाह! अलारक्खी भी हैं। मैं तो चाल ही से समझ गया था। कुछ बैठने को दो इन्हें, कोई है? सच कहना, तुम्हारी चाल से कैसा पहचान लिया?

आज़ाद—अपने-अपनों को सभी पहचान लेते हैं।

थानेदार—यह कौन बोला? कौन है भई?

अलारक्खी—ऐ, बस चलो, देख लिया। मुँह देखे की मुहब्बत है। घर की थानेदारी और अब तक मुई साँड़नी न मिली। तुमसे तो बड़ी-बड़ी उम्मीदें थीं।

थानेदार (आज़ाद से)—कहो जी, वह साँड़नी तुम्हारी है न?

आज़ाद—'तुम' का जवाब यहाँ नहीं देते; 'आप' कहिए; मैं कोई घरकटा हूँ।

भठियारी—हाय मेरे अल्लाह, मैं क्या करूँ? यह तो जहाँ जाते हैं, दंगा मचाते हैं।

थानेदार—क्या कुछ इनसे साँठ-गाँठ है? सच कहना, तुम्हें क़सम है अपने शेख़ सद्दू की।

अलारक्खी—लो, तुम्हें मालूम ही नहीं। अच्छी थानेदारी करते हो। मैं तो इनके घर पड़ गयी हूँ न।

थानेदार—तो यह कहिए, लाओ भई, साँड़नी काँजी-हाउस से निकलवाओ!

साँड़नी आ मौजूद हुई। मियाँ आज़ाद सवार हुए। भठियारी भी पीछे बैठी।

आज़ाद—आज तुम कई आदमियों के सामने हमें अपना मियाँ बना चुकी हो। मुकर न जाना।

अलारक्खी—जरा चोंच सँभाले हुए; कहीं साँड़नी पर से ढकेल न दूँ।

अलारक्खी को यकीन हो गया कि आज़ाद मुझ पर रीझ गये। अब निकाह हुआ ही चाहता है। यों ही बहुत नख़रे किया करती थी, अब और भी नख़रे बघारने लगी। नौ का अमल हो गया था। चारपाई पर धूप फैली हुई थी, मगर मक्कर किये पड़ी हुई थी। इतने में चंडूबाज़ आये। आते ही पुकारा—मियाँ आज़ाद, मियाँ आज़ाद! अलारक्खी! यह आज क्या है यहाँ, ख़ुदा ही ख़ैर करे। दस का अमल और अभी तक खटिया ही पर पड़े हैं। कल रात को तमाशा भी तो न था। (दरख्त की तरफ़ देख-कर और साँड़नी बँधी हुई पा कर) जभी खुश खुस सो रहे हैं। अरे मियाँ, क्या साँप सूँघ गया? यह माजरा क्या है? हाँ, अल्लाह कह कर उठ तो बैठ मेरे शेख़।

आज़ाद—(अँगड़ाई ले कर) अरे, क्या सुबह हो गयी?

चंडूबाज—सुबह गयी खेलने, आँख तो खोलो, अब कोई दम में बारह की तोप दग़ा चाहती है दन से। देखना, आज दिन भर सुस्ती न रहे तो कहना। वह तो जहाँ आदमी ज़रा देर करके उठा और हाथ-पाँव टूटने लगे। अब एक काम करो, सिर से नहा डालो।

आज़ाद—क्या बक-बक लगायी है, सोने नहीं देता।

अलारक्खी चुपके-चुपके सब सुन रही है, मगर उठती नहीं। चंडूबाज़ उसकी चार-

पाई की पट्टी पर जा बैठे और बोले—ऐ उठ अल्लाह की बंदी, ऐसा सोना भी क्या ? यह कह कर आपने उसके बिखरे हुए बाल, जो ज़मीन पर लटक रहे थे, समेट कर चारपाई पर रखे। उधर मियाँ आज़ाद की आँख खुल गयी।

चंडूबाज़ (गुदगुदा कर)—उठो, मेरी जान की क़सम, वह हँसी आयी, वह मुसकिरायी।

आज़ाद—ओ गुस्ताख़, अलग हट कर बैठ, हमारे सामने यह बेअदबी !

चंडूबाज़—उँह-उँह, बड़े वारिसअलीख़ाँ बन बैठे ! भई, आख़िर तुमको भी तो जगाया था, अब इनको जगाना शुरू किया, तिनगते क्यों हो भला ? मैं तो सीधा-सादा, भोला-भाला आदमी हूँ।

आज़ाद—जी हाँ, हमें तो कंधा पकड़ कर जगाया। यह मालूम हुआ कि चारपाई को जूड़ी चढ़ी या भूचाल आ गया और उन्हें गुदगुदा कर जगाते हो। क्यों बचा ?

अलारक्खी जागी तो थी ही, खिलखिला कर हँस पड़ी, ऐ हट मरदुए, यह पलँग पर आ कर बैठ जाना क्या; मुझे कोई वह समझ रखा है ?

चंडूबाज़ ने तैश खा कर कहा—वाह-वाह, पलँग की अच्छी कही। 'रहें झोपड़ों में और ख़्वाब देखें महलों का।' कभी बाबाराज ने भी पलँग देखा था।

अलारक्खी—मियाँ, मुझसे यह जली-कटी बातें न कीजिएगा जरी। वाह, हम झोपड़ों ही में रहती हैं सही; अब तो एक भलेमानस के घर पड़नेवाले हैं। क्यों मियाँ आज़ाद, है न, देखो, मुकर न जाना।

आज़ाद—वाह, मुकरने को एक ही कही, 'नेकी और पूछ-पूछ ?'

अलारक्खी—तिस पर भी तुम्हें शरम नहीं आती कि इस उचक्के ने मुझे हाथ लगाया और तुम मुलुर-मुलुर देखा किये। दूसरा होता, तो महनामथ मचा देता।

चंडूबाज़—क्यों लड़वाती हो भला मुफ़्त में ? हमें क्या मालूम था कि यहाँ निकाह की तैयारियाँ हो रही हैं।

मियाँ आज़ाद हाथ-मुँह धोने बाहर गये, तो चंडूबाज़ और अलारक्खी में यों बातें होने लगीं।

चंडूबाज़—यार, फाँसा तो बड़े मुड्ढ को ? अब जाने न देना। ऐसा न हो, निकल जाय। भई, क़सम खुदा की, औरत क्या, बिस की गाँठ है तू।

अलारक्खी—मगर तुम भी कितने बेशहूर हो, उसके सामने आपने गुदगुदाना शुरू किया। अब वह खटके कि न खटके ? तुम्हारी जो बात है, दुनिया से अनोखी। ताड़ सा क़द बढ़ाया, मगर तमीज छू नहीं गयी।

चंडूबाज़—अब तुमसे झगड़े कौन ? मैं किसी के दिल की बात थोड़े ही पढ़ा हूँ। मगर भई, पक्की कर लो।

अलारक्खी—हाँ पक्की-पोढ़ी होनी चाहिए। किसी अच्छे वकील से सलाह लो। वह कौन वकील हैं, जो कुम्मैत घोड़े की जोड़ी पर निकलते हैं—अजी वही, जो गबरू से हैं अभी।

चंडूबाज़—वकीलों की न पूछो, तेरह सौ साठ हैं। किसी के पास ले चलेंगे।

अलारक्खी—नहीं, वाह, किसी बूढ़े वकील के यहाँ तो मैं न जाऊँगी। ऐसी जगह चलो, जो जवान हो, अच्छी सलाह दे।

चंडूबाज़—अच्छा, आज इतवार है। शाम को मियाँ आज़ाद से कहना कि हमें अपनी बहन के यहाँ जाना है। बस, हम फाटक के उस तरफ़ दबके खड़े रहेंगे, तुम आना। हम-तुम चल कर सब मामला भुगता देंगे।

अलारक्खी—अच्छा अच्छा, तुम्हें खूब सूझी।

इतने में आज़ाद मुँह-हाथ धो कर आये, तो अलारक्खी ने कहा—हमें तो आज बहन के यहाँ न्योता है, कोई कची दो घड़ी में आ जाऊँगी।

आज़ाद—जरा साली की सूरत हमें भी तो दिखा दो। ऐसा भी क्या परदा है, कहो तो हम भी साथ-साथ चले चलें।

अलारक्खी—वाह मियाँ, तुम तो उँगली पकड़ते ही पहुँचा पकड़ने लगे! यह कह कर अलारक्खी कोठरी में गयी और सोलह सिंगार करके निकली, तो आज़ाद फड़क गये। पटियाँ जमी हुई, गोरी-गोरी नाक में काली-काली लौंग, प्यारे-प्यारे मुखड़े पर हलका सा घूँघट, हाथों में कड़े, पाँव में छड़े, छम-छम करती चली।

चंडूबाज़—उनके सामने चमक-चमक के बातें करना, यह नहीं कि झेपने लगो।

अलारक्खी—मुझे और आप सिखायें! चमकना भी कुछ सिखाने से आता है। मेरी तो बोटी-बोटी यों ही फड़का करती है। तुम चलो तो, जो मेरी बातों और आँखों पर लट्टू न हो जायँ, तो अलारक्खी नहीं। कुछ ऐसा करूँ कि वह भी निकाह पर रजामंद हो जायँ, तो उनसे और आज़ाद से ज़रा जूती चले।

वकील साहब अपने बाग़ में तख्त पर बैठे दोस्तों के साथ बातें कर रहे थे कि ख़िदमतगार ने आ कर कहा—हुजूर, एक औरत आयी है। कहती है, कुछ कहना है।

दोस्त—कैसी औरत है भई? जवान है या खप्पट?

खिदमतगार—हुजूर, यह तो देखने से मालूम होगा, मुल है अभी जवान।

वकील—कहो, सुबह आवे।

दोस्त—वाह-वाह, सुबह की एक ही कही। अजी बुलाओ भी। हमारे सिर की क़सम, बुलाओ। कहो, टोपी तुम्हारे कदमों पर रख दें।

अलारक्खी छड़ों को छम-छम करती, अजब मस्धानी चाल से इठलाती, बोटी-बोटी फड़काती हुई आयी। जिसने देखा, फड़क गया। सब रँगीले, बिगड़े दिल, बेफ़िक्रे जमा थे। एक साहब नवाब थे, दूसरे साहब मुंशी। आपस में मज़ाक होने लगा—

नवाब—बंदगी अर्ज़ है! खुदा की क़सम, आप एक ही न्यारिये हैं।

मुंशी—भई, सूरत से तो भलेमानस मालूम होते थे, लेकिन एक ही रसिया निकले।

वकील—भई, अब हम कुछ न कहेंगे। और कहें क्या, छा गयी। बी साहिबा, आप किसके पास आयी हैं? कहाँ से आना हुआ?

अलारक्खी—अब ऐसी अजीरन हो गयी।

वकील—नहीं-नहीं, वाह बैठो, इधर तख़्त पर आओ।

अलारक्खी—हाँ, बनाइए, हम तो सीधे-सादे हैं साहब।

नवाब—आप भोली हैं, बजा है!

वकील—औरत हैं या परिस्तान की परी!

नवाब—रीझे-रीझे, लो बी, अब पौ-बारह हैं।

अलारक्खी—हुजूर, हम ये पौ-बारह और तीन काने तो जानते नहीं, हमारा मतलब निकल जाय, तो आप सब साहबों का मुँह मीठा कर देंगे।

दोस्त—आपकी बातें ही क्या कम मीठी हैं!

इतने में चंडूबाज़ भी आ पहुँचे।

चंडूबाज़—हुजूर तो इन्हें जानते न होंगे, ये अलारक्खी हैं। इनका नाम दूर-दूर तक रोशन है।

वकील—इनका क्या इनके सारे खानदान का नाम रोशन है।

चंडूबाज़—सराय में एक आज़ाद नामी जवान आ कर ठहरे हैं। वह इनके ऊपर जान देते हैं और यह उन पर मरती हैं। कई आदमियों के सामने वह क़बूल चुके हैं कि इनके साथ निकाह करेंगे। मगर आदमी हैं रँगीले, ऐसा न हो कि इनकार कर जायँ। बस, इनकी यही अर्ज़ है कि हुजूर कोई ऐसी तदबीर बतायें कि वह निकल न सकें।

अलारक्खी—मुझ ग़रीबनी से कोई छप्पन टके तो आपको मिलने नहीं हैं। रहा, इतना सवाब कीजिए, जिसमें यह शिकंजे में जकड़ जायँ।

मुंशी—अगर निकाह ही करने का शौक़ है तो हम क्या बुरे हैं?

वकील—एक तुम्हीं क्या, यहाँ सब झंडे-तले के शोहदे छटे हुए लुच्चे जमा हैं! जिसको यह पसंद करें, उसी के साथ निकाह हो जाय।

अलारक्खी—हुजूर लोग तो मुझसे दिल्लगी करते हैं।

वकील—अच्छा, कल आओ तो हम तुम्हें वह तरकीब बतायें कि तुम भी याद करो।

अलारक्खी—मगर बंदी ने कभी सरकार-दरबार की सूरत देखी नहीं। आप वकालत कीजिएगा?

मुंशी—हाँ जी हाँ, इसमें मिन्नत ही क्या है। मगर जानती हो, ये वकील तो रुपये के आशना हैं।

अलारक्खी—वाह, रुपया यहाँ अल्लाह का नाम है। हम हैं, चाहे बेच लो।

वकील—अच्छा, कल आओ, पहले देखो तो वह क्या कहते हैं।

अलारक्खी अब यहाँ से उठना चाहती थी, मगर उठे कैसे। कनखियों से चंडूबाज़ की तरफ़ देखा कि अब यहाँ से चलना चाहिए। वह भी उसका मतलब समझ गये, बोले—ऐ हजूर, जरी घड़ी को तकलीफ़ दीजिएगा, देखिए तो, कै बजे हैं।

अलारक्खी—मैं अटकल से कहती हूँ, कोई बारह बजे होंगे।

चंडूबाज़—मैं भी कहूँ, यह जम्हाइयों पर जम्हाइयाँ क्यों आ रही हैं। नशे का वक़्त टल गया। हलवाइयों की दूकानें भी बंद गयी होंगी। मलाई से भी गये। हजूर, अब

तो रुख़सत कीजिए। अब तो चंडू की लौ लगी है, आज सबेरे-सबेरे आज़ाद की मनहूस सूरत देखी थी, जभी यह हाल हुआ।

अलारक्खी—ले खबरदार, अब की कहा तो कहा, अब आज़ाद का नाम लिया, तो मुझसे बुरा कोई नहीं; ज़बान खींच लूँगी। नाहक किसी पर छुद्दा रखना अच्छा नहीं।

नवाब—अरे भई, कोई है, देखो, दूकानें बढ़ न गयी हों, तो इनको यहीं चंडू पिलवा दें। जरा दो घड़ी और बी अलारक्खी से सोहबत गरमावें।

ख़िदमतगार—जाने को कहिए मैं जाऊँ, मुल दुकानें कब की बढ़ गयी हैं; बाज़ार भर में सन्नाटा पड़ा है; चिड़ियाँ चुनगुन तक सो रहीं हैं; अब कोई दम में चक्कियाँ चलेंगी।

अलारक्खी—ऐ, क्या आधी रात ढल गयी? ले, अब तो बंदी रुख़सत होती है।

मुंशी—वाह, इस अँधेरी रात में ठोकरें खाती कहाँ जाओगी!

अलारक्खी—नहीं हुजूर, अब आँखें बंद हुई जाती हैं। बस, अब रुख़सत। हुजूर, भूलिएगा नहीं। इतनी देर मज़े से बातें की हैं। याद रखिएगा लौंडी को।

मुंशी—वह हँसते आये, यहाँ से हमें रुलाके चले;
न बैठे आप मगर दर्द-दिल उठा के चले।

वकील—दिखाके चाँद सा मुखड़ा छिपाया ज़ुल्फ़ों में;
दुरंगी हमको ज़माने की वह दिखाके चले।

नवाब—न था जो कूचे में अपना क़याम मद्दे-नज़र;
तो मेरे बाद मेरी ख़ाक भी उड़ाके चले।

ख़ुदा के लिए इतना तो इकरार करती जाओ कि कल ज़रूर मिलेंगे, हाथ पर हाथ मारो।

अलारक्खी—आप लोगों ने क्या जादू कर दिया; अब रुखसत कीजिए।

वकील—यह भी कोई हँसी है कि रुख़सत का लेके नाम;
सौ बार बैठे-बैठे हमें तुम रुला चले।

नवाब—आँखों-आँखों में ले गये वह दिल;
कानों-कानों हमें ख़बर न हुई।

अलारक्खी यहाँ से चली, तो राह में डींग मारने लगी—क्यों, सब के सब हमारी छबि पर लोट गये न? यहाँ तो फ़क़ीर की दुआ है कि जिस महफ़िल में बैठ जाऊँ, वहीं कटाव होने लगे।

दोनों सराय में पहुँचे, तो देखा, आज़ाद जाग रहे हैं।

अलारक्खी—आज क्या है कि पलक तक न झपकी? यह किसकी याद में नींद उचाट है?

आज़ाद—हाँ, हाँ, जलाओ, दो-दो बजे तक हवा खाओ और हमसे आ कर बातें बनाओ।

अलारक्खी—ऐ वाह, यह शक, तब तो मीज़ान पट चुकी। अब इनके मारे कोई

भाई-बहन छोड़ दे। अब यह बताओ कि निकाह को कौन दिन ठीक करते हो? हम आज सबसे कह आये कि मियाँ आज़ाद के घर पड़ेंगे।

आज़ाद—क्या सचमुच तुम सबसे कह आयीं? कहीं ऐसा करना भी नहीं। मैं दिल्लगी करता था। खुदा की क़सम फ़क़त दिल्लगी ही थी। मैं परदेशी आदमी, शादी-ब्याह करता फिरूँगा, और भटियारी से? माना कि तुम हो परी, मगर फिर भटियारिन ही तो! चार दिन के लिए सराय में आ कर टिके, तो यहाँ से यह बला ले जायँ!

अलारक्खी—ऐ चोंच संभाल मरदुए! और सुनिएगा, हम बला हैं, जिस पर सारे शहर की निगाह पड़ती है? दूसरा कहता, तो खून-खराब कर डालती। मगर करूँ क्या, क़ौल हार चुकी हूँ। बिरादरी भर में कलंक का टीका लगेगा। बला की अच्छी कही; तुम्हारे मुँह से मेरी एड़ी गोरी है, चाहे मिला लो।

आज़ाद—तो बी साहबा, सुनिए, किसकी शादी और किसका ब्याह!

अलारक्खी—इन बातों से न निकलने पाइएगा। कल ही तो मैं नालिश दाग़ती हूँ। इकरार करके मुकर जाना क्या खाला जी का घर है? मियाँ, मैं तो अपनीवाली पर आयी, तो बड़ा घर ही दिखाऊँगी। किसी और भरोसे न भूलना। मुझसे बुरा कोई नहीं।

आज़ाद—खुदा की पनाह, मैं अब तक समझता था कि मैं ही बड़ा घाघ हूँ, मगर इस औरत ने मेरे भी कान काटे। भुला दी सारी चौकड़ी। खुदा तड़का जल्दी से हो, तो मैं दूसरी कोठरी लूँ।

अलारक्खी (नाक पर उँगली रख कर)—रो दे, रो दे! इससे छोकरी ही हुए होते, तो किसी भलेमानस का घर बसता। भला मजाल पड़ी है कि कोई भठियारी टिकाये?

आज़ाद—तो सारे शहर भर में आपका राज है कुछ?

अलारक्खी—हई है, हई है, क्या हँसी-ट्ठा है? कल-परसों तक आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा?

आज़ाद—चलिए, आपकी बला से!

चंडूबाज़—बला-वला के भरोसे न रहिएगा। दो-चार दिन ताथेइया मचेगी।

आज़ाद—जरी आप चुपके बैठे रहिएगा। यह तो कामिनी हैं, लेकिन तुम्हारी मुफ़्त में शामत आ जायगी।

चंडूबाज़—मेरे मुँह न लगिएगा, इतना कहे देता हूँ!

आज़ाद ने उठ कर दो-चार चाँटे जड़ दिये। अलारक्खी ने बीच-बचाव कर दिया। अल्लाह करे, हाथ टूटें, लेके ग़रीब को पीट डाला।

चंडूबाज़—मेरी भी तो दो-एक पड़ गयी जी!

अलारक्खी—ऐ चुप भी रह, बोलने को मरता है।

इस तरह लड़-झगड़ कर तीनों सोये।

दूसरे दिन सबेरे आज़ाद की आँख खुली, तो देखा, एक शाह जी उनके सिरहाने खड़े उनकी तरफ देख रहे हैं। शाह जी के साथ एक लड़का भी है, जो अलारक्खी को दुआएँ दे रहा है। आज़ाद ने समझा, कोई फ़क़ीर है, झट उठ कर उनको सलाम किया। फ़क़ीर ने मुसकिरा कर कहा—हुजूर, मेरा इनाम हुआ। सच कहिएगा, ऐसे बहुरुपिये कम देखे होंगे। आज़ाद ने देखा गच्चा खा गये, अब बिना इनाम दिये गला न छूटेगा। बस, अलारक्खी की भड़कीली दुलाई उठाकर दे-दी। बहुरुपिये ने दुलाई ली, झुक कर सलाम किया और लंबा हुआ। लौंडे ने देखा कि मैं ही रहा जाता हूँ! बढ़ कर आज़ाद का दामन पकड़ा। हुजूर, हमें कुछ भी नहीं? आज़ाद ने जेब से एक रुपया निकाल कर फेंक दिया। तब अलारक्खी चमक कर आगे बढ़ीं और बोलीं—हमें?

आज़ाद तुम्हारे लिए जान हाज़िर है।

चंडूबाज़—यह सब ज़बानी दाखिल है। बीबी को यह खबर ही नहीं कि दुलाई इनाम में चली गयी। उलटे चली हैं माँगने। यह तो न हुआ कि चाँदी के छड़े बनवा देते, या किसी दिन हमी को दो-चार रुपये दे डालते। जाओ मियाँ, बस, तुमको भी देख लिया। गौं के यार हो, 'चमड़ी जाय दमड़ी न जाय।'

अलारक्खी—कहीं तेरे सिर गरमी तो नहीं चढ़ गयी। जरा चँदिया के पट्टे कतरवा डाल। यह चमड़ी और दमड़ी का कौन मौक़ा था। यह बताइए, अब निकाह की कब तैयारियाँ हैं?

आज़ाद—अभी निकाह की उम्मेद आपको है? वल्लाह, कितनी भोली हो!

अलारक्खी—तो क्या आप निकल भी जायँगे? ऐ, मैं तो चढ़ूँगी अदालत! कह-कह कर मुकर जाना क्या हँसी-ठट्ठा है!

आज़ाद—तो क्या नालिश कीजिएगा?

अलारक्खी—क्यों, क्या कोई शक भी है! हम क्या किसी के दबैल हैं?

चंडूबाज़—और गवाह को देख रखिए। दुलाई क्या झप से उठा दी। परायी दुलाई के आप कौन देनेवाले थे? अजी, मैं तो वह-वह सवाल-जवाब करूँगा कि आपके होश उड़ जायँगे।

आज़ाद—अच्छी बात है, यह शौक़ से नालिश करें और आप गवाही दें। इन्हें तो क्या कहूँ, पर तुम्हें समझूँगा।

चंडूबाज़—मुझसे ऐसी बातें न कीजिएगा, नहीं मैं फिर गुद्दा ही दूँगा।

अलारक्खी—चल, हट, बड़ा आया वहाँ से गुद्दा देनेवाला। अभी मैं चिमट जाऊँ, तो चीखने लगें, उस पर गुद्दा देंगे।

आज़ाद—तो फिर ज़ाइए वकील के यहाँ, देर हो रही है।

अलारक्खी—तो क्या सचमुच तुम्हें इनकार है? मियाँ, आँखें खुल जायँगी। जब

सरकार का प्यादा आयेगा, तो भागने को जगह न मिलेगी।

चंडूबाज़—यह हैं शोहदे, यों नहीं मानने के। चलो चलें, दिन चढ़ता आता है। अभी कंघी-चोटी में तुम्हें घंटों लगेंगे और वह सरकारी-दरबारी आदमी ठहरे। मुवक्किल सुबह-शाम घेरे रहते हैं। जब देखो, बग्घियाँ, टमटम, फिटन, जोड़ी, गाड़ी, हाथी, घोड़े, पालकी, इक्के, ताँगे, याबू, फिनस, म्याने दरवाज़े पर मौजूद।

आज़ाद—क्या और किसी सवारी का नाम याद नहीं था? आज सरूर खूब गठे हैं।

चंडूबाज़—अजी, यहाँ अलारक्खी की बदौलत रोज़ ही सरूर गठे रहते हैं।

अलारक्खी ने कोठरी में जा कर सिंगार किया और निखर कर चलीं, तो आज़ाद की निगाह पड़ ही गयी। चार आँखें हुईं, तो दोनों मुस्किरा दिये। चंडूबाज़ ने यह शेर पढ़ा—

उनको देखो तो यह हँस देते हैं;
आँख छिपती ही नहीं यारी की।

अलारक्खी एक हरी-हरी छतरी लगाये छम-छम करती चली। बिगड़े-दिल आवाज़ें कसते थे, पर वह किसी तरफ़ आँख उठा कर न देखती थी। चंडूबाज़ 'हटो, बचो' करते चले जाते थे। जरी हट जाना सामने से। ऐं, क्या छकड़ा आता है, क्यों हट जायँ? अल्लाह, यह कहिए, आपकी सवारी आ रही है। लो साहब, हट गये। एक रसिया ने पीछा किया। ये लोग आगे-आगे चले जा रहे हैं और मियाँ रसिया पीछे-पीछे ग़ज़लें पढ़ते चले आ रहे हैं। चंडूबाज़ ने देखा कि यह अच्छे बिगड़े-दिल मिले। साथ जो हुआ, तो पीछा ही नहीं छोड़ते। आप हैं कौन? या आगे बढ़िए या पीछे चलिए। किसी भलेमामस को सताते क्यों हैं? इस पर अलारक्खी ने चंडूबाज़ के कान में चुपके से कहा—यह भी तो शक़ल-सूरत से भलेमानस मालूम होते हैं। हमें इनसे कुछ कहना है।

चंडूबाज़—आप तो वकील के पास चलती थीं, कहाँ इस सिड़ी-सौदई से साँठ-गाँठ करने की सूझी? सच है, हसीनों के मिज़ाज का ठिकाना ही क्या। बोले—अजी साहब, जरी इधर गली में आइयेगा, आपसे कुछ कहना है।

रसिया—वाह, 'नेकी और पूछ-पूछ!'

तीनों गली में गये, तो अलारक्खी ने कहा—कहीं तुम्हारे मकान भी है? यहाँ इस गलियारे में क्या कहूँ, कोई आवे, कोई जाय। खड़े-खड़े बातें हुआ करती हैं?

चंडूबाज़ ने सोचा कि दूसरा गुल खिला चाहता है। पूछा—मियाँ, तुम्हारा मकान यहाँ से कितनी दूर है। जो काले कोसों हो, तो मैं लपक कर बग्घी किराया कर लूँ। इनसे इतनी दूर न चला जायगा। इनको तो मारे नज़ाकत के छतरी ही का सँभालना भारी है।

रसिया—नहीं साहब, दूर नहीं है। बस, कोई दस कदम आइए। रसिया ने छतरी ले ली और खिदमतगार की तरह छतरी लगा कर साथ साथ चलने लगे। चंडूबाज़ ने देखा, अच्छा गावदी मिला। खुद भी छतरी के साये में रईस बने हुए चलने लगे। थोड़ी देर में रसिया के मकान पर आ पहुँचे।

रसिया—वह आयें घर में हमारे, ख़ुदा की कुदरत है,
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं।

यहाँ तो सच्चे आशिक़ हैं। जिसको दिल दिया, उसको दिया। जान जाय; माल जाय; इज़्ज़त जाय; सब मंजूर है।

चंडूबाज़—अच्छा, अब इनका मतलब सुनिए। यह बेचारी अभी अठारह-उन्नीस बरस की होंगी? अभी कल तो पैदा हुई हैं। अब सुनिए कि इनके मियाँ इनसे लड़-झगड़ कर हैदराबाद भाग गये। वहाँ किसी को घर में डाल लिया। अब यह अकेली हैं, इनका जी घबराता है, इतने में एक शौक़ीन रईस सराय में उतरे, बड़े ख़ूबसूरत कल्ले-छल्ले के जवान हैं।

अलारक्खी—मियाँ, आँखें तो ऐसी रसीली कि देखी न सुनी।

चंडूबाज़—ऐ, तो मुझी को अब कहने दो। तुम तो बात काटे देती हो। हाँ, तो मैं कहता था कि इनकी-उनकी आँखें चार हुईं, तो इधर यह, उधर वह, दोनों घायल हो गये। पहले तो आँखों ही आँखों में बातें हुआ की। फिर खुल के साफ़ कह दिया कि हम तुमको ब्याहेंगे। फिर न जाने क्या समझ कर मुकर गये। अब इनका इरादा है कि उन पर नालिश ठोंक दें।

रसिया—अजी, उनको भाड़ में झोंको। जो ब्याह ही करना है, तो हमसे निकाह पढ़वाओ। उनको धता बताओ।

अलारक्खी—सच कहूँ, तुम मर्दों का हमें एतबार दमड़ी भर भी नहीं रहा। अब जी नहीं चाहता कि किसी से दिल मिलायें।

रसिया—तुमने अभी हमें पहिचाना ही नहीं। पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होतीं। हम शरीफ़जादे हैं!

अलारक्खी—लोग यही समझते हैं कि अलारक्खी बड़ी खुशनसीब है। मगर मियाँ, मैं किससे कहूँ, दिल का हाल कोई क्या जाने।

चंडूबाज़—यही देखिए, अर्जीदावा है।

रसिया—अरे, यह किस पागल ने लिखा है जी? ऐसा भला कहीं हो सकता है कि सरकार आज़ाद से तुम्हारा निकाह करवा ही दे? हाँ, इतना हो सकता है कि हरजा दिलवा दे। पर उसका सबूत भी ज़रा मुश्किल है।

आलारक्खी—अजी, होगा भी, मसौदा फाड़ डालो। आज़ाद से अब मतलब ही क्या रहा?

रसिया—हम बतायें, नालिश तो दाग़ दो। हरजा मिला तो हर्ज ही क्या है। बाक़ी ब्याह किसी के अख़्तियार में नहीं। उधर तुमने मुक़दमा जीता, इधर हम बरात ले कर आये।

अलारक्खी—तो चलो, तुम भी वकील के यहाँ तक चले चलो न।

रसिया—हाँ, हाँ, चलो।

तीनों आदमी वकील के यहाँ पहुँचे। लेकिन बड़ी देर तक बाहर ही टापा किये। यह

रईस आये, वह अमीर आये। कभी कोई महाजन आया। बड़ी देर के बाद इनकी तलबी हुई; मगर वकील साहब जो देखते हैं, तो अलारक्खी का मुँह उतरा हुआ है, न वह चमक-दमक है, न वह मुसकिराना और लजाना। पूछा—आखिर, माजरा क्या है? आज इतनी उदास क्यों हो? कहाँ वह छवि थी, कहाँ यह उदासी छायी हुई है? अलारक्खी ने इसका तो जवाब कुछ न दिया, फूट-फूट कर रोने लगी। आँसू का तार बंध गया। वकील सन्नाटे में। आज यह क्या माजरा है, इनकी आँखों में आँसू!

चंडूबाज़—हुजूर, यह बड़ी पाकदामन हैं। जितनी ही चंचल हैं, उतनी ही समझदार। मेरा खुदा गवाह है, बुरी राह चलते आज तक नहीं देखा। इनकी पाकदामनी की क़सम खानी-चाहिए। अब यह फ़रमाइए, मुक़दमा कैसे दायर किया जाय।

रसिया—जी हाँ, कोई अच्छी तदबीर बताइए। ज़बरदस्ती शादी तो हो नहीं सकती। अगर कुछ हरजाना ही मिल जाय, तो क्या बुरा? भागते भूत की लँगोटी ही सही। कुछ तो ले ही मरेंगी।

चंडूबाज़—मरें इनके दुश्मन, आप भी कितने फूहड़ हैं, वाह!

वकील—अच्छा, यह तो बताइए कि वह रईस कहाँ से आयेंगे, जो कहें कि हमसे और इनसे ब्याह की ठहरी थी?

रसिया—अब बता ही दूँ। बंदा ही कहेगा कि हमसे महीनों से बातचीत है, आज़ाद बीच में कूद पड़े। वल्लाह, वह-वह जवाब दूँ कि आप भी खुश हो जायँ।

वकील—वाह तो फिर क्या पूछना। हम आपको दो-एक चुटकिले बता देंगे, कि आप फर्राटे भरने लगिएगा। मगर दो-एक गवाह तो ठहरा लीजिए।

चंडूबाज़—एक गवाह तो मैं ही बैठा हूँ, फर्राटेबाज़।

खैर तीनों आदमी कचहरी पहुँचे। जिस पेड़ के नीचे जा कर बैठे, वहाँ मेला सा लग गया। कचहरी भर के आदमी, टूटे पड़ते हैं। धक्कमधक्का हो रहा है। चंडूबाज़ वारिसअलीखाँ बने बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। जाओ भई, अपना काम करो, आखिर यहाँ क्या मेला है, क्या भेड़िया-धसान है।

एक—आप लाये ही ऐसी हैं।

दूसरा—अच्छा, हम खड़े हैं, आपका कुछ इजारा है? वाह अच्छे आये।

तीसरा—भाई, जरी हँस-बोल लें, आखिर मरना तो है ही।

जब एक बजा, तो बी अलारक्खी इठलाती हुई सवाल देने चलीं। चंडूबाज़ एक हाथ में हुक्का लिये हैं, दूसरे में छतरी। खिदमतगार बने चले जाते हैं। लोग इधर-उधर झुंड के झुंड खड़े हैं; पर कोई बताता नहीं कि अर्ज़ी कहाँ दी जाती है। एक कहता है, दाहने हाथ जाओ। दूसरा कहता है, नहीं-नहीं, बायें-बायें। बड़ी मुश्किल से इजलास तक पहुँचीं।

उधर आज़ाद पड़े-पड़े सोच रहे थे कि इस बेफ़िक्री का कहीं ठिकाना है? जो कहीं नवाब के आदमी छूटें तो चोर के चोर बनें और उल्लू के उल्लू बनाये जायँ। किसी को मुँह दिखाने लायक़ न रहें। आबरू पर पर पानी फिर गया। अभी देखिए, क्या क्या होता

है—कहाँ-कहाँ ठोकरें खाते हैं !

इतने में सराय में लेना-लेना का गुल मचा। यह भी भड़भड़ा कर कोठरी से बाहर निकले, तो देखते हैं कि साँड़नी ने रस्सी तोड़-ताड़ कर फेंक दी है और सराय भर में उचकती फिरती है। पहले एक मुसाफ़िर के टट्टू की तरफ़ झुकी और उसको मारे पुस्तों के बौखला दिया। मुसाफ़िर बेचारा एक लग्गा लिये खटाखट हाथ साफ़ कर रहा है। फिर जो वहाँ से उछली, तो दो-तीन बैलों का कचूमर ही निकाल डाला। गाड़ीवान हाँय-हाँय कर रहा है; लेकिन इस हाँय-हाँय से भला ऊँट समझा किये हैं। यहाँ से झपटी, तो तीन-चार इक्कों के अंजर-पंजर अलग कर दिये। आज़ाद तोबड़ा दिखा रहे हैं और आवाज़ें कर रहे हैं। लोग तालियाँ बजा देते हैं, तो वह और भी बौखला जाती है। बारे बड़ी मुश्किल से नकेल उनके हाथ में आयी। उसे बाँध कर कहीं जाने की तैयारी कर रहे थे कि अलारक्खी और चंडूबाज़ अदालत के एक मज़कूरी के साथ आ पहुँचे। आज़ाद ने मुँह फेर लिया और मीठे सुरों में गाने लगे—

ठानी थी दिल में, अब न मिलेंगे किसी से हम;
पर क्या करें कि हो गये लाचार जी से हम।

मज़कूरी—हुज़ूर, सम्मन आया है।

आज़ाद—तुम मेरे पास होते हो गोया;
जब कोई दूसरा नहीं होता।

मज़कूरी—सम्मन आया है, गाने को तो दिन भर पड़ा है, लीजिए, दस्तखत तो कर दीजिए !

आज़ाद—धो दिया अश्के-नदामत को गुनाहों ने मेरे;
तर हुआ दामन, तो बारे पाक-दामन हो गया।

मज़कूरी—अजी साहब, मेरी भी सुनिएगा ?

आज़ाद—क्या हमसे कहते हो ?

मज़कूरी—और नहीं तो किससे कहते हैं ?

आज़ाद—कैसा सम्मन, लाओ, ज़रा पढ़ें तो। लो, सचमुच ही नालिश जड़ दी।

मज़कूरी ने सम्मन पर दस्तख़त कराये और अलारक्खी को घेरा। आज तो हाथ गरमाओ, एक चेहराशाही लाओ। अलारक्खी ने कहा—ऐ, तो अभी सूत न कपास, इनाम-बिनाम कैसा ? मुक़दमा जीत जायँ, तो देते अच्छा लगे।

मज़कूरी—तुम जीती दाख़िल हो बीबी। अच्छा, कल आऊँगा।

मियाँ आज़ाद के पेट में चूहे कूदने लगे कि यह तो बेढब हुई। मैंने जरा दिल-बहलाव के लिए दिल्लगी क्या कर दी कि यह मुसीबत गले आ पड़ी। अब तो खैरियत इसीमें है कि यहाँसे मुँह छिपाकर भाग खड़े हों। बी अलारक्खी चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगीं—अब तो चाँदी है। जीते, तो घी के चिराग़ जलायेंगे। एक ने कहा—यह न कहा, मुँह मीठा करेंगे; गुलगुले खिलायेंगे। दूसरी ने कहा—न खिलायगी, तो निकाह के दिन

ढोलक कौन बजायेगा ? आज़ाद मौक़े की ताक में थे ही, अलारक्खी की आँख चूकते ही झट से काठी कसी और भागे। नाके तक तो उनको किसी ने न टोका, मगर जब नाके से कोई गोली भर के टप्पे पर बाहर निकल गये तो मियाँ चंडूबाज़ से चार आँखें हुईं। अरे ! ग़ज़ब हो गया, अब धर लिये गये।

चंडूबाज़—ऐ बड़े भाई, किधर की तैयारियाँ हैं ? यह भाग जाना हँसी-ठट्ठा नहीं है कि काठी कसी और चल खड़े हुए। आँखों में खाक झोंक कर चले आये होंगे। ले बस, उतर पड़ो, आओ, जरी हुक्का तो पी लो।

आज़ाद—इस दम में हम न आयेंगे। ये फ़िक़रे किसी गँवार को दीजिए। आप अपना हुक्क़ा रहने दें। बस, अब हम खूब पी चुके। नाकों दम कर दिया बदमाशों ने ! चले थे मुक़दमा दायर करने ! किस मज़े से कहते हैं कि हुक्क़ा पिये जाओ। ऐसे ही तो आप बड़े दोस्त हैं !

चंडूबाज़—नेकी का ज़माना ही नहीं। हमने तो कहा, इतने दिन मुलाक़ात रही है, आओ भाई, कुछ खातिर कर दें, अब खुदा जाने, कब मिलना हो।

आज़ाद—खुदा न करे, तुम जैसे मनहूसों की सूरत ख्वाब में भी नज़र आये।

चंडूबाज़ ने गुल मचाना शुरू किया—दौड़ो, चोर है, लेना, चोर, चोर ! मियाँ आज़ाद ने चंडूबाज़ पर सड़ाक से कोड़ा फटकारा और साँड़नी को एक एड़ लगायी। वह हवा हो गयी। शहर से बाहर हुए, तो राह में दो मुसाफ़िरों को यों बातें करते सुना—

पहला—अरे मियाँ, आजकल लखनऊ में एक नया गुल खिला है ! किसी न्यारिये ने करोड़ों रुपये के जाली स्टाम्प बनाये और लंदन तक में जा कर कूड़े किये। सुना, काबुल में दो जालिये पकड़े गये, मुश्कें कस ली गयीं और रेल में बंद करके यहाँ भेज दिये गये। अल्लाह जानता है, ऐसा जाल किया कि जौ भर भी फ़र्क़ मालूम हो, तो मूँछें मुड़वा लो ! सुना है, कोई, डेढ़ सौ दो सौ बरस से बेचते थे और कुछ चोरी-छिपे नहीं, खुल्लमखुल्ला।

दूसरा—वाह, दुनिया में भी कैसे-कैसे काइयाँ पड़े हैं। ऐसों के तो हाथ कटवा डाले।

पहला—वाह, वाह, क्या क़दरदानी की है ! उन्होंने ने तो वह काम किया कि हाथ चूम लें, जागीरें दें।

आज़ाद को पहले मुसाफ़िर की गपोड़ेबाज़ी पर हँसी आ गयी। क्या झप से जालियों को काबुल तक पहुँचा दिया और हिंदुस्तान के स्टाम्प लंदन में बिकवाये। पूछा—क्यों साहब, कितने जाली स्टाम्प बेचे ?

मुसाफ़िरों ने समझा, यह कोई पुलिस अफ़सर है, टोह लेने चले हैं, ऐसा न हो कि हमको भी गिरफ़्तार कर लें। बगलें झाँकने लगे।

आज़ाद—आप अभी कहते न थे कि जालिये गिरफ़्तार किये गये हैं ?

मुसाफ़िर—कौन ? हम ? नहीं तो !

आज़ाद—जी, आप बातें नहीं कर रहे थे कि स्टाम्प किसी ने बनाये और डेढ़ दो सौ बरस से बेचते चले आये ?

मुसाफ़िर—हुज़ूर, हमको तो कुछ मालूम नहीं।

आज़ाद—अभी बताओ सुअर, नहीं हम तुमको बड़ा घर दिखायेगा और बेड़ी पहनायेगा।

मियाँ आज़ाद तो उनकी चितवनों से ताड़ गये थे कि दोनों के दोनों चोंगा हैं, मारे डर के स्टाम्प का लफ्ज़ ज़बान पर नहीं लाते। जैसे ही उन्होंने डाँट बतायी, एक तो बगटुट पच्छिम की तरफ भागा और दूसरा खड़भड़ करता हुआ पूरब की तरफ। मियाँ आज़ाद आगे बढ़े। राह में देखा, कई मुसाफ़िर एक पेड़ के साये में बैठे बातें कर रहे हैं—

एक—कोई ऐसी तदबीर बताइए कि लू न लगे। आजकल के दिन बड़े बुरे हैं।

दूसरा—इसकी तरकीब यह है कि प्याज़ की गट्ठी पास रखे। या दो-चार कच्चे आम तोड़ लो, आमों को पहले भून लो, जब पिलपिले हों, तो गूदा निकाल कर छिलका फेंक दो और ज़रा सी शकर, पानी में घोल कर पी जाओ।

पहला—कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना! पानी में तो बरफ़ डालनी ही न चाहिए। पानी का गिलास बरफ़ में रख दो, जब खूब ठंडा हो जाय, तब पियो। बरफ़ का पानी नुक़सान करता है।

दूसरा—वाह, लाखों आदमी पीते हैं।

पहला—अजी, लाखों आदमी झख मारते हैं। लाखों चोरियाँ भी तो करते हैं, फिर इससे मतलब? हमने लाखों आदमियों को देखा है कि गढ़ों और तालाबों का पानी सफ़र में पीते हैं। आप पीजिएगा? हज़ारों आदमी धूप में चल कर खड़े-खड़े तीन-चार लोटे पानी पी जाते हैं। मगर यह कोई अच्छी बात थोड़े ही है।

और आगे बढ़े, तो एक भड्डुरी आ निकला। वह आज़ाद को पहचानता था। देखते ही बोला—तुम्हारी नवाब सहब के यहाँ बड़ी तलाश है जी। तुम ग़ायब कहाँ हो गये थे ऊँट ले कर? अब मैं जा कर कहूँगा कि मैंने प्रश्न देखा, तो निकला, आज़ाद पाँच कोस के अंदर ही अंदर हैं। जब तुम लुपदेनी पहुँच जाओगे, तो फिर हमारी चढ़ती कला होगी। तुमको भी आधोआध बाँट देंगे। मगर भंडा न फोड़ना। चढ़ बाज़ी है।

आज़ाद—वल्लाह, क्या सूझी है। मंजूर है।

भड्डुरी ने पोथी सँभाल अपनी राह ली और नवाब के यहाँ धर धमके।

खोजी—अजी, जाओ भी, तुम्हारी एक बात भी ठीक न निकली।

नवाब—बरसों हमारा नमक तुमने खाया है, बरसों। एक-दो दिन नहीं बरसों। अब इस वक्त कुछ परशन-वरशन भी देखोगे, या बातें ही बनाओगे? हमको तो मुसलमान भाई तुम्हारी वजह से काफ़िर कहने लगे और तुम कोई अच्छा सा हुक्म नहीं लगाते।

भड्डुरी—वह हुक्म लगाऊँ कि पट ही न पड़े!

खोजी—अजी, डींगिये हो खासे। कहीं किसी रोज़ मैं क़रौली न भोंक दूँ। सिवा बे-पर की उड़ाने के, बात सीखी ही नहीं। भले आदमी, साल भर में एक दफ़े तो सच बोला करो।

झम्मन—वाह, सच बोलते, तो क़साई के कुत्ते की तरह फूल न जाते।

नवाब—यह क्या वाहियात बात?

भड्डुरी—हुज़ूर, हमसे-इनसे हँसी होती है। यह हमें कहते हैं, हम इन्हें। अब आप कोई फूल मन में लें।

नवाब—ये ढकोसले हमको अच्छे नहीं मालूम होते। हमें साफ़-साफ़ बता दो कि मियाँ आज़ाद कब तक आयेंगे?

भड्डुरी ने उँगलियों पर कुछ गिन-गिना कर कहा—पानी के पास हैं।

झम्मन—वाह उस्ताद! पानी के पास एक ही कही। लड़की न लड़का, दोनों तरह अपनी ही जीत।

भड्डुरी—यहाँ से कोई तीन कोस के अंदर हैं।

दुन्नी—हज़ूर, यह बड़ा फ़ैलिया है। आप पूछते हैं; आज़ाद कब आयेंगे। यह कहता है, तीन कोस के अंदर ही अंदर हैं। सिवा झूठ, सिवा झूठ।

भड्डुरी—अच्छा, जा कर देख लो। जो नाके के पास आज़ाद आते न मिलें, तो नाक कटा डालूँ, पोथी जला दूँ। कोई दिल्लगी है?

नवाब—चाबुक-सवार को बुला कर हुक्म दो कि अभी सरपट जाय और देखे, मियाँ अज़ाद आते हैं या नहीं। आते हों, तो इस भड्डुरी का आज घर भर दूँ। बस, आज से इसका कलमा पढ़ने लगूँ।

चाबुक-सवार ने बाँका मुड़ासा बाँधा और सुरंग घोड़ी पर चढ़ चला। मगर पचास ही क़दम गया होगा कि घोड़ी भड़की और तेज़ी में दूसरे नाके की राह ली। चाबुक सवार बहुत अकड़े बैठे हुए थे; मगर रोक न सके, धम से मुँह के बल नीचे आ रहे। ख़ोजी ने नवाब साहब से कहा—हुज़ूर, घोड़ी ने नाज़िरअली को दे पटका, और क्या जाने किस तरफ़ निकल गयी।

नवाब—चलो, ख़ैर समझा जायगा। तुम टाँघन कसवाओ और दौड़ जाओ।

ख़ोजी—हुज़ूर, मैं तो बूढ़ा हो गया और रही-सही सकत अफ़ीम ने ले ली। टाँघन है बला का शरीर। कहीं फेंक-फाक दे, हाथ-पाँव टूटें, तो दीन-दुनिया, दोनों से जाऊँ। आज़ाद ख़ुद भी गये और हम सबको भी बला में डाल गये।

इधर चाबुक-सवार ने पटकनी खायी उधर लौंडों ने तालियाँ बजायीं। मगर शह-सवार ने गर्द झाड़ी, एक दूसरा कुम्मैत घोड़ा कसा और कड़कड़ा दिया। हवा से बातें करते जा रहे हैं। बगिया में पहुँचे, तो देखा, साँड़िनी की काकरेज़ी झूल झलक रही है और ऊँटनी गरदन झुकाये चौतरफ़ा मटक रही है। जा कर आज़ाद के गले से लिपट गये।

आज़ाद—कहिए, नवाब के यहाँ तो ख़ैरियत है?

सवार—जी हाँ, ख़ैर-सल्लाह के ढेर हैं। मगर आपकी राह देखते-देखते आँखें पथरा गयीं। ओ मियाँ, कुछ और भी सुना? उस बटेर की क़ब्र बनायी गयी है। सामने जो बेल-बूटों से सजा हुआ मक़बरा दिखायी देता है, वह उसी का है।

आज़ाद—यह कहिए, यार लोगों ने कब्र भी बनवा दी! वल्लाह, क्या-क्या फ़िक़रेबाज़ हैं।

सवार—बस, तुम्हारी ही कसर थी। कहो, हमने सुना, खूब गुलछर्रे उड़ाये। चलो, पर अब नवाब ने याद किया है।

आज़ाद—ऐं, उन्हें हमारे आने की कहाँ से ख़बर हो गयी ?

सवार—अजी, अब यह सारी दास्तान राह में सुना देंगे।

आज़ाद—अच्छा, तो पहले आप हमारा खत नवाब के पास ले जायँ। फिर हम शान के साथ चलेंगे।

यह कह कर आज़ाद ने खत लिखा—

'आज क़लम की बाँछे खिली जाती हैं; क्योंकि मियाँ सफ़शिकन की सवारी आती है। हुजूर के नाम की क़सम, इधर पाताल तक और उधर सातवें आसमान तक हो आया, तब जाके खोज पाया। शाह जी साहब रोज ढाढ़ें मार-मार कर रोते हैं। कल मैंने बड़ी ख़ुशामद की और आपकी याद दिलायी, तो ठंडी आह खींच कर रह गये। बड़ी-बड़ी दलीलें छाँटते थे। पहले फ़रमाया—दरों बज्म रह नेस्त बेगाना रा, मैंने छूटते ही जवाब दिया—कि परवानगी दाद परवाना रा।

'खिल-खिला कर हँस पड़े, पीठ ठोंकी और फ़रमाया—शाबाश बेटे, नवाब साहब की सोहबत में तुम बहुत बर्क़ हो गये। पूरे दो हफ़्ते तक मुझसे रोज़ बहस रही। आख़िर मैंने कहा—आप चलिए, नहीं मैं ज़हर खा कर मर जाऊँगा। मुझे समझाया कि ज़िंदगी बड़ी न्यामत है। ख़ैर, तुम्हारी ख़ातिर से चलता हूँ। लेकिन एक शर्त यह है कि जब मैं वहाँ पहुँचूँ, तो नवाब के सामने खोजी पर बीस जूते पड़ें। मैंने क़ौल दिया, तब कहीं आये।'

सवार यह खत ले कर हवा की तरह उड़ता हुआ नवाब साहब के यहाँ पहुँचा।

नवाब—कहो, बेटा कि बेटी ? जल्दी बोलो। यहाँ पेट में चूहे कूद रहे हैं!

सावार—हुजूर, गुलाम ने राह में दम लिया हो, तो जरबाना दूँ।

खोजी – कितने बेतुके हो मियाँ! 'कहें खेत की, सुन खलिहान की।' भला अपनी कारगुज़ारी जताने का यह कौन मौक़ा है ? मारे मशीखत के दुबले हुए जाते हैं!

सवार ने आज़ाद का खत दिया। मुंशी जी पढ़ने के लिए बुलाये गये। खोजी घबराये कि आज़ाद ने यह कब की कसर ली। बोले—हुजूर, यह मियाँ आज़ाद की शरारत है। शाह साहब ने यह शर्त कभी न की होगी। बंदे से तो कभी गुस्ताखी नहीं हुई।

नवाब— ख़ैर, आने तो दो। क्यों भाई मीर साहब, रम्माल ने तो बयान किया था कि सफ़शिकन के दुश्मन जन्नत में दाखिल हुए। यह मियाँ आज़ाद को कहाँ से मिल गये ?

मीर साहब—हुजूर, खुदा का भेद कौन जान सकता है ?

भडुरी—मेरा प्रश्न कैसा ठीक निकला जो है सो, मानों निशाने पर तीर खट से बैठ गया।

इतने में अंदर छोटी बेगम को ख़बर हुई। बोलीं—इनका जैसा पोंगा आदमी खुदाई भर में न होगा। ज़री-सा तो बटेर और पाजियों ने उसका मक़बरा बनवा दिया। रोज़ कहाँ तक बकूँ।

लौंडी—बीबी, बुरा मानो या भला, तुम्हें वे राहें ही नहीं मालूम कि मियाँ क़ाबू में आ जायँ।

बेगम—मेरी जूती की नोक को क्या ग़रज़ पड़ी है कि उनके बीच में बोले। मैं तो आप ही डरा करती हूँ कि कोई मुझी पर तूफ़ान न बाँध दे!

उधर नवाब ने हुक्म दिया कि सफ़शिकन की सवारी धूम से निकले। इतना इशारा पाना था कि ख़ोजी और मीरसाहब लगे जुलूस का इन्तज़ाम करने। छोटी बेगम कोठे पर खड़ी-खड़ी ये तैयारियाँ देख रही थीं और दिल में हँस रही थीं। उस वक़्त कोई ख़ोजी को देखता, दिमाग़ नहीं मिलते थे। इसको डाँट, उसको डपट, किसी पर धौल जमायी, किसी के चाँटा लगाया; इसको पकड़ लाओ, उसको मारो। कभी मसालची को गालियाँ दीं, कभी पंशाख़ेवाले पर बिगड़ पड़े। आगे-आगे निशान का हाथी था। हरी-हरी झूल पड़ी हुई। मस्तक पर सेंदुर से गुल-बूटे बने हुए। इसके बाद हिंदोस्तानी बाजा कक्कड़-झय्यम! इसके पीछे फूलों के तख्त—चमेली खिला ही चाहती है, कलियाँ चिटकने ही को हैं। चंडूबाज़ों के तख्त ने तो कमाल कर दिया। दो-चार पीनक में हैं, दस-पाँच ऊँघे पड़े हुए। कोई चंडूबाज़ाना ठाट से पौंड़ा छील रहा है। एक गँड़ेरी चूस रहा है। शिकार का वह समा बाँधा कि वाह जी वाह। एक शिकारी बंदूक छतियाये, घुटना टेके, आँख दबाये निशाना लगा रहा है। बस, दाँय की आवाज आया ही चाहती है। हिरन चौकड़ियाँ भरते जाते हैं। इसके बाद अँगरेजी बाजा। इसके बाद घोड़ों की कतार—कुम्मैत, कुछ सुरंग, नुकरा, सब्ज़ा, अरबी, तुर्की, वैलर छम-छम करते जा रहे हैं। घोड़े दुलहिन बने हुए थे। इसके बाद फिर अरगन बाजा; फिर तामदान, पालकी, नालकी, सुखपाल। इसके बाद परियों के तख्त एक से एक बढ़ कर। सब के पीछे रोशनचौकी वाले थे। रोशनी का इंतज़ाम भी चौकस था। पंशाख़े और लालटेनें झक-झक कर रही थीं। इस ठाट से जुलूस निकला। सारा शहर यह बरात देखने को फटा पड़ता था। लोग चक्कर में थे कि अच्छी बरात है, दूल्हे का पता ही नहीं। बरात क्या, गोरख-धंधा है।

जब जुलूस बग़िया में पहुँचा, तो आज़ाद हाथी पर सवार होकर सफ़शिकन को काबुक में बिठाये हुए चले।

ख़ोजी—मसल मशहूर है—'सौ बरस के बाद घूरे के भी दिन बहुरते हैं।' हमारे दिन आज बहुरे कि आप आये और शाह जी को लाये। नवाब के यहाँ सन्नाटा पड़ा हुआ था। सफ़शिकन के ग़म में सब पर मुर्दनी छायी हुई थी। बस, लोग यही कहते थे कि आज़ाद साँड़नी ले कर लंबे हुए। एक मैं ही तुम्हारी हिमायत किया करता था।

मीर साहब—जी हाँ, हम भी आप ही की तरफ़ से लड़ते थे, हम और यह, दोनों।

आज़ाद—भई, कुछ न पूछो। ख़ुदा जाने, किन-किन जंगलों की ख़ाक छानी, तब कहीं यह मिले।

ख़ोजी—यहाँ लोग ग़प उड़ा रहे थे। किसी ने कहा—भाँड़ों के यहाँ नौकरी कर ली। कोई तूफ़ान बाँधता था कि किसी भठियारी के घर पड़ गये। मगर मैं यही कहे जाता था कि वह शरीफ़ आदमी हैं। इतनी बेहयाई कभी न करेंगे।

ख़ोजी और मीर साहब, दोनों आज़ाद को मिलाना चाहते थे, मगर वह एक ही

उस्ताद। समझ गये कि अब नवाब के यहाँ हमारी भी तूती बोलेगी, तभी ये सब हमारी ख़ुशामद कर रहे हैं। बोले—अजी, रात जाती है या आती है ? अब देर क्यों कर रहे हो ? पंशाखे चढ़ाओ। घोड़े चलाओ। जब जुलूस तैयार हुआ, तो आज़ाद एक हाथी पर जा डटे। बटेर की काबुक को आगे रख लिया। खोजी और मीर साहब को पीछे बिठाया और जुलूस चला। चौक में तो पहले ही से हुल्लड़ था कि नवाबवाला बटेर बड़ी शान से आ रहा है। लाखों आदमी चौक में तमाशा देखने को डटे हुए थे, छतें फटी पड़ती थीं। बाजे की आवाज़ जो कानों में पड़ी, तो तमाशाई लोग उमड़ पड़े। निशान का हाथी झंडे का फुरेरा उड़ाता सामने आया। लेकिन ज्यों ही चौक में पहुँचा, वैसे ही दीवानी के दो मज़कूरियों ने डाँट कर कहा—हाथी रोक ले। आज़ाद के नाम वारंट आया है।

लोगों के होश उड़ गये। फ़ीलबान ने जो देखा कि सरकारी आदमी लाल-लाल पगिया बाँधे, काली-काली वरदी डाटे, खाकी पतलून पहने, चपरास लटकाये हाथी रोके खड़े हैं, तो सिटपिटा गया और हाथी को जिधर उन्होंने कहा उधर ही फेर दिया। जुलूस में हुल्लड़ मच गया। कोई तख्त लिये भागा जाता है, कोई झंडे लिये दबका फिरता है। घोड़े थान पर पहुँचे। तामदान और पालकियों को छोड़ कर कहार अड्डे पर हो रहे। बाजे-वाले गलियों में घुस गये।

आज़ाद और खोजी मजकूरियों के साथ चले, तो शहर के बाहर जा पहुँचे। एका-एक हाथी जो गरजा, तो खोजी और मीर साहब पीनक से चौंक पड़े।

खोजी—एँ, पंशाखे चढ़ाओ, पंशाखे ! अबे, यह क्या अंधेर मचा रखा है ! जरी यों ही आँख झपक गयी, तो सारी की-कराई मिहनत खाक में मिला दी। अब मैं उतर कर कोड़े फटकारूँगा, तब मानेंगे। लातों के आदमी कहीं बातों से मानते हैं !

मीर साहब—हैं, हैं ! ओ फ़ीलबान ! यह हाथी क्या आतशबाजी से भड़कता है ? बढ़ा ले चलो। मील-मील, धत-धत। अरे भई खोजी, यह किस मैदान में आ निकले ? आख़िर यह माजरा क्या है भाई ?

खोजी—पंशाखे चढ़ाओ, पंशाखे। और इन बाजेवालों को क्या साँप सूँघ गया है ? ज़रा ज़ोर-ज़ोर छेड़े जाओ। अब तो बिहाग का वक़्त है, बिहाग का।

मीर साहब—अजी, आँखें तो खोलिए, रोशनी का चिराग़ गुल हो गया। मुसीबत में आ फँसे। आप वही बेवक़्त की शहनाई बजा रहे हैं। इस जंगल में आपको बिहाग की धुन समायी है।

खोजी—पंशाखे चढ़ाओ, पंशाखे। नहीं, मैं कच्चा पैसा तो दूँगा नहीं। झप से चढ़ाना तो पंशाखे। शाबाश है बेटा !

मीर साहब तो जले-भुने बैठे ही थे; खोजी ने जब कई बार पंशाखों की रट लगायी तो वह झल्ला उठे। खोजी को हाथी पर से नीचे ढकेल ही तो दिया। अरा-रा-रा धम। कौन गिरा ? जरी टोह तो लेना, कौन गिरा ?

आज़ाद—तुम गिरे, तुम। आप ही तो लुढ़के हैं, टोह क्या लें ?

ख़ोजी—अरे, मैं ! यह तो कहिए, हड्डी-पसली बच गयी ? यारो, जरी देखना तो, हमारा सिर बचा या नहीं ?

मज़कूरी—बचा है, बचा। नाहीं फूट। पहिरि लिहिन सुथना, और चले फ़ारसी छाँटे। ई बोझ उठाव।

ख़ोजी—हौंय-हौंय, कोई मज़दूरा समझा है ! शरीफ़ और पाजी को नहीं पहचानता ? ले, अब उतारता है बोझ, या नाले में फेक दूँ ? ओ गीदी ! लाना तो मेरी क़रौली। क्या मैं गधा हूँ ?

मीर साहब—गधे नहीं, तो और हो कौन ?

मज़कूरी—तैं को हस रे? अरे तैं को हस ? उतर हाथी पर से। उतरत है कि हम आबन फिर, तैं अस न मनि है।

मीर साहब—कहता किससे है ? कुछ बेधा तो नहीं है ? कुछ नाबिर हैं, हम, लो आये।

मज़कूरी—अच्छा, तो यह बोझ उठा। थरिया-लोटिया रख मूड़े पर और अगुवा।

मीर साहब ने नीचे उतर कर देखा, तो सरकारी प्यादा वरदी डाटे खड़ा है। लगे थर-थर काँपने। चुपके से बोझ उठाया और मचल-मचल कर चलने लगे। दोनों मज़-कूरी हाथी पर जा बैठे। ख़ोजी और मीर साहब, दोनों लदे-फँदे गिरते-पड़ते जाने लगे।

ख़ोजी—वाह री क़िस्मत। क्यों जी मीर साहब, हम तो खुदा की याद में थे, तुमको क्या हुआ था ?

मीर साहब—जहाँ आप थे, वहीं मैं भी था। यह सारी शरारत आज़ाद की है।

आज़ाद—जरी चोंच सम्हाले हुए, नहीं मैं उतरता हूँ।

चलते-चलत तड़का हो गया। ख़ोजी बोले—लो भाई, हमारा तो भोर ही हो गया। अब जो बोझ उठा कर ले चले, उसकी सत्तर पुश्त पर लानत। यह कह कर बोझ फेक दिया। जब ज़रा दिन चढ़ा, तो गोमती के किनारे पहुँचे। एक मज़कूरी ने कहा—ओ फ़ीलबान, हाथी रोक दे, नहाय लेई।

फ़ीलबान—अरे, तो नहा लेना, कैसे गवँरदल हो ?

आज़ाद—कहो ख़ोजी, नहाओगे ?

ख़ोजी—यों ही न गला घोंट डालो !

नदी के पार पहुँचे, तो चंडूबाज़ की सूरत नज़र पड़ी।

चंडूबाज़—बड़े भाई, सलाम। कहो, ख़ैर सल्लाह ? आँखें तुमको ढूँढ़ती थीं, देखने को तरस गये। अब कहो, क्या इरादे हैं ? अलारक्खी ने यह ख़त दिया है, पढ़कर चुपके से ज़वाब लिख दो।

आज़ाद ने ख़त खोला और पढ़ा—

'क्यों जी, इसी मुँह से कहते थे कि तुमसे ब्याह करूँगा ? तुम तो चकमा देकर सिधारे और यहाँ दिल कराहा करता है। नहा धोकर क़ुरानशरीफ़ पर हाथ धरो कि ब्याह का वादा नहीं किया था ? क्यों नाहक़ इंसाफ़ का गला कुंद छुरी से रेतते हो ? इस ख़त का जवाब लिखना, नहीं मैं अपनी जान दे दूँगी।'

आज़ाद ने जवाब लिखा—

'सुनो बीबी, हम कोई उटाईगीरे नहीं हैं। हम ठहरे शरीफ़, तुम हो भठियारी। भला, फिर हमसे क्योंकर बने। अब उस खयाल को दिल से निकाल दो। तुम्हारे कारन मज़कूरियों की क़ैद में हूँ। तुम्हें मुँह न लगाता, तो इतना ज़लील क्यों होता?'

चंडूबाज़ तो खत ले कर रवाना हुए, उधर का क़िस्सा सुनिए। नवाब झूम-झूम कर बग़ीचे में टहल रहे थे, आँखें फाड़-फाड़ कर देखते थे कि जुलूस अब आया, और अब आया। एकाएक चोबदार ने आ कर कहा—खुदावंद, लुट गये! लुट गये! वह देखो साहब तुम्हारे, लुट गये।

नवाब—अरे कुछ मुँह से कहेगा भी, क्या ग़ज़ब हो गया?

चोबदार—खुदाबंद, बरात को उटाईगीरों ने लूट लिया!

नवाब—बरात? बरात किसकी? कहीं शाह जी की सवारी से तो मतलब नहीं है? उफ्, हाथों के तोते उड़ गये।

चोबदार—वह देखो साहब तुम्हारे, बारात चली आ रही थी। तमाशाई इतने जमा थे कि छतें फटी पड़ती थीं। देखो साहब तुम्हारे, जैसे बादशाह की सवारी हो। मुदा जैसे ही चौक में पहुँचे कि देखो साहब तुम्हारे, दो चपरासियों ने हाथी को फेर दिया। बस साहब तुम्हारे, सारी बरात तितर-बितर हो गयी। कहाँ तो बाजे बज रहे थे, कहाँ साहब तुम्हारे, सन्नाटा छा गया।

नवाब—भला शाह जी कहाँ है?

चोबदार—हुजूर, शाह जी को लिये फिरते हैं। यहाँ देखो साहब तुम्हारे—

नवाब—कोई है, इधर आना, इसके कल्ले पर खड़े हो, जितनी बार इसके मुँह से 'वह देखो साहब तुम्हारे' निकले, उतने जूते इस पर पड़ें। गधा एक बात कहता है, तो तीन सौ साठ दफ़े 'ओ देखो साहब तुम्हारे।'

चाबुक-सवार - हुजूर, इस वक़्त ग़ुस्से का मौक़ा नहीं, कोई ऐसी फ़िक्र कीजिए कि शाह जी तो छूट आयें।

नवाब—एँ, क्या वह भी गिरफ़्तार हो गये?

सवार—जी, आज़ाद, खोजी, हाथी, सब के सब पकड़ लिये गये?

नवाब—तो यह कहिए, बेड़े का बेड़ा गया है। हमें यह क्या मालूम था भला, नहीं तो एक गारद साथ कर देते। आखिर, कुछ मालूम भी हुआ कि यह धर-पकड़ कैसी थी? सच तो यों है कि इस वक़्त मेरे हाथ-पाँव फूल गये। रुपये हमसे लो, और दौड़-धूप तुम लोग करो।

मुसाहबों की बन आयी। अब क्या पूछना है! आपस में हँड़िया पकने लगी। वल्लाह, ऐसा मौक़ा फिर तो हाथ आयेगा नहीं। जो कुछ लेना हो, ले लो, और उम्र भर चैन करो। इस वक़्त यह बौखलाया हुआ है। जो कुछ कहोगे, बेधड़क दे निकलेगा। लेकिन, एक काम करो, दस-पाँच आदमी मिल जुल कर बातें बनाओ। एक आदमी के किये कुछ न होगा। कहीं भड़क गया, तो ग़ज़ब ही हो जायगा। खुदा करे रोज़ इसी

तरह वारंट जारी रहे। मगर इतना याद रखिएगा कि कहीं अंदर ख़बर हुई, तो बेगम साहब छछूँदर की तरह नाचेंगी। फिर करते-धरते कुछ न बन पड़ेगा।

मुबारकक़दम दरवाज़े के पास खड़ी सब सुन रही थी। लपक कर गयी और छोटी बेगम को बुला लायी। जरी जल्दी-जल्दी क़दम उठाइए, ये सब जाने क्या वाही-तबाही बक रहे हैं। मुँह झुलस दे पकड़ के। बेगम साहबा दबे पाँव गयीं, तो सुन कर मारे ग़ुस्से के लाल हो गयीं और नवाब को अंदर बुलाया।

मुबारकक़दम—ये हुज़ूर के मुसाहब, अल्लाह जनता है, एक ही अड़ीमार हैं, जिनके काटे का मंतर ही नहीं। जो है, वह झूठों का सरदार। मगर हुज़ूर उनको क्या जाने क्या समझते हैं। पछुआ हवा चलती, तो ठंडा पानी पीते, अब दिन भर शोरे का झला पानी मिलता है पीने को, और ख़ुदा ने न्यामत खाने को दी। फिर उन्हें दूर की न सूझे, तो किसे सूझे।

बेगम—ऐसे ही झूठे ख़ुशामदियों ने तो लखनऊ का सत्यानाश कर दिया।

नवाब—यह आज क्या है, क्या ?

बेगम—है क्या ? तुम्हारे मुसाहब मुँह पर तो तुम्हारी झूठी तारीफ़ें करते हैं और पीठ पीछे तुम्हें गालियाँ सुनाते हैं। इन सबको दुत्कार क्यों नहीं देते ?

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर मज़कूरियों ने आज़ाद को एक बाग़ में उतारा।

ख़ोजी—मियाँ फ़ीलबान, जरी ज़ीना लगा देना।

फ़ीलबान—अब आपके लिए ज़ीना बनवाऊँ, ऐसे तो ख़ूबसूरत भी नहीं हैं आप ?

मीर साहब—ज़ीना क्या ढूँढ़ते हो, हाथी पर से कूदना कौन सी बड़ी बात है।

यह कह कर मीर साहब बहुत ही अकड़ कर दुम की तरफ़ से कूदे, तो सिर नीचे और पाँव ऊपर। रोक रोक, हत् तेरे फ़ीलबान की ! सच है, गाड़ीबान, शुतुरबान, कोचबान जितने बान है, सब शरीर। लाख बचे, मगर औंधे हो गये। हमारा कल्ला ही जानता है। खट से बोला। वह तो कहिए, मैं ही ऐसा बेहया हूँ कि बातें करता हूँ, दूसरा तो पानी न माँगता।

ख़ोजी खिलखिला कर हँस पड़े। अब कहिए, हमने जो ज़ीना माँगा, तो हमें बनाने लगे।

मीर साहब—मियाँ, उतरते हो कि दूँ धक्का।

ख़ोजी बेचारे जान पर खेल कर जैसे ही उतरने को थे कि हाथी उठ खड़ा हुआ। या अली, या अली, बचाइयो, ख़ुदा, मैं बड़ा गुनहगार हूँ।

इतना कह चुके थे कि अररर-धम, ज़मीन पर आ कर ढेर हो गये।

मीर साहब ने कहा—शाबाश मेरे पट्ठे, ले झपाके से उठ तो जा।

ख़ोजी—यहाँ हड्डी-पसली का पता नहीं, आप फ़रमाते हैं, उठ तो जा ! कितने बेदर्द हो !

दो आदमी वहीं बैठे कुछ इधर-उधर की बातें कर रहे थे। ख़ोजी और मीर साहब तो लकड़ियाँ खोजने लगे कि और नहीं तो सुलफ़ा ही उड़े और आज़ाद इन दोनों अजनबियों की बातें सुनने लगे—

एक—भई, आख़िर मुँह फुलाये क्यों बैठे हो? क्या मुहर्रम के दिनों में पैदा हुए थे?

दूसरा—हाँ यार, क्यों न कहोगे। यहाँ जान पर बनी है, आप मुहर्रम लिये फिरते हैं। हमने बी अलारक्खी से कई रुपये महीने भर के वादे पर लिये थे। उसको दो साल होने आये। अब वह कहती है, या हमारे रुपये दो, या हमारे मुकदमें में गवाह हो जाओ। नहीं तो हम दाग़ देंगे और बड़ा घर दिखायेंगे। वहाँ चक्की पीसनी होगी। सोचते हैं, गवाही दें, तो किस बिरते पर। मियाँ आज़ाद की तो सूरत ही नहीं देखी। और न दें, तो वह नालिश जड़े देती हैं। बस, यही ठान ली है कि आज शाम को झप से चल खड़े हों। रेल को ख़ुदा सलामत रखे कि भागूँ तो पता भी न मिले।

दूसरा—अरे मियाँ, वह तरकीब बताऊँ, जिसमें 'साँप मरे न लाठी टूटे।' तुम मियाँ आज़ाद से मिल जाओ; उधर अलारक्खी से भी मिले रहो। गवाही में गोल-मोल बातें कहो और मूँछों पर ताव देते हुए अदालत से आओ। बचा, तुम हो किस भरोसे पर। चार-चार गंडे में तुमको गवाह मिलते हैं, जो तड़ से झूठा क़ुरान या झूठी गंगा उठा लें। हमको कोई दो ही रुपये दे, क़ुरान उठवा ले। जो चाहे कहवा ले। फिर वाही हो, ख़ासे दस मिलते हैं, दस! तुम्हें झूठ-सच से मतलब? सच वही है, जिसमें कुछ हाथ लगे। भई, यह तो कलजुग है। इसमें सच बोलना हराम है। और जो कुत्ते ने काटा हो, तो सच ही बोलिए।

पहला—हज़रत सुनिए, सच फिर सच है, और झूठ फिर झूठ। इतना याद रखिएगा।

दूसरा—अबे जा, लाया वहाँ से झूठ फिर झूठ है। अरे नादान, इस ज़माने में झूट ही सच है। एक ज़रा सा झूठ बोलने में दस चेहरेशाही आये गये होते हैं। ज़रा ज़बान हिला दी, और दस रुपये हज़म। दस रुपये कुछ थोड़े नहीं होते। हमें किसी से तुम दो गंडे ही दिलवा दो। देखो, हलफ़ उठा लेते हैं या नहीं।

आज़ाद—क्यों भई, और जो अपनी बात से फिर जाय, तो फिर कैसी हो? औरत की बात का एतबार क्या? बेहतर है कि अलारक्खी से स्टाम्प के काग़ज़ पर लिखवा लो।

पहला—वल्लाह, क्या सूझी है।

दूसरा—कैसा स्टाम्प जी? हम क्या जानें क्या चीज़ है, बातें कर रहे हैं, आप आये वहाँ से स्टाम्प पर लिखवा लो! क्या हम कोई चोर हैं!

दोनों मज़कूरियों ने उपले जलाये और खाना पकाने लगे। आज़ाद ने देखा, भागने का अच्छा मौक़ा है। दोनों की आँख बचा कर चल दिये, चट से स्टेशन पर जा कर टिकट ले लिया और एक दर्जे में जा बैठे। दो-तीन स्टेशनों के बाद रेल एक बड़े स्टेशन पर ठहरी। मियाँ आज़ाद ने असबाब को बग्घी पर लादा और चल खड़े हुए। खट से सराय में दाख़िल। एक कोठरी में जा डटे और बिछौना बिछा, ख़ूब, लहरा-लहरा कर गाने लगे—

वहशत अयाँ है ख़ाक से मुझ ख़ाकसार की,
भड़के हिरन भी सूँघके मिट्टी मज़ार की।

एकाएक एक शाह साहब फ़ालसई तहमत बाँधे, शरबती का केसरिया कुरता

२१

मियाँ आज़ाद रेल पर बैठ कर नाविल पढ़ रहे थे कि एक साहब ने पूछा— जनाब, दो-एक दम लगाइए, तो पेचवान हाज़िर है। वल्लाह, वह धुँआधार पिलाऊँ कि दिल फड़क उठे। मगर याद रखिए, दो दम से ज़्यादा की सनद नहीं। ऐसा न हो, आप भैंसिया-जोंक हो जायँ।

आज़ाद ने पीछे फिर कर देखा, तो एक बिगड़े-दिल मज़े से बैठे हुक़्क़ा पी रहे हैं। बोले, यह क्या अंधेर है भाई? आप रेल ही पर गुड़गुड़ाने लगे; और हुक़्क़ा भी नहीं, पेचवान। जो कहीं आग लग जाय, तो?

बिगड़े दिल—और जो रेल ही टकरा जाय, तो? आसमान ही फट पड़े, तो? इस 'तो' का तो जवाब ही नहीं है। ले, पीजिएगा, या बातें बनाइएगा?

आज़ाद—जी, मुझे इसका शौक़ नहीं है।

यह कह कर फिर नाविल पढ़ने लगे। थोड़ी देर के बाद एक स्टेशन पर रेल ठहरी, तो ख़रबूज़े और आम पटे हुए थे। खैंचियों की खैंचिया भरी रखी थीं। बोले—क्यों भई, स्टेशन है या आम की दूकान? या ख़रबूज़े की खान? आम-पुर है या ख़रबूज़ानगर?

एक मुसाफ़िर बोले—अजी हज़रत, नज़र न लगाइए। अब की फ़सल तो खा लेने दीजिए। इसी पर तो ज़िंदगी का दार-मदार है। खेत में बेल बढ़ी और यहाँ कच्चे घड़े की चढ़ी। आम बाज़ार में आये और ईं जानिब बौराये। आम और ख़रबूज़े पर उधार खाये बैठे हैं। कपड़े बेच खायँ, बरतन नख़्ख़ास में पटील लायँ, बदन पर लत्ता न रहे, चूल्हे पर तवा न रहे, उधार लें, सुथना तक गिरवी रखें, बगड़ा करें, झगड़ा करें, मगर ख़रबूज़े पर छुरी ज़रूर चले। तड़का हुआ, चाकू हाथ में लिया और ख़रबूज़े की टोह में चला। बाज़ार है कि महक रहा है, ख़रीदार हैं कि टूटे पड़ते हैं। रसीली खटकिन जवानी की उमंग में अच्छे-अच्छों को डाँट बताती है। मियाँ, अलग रहो, खैंची पर न गिरे पड़ो। बस, दूर ही से भाव-ताव करो। लेना एक न देना दो, मुफ़्त का झंझट। ईं जानिब ने एक तराशा, दूसरा तराशा, तीसरा तराशा, ख़ूब चखे। आँख चूकी, तो दो-चार फाँकें मुँह में दबायीं और चलते-फिरते नज़र आये। आदमी क्या, बंदर हो गये। उधर ख़रबूज़े गये और आम की फ़सल आयी, मुँह-माँगी मुराद पायी। जिधर देखिए, ढेर के ढेर चुने हैं। यहाँ सनक सवार हो गयी। देखा और झप से उठाया; तराशा और खाया। माल-असबाब के कूड़े किये और बेगिनती लिये। खाने बैठे, तो दो दाढ़ी खा गये चार दाढ़ी खा गये।

आज़ाद—यह दाढ़ी खाने के क्या माने?

मुसाफ़िर—अजी हज़रत, आम इतने खाये कि गुठली और छिलके दाढ़ी तक पहुँचे।

मुसाफ़िर वह डींग हाँक ही रहे थे कि रेल ठहरी और एक चपरासी ने आकर पूछा—फलाँ आदमी कहाँ है ?

आज़ाद—इस कमरे में इस नाम का कोई आदमी नहीं है।

मुसाफ़िर ने चपरासी की सूरत देखी; तो चादर से मुँह लपेट कर खिड़की की दूसरी तरफ झाँकने लगे। चपरासी दूसरे दर्जे में चला गया।

आज़ाद—उस्ताद, तुमने मुँह जो छिपाया, तो मुझे शक होता है कि कुछ दाल में काला जरूर है। भई, और किसी से न कहो, यारों से तो न छिपाओ।

मुसाफ़िर—मुँह क्यों छिपाऊँ जनाब, क्या किसी का क़र्ज़ खाया है, या माल मारा है, या कहीं ख़ून करके आये हैं ?

आज़ाद—आप बहुत तीखे हुजिएगा, तो धरवा ही दूँगा। ले बस, कच्चा चिट्ठा कह सुनाओ, वरना मैं पुकारता हूँ फिर।

मुसाफ़िर—अरे, नहीं-नहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना। साफ़-साफ़ बता दें ? हमने अबकी फ़सल में ख़रबूजे और आम ख़ूब छक कर चखे, मगर टका क़सम को पास नहीं। पूछो, लायें किसके घर से ? यहाँ पहले तो क़र्ज़ लिया, फिर एक दोस्त का मकान अपने नाम से पटील डाला। अब नालिश हुई है, सो हम भागे जाते हैं।

आजाद—ऐसे आम खाने पर लानत ! कैसे नादान हो ?

मुसाफ़िर—देखिए, नादान-वादान न बनाइएगा। वरना बुरी ठहरेगी !

आज़ाद—अच्छा बुलाऊँ चपरासी को ?

मुसाफ़िर—जनाब, दस गालियाँ दे लीलिए, मगर जान तो छोड़ दीजिए।

इतने में एक मुसाफ़िर ने कई दर्जे फाँदे, यह उचका, यह आया, यह झपटा और धम से मियाँ आज़ाद के पास हो रहा।

मुसाफ़िर—ग़रीबपरवर !

आज़ाद—किससे कहते हो ? हम ग़रीबपरवर नहीं अमीरपरवर हैं; ग़रीबपरवर हमारे दुश्मन हों।

मुसाफ़िर—अच्छा साहब, आप अमीर के बाप-परवर, दादा-परवर सही। हमारा आपसे एक सवाल है।

आज़ाद—सवाल स्कूल के लड़कों से कीजिए, या वकालत के उम्मेदवारों से।

मुसाफ़िर—दाता, ज़रा सुनो तो।

आज़ाद—दाता भंडारी को कहते हैं। दाता कहीं और रहते होंगे।

मुसाफ़िर—एक रुपया दिलवाओ, तो हज़ार दुआएँ दूँ।

आज़ाद—दुआ के तो हम क़ायल ही नहीं।

मुसाफ़िर—तो फिर गालियाँ सुनाऊँ ?

आज़ाद—गालियाँ दो, तो बत्तीसी पेट में हो।

मुसाफ़िर—अरे ग़ज़ब, लो स्टेशन क़रीब आ गया। अब बेइज्ज़त होंगे।

आजाद—यह क्यों !

मुसाफ़िर—क्यों क्या, टिकट पास नहीं, घर से दो रुपये ले कर चले थे, रास्ते में लँगड़े आम दिखायी दिये। राल टपक पड़ी। आव देखा न ताव, दो रुपये टेंट से निकाले और आम पर छुरी तेज़ की। अब गिरह में कौड़ी नहीं, 'पास न लत्ता, पान खायँ अलबत्ता।'

आज़ाद—वाह रे पेटू! भला यहाँ तक आये क्योंकर?

मुसाफ़िर—इसकी न पूछिए। यहाँ सैकड़ों ही अलसेटें याद हैं।

इतने में रेल स्टेशन पर आ पहुँची। टिकट-बाबू की काली-काली टोपी और सफ़ेद चमकती हुई खोपड़ी नज़र आयी। टिकट! टिकट! टिकट निकालो। मियाँ आज़ाद तो टिकट देकर लंबे हुए; बाबू ने इनसे टिकट माँगा, तो लगे बग़लें झाँकने। वेल, तुम्हारा टिकट कहाँ?

मुसाफ़िर—बाबू जी, हम पर तो अब की साल टिकस-विकस नहीं बँधा।

बाबू—यू फूल! तुम बेटिकट के चलता है उल्लू!

मुसाफ़िर—क्या आदमी भी उल्लू होते हैं? इधर तो देखने में नहीं आया, शायद आपके बंगाल में होता हो।

टिकट-बाबू ने कानिस्टिबिल को बुला कर इनको हवालात भिजवाया। आम खाने का मज़ा मिला, मार और गालियाँ खायीं, सो घाते में।

घटाटोप अँधेरा छाया है, काला मतवाला बादल झूम-झूम कर पूरब की तरफ़ से आया है। वह घनेरी घटा कि हाथ मारा न सूझे। अँधेरे ने कुछ ऐसी हवा बाँधी कि चाँद का चिराग़ गुल हो गया। यह रात है कि सियहकारों का दिल? हर एक आदमी जरीब टेकता चल रहा है, मगर कलेजा दहल रहा है कि कहीं ठोकर न खायँ, कहीं मुँह के बल ज़मीन पर न लुढ़क जायँ। मियाँ आज़ाद स्टेशन से चले, तो सराय का पता पूछने लगे। एकाएक किसी आदमी से सिर टकरा गया। वह बोला—अंधा हुआ है क्या? रास्ता बचा के चल, पतंग रखे हुए हैं, कहीं फट न जायँ।

आज़ाद—ऐं, रास्ते में पतंग कैसे? अच्छी बेपर की उड़ायी।

पतंगबाज़—भई वल्लाह, क्या-क्या बिगड़े-दिलों से पाला पड़ जाता है! हम तो नरमी से कहते हैं कि मियाँ जरी दबा कर जाओ, और आप तीखे हुए जाते हैं।

आज़ाद—अरे नादान, यहाँ हाथ-मारा सूझता ही नहीं, पतंग किस भकुए को सूझेंगे।

पतंगबाज़—क्या रतौंधी आती है?

आज़ाद—क्या पतंग बेचने जा रहे हो?

पतंगबाज़—अजी, पतंग बेचें हमारे दुश्मन। हम ख़ुद घर के अमीर हैं। यहाँ से चार कोस पर एक क़स्बा है, वहाँ के रईस हमारे लँगोटिये यार हैं! उनसे हमने पतंगों का मैदान बदा था। हम अपने यारों के साथ बारहदरी के कोठे पर थे और वह अपने दीवानखाने की छत पर। कोई सात बजे से इधर भी कनकव्वे छपके, उधर भी बढ़े। खूब लमडोरे लड़े। पाँच रुपये फ़ी पेच बदा था। यार, एक पतंग खूब लड़ा।

हमारा माँगदार बढ़ा था और उधर का गोल-दुपन्ना। दस-बारह मिनट दाँव घात के बाद पेच पड़ गये। पहले तो हमारे कन्ने नथ गये, हाथों के तोते उड़ गये; समझे, अब कटे और अब कटे; मगर वाह रे उस्ताद, ऐसे कन्ने छुड़ाये कि वाह जी वाह! फिर पेच लड़ गये। पंसेरियों डोर पिला दी, कनकव्वा आसमान से जा लगा। जो कोई दम और ठहरता तो वहीं जल-भुन कर खाक हो जाता। उतने में हमने गोता देकर एक भबका जो दिया, तो वह काटा। अब कोई कहता है कि हत्थे पर से उखड़ गया; कोई कहता है, डोर उलझ गयी थी। एक कनकव्वे से हमने कोई नौ दस काटे। मगर उनकी तरफ़ कोई उस्ताद आ गया—उसने खींचके वह हाथ दिखाये कि खुदा की पनाह! हाथ ही टूटें मरदूद के! छक्के छुड़ा दिये। कभी सड़-सड़ करता हुआ नीचे से खींच गया! कभी ऊपर से पतंग पर छाप बैठा। आखिर मैंने हिसाब जो लगाया, तो पचास रुपये के पेटे में आ गया। मगर यहाँ टका पास नहीं। हमने भी एक माल तक लिया है, घर के सोने के कड़े किसी के हाथ पटीलेंगे, कोई दस तोले के होंगे, चुपके से उड़ा दूँगा, किसी को कानों-कान खबर भी न होगी।

आज़ाद—आपके वालिद क्या पेशा करते हैं?

पतंगबाज़—ज़मींदार हैं। मगर मुझे ज़मींदारी से नफ़रत है! ज़मींदार की सूरत से नफ़रत है, इस पेशे के नाम से नफ़रत है! शरीफ़ आदमी और लट्ठ लिये हुए मेड़-मेड़ घूम रहे हैं। हमसे यह न होगा। हम कोई मज़दूरे तो हैं नहीं। यह गँवारों ही को मुबारक रहे।

आज़ाद—हुजूर ने तालीम कहाँ तक पायी है? आप तो लंदन के अजायबखाने में रखने लायक हैं।

पतंगबाज़—यहीं के तहसीली स्कूल में कुछ दिन तक घास छीली है।

आज़ाद—क्या घसियारा बनने का शौक़ चर्राया था!

पतंगबाज़—जनाब, कोई छह-सात बरस पढ़े; मगर गंडेदार पढ़ाई, एक दिन हाज़िर तो दस दिन नाग़ा। पहले दर्जे का इम्तिहान दिया, मगर लुढ़क गये। अब्बाजान ने कहा, अब हम तुम्हें नहीं पढ़ायेंगे। खैर, इस झंझट से छुट्टी पायी तो पेशकार साहब के लड़के से दोस्ती बढ़ायी। तब तक हम निरे जंगली ही थे। हद यह कि हुक्क़ा पीना तक नहीं जानते थे। तो वजह क्या? अच्छी सोहबत में कभी बैठे ही न थे। छोटे मिर्ज़ा बेचारे ने हमें हुक्क़ा पीना सिखाया। फिर तो उनके साथ चंडू के छींटे उड़ने लगे। पहले आप मुझे देखते तो कहते, क़ब्र में एक पाँव लटकाये बैठा है। बदन में गोश्त का नाम नहीं, हड्डी-हड्डी गिन लीजिए। जब से छोटे मिर्ज़ा की सोहबत में ताड़ी पीने लगा, तब से जरा हरा हूँ। पहले हम निरे गावदी ही थे। यह पतंग लड़ाना तो अब आया है। मगर अबकी पचास के पेटे में आ गये। छोटे मिर्ज़ा से हमने तदबीर पूछी, तो वल्लाह, तड़ से बतलाया कि जब बहन या भावज या बीबी की आँख चूके, तो कोई सोने की अदद साफ़ उड़ा दो। भई, जिला-स्कूल में पढ़ता, तो ऐसी अच्छी सोहबत न मिलती।

आज़ाद—वल्लाह, आप तो खराद पर चढ़ गये, 'सब गुन पूरे, तुम्हें कौन कहे लँडूरे !'

पतंगबाज़—आप यहाँ कहाँ ठहरेंगे ? चलिए, इस वक्त ग़रीबख़ाने ही पर खाना खाइए; सराय में तो तकलीफ़ होगी। हाँ, जो कोई और बात हो, तो क्या मुज़ायक़ा, (मुसकिरा कर) सच कहना उस्ताद, कुछ लसरका है ?

आजाद—मियाँ, यहाँ दिल ही नहीं है पास, मुहब्बत करेंगे क्या ! चलिए, आप ही के यहाँ मेहमान हों—यहाँ तो बेफ़िक्री के हाथ बिक गये हैं। मगर उस्ताद, इतना याद रहे कि बहुत तकलीफ़ न कीजिएगा।

पतंगबाज़—वल्लाह, यह तो वही मसल हुई कि बस, एक दस सेर का पुलाव तो बनवाइएगा, मगर तकल्लुफ़ न कीजिएगा ! मानता हूँ आपको।

आज़ाद और पतंगबाज़ इक्के पर बैठे। इक्का हवा से बातें करता चला, तो खट से मकान पर दाख़िल। अंदर से बाहर तक ख़बर हो गयी कि मँझले मियाँ आ गये। मियाँ आज़ाद और वह दोनों उतरे। इतने में एक लौंडी अन्दर से आकर बोली—चलिए, बड़े साहब ने आपको याद किया है।

पतंगबाज़—ऐ है, नाक में दम कर दिया, आते देर नहीं हुई और बुलाने लगे। चलो, आते हैं। आपके लिए हुक्क़ा भर लाओ। हज़रत, कहिए तो जरी वालिद से मिल आऊँ ? गाना-वाना सुनिए, तो बुलाऊँ किसी को ? इधर लौंडी अन्दर पहुँची, तो बड़े मियाँ से बोली—उनके पास तो उनके कोई दोस्त मसनद-तकिया लगाये बैठे हैं।

मियाँ—उनके दोस्तों की न कहो। शहर भर के बदमाश, चोर-मक्कार, झूठों के सरदार उनके लँगोटिये यार हैं। भलेमानस से मिलते-जुलते तो उन्हें देखा ही नहीं।

लौंडी—नहीं मियाँ, सकल सूरत से तो शरीफ़ भलेमानुस मालूम होते हैं।

खैर, रात को आज़ाद और मँझले मियाँ ने मीठी नींद के मज़े उठाये, सुबह को हवाली-मवाली जमा हुए।

एक—हुजूर, कल तो खूब-खूब पेंच लड़े, और हवा भी अच्छी थी।

पतंगबाज़—पेंच क्या लड़े, पचास के माथे गयी। खैर, इसका तो यहाँ ग़म नहीं, मगर किरकिरी बड़ी हुई।

दूसरा—वाह हुजूर, किरकिरी की एक ही कही। क़सम ख़ुदा की, वह लमडोरा पेंच निकाला कि देखनेवाले दंग रह गये। ज़माना भर यही कहता था कि भई, पेंच क्या काटा, कमाल किया। कुछ इनाम दिलवाइए, खुदाबंद ! आपके क़दमों की क़सम, आज शहर भर में उस पेंच की धूम है। चालीस-पचास रुपयों की भी कोई हक़ीक़त है !

शाम के वक़्त आज़ाद और मियाँ पतंगबाज़ बैठे गप-शप कर रहे थे कि एक मौलवी साहब लटपटी दस्तार खोपड़ी पर जमाये, कानी आँख को उसके नीचे छिपाये, दूसरी में बरेली का सुरमा लगाये कमरे में आये। उन्होंने अलेकसलेम के बाद जेब से एक इश्तिहार निकाल कर आज़ाद के हाथ में दिया। आज़ाद ने इश्तिहार पढ़ा, तो फड़क गये। एक मुशायरा होनेवाला था। दूर-दूर से शायर बुलाये गये थे। तरह का मिसरा था—

"हमसे उस शोख़ ने ऐयारी की"।

मौलवी साहब तो उलटे पाँव लंबे हुए, यहाँ मुशायरे की तारीख़ जो देखते हैं, तो इकतीस फ़रवरी लिखी हुई है। हैरत हुई कि फ़रवरी तो अट्ठाइस और कभी उनतीस ही दिन का महिना होता है, यह इकतीस फ़रवरी कौन सी तारीख है! बारे मालूम हुआ कि इसी वक़्त मुशायरा था। खैर, दोनों आदमी बड़े शौक़ से पता पूछते हुए गुलाबी बारहदरी में दाखिल हुए। वहाँ बड़ी रौनक़ थी। नई-नई वज़ा, नये-नये फ़ैशन के लोग जमा हैं। किसी का दिमाग़ ही नहीं मिलता; जिसे देखो, तानाशाह बना बैठा है, दुनिया की बादशाहत को जूती की नोक पर मारता है। शायरी के शौक़ीन उमड़े चले आते हैं। कहीं तिल रखने की जगह नहीं। जब रात भीगी और चाँदनी खूब निखरी, तो मुशायरा शुरू हुआ। शायरों ने चहकना शुरू किया। मजलिस के लोग एक-एक शेर पर इतना चीखे-चिल्लाये कि होंठ और गले सूख कर काँटा हो गये। ओहो हो-हो, आहा हा-हा, वाह-वाह सुभान अल्लाह के दौंगरे बरस रहे थे। शायर ने पूरा शेर पढ़ा भी नहीं कि यार लोग ले उड़े! वाह हज़रत, क्यों न हो! क़सम खुदा की! क़लम तोड़ दिया! वल्लाह, आज इस लखनऊ में आपका कोई सानी नहीं! एक शायर ने यह ग़ज़ल पढ़ी—

हमको देखा, तो वह हँस देते हैं;
आँख छिपती ही नहीं यारी की।

महफ़िल के लोगों ने पूरा शेर तो सुना नहीं, यारी को गाड़ी सुन लिया। गाड़ी की, वाह-वाह, क्या शेर फ़रमाया, गाड़ी की! अब जिसे देखिए, गुल मचा रहा है—गाड़ी की, गाड़ी की। मगर गुलगपाड़े में सुनता कौन है। शायर बेचारा चीखता है कि हज़रत, गाड़ी की नहीं, यारी की; पर यार लोग अपना ही राग अलापे जाते हैं। तब तो मियाँ आज़ाद ने झल्ला कर कहा—साहबो, अगाड़ी न पिछाड़ी, चौपहिया न पालकी-गाड़ी, खुदा के वास्ते पहले शेर तो सुन लो, फिर तारीफ़ के पुल बाँधो। गाड़ी की नहीं, यारी की। आँख छिपती ही नहीं यारी की।

दूसरे शायर ने यह शेर पढ़ा—

उम्मीद रोज़े-वस्ल थी किस बदनसीब को;
क़िस्मत उलट गयी मेरे रोज़े-सियाह की।

हाज़िरीन—निगाह की, सुभान-अल्लाह। निगाह की, हज़रत, यह आप हीं का हिस्सा है।

शायर—निगाह नहीं, रोज़े-सियाह। निगाह से तो यहाँ कुछ माने ही न निकलेंगे। यह कह कर उन्होंने फिर उसी शेर को पढ़ा और सियाह के लफ़्ज़ पर खूब ज़ोर दिया कि कोई साहब फिर निगाह न कह उठें।

आधी रात तक हू-हक़ मचता रहा। कान-पड़ी आवाज़ न सुनायी देती थी। पड़ोसियों की नींद हराम हो गयी। एक-एक शेर पढ़ने की चार-चार दफ़े फ़रमाइश हो रही है और बीस मरतबा उठा-बैठी, सलाम पर सलाम और आदाब पर आदाब; अच्छी

क़वायद हुई। लाला खुशवक़्तराय और मुंशी खुसंदराय तीन-तीन सौ शेरों की ग़ज़लें कह लाये थे, जिनका एक शेर भी दुरुस्त नहीं। एक बजे से पढ़ने बैठे, तो तीन बजा दिये। लोग कानों में उँगलियाँ दे रहे हैं, मगर वे किसी की नहीं सुनते

वहाँ से मियाँ आज़ाद और उनके दोस्त घर आये। तड़का हो गया था। आज़ाद तो थोड़ी देर सो कर उठ गये, मगर मियाँ पतंगबाज़ ने दस बजे तक की खबर ली।

आज़ाद—आज तो आप बड़े सबेरे उठे। अभी तो दस ही बजे हैं। भई, बड़े सोनेवाले हो!

पतंगबाज़—जनाब, तड़का तो मुशायरे ही में हो गया था। जब आदमी सुबह को सोयेगा, तो दस बजे से पहले क्या उठेगा। और, सच तो यों है कि अभी और सोने को जी चाहता है। कुछ मुशायरे के झगड़े का भी हाल सुना? आप तो कोई चार बजे सो रहे थे। हमने सारी दास्तान सुनी। बड़ी चख़ चल गयी। मौलवी बदर और मुंशी फ़िशार में तो लकड़ी चलते-चलते रह गयी। जो मियाँ रंगीन न हों, तो दोनों में जूती चल जाय।

आज़ाद—यह क्यों, किस बात पर?

पतंगबाज़—कुछ नहीं, यों ही। मैं तो समझा, अब लकड़ी चली।

आज़ाद—तो मुशायरा क्या पाली थी? पूछिए, शायरी को लकड़ी और बाँक से क्या वास्ता? क़लम का जोर दिखाना चाहिए कि हाथ का। किसी तरह बदर और फ़िशार में मिलाप करा दीजिए।

पतंगबाज़—ऐ तौबा। मिलाप, मिलाप हो चुका। बदर का यह हाल है कि बात की और गुस्सा आ गया। और मियाँ फ़िशार उनके भी चचा हैं। बात पीछे करते हैं, चाँटा पहले ही जमाते हैं।

आज़ाद—आखिर बखेड़े का सबब क्या?

पतंगबाज़—सिवा हसद के और क्या कहूँ। हुआ यह कि फ़िशार ने पहले पढ़ा। इस पर मौलवी बदर बिगड़ खड़े हुए कि हमसे पहले इन्हें क्यों पढ़ने दिया गया। इनमें क्या बात है। हम भी तो उस्ताद के लड़के हैं। इस पर फ़िशार बोले—अभी बच्चे हो, हिज्जे करना तो जानते नहीं। शायरी क्या जानो। कुछ दिन उस्ताद की जूतियाँ सीधी करो, तो आदमी बनो। बदर ने आस्तीनें उलट लीं और चढ़ दौड़े। फ़िशार के शागिर्दों ने भी डंडा सीधा किया। इस पर लोगों ने दौड़ कर बीच-बचाव कर दिया।

शाम के वक़्त मियाँ आज़ाद ने कहा—भई, अब तो बैठे-बैठे जी घबराता है। चलिए, ज़रा चार-पाँच कोस सैर तो कर आयें। पतंगबाज़ ने चार-पाँच कोस का नाम सुना, तो घबराये। यह बेचारे महीन आदमी, आध-कोस भी चलना कठिन था, दस क़दम चले और हाँफने लगे। कहीं गये भी तो टाँघन पर। भला दस मील कौन जाता? बोले—हज़रत, मैं इस सैर से बाज़ आया। आपको तो डाक के हरकारों में नौकरी करनी चाहिए। मुझे क्या कुत्ते ने काटा है कि बेसबब पँचकोसी चक्कर लगाऊँ

और आदमी से ऊँट बन जाऊँ? आप जाते हैं, तो जाइए, मगर जल्द आइएगा। सच कहते हैं, लंबा आदमी अक़्ल का दुश्मन होता है। यह ग़प उड़ाने का वक़्त है, या जंगल में घूमने का?

एक मुसाहिब—आप बजा फ़रमाते हैं, भलेमानसों को कभी जंगल की धुन समायी ही नहीं। और, हुज़ूर के यहाँ घोड़ा-बग्घी सब सवारियाँ मौजूद हैं। जूतियाँ चटखाते हुए आपके दुश्मन चलें।

आज़ाद—जनाब, यह नज़ाकत नहीं है, इसको तपेदिक़ कहते हैं। आप पाँच कोस न चलिए, दो ही कोस चलिए, आध ही कोस चलिए।

पतंगबाज़—नहीं जनाब, माफ़ फ़रमाइए।

आज़ाद लंबे-लंबे डग बढ़ाते पश्चिम की तरफ़ रवाना हुए।

२२

मियाँ आज़ाद के पाँव में तो सनीचर था। दो दिन कहीं टिक जायँ तो तलवे खुजलाने लगें। पतंगबाज़ के यहाँ चार-पाँच दिन जो जम गये, तो तबीयत घबराने लगी लखनऊ की याद आयी। सोचे, अब वहाँ सब मामला ठंडा हो गया होगा। बोरिया-बँधना उठाया और शिक़रम-गाड़ी की तरफ़ चले। रेल पर बहुत चढ़ चुके थे, अब की शिक़रम पर चढ़ने का शौक़ हुआ। पूछते-पूछते वहाँ पहुँचे। डेढ़ रुपये किराया तय हुआ, एक रुपया बयाना दिया। मालूम हुआ, सात बजे गाड़ी छूट जायगी, आप साढ़े-छह बजे आ जाइए। आज़ाद ने असबाब तो वहाँ रखा, अभी तीन ही बजे थे, पतंगबाज़ के यहाँ आ कर गप-शप करने लगे। बातों-बातों में पौने सात बज गये। शिक़रम की याद आयी, बचा-खुचा असबाब मज़दूर के सिर पर लाद कर लदे-फँदे घर से चल खड़े हुए। राह में लंबे-लंबे डग धरते, मज़दूरों को ललकारते चले आते हैं कि तेज चलो, क़दम जल्द उठाओ। जहाँ सन्नाटा देखा, वहाँ थोड़ी दूर दौड़ने भी लगे कि वक़्त पर पहुँचें; ऐसा न हो कि गाड़ी छूट जाय। वहाँ ठीक सात बजे पहुँचे, तो सन्नाटा पड़ा हुआ। आदमी न आदमज़ाद। पुकारने लगे, अरे मियाँ चपरासी, मुंशी जी, अजी मुंशी जी! क्या साँप सूँघ गया? बड़ी देर के बाद एक चपरासी निकला। कहिए, क्या डाक कीजिएगा?

आज़ाद—और सुनिए। डाक कीजिएगा की एक ही कही। मियाँ, बयाने का रुपया भी दे चुके।

चपरासी—अच्छा, तो इस घास पर बिस्तर जमाइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइए, या ज़रा बाज़ार की सैर कर आइए।

आज़ाद—ऐं, सैर कैसी? डाक छूटेगी आख़िर किस वक़्त?

चपरासी—क्या मालूम, देखिए, मुंशी जी से पूछूँ।

आज़ाद ने मुंशी जी के पास जा कर कहा—अरे साहब, सात बजे बुलाया था, जिसके साढ़े सात हो गये! अब और कब तक बैठा रहूँ?

मुंशी जी—जनाब, आज तो आप ही आप हैं, और कोई मुसाफ़िर ही नहीं। एक आदमी के लिए चालान थोड़े छोड़ेंगे।

आज़ाद—कहीं इस भरोसे न रहिएगा! बयाना दे चुका हूँ।

मुंशी—अच्छा, तो ठहरिए।

आठ बज गये, नौ बज गये, दस बज गये, कोई ग्यारह बजे तीन मुसाफ़िर आये। तब जा कर शिक़रम चली। कोई आध कोस तक तो दोनों घोड़े तेजी के साथ गये, फिर सुरंग बोल गया। यह गिरा, वह गिरा। कोचवान ने कोड़े पर कोड़े जमाना शुरू किया; पर घोड़े ने भी ठान ली कि टलूँगा ही नहीं। कोचमैन, घसियारा,

बारगीर, सब के सब ठोक रहे थे; मगर वह खड़ा हाँफता है। बारे बड़ी मुश्किल से फूँक-फूँक कर क़दम रखता हुआ दूसरी चौकी तक आया।

दूसरी चौकी में एक टट्टू दुबला-पतला, दूसरा घोड़ा मरा हुआ सा था; हड्डियाँ-हड्डियाँ गिन लीजिए। यह पहले ही से रंग लाये। कोचमैन ने खूब कोड़े जमाये, तब कहीं चले। मगर दस क़दम चले थे कि फिर दम लिया। साईस ने आँखें बंद करके रस्सी फटकारनी शुरू की। फिर दस-बीस क़दम आहिस्ता-आहिस्ता बढ़े, फिर ठहर गये। खुदा-खुदा करके तीसरी चौकी आयी।

तीसरी चौकी में एक दुबला-पतला मुश्की रंग का घोड़ा और दूसरा नुक़रा था। पहले ज़रा चीं-चप्पड़, फिर चले। एक-आध कोस गये थे कि कीचड़ मिली, फिर तो क़यामत का सामना था। घोड़े थान की तरफ़ भागते थे, कोचमैन रास थामे टिक-टिक करता जाता था, बारगीर पहियों पर ज़ोर लगाते थे। मुसाफ़िरों को हुक्म हुआ कि उतर आइए; ज़रा हवा खाइए। बेचारे उतरे। आध कोस तक पैदल चले। घोड़े क़दम-क़दम पर मुँह मोड़ देते थे। वह चिल्ल-पों मची हुई थी कि खुदा की पनाह। आध कोस के बाद हुक्म हुआ कि अपना-अपना बोझ उठाओ, गाड़ी भारी है। चलिए साहब, सबने गठरियाँ सँभाली! सिर पर असबाब लादे चले आते हैं। तीन घंटे में कहीं चौकी तय हुई, मुसाफ़िरों का दम टूट गया, कोचमैन और साईस के हाथ कोड़े मारते-मारते और पहियों पर ज़ोर लगाते-लगाते बेदम हो गये।

चौथी चौकी की जोड़ी देखने में अच्छी थी। लोगों ने समझा था, तेज़ जायगी, मगर जमाली खरबूज़ों की तरह देखने ही भर की थी। कोचवान और बारगीरों ने लाख-लाख ज़ोर लगाया, मगर उन्होंने ज़रा कान तक न हिलाये, कनौती तक न बदली। बुत बने खड़े हैं, मैदान में अड़े हैं। कोई तो घास का मुट्ठा लाता है, कोई दूर से तोबड़ा दिखाता है, कोई पहिये पर जोर लगाता है, कोई ऊपर से कोड़े जमाता है। आख़िर मुसाफ़िरों ने भी उतर कर ज़ोर लगाया, मगर टाँय-टाँय फिस। आख़िर घोड़ों के एवज़ बैल जोते गये।

पाँचवीं चौकी में बाबा आदम के वक़्त का एक घोड़ा आया। घोड़ा क्या, खच्चर था। आँखें माँग रहा था। मक्खियाँ भिन-भिन करती थीं। रात को भी मक्खियों ने इसका पीछा न छोड़ा।

आज़ाद—अरे भई, अब चलो न! आख़िर यहाँ क्या हो रहा है? रास्ता चलने ही से कटता है।

कोचमैन—ऐ लो साहब, घोड़े का तो बंदोबस्त कर लें। एक ही घोड़ा तो इस चौकी पर है।

आज़ाद—अजी, दूसरी तरफ़ भैंस जोत देना।

एक मुसाफ़िर—या हम एक सहल तदबीर बतायें। मुसाफ़िरों से कहिए, उतर पड़ें, बोझ अपना-अपना सिर पर लादें और ज़ोर लगा कर बग्घी को एक चौकी तक ढकेल ले जायँ।

इतने में एक भठियारा अपने टट्टू को टिक-टिक करता चला आता था। कोचवान ने पूछा—कहो भाई, भाड़ा करते हो? जो चाहे सो माँगो, देंगे। नक़द दाम लो और बग्घी पर बैठ जाओ। एक चौकी तक तुम्हारे टट्टू को बग्घी में जोतेंगे।

भठियारा—वाह, अच्छे आये! टट्टुआ कभी गाड़ी में जोता भी गया है? मुर्ग़ी-के बराबर टट्टू, और जोतने चले हैं शिक़रम में। यों चाहे पीठ पर सवार हो लो, मुदा डाकगाड़ी में कैसे चल सकता है?

कोचमैन—अरे भई, तुमको भाड़े से मतलब है, या तकरीर करोगे? हम तो अपनी तरकीब से जोत लेंगे।

आज़ाद ने भठियारे से कहा—रुपया टेंट में रखो और कहो, अच्छा जोतो। कुछ थक-थका कर आप ही हार जायँगे। रुपया तुम्हारे बाप का हो जायगा! वह भी राज़ी हो गया। अब कोचमैन ने टट्टू को जोतना चाहा, मगर उसने सैकड़ों ही बार पुश्त उछाली, दुलत्तियाँ झाड़ीं और गाड़ी के पास न फटका। इस पर कोचवान ने टट्टू को एक कोड़ा मारा। तब तो भठियारा आग हो गया। ऐ वाह मियाँ, अच्छे मिले, हमने पहले ही कह दिया था कि हमारा जानवर बग्घी में न चलेगा। आपने ज़बरदस्ती की। अब गधे की तरह गद-गद पीटने लगे।

वह तो टट्टू को बगल में दाब लंबा हुआ, यहाँ शिक़रम मैदान में पड़ी हुई है। मुसाफ़िर जम्हाइयाँ ले रहे हैं। साईस चिलम पर चिलम उड़ाते हैं। सब मुसाफ़िरों ने मिल कर क़सम खायी कि अब शिकरम पर न बैठेंगे। ख़ुदा जाने, क्या गुनाह किया था कि यह मुसीबत सही। पैदल आना इससे कहीं अच्छा।

पाँचवीं चौकी के आगे पहुँचे, तो एक मुसाफ़िर ने, जिसका नाम लाला पल्टू था, ठर्रे की बोतल निकाली और लगा कुज्जी पर कुज्जी उड़ाने। मियाँ आज़ाद का दिमाग़ मारे बदबू के परेशान हो गया। मज़हब से तो उन्हें कोई वास्ता न था, क्योंकि ख़ुदा के सिवा और किसी को मानते ही न थे, लेकिन बदबू ने उन्हें बेचैन कर दिया। एक दूसरे मुसाफ़िर रिसालदार थे। उनकी जान भी आज़ाब में थी। वह शराब के नाम पर लाहौल पढ़ते और उसकी बू से कोसों भागते थे। जब बहुत दिक़ हो गये, तो मियाँ आज़ाद से बोले—हज़रत, यह तो बेढब हुई। अब तो इनसे साफ़-साफ़ कह देना चाहिए कि ख़ुदा के वास्ते इस वक़्त न पीजिए। थोड़ी देर में हमको और आपको गालियाँ न देने लगें, तो कुछ हारता हूँ। ज़रा आँख दिखा दीजिए जिसमें बहुत बढ़ने न पायें।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, दिमाग़ फटा जाता है। आप डपट कर ललकार दीजिए। न माने तो मैं कान गरमा दूँगा।

रिसालदार—कहीं ऐसा ग़ज़ब न कीजिएगा! पंजे झाड़ कर लड़ने को तैयार हो जायगा। शराबी के मुँह लगना कोई अच्छी बात थोड़े है।

दोनों में यही बातें हो रही थीं कि लाला पल्टू ने हाँक लगायी—हरे-हरे बाग़ में गोला बोला, पग आगे, पग पीछे। यह बेतुकी कह कर हाथ जो छिड़का, तो

रिसालदार की दोनों टाँगों पर शराब के छींटे पड़ गये। हाँय-हाँय, बदमाश, अलग हट! उठ जा यहाँ से। नहीं तो दूँगा एक लप्पड़।

पलटू—बरसो राम झड़ाके से; रिसालदार की बुढ़िया मर गयी फाके से। हमारा बाप गधा था!

रिसालदार—चुप, खोस दूँ बाँस मुँह में?

पलटू—अजी, तो हँसी-हँसी में रोये क्यों देते हो? वाह, हम तो अपने बाप को बुरा कहते हैं।

आज़ाद—क्या तुम्हारे बाप गधे थे?

पलटू—और कौन थे? आप ही बताइए। उमर भर डोली उठायी, मगर मरते दम तक न उठानी आयी।

रिसालदार—क्या कहार था?

पलटू—और नहीं तो क्या चमार था, या बेलदार था? या आपकी तरह रिसालदार था?

आज़ाद—है नशे में तो क्या, बात पक्की कहता है।

पलटू—अजी, इसमें चोरी क्या है? हम कहार, हमारा बाप कहार।

आज़ाद—कहिए, आपकी महरी तो ख़ैरियत से है।

पलटू—चल शिक़रम, चल घोड़े, बिगुल बजे भोंपू-भोंपू। सामने काँटा, दुकान में आटा, कबड़िये के यहाँ भाँटा, रिसालदार के लगाऊँ चाँटा।

रिसालदार—ऐसा न हो कि मैं नशा-वशा सब हिरन कर दूँ। ज़बान को लगाम दे।

पलटू—अच्छा सईस है।

आज़ाद—अबे, साईसी इल्म दरियाव है।

पलटू—तेरा सिर नाव है, तू बनबिलाव है।

रिसालदार—कोचमैन, बग्घी ठहराओ।

पलटू—कोचमैन, बग्घी चलाओ।

मियाँ आज़ाद ने देखा, रिसालदार का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल हो गया, तो उन्होंने बात टाल दी और पूछा—क्यों पलटू महराज, सच कहना तुमने तो कभी डोली नहीं उठायी? पलटू बोले—नहीं, कभी नहीं। हाँ, बरतन माँजे हैं। मगर होश सँभालते ही मदरसे में पढ़ने लगे और अब तार-घर में नौकर हैं। रिसलदार जी, लो, पीते हो? रिसलदार के मुँह के पास कुज्जी ले जा कर कहा—पियो, पियो। इतना कहना था कि रिसालदार जल भुनके ख़ाक हो गये, तड़ से एक चाँटा रसीद किया, दूसरा और दिया, फिर तीन-चार और लगाये। पलटू मज़े से बैठे चपतें खाया किये। फिर एक क़हक़हा लगा कर बोले—अबे जा, बड़ा रिसालदार बना है। नाम बड़ा, दरसन थोड़े। एक जूँ भी न मरी। रिसालदारी क्या ख़ाक करते हो? चलो, अब तो एक कुज्जी पियो। दूँ फिर!

रिसालदार—भई, इसने तो नाक में दम कर दिया। पीटते-पीटते हाथ थक गये।

कोचमैन—रिसालदार साहब, यह क्या गुल मच रहा है ?

आज़ाद—बड़ी बात कि तुम जीते तो बचे ! हम समझते थे कि साँप सूँघ गया। यहाँ मार धाड़ भी हो गयी, तुम्हें खबर ही नहीं।

कोचमैन—मार-धाड़ ! यह मार-धाड़ कैसी ?

रिसालदार—देखो यह सुअर शराब पी रहा है और सबको गालियाँ देता है ! मैंने खूब पीटा, फिर भी नहीं मानता।

पलटू—झूठे हो ! किसने पीटा ? कब पीटा ? यहाँ तो एक जूँ भी न मरी।

कोचमैन—लाला, थोड़ी सी हमको भी पिलाओ।

पलटू और कोचमैन, दोनों कोच-बक्स पर जा बैठे और कुज्जियों का दौर चलने लगा। जब दोनों बदमस्त हुए, तो आपस में धौलधप्पा होने लगा। इसने उसके लप्पड़ लगाया, उसने इसके एक टीप जड़ी। कोचमैन ने पलटू को ढकेल दिया। पलटू ने गिरते ही पाँव पकड़ कर घसीटा, तो कोचमैन भी धम से गिरे। दोनों चिमट गये। एक ने कूले पर लादा, दूसरा बग़ली डूबा। मुक्का चलने लगा। कोचमैन ने झपट के पलटू की टँगड़ी ली, पलटू ने उसके पट्टे पकड़े। रिसालदार को ग़ुस्सा आया, तो पलटू के बेभाव की चपतें लगायीं। एक, दो, तीन करके कोई पचास तक गिन गये आज़ाद ने देखा कि-मैं खाली हूँ। उन्होंने कोचमैन को चपतियाना शुरू किया।

आज़ाद—क्यों बचा, पियोगे शराब ? सुअर, गाड़ी चलाता है कि शराब पीता है !

रिसालदार—तोड़ दूँ सिर, पटक दूँ बोतल सिर पर !

पलटू—तो आप क्या अकड़ रहे हैं ? आपकी रिसालदारी को तो हमने देख लिया ! देखो, कोचमैन के सिर पर आधे बाल रह गये, यहाँ बाल भी न बाँका हुआ।

रिसालदार—बस भई अब हम हार गये।

इस झंझट में तड़का हो गया। मुसाफ़िर रात भर के जगे हुए थे, झपकियाँ लेने लगे। मालूम नहीं, कितनी चौकियाँ आयीं और गयीं। जब लखनऊ पहुँचे, तो दोपहर ढल चुकी थी।

२३

मियाँ आज़ाद शिक़रम पर से उतरे, तो शहर को देख कर बाग़-बाग़ हो गये। लखनऊ में घूमे तो बहुत थे, पर इस हिस्से की तरफ़ आने का कभी इत्तिफ़ाक़ न हुआ था। सड़कें साफ़, कूड़े-करकट से काम नहीं, गंदगी का नाम नहीं, वहाँ एक रंगीन कोठी नज़र आयी, तो आँखों ने वह तरावट पायी कि वाह जी, वाह! उसकी बनावट और सजावट ऐसी भायी कि सुभान-अल्लाह। बस, दिल में खुब ही तो गयी। रविशें दुनिया से निराली, पौदों पर वह जोबन कि आदमी बरसों घूरा करे।

मियाँ आज़ाद ने एक हरे-भरे दरख़्त के साये में आसन जमाया। टहनियाँ हवा के झोंकों से झूमती थीं, मेवे के बोझ से ज़मीन को बार-बार चूमती थीं। आज़ाद ठंडे-ठंडे हवा के झोंकों का मज़ा ले रहे थे कि एक मुसाफ़िर उधर से गुज़ारा। आज़ाद ने पूछा—क्यों साहब, इस कोठी में कौन रईस रहता है?

मुसाफ़िर—रईस नहीं, एक रईसा रहती हैं! बड़ी मालदार हैं। रात को रोज बजरे पर दरिया की सैर को निकलती हैं। उनकी दोनों लड़कियाँ भी साथ होती हैं।

आज़ाद—क्यों साहब लड़कियों की उम्र क्या होगी?

मुसाफ़िर—अब उमर का हाल मुझे क्या मालूम। मगर सयानी हैं, बड़ी तमीज़दार हैं और, बुढ़िया तो आफ़त की पुड़िया।

आज़ाद—शादी अभी नहीं हुई?

मुसाफ़िर—अभी शादी नहीं हुई; न कहीं बातचीत है। दोनों बहनों को पढ़ने लिखने और सैर करने के सिवा कोई काम नहीं। सफ़ाई का दोनों को ख़्याल है। ख़ुदा करे, उनकी शादी अच्छे घरों में हो।

आज़ाद—आपने तो वह ख़बर सुनायी कि मुझे उन लड़कियों को सैर करते हुए देखने का शौक़ हो गया।

मुसाफ़िर—तो फिर इसी जगह बिस्तर जमा रखिए।

आज़ाद—आप भी आ जायँ, तो मज़ा आये।

मुसाफ़िर—आ जाऊँगा।

आज़ाद—ऐसा न हो कि आप न आयें और मुझे भेड़िया उठा ले जाय।

मुसाफ़िर—आप बड़े दिल्लगीबाज़ मालूम होते हैं। यहाँ अपने वादे के सच्चे हैं। बस, शाम हुई और बंदा यहाँ पहुँचा।

यह कह कर वह हज़रत तो चलते हुए और आज़ाद दरख़्तों से मेवे तोड़-तोड़ कर खाने लगे। फिर चिड़ियों का गाना सुना। फिर दरिया की लहरें देखीं। कुछ देर तक गाते रहे। यहाँ तक कि शाम हो गयी और वह मुसाफ़िर न आया। आज़ाद दिल में सोचने लगे, शायद हज़रत झाँसा दे गये। अब शाम में क्या बाक़ी है। आना होता,

तो आ न जाते। शायद आज बेगम साहबा बजरे पर सैर भी न करेंगी। सैर करने का यही तो वक़्त है। इतने में मियाँ मुसाफ़िर ने आ कर पुकारा।

आज़ाद—ख़ैर, आप आये तो! मैं तो आपके नाम को रो चुका था।

मुसाफ़िर—ख़ैर, अब हँसिए। देखिए, वह हाथी आ रहा है। दोनों पालकियाँ भी साथ हैं।

आज़ाद—कहाँ-कहाँ? किधर?

मुसाफ़िर—ईंट की ऐनक लगाओ! इतनी बड़ी पालकी नहीं देख सकते! हाथी भी नहीं दिखायी देता! क्या रतौंधी आती है?

आज़ाद—आहा हा! वह देखिए। ऐं, वह तो दरख़्त के साये में रुक रहा।

मुसाफ़िर—घबराइए नहीं, यहीं आ रही हैं। अब कोई और ज़िक्र छेड़िए, जिसमें मालूम हो कि दो मुसाफ़िर थक कर खड़े बातें कर रहे हैं!

आज़ाद—यह आपको ख़ूब सूझी! हाँ साहब, अबकी आम की फ़सल ख़ूब हुई। जिधर देखो, पटे पड़े हैं; मंडी जाइए, खाँचियों की खाँचियाँ। तरबूज़ को देख आइए, कोई टके को नहीं पूछता। और आम के सामने तरबूज़ को कौन हाथ लगाये!

ये बातें हो ही रही थीं कि बजरा तैयार हुआ। दोनों बहनें और बेगम साहब उसमें बैठीं। एकाएक पूरब की तरफ़ से काली मतवाली घटा झूमती हुई उठी और बिजली ने चमकना शुरू किया। मल्लाह ने बजरे को खूँटे से बाँध दिया। दोनों लड़कियाँ हाथी पर बैठी और घर की तरफ़ चलीं। आज़ाद ने कहा—यह बुरा हुआ! तूफ़ान ने हत्थे ही पर टोंक दिया, नहीं तो इस वक़्त बजरे की सैर देख कर दिल की कली खिल जाती। आख़िर दोनों आदमी घूमते-घामते एक बाग़ में पहुँचे, तो मियाँ मुसाफ़िर बोले—हज़रत, अब की आम इतनी कसरत से पैदा हुआ कि टके सेर नहीं, टके हज़ार लग गये! लेकिन बग़ीचे वाले का यह हाल है कि जहाँ किसी भलेमानस ने राह चलते कोई आम उठा लिया और बस, चिमट पड़ा। अभी परसों ही की तो बात है। यहाँ से कोई चार कोस पर एक मुसाफ़िर मैदान में चला जाता था। एक काना खुतरा आम टप से ज़मीन पर टपक पड़ा। मुसाफ़िर को क्या मालूम कि कौन इधर-उधर ताक रहा है, चुपके से आम उठा लिया। उठाना था कि दो गँवारदल लठ कंधे पर रखे, मार सारे का, मार सारे का करते निकल आये। मुसाफ़िर ने आम झट ज़मीन पर पटक दिया। लेकिन एक गँवार ने आते ही गालियाँ देनी शुरू कीं और दूसरे ने घूँसा ताना। मुसाफ़िर भी क्षत्रिय आदमी था, आग हो गया। मारे ग़ुस्से के उसका बदन थर-थर काँपने लगा। बढ़के जो एक चाँटा देता है, तो एक गँवार लड़खड़ाके धम से ज़मीन पर। दूसरे ने जो यह हाल देखा, तो लठ ताना। राजपूत बग़ली डूब कर जा पहुँचा, एक आँटी जो देता है, तो चारों खाने चित। हम भी कल एक बाग़ में फँस गये थे। शामत जो आयी, तो एक दरख़्त के साये में दोपहरिया मनाने बैठ गये। बैठना था कि एक ने तड़ से गाली दी। अब सुनिए कि गाली तो दी हमको, लेकिन एक पहलवान भी क़रीब ही बैठा था। सुनते ही चिमट गया और चिमटते ही कूले पर लादा। गिरे मुँह के बल। पहलवान छाप

बैठा, हफ्ते गाँठ लिये, हलसींगड़ा बाँध कर आसमान दिखा दिया और अपने शागिर्दों से कहा—चढ़ जाओ पेड़ पर, और आम, पत्ते, बौर, टहनी जो पाओ, तोड़-तोड़ कर फेंक दो, पेड़ नोच डालो। लेकिन लोगों ने समझाया कि उस्ताद, जाने दो; गाली देना तो इनका काम है। यह तो इनके सामने कोई बात ही नहीं, ये इसी लायक़ हैं कि ख़ूब धुने जायँ।

आज़ाद—क्यों साहब, धुने क्यों जायँ? ऐसा न करें, तो सारा बाग़ मुसाफ़िरों ही के लिए हो जाय। लोग पेड़ का पेड़, जड़ और फुनगी तक चट कर जायँ। आप तो समझे कि यह एक आम के लिए कट मरा, मगर इतना नहीं सोचते कि एक ही एक करके हज़ार होते हैं। इस ताकीद पर तो यह हाल है कि लोग बाग़ के बाग़ लूट खाते हैं; और जो कहीं इतनी तू-तू मैं-मैं न हो तो न जाने क्या हो जाय।

मियाँ मुसाफ़िर कल आने का वादा करके चले गये। आज़ाद आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं कि एक आदमी अपने लड़के को गोदी में लिये थपकी दे-दे कर सुला रहा है—'आ जा री निंदिया, तू आ क्यों न जा; मेरे बाले को गोद सुला क्यों न जा।' आज़ाद एक दिल्लगीबाज आदमी, जा कर उससे पूछते क्या हैं—किसका पिल्ला है? वह भी एक ही काइयाँ था, बोला—दूर रह, क्यों पिला पड़ता है? आज़ाद यह जवाब सुन कर ख़ुश हो गये। बोले—उस्ताद, हम तो आज तुम्हारे मेहमान होंगे। तुम्हारी हाज़िरजवाबी से जी ख़ुश हो गया। अब रात हो गयी है, कहाँ जायँ? उस हँसोड़ आदमी ने इनकी बड़ी ख़ातिर की, खाना खिलाया और दोनों ने दरवाज़े पर ही लंबी तानी। तड़के मियाँ आज़ाद की नींद खुली। हँसोड़ को जगाने लगे। क्यों हज़रत, पड़े सोया ही कीजिएगा या उठिएगा भी; वाह रे माचा-तोड़! बारे बहुत हिलाने-डुलाने पर मियाँ हँसोड़ उठे और फिर लेट गये; मगर पैताने की तरफ सिर करके। इतने में दो-चार दोस्त और आ गये। वाह भई, वाह, हम दो कोस से आये और यहाँ अभी खाट ही नहीं छोड़ी? भई, बड़ा सोनेवाला है। हमने मुँह-हाथ धोया, हुक्क़ा पिया, बालों में तेल डाला चपातियाँ खायीं, कपड़े पहने और टहलते हुए यहाँ तक आये; मगर यह अभी तक पड़े ही हुए हैं। आख़िर एक आदमी ने उनके कान में पानी डाल दिया। तब तो आप कुलबुलाये। देखो, देखो, हैं-हैं नहीं मानते! वाह, अच्छी दिल्लगी निकाली है।

एक दोस्त—ज़रा आँखें तो खोलिए।

हँसोड़—नहीं खोलते। आपका कुछ इजारा है?

दोस्त—देखिए, यह मियाँ आज़ाद तशरीफ़ लाये हैं, इधर मौलवी साहब खड़े हैं। इनसे तो मिलिए, सो-सो कर नहूसत फैला रखी है।

मौलवी—अजी हज़रत!

हँसोड़—भई, दिक़ न करो, हमें सोने दो। यहाँ मारे नींद के बुरा हाल है, आपको दिल्लगी सूझती है।

आज़ाद—भाई साहब!

हँसोड़—और सुनिए। आप भी आये वहाँ से जान खाने। सबेरे-सबेरे आपको बुलाया किस गधे ने था? भलेमानस के मकान पर जाने का यह कौन वक़्त, है भला? कुछ आपका क़र्ज़ तो नहीं चाहता? चलिए, बोरिया-बँधना उठाइए। (आखें खोल कर) अख्खा, आप, हैं? माफ़ कीजिएगा। मैंने आपकी आवाज़ नहीं पहचानी।

मौलवी—कहिए, खाकसार की आवाज़ तो पहचानी? या कुछ मीन-मेख है?

हँसोड़—अख्खा, आप हैं। माफ़ कीजिएगा, मैं अपने आपे में न था।

मौलवी—हज़रत, इतना भी नींद के हाथ बिक जाना भला कुछ बात है! आठ बजा चाहते हैं और आप पड़े सो रहे हैं। क्या कल रतजगा था? खैर, मैं तो रुख़-सत होता हूँ; आप हकीम साहब के नाम ख़त लिख भेजिएगा। ऐसा न हो कि देर हो जाय। कहीं फिर न लुढ़क रहिएगा। आपकी नींद से हम हारे।

हँसोड़—अच्छा मियाँ आज़ाद, और बातें तो पीछे होंगी, पहले यह बतलाइए कि खाना क्या खाइएगा? आज मामा बीमार हो गयी है और घर में भी तबीयत अच्छी नहीं है। मैंने रोज़े की नीयत की है। आप भी रोज़ा रख लें। फ़ायदे का फ़ायदा और सवाब का सवाब।

आज़ाद—रोज़ा आपको मुबारक रहे। अल्लाह मियाँ हमें यों हीं ही बख्श देंगे। यह दिल्लगी किसी और से कीजिएगा।

हँसोड़—दिल्लगी के भरोसे न रहिएगा। मैं खरा आदमी हूँ। हाँ, खूब याद आया। मौलवी साहब ख़त लिखने को कह गये हैं। दो पैसे का खून और हुआ। कल भी रोज़ा रखना पड़ा।

आज़ाद—दो पैसे क्यों खर्च कीजिएगा? अब तो एक पैसे के पोस्टकार्ड चले हैं।

हँसोड़—सच? एक डबल में! भई अँगरेज बड़े हिकमती हैं। क्यों साहब, वह पोस्टकार्ड कहाँ बिकते हैं?

आज़ाद—इतना भी नहीं जानते? डाकखाने में आदमी भेजिए।

हँसोड़—रोशनअली, डाकखाने से जा कर एक आने के पोस्टकार्ड ले आओ।

रोशन—मियाँ, मैं देहाती आदमी हूँ। अँगरेजी नहीं पढ़ा।

हँसोड़—अरे भई, तुम कहना कि वह लिफ़ाफ़े दीजिए, जो पैसे-पैसे में बिकते हैं। जा झट से, कुत्ते की चाल जाना और बिल्ली की चाल आना।

रोशन—अजी, मुझसे कहिए, तो मैं गधे की चाल जाऊँ और बिसखोपड़े की चाल आऊँ। मुल डाकवाले मुझे पागल बनायेंगे। भला आज तक कहीं पैसे में लिफ़ाफ़ा बिका है?

हँसोड़—अबे, तुझे इस हुज्जत से क्या वास्ता? डाकखाने तक जायगा भी, या यहीं बैठे-बैठे दलीलें करेगा?

रोशन डाकखाने गया और पोस्टकार्ड ले आया। मियाँ हँसोड़ झपट कर क़लम-दावात ले आये और ख़त लिखने बैठे। मगर पुराने ज़माने के आदमी थे, तारीफ़

के इतने लंबे-लंबे जुमले लिखने शुरू किये कि पोस्टकार्ड भर गया और मतलब खाक न निकला। बोले—अब कहाँ लिखें ?

आज़ाद—दो टप्पी बातें लिखिए। आप तो लगे अपनी लियाक़त बघारने ! दूसरा लीजिए।

हँसोड़ ने दूसरा पोस्टकार्ड लिखना शुरू किया—'जनाब, अब हम थोड़े में बहुत सा हाल लिखेंगे। देखिए, बुरा न मानिएगा। अब वह ज़माना नहीं रहा कि वह बीघे भर के आदाब लिखे जायँ। वह लंबी चौड़ी दुआएँ दी जायँ। वह घर का कच्चा चिट्ठा कह सुनाना अब रिवाज़ के ख़िलाफ़ है। अब तो हमने क़सम खायी है कि जब क़लम उठायेंगे, दस सतरों से ज्यादा न लिखेंगे इसमें चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। अब आप भी इस फ़ैशन को छोड़ दीजिए।' अरे, यह ख़त भी गया। अब तो तिल रखने की भी जगह नहीं। लीजिए, बात करते-करते दो पैसे का ख़ून हो गया। इससे दो पैसे का टिकट लाते, तो खर्रे का खर्रा लिख डालते।

आज़ाद—मैं देखूँ तो; आपने क्या लिखा है। वाह-वाह इस पँवाड़े का कुछ ठिकाना है। अरे साहब, मतलब से मतलब रखिए। बहुत बेहूदा न बकिए। ख़ैर; अब तीसरा कार्ड लीजिए। मगर क़लम को रोके हुए। ऐसा न हो कि आप फिर वाही-तबाही लिखने लगें।

हँसोड़—अच्छा साहब, यों ही सही। बस, ख़ास-ख़ास बातें ही लिखूँगा।

यह कह कर उन्होंने यह ख़त लिखा—'जनाब फ़ज़ीलतमआब मौलाना साहब, आप यह पैसलूचा लिफ़ाफ़ा देख कर घबरायँगे कि यह क्या बला है। डाकख़ानेवालों ने यह नयी फुलझड़ी छोड़ी है। आप देखते हैं, इसमें कितनी जगह है। अगर मुख़्तसर न लिखूँ तो क्या करूँ। लिखनी तो बहुत सी बातें हैं, पर इस लिफ़ाफ़े को देख कर सब आरज़ूएँ दिल में रही जाती हैं। देखिए, अभी लिखा कुछ भी नहीं, मगर काग़ज़ को देखता हूँ, तो एक तरफ़ सब का सब लिप गया। दूसरी तरफ़ लिखूँ, तो पकड़ा जाऊँ।' लो साहब, यह पोस्टकार्ड भी ख़तम हुआ ! मियाँ आज़ाद, ये तीनों पैसे आपके नाम लिखे गये। आप चाहे दें टका नहीं, लेकिन सलाह आप ही ने दी थी।

आज़ाद—मैंने यह कब कहा था कि आप ख़त में अपनी जिंदगी की दास्तान लिख भेजें ? यह ख़त है या राँड़ का चर्खा ? इतने बड़े हुए, ख़त लिखने की लियाक़त नहीं। समझा दिया, सिखला दिया कि बस, मतलब से मतलब रखो। मगर तुम कब मानने लगे। ख़ुदा की क़सम, तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गयी। बस, बेतुकेपन की हद हो गयी।

हँसोड़—वाह री क़िस्मत ! तीन पैसे गिरह से गये और उल्लू के उल्लू बने। भला आप ही लिखिए, तो जानें। देखें तो सही, आप इस ज़रा से काग़ज़ पर कुल मतलब क्योंकर लिखते हैं। इसके लिए तो बड़ा भारी उस्ताद चाहिए, जो पिस्ते पर हाथी की तस्वीर बना दे।

आज़ाद—आप अपना मतलब मुझसे कहिए, तो अभी लिख दूँ।

हँसोड़—अच्छा सुनिए—मौलवी ज़ामिनअली आपकी ख़िदमत में पहुँचे होंगे। उनको वह तीस रुपयेवाली जगह दिला दीजिएगा। आपका उम्र भर एहसान होगा। बस, इसी को ख़ूब बढ़ा दीजिए।

आज़ाद—फिर वही झक! बढ़ा क्यों दूँ? यह न कहा कि बस, यही मेरा मतलब है, इसको बढ़ा दीजिए। लाओ पोस्टकार्ड, देखो, यों लिखते हैं—

'हज़रत सलामत, मौलवी जामिनअली पहुँचे होंगे। वह तीस रुपयेवाला ओहदा उनको दिलवा दीजिए, तो एहसान होगा। उम्मेद है कि आप ख़ैरियत से होंगे।'

लो, देखो, इतनी सी बात को इतना बढ़ाया कि तीन-तीन खत लिखे और फाड़े।

हँसोड़—ख़ूब, यह तो अच्छा दुम-कटा ख़त है! अच्छा, अब पता भी तो लिखिए।

आजाद ने सीधा-सादा पता लिख कर हँसोड़ को दिखलाया, तो आप पूछने लगे—क्यों साहब, यह तो शायद वहाँ तक पहुँचे ही नहीं। कहीं इतना ज़रा सा पता लिखा जाता है? इसमें मेरा नाम कहाँ है, तारीख़ कहाँ है?

आज़ाद—आपका नाम बेवक़ूफ़ों की फ़िहरिस्त में है और तारीख़ डाकख़ाने में।

हँसोड़—अच्छा लाइए, दो-चार सतरें मैं भी बढ़ा दूँ।

हज़रत ने जो लिखना शुरू किया, तो पते की तरफ़ भी लिख डाला।—थोड़े लिखने को बहुत समझिएगा। आपका पुराना गुलाम हूँ। अब कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ती।

आज़ाद—हैं-हैं! ग़ारत किया न इसको भी?

हँसोड़—क्यों, जगह बाक़ी है, पूरा पैसा तो वसूल करने दो।

आज़ाद—जी, पैसा नहीं, एक आना वसूल हो गया! एक ही तरफ़ मतलब लिखा जाता है, दूसरी तरफ़ सिर्फ़ पता। आपसे तो हमने पहले ही कह दिया था।

यह बातें हो ही रही थीं कि कई लड़के स्कूल से निकले उनमें एक बड़ा शरीर था। किसी पर धप जमायी, किसी के चपत लगायी, किसी के कान गरमा दिये। अपने से ड्योढ़े-दूने तक को चपतियाता था। आज़ाद ने कहा—देखो, यह लौंडा कितना बदमाश है! अपने दूने तक की ख़बर लेता है।

हँसोड़—भई, ख़ुदा के लिए इसके मुँह न लगना। इसके काटे का मंतर ही नहीं। यह स्कूल भर में मशहूर है। हज़रत दो दफ़े चोरी की इल्लत में धरे गये। इनके मारे महल्ले भर का नाकों दम है। एक क़िस्सा सुनिए। एक दफ़े हजरत को शरारत का शौक़ चर्राया, फिर सोचने की ज़रूरत न थी। फ़ौरन सूझती है। शरारत तो इसकी ख़मीर में दाख़िल है। एक पाँव का जूता निकाल कर हज़रत ने एक आलमारी पर रख दिया। जूते के नीचे एक किताब रख दी। थोड़ी देर बाद एक लड़के से बोले—यार, ज़रा वह किताब उतारो, तो कुछ देख-दाख लूँ; नहीं तो मास्टर साहब बेतरह ठोकेंगे। सीधा-सादा लड़का चुपके से वह किताब उठाने गया। जैसे किताब उटायी, वैसे ही जूती मुँह पर आयी। सब लड़के खिलखिला कर हँस पड़े। मास्टर साहब अँगरेज थे। बहुत ही झल्ला कर पूछा—यह किसकी जूती का पाँव है?

अब आप बैठे चुपचाप पढ़ रहे हैं। गोया इनसे कुछ वास्ता ही न था। मगर इनका तो दर्जा भर दुश्मन था। किसी लड़के ने इशारे से जड़ दी। मास्टर ने आपको बुलाया और पूछा—वेल, दूसरा पाँव कहाँ तुम्हारा ? दूसरा पाँव किडर ?

लड़का—पाँव दोनों ये हैं।

मास्टर—वेल, जूती, जूती ?

लड़का—जूती को खावे तूती।

मास्टर—बेंच पर खड़ा हो।

लड़का—यह सज़ा मंजूर नहीं; कोई और सज़ा दीजिए।

मास्टर—अच्छा, कल के सबक़ को सौ बार लिख लाना।

लड़का—वाह-वाह, और सबक़ याद कब करूँगा ?

मास्टर—अच्छा, आठ आना जुर्माना।

दूसरे दिन आप आठ आने लाये, तो मोटे पैसे खट-खट करके मेज़ पर डाल दिये। मास्टर ने पूछा—अठन्नी क्यों नहीं लाया ? बोले—यह शर्त नहीं थी।

इसी तरह एक बार एक भलेमानस के यहाँ कह आये कि तुम्हारे लड़के को स्कूल में हैज़ा हुआ है। उनके घर में रोना-पीटना मच गया। लड़के का बाप, चचा, भाई, मामू, सब दौड़ते हुए स्कूल पहुँचे। औरतों ने आठ-आठ आँसू रोना शुरू किया। वे लोग जो स्कूल गये, तो क्या देखते हैं, लड़का मज़े से गेंद खेलता है। अजी, और क्या कहें, इसने अपने बाप को एक बार नमक के धोखे में फिटकरी खिला दी, और उस पर तुर्रा यह कि कहा, क्यों अब्बाजान, कैसा गहरा चकमा दिया ?

शाम के वक़्त बूढ़े मियाँ आज़ाद के पास आ कर बोले—चलिए, उधर बजरा तैयार है ! आज़ाद तो उनकी ताक में बैठे ही थे, हँसोड़ को ले कर उनके साथ चल खड़े हुए। नदी के किनारे पहुँचे, तो देखा, बजरे लहरों पर फर्राटे से दौड़ रहे हैं। एक दरख्त के साये में छिपकर यह बहार देखने लगे। उधर उन दोनों हसीनों ने बजरे पर से किनारे की तरफ़ देखा, तो आज़ाद नज़र पड़े। शरम से दोनों ने मुँह फेर लिये। लेकिन कनखियों से ताक रही थीं। यहाँ तक कि बजरा निगाहों से ओझल हो गया।

थोड़ी देर के बाद आज़ाद उन्हीं बूढ़े मियाँ के साथ उस कोठी की तरफ़ चले, जिसमें दोनों लड़कियाँ रहती थीं। क़दम-क़दम पर शेर पढ़ते थे, ठंडी साँसे भरते थे और सिर धुनते थे। हालत ऐसी ख़राब थी कि क़दम-क़दम पर उनके गिर पड़ने का ख़ौफ़ था। हँसोड़ ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो झपट कर मियाँ आज़ाद का हाथ पकड़ लिया और समझाने लगे। इस रोने-धोने से क्या फ़ायदा ? आखिर यह तो सोचो कि कहाँ जा रहे हो ? वहाँ तुम्हें कोई पहचानता भी है ? मुफ़्त में शरमिंदा होने को क्या ज़रूरत ?

आज़ाद—भई, अब तो यह सिर है और वह दर। बस, आज़ाद है और उन बुतों का कूचा।

हँसोड़—यह महज़ नादानी है; यही हिमाक़त की निशानी है। मेरी बात मानो,

बूढ़े मियाँ को फँसाओ, कुछ चटाओ, फिर उनकी सलाह के मुताबिक़ काम करो, बेसमझे-बूझे जाना और अपना सा मुँह लेकर वापस आना हिमाक़त है।

ये बातें करते हुए दोनों आदमी कोठी के क़रीब पहुँचे। देखा, बूढ़े मियाँ इनके इंतजार में खड़े हैं। आज़ाद ने कहा—हज़रत, अब तो आप ही रास्ता दिखायें, तो मंज़िल पर पहुँच सकते हैं; वर्ना अपना तो हाल खराब है।

बूढ़े मियाँ—भई, हम तुम्हारे सच्चे मददगार और पक्के तरफ़दार हैं। अपनी तरफ़ से तुम्हारे लिए कोई बात उठा न रखेंगे। लेकिन यहाँ का बाबा, आलम ही निराला है। यहाँ परिंदों के पर जलते हैं। हवा का भी गुज़र होना मुश्किल है। मगर दोनों मेरी गोद की खिलायी हुई हैं, मौका पा कर आपका ज़िक्र ज़रूर करूँगा। मुश्किल यही है कि एक ऊँचे घर से पैग़ाम आया है, उनकी माँ को शौक़ चर्राया है कि वहीं ब्याह हो।

आज़ाद—यह तो आपने बुरी खबर सुनायी! क़सम खुदा की, मेरी जान पर बन जायगी।

बूढ़े मियाँ—सब्र कीजिए, सब्र। दिल को ढारस दीजिए। अब इस वक़्त जाइए, सुबह आइएगा।

आज़ाद रुखसत होने ही वाले थे, तो क्या देखते हैं, दोनों बहनें झरोखों से झाँक रही हैं। आज़ाद ने यह शेर पढ़ा—

> हम यही पूछते फिरते हैं ज़माने भर से;
> जिनकी तक़दीर बिगड़ जाती है, क्या करते हैं?

झरोखे में से आवाज़ आयी—

> जीना भी आ गया मुझे, मरना भी आ गया;
> पहचानने लगा हूँ तुम्हारी नज़र को मैं।

इतना सुनना था कि मियाँ आज़ाद की आँखें मारे खुशी के डबडबा आयीं। झरोखे की तरफ़ फिर जो ताका, तो वहाँ कोई न था। चकराये कि किसने यह शेर पढ़ा। छलावा था, टोना था, जादू था, आखिर था क्या? इतने में बूढ़े मियाँ ने इशारे से कहा कि बस, अब जाओ और तड़के आओ।

दोनों दोस्त घर की तरफ़ चले, तो मियाँ हँसोड़ ने कहा—हज़रत, खुदा के वास्ते मेरे घर पर कूद-फाँद न कीजिएगा, बहुत शेर न पढ़िएगा, कहीं मेरी बीबी को खबर हो गयी, तो जीना मुश्किल हो जायगा।

आज़ाद—क्या बीबी से आप इतना डरते हैं! आखिर खौफ़ काहे का?

हँसोड़—आपको इस झगड़े से क्या मतलब? वहाँ ज़रा भले आदमी की तरह बैठिएगा, यह नहीं कि गुल मचाने लगे। जो सुनेगा, वह समझेगा कि कहाँ के शोहदे जमा हो गये हैं।

आज़ाद—समझ गया, आप बीबी के गुलाम हैं। मगर हमें इससे क्या वास्ता। आम खाने से मतलब कि पेड़ गिनने से?

दोनों आदमी घर पहुँचे, तो लौंडी ने अन्दर से आ कर कहा—बेगम साहबा आपको कोई बीस बेर पूछ चुकी हैं। चलिए, बुलाती हैं। मियाँ हँसोड़ ने ड्योढ़ी पर क़दम रखा ही था कि उनकी बीबी ने आड़े हाथों ही लिया। यह दिन-दिन भर आप कहाँ ग़ायब रहने लगे? अब तो आप बड़े सैलानी हो गये। सुबह के निकले-निकले शाम को खबर ली। चलो, मेरे सामने से जाओ। आज खाना-वाना खैर-सल्लाह है। हलवाई की दूकान पर दादा जी का फ़ातिहा पढ़ो, तंदूरी रोटियाँ उड़ाओ। यहाँ किसी को कुत्ते ने नहीं काटा कि वक़-बे-वक्त चूल्हे का मुँह काला किया जाय। भले आदमी दो-एक घड़ी के लिए कहीं गये तो गये; यह नहीं कि दिन-दिन भर पता ही नहीं। अच्छे हथकंडे सीखे हैं।

हँसोड़ ने चुपके से कहा—ज़रा आहिस्ता-आहिस्ता बातें करो। बाहर एक भलामानस टिका हुआ है। इतनी भी क्या बेहयाई?

इस पर वह चमक कर बोली—बस, बस, जबान न खुलवाओ बहुत। तुम्हें जो दोस्त मिलता है, वही ग..सवार, जिसके घर न द्वार, जाने कहाँ के उल्फ़ती इनको मिल जाते हैं, कभी किसी शरीफ़ आदमी से दोस्ती करते नहीं देखा। चलिए, अब दूर हूजिए, नहीं हम बुरी तरह पेश आयेंगे। मुझसे बुरा कोई नहीं।

मियाँ हँसोड़ बेचारे की जान अज़ाब में कि घर में बीबी कोसने सुना रही है, बाहर मियाँ आज़ाद आड़े हाथों लेंगे कि आपकी बीबी ने आपको तो खैर जो कुछ कहा, वह कहा ही मुझे क्यों ले डाला? मैंने उनका क्या बिगाड़ा था? अपना सा मुँह ले कर बाहर चले आये और आज़ाद से कहा—यार आज रोज़े की नीयत कर लो। बीबी-जान फ़ौज़दारी पर आमदा हैं। बात हुई और तिनक गयीं। महीनों ही रूठी रहती हैं। मगर क्या करूँ, अमीर की लड़की हैं, नहीं तो मैं एक झल्ला हूँ। मुझे यह मिज़ाज कहाँ पसंद। इसलिए भई, आज फ़ाक़ा है।

आज़ाद—फ़ाक़ा करें आपके दुश्मन। चलिए, किसी नानबाई हलवाई की दूकान पर। मज़े से खाना खायँ!

हँसोड़—अरे यार, इतने ही होते तो बीबी की क्यों सुनते! टका पास नहीं, हलवाई क्या हमारा मामू है?

आज़ाद—इसकी फ़िक्र न कीजिए। आप हमारे साथ चलिए और मज़े से मिठाई चखिए। वह तदबीर सूझी है कि कभी पट ही न पड़े।

दोनों आदमी बाज़ार पहुँचे। आज़ाद ने रास्ते में हँसोड़ को समझा-बुझा दिया। हँसोड़ तो हलवाई की दूकान पर गये और आज़ाद जरा पीछे रह गये। हँसोड़ ने जाते ही जाते हलवाई से कहा—मियाँ आठ आने के पैसे दो और आठ आने की पँचमेल मिठाई। हलवाई ने ताज़ी-ताज़ी मिठाई तौल दी और आठ आने पैसे भी गिन दिये। हँसोड़ ने पैसे तो गाँठ में बाँधे और मिठाई उसी की दूकान पर चखने लगे। इतने में मियाँ आज़ाद भी पहुँचे और बोले—भई लाला, जरा ताजा बेसन के लड्डू तो एक रुपये के तौल देना। उसने एक रुपये के लड्डू तौल कर चंगेर

उनके हाथ में दी। इतने में मियाँ हँसोड़ ने लकड़ी उठायी और अपनी राह चले। हलवाई ने ललकारा—मियाँ, चले कहाँ? पहले रुपया तो देते जाओ।

हँसोड़—रुपया! अच्छा मज़ाक़ है! अबे, क्या तूने रुपया नहीं पाया। यहाँ पहले रुपया देते हैं, पीछे सौदा लेते हैं। अच्छे मिले! क्या दो-दो दफ़े रुपया लोगे? कहीं मैं थाने में रपट न लिखवा दूँ! मुझे भी कोई गँवार समझे हो! अभी चेहरेशाही दे चुका हूँ। अब क्या किसी का घर लेगा?

अब हलवाई और हँसोड़ में तकरार होने लगी। बहुत से आदमी जमा हो गये। कोई कहता है, लाला घास तो नहीं खा गये हो; कोई कहता है, मियाँ एक रुपये के लिए नियत डामाडोल न करो; ईमान सलामत रहेगा, तो बहुत रुपये मिलेंगे।

आज़ाद—लाला, कहीं इसी तरह मेरा भी रुपया न भूल जाना

हलवाई—क्या, आपका रुपया? आपने रुपया किसको दिया?

अब जो सुनता है, वही हलवाई को उल्लू बनाता है। लोगों ने बहुत कुछ लानत-मलानत की कि शरीफ़ आदमी को बेइज़्ज़त करते हो। इतने में उस हलवाई का बुड्ढा बाप आया, तो देखता क्या है कि दूकान पर भीड़ लगी हुई है। पूछा, क्या माजरा है? क्या दूकान लुट गयी? एक बिगड़े-दिल ने कहा—अजी, लुट तो नहीं गयी मगर अब तुम्हारी दुकान की साख जाती रही! अभी एक भलेमानस ने खन से रुपया फेंका। अब कहता है कि हमने रुपया पाया ही नहीं। उसको छोड़ा, तो दूसरे शरीफ़ का दामन पकड़ लिया कि तुमने रुपया नहीं दिया; हालाँकि वह बेचारे सैकड़ों क़समें खाते हैं कि मैं दे चुका हूँ। हलवाई बड़ा तीखा बुड्ढा था, सुनते ही आग हो गया। झल्ला कर अपने लड़के की खोपड़ी पर तान के एक चपत लगायी और बोला—कहता हूँ कि भंग न खाया कर, मानता ही नहीं। जा कर बैठा दूकान पर।

मियाँ आज़ाद और हँसोड़ ने मज़े से डेढ़ रुपये की मिठाई बाँध ली, और आठ आने के पैसे घाते में। जब घर पहुँचे, तो ख़ूब मिठाई चखी। बची बचायी अंदर भेज दी। हँसोड़ ने कहा—यार इसी तरह कहीं से रुपया दिलवाओ, तो जानें। अज़ाद ने कहा—यह कितनी बड़ी बात है? अभी चलो। मगर किसी से माँग-मूँग कर कुछ अशर्फ़ियाँ बाँध लो। मियाँ हँसोड़ ने अपने एक दोस्त से शाम को लौटा देने के वादे पर कुछ अशर्फ़ियाँ लीं! दोनों ने रोशनअली को साथ लिया और बाज़ार चले। पहले एक महाजन को अशर्फ़ियाँ दिखायीं और परखवायीं। बेचते हैं, खरी-खोटी देख लीजिए। महाजन ने उनको ख़ूब कसौटी पर कसा और कहा—उन्नीस के हिसाब से लेंगे। तब हँसोड़ दूसरी दूकान पर पहुँचे। वहाँ भी अशर्फ़ियाँ गिनवायीं और परखवायीं। इसके बाद आज़ाद ने तो अशर्फ़ियाँ ले कर घर की राह ली और मियाँ हँसोड़ एक कोठी में पहुँचे। वहाँ कहा कि हमको दो सौ अशर्फ़ियाँ ख़रीदनी हैं। महाजन ने देखा, आदमी शरीफ़ है, फ़ौरन दो सौ अशर्फ़ियाँ उनके

सामने ढेर कर दीं। बीस रुपये की दर बतायी। हँसोड़ ने महाजन के मुनीम से एक पर्चे पर हिसाब लिखवाया और अशर्फ़ियाँ बाँध कर कोठी के बाहर पहुँचे। गुल मचा— हाँय-हाँय, लेना-लेना, कहाँ-कहाँ! मियाँ हँसोड़ पैतरा बदल सामने खड़े हो गये। बस, दूर ही से बात चीत हो। सामने आये और मैंने तुला हाथ दिया।

महाजन—ऐ साहब, रुपये तो दीजिए?

हँसोड़—कैसे रुपये? हम नहीं बेचते।

महाजन—क्या कहा, नहीं बेचते? क्या अशर्फ़ियाँ आपकी हैं?

हँसोड़—जी, और नहीं तो क्या आपके बाप की हैं? हम नहीं बेचते, आपका इजारा है कुछ? आप हैं कौन ज़बर्दस्ती करनेवाले?

इतने में आज़ाद भी वहाँ आ पहुँचे। देखा, तो महाजन और उनके मुनीम जी गुल मचा रहे हैं—तुम अशर्फ़ियाँ लाये कब थे? और हँसोड़ कह रहे हैं, हम नहीं बेचते। सैकड़ों आदमी जमा थे। पुलीस का एक जमादार भी आ मौजूद हुआ।

जमादार—यह क्या झगड़ा है लाला चुन्नामल? वह नहीं बेचते, तो ज़बर्दस्ती क्यों करते हो? अपने माल पर सबको अख़्तियार है।

महाजन—अच्छी पंचायत करते हो जमादार! यहाँ चार हज़ार रुपये पर पानी फिरा जाता है, आप कहते हैं, जाने भी दो। ये अशर्फ़ियाँ तो हमारी हैं। यह मियाँ ख़रीदने आये थे, हमने गिन दीं। बस, बाँध बूँध कर चल खड़े हुए।

एक आदमी—वाह, भला कोई बात भी है! यह अकेले, आप दस। जो ऐसा होता, तो यह कोठी के बाहर भी आने पाते? आप सब मिल कर इनका अचार न निकाल लेते? इतने बड़े महाजन, और दो सौ अशर्फ़ियों के लिए ईमान छोड़े देते हो!

जमादार—बुरी बात!

हँसोड़—देखिए, आप बाज़ार भर में दरियाफ़्त कर लें कि हमने कितनी दूकानों में अशर्फ़ियाँ दिखलायी और परखवायी हैं? बाज़ार भर गवाह है, कुछ एक-दो आदमी वहाँ थोड़े थे? इसको भी जाने दीजिए। यह पर्चा पढ़िए। अगर यह बेचते होते, तो बीस की दर से हिसाब लगाते, या साढ़े उन्नीस से? मुफ़्त में एक शरीफ़ के पीछे पड़े हैं, लेना एक न देना दो।

आख़िर यह तय हुआ कि बाज़ार में चल कर तहक़ीक़ात की जाय। मियाँ हँसोड़ साहूकार, उनके मुनीम, जमादार और तमाशाई, सब मिलकर बाज़ार चले। वहाँ तहक़ीक़ात की, तो दल्लालों और दूकानदारों ने गवाही दी कि बेशक इनके पास अशर्फ़ियाँ थीं और इन्होंने परखवायी भी थीं। अभी-अभी यहाँ से गये थे।

जमादार—लाला साहब, अब ख़ैर इसी में है कि चुपके रहिए; नहीं तो बेढब ठहरेगी। आपकी साख जायगी और मुनीम की शामत आ जायगी।

महाजन—क्या अंधेर है! चार हजार रुपयों पर पानी पड़ गया, इतने रुपये कभी

उम्र भर में नहीं जमा किये थे, और जो है, हमी को उल्लू बनाता है। ख़ैर साहब, लीजिए, हाथ धोये!

तीनों आदमी घर पहुँचे, तो बाँछें खिली जाती थीं। जाते ही दो सौ अशर्फ़ियाँ खन-खन करके डाल दीं।

आज़ाद—देखा, यों लाते हैं। अब ये अशर्फ़ियाँ हमारी भाभीजान के पास रखो।

हँसोड़—भाई, तुम एक ही उस्ताद हो। आज से मैं तुम्हारा शागिर्द हो गया।

आज़ाद—ले, भाभी से तो खुश-खबरी कह दो। बहुत मुँह फुलाये बैठी थीं।

मियाँ हँसोड़ ने घर में जा कर कहा—कहाँ हो! क्या सो रहीं?

बीबी—क्या कमाई करके लाये हो, डपट रहे हो?

हँसोड़—(अशर्फ़ियाँ खनका कर) लो, इधर आओ, बहुत मिज़ाज न करो। ये लो, दस हज़ार रुपये की अशर्फ़ियाँ।

बीबी—ये बुत्ते किसी और को दीजिएगा! ये तो वही हैं, जो अभी मिर्ज़ा के यहाँ से मँगवायी थीं।

हँसोड़—वह यह हैं, इधर।

बीबी—देखूँ, (खिलखिला कर) किसी के यहाँ फाँदे थे क्या? आख़िर लाये किसके घर से? बस, चुपके से हमारे संदूकचे में रख दो।

हँसोड़—क्यों न हो, मार खायँ ग़ाज़ी मियाँ, माल खायँ मुज़ाविर।

बीबी—सच बताओ, कहाँ मिल गयी? तुम्हें हमारी क़सम!

हँसोड़—यह उन्हीं की करामात है, जिन्हें तुम शोहदा और लुच्चा बनाती थीं।

बीबी—मियाँ, हमारा क़ुसूर माफ़ करो। आदमी की तबीयत हमेशा एक सी थोड़े ही रहती है। मैं तो तुम्हारी लौंडी हूँ।

आज़ाद—(बाहर से) हम भी सुन रहे हैं भाभी साहब! अभी तो आपने हमारे भाई बेचारे को डपट लिया था, घर से बाहर कर दिया था; हमको जो गालियाँ दीं, सो घाते में। अब जो अशर्फ़ियाँ देखीं, तो प्यारी बीबी बन गयीं। अब इनके कान न गरमाइएगा; यह बेचारे बेबाप के हैं।

बीबी ने अन्दर से कहा—आप हमारे मेहमान हैं। आपको क्या कहूँ, आपकी हँसी सिर आँखों पर।

२४

बड़ी बेगम साहबा पुराने ज़माने की रईसज़ादी थीं, टोने टोटके में उन्हें पूरा विश्वास था। बिल्ली अगर घर में किसी दिन आ जाय, तो आफ़त हो जाय। उल्लू बोला और उनकी जान निकली। जूते पर जूता देखा और आग हो गयीं। किसी ने सीटी बजायी और उन्होंने कोसना शुरू किया। कोई पाँव पर पाँव रख कर सोया और आपने ललकारा। कुत्ता गली में रोया और उनका दम निकल गया। रास्ते में काना मिला और उन्होंने पालकी फेर दी। तेली की सूरत देखी और खून सूख गया। किसी ने ज़मीन पर लकीर बनायी और उसकी शामत आयी। रास्ते में कोई टोक दे, तो उसके सिर हो जाती थीं। सावन के महीने में चारपाई बनवाने की क़सम खायी थी। जब देखा कि लड़कियाँ सयानी हो गयीं तो शादी की फ़िक्र हुई। ऊँचे-ऊँचे घरों से पैग़ाम आने लगे। बड़ी लड़की हुस्नआरा की शादी एक रईस के लड़के से तय हो गयी। हुस्नआरा पढ़ी-लिखी औरत थी। उसे यह कब मंजूर हो सकता था कि बिना देखे-भाले शादी हो जाय। जिसकी सूरत ख्वाब में भी नहीं देखी, जिसकी लियाक़त और आदत की ज़रा भी खबर नहीं, उसके साथ हमेशा के लिए बाँध दी जाऊँगी। सहेलियाँ तो उसे मुबारकबाद देती थीं और उसकी जान पर बनी हुई थी। या खुदा, किससे अपने दिल का दर्द कहूँ ? बोलूँ; तो अड़ोस-पड़ोस की औरतें ताने दें कि यह लड़की तो सवार को खड़े-खड़े घोड़े पर से उतार ले। दिल ही दिल में बेचारी कुढ़ने लगी। अपनी छोटी बहन सिपहआरा से अपना दुःख कहती थी और दोनों बहनें गले मिल कर रोती थीं।

एक दिन दोनों बहनें बैठी हुई अखबार पढ़ रही थीं। उसमें एक शरीर लड़के की दास्तान छपी हुई थी। पढ़ने लगीं—

'यह हज़रत दो बार क़ैद भी रह चुके हैं, और अफ़सोस तो यह है कि एक रईस के साहबज़ादे हैं। परसों रात को आपने यह शरारत की कि एक रईस के यहाँ कूदे और कोठरी का ताला तोड़ कर अंदर घुसने लगे। महाजन की लड़की ने जो आहट पायी तो कुलबुला कर उठ खड़ी हुई और अपनी माँ को जगाया। जरी जागो तो, बिल्ली ने तेल का घड़ा गिरा दिया; बिल-बिल ! उसकी माँ गड़बड़ा कर जो उठी, तो आप कोठरी के बाहर एक चारपाई के नीचे दबक रहे। उसने अपने लड़के को जगाया। वह जवान ताल ठोक कर चारपाई पर से कूदा, चोर का कलेजा कितना ? आप चारपाई के नीचे से घबरा कर निकले। महाजन का लड़का भी उनकी तरफ़ झपट पड़ा और उन्हें उठा कर दे मारा। तब उस बदमाश ने कमर से छुरी निकाली और उस महाजन के पेट में भोंक दी। आनन-फानन जान निकल गयी। पड़ोसी और चौकीदार दौड़ पड़े और उस शरीफ़ज़ादे को गिरफ्तार कर लिया। अब वह हवालात

में है। अफ़सोस की बात तो यह है कि उसकी शादी नवाब फरेदूँजंग की लड़की से करार पायी थी जिसका नाम हुस्नआरा है।'

यह लेख पढ़ कर हुस्नआरा आठ-आठ आँसू रोने लगी। उसकी छोटी बहन उसके गले से चिमट गयी और उसको बहुत कुछ समझा-बुझा कर अपनी बूढ़ी माँ के पास गयी। अखबार दिखा कर बोली—देखिए, क्या गज़ब हो गया था, आपने बेदेखे-भाले शादी मंजूर कर ली थी। बूढ़ी बेगम ने यह हाल सुना, तो सिर पीट कर बोलीं—बेटी, आज तड़के जब मैं पलँग से उठी, तो पट से किसी ने छींका और मेरी बायीं आँख भी फड़कने लगी। उसी दम पाँव-तले मिट्टी निकल गयी। मैं तो समझती ही थी कि आज कुछ असगुन होगा। चलो, अल्लाह ने बड़ी खैर की। हुस्नआरा को मेरी तरफ़ से छाती से लगाओ और कह दो कि जिसे तुम पसंद करोगी, उसी के साथ निकाह कर दूँगी।

सिपहआरा अपनी बहन के पास आयी, तो बाँछें, खिली हुई थीं। आते ही बोली—लो बहन, अब तो मुँह-माँगी मुराद पायी! अब उदास क्यों बैठी हो? खुदा-क़सम, वह खुश-खबरी सुनाऊँ कि जी खुश हो जाय।

हुस्नआरा—ऐ है, तो कुछ कहोगी भी। यहाँ क्या जाने, इस वक़्त किस ग़म में बैठे हैं, यह खुशी का कौन मौक़ा है?

सिपहआरा—ऐ वाह, हम यों बता चुके। बिना मिठाई लिये न बतावेंगे। अम्माँ-जान ने कह दिया कि आप जिसके साथ जी चाहे, शादी कर लें। वह अब दखल न देंगी। हाँ, शरीफ़ज़ादा और कल्ले-ठल्ले का जवान हो।

हुस्नआरा—खूबसूरती औरतों में देखी जाती है, मरदों को इससे क्या काम? हाँ, काला-कलूटा न हो, बस।

सिपहआरा—यह आप क्या कहती हैं। 'आदमी-आदमी अंतर, कोई हीरा कोई कंकर।' क्या चाँद में गरहन लगाओगी?

हुस्नआरा—ऐ, तो सूत न कपास, कोरी से लठम-लठा!

इतने में बुढ़े मियाँ पीर बख्श ने आवाज़ दी—बेटी, कहाँ हो, मैं भी आऊँ?

सिपहआरा—आओ, आओ, तुम्हारी ही तो कसर थी। आज सबेरे-सबरे कहाँ थे? कल तो बजरा ऐसा डांवाडोल होता था, जैसे तिनका बहा चला जाता है। कलेजा धक-धक करता था।

पीरबख्श—तुमसे कुछ कहना है बेटी! देखो, तुम हमारी पोतियों से भी छोटी हो। तुम दोनों को मैंने गोदियों खिलाया है, और तुम्हारी माँ हमारे सामने ब्याह आयी हैं। तुम दोनों को मैं अपने बेटे से ज़्यादा चाहता हूँ। मैं जो कहूँ, उसे कान लगा कर सुनना। तुम अब सयानी हुईं। अब मुझे तुम्हारी शादी की फ़िक्र है। पहले तुमसे सलाह ले लूँ, तो बेगम साहब से अर्ज़ करूँ। यों तो कोई लड़की आज तक बिन ब्याही नहीं रही; लेकिन वर उन्हीं लड़कियों को अच्छा मिलता है, जो खुश-नसीब हैं। तुम्हारी माँ हैं तो पुरानी लकीर की फ़कीर, मगर यह मेरा ज़िम्मा कि जिसे तुम पसंद

करो, उसे वह भी मंजूर कर लेंगी। आजकल यहाँ एक शरीफ़ नौजवान आकर ठहरे हैं। सूरत शाहज़ादों की सी, आदत फ़रिश्तों की सी, चलन भलेमानसों का सा, बदन छरहरा, दाढ़ी-मूँछ का नाम नहीं। अभी उठती जवानी है। शेर कहने में, बोलचाल में, इल्म व कमाल में अपना सानी नहीं रखते। तसवीर ऐसी खींचें कि बोल उठे। बाँक-पटे में अच्छे-अच्छे बाँकों के दाँत खट्टे कर दिये। उनकी नस नस में ख़ूबियाँ कूट-कूट कर भरी हैं। अगर हुस्नआरा के साथ उनका निकाह हो जाय, तो ख़ूब हो। पहले तुम देख लो। अगर पसंद आयें, तो तुम्हारी माँ से ज़िक्र करूँ। हाँ, यह वही जवान हैं, जो बजरे के साथ तुमको देखते हुए बाग़ में जा रहे थे। याद आया?

हुस्नआरा—वहाँ तो बहुत से आदमी थे, क्या जाने, किसको कहते हो। बेदेखे-भाले कोई क्या कहे।

सिपहआरा—मतलब यह कि दिखा दो। भला देखें तो, हैं कैसे!

पीरबख़्श—ऐसे जवान तो हमने आज तक कभी देखे न थे। वह नूर है कि निगाह नहीं ठहरती। क़सम ख़ुदा की, जो बात करे, रीझ जाय।

हुस्नआरा—हम बतावें, जब हम बजरों पर हवा खाने चलें तो उन्हें भी वहाँ लाओ? हम उनको देख लें, तब तुम अम्माँ से कहो।

यहाँ ये बातें हो रही थीं, उधर मियाँ आज़ाद अपने हँसोड़ दोस्त के साथ इसी कोठी की तरफ़ टहलते चले आ रहे थे। रास्ते में आठ-दस गधे मिले। गधेवाला उन सबों पर कोड़े फटकार रहा था। आज़ाद ने कहा—क्यों भई, आख़िर इन गधों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जो पीटते जाते हो? कुछ ख़ुदा का भी ख़ौफ़ है, या नहीं? गधेवाले ने इसका तो कुछ जवाब न दिया, गद से एक और जमायी। तब तो मियाँ आज़ाद आग हो गये। बढ़ कर गधेवाले के कई चाँटे लगाये, अबे आख़िर इनमें जान है या नहीं? अगर न चलते, तो हम कहते—ख़ैर यों ही सही; ख़ासे जा रहे हैं खटाखट, और आप पीट रहे हैं।

हँसोड़—आप कौन होते हैं बोलनेवाले? उसके गधे हैं, जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—भई, हमसे तो यह नहीं देखा जाता कि किसी बेज़बान पर कोई आदमी ज़ुल्म करे और हम बैठे देखा करें।

कोई दस ही क़दम आगे बढ़े होंगे कि देखा, एक चिड़ीमार कंपे में लासा लगाये, टट्टी पर पत्ते जमाये चिड़ियों को पकड़ता फिरता है। मियाँ आज़ाद आग भभूका हो गये। इतने में एक तोता जाल में आ फँसा। तब तो मियाँ आज़ाद बौखला गये। गुल मचा कर कहा—ओ चिड़ीमार, छोड़ दे इस तोते को, अभी-अभी छोड़। छोड़ता है या आऊँ? चिड़ीमार हक्का-बक्का हो गया। बोला—साहब, यह तो हमारा पेशा है। आख़िर इसको छोड़ दें, तो करें फिर क्या? आज़ाद बोले—भीख माँग, मज़दूरी कर, मगर यह पेशा छोड़ दे। यह कह कर आपने झोला, कंपा, जाल, सब छीन-छान लिया। झोले को जो खोला तो, सब जानवर फुर से उड़ गये। इतना ही नहीं, कंपे को काट-

कूट कर फेंका, जाल को नोच-नाच कर बराबर किया। तब जेब से निकाल कर दस रुपये चिड़ीमार को दिये और बड़ी देर तक समझाया।

हँसोड़—यार, तुम बड़े बेढब आदमी हो। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि तुम सनक गये हो।

आज़ाद—भई, तुम समझते ही नहीं कि मेरा असल मतलब क्या है ?

हँसोड़—आप अपना मतलब रहने दीजिए। मेरा-आपका साथ न होगा। कहीं आप किसी बिगड़े-दिल से भिड़ पड़े, तो आपके साथ मेरी भी शामत आ जायगी।

आज़ाद—अच्छा, गुस्से को थूक दीजिए। चलिए हमारे साथ।

हँसोड़—अब तो रास्ते में न लड़ पड़िएगा ?

आज़ाद—कह तो दिया कि नहीं।

दोनों आदमी आगे चले, तो क्या देखते हैं, राह में एक गाड़ीवान बैल की दुम ऐंठ रहा है। आज़ाद ने ललकारा—अबे ओ गाड़ीवान, ख़बरदार, जो आज से बैल की दुम ऐंठी।

हँसोड़—फिर वही बात ! इतनी जल्दी भूल गये ?

आज़ाद चुप हो गये। दोनों आदमी चुपचाप चलने लगे। थोड़ी देर में कोठी के क़रीब जा पहुँचे। एकाएक बूढ़े मियाँ पीरबख़्श आते दिखायी दिये। अलेकसलेम के बाद बातें होने लगीं।

आज़ाद—कहिए, उधर भी गये थे ?

पीरबख़्श—हाँ साहब, गया क्यों न था। सबेरे-सबेरे जा पहुँचा और आपकी इतनी तारीफ़ की कि पुल बाँध दिये। और फिर आप जानिए, गोकि बंदा आलिम नहीं, फ़ाज़िल नहीं, मुंशी नहीं, लेकिन बड़े-बड़े आलिमों की आँखें तो देखी हैं, ऐसी लच्छेदार बातें कीं कि आपका रंग जम गया। अब आपको देखने को बेक़रार हैं। हाँ, एक बुरी पख यह है कि आपका इम्तिहान लेंगी। ऐसा न हो कि वह कुछ पूछ बैठें और आप बग़लें झाँकने लगें।

हँसोड़—भई, इम्तिहान का तो नाम बुरा। शायद रह गये, तो फिर ?

आज़ाद—फिर आपका सिर ! रह जाने की एक ही कही। इम्तिहान के नाम से आप जैसे गौखों की जान निकलती है या मेरी ?

पीरबख़्श—तो मैं जा कर कह दूँ कि वह आये हैं।

यह कह कर पीरबख़्श घर में गये और कहा—वह आये हैं, कहो, तो बुला लाऊँ।

सिपहआरा ने कहा—अजनबी का खट से घर में चला आना बुरा। पहले उनसे कहिए, चल कर बाग़ की सैर करें।

पीरबख़्श बाहर गये और मियाँ आज़ाद को ले कर बाग़ में टहलने लगे। दोनों बहनें झरोखों से देखने लगीं। सिपहआरा बोली—बहन, सचमुच यह तो तुम्हारे लायक हैं। अल्लाह ने यह जोड़ी अपने हाथों से बनायी है।

हुस्नआरा—ऐ वाह, कैसी नादान हो ! भला शादी-ब्याह भी यों हुआ करते हैं !

सिपहआरा—मैं एक न मानूँगी।

हुस्नआरा—मुझसे क्यों झगड़ती हो, अम्माँजान से कहो।

सिपहआरा—अच्छा, तो मैं अम्माँजान के यहाँ जाती हूँ; मगर देखिए, मुकर न जाइएगा।

यह कहकर सिपहआरा बड़ी बेगम के पास पहुँची और आज़ाद का जिक्र छेड़ कर बोली—अम्माँजान, मैंने तो आज तक ऐसा ख़ूबसूरत आदमी देखा ही नहीं। शरीफ़, हँसमुख और पढ़े-लिखे। आप भी एक दफ़े देख लें।

बड़ी बेगम ने सिपहआरा को छाती से लगाया और हँस कर कहा—तू मुझसे उड़ती है? यह क्यों नहीं कहती कि सिखायी पढ़ायी आयी हूँ।

सिपहआरा—नहीं अम्माँजान, आप उन्हें ज़रूर बुलायें।

बेगम—हुस्नआरा से भी पूछा? वह क्या कहती हैं?

सिपहआरा—वह तो कहती हैं, अम्माँजान जिससे चाहें, उससे करें। मगर दिल उनका आया हुआ है।

बेगम—अच्छा, बुलवा लो।

सिपहआरा वहाँ से लौटी, तो मारे खुशी के उछली पड़ती थी। फ़ौरन पीरबख्श को बुला कर कहा—आप मियाँ आज़ाद को अन्दर लाइए। अम्माँजान उन्हें देखना चाहती हैं।

ज़रा देर में पीरबख्श मियाँ आज़ाद को लिये हुए बेगम के पास पहुँचे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

बेगम—जीते रहो बेटा! आओ, इधर आकर बैठो। मिज़ाज तो अच्छे हैं? सिपहआरा तुम्हारी बड़ी तारीफ़ करती थी, और बेशक़ तुम हो इस लायक़। तुमको देख कर तबीयत बहुत खुश हुई।

आज़ाद—आपकी ज़ियारत का बहुत दिनों से शौक़ था। सच है, बड़े-बूढ़ों की क्या बात है!

बेगम—क्यों बेटा, हाथी को ख्वाब में देखे, तो कैसा?

आज़ाद—बहुत बुरा। मगर हाँ, अगर हाथी किसी पर अपनी सूँड़ फेर रहा हो, तो समझना चाहिए कि आयी हुई बला टल गयी।

बेगम—शाबाश, तुम बड़े लायक़ हो।

बेगम साहब ने मियाँ आज़ाद को बड़ी देर तक बिठाया और साथ ही खाना खिलाया। आज़ाद हाँ में हाँ मिलाते जाते थे और दिल ही दिल में खिलखिलाते थे। जब शाम हुई, तो आज़ाद रुख़सत हुए।

आसमान पर बादल छाये हुए थे, तेज़ हवा चल रही थी, मगर दोनों बहनों को बजरे पर सैर करने की धुन समायी। दरिया के किनारे आ पहुँचीं। पीरबख्श ने बजरा खोला और दोनों बहनों को बिठा कर सैर कराने लगे। बजरा बहाव पर फर्राटे से बहा जाता था। ठंडी-ठंडी हवाएँ, काली-काली घटाएँ, सिपहआरा की प्यारी-

प्यारी बातें, बूँदों का गिरना, लहरों का थिरकना अजब बहार दिखाता था। इतने में हवा ने वह ज़ोर बाँधा कि बेड़ा उछलने लगा। अब बजरे कि यह हालत है कि डाँवाडोल हो रहा है। यह डूबा, वह डूबा। पीरबख्श था तो खुर्रांट, लेकिन उसके भी हाथ-पाँव फूल गये, सैर-दरिया की कहानियाँ सब भूल गये। दोनों बहनें काँपने लगीं। एक दूसरे को हसरत की निगाह से देखने लगीं। दो की दोनों रो रही थीं। मियाँ आज़ाद अभी तक दरिया के किनारे टहल रहे थे। बजरे को पानी में चक्कर खाते देखा, तो होश उड़ गये। इतने में एक दफ़े बिजली चमकी। सिपहआरा डर कर दौड़ी, मगर मारे घबराहट के नदी में गिर पड़ी। डूबते ही पहले गोता खाया और लगी हाथ-पाँव फटफटाने। ज़रा देर के बाद फिर उभरी और फिर गोता खाया। आज़ाद ने यह कैफ़ियत देखी, तो झटपट कपड़े उतार कर धम से कूद ही तो पड़े। पहली डुबकी मारी, तो सिपाहआरा के बाल हाथ में आये। उन्होंने झट से ज़ुल्फ़ को पकड़कर खींचा, तो वह उभरी। यह वही सिपहआरा है, जो किसी अनजान आदमी को देख कर मुँह छिपा लेती और फुर्ती से भाग जाती थी। मियाँ आज़ाद उसे साथ लिये, मल्लाही चीरते और खड़ी लगाते बजरे की तरफ चले। लेकिन बजरा हवा से बातें करता चला जाता था। पानी बल्लियों उछलता था। आज़ाद ने जोर से पुकारा—ओ मियाँ पीरबख्श, बजरा रोको, ख़ुदा के वास्ते रोको, पीरबख्श के होश-हवाश उड़े हुए थे। बजरा ख़ुदा की राह पर जिधर चाहता था, जाता था। मियाँ आज़ाद बहुत अच्छे तैराक थे; लेकिन बरसों से आदत छुटी हुई थी। दम फूल गया। इत्तिफ़ाक़ से एक भँवर में पड़ गये। बहुत ज़ोर मारा, मगर एक न चल सकी। उस पर एक मुसीबत यह और हुई कि सिपहआरा छूट गयी। आज़ाद की आँखों से आँसू निकल पड़े। फिर बड़ी फुर्ती से झपटे, लाश को उभारा और लादकर चले। मगर अब देखते हैं, तो बजरे का कहीं पता ही नहीं। दिल में सोचे, बजरा डूब गया और हुस्नआरा लहरों का लुक़मा बन गयी। अब मैं सिपहआरा को लादे-लादे कहाँ तक जाऊँ। लेकिन दिल में ठान ली कि चाहे बचूँ, चाहे डूबूँ, सिपह-आरा को न छोड़ूँगा। फिर चिल्लाये—यारो, कोई मदद को आओ। एक बुड्ढा आदमी किनारे पर खड़ा यह नज़ारा देख रहा था। आज़ाद को इस हालत में देख-कर आवाज दी—शाबाश बेटा, शाबाश! मैं अभी आता हूँ। यह कह कर उसने कपड़े उतारे और लँगोट बाँध कर धम से कूद ही तो पड़ा। उसकी आवाज का सुनना था कि मियाँ आज़ाद को ढारस हुआ, वह तेज़ी के साथ चलने लगे। बुड्ढे आदमी ने दो ही हाथ खड़ी के लगाये थे कि साँस फूल गयी और पानी ने इस ज़ोर से थपेड़ा दिया कि पचास गज़ के फ़ासले पर हो रहा। अब न आज़ाद को वह सूझता है और न उसको आज़ाद नज़र आते हैं। मल्लाह ने बजरे पर से बुड्ढे को देख लिया। समझा कि मियाँ आज़ाद हैं। पुकारा—अरे भई आज़ाद, ज़ोर करके इधर आओ। बुड्ढे ने बहुत हाथ-पैर मारे, मगर न जा सका। तब पीरबख्श ने डाँड़ सँभाले और बुड्ढे की तरफ चले। मगर अफ़सोस, दो-चार ही हाथ रह गया

था कि एक मगर ने भाड़ सा मुँह खोल कर बुड्ढे को निगल लिया। मल्लाह ने सिर पीटकर रोना शुरू किया—हाय आज़ाद, तुम भी जुदा हुए, बेचारी सिपहआरा का साथ दिया, यह आवाज़ मियाँ आज़ाद के कानों में भी पड़ी। समझे, वही बुड्ढा, जो टीले पर से कूदा था, चिल्ला रहा है। इतने में बजरा नज़र आया तो बारा-चारा हो गये। अब यह बिलकुल बेदम हो चुके थे; लेकिन बजरे को देखते ही हिम्मत बँध गयी। ज़ोर से खड़ी लगानी शुरू की। बज़रे के क़रीब आये, तो पीरबख्श ने पहचाना। मारे खुशी के तालियाँ बजाने लगे। आज़ाद ने सिपहआरा को बजरे में लिटा दिया और दोनों ने मिल कर उसके पेट से पानी निकाला। फिर लिटा कर अपने बैग में से कोई दवा निकाली और उसे पिला दी। अब हुस्नआरा की फ़िक्र हुई। वह बेचारी बेहोश पड़ी हुई थी। आज़ाद ने उसके मुँह पर पानी के छींटे दिये, तो ज़रा होश आया। मगर आँखें बंद। होश आते ही पूछा—प्यारी सिपहआरा कहाँ है? आज़ाद जीते बचे? पीरबख्श ने पुकार कर कहा—आज़ाद तुम्हारे सिरहाने बैठे हैं और सिपहआरा तुम्हारे पास लेटी हैं। इतना सुनना था कि हुस्नआरा ने आँख खोली और आज़ाद को देख कर बोली—आज़ाद, मेरी जान अगर तुम पर से फ़िदा हो जाय, तो इस वक़्त मुझे उससे ज्यादा खुशी हो, जितनी सिपहआरा के बच जाने से हुई। मैं सच्चे दिल से कहती हूँ, मुझे तुमसे सच्ची मुहब्बत है।

इतने में दवा का असर जो पहुँचा, तो सिपहआरा भी अहिस्ता से उठ बैठी। दोनों बहनें गले मिल कर रोने लगीं। हुस्नआरा बार-बार आज़ाद की बलाएँ लेती थी। मैं तुम पर वारी हो जाऊँ, तुमने आज वह किया, जो दूसरा कभी न करता। हवा बँध गयी थी, बजरा आहिस्ता-आहिस्ता किनारे पर आ लगा। आज़ाद ने घास पर लेट कर कहा। उफ़, मर मिटे!

हुस्नआरा—बेशक सिपहआरा की जान बचायी, मेरी जान बचायी, इस बेचारे बुड्ढे की जान बचायी। इससे बढ़ कर अब और क्या होगा!

पीरबख्श—मियाँ आज़ाद, खुदा तुमको ऐसा बुड्ढा करे कि तुम्हारे परपोते मुझसे बड़े हो-होकर तुम्हारे सामने खेलें। मैंने कुछ और ही समझा था। एक आदमी तैरता हुआ जाता था। मैंने समझा, तुम हो।

आज़ाद—हाँ, हाँ, मैं तो उसे भूल ही गया था। फिर वह कहाँ गया?

पीरबख्श—क्या कहूँ, उसको तो एक मगर निगल गया।

आज़ाद—अफ़सोस! कितना दिलेर आदमी था। मुझे मुसीबत में देख कर धम से कूद पड़ा।

सिपहआरा—मुझ नसीबों-जली के कारन उस बेचारे की जान मुफ़्त में गयी। मेरी आँखों में अँधेरा सा छाया हुआ है। इस दरिया का सत्यानाश हो जाय! जिस वक़्त मैं अपना गिरना और ग़ोते लगाना याद करती हूँ, तो रोएँ खड़े हो जाते हैं। पहले तो मैंने खूब हाथ-पाँव मारे, मगर जब नीचे बैठ गयी तो मुँह में पानी जाने लगा। मैंने दोनों हाथों से मुँह बंद कर लिया। फिर मुझे कुछ याद नहीं।

हुस्नआरा—बड़े गाढ़े वक़्त काम आये।

पीरबख्श—अब आप ज़रा सो रहिएगा, तो थकावट कम हो जायगी।

तीनों आदमी थक कर चूर हो गये थे। वहीं हरी-हरी घास पर लेटे, तो तीनों की आँख लग गयी। चार घंटे तक सोते रहे। जब नींद खुली, तो घर चलने की ठहरी। पीरबख्श ने कहा—इस वक्त तो बजरे पर सवार होना हिमाक़त है। सड़क-सड़क चलें।

आज़ाद—अजी, तो क्या हर दम तूफ़ान आया करता है!

दोनों बहनों ने कहा—हम तो इस वक्त बजरे पर न चढ़ेंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।

आज़ाद ने कहा—जो इस वक्त झिझक गयीं, तो उम्र भर खौफ़ लगता रहेगा।

हुस्नआरा—चलिए, रहने दीजिए, अब तो मारे थकावट के आपके बदन में इतनी ताक़त भी नहीं रही होगी कि किसी की लाश को दो क़दम भी ले चलिए। ना साहब, बंदी नहीं जाने की। बजरे की सूरत देखने से बदन काँपता है। हम तुम्हें भी न जाने देंगे।

सिपहआरा—आप बजरे पर बैठे, और हम इधर दरिया में फाँद पड़े!

आखिर यह तय हुआ कि पीरबख्श बजरा लायें और तीनों आदमी ऊपर-ऊपर घर की तरफ़ चलें।

आज़ाद ने मौका पाया, तो बोले—अब तो हमसे कभी परदा न होगा? हम आपको अपना दिल दे चुके। हुस्नआरा ने कुछ जवाब न दिया, शरमा कर सिर झुका लिया।

रात बहुत ज्यादा बीत गयी थी। आज़ाद पीरबख्श के साथ सोये। सुबह को उठे, तो क्या देखते हैं, हुस्नआरा के साथ उनकी दो फुफेरी बहनें छमाछम करती चली आती हैं। एक का नाम जहानआरा था, दूसरी का गेतीआरा। दोनों बहनों ने आज़ाद को झरोखे से देखा। तब जहानआरा हुस्नआरा से बोली—बहन, तुम्हारी पसंद की मैं क़ायल हो गयी। ऐसा बाँका जवान हमारी नज़र से नहीं गुज़रा।

सिपहआरा—हम कहते न थे कि मियाँ आज़ाद सा तरहदार जवान कम होगा। फिर, मेरी तो उन्होंने जान ही बचायी है। जब तक जिऊँगी, तब तक उनका दम भरूँगी।

इतने में पीरबख्श भी आ पहुँचे। जहानआरा ने उनसे कहा—क्यों जी, इन सन से सफेद बालों में खिज़ाब क्यों नहीं लगाते? अब तो आप कोई दो सौ से ऊपर होंगे। क्या मरना बिलकुल भूल बैठे? तुम्हें तो मौत ने भी साँड़ की तरह छोड़ दिया!

पीरबख्श—बेटी, बहुत कट गयी, थोड़ी बाक़ी है! यह भी कट जायगी। खिज़ाब लगा कर रूसियाह कौन हो!

सिपहआरा—आज़ाद से तो अब कोई परदा है नहीं। उन्हें भी न बुला लें?

गेतीआरा—कभी की जान-पहचान होती, तो मुज़ायक़ा न था।

आज़ाद ने सामने से आकर कहा—फ़क़ीरों से भी जान-पहचान की ज़रूरत? फ़क़ीरों से कैसा परदा?

गेतीआरा—यह फ़क़ीर आप कब से हुए?

आज़ाद—जब से हसीनों की सोहबत हुई।

गेतीआरा—आप शायर भी तो हैं! अगर तबीयत हाज़िर हो, तो इस मिसरे पर एक ग़ज़ल कहिए—

मरज़ें-इश्क़ लादवा देखा।

आज़ाद—तबीयत की तो न पूछिए, हर वक़्त हाज़िर रहती है; रहा दिमाग़, वह अपने में नहीं। फिर भी आपका हुक्म कैसे टालूँ। सुनिए—

शेख़, काबे में तूने क्या देखा;
हम बुतों से मिले; ख़ुदा देखा।
सोज़-नाला ने कुछ असर न किया;
हमने यह साज़ भी बजा देखा।
आह ने मेरी कुछ न काम किया;
हमने यह तीर भी लगा देखा।
हर मरज़ की दवा मुक़र्रर है;
मरज़े-इश्क़ लादवा देखा।
शक़्ले नाखुन है गरचे अबरुए-यार;
पर न इसको गिरहकुशा देखा।
हमने देखा न आशिक़े आज़ाद;
और जो देखा तो मुब्तिला देखा!

गेतीआरा—माशा-अल्लाह, कैसी हज़िर तबीयत!

आज़ाद—इन्साफ के तो यह माने हैं कि मैंने आपको ख़ुश किया, अब आप मुझको ख़ुश करें।

गेतीआरा—आप कुछ फ़र्माएँ, मैं कोशिश करूँगी।

आज़ाद—यह तो मेरी सूरत ही से ज़ाहिर है कि अपना दिल हुस्नआरा को दे चुका हूँ।

गेतीआरा—क्यों हुस्नआरा, मान क्यों नहीं जातीं? यह बेचारे तुम्हें अपना दिल दे चुके।

हुस्नआरा—वाह, क्या सिफ़ारिश है! क्यों मान लें, शादी भी कोई दिल्लगी है? मैं बेसमझे-बूझे हाँ न करूँगी। सुनिए साहब, मैं आप की अदा, आपकी वफ़ा, आपकी चाल-ढाल, आपकी लियाक़त और शराफ़त पर दिल और जान से आशिक़ हूँ; मगर यह याद रखिए, मैं ऐसा काम नहीं करना चाहती, जिससे पढ़ी-लिखी औरत बदनाम हों। हमें ऐसा चाल-चलन रखना चाहिए, जो औरों के लिए नमूना हो। इस शहर की सब औरतें मुझे देखती रहती हैं कि यह किस तरफ़ को जाती है। आपको कोई यहाँ जानता नहीं। आप पहले यहाँ शरीफ़ों में इज्ज़त पैदा कीजिए, आपके यहाँ पंद्रहवें दिन मुशायरा हो और लोग आपको जानें। कोई कोठी किराये पर लीजिए ओर उसे ख़ूब सजाइए, ताकि लोग समझें कि सलीक़े का आदमी है और रोटियों

को मुहताज नहीं। शरीफ़ज़ादों के सिवा ऐरों-ग़ैरों से सोहबत न रखिए और हर रोज़ जुमा की नमाज़ पढ़ने के लिए मसजिद जाया कीजिए! लेकिन दिखावा भी ज़रूरी है। एक सवारी भी रखिए और सुबह-शाम हवा खाने जाइए, अगर इन बातों को आप मानें, तो मुझे शादी करने में कुछ उज्र नहीं। यों तो मैं आपके एहसान से दबी हुई हूँ, लेकिन आप समझदार आदमी हैं, इसलिए मैंने साफ़-साफ़ समझा दिया।

आज़ाद—ऐसे समझदार होने से बाज़ आये! हम गँवार ही सही। आपने जो कुछ कहा, सब हमें मंजूर है; लेकिन आप भी मुझे कभी-कभी यहाँ तक आने की इजाज़त दीजिए और आपकी ये बहनें मुझसे मिला करें।

गेतीआरा—जरी फिर तो कहिएगा! आपको अपनी हुस्नआरा से काम है, या उनकी बहनों से? हुस्नआरा ने आपसे जो कुछ कहा, उसको गौर कीजिए। अभी जल्दी न कीजिए। आप शराब तो नहीं पीते?

आज़ाद—शराब की सूरत और नाम से नफरत है।

हुस्नआरा—फिर आपके पास बज़रे पर कहाँ से आयी, जो आपने सिपहआरा को पिलायी।

आज़ाद—वाह, वह तो दवा थी।

जहानआरा—ऐ बाजी, भैया कब से सो रहा है। ज़रा जगा दो। दो घड़ी खेलने को जी चाहता है।

गेतीआरा—ना, कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना। बच्चे जब सोते हों, तो उनको जगाना न चाहिए। उनको जगाना उनकी बाढ़ को रोकना है।

हुस्नआरा—इस वक़्त हवा बड़े जोर से चल रही है और तुमने भैया को बारीक शरबती पहना दी है। ऐ दिलबहार, फलालेन का कुर्त्ता नीचे पहना दो। यह रुपया कौन भैया के हाथ में दे गया? और जो खेलते-खेलते मुँह में ले जाय तो?

दिलबहार—ऐ हुजूर, छीन तो लूँ, जब वह दे भी। वह तो रोने लगता है।

हुस्नआरा—देखो, हम किस तरक़ीब से ले लेते हैं, भला रोवे तो, (चुमकार कर) भैया, (तालियाँ बजा कर) भैया, ला, तुझे चीज़ मँगा दूँ।

यह कह कर हुस्नआरा ने लड़के को गुदगुदाया। लड़का हँस पड़ा और रुपया हाथ से अलग।

दिलबहार—मौसी को कैसे चुपचुपाते रुपया दे दिया और हमने हाथ ही लगाया था कि गुल मचाने लगा।

गेतीआरा—उम्र भर तुमने लड़के पाले, मगर पालना न आया। बच्चों का पालना कुछ हँसी-खेल थोड़े ही है।

दिलबहार—अभी मेरा सिन ही क्या है कि ये बातें जानूँ।

गेतीआरा—देखो, रात को दरख्त के तले बच्चे को न सुलाया करो। बच्चा बीमार हो जाता है।

दिलबहार—हाँ, सुना है, लड़के भूत-प्रेत के झपेट में आ जाते हैं।

हुस्नआरा—झपेट और भूत-प्रेत सब ढकोसला है। रात को दरख़्त के नीचे सोना इसलिए बुरा है कि रात को दरख़्त से ज़हरीली हवा निकलती है।

इधर तो ये बातें हो रही थीं, औरतों की तालीम का ज़िक्र छिड़ा हुआ था, हुस्नआरा औरतों की तालीम पर ज़ोर दे रही थी, उधर मियाँ पीरबख़्श को बाल बनवाने का शौक़ जो चर्राया, तो हज्जाम को बुलवाया। हज्जाम बाल बनाते-बनाते कहने लगा—हुज़ूर, एक दिन मैं सराय में गया था, तो वहाँ यह भी टिके हुए थे—यही जो जवान से हैं, गोरे-गोरे, बजरे पर सैर करने गये थे—हाँ, याद आ गया, मियाँ आज़ाद, वह भी वहाँ मिले। वह साहब तुम्हारे, उस सराय की भठियारी से शादी करने को थे, मुल फिर निकल गये। उसने इन पर नालिश जड़ दी, तो वहाँ से भागे। उस भठियारी को ऊँट पर सवार करके रात को लिये फिरते थे। पीरबख़्श ने यह क़िस्सा सुना, तो सन्नाटे में आ गये। बोले—ख़बरदार, और किसी से न कहना।

२५

मियाँ आज़ाद हुस्नआरा के यहाँ से चले, तो घूमते-घामते हँसोड़ के मकान पर पहुँचे और पुकारा। लौंडी बोली कि वह तो कहीं गये हैं, आप बैठिए।

आज़ाद—भाभी साहब से हमारी बंदगी कह दो और कहो, मिज़ाज पूछते हैं।

लौंडी—बेगम साहबा सलाम कहती हैं और फ़र्माती हैं कि कहाँ रहे?

आज़ाद—इधर-उधर मारा-मारा फिरता था।

लौंडी—वह कहती हैं, हमसे बहुत न उड़िए। यहाँ कच्ची गोलियाँ नहीं खेलीं। कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी है। यह बजरे पर हवा खाना और यहाँ आ कर बुत्ते बताना।

आज़ाद—आपसे यह कौन कच्चा चिट्ठा कह गया?

लौंडी—कहती हैं कि मुझसे भी परदा है? इतना तो बता दीजिए कि बरात किस दिन चढ़ेगी? हमने सुना है, हुस्नआरा आप पर बेतरह रीझ गयीं। और, क्यों न रीझें, आप भी तो माशाअल्लाह गबरू जवान हैं।

आज़ाद—फिर भाई किसके हैं, जैसे वह ख़ूबसूरत, वैसे हम।

लौंडी—फ़र्माती हैं कि धाँधली रहने दीजिए।

आज़ाद—भाभी साहब, यह घूँघट कैसा? हमसे कैसा परदा?

इतने में किसी ने पीछे से मियाँ आज़ाद की आँखें बंद कर लीं।

आज़ाद चिल्ला उठे—भाई साहब।

हँसोड़—वहाँ तो आपने ख़ूब रंग जमाया।

आज़ाद—अजी, आपकी दुआ है, मैं भला क्या रंग जमाता। मगर दोनों बहनें एक से एक बढ़ कर हैं। हुस्नआरा की दो बहनें और आयी थीं। वल्लाह, ख़ूब-मज़े रहे।

हँसोड़—खुशनसीब हो भाई, जहाँ जाते हो, वहीं पौ-बारह होते हैं। वल्लाह, मान गया।

आज़ाद—मगर भाई, एक ग़लती हो गयी। उन्होंने किसी तरह भाँप लिया कि मैं शराब भी पीता हूँ।

हँसोड़—बड़े अहमक़ हो भई, कोई ऐसी हरकत करता है। तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गयी।

आज़ाद—अजी, मुझे तो अपनी सूरत से आप नफ़रत हो गयी। मगर अब कुछ तदबीर तो बताओ?

हँसोड़—उसी बुड्ढे को साँटो, तो काम चले।

इस वक़्त दोनों आदमी खाना खा कर लेटे। जब शाम हुई, तो दोनों हुस्नआरा की तरफ़ चले। भरी बरसात के दिन, कोई गोली के टप्पे पर गये होंगे कि पश्चिम की तरफ़ से मतवाली काली घटा झूमती हुई आयी और दम के दम में चारों तरफ़

अँधेरा छा गया। दूकानदार दूकानें झटपट बंद करने लगे। खोंचेवालों ने खोंचा सँभाला, और लंबे हुए। कोई टट्टू को सोंटे पर सोंटा लगाता है; किसी का बैल दुम दबाये भागा जाता है। कहार पालकी उठाये, क़दम जमाये उड़े जाते हैं, दहने जंगी, बायें चरखा—हूँ-हूँ-हूँ। पैदल चलनेवाले तेज़ कदम उठाते हैं, पाँयचे चढ़ाते हैं। किसी ने जूतियाँ बग़ल में दबायीं और सरपट भागा। किसी ने कमर कसी और घोड़े को एँड़ दी। अँधेरा इस ग़ज़ब का है कि राह सूझती ही नहीं, एक पर एक भद-भद करके गिरता है और मियाँ आज़ाद क़हक़हे लगाते हैं। क्यों हज़रत, पूछना न पाछना और धमाक से लुढ़क जाना!

आज़ाद—बस, और थोड़ी दूर रह गया है।

हँसोड़—आपको थोड़ी दूर होगा, यहाँ तो कदम भर चलना मुश्किल हो रहा है। जरी देख-भाल कर क़दम उठाइएगा। उफ्, हवा ने क्या ज़ोर बाँधा, मैं तो वल्लाह, काँपने लगा। अगर सलाह हो, घर पलट चलें। वह लीजिए, बूँदें भी पड़ने लगीं। किसी भले-मानुस के पास जाने का भला यह कौन मौक़ा है।

आज़ाद—अजी, ये बातें उससे कीजिए, जो अपने होश में हो। यहाँ तो दीवानापन सवार है।

इतने में बड़ी बेगम का महल नज़र पड़ा। आज़ाद ने मारे ख़ुशी के टोपी उछाल दी। तब तो हँसोड़ ने बिगड़ कर उसे एक अंधे कुएँ में फेक दिया और कहा—बस, तुममें यही तो ऐब है कि अपने आपे में नहीं रहते। 'ओछे के घर तीतर, बाहर रखूँ कि भीतर।'

आज़ाद—या तंग न कर नासेह नादाँ, मुझे इतना,
या लाके दिखा दे दहन ऐसा, कमर ऐसी।

तुम रूखे-फीके आदमी, चेहरे पर भूसा उड़ रहा है। तुम ये मुहब्बत की बातें क्या जानो?

जब महल के क़रीब पहुँचे, तो चौकीदार ने ललकारा—कौन? मियाँ हँसोड़ तो झिझके, मगर, आज़ाद ने बढ़ कर कहा—हम हैं, हम।

चौकीदार—अजी, हम का नाम तो फ़र्माइए, या ठंडी-ठंडी हवा खाइए।

आज़ाद—हम? हमारा नाम मियाँ आज़ाद है। तुम दिलबहार को इत्तिला कर दो।

ख़ैर, किसी तरह आज़ाद अंदर पहुँचे। हुस्नआरा उस वक़्त सो रही थीं और सिपहआरा बैठी एक शायर का दीवान पढ़ रही थी। आज़ाद की ख़बर सुनते ही बोली—कहाँ हैं कहाँ, बुला लाओ। मियाँ आज़ाद मकान में दाख़िल हुए।

सिपहआरा—वह आयें घर में हमारे
ख़ुदा की कुदरत है;
कभी हम उनको, कभी
अपने घर को देखते हैं।

आज़ाद—यह रूखी ख़ातिरदारी कब तक होगी? हमें दूल्हा भाई कब से कहिएगा?

सिपहआरा—ख़ुदा वह दिन दिखाये तो।

आज़ाद—आपकी बाजी कहाँ हैं?

सिपहआरा—आज कुछ तबीयत नासाज़ है। दिलबहार, जगा दो। कहो मियाँ आज़ाद आये हैं।

हुस्नआरा अँगड़ाई लेती अठखेलियाँ करती चलीं और आज़ाद के क़रीब आ कर बैठ गयीं।

आज़ाद—इस वक़्त हमारे दिल की कली खिल गयी।

सिपहआरा—क्यों नहीं, फिर मुँह-माँगी मुराद भी तो मिल गयी।

आज़ाद—आखिर अब हम कब तक तरसा करें? आज मैं बेकबुलवाये उठूँ, तो आज़ाद नहीं।

हुस्नआरा—हमारा तो इस वक़्त बुरा हाल है। नींद उमड़ी चली आती है। अब हमें सोने जाने दीजिए।

आज़ाद—(दुपट्टा पाँव से दबाकर) हाँ, जाइए, आराम कीजिए।

हुस्नआरा—शरारत से आप बाज़ नहीं आते! दामन तो दबाये हैं और कहते हैं, जाइए-जाइए, क्योंकर जायँ?

आज़ाद—दुपट्टे को फेंक जाइए।

हुस्नआरा—बजा है, यह किसी और को सिखाइए, (बैठकर) अब साफ़ कह दूँ।

आज़ाद—ज़रूर; मगर आपके तेवर इस वक़्त बेढब हैं, खुदा ही खैर करे! जो कुछ कहना हो कह डालिए। ख़ुदा करे, मेरे मतलब की बात मुँह से निकले!

हुस्नआरा—आप लायक़ हैं, मगर एक परदेसी आदमी, ठौर न ठिकाना, घर न बार। किसी से आपका ज़िक्र करूँ, तो क्या कहूँ? किसके लड़के हैं? किसके पोते हैं? किस ख़ानदान के हैं? शहर भर में यही ख़बर मशहूर हो जायगी कि हुस्नआरा ने एक परदेसी के साथ शादी कर ली। मुझे तो इसकी परवा नहीं; लेकिन डर यह है कि कहीं इस निकाह से लोग पढ़ी-लिखी औरतों को नीची नज़र से न देखने लगें। बात वह करनी चाहिए कि धब्बा न लगे। मैं पहले भी कह चुकी हूँ और अब फिर कहती हूँ कि शहर में नाम पैदा कीजिए, इज़्ज़त कमाइए, चार भले आदमियों में आपकी क़दर हो।

आज़ाद—कहिए, आग में फाँद पड़ूँ?

हुस्नआरा—माशा-अल्लाह, कही भी तो निराली? अगर आप आग में फाँद पड़े, तो लोग आपको सिड़ी समझेंगे।

सिपहआरा—कोई किताब लिखिए।

हुस्नआरा—नहीं; कोई बहादुरी की बात हो कि जो सुने, वाह-वाह करने लगे, और फिर अच्छी-अच्छी रईसज़ादियाँ चाहें कि उनके साथ मियाँ आज़ाद का ब्याह हो जाय। इस वक़्त मौका भी अच्छा है। रूम और रूस में लड़ाई छिड़नेवाली है।

रूम की मदद करना आपका फ़र्ज़ है। आप रूम की तरफ़ से लड़िए और ज़वाँमर्दी के जौहर दिखाइए, तमग़े लटकाये हुए आइए, तो फिर हिंदोस्तान भर में आप ही की चर्चा हो।

आज़ाद—मंजूर, दिलोजान से मंजूर। जाऊँ और बीच खेत जाऊँ। मरे, तो सीधे जन्नत में जायँगे। बचे, तो तुमको पायेंगे।

सिपहआरा—मेरे तो लड़ाई के नाम से होश उड़े जाते हैं। (हुस्नआरा से चिमट कर) बाजी, तुम कैसी बेदर्द हो, कहाँ काले कोसों भेजती हो! तुम्हें ख़ुदा की कसम, इस ख़याल से बाज़ आओ। आज़ाद जायेंगे, तो फिर उनकी सूरत देखने को तरस जाओगी। दिन-रात आँसू बहाओगी। क्यों मुफ़्त में किसी की जान की दुश्मन हुई हो?

किनारे दरिया पहुँच के पानी
पिया नहीं एक बूँद तिस पर,
चढ़ी है मौज़ों की हमसे त्यौरी
हुबाब आँखें बदल रहे हैं।

यह कहते-कहते सिपहआरा की आँखों से गोल-गोल आँसू की बूँदें गिरने लगीं।

हुस्नआरा—हैं-हैं, बहन, यह मुफ़्त का रोना धोना अच्छा स्वाँग है, वह मुबारक दिन मेरी आँखों के सामने फिर रहा है, जब आज़ाद तमग़े लटकाये हुए हमारे दरवाज़े पर खड़े होंगे।

मियाँ आज़ाद पर इस वक्त वह जोबन था कि ओहोहो, जवानी फटी पड़ती थी। आँखें सुर्ख, जैसे कबूतर का ख़ून; मुखड़ा गोरा, जैसे गुलाब का फूल; कपड़े वह बाँके पहने थे कि सिर से पाँव तक एक-एक अंग निखर गया था; टोपी वह बाँकी की बाँकपन भी लोट जाय; कमर से दोहरी तलवारें लटकी हुईं। हुस्नआरा को उनका चाँद सा मुखड़ा ऐसा भाया कि जी चाहा, इसी वक्त निकाह कर लूँ; मगर दिल पर ज़ब्त किया।

आज़ाद—आज हम घर से मौत की तलाशी में ही निकले थे—

जब से सुना कि मरने का है नाम ज़िंदगी;
सिर से कफ़न को बाँधे क़ातिल को ढूँढ़ते हैं।

सिपहआरा—प्यारे आज़ाद, ख़ुदा के वास्ते इस ख़याल से बाज़ आओ।

आज़ाद—या हाँथ तोड़ जायँगे, या खोलेंगे नक़ाब। हुस्नआरा सी बीबीं पाना दिल्लगी नहीं। अब हम फिर शादी का हर्फ़ भी ज़बान पर लायें, तो जवाँमर्द नहीं। अब हमारी इनकी शादी उसी रोज होगी, जब हम मैदान से सुर्खरू हो कर लौटेंगे। हम सिर कटवायें, जख़्म पर जख़्म खायेंगे मगर मैदान से क़दम न हटायेंगे।

सिपहआरा—जो आपने दालान तक भी क़दम रखा तो हम रो-रो कर जान दे देंगे।

आज़ाद-तुम घबराओ नहीं, जीते बचे, तो फिर आयेंगे। हमारे दिल से हुस्न

आरा की और तुम्हारी मुहब्बत जाती रहे, यह मुश्किल है। तुम मेरी खातिर से रोना-धोना छोड़ दो। आखिर क्या लड़ाई में सब के सब मर ही जाते हैं?

सिपहआरा—इतनी दूर जा कर ऐसी ही तक़दीर हो, तो आदमी लौटे। अब मेरी ज़िंदगी मुहाल है। मुझे दफ़ना के जाना। अल्लाह जाने, किन-किन जंगलों में रहोगे, कैसे-कैसे पहाड़ों पर चढ़ना होगा, कहाँ-कहाँ लड़ना-भिड़ना होगा। एक जरा सी गोली तो हाँथी का काम तमाम कर देती है, इन्सान की कौन कहे। तुम वहाँ गोलियाँ खाओगे और हम दिन-रात बैठे-बैठे कुढ़ा करेंगे। एक-एक दिन एक-एक बरस हो जाएगा! और फिर क्या जाने, आओ न आओ, लड़ाई-चढ़ाई पर जाना कुछ हँसी थोड़े ही है। यह तो तुम्हीं मरदों का काम है। हम तो यहीं से नाम सुन-सुन कर काँपते हैं।

हुस्नआरा—मेरी प्यारी बहन, ज़रा सब्र से काम लो।

सिपहआरा—न मानूँगी, न मानूँगी।

हुस्नआरा—सुन तो लो।

सिपहआरा—जी, बस, सुन चुकी। खून कीजिए, और कहिए, सुन तो लो।

हुस्नआरा—यह क्या बुरी-बुरी बातें मुँह से निकालती हो। हमें बुरा मालूम होता है। मैं उनको जबरदस्ती थोड़े ही भेजती हूँ। वह तो आप जाते हैं।

सिपहआरा—समुंदर समुंदर जाना पड़ेगा। कोई तूफ़ान आ गया, तो जहाज़ ही डूब जायगा।

आज़ाद—अब रात ज़्यादा आयी, आप लोग आराम करें, हम कल रात को यहाँ से कूच करेंगे।

सिपहआरा—इस तरह जाना था, तो हमारे पास दिल दुखाने आये क्यों थे? (हाँथ पकड़ कर) देखूँ, क्योंकर जाते हैं,

आज़ाद—दिलोजिगर खून हो चुके हैं।

हवास तक अपने जा चुके हैं।
वही मुहब्बत का हौसला है,
हजार सदमे उठा चुके हैं।

हुस्नआरा—हाय, किस गज़ब में जान पड़ी। हाथ पाँव टूटे जाते हैं, आँखें जल रही हैं। आज़ाद, अगर मुझे दुनियाँ में किसी की चाह है, तो तुम्हारी। लेकिन दिल से लगी है कि तुम रूसियों को नीचा दिखाओ। मरना-जीना मुक़द्दर के हाथ है। कौन रहा है, ओर कौन रहेगा!

ताज में जिनके टकते थे गौहर;
ठोकरें खाते हैं वह सर-ता-सर।
है न शीरीं न कोहकन का पता;
न किसी जा है नल-दमन का पता;
यही दुनियाँ का कारखाना है;
यह उलट फेर का ज़माना है।

आज़ाद—हम तो जाते हैं, तुम सिपहआरा को समझाती रहना। नहीं तो राह में मेरे क़दम न उठेंगे। कल रात को मिल कर कूच करूँगा।

हुस्नआरा—बहन, इनको जाने दो, कल आयेंगे।

सिपहआरा—जाइए, मैं आपको रोकनेवाली कौन ?

आज़ाद यहाँ से चले कि सामने से मियाँ चंडूबाज़ आते हुए मिल गये। गले से लिपट कर बोले—वल्लाह, आँखें आपको ढूँढ़ती थीं। सूरत देखने को तरस गये। वह जो चलते वक़्त आपने तान कर चाबुक जमाया था, उसका निशान अब तक बना है। बारे मिले ख़ूब। बी अलारक्खी तो मर गयीं, बेचारी मरते वक़्त ख़ुदा की क़सम, अल्लाह-अल्लाह कहा कीं और दम तोड़ने के पहले तीन दफ़ा आज़ाद-आज़ाद कह कर चल बसीं।

आज़ाद ने चंडूबाज़ की सूरत देखी, तो हाथ-पाँव फूल गये। रूस का जाना और तमग़े लटकाना भूल गये। सोचे, अब इज्जत ख़ाक में मिली। लेकिन जब चंडूबाज़ ने बयान किया कि अलारक्खी चल बसीं और मरते वक़्त तक मेरे ही नाम की रट लगाती रहीं, तो बड़ा अफ़सोस हुआ। आँखों से आँसू बहने लगे। बोले—भाई, तुमने बुरी ख़बर सुनायी। हाय, मरते वक़्त दो बातें भी न करने पाये।

चंडूबाज़—क्या अर्ज़ करूँ, क़सम ख़ुदा की, इस प्यार और इस हसरत से तुम्हें याद किया कि क्या कहूँ। मेरी तो रोते-रोते हिचकी बँध गयी। ज़रा सा भी खटका होता तो कहतीं—आज़ाद आये। आप अपना एक रूमाल वहाँ भूल आये हैं, उसको हर रोज़ देख लिया करती थीं, मरते वक्त कहा कि हमारी क़ब्र पर यह रूमाल रख देना।

आज़ाद—(रो कर) उफ्, कलेजा मुँह को आता है। मुझे क्या मालूम था कि उस ग़रीब को मुझसे इतनी मुहब्बत थी।

चंडूबाज़—एक गुलदस्ता अपने हाथ से बना कर दे गयी हैं कि अगर मियाँ आज़ाद आ जायँ, तो उनको दे देना और कहना, अब हश्र में आपकी सूरत देखेंगे।

आज़ाद—भई, इसी वक़्त दो। ख़ुदा के वास्ते अभी लाओ। मैं तो मरा बेमौत, लाओ, गुलदस्ता जरा चूम लूँ। आँखों से लगाऊँ, गले से लगाऊँ।

चंडूबाज़—(आँसू बहा कर) चलिए, मैं सराय में उतरा हुआ हूँ। गुलदस्ता साथ है। उसको जान से भी ज़्यादा प्यार करता हूँ।

दोनों आदमी मिल कर चले, राह में अलारक्खी के रूप-रंग और भोली-भोली बातों का ज़िक्र रहा। चलते-चलते दोनों सराय में दाखिल हुए। मियाँ आज़ाद जैसे ही चंडूबाज़ की कोठरी में घुसे, तो क्या देखते हैं कि बी अलारक्खी बगले के पर जैसा सफ़ेद कपड़ा पहने खड़ी हैं। देखते ही मियाँ आज़ाद का रंग फ़क़ हो गया। चुप, अब हिलते हैं न बोलते हैं।

अलारक्खी—(तालियाँ बजा कर) आदाब अर्ज़ करती हूँ। जरी इधर नज़र कीज़िए! यह कोसों की राह तय करके हम आप ही की ज़ियारत के लिए आये हैं और आपको हमसे ऐसी नफ़रत कि आँख तक नहीं मिलाते! वाह री क़िस्मत! अब

ज़रा सिर तो हिलाइए, गरदन तो उठाइए, वह चाँद सा मुखड़ा तो दिखाइए! हाय, क्या जुल्म है, जिन पर हम जान देते हैं, वह हमारी सूरत से बेज़ार हैं! कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी हैं? ज़रा हमको तो उनका जोबन दिखाओ। हमने सुना, कभी-कभी बजरों पर दरिया की सैर को जाती हैं, कभी हमजोलियों को ले कर जश्न मनाती हैं। क्यों हज़रत, हम बक रहे हैं? हमारा ही लहू पिये, जो इधर न देखे।

आज़ाद—खुदा की क़सम, सिर्फ़ तुम्हीं को देखने आया हूँ।

चंडूबाज़—भई, आज़ाद की रोते-रोते हिचकी बँध गयी थी। क़सम खुदा की, मैंने जो यह फ़िक़रा चुस्त किया कि अलारक्खी ने मरते वक्त आज़ाद-आज़ाद कह के दम तोड़ा, तो यह बेहोश हो कर गिर पड़े।

अलारक्खी—खैर, इतनी तो ढारस हुई कि मरने के बाद भी हमको कोई पूछेगा। लेकिन—

आये तुरबत पे बहुत रोये, किया याद मुझे;
खाक उड़ाने लगे, जब कर चुके बरबाद मुझे।

आज़ाद—अलारक्खी, अब हमारी इज्ज़त तुम्हारे हाथ है। अगर तुम्हें हमसे मुहब्बत है, तो हमें दिक़ न करो। नहीं हम संखिया खा कर जान दे देंगे। अगर हमें जिलाना चाहती हो, तो हमें आज़ाद कर दो।

अलारक्खी—सुनो आज़ाद, हम भी शरीफ़ज़ादी हैं, मगर अल्लाह को यही मंजूर था कि हम भठियारी बन कर रहें। याद है, हमारे बूढ़े मियाँ ने तुम्हें खत दे कर हमारे मकान पर भेजा था और तुम कई दिन तक हमारे घर का चक्कर लगाते रहे थे? हम दिन-रात कुढ़ा करते थे। आखिर वह तो क़ब्र में पाँव लटकाये बैठे ही थे, चल बसे। उस दिन हमने मसजिद में घी के चिराग जलाये। मुक़द्दर खींच कर यहाँ लाया। लेकिन अल्लाह जानता है, जो मेरी आँखें किसी से लड़ी हों। तुमसे ब्याह करने का बहुत शौक़ था, लेकिन तुम राज़ी न हुए। अब हमने सुना है कि हुस्नआरा के साथ तुम्हारा निकाह होनेवाला है। अल्लाह मुबारक करे। अब हमने आपको इजाज़त दे दी, खुशी से ब्याह कीजिए; लेकिन हमें भूल न जाना। लौंडी बन कर रहूँगी, मगर तुमको न छोड़ूँगी।

आज़ाद—उफ्, तुम वह हो, जिसका उस बूढ़े से ब्याह हुआ था? यह भेद तो अब खुला। मगर हाय, अफ़सोस, तुमने यह क्या किया। तुम्हारी माँ ने बड़ी ही बेवक़ूफ़ी की, जो तुम-जैसी कामिनी का एक बुड्ढे के साथ ब्याह कर दिया।

अलारक्खी—अपनी तक़दीर!

कुछ देर तक आज़ाद बैठे अलारक्खी को तसल्ली देते रहे। फिर गला छुड़ा कर, चकमा देकर निकल खड़े हुए। कुछ ही दूर आगे बढ़े थे कि तबले की थपक कानों में आयी। घर का रास्ता छोड़ महफ़िल में जा पहुँचे। देखा, वहाँ खूब धमा चौकड़ी मच रही है। एक ने ग़जल गायी, दूसरी ने ठुमरी, तीसरी ने टप्पा। आज़ाद एक ही रसिया,

वहीं जम गये। अब इस सनक को देखिए कि ग़ैर की महफ़िल और आप इंतज़ाम करते हैं, किसी हुक़्क़े की चिलम भरवाते हैं, किसी गुड़गुड़ी को ताज़ा करवाते हैं; कभी ठुमरी की फ़र्माइश की, कभी ग़ज़ल की। दस-पंद्रह गँवारों ने जो गाने की आवाज़ सुनी, तो घुँस पड़े। मियाँ आज़ाद ने उन्हें धक्के दे कर बाहर किया। मालिक मकान ने जो देखा कि एक शरीफ़ नौजवान आदमी इंतज़ाम कर रहे हैं, तो इनको पास बुलाया, तपाक से बिठाया, खाना खिलाया। यही बहार देखते-देखते आज़ाद ने रात काट दी। वहाँ से उठे, तो तड़का हो गया था।

मियाँ आज़ाद को आज ही रूम के सफ़र की तैयारी करनी थी। इसी फ़िक्र में बदहवास जा रहे थे। क्या देखते हैं, एक बाग़ में झूले पड़े हैं; कई लड़कियाँ हाथ-पाँव में मेंहदी रचाये, गले में हार डाले पेंग लगा रही हैं और सब की सब सुरीली आवाज़ से लहरा-लहरा कर यों गा रही हैं—

नदिया-किनारे बेला किसने बोया, नदिया-किनारे;
बेला भी बोया, चमेली भी बोयी बिच-
बिच बोया रे गुलाब, नदिया-किनारे।

आज़ाद को यह गीत ऐसा भाया कि थोड़ी देर ठहर गये। फिर ख़ुद झूले पर जा बैठे और पेंग लगाने लगे। कभी-कभी गाने भी लगते, इस पर लड़कियाँ खिल-खिला कर हँस पड़ती थीं। एकाएक क्या देखते हैं कि एक काला-कलूटा मरियल सा आदमी खड़ा लड़कियों को घूर रहा है। आज़ाद ने कई बार यह कैफ़ियत देखी, तो उनसे रहा न गया, एक चपत जमा ही तो दी। टीप खाते ही वह झल्ला उठा और गालियाँ दे कर कहने लगा—न हुई विलायती इस वक़्त पास, नहीं तो भुट्टा सा सिर उड़ा देता। और जो कहीं जवान होता, तो खोद कर गाड़ देता। और, जो कहीं भूखा होता, तो कच्चा ही खा जाता। और जो कहीं नशे की चाट होती, तो घोल के पी जाता।

आज़ाद पहचान गये, यह मियाँ ख़ोजी थे। कौन ख़ोजी? नवाब के मुसाहब। कौन नवाब? वही बटेरबाज़, जिनके सफ़शिकन को ढूँढने आज़ाद निकले थे। बोले—अरे, भाई ख़ोजी हैं? बहुत दिनों के बाद मुलाक़ात हुई। मिज़ाज तो अच्छा है?

ख़ोजी—जी हाँ, मिज़ाज तो अच्छा है; लेकिन खोपड़ी भन्ना रही है। भला हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था। वह तो कहिए मैं तुम्हें पहचान गया; नहीं तो इस वक़्त जान से मार डालता।

आज़ाद—इसमें क्या शक, आप हैं ही ऐसे दिलेर! आप इधर कैसे आ निकले?

ख़ोजी—आप ही की तलाश में तो आया था।

आज़ाद—नवाब तो अच्छे हैं?

ख़ोजी—अजी वह गये चूल्हे में। यहाँ सर भन्ना रहा है। ले अब चलो, तुम्हारे साथ चलें। कुछ तो खिलवाओ यार। मारे भूख के बेदम हुए जाते हैं।

आज़ाद—हाँ, हाँ चलिए ख़ूब शौक़ से।

दोनों मिल कर चले, तो आज़ाद ने ख़ोजी को शराब की दूकान पर ले जा कर

इतनी शराब पिलायी कि वह टें हो गये, उन्हें वहीं छोड़ मियाँ हँसोड़ के घर जा पहुँचे।

मियाँ हँसोड़ बहुत नाराज़ हुए कि मुझे तो ले जा कर हुस्नआरा के मकान के सामने खड़ा कर दिया और आप अंदर हो रहे। आधी रात तक तुम्हारी राह देखता रहा। यह आखिर आप रात को थे कहाँ?

आज़ाद अभी कुछ जवाब देनेवाले ही थे कि एक तरफ से मियाँ पीरबख्श को आते देखा और दूसरी तरफ से चंडूबाज़ को। आप दूर ही से बोले—अजीब तरह के आदमी हो मियाँ! वहाँ से कह कर चले कि अभी आता हूँ, पल भर की भी देर न होगी, और तब के गये-गये अब तक सूरत नहीं दिखायी, अलारक्खी बेचारी ढाढ़ें मार-मार कर रो रही हैं। चलिए उनके आँसू तो पोंछिए।

मियाँ पीरबख्श ने बातें सुनीं, तो उनके कान खड़े हुए। हज्जाम के मुँह से तो यह सुन ही चुके थे कि मियाँ आज़ाद किसी सराय में एक भठियारिन पर लट्टू हो गये थे, पर अब तक हुस्नआरा से उन्होंने यह बात छिपा रखी थी। इस वक़्त जो फिर वही ज़िक्र सुना, तो दिल में सोचने लगे कि यहाँ तो लड़कियों को रात-रात भर नींद नहीं आती; हुस्नआरा तो किसी कदर ज़ब्त भी करती हैं, मगर सिपहआरा बेचारी फूट फूट कर रोती है; और यहाँ यह है कि कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। बोले—आप चल रहे हैं, या यहाँ बैठे हुए बी अलारक्खी के दुखड़े सुनिएगा? अगर कहीं दोनों बहनें सुन लें, तो कैसी हो? बस, अब भलमंसी इसी में है कि मेरे साथ चले चलिए; नहीं तो हुस्नआरा से हाथ धोइएगा और फिर अपनी फूटी क़िस्मत को रोइएगा।

चंडूबाज़—मियाँ, होश की दवा करो? भला मजाल है कि यह अलारक्खी को छोड़ कर यहाँ से जायँ। क्या खूब, हम तो सैकड़ों कुएँ झाकते यहाँ आये, आप बीच में बोलनेवाले कौन?

आज़ाद—अजी, इन्हें बकने भी दो, हम तुम्हारे साथ अलारक्खी के पास चलेंगे। उस मुहब्बत की पुतली को दग़ा न देंगे। तुम घबराते क्यों हो? खाना तैयार है, आज मीठा पुलाव पकवाया है; तुम ज़रा बाज़ार से लपक कर चार आने की बालाई ले लो। मज़े से खाना खायँ। क्यों उस्ताद, है न मामले की बात, लाना हाथ।

चंडूबाज़ बालाई का नाम सुनते ही खिल उठे। झप से पैसे लिये और लुढ़कते हुए चले बालाई लाने। मियाँ आज़ाद उन्हें बुत्ता दे कर पीरबख्श से बोले—चलिए हज़रत, हम और आप चलें। रास्ते में बातें होती जायँगी।

दोनों आदमी वहाँ से चले। आज़ाद तो डबल चाल चलने लगे, पर मियाँ पीरबख्श पीछे रह गये। तब बोले—अजी, ज़रा कदम रोके हुए चलिए। किसी ज़माने में हम भी जवान थे। अब यह फ़र्माइए कि यह अलारक्खी कौन है? जो कहीं हुस्नआरा सुन पायें, तो आपकी सूरत न देखें; बड़ी बेगम तो तुमको अपने महल के एक मील इधर-उधर फटकने न दें। आप अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। अब

शादी-वादी होना खैर-सल्लाह है। सोच लीजिए कि अगर वहाँ इनकी बात चली, तो क्या जवाब दीजिएगा।

आज़ाद—जनाब, यहाँ सोचने का मरज़ नहीं। उस वक्त जो ज़बान पर आयेगा, कह जाऊँगा। ऐसी वकालत करूँ कि आप भी दंग हो जायँ—ज़बान से फुलझड़ी छूटने लगे।

इतने में कोठी सामने नज़र आयी और ज़रा देर में दोनों आदमी महल में दाखिल हुए। सिपहआरा तो आज़ाद से मिलने दौड़ी, मगर हुस्नआरा अपनी जगह से न उठी। वह इस बात पर रूठी हुई थी कि इतना दिन चढ़ आया और मियाँ आज़ाद ने सूरत न दिखायी।

हुस्नआरा—बहन, इनसे पूछो कि आप क्या करने आये हैं?

आज़ाद—आप खुद पूछिए। क्या मुँह नहीं है या मुँह में जबान नहीं है!

सिपहआरा—यह अब तक आप कहाँ गायब रहे?

हुस्नआरा—अजी, हमें इनकी क्या परवा। कोई आये या न आये, हम किसी के हाथ बिके थोड़े ही हैं।

सिपहआरा—बाजी की आँखें रोते-रोते लाल हो गयीं।

हुस्नआरा—पूछो, आखिर आप चाहते क्या हैं?

आज़ाद—पूछे कौन, आखिर आप खुद क्यों नहीं पूछतीं—

कहूँ क्या मैं तुझसे कि क्या चाहता हूँ,
जफ़ा हो चुकी, अब वफ़ा चाहता हूँ।
बहुत आशना हैं ज़माने में, लेकिन—
कोई दोस्त दर्द-आशना चाहता हूँ।

हुस्नआरा—इनसे कह दो, यहाँ किसी की वाही-तबाही बकवाद सुनने का शौक़ नहीं है। मालूम है, आप बड़े शायर की दुम हैं?

सिपहआरा—बहन, तुम लाख बनो, दिल की लगी कहीं छिपाने से छिपती है।

हुस्नआरा—चलो, बस, चुप भी रहो। बहुत कलेजा न पकाओ। हमारे दिल पर जो गुज़र रही है, हमी जानते हैं। चलो, हम और तुम कमरा खाली कर दें, जिसका जी चाहे बैठे, जिसका जी चाहे जाय। हयादार के लिए एक चुल्लू काफ़ी है।

यह कह कर हुस्नआरा उठी और सिपहआरा भी खड़ी हुई। मियाँ आज़ाद ने सिपहआरा का पहुँचा पकड़ लिया। अब दिल्लगी देखिए कि मियाँ आज़ाद तो उसे अपनी तरफ़ खींचते हैं और हुस्नआरा अपनी तरफ घसीटती हुई कह रही हैं—हमारी बहन का हाथ कोई पकड़े, तो हाथ ही टूटें। जब हमने टका सा जवाब दे दिया, तो फ़िर यहाँ आनेवाला कोई कौन! वाह, ऐसे हयादार भी नहीं देखे!

आज़ाद—साहब, आप इतना खफ़ा क्यों होती हैं? खुदा के वास्ते ज़रा बैठ जाइए। माना कि हम खतावार हैं, मगर हमसे जवाब तो सुनिए! खुदा गवाह है, हम बेक़सूर हैं।

हुस्नआरा—बस बस, ज़बान न खुलवाइए। बस अब रुख़सत। आप अब छह महीने के बाद सूरत दिखाइएगा, हम भी कलेजे पर पत्थर रख लेंगे।

यह कह कर हुस्नआरा तो वहाँ से चली गयी और मियाँ आज़ाद अकेले बैठे-बैठे सोचने लगे कि इसे कैसे मनाऊँ। आख़िर उन्हें एक चाल सूझी। अरगनी पर से चादर उतार ली और मुँह ढाँप कर लेट रहे। चेहरा बीमारों का सा बना लिया और कराहने लगे। इत्तिफ़ाक़ से मियाँ पीरबख़्श उस कमरे में आ निकले। आज़ाद की सूरत जो देखी, तो होश उड़ गये। जा कर हुस्नआरा से बोले—जल्द पलँग बिछवाओ, मियाँ आज़ाद को बुख़ार हो आया है।

हुस्नआरा—हैं हैं, यह क्या कहते हो! पाँव-तले से मिट्टी निकल गयी।

सिपहआरा—कलेजा धड़-धड़ करने लगा! ऐसी सुनानी अल्लाह सातवें दुश्मन को भी न सुनाये।

हुस्नआरा—हाय मेरे अल्लाह, मैं क्या करूँ! मैंने अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी।

ज़रा देर में पलँग बिछ गया! हुस्नआरा, उसकी बहन, पीरबख़्श और दिलबहार चारपाई के पास खड़े हो कर आँसू बहाने लगे।

दिलबहार—मियाँ, किसी हकीम जी को बुलाओ।

सिपहआरा—चेहरा कैसा ज़र्द हो गया!

पीरबख़्श—मैं अभी जा कर हकीम साहब को लाता हूँ।

हुस्नआरा—हकीम जी का यहाँ क्या काम है? और, यों आप चाहे जिसको बुलायें।

मियाँ पीरबख़्श तो बाहर गये और हुस्नआरा पलँग पर जा बैठी, मियाँ आज़ाद का सिर अपने ज़ानू पर रखा। सिपहआरा फूलों का पंखा झलने लगी।

हुस्नआरा—मेरी ज़बान कट पड़े। मेरी ही जली-कटी बातों ने यह बुख़ार पैदा किया।

यह कह कर उसने आहिस्ता-आहिस्ता आज़ाद की पेशानी को सहलाना शुरू किया। आज़ाद ने आँखें खोल दीं और बोले—

मेरे जनाज़े को उनके कूचे में
नाहक़ अहबाब लेके आये;
निगाहे-हसरत से देखते हैं
वह रुख़ से परदा हटा-हटा कर।
सहर है नज़दीक, शब है आख़िर,
सरा से चलते हैं हम मुसाफ़िर;
जिन्हें है मिलना, वे सब हैं हाज़िर,
जरस से कह दो, कोई सदा कर।

हुस्नआरा—क्यों हज़रत, यह मक्कारी! ख़ुदा की पनाह, मेरी तो बुरी गत हो गयी।

अज़ाद—ज़रा उसी तरह इन नाज़ुक हाथों से फिर माथा सहलाओ।

हुस्नआरा—मेरी बला जाती है, वह वक़्त ही और था।

आज़ाद—मैंने कहा जो उनसे कि शब को यहीं रहो ;
आँखें झुकाये बोले कि किस एतबार पर ?

हुस्नआरा—आपने आखिर यह स्वाँग क्यों रचा ? छिपाइए नहीं, साफ़-साफ़ बताइए।

आज़ाद—अब कहती हो कि तुम मेरी
महफ़िल में आये क्यों ;
आता था कौन, कोई
किसी को बुलाये क्यों ?
कहता हूँ साफ़-साफ़
कि मरता हूँ आप पर ;
ज़ाहिर जो बात हो,
उसे कोई छिपाये क्यों ?

यहाँ मारे बुखार के दम निकल रहा है, आप मक्र समझती हैं।

यहाँ दोनों में यही नोकझोंक हो रही थी, इतने में मियाँ ख़ोजी पता पूछते हुए आ पहुँचे।

ख़ोजी—मियाँ होत, ज़रा आज़ाद को तो बुलाओ।

दरवान—किससे कहते हो ? आये कहाँ से ? हो कौन ?

ख़ोजी—एँ, यह तो कुछ बातूनी सा मालूम होता है। अबे, इत्तला कर दे कि ख्वाजा साहब आये हैं।

दरवान—ख्वाजा साहब ! हमें तो जुलाहे से मालूम होते हो। भलेमानसों की सूरत ऐसी ही हुआ करती है ?

आज़ाद ने ये बातें सुनीं, तो बाहर निकल आये और ख़ोजी को बुला लिया।

ख़ोजी—भाई, ज़रा आईना तो मँगवा देना।

आज़ाद—यह आईना क्या होगा ? बंदगी न सलाम, बात न चीत, आते ही आते आईना याद आया। बंदर के हाथ में आईना भला कौन देने लगा !

ख़ोजी—अजी मँगवाते हो या दिल्लगी करते हो। दरवान से हमसे झौड़ हो गयी। मरदूद कहता है, तुम्हारी सूरत भलेमानसों की सी नहीं। अब कोई उससे पूछे, फिर क्या चमार की सी है, या पाजी की सी।

आज़ाद—भई अगर सच पूछते हो, तो तुम्हारी सूरत से एक तरह का पाजीपन बरसता है। खुदा चाहे पाजी बनाये, मगर पाजी की सूरत न बनाये। पर अब उसका इलाज ही क्या ?

ख़ोजी—वाह, इसका कुछ इलाज ही नहीं ? डाक्टरों ने मुरदे तक के जिला

लेने का तो बंदोबस्त कर लिया है; आप फ़रमाते हैं, इलाज ही नहीं। अब पाजी न बनेंगे, पाजी बनके जिये तो क्या।

आज़ाद—कल हम रूम जानेवाले हैं, चलते हो साथ ?

ख़ोजी—न चले, उस पर भी लानत, न ले चले, उस पर भी लानत !

आज़ाद—मगर वहाँ चंडू न मिलेगा, इतना याद रखिए।

ख़ोजी—अजी अफ़ीम मिलेगी कि वह भी न मिलेगी ? बस, तो फिर हम अपना चंडू बना लेंगे। हमें ज़रूर ले चलिए।

आज़ाद अंदर जा कर बोले—हुस्नआरा, अब रुख़सत का वक़्त क़रीब आता जाता है; हँसी-ख़ुशी रुख़सत करो; ख़ुदा ने चाहा तो फिर मिलेंगे।

हुस्नआरा की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। बोली—हाय, अंदरवाला नहीं मानता। उसको भी तो समझाते जाओ। यह किसका होकर रहेगा ?

आज़ाद—तुम्हारी यह हालत देख कर मेरे क़दम रुके जाते हैं। अब हमें जाने दो। ज़िंदगी शर्त है, हम फिर मिलेंगे और जश्न करेंगे। यह कह कह आज़ाद बाहर चले आये और ख़ोजी के साथ चले। ख़ोजी ने समझा था, रूम कहीं लखनऊ के आस-पास होगा। अब जो सुना कि सात समुंदर पार जाना पड़ेगा, तो हक्का-बक्का हो गये। हाँथ-पाँव काँपने लगे। भई, हम समझते थे, दिल्लगी करते हो। यह क्या मालूम था कि सचमुच तंग-तोबड़ा चढ़ा कर भागा ही चाहते हो। मियाँ, तुम लाख आलिम-फ़ाज़िल सही, फिर भी लड़के ही हो। यह ख़याल दिल से निकाल डालो। एक ज़रा सी चने के बराबर गोली पड़ेगी, तो टाँय से रह जाओगे। आपको कभी मोरचे पर जाने का शायद इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ। ख़ुदा भलेमानस को न ले जाय। ग़ज़ब का सामना होता है। वह गोली पड़ी, यह मर गया। दाँय-दाँय की आवाज़ से कान के परदे फट जाते हैं। तोप का गोला आया और अठारह आदमियों को गिरा दिया। गोला फटा और बहत्तर टुकड़े हुए, और एक-एक टुकड़े ने दस-दस आदमियों को उड़ा दिया। जो कहीं तलवार चलने लगी, तो मौत सामने नज़र आती है, बेमौत जान जाती है। खटाखट तलवार चल रही है और हज़ारों आदमी गिरते जाते हैं। सो भई, वहाँ जाना कुछ ख़ाला ज़ी का घर थोड़े ही है। ख़ुदा के लिए उधर रुख़ न करना। और, बंदा तो अपने हिसाब, जानेवाले को कुछ कहता है। हम एक तरकीब बतायें, वह काम क्यों न कीजिए कि हुस्नआरा आपको ख़ुद रोकें और लाखों क़समें दें। आप अंदर जा कर बैठिए और हमको चिक के पास बिठाइए। फिर देखिए, मैं कैसी तक़रीर करता हूँ कि दोनों बहनें काँप उठें; उनको यक़ीन हो जाय कि मियाँ आज़ाद गये और अंटागफ़ील हुए। मैं साफ़-साफ़ कह दूँगा कि भई आज़ाद ज़रा अपनी तसवीर तो खिंचवा लो। आख़िर अब तो जाते ही हो। वल्लाह, जो कहीं यह तक़रीर सुन पायें, तो हश्र तक तुम्हें न जाने दें और झप से शादी हो जाय।

आज़ाद—बस, अब और कुछ न फ़रमाइयेगा। मरना-जीना किसी के अख़्तियार की बात तो है नहीं; लाखों आदमी कोरे आते हैं और हज़ारों राह चलते लोट

जाते हैं। हुस्नआरा हमसे कहे कि टर्की जाओ और हम बातें बनायें, उसको धोखा दें! जिससे मुहब्बत की उससे फ़रेब! यह मुझसे हरगिज़ न होगा, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। आप मियाँ हँसोड़ के यहाँ जाइए और उनसे कहिए कि हम अभी आते हैं। हम पहुँचे और खाना खा कर लंबे हुए। ख़ोजी तो गिरते-पड़ते चले, मगर दो क़दम जा कर फिर पलटे। भई, एक बात तो सुनो। क्या-क्या पकवा रक्खूँ? आज़ाद बहुत ही झल्लाये। अजब नासमझ आदमी हो! यह भी कोई पूछने की बात है भला! उनके यहाँ जो कुछ मुमकिन होगा, तैयार करेंगे। यह कहकर आज़ाद तो अपने दो-चार दोस्तों से मिलने चले, उधर मियाँ ख़ोजी हँसोड़ के घर पहुँचे। जा कर गुल मचाना शुरू किया कि जल्द खाना तैयार करो, मियाँ आज़ाद अभी-अभी जानेवाले हैं। उन्होंने कहा है कि पाँच सेर मीठे टुकड़े, सात सेर पुलाव, दस सेर फीरनी, दस ही सेर खीर, कोई चौदह सेर ज़रदा, कोई पाँच सेर मुरब्बा और मीठे अचार की अचारियाँ जल्द तैयार हों। मियाँ हँसोड़ की बीबी खाना पकाने में बर्क़ थीं। हाथोंहाथ सब सामान तैयार कर दिया। मियाँ आज़ाद शाम को पहुँचे।

हँसोड़—कहिए, आज तो सफ़र का इरादा है। खाना तैयार है; कहिए, तो निकलवाया जाय। बर्फ़ भी मँगवा रखी है।

आज़ाद—खाना तो हम इस वक़्त न खायँगे, ज़रा भी भूख नहीं है।

हँसोड़—खैर, आप न खाइएगा, न सही। आपके और दोस्त कहाँ हैं? उनके साथ दो निवाले तुम भी खा लेना।

आज़ाद—दोस्त कैसे! मैंने तो किसी दोस्त के लिए खाना पकाने को नहीं कहा था!

हँसोड़–और सुनिएगा! क्या आपने अपने ही लिए दस सेर खीर, अठारह सेर मीठे टुकड़े और ख़ुदा जाने क्या-क्या अल्लम-गल्लम पकवाया है।

आज़ाद—आपसे यह कहा किस नामाकूल ने?

हँसोड़—ख़ोजी ने, और किसने! बैठे तो हैं, पूछिए न।

आज़ाद—ख़ोजी तुम मरभुखे ही रहे। यह इतनी चीज़ें क्या सिर पर लाद कर ले जाओगे? लाहौल बिला कूवत।

खोजी–लाहौल काहे की? आप न खाइए, मैं तो डट कर चख चुका। रास्ते के लिए भी बाँध रखा है।

आज़ाद—अच्छा, तो अब बोरिया-बँधना उठाइए, लादिए-फाँदिए।

ख़ोजी—जनाब, इस वक़्त तो यह हाल है, जैसे चूहे को कोई पारा पिला दे। अब बंदा लोट मारेगा। और यह तो बताओ, सवारी क्या है?

आज़ाद—इक्का।

ख़ोजी–ग़ज़ब ख़ुदा का! तब तो मैं जा चुका। इक्के पर तो यहाँ कभी सवार ही नहीं हुए। और फिर खाना खा कर तो मर ही जाऊँगा।

ख़ैर, मियाँ आज़ाद ने झटपट खाना खाया और असबाब कस कर तैयार हो गये। ख़ोजी पड़े खर्राटे ले रहे थे; रोते-गाते उठे। बाहर जा कर देखते हैं, तो एक

समंद घोड़ी पूरी, दूसरा मरियल टट्टू। आज़ाद घोड़ी पर सवार हुए और मियाँ हँसोड़ की बीवी से बोले—भाभी, भूल न जाइएगा। भाई साहब तो भुलक्कड़ आदमी हैं, आप याद रखिएगा। आपके हाथ का खाना उम्र भर न भूलूँगा। उन्होंने रुख़-सत करते हुए कहा—जिस तरह पीठ दिखाते हो, ख़ुदा करे, उसी तरह मुँह भी दिखाओ। इमाम ज़ामिन को सौंपा।

अब सुनिए कि मियाँ ख़ोजी ने अपने मरियल टट्टू को जो देखा, तो घबराये। घोड़े पर कभी ज़िन्दगी भर सवार न हुए थे। लाख चाहते हैं कि सवार हो जायँ, मगर हिम्मत नहीं पड़ती। यार लोग डराते हैं—देखो, देखो, वह पुस्त उछाली, वह दुलत्ती झाड़ी, वह मुँह खोल कर लपका; मगर टट्टू खड़ा है, कान तक नहीं हिलाता। एक दफ़े आँख बंद करके हज़रत ने चाहा कि लद लें, मगर यारों ने तालियाँ जो बजायीं, तो टट्टू भागा और मियाँ ख़ोजी भद से जमीन पर। देखा, कहते न थे कि हम इस टट्टू पर न सवार होंगे। मगर आज़ाद ने घड़ी दिल्लगी देखने के लिए हमको उल्लू बनाया। वह तो कहो, हड्डी-पसली बच गयी, नहीं तो चुरमुर ही हो जाती। ख़ैर, दो आदमियों ने उनको उठाया और लाद कर घोड़ी की पीठ पर रख दिया। उन्होंने लगाम हाथ में ली ही थी कि एक बिगड़े-दिल ने चाबुक जमा दिया। टट्टू दुम दबा कर भागा और मियाँ ख़ोजी लुढ़क गये। बारे आज़ाद ने आ कर उनको उठाया।

ख़ोजी—अब क्या रूम तक बराबर इस टट्टू ही पर जाना होगा?

आज़ाद—और नहीं क्या आपके वास्ते उड़नखटोला आयेगा?

ख़ोजी—भला इस टट्टू पर कौन जायेगा?

आज़ाद—टट्टू, आप तो इसे टाँघन कहते थे!

ख़ोजी—भई, हमें आज़ाद कर दो। हम बाज़ आये इस सफ़र से!

आज़ाद—अरे बेवक़ूफ़, रेल तक इसी पर चलना होगा। वहाँ से बंबई तक रेल पर जायँगे।

मियाँ आजाद और ख़ोजी आगे बढ़े। थोड़ी देर में ख़ोजी का टट्टू भी गरमाया और आज़ाद की घोड़ी के पीछे क़दम बढ़ाकर चलने लगा। चलते-चलते टट्टू ने शरारत की। बूट के हरे-भरे खेत देखे, तो उधर लपका। किसान ने जो देखा, तो लट्ठ ले कर दौड़ा और लगा बुरा-भला कहने। उसकी जोरू भी चमक कर लपकी और कोसने लगी कि पलवइया मर जाय, कीड़े पड़ें, अभी-अभी पेट फटै, दाढ़ीजार की लहास निकलै। और किसान भी गालियाँ देने लगा—अरे यो टट्टू कौन सार केर आय? ससूर हमरे खेत में पैठाय दिहिस। मियाँ ख़ोजी गालियाँ खा कर बिगड़ गये। उनमें एक सिफ़त यह थी कि बे-सोचे-समझे लड़ पड़ते थे; चाहे अपने से दुगुना-चौगुना हो, वह चिमट ही जाते थे। गुस्से की यह ख़ासियत है कि जब आता है, कमजोर पर। मगर मियाँ ख़ोजी का गुस्सा भी निराला था, वह जब आता था, शहज़ोर पर। किसान ने उनके टट्टू को कई लट्ठ जमाये, तो मियाँ ख़ोजी तड़

से उतर कर किसान से गुथ गये। वह गँवार आदमी, बदन का करारा और यह दुबले-पतले महीन आदमी, हवा के झोंके में उड़ जायँ। उसने इनकी गरदन दबोची और गद से ज़मीन पर फेका। फिर उठे, तो उसकी जोरू इनसे चिमट गयी और लगी हाथापाई होने। उसने घूँसा जमाया और इनके पट्टे पकड़ कर फेका, तो चारों खाने चित। दो थप्पड़ भी रसीद किये—एक इधर, एक उधर। किसान खड़ा हँस रहा है कि मेहरारू से जीत नाहीं पावत, यह मुसंडन से का लड़िहै भला! किसान की जोरू तो ठोंक-ठोंक कर चल दी, और आपने पुकारना शुरू किया—क़सम अब्बा-जान की, जो कहीं छुरा पास होता, तो इन दोनों की लाश इस वक़्त फड़कती होती। वह तो कहिए, खुदा को अच्छा करना मंजूर था कि मेरे पास छुरा न था, नहीं तो इतनी क़रौलियाँ भोंकता कि उमर भर याद करते। खड़ा तो रह ओ गीदी! इस पर गाँववालों ने खूब क़हक़हा उड़ाया। एक ने पूछा—क्यों मियाँ साहब, छुरी होती, तो क्या भोंक कर मर जाते? इस पर मियाँ खोजी और भी आग हो गये।

मियाँ आज़ाद कोई दो गोली के टप्पे पर निकल गये थे। जब खोजी को पीछे न देखा, तो चकराये कि माजरा क्या है? घोड़ी फेरी और आ कर खोजी से बोले—यहाँ खेत में कब तक पड़े रहोगे? उठो, गर्द झाड़ो।

खोजी—क़रौली न हुई पास, नहीं तो इस वक़्त दो लाशें यहाँ फड़कती हुई देखते।

आज़ाद—अजी, वह तो जब देखते तब देखते, इस वक्त तो तुम्हारी लोथ देख रहे हैं।

उन्होंने फ़िर खोजी को उठाया और टट्टू पर सवार कराया। थोड़ी देर में फिर दोनों आदमियों में एक खेत का फ़ासला हो गया। खोजी से एक पठान ने पूछा कि शेख जी, आप कहाँ रहते हैं? हज़रत ने झट से एक कोड़ा जमाया और कहा—अबे, हम शेख नहीं, ख्वाजा हैं। वह आदमी गुस्से से आग हो गया और टाँग पकड़ कर घसीटा, तो खोजी खट से ज़मीन पर। अब चारों खाने चित पड़े हैं, उठने का नाम नहीं लेते। आज़ाद ने जो पीछे फिर कर देखा, तो टट्टू आ रहा है, मगर खोजी नदारद। पलटे, देखें, अब क्या हुआ। इनके पास पहुँचे, तो देखा, फिर उसी तरह ज़मीन पर पड़े क़रौली की हाँक लगा रहे हैं।

आज़ाद—तुम्हें शर्म नहीं आती! कमज़ोरी मार खाने की निशानी। दम नहीं है, तो कटे क्यों मरते हो? मुफ्त में जूतियाँ खाना कौन जवाँमरदी है?

खोजी—वल्लाह, जो क़रौली कहीं पास हो, तो चलनी ही कर डालूँ। वह तो कहिए, खैरियत हुई कि क़रौली न थी, नहीं तो इस वक़्त क़ब्र खोदनी पड़ती।

आज़ाद—अब उठोगे भी, या परसों तक यों ही पड़े रहोगे। तुमने तो अच्छा नाक में दम कर दिया।

खोजी—अजी, अब न उठेंगे, जब तक क़रौली न ला दोगे, बस अब बिना क़रौली के न बनेगी।

आज़ाद—बस, अब बेहूदा न बको; नहीं तो मैं अबकी एक लात जमाऊँगा।

ख़ैर, दोनों आदमी यहाँ से चले तो खोजी बोले—यहाँ जोड़-जोड़ में दर्द हो रहा है। उस किसान की मुसंढ़ी औरत ने तो कचूमर ही निकाल डाला। मगर क़सम है ख़ुदा की, जो कहीं क़रौली पास होती, तो ग़ज़ब ही हो जाता। एक को तो जीता छोड़ता ही नहीं।

आज़ाद—ख़ुदा गंजे को पंजे नहीं देता। क़रौली की आपको हमेशा तलाश रही, मगर जब आये, पिट ही के आये, जूतियाँ ही खायीं। ख़ैर, यह दुखड़ा कोई कहाँ तक रोये, अब यह बताओ कि हम क्या करें? जी मतला रहा है, बंद-बंद टूट रहा है, आँखें भी जलती हैं।

खोजी—लैनडोरी आ गयी। अब हज़रत भी आते होंगे।

आज़ाद—यह लैनडोरी कैसी? और हज़रत कौन? मैं कुछ नहीं समझा। ज़रा बताओ तो?

खोजी—अभी लड़के न हो, बुखार की आमद है। आँखों की जलन, जी का मतलाना, बदन का टूटना, सब उसी की अलामतें हैं। इस वक़्त घोड़े पर सवार हो कर चलना बुरा है। अब आप घोड़े से उतर पड़िए और चल कर कहीं लेट रहिए, कहना मानिए।

आज़ाद—यहाँ कोई अपना घर है, जो उतर पड़ूँ? किसी से पूछो तो कि गाँव कितनी दूर है। ख़ुदा करे, पास ही हो, नहीं तो मैं यहीं गिर पड़ूँगा और क़ब्र भी यहीं बनेगी।

खोजी—अजी, ज़रा दिल को सँभालो। कोई इतना घबराता है? क़ब्र कैसी? ज़रा दिल को ढारस दीजिए।

आज़ाद—वल्लाह, फुँका जाता हूँ, बदन से आग निकल रही है।

खोजी—वह गाँव सामने ही है, ज़रा घोड़ी को तेज़ कर दो।

आज़ाद ने घोड़ी को ज़रा तेज़ किया, तो वह उड़ गयी। खोजी ने भी कोड़े पर कोड़ा जमाना शुरू किया। मगर लद्दू टट्टू कहाँ तक जाता? आख़िर खोजी ने झल्ला कर एक एड़ दी, तो टट्टू अगले पाँव पर खड़ा हो गया और मियाँ खोजी सँभल न सके, धम से ज़मीन पर आ रहे। अब टट्टू पर बिगड़ रहे हैं कि न हुई क़रौली इस वक़्त, नहीं तो इतनी भोंकता कि बिलबिलाने लगता। ख़ैर, किसी तरह उठे, टट्टू को पकड़ा और लद कर चले। दो-चार दिल्लगीबाज़ आदमियों ने तालियाँ बजायीं और कहना शुरू किया—लदा है, लदा है, लेना, जाने न पाये। खोजी बिगड़ खड़े हुए। हटो सामने से, नहीं तो हंटर जमाता हूँ। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो! मैं सिपाही आदमी हूँ। नवाबी में दो-दो तलवारें कमर से लगी रहती थीं। अब लाख कमज़ोर हो गया हूँ, लेकिन अब भी तुम जैसे पचास पर भारी हूँ। लोगों ने खूब हँसी उड़ायी। जी हाँ, आप ऐसे ही जवाँमर्द हैं। ऐसे सूरमा होते कहाँ हैं।

खोजी—उतरूँ घोड़े से, आऊँ?

यारों ने कहा—नहीं साहब, ऐसा ग़ज़ब भी न कीजिएगा ! आप ठहरे पहलवान और सिपाही आदमी, कहीं मार डालिए आ कर तो कोई क्या करेगा।

इस तरह गिरते-पड़ते एक सराय में पहुँचे और अंदर जा कर कोठरियाँ देखने लगे। सराय भर में चक्कर लगाये, लेकिन कोई कोठरी पसंद न आयी। भठियारियाँ पुकार रही हैं कि मियाँ मुसाफ़िर इधर आओ, इधर देखो, खासी साफ-सुथरी कोठरी है। टट्टू बाँधने की जगह अलग। इतना कहना था कि मियाँ ख़ोजी आग हो गये। क्या कहा, टट्टू है, यह पीगू का टाँघन है। एक भठियारी ने चमक कर कहा—टाँघन है या गधा ? तब तो ख़ोजी झल्लाये और छुरी और क़रौली की तलाश करने लगे। इस पर सराय भर की भठियारियों ने उन्हें बनाना शुरू किया। आख़िर आप इतने दिक़ हुए कि सराय के बाहर निकल आये और बोले—भई, चलो, आगे के गाँव में रहेंगे। यहाँ सब के सब शरीर हैं। मगर आज़ाद में इतना दम कहाँ कि आगे जा सकें। सराय में गये और एक कोठरी में उतर पड़े। ख़ोजी ने भी वहीं बिस्तर जमाया। साईस तो कोई साथ था नहीं, ख़ोजी को अपने ही हाथ से दोनों जानवरों के खरेरा करना पड़ा। भठियारी ने समझा, यह साईस है।

भठियारी—ओ साईस भैया, जरा घोड़ी को उधर बाँधो।

ख़ोजी—किसे कहती है री, साईस कौन है ?

भठियारी—ऐ तो बिगड़ते क्यों हो मियाँ, साईस नहीं, चरकटे सही।

आज़ाद—चुप रहो, यह हमारे दोस्त हैं।

भठियारी—दोस्त हैं, सूरत तो भलेमानसों की सी नहीं है।

ख़ोजी—भई आज़ाद, ज़रा आईना तो निकाल देना। कई आदमी कह चुके। आज मैं अपना चेहरा ज़रूर देखूँगा। आख़िर सबब क्या कि जिसे देखो, यही कहता है।

आज़ाद—चलो, वाहियात न बको, मेरा तो बुरा हाल है।

भठियारी ने चारपाई बिछा दी और आज़ाद लेटे।

ख़ोजी ने कहा—अब तबीयत कैसी है ?

आज़ाद—बुरी गत है; जी चाहता है, इस वक़्त जहर खा लूँ।

ख़ोजी—ज़रूर, और उसमें थोड़ी संखिया भी मिला लेना।

आज़ाद—मर कमबख्त, दिल्लगी का यह मौका है ?

ख़ोजी—अब बूढ़ा हुआ, मरूँ किस पर। मरने के दिन तो आ गये। अब तुम ज़रा सोने का ख़याल करो। दो-चार घड़ी नींद आ जाय, तो जी हलका हो जाय।

इतने में भठियारी ने आ कर पूछा—मियाँ कैसे हो ?

आज़ाद—क्या बताऊँ, मर रहा हूँ।

भठियारी—किस पर ?

आज़ाद—तुम पर।

भठियारी—खुदा की सँवार।

आज़ाद—किस पर ?

भठियारी ने ख़ोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इन पर

ख़ोजी—अफसोस, न हुई क़रौली !

आज़ाद—होती, तो क्या करते ?

ख़ोजी—भोंक लेते अपने पेट में ।

आज़ाद—भई, अब कुछ इलाज करो, नहीं तो मुफ़्त में दम निकल जायगा ।

भठियारी—एक हकीम यहाँ रहते हैं । मैं बुलाये लाती हूँ ।

यह कह कर बी भठियारी जा कर हकीम जी को बुला लायी । मियाँ आज़ाद देखते हैं, तो अजब ढंग के आदमी—धोती बाँधे, गाढ़े की मिरज़ई पहने, चेहरे से देहातीपन बरस रहा है, आदमियत छू ही नहीं गयी ।

आज़ाद—हकीम साहब, आदाब ।

हकीम—नाहीं, दबवाव नाहीं । बुख़ार में दावे नुक़सान होत है ।

आज़ाद—आपका नाम ?

हकीम—हमारा नाम दाँगलू ।

आज़ाद—दाँगलू या जाँगलू ?

हकीम—नुस्ख़ा लिखूँ ?

अज़ाद—जी नहीं, माफ़ कीजिए । बस, यहाँ से तशरीफ़ ले जाइए ।

हकीम—बुख़ार में अक-बक करत हैं, चाँद के पट्टे कतरवा डालो ।

ख़ोजी—कुछ बेधा तो नहीं हुआ ! न हुई क़रौली, नहीं तो तोंद पर रख देता ।

हकीम—भाई, हमसे इनका इलाज न हो स किहै । अब एक होय, तो इलाज करें । यो पागल को है हो ? हमका अलई का पलवा बकत है ससुर ।

आख़िर ख़ोजी ने झल्ला कर उनको उठा दिया और यह नुस्ख़ा लिखा—

आलूबुख़ारा दो दाना, तमरहिंदी छह माशा, अर्क़ गावज़बाँ दो तोला ।

आज़ाद—यह नुस्ख़ा तो आप कल पिलायेंगे, यहाँ तो रात-भर में काम ही तमाम हो जायगा ।

ख़ोजी—इस वक़्त बंदा कुछ नहीं देने का । हाँ, आलू का पानी पीजिए, पाँच दाने भिगाये देता हूँ । खाना इस वक़्त कुछ न खाना ।

आज़ाद—वाह, खाना न मिला, तो मैं आप ही को चट कर जाऊँगा । इस भरोसे न रहिएगा ।

ख़ोजी—वल्लाह, एक दाना भी आपके पेट में गया और आप बरस भर तक यों ही पड़े रहे । आलू का पानी भी घूँट-घूँट करके पीना । यह नहीं कि प्याला मुँह से लगाया और गट-गट पी गये ।

यह कह कर ख़ोजी ने चंदन घिस कर आज़ाद की छाती पर रखा । पालक के पत्ते चारपाई पर बिछा दिये । खीरा काट कर माथे पर रखा और ज़रा सा नमक बारीक पीस कर पाँव में मला । तलवे सहलाये ।

आज़ाद—यहाँ तो कोई हकीम भी नहीं।

ख़ोजी—अजी, हम ख़ुद इलाज करेंगे। हकीम न सही, हकीमों की आँखें तो देखी हैं।

आज़ाद—इलाज तक मुज़ायक़ा नहीं, मगर मार न डालना भाई! हाँ, ज़रा इतना एहसान करना।

आज़ाद की बेचैनी कुछ कम हुई, तो आँख लग गयी। एकाएक पड़ोस की कोठरी से शोर गुल की आवाज़ आयी। आज़ाद चौंक पड़े और पूछा—यह कैसा शोर है? भठियारी, तुम ज़रा जा कर उनको ललकारो।

ख़ोजी—कहो कि एक शरीफ़ आदमी बुख़ार में पड़ा हुआ है। ख़ुदा के वास्ते ज़रा खामोश हो जाओ।

भठियारी—मियाँ, मैं ठहरी औरतजात और वे मरदुए। और फिर अपने आपे में नहीं। जो मुझी पर पिल पड़े, तो क्या करूँगी? हाँ, भठियारे को भेजे देती हूँ।

भठियारे ने जा कर जो उन शराबियों को डाँटा, तो सब के सब उस पर टूट पड़े और चपतें मार-मार कर भगा दिया। इस पर भठियारी तैश में आ कर उठी और उँगलियाँ मटका कर इतनी गालियाँ सुनायीं कि शराबियों का नशा हिरन हो गया। वे इतना डरे कि कोठरी का दरवाज़ा बंद कर लिया।

लेकिन थोड़ी देर में फिर शोर हुआ और आज़ाद की नींद उचट गयी। ख़ोजी को जो शामत आयी, तो शराबियों की कोठरी के दरवाज़े को इस जोर से धमधमाया कि चूल निकल आयी? सब शराबी झल्लाकर बाहर निकल आये और ख़ोजी पर बेभाव की पड़ने लगी। उन्होंने इधर-उधर छुरी और क़रौली की बहुत कुछ तलाश की, मगर ख़ूब पिटे। इसके बाद वे सब सो गये, रात भर कोई न मिनका। सुबह को उस कोठरी से रोने की आवाज़ आयी। ख़ोजी ने जा कर देखा, तो एक आदमी मरा पड़ा है और बाक़ी सब खड़े रो रहे हैं। पूछा, तो एक शराबी ने कहा—भाई, हम सब रोज शराब पिया करते हैं। कल की शराब बहुत तेज़ थी। हमने बहुत मना किया; पर बोतल की बोतल खाली कर दी। रात को हम लोग सोये, तो इतना अलबत्ता कहा कि कलेजा फुँका जा रहा है। अब जो देखते हैं, तो मरा हुआ है। आप तो जान से गया और हमको भी क़त्ल कर गया।

ख़ोजी—ग़ज़ब हो गया! अब तुम धरे जाओगे और सज़ा पाओगे!

शराबी—हम कहेंगे कि साँप ने काटा था।

ख़ोजी—कहीं ऐसी भूल भी न करना।

शराबी—अच्छा, भाग जायँगे।

ख़ोजी—तब तो जरूर ही पकड़े जाओगे। लोग ताड़ जायँगे कि कुछ दाल में काला है।

शराबी—अच्छा, हम कहेंगे कि छुरी मार कर मर गया और गले में छुरी भी भोंक देंगे।

ख़ोजी—यह बात हिमाक़त है, मैं जैसे कहूँ, वैसे करो। तुम सब के सब रोओ और सिर पीटो। एक कहे कि मेरा सगा भाई था। दूसरा कहे कि मेरा बहनोई था; तीसरा उसे मामूँ बताये। जो कोई पूछे कि क्या हुआ था, तो गुर्दे का दर्द बताना। ख़ूब चिल्ला-चिल्ला कर रोना। जो यों आँसू न आवें तो मिरचे लगा लो। आँखों में धूल झोंक लो। ऐसा न हो कि गड़बड़ा जाओ और जेलख़ाने जाओ।

इधर तो शराबियों ने रोना-पीटना शुरू किया, उधर किसी ने जा कर थाने में जड़ दी कि सराय में कई आदमियों ने मिल कर एक महाजन को मार डाला। थानेदार और दस चौकीदार रप-रप करते आ पहुँचे। अरे ओ भठियारी, बता, वह महाजन कहाँ टिका हुआ था?

भठियारिन—कौन महाजन? किसी का नाम तो लीजिए।

थानेदार—तेरा बाप, और कौन!

भठियारिन—मेरा बाप? उसकी तालाश है, तो क़ब्रिस्तान जाइए।

थानेदार—ख़ून कहाँ हुआ?

भठियारिन—ख़ूब! अरे तोबा कर बंदे! ख़ून हुआ होगा थाने पर।

थानेदार—अरे इस सराय में कोई मरा है रात को?

भठियारिन—हाँ, तो यों कहिए। वह देखिए, बेचारे खड़े रो रहे हैं। उनके भाई थे। कल दर्द हुआ। रात को मर गये।

थानेदार—लाश कहाँ है?

शराबी—हुज़ूर, यह रखी है। हाय, हम तो मर मिटे। घर में जा कर क्या मुँह दिखायेंगे, किस मुँह से अब घर जायँगे। किसी डाक्टर को बुलवाइए, ज़रा नब्ज तो देख लें।

थानेदार—अजी, अब नब्ज में क्या रखा है। बेचारा बुरी मौत मरा। अब इसके दफ़न-कफ़न की फ़िक्र करो।

थानेदार चला गया, तो मियाँ ख़ोजी ख़ूब खिल-खिला कर हँसे कि वल्लाह, क्या बात बनायी है। शराबियों ने उनकी ख़ूब आवभगत की-कि वाह उस्ताद, क्या झाँसा दिया। आपकी बदौलत जान बची; नहीं तो न जाने किस मुसीबत में फँस जाते।

थोड़ी ही देर बाद किसी कोठरी से फिर शोर-गुल सुनायी दिया।

आज़ाद—अब यह कैसा गुल है भाई? क्या यह भी कोई शराबी है।

भठियारिन—नहीं, एक रईस की लड़की है। उस पर एक परेत आया है। ज़रा सी लड़की, लेकिन इतनी दिलेर हो गयी है कि किसी के सँभाले नहीं सँभलती।

आज़ाद—यह सब ढकोसला है!

भठियारिन—ऐ वाह, ढकोसला है। इस लड़की का भाई आगरे में था और वहाँ से पाँच सौ रुपये अपने बाप की थैली से चुरा लाया। यहाँ जो आया, तो लड़की ने कहा कि तू चोर है, चोरी करके आया है।

आज़ाद—अजी, उस लड़के ने अपनी बहन से कह दिया होगा; नहीं तो भला उसे क्या ख़बर होती ?

भठियारी—भला ग़ज़लें उसे कहाँ से याद हैं ?

आज़ाद—इसमें अचरज की कौन सी बात है ? तुम्हें भी दो-चार ग़ज़लें याद ही होंगी !

भठियारी—मैं यह न मानूँगी। अपनी आँखों देख आयी हूँ।

आज़ाद तो खिचड़ी पकवा कर खाने लगे और मियाँ ख़ोजी घास लाने चले। जब घसियारी ने बारह आने माँगे, तो आपने क़रौली दिखायी। इस पर घसियारी ने गट्ठा इन पर फेंक दिया। बेचारे गट्ठे के बोझ से ज़मीन पर आ रहे। निकलना मुश्किल हो गया। लगे चीखने—न हुई क़रौली, नहीं तो बता देता। अच्छे अच्छे डाकू मेरा लोहा मानते हैं। एक नहीं, पचासों को मैंने चपरगट्टू किया है। यह घसियारिन मुझसे लड़े। अब उठाती है गट्ठा या आ कर क़रौली भोंक दूँ ?

लोगों ने गट्ठा उठाया, तो मियाँ ख़ोजी बाहर निकले। दाढ़ी-मूँछ पर मिट्टी जम गयी थी, लत-पत हो गये थे। उधर आज़ाद खिचड़ी खा कर लेटे ही थे कि कै हुई और फ़िर बुख़ार हो आया। तड़पने लगे। तब तो ख़ोजी भी घबराये। सोचे, अब बिना हकीम के काम न चलेगा ? भठियारी से पूछ कर हकीम के यहाँ पहुँचे।

हकीम साहब पालकी पर सवार हो कर आ पहुँचे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

ख़ोजी—बेहद कमज़ोरी है। बात करने की ताक़त नहीं।

हकीम—यह आपके कौन हैं ?

ख़ोजी—जी हजूर, यह गुलाम का लड़का है।

हकीम—आप मुझे मसख़रे मालूम होते हैं।

ख़ोजी—जी हाँ, मसख़रा न होता, तो लड़के का बाप ही क्यों होता !

आज़ाद—जनाब, यह बेहया-बेशर्म आदमी है। न इसको जूतियाँ खाने का डर, न चपतियाये जाने का ख़ौफ़। इसकी बातों का तो ख़याल ही न कीजिए।

ख़ोजी—हकीम साहब, मुझे तो कुछ दिनों से बवासीर की शिकायत हो गयी है।

हकीम—अजी, मैं ख़ुद इस शिकायत में गिरफ़्तार हूँ। मेरे पास इसका आज़माया हुआ नुस्ख़ा मौजूद है।

ख़ोजी—तो आपने अपने बावासीर का इलाज क्यों न किया ?

आज़ाद—ख़ोजी, तुम्हारी शामत आयी है। आज पिटोगे।

ख़ैर, हकीम साहब ने नुस्ख़ा लिखा और रुख़सत हुए। अब सुनिए कि नुस्ख़े में लिखा था—रोग़न-गुल। आपने पढ़ा रोग़नगिल, यानी मिट्टी का तेल। आप नुस्ख़ा बँधवा कर लाये और मिट्टी के तेल में पका कर आज़ाद को पिलाया, तो मिट्टी के तेल की बदबू आयी। आज़ाद ने कहा—यह बदबू कैसी है ? इस पर मियाँ ख़ोजी

ने उन्हें ख़ूब ही ललकारा। वाह, बड़े नाज़ुक-मिज़ाज हैं, अब कोई इत्र पिलाये आपको, या केसर का खेत चराये, तब आप खुश हों। आज़ाद चुप हो रहे, लेकिन थोड़ी ही देर बाद इतने ज़ोर का बुखार चढ़ा कि खोजी दौड़े हुए हकीम साहब के पास गये और बोले—जनाब, मरीज़ बेचैन है। और क्यों न हो, आपने भी तो मिट्टी का तेल नुस्खे में लिख दिया।

हकीम—मिट्टी का तेल कैसा? मैं कुछ समझा नहीं।

खोजी—जी हाँ, आप काहे को समझने लगे। आप ही तो रोगन-गिल लिख आये थे।

हकीम—अरे भले आदमी, क्या ग़ज़ब किया! कैसे जाँगलुओं से पाला पड़ा है! हमने लिखा रोग़न-गुल, और आप मिट्टी का तेल दे आये! वल्लाह, इस वक़्त अगर आप मेरे मकान पर न आये होते, खड़े-खड़े निकलवा देता।

खोजी—आपके हवास तो खुद ही ठिकाने नहीं। आपके मकान पर न आया होता, तो आप निकलवा कहाँ से देते? जनाब, पहले फ़स्द खुलवाइए।

यह कह-कर मियाँ खोजी लौट आये। आज़ाद ने कहा—भाई, हकीम को तो देख चुके, अब कोई डॉक्टर लाओ।

खोजी—डॉक्टरों की दवा गरम होती है। बुख़ार का इलाज इन लोगों को मालूम ही नहीं।

आज़ाद—आप हैं अहमक! जा कर चुपके से किसी डॉक्टर को बुला लाइए।

खोजी पता पूछते हुए अस्पताल चले और डॉक्टर को बुला लाये?

डॉक्टर—ज़बान दिखाओ, ज़बान!

आज़ाद—बहुत खूब!

डॉक्टर—आँखें दिखाओ?

आज़ाद—आँखें दिखाऊँ, तो घबरा कर भागो।

डॉक्टर—क्या बक-बक करता है, आँख दिखा।

खैर डॉक्टर साहब ने नुस्खा लिखा और फीस ले कर चंपत हुए। आज़ाद ने चार घंटे उनकी दवा की, मगर प्यास और बेचैनी बढ़ती गयी। सेरों बर्फ़ पी गये, मगर तसकीन न हुई। उल्टे और पेचिश ने नाक में दम कर दिया। सुबह-होते मियाँ खोजी एक वैद्यराज को बुला लाये। उन्होंने एक गोली दी और शहद के साथ चटा दी। थोड़ी देर में आज़ाद के हाथ-पाँव अकड़ने लगे। खोजी बहुत घबराये और दौड़े वैद्य को बुलाने। राह में एक होम्योपैथिक डॉक्टर मिल गये। यह उन्हें घेर-घार कर लाये। उन्होंने एक छोटी सी शीशी से दवा की दो बूँदें पानी में डाल दीं! उसके पीते ही आज़ाद की तबीयत और भी बेचैन हो गयी।

मियाँ आज़ाद ने दो-तीन दिन में इतने हकीम, डाक्टर और वैद्य बदले कि अपनी ही मिट्टी पलीद कर ली। इस क़दर ताक़त भी न रही कि खटिया से उठ सकें। खोजी ने अब उन्हें डाँटना शुरू किया—और सोइए ओस में! ज़रा सी लुंगी

बाँध ली और तर बिछौने पर सो रहे। फिर आप बीमार न हों, तो क्या हम हों। रोज़ कहता था कि ओस में सोना बुरा है; मगर आप सुनते किसकी हैं। आप अपने को तो जाली नूस समझते हैं और बाक़ी सबको गधा। दुनिया में बस, एक आप ही तो बुक़रात हैं।

भठियारी—ऐ, तुम भी अजीब आदमी हो! भला कोई बीमार को ऐसे डाँटता है? जब अच्छे हो जायँ, तो खूब कोस लेना। और जो ओस की कहते हो, तो मियाँ, यह तो आदत पर है। हम तो दस बरस से ओस ही में सोते हैं। आज तक ज़ुकाम भी जो हुआ हो, तो क़सम ले लो।

आज़ाद—कोसने दो। अब यहाँ घड़ी दो घड़ी के और मेहमान हैं। अब मरे। न जाने किस बुरी साइत घर से चले थे। हुस्नआरा के पास ख़त भेज दो कि हमको आ कर देख जायँ। आज इस वक़्त सराय में लेटे हुए बातें कर रहे हैं, कल परसों तक क़ब्र में होंगे—

आग़ोश-लहद में जब कि सोना होगा;
जुज़ ख़ाक, न तकिया, न बिछौना होगा।
तनहाई में आह कौन होवेगा अनीस;
हम होवेंगे और क़ब्र का कोना होगा।

ख़ोजी—मैं डरता हूँ कि कहीं तुम्हें सरसाम न हो जाय।

भठियारी—चुप भी रहो, आख़िर कुछ अक़्ल भी है?

आज़ाद—मेरे दिन ही बुरे आये हैं। इनका कोई क़सूर नहीं।

भठियारी—आपने भी तो हकीम की दवा की। हकीम लटकाये रहते हैं।

आज़ाद—ख़ुदा हकीमों से बचाये। मूँग की खिचड़ी दे-दे कर मरीज़ को अधमरा कर डालते हैं। उस पर प्याले भर-भर दवा। अगर दो महीने में भी खटिया छोड़ी, तो समझिए कि बड़ा ख़ुशनसीब था।

ख़ोजी—जी हाँ, जब डॉक्टर न थे, तब तो सब मर ही जाते थे।

आज़ाद—ख़ैर, चुप रहो, सिर मत खाओ। अब हमें सोने दो।

मियाँ आज़ाद की आँख लग गयी। ख़ोजी भी ऊँघने लगे। एक आदमी ने आ कर उनको जगाया और कहा—मेरे साथ आइए, आपसे कुछ कहना है। ख़ोजी ने देखा, तो इनकी ख़ासी जोड़ थी। उनसे अंगुल दो अंगुल दबते ही थे।

ख़ोजी—तो आप पिले क्यों पड़ते हैं? दूर ही से कहिए, जो कुछ कहना हो।

मुसाफ़िर—मियाँ आज़ाद कहाँ हैं?

ख़ोजी—आप अपना मतलब कहिए। यहाँ तो आज़ाद-वाज़ाद कोई नहीं है। आप अपना ख़ास मतलब कहिए।

मुसाफ़िर—अजी, आज़ाद हमारे बहनोई हैं। हमारी बहन ने भेजा है कि देखो कहाँ हैं।

ख़ोजी—उनकी शादी तो हुई नहीं, बहनोई क्योंकर बन गये?

मुसाफ़िर—कितने अक़्ल के दुश्मन हो! भला कोई बेवजह किसी को अपना बहनोई बनावेगा?

खोजी—भला आज़ाद की बीबी कहा हैं? हमको तो दिखा दीजिए।

मुसाफ़िर—अजी, इसी सराय के उस कोने में। चलो, दिखा दें। तुमसे क्या चोरी है।

मियाँ खोजी कोठरी के अंदर गये। बालों में तेल डाला। सफ़ेद कपड़े पहने। लाल फुँदनेदार टोपी दी। मियाँ आज़ाद का एक खाकी कोट डाटा और जब खूब बन-ठन चुके, तो आईना ले कर सूरत देखने लगे। बस, ग़ज़ब ही तो हो गया। दाढ़ी के बाल ऊँचे-नीचे पाये, मूँछें गिरी पड़ीं। आपने कैंची ले कर बाल बराबर करना शुरू किया। कैंची तेज थी, एक तरफ़ की मूँछ बिलकुल उड़ गयी। अब क्या करते, अपने पाँव में कुल्हाड़ी मारी। मजबूर होकर बाहर आये, तो मुसाफ़िर उन्हें देख कर हँस पड़ा। मगर आदमी था चालाक, ज़ब्त किये रहा और खोजी को साथ ले चला। जा कर क्या देखते हैं कि एक औरत, इत्र में बसी हुई, रंगीन कपड़े पहने चारपाई पर सो रही है। ज़ुल्फ़ें काली नागिन की तरह लहराती हुई गरदन के इर्द-गिर्द पड़ी हुई हैं। खोजी लगे आँखें सेकने। इतने में उस औरत ने आँखें खोल दीं और खोजी को देख कर ललकारा—तुम कौन हो? यहाँ क्या काम?

खोजी—आपके भाई पकड़ लाये।

औरत—अच्छा, पंखा झलो, मगर आँखें बंद करके। खबरदार मुझे न देखना।

खोजी पंखा झलने लगे और उस औरत ने झूठ-मूठ आँखें बंद कर लीं। ज़रा देर में आँख जो खोली, तो देखा कि खोजी आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहे हैं। उसका आँखें खोलना था कि मियाँ खोजी ने आँखें खूब ज़ोर से बंद कर लीं।

औरत—क्यों जी, घूरते क्यों हो! बताओ, क्या सज़ा दूँ?

खोजी—इत्तिफ़ाक़ से आँख खुल गयी।

औरत—अच्छा बताओ, मियाँ आज़ाद कहाँ हैं?

उधर मियाँ आज़ाद की आँख जो खुली, तो खोजी नदारद! जब घंटों हो गये और खोजी न आये, तो उनका माथा ठनका कि कमज़ोर आदमी हैं ही, किसी से टर्राये होंगे, उसने गरदन नापी होगी। भठियारे को भेजा कि जा कर ज़रा देखो तो। उसने हँस कर कहा—जरी से तो आदमी हैं, भेड़िया उठा ले गया होगा। दूसरा बोला—आज हवा सन्नाटे की चलती है, कहीं उड़ गये होंगे। आख़िर भठियारी ने कहा कि उन्हें तो एक आदमी बुला कर ले गया है। खोजी खूब बन-ठन कर गये हैं।

आज़ाद के पेट में चूहे दौड़ने लगे कि खोजी को कौन पकड़ ले गया। गिड़गिड़ा कर भठियारी से कहा—चाहे जो हो, खोजी को लाओ। किसी से पूछो-पाछो। आख़िर गये कहाँ?

इधर मियाँ खोजी उस औरत के साथ बैठे दस्तरख्वान पर हत्थे लगा रहे थे।

खाते जाते थे और तारीफ़ें करते जाते थे। एक लुक़मा खाया और कई मिनट तक तारीफ़ की। यह तो तारीफ़ ही करते रहे, उधर मियाँ मुसाफ़िर ने दस्तरख्वान साफ़ कर दिया। ख़ोजी दिल में पछताये कि हमसे क्या हिमाक़त हुई। पहले खूब पेट-भर खा लेते, फिर चाहे दिन भर बैठे तारीफ़ करते। उस औरत ने पूछा कि कुछ और लाऊँ? शर्माइएगा नहीं। यह आपका घर है। ख़ोजी कुछ माँगनेवाले ही थे कि मियाँ मुसाफ़िर ने कहा—नहीं जी, अब क्या हैज़ा कराओगी? यह कह कर उसने दस्तरख्वान हटा दिया और ख़ोजी मुँह ताकते रह गये। खाना खाने के बाद पान की बारी आयी। दो ही गिलौरियाँ थीं। मुसाफ़िर ने एक तो उस औरत को दी और दूसरी अपने मुँह में रख ली। ख़ोजी फिर मुँह देख कर रह गये। इसके बाद मुसाफ़िर ने उनसे कहा—मियाँ होत, अरे भाई, तुमसे कहते हैं।

ख़ोजी—किससे कहते हो जी? क्या कहते हो?

मुसाफ़िर—यही कहते हैं कि ज़रा पलँग से उतर कर बैठो। क्या मज़े से बराबर जा कर डट गये! उतरा कि मैं पहुँचूँ? और देखिएगा, आप पलँग पर चढ़ कर बैठे हैं। अपनी हैसियत को नहीं देखता।

ख़ोजी—चुप गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो भोंक देता।

औरत—क़रौली पीछे ढूँढ़िएगा, पहले ज़रा यहाँ से खिसक कर नीचे बैठिए।

खोजी—बहुत अच्छा, अब बैठूँ तो तोप पर उड़ा देना।

मुसाफ़िर—ले चलो, उठो, यह लो, झाड़ू। अभी झाड़ू दे डालो।

ख़ोजी—झाड़ू तुम दो। हमको भी कोई भड़भूजा समझा है? हम ख़ानदानी आदमी हैं। रईसों से इस तरह बातें कहता है गीदी!

मुसाफ़िर—हमें तो नानबाई सा मालूम होता है। चलिए, उठिए, झाड़ू दीजिए। बड़े रईसज़ादे बन कर बैठे हैं। रईसों की ऐसी ही सूरत हुआ करती है?

ख़ोजी ने दिल में सोचा कि जिससे मिलता हूँ, वह यही कहता है कि भलेमानस की ऐसी सूरत नहीं होती। और, इस वक़्त तो एक तरफ़ की मूँछ ही उड़ गयी है, भलामानस कौन कहेगा। कुछ नहीं, अब हम पहले मुँह बनवायेंगे! बोले—अच्छा, रुख़सत।

मुसाफ़िर—वाह, क्या दिल्लगी है। बैठिए, चिलम भरके जाइएगा।

मियाँ ख़ोजी ऐसे झल्लाये कि चिमट ही तो गये। दोनों में चपतबाज़ी होने लगी। दोनों का क़द कोई छह छह बालिश्त का, दोनों मरियल, दोनों चंडूबाज़। यह आहिस्ता से उनको चपत लगाते हैं, वह धीरे से इन पर धप जमाते हैं। उन्होंने इनके कान पकड़े इन्होंने उनकी नाक पकड़ी। उन्होंने इनको काट खाया, इन्होंने उनको नोच लिया। और मज़ा यह कि दोनों रो रहे हैं। मियाँ ख़ोजी क़रौली की धुन बाँधे हुए हैं। आख़िर दोनों हाँप गये। न यह जीते, न वह। ख़ोजी लड़खड़ा कर गिरे, तो चारों खाने चित। उस हसीना ने दो-तीन धौल ऊपर से जमा दिये। इनका तो यह हाल हुआ, उधर मियाँ मुसाफ़िर ने चक्कर खाया और धम से जमीन पर। आख़िर

हसीना ने दोनों को उठाया और कहा—बस, लड़ाई हो चुकी। अब क्या कट ही मरोगे? चलो, बैठो।

ख़ोजी—न हुई क़रौली, नहीं तो भोंक देता। हात् तेरे की!

मुसाफ़िर—वह तो मैं हाँप गया, नहीं तो दिखा देता आपको मज़ा। कुछ ऐसा-वैसा समझ लिया है। सैकड़ों पेच याद हैं।

हसीना—ख़बरदार, जो अब किसी की ज़बान खुली! चलो, अब चलें मियाँ आज़ाद के पास। उनकी भी तो ख़बर लें, जिस काम के लिए यहाँ तक आये हैं।

शाम हो गयी थी। हसीना दोनों आदमियों के साथ आज़ाद की कोठरी में पहुँची, तो क्या देखती है कि आज़ाद सोये हैं और भठियारी बैठी पंखा झल रही है। उसने चट आज़ाद का कंधा पकड़ कर हिलाया। आज़ाद की आँखें खुल गयीं। आँख का खुलना था कि देखा, अलारक्खी सिरहाने खड़ी हैं और मियाँ चंडूबाज़ सामने खड़े पाँव दबा रहे हैं। आज़ाद की जान सी निकल गयी। कलेजा धड़-धड़ करने लगा, होश पैतरे हो गये। या ख़ुदा, यहाँ यह कैसे पहुँची? किसने पता बताया? ज़रा बीमारी हलकी हुई, तो इस बला ने आ दबोचा—

एक आफ़त से तो मर-मरके हुआ था जीना;
पड़ गयी और यह कैसी, मेरे अल्लाह, नयी।

ख़ोजी—हज़रत, उठिए, देखिए, सिरहाने कौन खड़ा है। वल्लाह, फड़क जाओ तो सही।

आज़ाद—(अलारक्खी से) बैठिए-बैठिए, ख़ूब मिलीं!

ख़ोजी—अजी, अभी हमसे और आपके साले से बड़ी ठाँय-ठाँय हो गयी। वह तो कहिए, क़रौली न थी, नहीं सालारजंग के पलस्तर बिगाड़ दिये होते।

आज़ाद ने ख़ोजी, चंडूबाज़ और भठियारी को कमरे के बाहर जाने को कहा। जब दोनों अकेले रह गये, तो आजाद ने अलारक्खी से कहा—कहिए, आप कैसे तशरीफ़ लायी हैं? हम तो वह आज़ाद ही नहीं रहे। वह दिल ही नहीं, वह उमंग ही नहीं। अब तो रूम ही जाने की धुन है।

अलारक्खी—प्यारे आज़ाद, तुम तो चले रूम को, हमें किस के सुपुर्द किये जाते हो? न हो, ज़मीन ही को सौंप दो। अब हम किसके हो कर रहें?

आज़ाद—अब हमारी इज़्ज़त और आबरू आप ही के हाथ है। अगर रूम से जीते वापस आये, तो तुमको न भूलेंगे। अल्लाह पर भरोसा रखो, वही बेड़ा पार करेगा। मेरी तबीयत दो-तीन दिन से अच्छी नहीं है। कल तो नहीं, परसों जरूर रवाना हूँगा।

ख़ोजी—(भीतर आ कर) बी अलारक्खी अभी पूछ रही थीं कि मुझको किसके सुपुर्द किये जाते हो; आपने इसका कुछ जवाब न दिया। जो कोई और न मिले, तो हमीं यह मुसीबत सहें। हमारे ही सिपुर्द कर दीजिए। आप जाइए, हम और यह यहाँ रहेंगे।

आज़ाद—तुम यहाँ क्यों चले आये? निकलो यहाँ से।

अलारक्खी बड़ी देर तक आज़ाद को समझाती रही—हमारा कुछ ख़याल न करो, हमारा अल्लाह मालिक है। तुम हुस्नआरा से क़ौल हारे हो, तो रूम जाओ और ज़रूर जाओ, ख़ुदा ने चाहा तो सुर्ख़रू हो कर आओगे। मैं भी जा कर हुस्न-आरा ही के पास रहूँगी। उन्हें तसल्ली देती रहूँगी। ज़रा जो किसी पर खुलने पावे कि मुझसे-तुमसे क्या ताल्लुक़ है। इतना ख़याल रहे कि जहाँ-जहाँ डाक जाती हो, वहाँ-वहाँ से ख़त बराबर भेजते जाना। ऐसा न हो कि भूल जाओ। नहीं तो वह कुढ़-कुढ़ कर मर ही जायँगी। और, मेरा तो जो हाल है, उसको ख़ुदा ही जानता है। अपना दुःख किससे कहूँ ?

आज़ाद – अलारक्खी, ख़ुदा की क़सम, हम तुमको अपना इतना सच्चा दोस्त नहीं जानते थे। तुमको मेरा इतना ख़याल और मेरी इतनी मुहब्बत है, यह तो आज मालूम हुआ।

इस तरह दो-तीन घंटे तक दोनों ने बातें की। जब अलारक्खी रवाना हुई, तो दोनों गले मिल कर ख़ूब रोये।

२६

आज़ाद ने सोचा कि रेल पर चलने से हिंदोस्तान की हालत देखने में न आयेगी। इसलिए वह लखनऊ के स्टेशन पर सवार न हो कर घोड़े पर चले थे। एक शहर से दूसरे शहर जाना, जंगल और देहात की सैर करना, नये-नये आदमियों से मिलना उन्हें पसंद था। रेल पर ये मौक़े कहाँ मिलते। अलारक्खी के चले जाने के एक दिन बाद वह भी चले। घूमते-घामते एक क़स्बे में जा पहुँचे। बीमारी से तो उठे ही थे, थक कर एक मकान के सामने बिस्तर बिछाया और डट गये। मियाँ खोज़ी ने आग सुलगायी और चिलम भरने लगे। इतने में उस मकान के अंदर से एक बूढ़े निकले और पूछा—आप कहाँ जा रहे हैं ?

आज़ाद—इरादा तो बड़ी दूर का करके चला हूँ, रूम का सफ़र है, देखूँ पहुँचता हूँ या नहीं।

बूढ़े मियाँ—खुदा आपको सुर्खरू करे। हिम्मत करनेवाले की मदद खुदा करता है। आइए, आराम से घर में बैठिए। यह भी आप ही का घर है !

आज़ाद उस मकान में गये, तो क्या देखते हैं कि एक जवान औरत चिक उठाये मुसकिरा रही है। आज़ाद ज्यों ही फ़र्श पर बैठे वह हसीना बाहर निकल आयी और बोली—मेरे प्यारे आज़ाद, आज बरसों के बाद तुम्हें देखा। सच कहना, कितनी जल्दी पहचान गयी। आज मुँह-माँगी मुराद पायी।

मियाँ आज़ाद चकराये कि यह हसीना कौन है, जो इतनी मुहब्बत से पेश आती है। अब साफ़-साफ़ कैसे कहें कि हमने तुम्हें नहीं पहचाना। उस हसीना ने यह बात ताड़ ली और मुसकिरा कर कहा—

हम ऐसे हो गये अल्लाह-अकबर, ऐ तेरी कुदरत।
हमारा नाम सुन कर हाथ वह कानों पे धरते हैं।

आप और इतनी जल्द हमें भूल जायँ ! हम वह हैं जो लड़कपन में तुम्हारे साथ खेला किये हैं। तुम्हारा मकान हमारे मकान के पास था। मैं तुम्हारे बाग में रोज़ फूल चुनने जाया करती थी। अब समझे कि अब भी नहीं समझे ?

आज़ाद—आहाहा, अब समझा, ओफ् ओह ! बरसों बाद तुम्हें देखा। मैं भी सोचता था कि या खुदा यह कौन है कि ऐसी बेझिझक हो कर मिली। मगर पहचानते, तो क्यों कर पहचानते ? तब में और अब में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है। सच कहता हूँ ज़ीनत, तुम कुछ और ही हो गयी हो।

ज़ीनत—आज किसी भले का मुँह देख कर उठी थी। जब से तुम गये, ज़िंदगी का मज़ा जाता रहा—

यह हसरत रह गयी किस-किस मज़े से ज़िंदगी कटती ;
अगर होता चमन अपना, गुल अपना, बाग़वाँ अपना।

आज़ाद—यहाँ भी बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलीं, लेकिन तुम्हें देखते ही सारी कुलफ़तें दूर हो गयीं—

तब लुत्फ़े-ज़िंदगी है, जब अब्र हो, चमन हो ;
पेशे-नज़र हो साक़ी, पहलू में गुलबदन हो।

यहाँ अख़्तर नहीं नज़र आती !

ज़ीनत—है तो, मगर उसकी शादी हो गयी। तुम्हें देखने के लिए बहुत तड़पती थी। उस बेचारी को चचाजान ने जान-बूझ कर खारी कुएँ में ढकेल दिया। एक लुच्चे के पाले पड़ी है, दिन-रात रोया करती है। अब्बाजान जब से सिधारे, इनके पाले पड़े हैं। जब देखो, सोटा लिये कल्ले पर खड़े रहते हैं। ऐसे शोहदे के साथ ब्याह दिया, जिसका ठौर न ठिकाना। मैं यह नहीं कहती कि कोई रुपयेवाला या बहादुरशाह के खानदान का होता। ग़रीब आदमी की लड़की कुछ ग़रीबों ही के यहाँ खूब रहती है। सबसे बड़ी बात यह है कि समझदार हो, चाल-चलन अच्छा हो; यह नहीं कि पढ़े न लिखे, नाम मुहम्मदफ़ाज़िल; अलिफ़ के नाम बे नहीं जानते, मगर दावा यह है कि हम भी हैं पाँचवें सवारों में। हमारे नजदीक जिसकी आदत बुरी हो उससे बढ़ कर पाजी कोई नहीं। मगर अब तो जो होना था, सो हुआ; तुम खूब जानते हो आज़ाद कि साली को अपने बहनोई का कितना प्यार होता है; मगर क़सम लो, जो उसका नाम लेने को भी जी चाहता हो। बीबी का ज़ेवर सब बेच कर चट कर गया—कुछ दाँव पर रख आया, कुछ के औने-पौने किये। मकान-वकान सब इसी जुए के फेर में घूम गया। अब टके-टके को मुहताज है। डर मालूम होता है कि किसी दिन यहाँ आ कर कपड़े-लत्ते न उठा ले जाय। चचा को उसका सब हाल मालूम था, मगर लड़की को भाड़ में झोंक ही दिया। आती होगी, देखना, कैसी घुल के काँटा हो गयी है। हड्डी-हड्डी गिन लो। ऐ अख़्तरी, जरी यहाँ आओ। मियाँ आज़ाद आये हैं।

ज़रा देर में अख़्तर आयी। आज़ाद ने उसको और उसने आज़ाद को देखा, तो दोनों बेअख़्तियार खिल-खिला कर हँस पड़े। मगर ज़रा ही देर में अख़्तर की आँखें भर आयीं और गोल-गोल आँसू टप-टप गिरने लगे। आज़ाद ने कहा—बहन, हम तुम्हारा सब हाल सुन चुके; पर क्या करें, कुछ बस नहीं। अल्लाह पर भरोसा रखो, वही सबका मालिक है। किसी हालत में आदमी को घबराना न चाहिए। सब्र करनेवालों का दर्जा बड़ा होता है।

इस पर अख़्तर ने और भी आठ-आठ आँसू रोना शुरू किया।

ज़ीनत बोली—बहन, आज़ाद बहुत दिनों के बाद आये हैं। यह रोने का मौक़ा नहीं।

आज़ाद—अख़्तर, वह दिन याद हैं, जब तुमको हम चिढ़ाया करते थे और तुम

अंगूर की टट्टी में रूठ कर छिप रहती थीं; हम ढूँढ़ कर तुम्हें मना लाते थे और फिर चिढ़ाते थे ? हमको जो तुम्हारी दोनों की मुहब्बत है, इसका हाल हमारा ख़ुदा ही जानता है । काश, ख़ुदा यह दिन न दिखाता कि मैं तुमको इस मुसीबत में देखता। तुम्हारी वह सूरत ही बदल गयी ।

अख़्तर—भाई, इस वक़्त तुमको क्या देखा, जैसे जान में जान आ गयी । अब पहले यह बताओ कि तुम यहाँ से जाओगे तो नहीं ? इधर तुम गये, और उधर हमारा जनाज़ा निकला । बरसों बाद तुम्हें देखा है, अब न छोड़ूँगी ।

इसी तरह बातें करते-करते रात हो गयी । आज़ाद ने दोनों बहनों के साथ खाना खाया । तब ज़ीनत बोली—आज पुरानी सोहबतों की बहार आँखों में फिर गयी । आइए, खाना खा कर चमन में चलें । बाग़ तो वीरान है; मगर चलिए, ज़रा दिल बहलायें । क़सम लीजिए, जो महीनों चमन का नाम भी लेती हों—

नज़र आता है गुल आजर्दा, दुश्मन बाग़बाँ मुझको ;
बनाना था न ऐसे बोस्ताँ में आशियाँ मुझको ।

खाना खा कर तीनों बाग़ की सैर करने चले ।

आज़ाद—ओहोहो, यह पुराना दरख़्त है । इसी के साये में हम रात-रात बैठे रहते थे । आहाहा, यह वह रविश है, जिस पर हमारा पाँव फिसला था और हम गिरे, तो अख़्तर खूब खिल-खिला कर हँसी । तुम्हारे यहाँ एक बूढ़ी औरत थी, जैनब की माँ।

अख़्तर—थी क्यों, क्या अब नहीं है ? ऐ वह हमसे तुमने हट्टी-कट्टी है; ख़ासी कठौता सी बनी हुई है ।

आज़ाद—क्या वह बूढ़ी अभी तक ज़िंदा है ? क्या आक़बत के बोरिये बटोरेगी ?

चलते-चलते बाग़ में एक जगह दीवार पर लिखा देखा कि मियाँ आज़ाद ने आज इस बाग़ की सैर की ।

इतने में ज़ीनत के बूढ़े चचा आ पहुँचे और बोले—भई, हमने आज जो तुम्हें देखा, तो ख़याल न आया कि कहाँ देखा है । खूब आये । यह तो बतलाओ, इतने दिन रहे कहाँ ? ज़ीनत तुम्हें रोज़ याद किया करती थी, उठते-बैठते तुम्हारा ही नाम ज़बान पर रहता था ? अब आप यहीं रहिए । ज़ीनत को जो तुमसे मुहब्बत है, वह उसका और तुम्हारा, दोनों का दिल जानता होगा । मेरी दिली आरज़ू है कि तुम दोनों का निकाह हो जाय । इसी बाग़ में रहिए और अपना घर सँभालिए । मैं तो अब गोशे बैठ कर ख़ुदा की बंदगी करना चाहता हूँ ।

मियाँ आज़ाद ये बातें सुन कर पानी-पानी हो गये ! 'हाँ' कहें, तो नहीं बनती, 'नहीं' कहें, तो शामत आये । सन्नाटे में थे कि कहें क्या । आख़िर बहुत देर के बाद बोले—आपने जो कुछ फ़रमाया, वह आपकी मेहरबानी है । मैं तो अपने को इस लायक़ नहीं समझता । जिसका ठौर न ठिकाना, वह ज़ीनत के क़ाबिल कब हो सकता है ?

मियाँ आज़ाद तो यहाँ चैन कर रहे थे, उधर मियाँ खोजी का हाल सुनिए। मियाँ आज़ाद की राह देखते-देखते पीनक जो आ गयी, तो टट्टू एक किसान के खेत में जा पहुँचा। किसान ने ललकारा—अरे, किसका टट्टू है ? आप ज़रा भी न बोले। उसने खूब गालियाँ दीं। आप बैठे सुना किये। जब उसने टट्टू को पकड़ा और काँजी-हौस ले चला, तब आप उससे लिपट गये। उसने झल्ला कर एक धक्का जो दिया, तो आपने बीस लुढ़कनियाँ खायीं। वह टट्टू को ले चला। जब खोजी ने देखा कि वह हारी-जीती एक नहीं मानता, तो आप धम से टट्टू की पीठ पर हो रहे। अब आगे-आगे किसान, पीछे-पीछे टट्टू और टट्टू की पीठ पर खोजी। राह चलते लोग देखते थे। खोजी बार-बार क़रौली की हाँक लगाते थे। इस तरह काँजीहौस पहुँचे। अब काँजीहौस का चपरासी और मुंशी बार-बार कहते हैं कि हज़रत, टट्टू पर से उतरिए, इसे हम भीतर बंद करें; मगर आप उतरने का नाम नहीं लेते; ऊपर बैठे-बैठे क़रौली और तमंचे का रोना रो रहे हैं। आख़िर मजबूर हो कर मुंशी ने खोजी को छोड़ दिया। आप टट्टू लिये हुए मूँछों पर ताव देते घर की तरफ़ चले, गोया कोई क़िला जीत कर आये हैं।

उधर आज़ाद से अख्तर ने कहा—क्यों भाई, वे पहेलियाँ भी याद हैं, जो तुम पहले बुझवाया करते थे ? बहुत दिन हुए, कोई चीसताँ सुनने में नहीं आयी।

आज़ाद—अच्छा, बूझिए—

आँ चीस्त दहन हज़ार दारद;

(वह क्या है जिसके सौ मुँह होते हैं)

दर हर दहने दो मार दारद;

(हर मुँह में दो साँप होते हैं)

शाहेस्त नशिस्ता वर सरे-तख्त।

(एक बादशाह तख्त पर बैठा हुआ है)

आँ रा हमा दर शुमार दारद।

(उसी को सब गिनते हैं)

अख्तर—हज़ार मुँह। यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है ?

ज़ीनत—गिनती कैसी ?

आज़ाद—कुछ न बतायेंगे। जो खुदा की बंदगी करते हैं, वह आपी समझ जायँगे।

अख्तर—अहाहा, मैं समझ गयी। अल्लाह की क़सम, समझ गयी। तसवीह है; क्यों कैसी बूझी ?

आज़ाद—हाँ। अच्छा, यह तो कोई बूझे—

राजा के घर आयी रानी,
औघट-घाट वह पीवे पानी।
मारे लाज के डूबी जाय,
नाहक़ चोट परोसी खाय।

ज़ीनत—भई, हमारी समझ में तो नहीं आता। बता दो, बस, बूझ चुकी।

अख़्तर—वाह, देखो, बूझते हैं। घड़ियाल है।

आज़ाद—वल्लाह, ख़ूब बूझी। अब की बूझिए—

एक नार जब सभा में आवे,
सारी सभा चकित रह जावे।
चातुर चातुर वाके यार,
मूरख देखे मुँह पसार।

ज़ीनत—जो इसको कोई बूझ दे, तो मिठाई खिलाऊँ।

आज़ाद—यह इस वक़्त यहाँ है। बस, इतना इशारा बहुत है।

अख़्तर—हम हार गये, आप बता दें।

आज़ाद—बता ही दूँ, यह पहेली है।

ज़ीनत—अरे, कितनी मोटी बात पूछी और हम न बता सके!

अख़्तर—अच्छा, बस एक और कह दीजिए। लेकिन अबकी कोई कहानी कहिए। अच्छी कहानी हो, लड़कों के बहलाने की न हो।

आज़ाद ने अपनी और हुस्नआरा की मुहब्बत की दास्तान बयान करनी शुरू की। बजरे पर सैर करना, सिपहआरा का दरिया में डूबना और आज़ाद का उसको निकालना, हुस्नआरा का आज़ाद से रूम जाने के लिए कहना और आज़ाद का कमर बाँध कर तैयार हो जाना, ये सारी बातें बयान कीं।

अख़्तर—बेशक सच्ची मुहब्बत थी।

आज़ाद—मगर मियाँ आशिक़ वहाँ से चले, तो राह में नीयत डावाँडोल हो गयी। किसी और के साथ शादी कर ली।

अख़्तर—तोबा! तोबा! बड़ा बुरा किया! बस, ज़बानी दाख़िला था!

ज़ीनत—सच्ची मुहब्बत होती, तो हूर पर भी आँख न उठाता। रूम जाता और फिर जाता। मगर वह कोई मक्कार आदमी था।

आज़ाद—वह आशिक़ मैं हूँ और माशूक़ हुस्नआरा है। मैंने अपनी ही दास्तान सुनायी और अपनी ही हालत बतायी। अब जो हुक्म दो, वह मंजूर, जो सलाह बताओ वह क़बूल। रूम जाने का वादा कर आया हूँ, मगर यहाँ तुमको देखा, तो अब क़दम नहीं उठता। क़सम ले लो, जो तुम्हारी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ करूँ।

इतना सुनना था कि अख़्तर की आँखें डबडबा आयीं और ज़ीनत का मुँह उदास हो गया। सिर झुका कर रोने लगी।

अख़्तर—तो फिर आये यहाँ क्या करने?

ज़ीनत—तुम तो हमारे दुश्मन निकले। सारी उमंगों पर पानी फेर दिया—

शिकवा नहीं है आप जो अब पूछते नहीं;
वह शक़्ल मिट गयी, वह शबाहत नहीं रही।

अख्तर—ख़ाजी, अब इनको यही सलाह दो कि रूम जायँ। मगर जब वापस आयें, तो हमसे भी मिलें, भूल न जायँ।

इतने में बाहर से आवाज़ आयी कि न हुई क़रौली, वर्ना खून की नदी बहती होती, कई आदमियों का खून हो गया होता। वह तो कहिए, खैर गुज़री। आज़ाद ने पुकारा—क्यों भाई खोजी, आ गये?

खोजी—वाह-वाह! क्या साथ दिया! हमको छोड़ कर भागे, तो खबर भी न ली। यहाँ किसान से डंडा चल गया, काँजीहौस में चौकीदार से लाठी-पोंगा हो गया; मगर आपको क्या।

आज़ाद—अजी चलो, किसी तरह आ तो गये।

खोजी—अजी, यही बूढ़े मियाँ राह में मिले, वह यहाँ तक ले आये। नहीं तो सचमुच घास खाने की नौबत आती।

मियाँ आज़ाद दूसरे दिन दोनों बहनों से रुखसत हुए। रोते-रोते ज़ीनत की हिचकियाँ बँध गयीं। आज़ाद भी नर्म-दिल आदमी थे। फूट-फूट कर रोने लगे। कहा—मैं अपनी तसवीर दिये जाता हूँ, इसे अपने पास रखना। मैं खत बराबर भेजता रहूँगा। वापस आऊँगा, तो पहले तुमसे मिलूँगा, फिर किसी से। यह कह कर दोनों बहनों को पाँच-पाँच अशर्फ़ियाँ दीं। फिर ज़ीनत के चचा के पास जा कर बोले—आप बुज़ुर्ग हैं, लेकिन इतना हम ज़रूर कहेंगे कि आपने अख्तरी को जीते जी मार डाला। दीन का रखा न दुनिया का। आदमी अपनी लड़की का ब्याह करता है, तो देख लेता है कि दामाद कैसा है; यह नहीं कि शोहदे और बदमाश के साथ ब्याह कर दिया। अब आपको लाज़िम है कि उसे किसी दिन बुलाइए, और समझाइए, शायद सीधे रास्ते पर आ जाय।

बूढ़े मियाँ—क्या कहें भाई, हमारी क़िस्मत ही फूट गयी। क्या हमको अख्तरी का प्यार नहीं है? मगर करें क्या? उस बदनसीब को समझाये कौन? किसी की सुने भी।

आज़ाद—खैर, अब ज़ीनत की शादी ज़रा समझ-बूझ कर कीजिएगा। अगर ज़ीनत किसी अच्छे घर ब्याही जाय और उसी का शौहर चलन का अच्छा हो, तो अख्तर के भी आँसू पुँछें कि मेरी बहन तो खुश है, यही सही। चार दिन जो कहीं बहन के यहाँ जा कर रहेगी, तो जी खुश होगा, बड़ी ढारस होगी। अब बंदा तो रुखसत होता है, मगर आपको अपने ईमान और मेरी जान की क़सम है, ज़ीनत की शादी देख-भाल कर कीजिएगा।

यह कह कर आज़ाद घर से बाहर निकले, तो दोनों बहनों ने चिल्ला-चिल्ला कर रोना शुरू किया।

आज़ाद—प्यारी अख्तर और प्यारी ज़ीनत, खुदा गवाह है, इस वक़्त अगर मुझे मौत आ जाय, तो समझूँ, जी उठा। मुझे खूब मालूम है, मेरी जुदाई तुम्हें अखरेगी; लेकिन क्या करूँ, किसी ऐसी-वैसी जगह जाना होता, तो खैर, कोई मुज़ायक़ा न था,

मगर एक ऐसी मुहिम पर जाना है, जिससे इनकार करना किसी मुसलमान को गवारा नहीं हो सकता। अब मुझे हँसी-खुशी रुख्सत करो।

ज़ीनत ने कलेजा थाम कर कहा—जाइए। इसके आगे मुँह से एक बात भी न निकली।

अख्तर—जिस तरह पीठ दिखायी, उसी तरह मुँह भी दिखाओ।

२७

मियाँ आज़ाद और ख़ोजी चलते-चलते एक नये क़स्बे में जा पहुँचे और उसकी सैर करने लगे। रास्ते में एक अनोखी सज-धज के जवान दिखायी पड़े। सिर से पैर तक पीले कपड़े पहने हुए, ढीले पाँयचे का पाज़ामा, केसरिये केचुल-लोट का अँगरखा, केसरिया रँगी दुपल्ली टोपी, कंधों पर केसरिया रूमाल, जिसमें लचका टका हुआ। सिन कोई चालीस साल का।

आज़ाद—क्यों भई ख़ोजी, भला भाँपो तो, यह किस देश के हैं।

ख़ोजी—शायद काबुल के हों।

आज़ाद—काबुलियों का यह पहनावा कहाँ होता है ?

ख़ोजी—वाह, ख़ूब समझे ! क्या काबुल में गधे नहीं होते ?

आज़ाद—ज़रा हज़रत की चाल तो देखिएगा, कैसे कूंदे झाड़ते हुए चले जाते हैं। कभी ज़री के जूते पर निगाह है, कभी रूमाल फड़काते हैं, कभी अँगरखा चमकाते हैं, कभी लचके की झलक दिखाते हैं। इस दाढ़ी-मूँछ का भी ख़याल नहीं। यह दाढ़ी और यह लचके की गोट, सुभान-अल्ला !

ख़ोजी—आपको ज़रा छेड़िए तो; दिल्लगी ही सही।

आज़ाद—जनाब, आदाबअर्ज़ है। वल्लाह, आपके लिबास पर तो वह जोबन है कि आँख नहीं ठहरती, निगाह के पाँव फिसले जाते हैं।

ज़र्दपोश—(शरमा कर) जी, इसका एक ख़ास सबब है।

आज़ाद—वह क्या ? क्या किसी सरकार से वर्दी मिली है ? या, सच कहना उस्ताद, किसी नाई से तो नहीं छीन लाये ?

ज़र्दपोश—(अपने नौकर से) रमज़ानी, ज़रा बता तो देना, हमें अपने मुँह से कहते हुए शरम आती है।

रमज़ानी—हुज़ूर, मियाँ का निकाह होनेवाला है। इसी पहनावे की रस्म है हुज़ूर !

आज़ाद—रस्म की एक ही कही। यह अच्छी रस्म है—दाढ़ी-मूँछवाले आदमी, और लचका, बन्नत पट्ठा लगा कर कपड़े पहनें ! अरे भई, ये कपड़े दुलहिन के लिए हैं, या आप-जैसे मुछक्कड़-फक्कड़बेग के लिए ? ख़ुदा के लिए इन कपड़ों को उतारो, मरदों की पोशाक पहनो !

इधर आज़ाद तो यह फटकार सुना कर अलग हुए, उधर ख़िदमतगार ने मियाँ ज़र्दपोश को समझाना शुरू किया—मियाँ, सच तो कहते थे ! जिस गली-कूँचे में आप निकल जाते हैं, लोग तालियाँ बजाते और हँसी उड़ाते हैं।

ज़र्दपोश—हँसने दो जी; हँसते ही घर बसते हैं।

ख़िदमतगार—मियाँ, मैं ज़ाहिल आदमी हूँ, मुल बुरी बात बुरी ही है। हम ग़रीब आदमी हैं, फिर भी ऐसे कपड़े नहीं पहनते।

मियाँ आज़ाद उधर आगे बढ़े तो क्या देखते हैं, एक टुकड़ी सामने से आ रही है। उस पर तीन नौजवान रईस बड़े ठाट से बैठे हैं। तीनों ऐनकबाज़ हैं। आज़ाद बोले—यह नया फैशन देखने में आया। जिसे देखो, ऐनकबाज़। अच्छी-ख़ासी आँखें रखते हुए भी अंधे बनने का शौक!

मियाँ आज़ाद को यह क़स्बा ऐसा पसंद आया कि उन्होंने दो-चार दिन यहीं रहने की ठानी। एक दिन घूमते-घामते एक नवाब के दरबार में जा पहुँचे। सजी-सजायी कोठी, बड़े-बड़े कमरे। एक कमरे में ग़लीचे बिछे हुए, दूसरे में चौकियाँ, मेज़, मसहरियाँ क़रीने से रखी हुईं। ख़ोजी यह ठाट-बाट देख कर अपने नवाब को भूल गये। जा कर दोनों आदमी दरबार में बैठे। ख़ोजी तो नवाबों की सोहबत उठाये थे, जाते ही जाते कोठी की इतनी तारीफ़ की कि पुल बाँध दिये—हज़ूर, ख़ुदा जानता है, क्या सजी-सजायी कोठी है। क़सम है हुसेन की, जो आज तक ऐसी इमारत नज़र से गुज़री हो। हमने तो अच्छे-अच्छे रईसों की मुसाहबत की है, मगर कहीं यह ठाट नहीं देखा। हुज़ूर बादशाहों की तरह रहते हैं। हुज़ूर की बदौलत हज़ारों ग़रीबों-शरीफ़ों का भला होता है। ख़ुदा ऐसे रईस को सलामत रखे।

मुसाहब—अजी, अभी आपने देखा क्या है? मुसाहब लोग तो अब आ चले हैं। शाम तक सब आ जायँगे। एक मेले का मेला रोज़ लगता है।

नवाब—क्यों साहब, यह फ्रीमेशन भी जादूगर है शायद? आख़िर जादू नहीं, तो है क्या?

मुसाहब—हुज़ूर बजा फ़रमाये हैं। कुछ दिन हुए, मेरी एक फ्रीमेशन से मुलाक़ात हुई। मैं, आप जानिए, एक ही काइयाँ। उनसे ख़ूब दोस्ती पैदा की। एक दिन मैंने उनसे पूछा, तो बोले—यह वह मज़हब है, जिससे बढ़ कर दुनिया में कोई मज़हब ही नहीं। क्यों नहीं हो जाते फ्रीमेशन? मेरे दिल में भी आ गयी। एक दिन उनके साथ फ्रीमेशन हुआ। वहाँ हुज़ूर, करोड़ों लाशें थीं। सब की सब मुझसे गले मिलीं और हँसीं। मैं बहुत ही डरा। मगर उन लोगों ने दिलासा दिया—इनसे डरते क्यों हो? हाँ, ख़बरदार, किसी से कहना नहीं; नहीं तो ये लाशें कच्चा ही खा जायँगी। इतने में ख़ुदावंद, आग बरसने लगी और मैं जल-भुन कर ख़ाक हो गया। इसके बाद एक आदमी ने कुछ पढ़ कर फूँका, तो फिर हट्टा-कट्टा मौजूद! हुज़ूर, सच तो यों है कि दूसरा होता, तो रो देता, लेकिन मैं ज़रा भी न घबराया। थोड़ी देर के बाद एक देव जैसे आदमी ने मुझे एक हौज़ में ढकेल दिया। मैं दो दिन और दो रात वहीं पड़ा रहा। जब निकाला गया, तो फिर टैयाँ सा मौजूद। सबकी सलाह हुई कि इसको यहाँ से निकाल दो। हुज़ूर, ख़ुदा-ख़ुदा करके बचे, नहीं तो जान ही पर बन आयी थी!

गप्पी—हुज़ूर, सुना है; कामरूप में औरतें मर्दों पर माश पढ़ कर फूँकती और

बकरा, बैल गधा, वगैरह बना डालती हैं। दिन भर बकरे बने, मे-में किया किये, सानी खाया किये, रात को फिर मर्द के मर्द। दुनिया में एक से एक जादूगर पड़े हैं।

ख़ुशामदी—हुजूर, यह मूठ क्या चीज़ है? कल रात को हुजूर तो यहाँ आराम फ़रमाते थे, मैं दो बजे के वक़्त क़ुरान पढ़ कर टहलने लगा, तो हुजूर के सिरहाने के ऊपर रोशनी सी हुई। मेरे तो होश उड़ गये।

मुसाहब—होश उड़ने की बात ही है।

ख़ुशामदी—हुजूर, मैं रात भर जागता रहा और हुजूर के पलँग के इर्द-गिर्द पहरा दिया किया।

नवाब—तुम्हें क़ुरान की क़सम।

ख़ुशामदी—हुजूर की बदौलत मेरे बाल-बच्चे पलते हैं; भला आपसे और झूठ बोलूँ? नमक की क़सम, बदन का रोआँ-रोआँ खड़ा हो गया। अगर मेरा बाप भी होता; तो मैं पहरा न देता; मगर हुजूर का नमक जोश करता था।

जमामार—हुजूर, यहाँ एक जोड़ी बिकाऊ है। हुजूर ख़रीदें, तो दिखाऊँ। क्या जोड़ी है कि ओहोहोहो! डेढ़ हज़ार से कम में न देगा।

मुसाहब—ऐ, तो आपने ख़रीद क्यों न ली! इतनी तारीफ़ करते हो और फिर हाथ से जाने दी! हुजूर, इन्हें हुक्म हो कि बस, ख़रीद ही लायें! बादशाही में इनके यहाँ भी कई घोड़े थे; सवार भी ख़ूब होते हैं; और चाबुक-सवारी में तो अपना सानी नहीं रखते।

नवाब—मुनीम से कहो, इन्हें दो हज़ार रुपये दें, और दो साईस इनके साथ जायँ।

जमामार मुनीम के घर पहुँचे और बोले—लाला जवाहिरमल, सरकार ने दो हज़ार रुपये दिलवाये हैं, जल्द आइए।

जवाहिरमल—तो जल्दी काहे की है? ये रुपये होंगे क्या?

जमामार—एक जोड़ी ली जायगी। उस्ताद, देखो, हमको बदनाम न करना। चार सौ की जोड़ी है। बाकी रहे सोलह सौ। उसमें से आठ सौ यार लोग खायँगे बाक़ी आठ सौ में छह सौ हमारे, दो सौ तुम्हारे। है पक्की बात न?

जवाहिरमल—तुम लो छह सौ, और हम लें दो सौ! मियाँ भाई हो न! अरे यार, तीन सौ हमको दे, पाँच सौ तू उड़ा। यह मामले की बात है?

जमामार—अजी, मियाँ भाई की न कहिए। मियाँ भाई तो नवाब भी हैं, मगर अल्लाह मियाँ की गाय। तुम तो लाखों खा जाओ, मगर गाढ़े की लँगोटी लगाये रहो। खाने को हम भी खायँगे, मगर शरबती के अँगरखे डाटे हुए नवाब बने हुए, क़ोरमा और पुलाव के बग़ैर खाना न खायँगे। तुम उबाली खिचड़ी ही खाओगे। ख़ैर, नहीं मानते, तो जैसी तुम्हारी मरज़ी।

मियाँ जमामार जोड़ी ले कर पहुँचे, हो दरबार में उसकी तारीफ़ें होने लगीं। कोई उसके थूथन की तारीफ़ करता है, कोई माथे की, कोई छाती की। ख़ुशामदी बोले—वल्लाह, कनौटियाँ तो देखिए, प्यार कर लेने को जी चाहता है।

ग़प्पी हुज़ूर, ऐसे जानवर क़िस्मत से मिलते हैं। क़सम ख़ुदा की, ऐसी जोड़ी सारे शहर में न निकलेगी।

मतलबी—हुज़ूर, दो-दो हज़ार की एक-एक घोड़ी है। क्या ख़ूबसूरत हाँथ-पाँव हैं। और मज़ा यह कि कोई ऐब नहीं।

नवाब—कल शाम को फिटन में जोतना। देखें कैसी जाती है।

ग़प्पी—हुज़ूर, आँधी की तरह जाय, क्या दिल्लगी है कुछ।

रात को मियाँ आज़ाद सराय में पड़ रहे। दूसरे दिन शाम को फिर नवाब साहब के यहाँ पहुँचे। दरबार जमा हुआ था, मुसाहब लोग ग़प्पें उड़ा रहे थे। इतने में मसजिद से अज़ान की आवाज़ सुनायी दी। मुसाहबों ने कहा—हुज़ूर, रोज़ा खोलने का वक़्त आ गया।

नवाब—क़सम क़ुरान की, हमें आज तक मालूम ही न हुआ कि रोज़ा रखने से फ़ायदा क्या होता है ? मुफ़्त में भूखों मरना कौन सा सवाब है ? हम तो हाफ़िज़ के चेले हैं, वह भी रोज़ा-नमाज़ कुछ न मानते थे।

आज़ाद—हुज़ूर ने ख़ूब कहा—

दोश अज़ मसजिद सुए मैख़ाना आदम पीरे मा ;
चीस्त याराने तरीकत बाद अजीं तदबीरे मा।

(कल मेरे पीर मसजिद से शराबख़ाने की तरफ़ आये। दोस्तो, बतलाओ, अब मैं क्या करूँ ?)

ख़ुशामदी—वाह-वाह, क्या शेर है। सादी का क्या कहना !

ग़प्पी—सुना, गाते भी ख़ूब थे। बिहाग की धुन पर सिर धुनते हैं।

आज़ाद दिल में ख़ूब हँसे। यह मसख़रे इतना भी नहीं जानते कि यह सादी का शेर है या हाफ़िज़ का ! और मज़ा यह कि उनको बिहाग भी पसंद था ! कैसे-कैसे गौखे जमा हैं।

मुसाहब—हुज़ूर, बजा फ़रमाते हैं। भूखों मरने से भला ख़ुदा क्या ख़ुश होगा ?

नवाब—भई, यहाँ तो जब से पैदा हुए, क़सम ले लो, जो एक दिन भी फ़ाक़ा किया हो। फिर भूख में नमाज़ की किसे सूझती है ?

ख़ुशामदी—हुज़ूर, आप ही के नमक की क़सम, दिन-रात खाने ही की फ़िक्र रहती है ! चार बजे और लौंडी की जान खाने लगे—लहसुन ला, प्याज़ ला, कबाब पके, तौबा !

हिंदू मुसाहब—हुज़ूर, हमारे यहाँ भी वर्त रखते हैं लोग, मगर हमने तो हर वर्त के दिन गोस्त चखा।

ख़ुशामदी—शाबाश लाला, शाबाश ! वल्लाह, तुम्हारा मज़हब पक्का है।

नवाब—पढ़े-लिखे आदमी हैं, कुछ ज़ाहिल-गँवार थोड़े ही हैं।

ख़ोजी—वाह-वाह, हुज़ूर ने वह बात पैदा की कि तौबा ही भली।

ख़ुशामदी—वाह भई, क्या तारीफ़ की है। कहने लगे, तौबा ही भली। किस

जंगल से पकड़ के आये हो भई ? तुमने तो वह बात कही कि तौबा ही भली। ख़ुदा के लिए जरी समझ-बूझ कर बोला करो।

ग़प्पी—ऐ हज़रत, बोलें क्या, बोलने के दिन अब गये। बरसात हो चुकी न ?

ख़ोजी—मियाँ, एक-एक आओ, या कहो, चौमुखी लड़ें। हम इससे भी नहीं डरते। यहाँ उम्र भर नवाबों ही की सोहबत में रहे। तुम लोग अभी कुछ दिन सीखो। आप, और हम पर मुँह आयें। एक बार हमारे नवाब साहब के यहाँ एक हज़रत आये, बड़े बुलक्कड़। आते ही मुझ पर फ़िक़रे कसने लगे। बस, मैंने जो आड़े हाथों लिया, तो झेंप कर एकदम भागे। मेरे मुक़ाबले में कोई टहरे तो भला! ले बस आइए, दो-दो चोंचें हों। पाली से नोकदम न भागो, तो मूँछें मुड़वा डालूँ।

मुसाहब—आइए, फिर आप भी क्या याद करेंगे। बंदे की ज़बान भी वह है कि कतरनी को मात करे। ज़बान आगे जाती है, बात पीछे रह जाती है।

ख़ोजी-जबान क्या चर्खा है राँड का! ख़ुदा झूठ न बुलाये, तो रोटी को हुजूर लोती कहते होंगे।

मुसाहब—जब ख़ुदा झूठ न बुलाये, तब तो। आप और झूठ न बोलें! जब से होश सँभाला, कभी सच बोले ही नहीं। एक दफ़े धोखे से सच्ची बात निकल आयी थी, जिसका आज तक अफ़सोस है।

ख़ोजी—और वह उस वक़्त जब आपसे किसी ने आपके बाप का नाम पूछा था और आपने जल्दी में साफ़-साफ़ बता दिया था।

इस पर सब के सब हँस पड़े और ख़ोजी मूँछों पर ताव देने लगे। अभी ये बातें हो ही रही थीं कि एक टुकड़ी आयी, और उस पर से एक हसीना उतर पड़ी। वह पतली कमर को लचकाती हुई आयी, नवाब का मसनद घसीटा और बड़े ठाट से बैठ गयी।

नवाब—मिज़ाज शरीफ ?

आबादी—आपकी बला से!

मुसाहब—हुजूर, ख़ुदा की क़सम, इस वक़्त आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—चल झूठे! अली की सँवार तुझ पर और तेरे नवाब पर।

मुसाहब—ख़ुदा की क़सम।

आबादी—अब हम एक चपत जमायेंगे। देखो नवाब, अपने इन गुर्गों को मना करो, मेरे मुँह न लगा करें।

इतने में एक महरी पाँच-छह बरस के एक लड़के को गोद में लायी।

आबादी—हमारी बहन का लड़का है। लड़का क्या, पहाड़ी मैना है। भैया, नवाब को गालियाँ तो देना। क्यों नवाब, इनको मिठाई दोगे न ?

नवाब—हाँ, अभी-अभी।

लड़का—पहले मिठाई लाओ, फिल हम दाली दे देंगे।

अब चारों तरफ़ से मुसाहिब बुलाते हैं—आओ, हमारे पास आओ। लड़के ने नवाब को इतनी गालियाँ दीं कि तौबा ही भली। नवाब साहब ख़ूब हँसे और सारी

महफ़िल लड़के की तारीफ़ करने लगी। ख़ुदावंद, अब इसको मिठाई मँगवा दीजिए।

नवाब—अच्छा भई, इनको पाँच रुपये की मिठाई ला दो।

आबादी—ऐ हटो भी! आप अपने रुपये रहने दें। क्या कोई फ़क़ीर है?

नवाब—अच्छा, एक अशर्फ़ी की ला दो।

आबादी—भैया, नवाब को सलाम कर लो।

नवाब—अच्छा, यह तो हुआ, अब कोई चीज़ सुनाओ। पीलू की कोई चीज़ हो, तुम्हें क़सम है।

आबादी—ऐ हटो भी, आज रोज़े से हूँ। आपको गाने की सूझती है।

फ़र्श पर कई नीबू पड़े हुए थे। बी साहबा ने एक नीबू दाहने हाथ में लिया और दूसरा नीबू उसी हाथ से उछाला और रोका। कई मिनट तक इसी तरह उछाला और रोका कीं। लोग शोर मचा रहे हैं—क्या तुले हुए हाथ हैं, सुभान-अल्लाह! वह बोलीं कि भला नवाब, तुम तो उछालो। जब जानें कि नीबू गिरने न पाये। नवाब ने एक नीबू हाथ में लिया और दूसरा उछाला, तो तड़ से नाक पर गिरा। फिर उछाला, तो खोपड़ी पर तड़ से।

आबादी—बस, जाओ भी। इतना भी शऊर नहीं है।

नवाब—यह उँगली में कपड़ा कैसा बँधा है?

आबादी—बूझो, देखें, कितनी अक़्ल है।

नवाब—यह क्या मुशकिल है, छालियाँ कतरती होगी।

आबादी—हाँ, वह ख़ून का तार बँधा कि तोबा। मैंने पानी डाला और कपड़ा बाँध दिया।

मुसाहब—हुज़ूर, आज इस शहर में इनकी जोड़ नहीं है।

नवाब—भला कभी नवाब ख़फ़क़ानहुसैन के यहाँ भी जाती हो? सच-सच कहना।

आबादी—अली की सँवार उस पर! हज कर आया है। उस मनहूस से कोई इतना तो पूछे कि आप कहाँ के ऐसे बड़े मौलवी बन बैठे?

नवाब—जी, बजा है, जो आपको न बुलाये, वह मनहूस हुआ!

आबादी—बुलायेगा कौन? जिसको ग़रज़ होगी, आप दौड़ा आवेगा।

आज़ाद और ख़ोजी यहाँ से चले, तो आज़ाद ने कहा—आप कुछ समझे? यह जोड़ी वही थी, जो रोशनअली ख़रीद लाये थे।

ख़ोजी—यह कौन बड़ी बात है, इसी में तो रईसों का रुपया ख़र्च होता है। इनकी सोहबत में जब बैठिए ख़ूब ग़प्प उड़ाइए और झूठ इस क़दर बोलिए कि ज़मीन-आसमान के कुलावे मिलाइए। रंग जम जाय, तो दोनों हाथों से लूटिए और सोने की ईंटें बनवा कर संदूक में रख छोड़िए। लेकिन ऐसे माल को रहते न देखा; मालूम नहीं होता, किधर आया और किधर गया।

आज़ाद—यह नवाब बिलकुल चोंगा है।

ख़ोजी—और नहीं तो क्या, निरा चोंच।

आज़ाद—खुदा करे, ये रईसजादे पढ़-लिख कर भले आदमी हो जायँ।

खोजी—अरे, खुदा न करे भाई, ये ज़ाहिल ही रहें तो अच्छा। जो कहीं पढ़-लिख जायँ, तो फिर इतने भलेमानसों की परवरिश कौन करे?

तीसरे दिन दोनों फिर नवाब की कोठी पर पहुँचे।

खोजी—खुदा ऐसे रईस को सलामत रखे। आज यहाँ सन्नाटा सा नज़र आता है; कुछ चहल-पहल नहीं है।

मुसाहब—चहल-पहल क्या खाक हो! आज मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा।

आज़ाद—खुदा खैर करे, कुछ तो फ़रमाइए।

नवाब—क्या अर्ज़ करूँ, जब बुरे दिन आते हैं, तो चारों ही तरफ़ से बुरी ही बुरी बातें सुनने में आती हैं। घर में वज़ा-हमल (प्रसव) हो गया।

आज़ाद—यह तो कुछ बुरी बात नहीं। वज़ा-हमल के माने लड़का पैदा होना। यह तो खुशी का मौक़ा है।

मुसाहब—हमारे हुजूर का मंशा इस्क़ात-हमल (गर्भपात) से था।

खुशामदी—अजी, इसे वज़ा-हमला भी कहते हैं—लुग़ात देखिए।

नवाब—अजी, इतना ही होता, तो दिल को किसी तरह समझा लेते। यहाँ तो एक और मुसीबत ने आ घेरा।

मुसाहब—(ठंडी साँस ले कर) खुदा दुश्मन को भी यह दिन न दिखाये।

खुशामदी—हज़रत, क्या अर्ज़ करूँ, हुजूर का एक मेंढ़ा मर गया, कैसा तैयार था कि क्या कहूँ, गैंडा बना हुआ।

गप्पी—अजी, यों नहीं कहते कि गैंडे को टकरा देता, तो टें करके भागता। एक दफ़े मैं अपने साथ बाग़ ले गया। इत्तिफ़ाक़ से एक राजा साहब पाठे पर सवार बड़े ठाट से आ रहे थे। बंदा मेंढ़े को ऐन सड़क पर लिये हुए डटा खड़ा है। सिपाही ने ललकारा कि हटा बकरी को सड़क से। इतना कहना था कि मैं आग ही तो हो गया। पूछा—क्या कहा भाई? फिर तो कहना। सिपाही आँखें नीली-पीली करके बोला—हटा बकरी को सामने से, सवारी आती है। तब तो जनाब, मेरे खून में जोश आ गया। मैंने मेंढ़े को ललकारा, तो उसने झपट कर हाथी के मस्तक पर एक टक्कर लगायी। वह आवाज़ आयी। जैसे कोई दरख्त ज़मीन पर आ रहा हो। बंदर डाल-डाल चीखने लगे, बँदरियाँ बच्चों को छाती से लगाये दबक रहीं, तो वजह क्या, उनको मेंढ़े पर भेड़िये का धोखा हुआ।

खोजी—मेंढ़े को भेड़िया समझा! मगर वल्लाह, आपको तो बेदुम का लंगूर समझा होगा!

गप्पी—बस हज़रत, एक टक्कर लगा कर पीछे हटा और बदन को तोल कर छलाँग जो मारता है, तो हाथी के मस्तक पर! वहाँ से फिर उचका, तो पीलवान के माथे पर एक टक्कर लगायी, मगर आहिस्ता से। ज़रा इस तमीज़ को देखिएगा, समझा कि इसमें हाथी का सा ज़ोर कहाँ। मगर राजा का अदब किया। अब मैं लाख लाख

ज़ोर करता हूँ, पर वह किसकी सुनता है ? ग़ुस्सा आया, सो आया, जैसे सिर पर भूत सवार हो गया। छुड़ा कर फिर लपका और एक, दो, तीन, चार—बस, ख़ुदा जाने, इतनी टक्करें लगायीं कि हाथी हवा हो गया और चिंघाड़ कर भागा। आदमी पर आदमी गिरते हैं। आप जानिए, पाठे का बिगड़ना कुछ हँसी ठट्ठा तो है नहीं। जनाब, वही मेढ़ा आज चल बसा।

आज़ाद—निहायत अफ़सोस हुआ।

ख़ोजी—सिन शरीफ़ क्या था ?

नवाब—सिन क्या था, अभी बचा था।

मुसाहब—हुज़ूर, वह आपका दुश्मन था, दोस्त नं था।

नवाब—अरे भई, किसका दोस्त, कैसा दुश्मन। उस बेचारे का क्या क़ुसूर ? वह तो अच्छा गया; मगर हम सबको जीते-जी मार डाला।

आज़ाद—हज़रत, यह दुनिया सराय-फ़ानी है। यहाँ से जो गया, अच्छा गया। मगर नौजवान के मरने का रंज होता है।

मुसाहब—और फिर जवान कैसा कि होनहार। हाथ मल कर रह गये यार, बस और क्या करें।

आज़ाद—मरज़ क्या था ?

मुसाहब—क्या मरज़ बतायें। बस, क़िस्मत ही फूट गयी।

ख़ुशामदी—मगर क्या मौत पायी है, रमज़ान के महीने में, उसकी रूह जन्नत में होगी। तूबा* के तले जो घास है, वह चर रहा होगा।

इतने में एक महरी गुलबदन का लँहगा, जिसमें आठ-आठ अंगुल गोलट लगी थी, फड़काती और गुलाबी दुपट्टे को चमकाती आयी और नवाब के कान में झुक कर बोली—बेगम साहिबा हुज़ूर को बुलाती हैं।

नवाब—यह नादिरी हुक्म ! अच्छा साहब, चलिए। यहाँ तो बेगम और महरी, दोनों से डरते हैं।

नवाब साहब अंदर गये, तो बेगम ने ख़ूब ही आड़े हाथों लिया—ऐ, मैं कहती हूँ, यह कैसा रोना-धोना है ? कहाँ की ऐसी मुसीबत पड़ गयी कि आँखें ख़ून की बोटी बन गयीं ? मेढ़े निगोड़े मरा ही करते हैं। ऐसी अक़्ल पर पत्थर पड़े कि मुए जानवर की जान को रो रहे हैं। तुम्हारी अक़्ल को दिन-दिन दीमक चाटे जाती है क्या ? और इन मुफ़्तख़ोरों ने तो आपको और भी चंग पर चढ़ाया है। अल्लाह की क़सम, अगर आपने रंज-वंज किया, तो हम ज़मीन-आसमान एक कर देंगे। आख़िर वह मेढ़ा कोई आपका...बस, अब क्या कहूँ। भीगी बिल्ली बने गटर-गटर सुन रहे हो।

नवाब—तुम्हारे सिर की क़सम, अब हम उसका ज़िक्र भी न करेंगे। मगर जब आपकी बिल्ली मर गयी थी, तो आपने दिन-भर खाना नहीं खाया था ? अब हमारी दफ़े आप गुर्राती हैं ?

---

* स्वर्ग का एक वृक्ष।

मुसाहब—(परदे के पास से) वाह हुजूर, बिल्ली के लिए गुर्राना भी क्या खूब। वल्लाह, जिले से तो कोई फ़िक़रा आपका खाली नहीं होता।

बेगम—देखो, इन मुए मुसंडों को मना कर दो कि ड्योढ़ी पर न आने पायँ।

दरबान ने जो इतनी शह पायी, तो एक डाँट बतायी। बस जी, सुनो, चलते-फिरते नज़र आओ। अब ड्योढ़ी पर आने का नाम लिया, तो तुम जानोगे। बेगम साहबा हम पर खफ़ा होती हैं। तुम्हारी गिरह से क्या जायगा, हम सिपाही आदमी, हम तो नौकरी से हाथ धो बैठेंगे।

मुसाहब सिपाही से तो कुछ न बोले, मगर बड़बड़ाते हुए चले। लोगों ने पूछा—क्यों भई, इस वक़्त नाक-भौं क्यों चढ़ाये हो? बोले—अजी, क्या कहें, हमारे नवाब तो बस, बछिया के बाबा ही रहे! बीबी ने डपट लिया। ज़न-मुरीद है जी! आबरू का भी कुछ ख़याल नहीं। औरतज़ात, फिर जोरू और उल्टे डाँट बताये और दाँढ़ी-मूँछोंवाले हो कर चुपचाप सुना करें! वल्लाह, जो कहीं मेरी बीबी कहती, तो गला ही घोंट देता। यहाँ नाक पर मक्खी तक बैठने नहीं देते।

आज़ाद—भई, ग़ुस्से को थूक दो। ग़ुस्सा हराम होता है। उनकी बीबी हैं, चाहे घुड़कियाँ सुनें, चाहे झिड़कियाँ सहें, आप बीच में बोलनेवाले कौन? और फिर जिसका खाते हो, उसी को कोसते हो! उस पर दावा यह है कि नमकहलाल और कट मरनेवाले लोग हैं।

इतने में नवाब साहब बाहर निकले। अमीरों के दरबार में आप जानिए, एक का एक दुश्मन होता है। सैकड़ों चुग़लख़ोर रहते हैं। हरदम यही फ़िक्र रहती है कि दूसरे की चुग़ली खायँ और सबको दरबार से निकलवा कर हमी-हम नज़र आयें। दो मुसाहबों ने सलाह की कि आज नवाब निकलें, तो इसकी चुग़ली खायँ और इसको खड़े-खड़े निकलवा दें। नवाब को जो आते देखा, तो चिल्ला कर कहने लगे—सुना भई, बस, अब जो कोई कलमा कहा, तो हमसे न बनेगी। जिसका खाये, उसी की गाये। यह नहीं कि जिसका खायँ उसी को गालियाँ सुनायें। नवाब साहब को चाहे आप पीठ पीछे ज़न-मुरीद बतायें, या भीगी बिल्ली कहें, मगर ख़बरदार जो आज से बेगम साहबा की शान में कोई गुस्ताख़ी की, ख़ून ही पी लूँगा।

नवाब—(त्योरियाँ बदल कर) क्या?

हाफ़िज़ जी—कुछ नहीं हुजूर, ख़ैरियत है।

नवाब—नहीं, कुछ तो है ज़रूर।

रोशनअली—तो छिपाते क्यों हो, सरकार से साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देते? हुजूर, बात यह है कि मियाँ साहब जब देखो तब हुजूर की हजो किया करते हैं। लाख-लाख समझाया, यह बुरी बात है, मियाँ कह कर, भाई कह कर, बेटा कह कर, बाबा कह कर, हाथ जोड़ कर, हर तरह समझाया, मगर यह तो लातों के आदमी हैं, बातों से कब मानते हैं। हम भी चुपके हो रहते थे कि भई, चुग़ली कौन खाये; मगर आप जनानी ड्योढ़ी से...हुजूर, बस, क्या कहूँ, अब और न कहलाइए।

नवाब—इनको हमने मौक़ूफ़ कर दिया।

मियाँ मुसाहब तो खिसके। इतने में मटरगश्त आ पहुँचे और नवाब को सलाम करके बोले—खुदावंद, आज खूब सैर सपाटा किया। इतना घूमा कि टाँगों के टट्टू की गामचियाँ दर्द करने लगीं। कोई इलाज बताइए।

हाफ़िज जी—घास खाइए या, किसी सालोत्री के पास जाइए।

नवाब—खूब! टट्टू के लिए घास और सालोत्री की अच्छी कही। अब कोई ताज़ा-ताज़ा खबर सुनाइए, बासी न हो, गरमागरम।

मटरगश्त—वह खबर सुनाऊँ कि महफ़िल भर को लोटपोट कर दूँ हुजूर, किसी मुल्क से चंद परीज़ाद औरतें आयी हैं। तमाशाइयों की भीड़ लगी हुई है। सुना, थिएटर में नाचती हैं और एक-एक क़दम और एक-एक ठोकर में आशिक़ों के दिल को पामाल करती हैं। उन्हीं में से एक परीज़ाद जो दन से निकल गयी, तो बस, मेरी जान सन से निकल गयी। दरिया किनारे खीमे पड़े हैं। वहीं इंदर का अखाड़ा सजा हुआ है। आज शाम को नौ बजे तमाशा होगा।

नवाब—भई, तुमने खूब मज़े की खबर सुनायी। ईजानिब जरूर जायँगे।

इतने में खुदायारखाँ, जिन्हें ज़रा पहले नवाब ने मौक़ूफ़ कर दिया था, आ बैठे और बोले—हुजूर, इधर खुदाबंद ने मौक़ूफ़ी का हुक्म सुनाया, उधर घर पहुँचा, तो जोरू ने तलाक़ दे दी। कहती है, 'रोटी न कपरा, सेंत-मेत का भतरा।'

आज़ाद—हुजूर, इन ग़रीब पर रहम कीजिए। नौकरी की नौकरी गयी और बीबी की बीबी।

नवाब—हाफ़िज़जी, इधर आओ, कुल हाल ठीक-ठीक बताओ।

हाफ़िज़—हुजूर, इन्होंने कहा कि नवाब तो निरे बछिया के ताऊ ही हैं, ज़न-मुरीद! और बेगम साहबा को इस नाबकार ने वह-वह बातें कहीं कि बस, कुछ न पूछिए! अजीब शैतान आदमी है। आप को यक़ीन न आये, तो उन्हीं से पूछ लीजिए।

नवाब—क्यों मियाँ आज़ाद, सच कहो, तुमने क्या सुना?

आज़ाद—हुजूर, अब जाने दीजिए, क़ुसूर हुआ। मैंने समझा दिया है।

हाफ़िज़—यह बेचारे तो अभी अभी समझा रहे थे कि ओ गीदी, तू अपने मालिक़ को ऐसी-ऐसी खोटी-खरी कहता है!

नवाब—(दरबान से) देखो जी हुसेन अली, आज से अगर खुदायारखाँ को आने दिया, तो तुम जानोगे। खड़े-खड़े निकाल दो। इसे फाटक में क़दम रखने का हुक्म नहीं।

खुदायार—हुजूर, गुलाम से भी तो सुनिए। आज मियाँ रोशनअली ने मुझे ताड़ी पिला दी और यही मनसूबा था कि यह नशे में चूर हो, तो इसे किसी लिम में निकलवा दें। सो हुजूर, इनकी मुराद बर आयी। मगर हुजूर, मैं इस दर को छोड़ कर और जाऊँ कहाँ? खुदा आपके बाल-बच्चों को सलामत रखे, यहाँ तो रोआँ-रोआँ

हुजूर के लिए दुआ करता है। हुजूर तो पोतड़ों के रईस हैं, मगर चुग़लख़ोरों ने कान भर दिये—

खुदा के ग़ज़ब से ज़रा दिल में काँप;
चुग़लख़ोर के मुँह को डसते हैं साँप।

नवाब—अच्छा, यह बात है। ख़बरदार, आज से ऐसी बेअदबी न करना। जाओ, हमने तुमको बहाल किया।

मुसाहबों ने गुल मचाया—वाह हुज़ूर, कितना रहम है। ऐसे रईस पैदा काहे को होते हैं। मगर ख़ुदायार ख़ाँ को तो उनकी जोरू ने बचा लिया। न वह तलाक़ देती, न यह बहाल होते। वल्लाह, जोरू भी क़िस्मत से मिलती है।

२८

दूसरे दिन नौ बजे रात को नवाब साहब और उनके मुसाहब थिएटर देखने चले।

नवाब—भई, आबादीजान को भी साथ ले चलेंगे।

मुसाहब—ज़रूर, ज़रूर। हुजूर, उनके बगैर मज़ा किरकिरा हो जायगा।

इतने में फिटन आ पहुँची और आबादीजान छम-छम करती हुई आ कर मसनद पर बैठ गयीं।

नवाब—वल्लाह, अभी आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—तुमसे लाख दफ़े कह दिया कि हमसे झूठ न बोला करो। हमें कोई देहाती समझा है!

नवाब—खुदा की क़सम, चलो, तुमको तमाशा दिखा लायें। मगर मरदाने कपड़े पहन कर चलिए, वर्ना हमारी बेइज़्ज़ती होगी।

आबादी ने तिनग कर कहा—जो हमारे चलने में बेआबरूई है, तो सलाम।

यह कह कर वह जाने को उठ खड़ी हुई। नवाब ने दुपट्टा दबा कर कहा—हमारा ही खून पिये, जो एक क़दम भी आगे बढ़ाये, हमीं को रोये, जो रूठ कर जाय! हाफ़िज़ जी, जरा मरदाने कपड़े तो लाइए।

ग़रज़ आबादीजान ने अमामा सिर पर बाँधा; चुस्त अँगरखा और कसा हुआ घुटन्ना, टाटबाफी बूट, फुँदना झलकता हुआ, उनके गोरे बदन पर खिल उठा। नवाब साहब उनके साथ फिटन पर सवार हुए और मुसाहबों में कोई बग्घी पर, कोई टम-टम पर, कोई पालकी-गाड़ी पर लदे हुए तमाशा-घर में दाखिल हुए। मगर आबादीजान जल्दी में पाज़ेब उतारना भूल गयी थी। वहाँ पहुँच कर नवाब ने अव्वल दर्जे के दो टिकट लिये और सरकस में दाखिल हुए! लेकिन पाज़ेब की छम-छम ने वह शोर मचाया कि सभी तमाशाइयों की निगाहें इन दोनों आदमियों की तरफ़ उठ गयीं। जो है, इसी तरफ़ देखता है; ताड़नेवाले ताड़ गये, भाँपनेवाले भाँप गये। नवाब साहब अकड़ते हुए एक कुर्सी पर जा डटे और आबादीजान भी उनकी बग़ल में बैठ गयीं। बहुत बड़ा शामियाना टँगा हुआ था। बिजली की बत्तियों से चकाचौंध का आलम था। बीचो-बीच एक बड़ा मैदान, इर्द-गिर्द कोई दो हज़ार कुर्सियाँ। खीमा भर जगमग कर रहा था। थोड़ी देर में दस-बारह जवान घोड़े कड़कड़ाते हुए मैदान में आये और चक्कर काटने लगे, इसके बाद एक जवान नाज़नीन, आफ़त की परकाला, घोड़े पर सवार, इस शान से आयी कि महफ़िल भर पर आफ़त ढायी। सारी महफ़िल मस्त हो गयी। वह घोड़े से फुर्ती के साथ उचकी और फिर पीठ पर आ पहुँची। चारों तरफ़ से वाह-वाह का शोर मच गया। फिर उसने घोड़े को मैदान में चक्कर देना शुरू किया। घोड़ा सरपट जा रहा था, इतना तेज़

कि निगाह न ठहरती थी। यकायक वह लेडी तड़ से ज़मीन पर कूद पड़ी। घोड़ा ज्यों का त्यों दौड़ता रहा। एक दम में वह झपट कर फिर पीठ पर सवार हो गयी उस पर इतनी तालियाँ बजीं कि खीमा भर गूँज उठा। इसके बाद शेरों की लड़ाई, बंदरों की दौड़ और खुदा जाने, कितने और तमाशे हुए। ग्यारह बजते बजते तमाशा खतम हुआ। नवाब साहब घर पहुँचे, तो ठंडी साँसें भरते थे और मियाँ आज़ाद दोनों हाथों से सिर धुनते थे। दोनों मिस वरजिना (तमाशा करनेवाली औरत) की निगाहों के शिकार हो गये।

हाफ़िज़ जी बोले—हुज़ूर, अभी मुश्किल से तेरह-चौदह बरस का सिन होगा, और किस फुर्ती से उचक कर घोड़े की पीठ पर हो रहती थी कि वाह जी वाह। मियाँ रोशनअली बड़े शहसवार बनते थे। क़सम खुदा की जो उनके बाप भी क़ब्र से उठ आयें, तो यह करतब देख कर होश उड़ जायँ।

नवाब—क्या चाँद सा मुखड़ा है।

आबादीजान—यह कहाँ का दुखड़ा है? हम जाते हैं।

मुसाहब—नहीं हुज़ूर, ऐसा न फ़र्माइए, कुछ देर तो बैठिए।

लेकिन आबादीजान रूठ कर चली ही गयीं अब नवाब का यह हाल है कि मुँह फुलाये, ग़म की सूरत बनाये बैठे सर्द आहें खींच रहे हैं। मुसाहब सब बैठे समझा रहे हैं; मगर आपको किसी तरह सब्र ही नहीं आता। अब ज़िंदगी बवाल है, जान जंजाल है। यह भी फ़ख्र है कि हमारा दिल किसी परीज़ाद पर आया है, शहर भर में धूम हो जाय कि नवाब साहब को इश्क़ चर्राया है—

ताकि मशहूर हों हज़ारों में;
हम भी हैं पाँचवें सवारों में।

मुसाहबों ने सोचा, हमारे शह देने से यह हाथ से जाते रहेंगे, इसलिए वह चाल चलिए कि 'साँप मरे न लाठी टूटे।' लगे सब उस औरत की हजो करने। एक ने कहा—भाई, जादू का खेल था। दूसरे बोले—जी हाँ, मैंने दिन के वक़्त देखा था, न वह रंग, न वह रोग़न; न वह चमक-दमक, न वह जोबन; रात की परी धोखे की टट्टी है। आख़िर मिस वरजिना नवाब की नज़रों से गिर गयी। बोले—जाने भी दो, उसका ज़िक्र ही क्या। तब मुसाहबों की जान में जान आयी। नवाब साहब के यहाँ से रुख्सत हुए, तो आपस में बातें होने लगीं—

हाफ़िज़ जी—हमारे नवाब भी कितने भोले-भाले रईस हैं!

रोशनअली—अजी, निरे बछिया के ताऊ हैं। खुदायारखाँ ने ठीक ही तो कहा था।

खुदायारखाँ—और नहीं तो क्या झूठ बोले थे? हमें लगी-लिपटी नहीं आती। चाहे जान जाती रहे, मगर खुशामद न करेंगे।

हाफ़िज़ जी—भई, यह आज़ाद ने बड़ा अडंगा मारा है। इसको न पछाड़ा, तो हम सब नज़रों से गिर जायँगे।

रोशनअली—अजी, मैं तरकीब बताऊँ, जो पट पड़े, तो नाम न रखूँ। नवाब

डरपोक तो हैं ही, कोई इतना जा कर कह दे कि मियाँ आज़ाद इश्तिहारी मुजरिम हैं। बस, फिर देखिए, क्या ताथैया मचती है। आप मारे ख़ौफ़ के घर में घुस रहें और ज़नाने में तो कुहराम ही मच जाय। आज़ाद और उनके साथी अफ़ीमची, दोनों खड़े-खड़े निकाल दिये जायँ।

ख़ुशामदी—वाह उस्ताद, क्या तड़ से सोच लेते हो! वल्लाह, एक ही न्यारिये हो।

रोशनअली—फिर इन झाँसों के बग़ैर काम भी तो नहीं चलता।

हाफ़िज़ जी—हाँ, ख़ूब याद आया। परसों तेग़बहादुर दक्खिन से आये हैं। बेचारे बड़ी तकलीफ़ में हैं। हमारे सच्चे दोस्तों में हैं। उनके लिए एक रोटी का सहारा हो जाय, तो अच्छा। आपमें से कोई छेड़ दे तो ज़रा, बस, फिर मैं ले उड़ूँगा। मगर तारीफ़ के पुल बाँध दीजिए। नवाब को झाँसे में लाना कोई बड़ी बात तो है नहीं। थाली के बैंगन हैं।

हाफ़िज़ जी—एक काम कीजिए, कल जब सब जमा हो जायँ, तो हम पहले छेड़ें कि इस दरबार में हर फ़न का आदमी मौजूद है और रियासत कहते इसी को हैं कि गुनियों की परवरिश की जाय, शरीफ़ों की क़दरदानी हुजूर ही का हिस्सा है। इस पर कोई बोल उठे कि और तो सब मौजूद हैं, बस, यहाँ एक बिनबटिये की कसर है। फिर कोई कहे कि आजकल दक्खिन से एक साहब आये हैं, जो बिनवट के फ़न में अपना सानी नहीं रखते। दो-चार आदमी हाँ में हाँ मिला दें कि उन्हें वह-वह पेंच याद हैं कि तलवार छीन लें; ज़रा से आदमी, मगर सामने आये और बिजली की तरह तड़प गये। हम कहेंगे—वल्लाह, आप लोग भी कितने अहमक़ हैं कि ऐसे आदमी को हुजूर के सामने अब तक पेश नहीं किया और जो कोई रईस उन्हें नौकर रख ले, तो फिर कैसी हो? बस, देख लेना, नवाब ख़ुद ही कहेंगे कि अभी-अभी लाओ। मगर तेग़बहादुर से कह देना कि ख़ूब बाँके बन कर आयें, मगर बातचीत नरमी से करें, जिसमें हम लोग कहेंगे कि देखिए ख़ुदावंद, कितनी शराफ़त है। जिन लोगों को कुछ आता-जाता नहीं, वे ही ज़मीन पर क़दम नहीं रखते।

मुसाहब—मगर क्यों मियाँ, यह तेग़बहादुर हिंदू हैं या मुसलमान? तेग़बहादुर तो हिंदुओं का नाम भी हुआ करता है। किसी हिंदू के घर मुहर्रम के दिनों में लड़का पैदा हुआ और इमामबख़्श नाम रख दिया। हिंदू भी कितने बेतुके होते हैं कि तोबा ही भली। पूछिए कि तुम जो ताज़िये को सिजदा करते हो, दरगाहों में शरबत पिलाते हो, इमामबाड़े बनवाते हो, तो फिर मुसलमान ही क्यों नहीं हो जाते।

हाफ़िज जी—मगर तुम लोगों में भी तो ऐसे गौखे हैं जो चेचक में मालिन को बुलाते हैं, चौराहे पर गधे को चने खिलाते हैं, जनमपत्री बनवाते हैं। क्या यह हिंदू-पन नहीं है? इसकी न कहिए।

उधर मियाँ आज़ाद भी मिस वरजिना पर लट्टू हो गये। रात तो किसी तरह करवटें बदल-बदल कर काटी, सुबह होते ही मिस वरजिना के पास जा पहुँचे। उसने जो मियाँ आज़ाद की सूरत से उनकी हालत ताड़ ली, तो इस तरह चमक-चमक कर

चलने लगी कि उनकी जान पर आफ़त ढायी। आज़ाद उसके सामने जा कर खड़े हो गये; मगर मुँह से एक लफ़्ज़ भी न निकला।

वरजिना—मालूम होता है, या तो तुम पागल हो, या अभी पागलख़ाने से रस्सियाँ तुड़ा कर आये हो।

आज़ाद—हाँ, पागल न होता, तो तुम्हारी अदा का दीवाना क्यों होता?

वरजिना—बेहतर है कि अभी से होश में आ जाओ, मेरे कितने ही दीवाने पागलख़ाने की सैर कर रहे हैं। रूस के तीन जनरल मुझ पर रीझे, यूनान में एक रईस लट्टू हो गये, इँगलिस्तान के कितने ही बाँके आहें भरते रहे, जरमनी के बड़े-बड़े अमीर साये की तरह मेरे साथ घूमा किये, रूम के कई पाशा ज़हर खाने पर तैयार हो गये। मगर दुनिया में दग़ाबाज़ी का बाज़ार गरम है, किसी से दिल न मिलाया, किसी को मुँह न लगाया। हमारे चाहनेवाले को लाज़िम है कि पहले आईने में अपना मुँह तो देखे।

आज़ाद—अब मुझे दीवाना कहिए या पागल, मैं तो मर मिटा—

फिरी चश्मे-बुते-बेपीर देखो;
हमारी गर्दिशे-तक़दीर देखो।
उन्हें है तौक़ मन्नत का गराँ बार;
हमारे पाँव की ज़ंजीर देखो।

वरजिना—मुझे तुम्हारी जवानी पर रहम आता है। क्यों जान देने पर तुले हुए हो?

आज़ाद—जी कर ही क्या करूँगा? ऐसी ज़िंदगी से तो मौत ही अच्छी।

वरजिना—आ गये तुम भी झाँसे में! अरे मियाँ, मैं औरत नहीं हूँ, जो तुम सो मैं। मगर क़सम खाओ कि किसी से यह बात न कहोगे। कई साल से मैंने यही भेष बना रखा है। अमीरों को लूटने के लिए इससे बढ़ कर और कोई तदबीर नहीं। एक-एक चितवन के हज़ारों पौंड लाता हूँ, फिर भी किसी को मुँह नहीं लगाता। आज तुम्हारी बेक़रारी देख कर तुमको साफ़-साफ़ बता दिया।

आज़ाद—अच्छा, मर्दाने कपड़े पहन कर मेरे सामने आओ, तो मुझे यक़ीन आये।

मिस वरजिना ज़रा देर में कोट और पतलून पहन कर आज़ाद के सामने आयी और बोली—अब तो तुम्हें यक़ीन आया, मेरा नाम टामस हुड है। अगर तुमको वे चिट्ठियाँ दिखाऊँ, जो ढेर की ढेर मेरे पास पड़ी हैं, तो हँसते-हँसते तुम्हारे पेट में बल पड़ जाय। देखिए, एक साहब लिखते हैं—

जनाज़ा मेरा गली में उनकी जो पहुँचे ठहराके इतना कहना;
उठानेवाले हुए हैं माँदे सो थकके काँधा बदल रहे हैं।

दूसरे साहब लिखते हैं—

हम भी कुश्ता तेरी नैरंगी के हैं याद रहे;
ओ ज़माने की तरह रंग बदलनेवाले।

एक बार इटली गया, वहाँ अक्सर अमीरों और रईसों ने मेरी दावतें कीं और अपनी लड़कियों से मेरी मुलाक़ात करायी। मैं कई दिन तक उन परियों के साथ हवा खाता रहा। और एक दिल्लगी सुनिए। एक अमीरजादी ने मेरे हाथों को चूम कर कहा कि हमारे मियाँ तुमसे शादी करना चाहते हैं। वह कहते हैं कि अगर तुमसे उनकी शादी न हुई, तो वह ज़हर खा लेंगे। यह अमीरज़ादी मुझे अपने घर ले गयी। उसका शौहर मुझे देखते ही फूल उठा और ऐसी-ऐसी बातें कीं कि मैं मुश्किल से अपनी हँसी को जब्त कर सका।

आज़ाद बहुत देर तक टामस हुड से उनकी ज़िंदगी के क़िस्से सुनते रहे। दिल में बहुत शरमिंदा थे कि यहाँ कितने अहमक़ बने। यह बातें दिल में सोचते हुए सराय में पहुँचे, तो फाटक ही के पास से आवाज़ आयी, लाना तो मेरी क़रौली, न हुआ तमंचा, नहीं तो दिखा देता तमाशा। आज़ाद ने ललकारा कि क्या है भाई, क्या है, हम आ पहुँचे। देखा, तो ख़ोजी एक कुत्ते को दुत्कार रहे हैं।

२६

आज तो निराला समा है। ग़रीब, अमीर, सब रँगरलियाँ मना रहे हैं। छोटे-बड़े खुशी के शादियाने बजा रहे हैं। कहीं बुलबुल के चहचहे, कहीं कुमरी के क़हक़हे। ये ईद की तैयारियाँ हैं। नवाब साहब की मसजिद का हाल न पूछिए। रोज़े तो आप पहले ही चट कर गये थे; लेकिन ईद के दिन धूमधाम से मजलिस सजी। नूर के तड़के से मुसाहबों ने आना शुरू किया और मुबारक-मुबारक की आवाज़ ऐसी बुलंद की कि फ़रिश्तों ने आसमान को थाम लिया, नहीं तो ज़मीन और आसमान के कुलावे मिल जाते।

मुसाहब—खुदा ईद मुबारक करे। मेरे नवाब जुग-जुग जियें।

हाफ़िज़ जी—बरस दिन का दिन मुबारक करे।

रोशनअली—खुदा हुजूर की ईद मुबारक करे।

नवाब—आपको भी मुबारक हो। मगर सुना कि आज तो ईद में फ़र्क़ है। भई, आधा तीतर और आधा बटेर नहीं अच्छा।

मुसाहब—हुजूर, फिरंगीमहल के उलमा ने तो आज ही ईद का फतवा लगाया है।

नवाब—भला चाँद कल किसी ने देखा भी ?

मुसाहब—हुजूर, पक्के पुल पर चार भिश्तियों ने देखा, राजा की बाज़ार में हाफ़िज़ जी ने देखा और मेरे घर में भी देखा।

नवाब—आपकी बेगम साहब का सिन क्या है ? हैं कोई चौदह-पंद्रह बरस की ?

मुसाहब ने शरमा कर गरदन झुका ली।

नवाब—आप अपनी बेगम साहबा की उम्र तो छिपाते हैं, फिर उनकी शहादत ही क्या ? बाक़ी रहे हाफ़िज़ जी, उनकी आँखें पढ़ते-पढ़ते जाती रहीं; उनको दिन को ऊँट तो सूझता ही नहीं, भला सरेशाम, दोनों वक़्त मिलते, नाखून के बराबर चाँद क्या सूझेगा !

आज़ाद—हज़रत, मैंने और मियाँ खोजी ने कल शाम को अपनी आँखों देखा।

नवाब—तो तीन गवाहियाँ मोतबर हुईं। हमारी ईद तो हर तरह आज है।

इतने में फिटन पर से आबादीजान मुसकिराती हुई आयी।

नवाब—आइए-आइए, आपकी ईद किस दिन है ?

आबादीजान—क्या कोई भारी जोड़ा बनवा रखा है ? फटे से मुँह शर्म नहीं आती ?

नवाब—ईद कुरबाँ है यही दिन तो है कुरबानी का ;
आज तलवार के मानिंद गले मिल क़ातिल।

हमको क्या, यहाँ तो तीसों रोज़े चट किये बैठे हैं। दोवक़्ता पुलाव उड़ता था। यह फ़िक्र तो उसको होगी जो दीन का टोकरा सिर पर लादे-लादे फिरते हैं।

आज़ादी—इन्हीं लच्छनों तो दोज़ख़ में जाओगे।

नवाब—ख़ैर, एक तसकीन तो हुई! आपसे तो वहाँ ज़रूर गले मिलेंगे।

मुसाहब—सुभान-अल्लाह! क्या ख़ूब सूझी, वल्लाह, ख़ूब सूझी! क्या गरमा-गरम लतीफ़ा कहा है।

इतने में चंपा लौंडी अंदर से घबरायी हुई आयी। लुट गये, लुट गये! ऐ हुज़ूर, चोरी हो गयी। सब मूस ले गया।

नवाब—क्या, क्या, चोरी हो गयी! कब?

चंपा—रात को, और कब? इस वक़्त जो बेगम साहबा कोठरी में जाती हैं, तो रोशनी देखते ही आँखों तले अँधेरा छा गया। जा कर देखती हैं, तो एक बिल्कुल। कपड़े-लत्ते सब तितर-बितर पड़े हैं।

मुसाहब—ऐ ख़ुदावंद, कल तो एक बजे तक यहाँ दरबार गरम रहा। मालूम होता है, कोई पहले ही से घुसा बैठा था।

नवाब—ज़री हमारी तलवार तो लाना भई! एहतियात शर्त है। शायद छिपा बैठा हो।

तलवार ले कर घर में गये, तो देखते हैं कि बेगम साहबा एक नाज़ुक पलँगड़ी पर सिर पकड़े बैठी हैं, और लौंडियाँ समझा रही हैं कि नवाब की सलामती रहे, एक से एक बढ़िया जोड़ा बन जायगा। आप घबराती काहे को हैं? नवाब ने जा कर कोठरी को देखा और तलवार हाथ में लिये पैतेरे बदलते हुए घर-भर का मुआयना किया। फिर बेगम से बोले—हमारा लहू पिये, जो रोये। आख़िर यह रोना काहे का; माल गया, गया!

लौंडी—हाँ, सच तो फ़रमाते हैं। जान की सलामती रहे, माल भी कोई चीज है?

बेगम—आज ईद के दिन खुशियाँ मनाते, डोमनियाँ आतीं, मुबारकबादियाँ गातीं, दिन भर धमा-चौकड़ी मचती, रात को रतजगा करते, सो आज यह नया गुल खिला। मगर गहने की संदूकची छोड़ गया, इतना एहसान किया। अभी तक कलेजा धक-धक कर रहा है।

नवाब—हमारे सिर की क़सम, लो उठो, मुँह धो डालो। ईद मनाओ, हमारा ही जनाज़ा देखे जो चोरी का ग़म करे। दो हज़ार कोई बड़ी चीज़ है!

आख़िर बहुत कहने-सुनने पर बेगम साहबा उठीं। लौंडी ने मुँह धुलाया। नवाब साहब ने कहा—तुम्हें वल्लाह, हँस तो दो, वह होंठ पर हँसी आयी! देखो मुसकिराती हो। वह नाक पर आयी।

बेगम साहबा खिलखिला कर हँस पड़ीं और घर-भर में कहकहे पड़ने लगे। यों बेगम साहबा को हँसा कर नवाब साहब बाहर निकले, तो मुसाहब, हवाली-मवाली, ख़िदमतगार गुल मचाने लगे—हुज़ूर, कुछ तो बतलाइए, यह मामला क्या है? आख़िर किधर से चोर आया? कोई कहता है—हुज़ूर, बेघर के भेदी के चोरी नहीं होती; हमको उस हबशिन पर शक है। हबशिन अंदर से गालियाँ दे रही है—

अल्लाह करे झूठे पर बिजली गिरे, आसमान फट पड़े। किसी ने कहा—खुदावंद, चौकीदार की शरारत है। चौकीदार है कि लाखों क़समें खाता है। घर भर में हर-बोंग मचा हुआ है। इतने में एक मसखरे ने बढ़ कर कहा—हुजूर, क़सम है क़ुरान की, हमें मालूम है। भला वे भला, हम पहचान गये, हमसे उड़ कर कोई जायगा कहाँ?

मुसाहब—मालूम है, तो फिर बताते क्यों नहीं?

मसखरा—अजी, बताने से फ़ायदा क्या? मगर मालूम मुझको बेशक है। इसमें सुबहा नहीं। ग़लत हो, तो हाथ-हाथ बदते हैं।

नवाब—अरे, जिस पर तुझे शक है, उसका नाम बता क्यों नहीं देता।

मुसाहब—बताओ, तुम्हें खुदा की क़सम। किस पर तुमको शक है? आखिर किसको ताका है? भई, हमको बचा देना उस्ताद।

मसखरा—(नवाब साहब के कान में) हुजूर, यह किसी चोर का काम है।

मुसाहब—क्या कहा हुजूर, किसका नाम लिया?

नवाब—(हँस कर) आप चुपके से फ़रमाते हैं, यह किसी चोर का काम है।

लोगों के हँसते-हँसते पेट में बल पड़-पड़ गये। जिसे देखो, लोट रहा है। इतने में रेल के एक चपरासी ने आ कर तार का लिफ़ाफ़ा दिया। लिफ़ाफ़ा देखते ही नवाब साहब का चेहरा फ़क़ हो गया, हाथ-पाँव फूल गये। बोले—भई, किसी अँगरेजीदाँ को बुलाओ और तार पढ़वाओ। खुदा जाने, कहाँ से गोला आया है।

मुसाहब—क्यों मियाँ जवान, यह तार बड़े साहब के दफ़्तर से आया है न?

चपरासी—नाहीं, रेलघर से आवा है।

मुसाहब—वाह रे अँगरेजो, अल्लाह जानता है, अपने फ़न के उस्ताद हैं। और सुनिए, जल्दी के लिए अब तार की खबर भी रेल पर आने लगी। वाह रे उस्ताद, अक़्ल काम नहीं करती।

हाफ़िज़ जी—खुदा जाने, यह तार बोलता क्योंकर है? आखिर तार के तो जान नहीं होती!

खिदमतगार एक अँगरेजीदाँ को ले आया। तार पढ़ा गया, तो मालूम हुआ कि किसी ने मिरज़ापुर से पूछा है कि ईद आज है, या कल होगी?

मुसाहब—यह तो फ़रमाइए, भेजा किसने?

बाबू—निसारहुसेन ने।

नवाब—समझ गया। मिरज़ापुर में हमारे एक दोस्त हैं निसारहुसेन। उन्हीं ने तार भेजा होगा। इसका जवाब किसी से लिखवाइए जिसमें आज ही पहुँच जाय। एक रुपया, दो रुपया, जो खर्च हो, दारोग़ा से दिलवा दो। और मियाँ कुदरत को तारघर भेजो और कहो कि अगर बाबू कुछ माँगे तो दे देना। मगर इतना कह देना कि खबर जरूर पहुँचे। ऐसा न हो कि कहीं राह में रुक रहे, तो ग़ज़ब ही हो जाय।

मियाँ नुदरत लखनऊ के आदमी, नख़ास के बाहर उम्र भर क़दम ही नहीं रखा। वह क्या जानें कि तारघर किस बला का नाम है। राह में एक-एक से पूछते जाते हैं— क्यों भई, तारघर कहाँ हैं? आख़िरकार एक चपरासी ने कहा—कलकी बरक के सामने है। मियाँ नुदरत घबरा रहे थे, बुरे फँसे यार, तारघर में न जाने क्या वारदात हो। हम अँगरेजी क़ानून-वानून नहीं जानते। देखें, आज क्या मुसीबत पड़ती है? ख़ैर, ख़ुदा मालिक है। चलते-चलते कोई दो घंटे में ऐशबाग़ पहुँचे। यहाँ से पता पूछते-पूछते चले हुसेनगंज। वहाँ एक बाबू सड़क पर खड़े थे। उनसे पूछा—क्यों बाबूजी, तारघर कहाँ है? उन्होंने कहा, सामने चले जाओ। फिर पलटे। बाबू जी एक रुपया लाया हूँ और लिखवाना यह है कि आज ईद सुन्नियों की है, कल शियों की होगी। भला वहाँ बैठा रहूँ? जब ख़बर पहुँच जाय, तब आऊँ? बाबू ने कहा—ऐसा कुछ ज़रूरी नहीं। ख़ैर, तारघर पहुँचे, तो कलेजा धक-धक कर रहा है कि देखिए जान क्योंकर बचती है। थोड़ी देर फाटक पर खड़े रहे और वहाँ से मारे डर के बैरँग वापस। राह में दोनों रुपये उन्होंने भुनाये और बीबी के लिए पँचमेल मिठाई चँगेल में ले चले। रास्ते में यही सोचते रहे कि नवाब से यों चकमा चलेंगे, यों झाँसा देंगे। चैन करो। उस्ताद, अब तुम्हारे पौ-बारह हैं। हलवाई की दूकान और दादा जी का फ़ातिहा, घर में जो ख़ुश-ख़ुश घुसे, तो बीबी देखते ही खिल गयीं। झपट कर चँगेल उनके हाथ से छीनी। देखा, तो मुँह में पानी भर आया। बरफ़ी पर चाँदी का वरक़ लगा हुआ, इमर्तियाँ ताज़ी, लड्डू गरमागरम। पेड़े वह, जो मथुरा के पेड़ों के दाँत खट्टे कर दें। दो-तीन लड्डू और एक बरफ़ी तो देखते ही देखते चट कर गयीं। पेड़ा उठाने ही को थीं कि मियाँ नुदरत ने झल्ला कर पहुँचा पकड़ लिया और बोले— अरे, बस भी तो करोगी? एक लड्डू खाया, मैं कुछ न बोला; दूसरा निकाला, मैं चुपचाप देखा किया। तीसरे लड्डू पर हाथ बढ़ाया, बरफ़ी खायी और अब चली पेड़े पर हाथ डालने! अब खाने-पीने की चीज में टोके कौन, इतनी बड़ी लमड़ हो गयीं, मगर बिल्लड़ ही बनी रहीं। मरभुक्खों की तरह मिठाई पर गिर पड़ने के क्या माने? दो प्यालियाँ लाओ, अफ़ीम घोलो, पियो। जब ख़ूब नशे गठें, तो मिठाइयाँ चखो। ख़ुदा की क़सम, यह अफ़ीम भी नेमत की माँ का कलेजा है।

बीबी—(तिनक कर) बस, नेमत की माँ का कलेजा तुम्हीं खाओ। खाओ, चाहे भाड़ में जाओ। वाह, आज इतने बड़े त्यौहार के दिन मिठाई क्या लाये कि दिमाग़ ही नहीं मिलता। मोती की सी आब उतार ली। एक पेड़े के ख़ातिर पहुँचा धरके मरोड़ डाला।

इतने में बाहर से आवाज़ आयी—मियाँ नुदरत हैं?

बीबी—सुनते हो, या कानों में ठेठियाँ हैं? एक आदमी गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा है, दरवाज़े को चूल से निकाले डालता है। बोलते क्यों नहीं? कहीं चोरी करके तो नहीं आये हो?

नुदरत—ज़री आहिस्ते-आहिस्ते बातें करो।

बीबी—ऐ है, सच कहिएगा। हम तो खूब गुल मचायेंगे। मामा, हम परदे में हुए जाते हैं। जा कर उनसे कह दो—घर में घुसे बैठे हैं।

नुदरत—नहीं, नहीं, यह दिल्लगी अच्छी नहीं। कह दो, नवाब साहब के यहाँ गये हैं।

मामा—(बाहर जा कर) मियाँ, क्या गुल मचा रहे हो ? मैं तो समझी, कहीं से दौड़ आयी है। वह तो सबेरे नवाब साहब के यहाँ गये थे, अभी आये नहीं। जो मिलें, तो भेज दीजिएगा।

पुकारनेवाला—यह कैसी बात ? नवाब साहब के यहाँ से तो हम भी अभी-अभी आ रहे हैं। वहाँ ढुँढस मची हुई है कि चल कहाँ दिये। अच्छा भाभी साहब से कहो, आज ईद के दिन दरवाजे पर आये हैं, कुछ सेवइयाँ-वेवइयाँ तो खिलायें। हम तो बेतकल्लुफ़ आदमी हैं। तकाजा करके दावत लेते हैं।

मामा ने अंदर से ले जा कर बाहर बरामदे में एक मोढ़ा डाल दिया। उधर मियाँ-बीबी में तकरार होने लगी।

मियाँ—अजी, टाल भी दो। ऐसे-ऐसे मुफ़्तख़ोरे बहुत आया करते हैं। मामा, तुम भी पागल ही रहीं। मोढ़ा डालने की भला क्या ज़रूरत थी ?

बीबी—ऐ वाह ! हम तो ज़रूर ख़ातिर करेंगे। यह अच्छा कि नवाब के यहाँ जा कर हमको गँवारिन बनाये ? इसमें तुम्हारी नाक न कटेगी !

बीबी ने एक तश्तरी में पाँच-छह डलियाँ मिठाई की करीने से लगाकर उस पर रेशमी हरा रूमाल ढक दिया और मामा से कहा—जाओ, दे आओ। मियाँ नुदरत की रूह पर सदमा हुआ कि चार-पाँच डली तो बीबी बातें करते-करते चख गयीं और पाँच-छह अब निकल गयीं। ग़ज़ब ही हो गया। मामा मिठाई ले कर चली, तो ड्योढ़ी में दो लड्डू चुपके से निकाल कर एक ताक़ में रख दिये। इत्तिफ़ाक़ से एक छोकरा देख रहा था। जैसे मामा बाहर गयी, वैसे ही दोनों लड्डू मज़े से खा गया। चलिए, चोर के घर में मोर पैठा। मुसाहब ने रूमाल हटाया, तो कहा—वाह, भाभी साहब तो भाई साहब से भी बढ़ कर निकलीं। यह हाथी के मुँह में जीरा। ख़ैर, पानी तो लाओ। हज़रत ने मिठाई खायी और पानी पिया, तो पान की फ़र्माइश की। बीबी ने अपने हाथ से दो गिलौरियाँ बनायीं। मुसाहब ने चखीं, तो हुक्का माँगा। नुदरत ने कहा—देखा न, हाथ देते ही पहुँचा पकड़ लिया। मिठाई लाओ, पान खिलाओ, पानी पिलाओ, हुक्का भर लाओ; गोया बाबा के घर में बैठे हैं। इन मूज़ियों की तो क़ब्र तक से मैं वाक़िफ़ हूँ। और एक इस पर क्या मौक़ूफ़ है। नवाब के यहाँ जितने हैं, सब गुरगे, मुफ़्तख़ोरे, पराया माल ताकनेवाले। मामा, जा कर कह दो, हुक्का यहाँ कोई नहीं पीता। लेकिन बीबी ने हुक्का भरवा कर भेज ही दिया। जब पी चुके, तो बाहर से आवाज़ दी कि मामा, चारपाई यहाँ मौजूद है। ज़रा दरी या गलीचा दे जाइएगा। अब ठीक दोपहर में कौन इतनी दूर जाय। ज़रा

कमर सीधी कर लें। तब तो मियाँ नुदरत खूब ही झल्लाये। आखिर शैतान का मनसूबा क्या है? देख रहा है कि मालिक घर में नहीं है; फिर यह दरवाज़े पर चारपाई पर सोना क्या माने? और मुझसे-इससे कहाँ का ऐसा याराना है कि आते ही भाभी साहब से फ़रमाइशें होने लगीं।

इधर मामा ड्योढ़ी में गयी कि लड्डू चुपके-चुपके खाय। ताक़ में ढूँढ़ मारा, पर लड्डुओं का कहीं पता नहीं। छोकरे ने पूछा—मामा, वहाँ क्या ढूँढ़ रही हो? वह तो चूहा खा गया। सच कहना, कैसी हुई? चूहे ने तुम्हारे अच्छे कान कतरे?

मुसाहब—मामा जी, जरी दरी दे जाइए।

मामा—यहाँ दरी-वरी नहीं है।

मुसाहब—हम जानते हैं, बड़े भाई कहीं इस वक़्त ईद मिलने गये हैं। बस, समझ जाइए।

नुदरत ने कहा—खुश हुई? कुछ समझीं भी? अब यह इस फ़िक्र में हैं कि तुमको हमको लड़वा दें। और मिठाई भेजो! गिलौरियाँ चखाओ!

जब मियाँ मुसाहब चंपत हुए, तो मियाँ नुदरत भी चँगेल की तरफ बढ़े और अफ़ीम की पीनक में खूब छक कर मिठाई चखी। फिर चले नवाब के घर। कदम-क़दम पर फ़िक़रे सोचते जाते हैं। बारे दाखिल हुए, तो लोगों ने आसमान सिर पर उठाया।

नवाब—शुक्र है, ज़िंदा तो बचे! यह आप अब तक रहे कहाँ आखिर?

मुसाहब—हुज़ूर, तारघर तो यह सामने है।

हाफ़िज़—हाँ, और नहीं तो क्या? बात करते तो आदमी पहुँचता है।

रोशनअली—कौन, मुझसे कहिए, तो इतनी देर में अठारह फेरे करूँ।

नुदरत—हाँ भाई, घर बैठे जो चाहे कह लो, कोई जाय, तो आटे-दाल का भाव मालूम हो। चलते-चलते आँधी-रोग आ जाता है। बकरी मर गयी और खानेवाले को मज़ा ही न आया। आप लोग थान के टर्रे हैं। कहने लगे, दो क़दम पर है। यहाँ से गये सआदतगंज वहाँ से धनिया महरी के पुल, वहाँ से ऐशबाग़, वहाँ से गनेशगंज, वहाँ से अमीनाबाद होते हुए तारघर पहुँचे। दम टूट गया, शल हो गये, मर मिटे, न खाना, न दाना। आप लोग बैठे-बैठे यहाँ जो चाहे फ़रमायें, कहने और करने में फ़र्क़ है।

नावब—तो इस ठाँय-ठाँय से वास्ता, यह कहिए, खबर पहुँची कि नहीं?

नुदरत—खुदावंद, भला मैं इसका क्या जवाब दूँ? खबर दे आया। बाबू ने मेरे सामने खट-खट किया, साहब ने रुपये लिये, चपरासियों को इनाम दिया। चार रुपये अपनी जेब से देने पड़े। वह तो कहिए, वहाँ मेरे एक जान-पहचान के निकल आये, नहीं बैरँग वापस आना पड़ता।

नवाब—खैर, तसकीन हुई। अब फ़रमाइए, इतनी देर कहाँ हुई?

नुदरत—खुदावंद, जल्दी के मारे बग्घी किराये करके गया था; लौटती बार

उसने वह पलटा खाया कि मैं तो समझा, बस, कुचल ही गया। मगर खुदा कारसाज़ है, गिरा तो, लेकिन बच गया। कोई दो घंटे तक कोचवान बम ही दुरुस्त किया किया। इससे देर हुई। हुज़ूर, अब घर जाता हूँ।

नवाब—अरे भई, खाना तो खाते जाओ। अच्छा, चार रुपये वे हुए और बग्घी के किराये के भी कोई तीन रुपये हुए होंगे? सात रुपये दारोग़ा से ले लो।

नुदरत—नहीं खुदावंद, झूठ नहीं बोलूँगा। चाहे फ़ाक़ा करूँ, मगर कहूँगा सच ही। यही तो गुलाम में जौहार है। दो रुपये और पाँच पैसे दिये। देखिए, खुदा को मुँह दिखाना है।

नवाब—दारोग़ा, इनको दस रुपये दे दो। सच बोलने का कुछ इनाम भी तो दूँ।

३०

दूसरे दिन सुबह को नवाब साहब ज़नानख़ाने से निकले, तो मुसाहबों ने झुक-झुक कर सलाम किया। ख़िदमतगार ने चाय की साफ़-सुथरी प्यालियाँ और चमचे ला कर रखे। नवाब ने एक-एक प्याली अपने हाथ से मुसाहबों को दी और सबने गरम-गरम दूधिया चाय उड़ानी शुरू की। एक-एक घूँट पीते जाते हैं और ग़प भी उड़ाते जाते हैं।

मुसाहब—हुज़ूर, कश्मीरी ख़ूब चाय तैयार करते हैं।

हाफ़िज़—हमारी सरकार में जो चाय तैयार होती है, सारी ख़ुदाई में तो बनती न होगी। ज़रा रंग तो देखिए। हिंदू भी देखे, तो मुँह में पानी भर आये।

रोशनअली—क़ुरबान जाऊँ हुज़ूर, ऐसी चाय तो बादशाह के यहाँ भी नहीं बनती थी। ख़ुदा जाने, मियाँ रहीम कहाँ से नुस्ख़ा पा गये। मगर ज़रा तल्ख़ी बाक़ी रह जाती है।

रहीम—सुभान अल्लाह! आप तो बादशाहों के यहाँ चाय पी चुके हैं और इतना भी नहीं जानते कि चाय में तल्ख़ी न हो, तो वह चाय ही नहीं।

ख़िदमतगार—ख़ुदावंद, शिवदीन हलवाई हाज़िर है।

नवाब—दारोग़ा जी, इस हलवाई का हिसाब कर दो, और समझा दो कि अगर ख़राब या सड़ी हुई बासी मिठाई भेजी, तो इस सरकार से निकाल दिया जायगा। परसों बरफ़ी ख़राब भेजी थी। घर में शिकायत करती थीं।

दारोग़ा—सुनते हो शिवदीन? देखो, सरकार क्या फ़रमाते हैं? ख़बरदार जो सड़ी-गली मिठाई भेजी। अब तुमने नमक़हरामी पर कमर बाँधी है! खड़े-खड़े निकाल दिये जाओगे।

हलवाई—नहीं ख़ुदावंद, अव्वल माल दूँ, अव्वल। चाशनी ज़रा बहुत आ गयी, तो दाना कम पड़ा। कड़ी हो गयी। चाशनी की गोली देर में देखी, नहीं तो इस दूकान की बरफ़ी तो शहरभर में मशहूर है। वह लज्ज़ती होती है कि ओठ बँधने लगते हैं।

दारोग़ा—चलो, तुम्हारा हिसाब कर दें। ले बतलाओ, कितने दिन से ख़र्च नहीं पाया, और तुम्हारा क्या आता है?

हलवाई—अगले महीने में २५ रु० और कुछ आने की आयी थी। और अबकी १० तारीख़ अँगरेजी तक कोई सत्तर या अस्सी की।

दारोग़ा—अजी, तुम तो गद्देबाज़ियाँ करते हो! सत्तर या अस्सी, सौ या पाँच सौ; उस महीने में उतनी और इस महीने में इतनी। यह बखेड़ा तुमसे पूछता कौन है? हमें तो बस, गठरी बता दो, कितना हुआ?

हलवाई—अच्छा, हिसाब तो कर लूँ, (थोड़ी देर के बाद) बस, १४२ रुपये और दस आने दीजिए। चाहे हिसाब कर लीजिए, बोलता जाऊँ।

दारोग़ा—अजी, तुम कोई नये तो हो नहीं। बताओ इसमें यारों का कितना है? सच बोलना लाला! (पीठ ठोंक कर) आओ, वारे-न्यारे हों। क्यों, है न?

हलवाई—बस, सौ हमको दे दो, बयालीस तुम ले लो। सीधा-सीधा मैं तो यह जानता हूँ।

दारोग़ा—अच्छा, मंजूर। मगर बयालीस के बावन करो। एक सौ तुम्हारे, बावन हमारे। सच कहना, दोनों महीनों में चालीस की मिठाई आयी होगी या कम?

हलवाई—अजी हुजूर; अब इस भेद से आपको क्या वास्ता? आपको आम खाने से ग़रज़ है, या पेड़ गिनने से। सच-सच यह कि सब मिला कर अड़तीस रुपये की आयी होगी। मुल वज़न में मार देता हूँ। सेर भर लड्डू मँगा भेजे, हमने पाव सेर कम कर दिये।

दारोग़ा—ओह, इसकी न कहिए, यहाँ अँधेर-नगरी चौपट-राज है। यह दिमाग़ किसे कि तौलने बैठे। मियाँ लखलुट, बीबी उनसे बढ़ कर। दस के पचास लो, और सेर के तीन पाव भेजो। मज़े हैं। अच्छा, ये सौ रुपये गिन लो और एक सौ बावन की रसीद हमें दो।

हलवाई—यह मोल-तोल है। सौ और पाँच हम लें और बाक़ी हजूर को मुबारक रहें।

अब सुनिए, मियाँ खोजी ने ये सारी बातें सुन लीं। जब शिवदीन चला गया, तो बढ़ कर बोले—अजी, हज़रत, आदाबरज़ है। कहिए, इसमें कुछ यारों का भी हिस्सा है? या बावन के बावन खुद ही हज़म कर जाओगे और डकार तक न लोगे? अब हमारा और आपका साझा न होगा, तो बुरी ठहरेगी।

दारोग़ा—क्या? किससे कहते हैं आप! यह साझा कैसा! भंग तो नहीं पी गये हो कहीं? यह क्या वाही-तबाही बक रहे हो? यहाँ बेहूदा बकनेवालों की ज़बान खींच ली जाती है। तुम टुकड़गदों को इन बातों से क्या वास्ता?

खोजी—(कमर कस कर) ओ गीदी, क़सम खुदा की, इतनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि याद करो। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो? मैं आदमी को दम के दम में सीधा बना देता हूँ। किसी और भरोसे न भूलिएगा। क्या खूब, अड़तीस के डेढ़ सौ दिलवाये, पचास खुद उड़ाये और ऊपर से गुर्राता है मर्दक। अभी तो नवाब साहब से सारा कच्चा चिट्ठा जड़ता हूँ। खड़े-खड़े न निकाल दिये जाओ, तो सही। हम भी तमाम उम्र रईसों की ही सोहबत में रहे हैं, घास नहीं छीला किये हैं। बायें हाथ से बीस रुपये इधर रख दीजिए। बस, इसी में खैर है; वर्ना उलटी आँतें गले पड़ेंगी। अब सोचते क्या हो? ज़रा चीं-चपड़ करोगे, तो क़लई खोल दूँगा। बोलो, अब क्या राय है? बीस रुपये से ग़म खाओगे, या ज़िल्लत उठाओगे? अभी तो कोई कानोंकान नहीं सुनेगा, पीछे अलबत्ता बड़ी टेढ़ी खीर है।

दारोग़ा—वाह री फूटी क़िस्मत ! आज सुबह-सुबह बोहनी अच्छी हुई थी, अच्छे का मुँह देख कर उठे थे; मगर हज़रत ने अपनी मनहूस सूरत दिखायी। अब बावन में से आपको बीस रुपये, रक़म की रक़म निकाल दें, तो हमारे पास क्या ख़ाक रहे ? और हाँ, ख़ूब याद आया, बावन किस मरदूद को मिले। सैंतालिस ही तो हमारे हत्थे चढ़े। दस तुम भी लो भई। (गर्दन में हाथ डाल कर) मान जाओ उस्ताद। हमें ज़रूरत थी इससे कहा, वरना क्या बात थी। और फिर हम-तुम जिंदा हैं, तो सैकड़ों लूटेंगे मियाँ, ये हाथ दोनों लूटने ही के लिए हैं, या कुछ और ?

ख़ोजी—दस में तो हमारा पेट न भरेगा। अच्छा भई, पंद्रह दो।

आख़िर दारोग़ा ने मजबूर हो कर पंद्रह रुपये मियाँ ख़ोजी को नज़र किये और दोनों आदमी जाकर महफ़िल में शरीक़ हुए। थोड़े ही देर बैठे होंगे कि चोबदार ने आकर कहा—हुज़ूर, वह बज़ाज आया है, जो विलायती कपड़ा बेचता है। क़ल भी हाज़िर हुआ था; मगर उस वक़्त मौक़ा न था, मैंने अर्ज़ न किया।

नवाब—दारोग़ा से कहो, मुझे क्या घड़ी-घड़ी आके परचा जड़ते हो। (दारोग़ा से) जाओ भई, उसको भी लगे हाथों भुगता ही दो। झंझट क्यों बाक़ी रह जाय। कुछ और कपड़ा आया है विलायत से ? आया हो, तो दिखाओ; मगर बाबा मोल की सनद नहीं।

बज़ाज़—अब कोई दूज तक सब कपड़ा आ जायगा। और, हुज़ूर ऐसी बातें कहते हैं ! भला, इस ड्योढ़ी पर हमने कभी मोल-तोल की बात की है आज तक ? और यों तो आप अमीर हैं, जो चाहे कहें, मालिक हैं हमारे।

दारोग़ा और बज़ाज़ चले। जब दारोग़ा साहब की खपरैल में दोनों जा कर बैठे, तो मियाँ ख़ोजी भी रेंगते हुए चले और दन से मौजूद ! दारोग़ा ने जो इनको देखा, तो काटो तो बदन में लहू नहीं; मुर्दनी सी चेहरे पर छा गयी ! चुप ! हवाइयाँ उड़ी हुईं। समझे कि यह ख़ोजी एक ही काइयाँ है। इससे ख़ुदा पनाह में रखे। सुबह को तो मरदूद ने हत्थे ही पर टोक दिया, और पंद्रह पटीले। अब जो देखा कि बज़ाज़ आया, तो फिर मौजूद। आज रात को इसकी टाँग न तोड़ी हो, तो सही। मगर फिर सोचे कि गुड़ से जो मरे, तो ज़हर क्यों दें। आओ, इस वक़्त चुनीं-चुनाँ करें, फिर समझा जायगा। बोले—आओ भाईजान, इधर मोढ़े पर बैठो। अच्छी तरह भई ? हुक्का लाओ, आपके लिए।

बज़ाज़ सदर-बाज़ार का रहनेवाला एक ही उस्ताद था। ताड़ गया कि इसके बैठने से मेरा और दारोग़ा का मतलब खब्त हो जायगा ? किसी तदबीर से इसको यहाँ से निकालना चाहिए। पहले तो कुछ देर दारोग़ा से इशारों में बातें हुआ कीं। फिर थोड़ी देर के बाद बज़ाज़ ने कहा—मियाँ साहब, आपको यहाँ कुछ काम है ?

ख़ोजी—तुम अपनी कहो लालाजी, हमसे क्या वास्ता ?

बज़ाज़—तुम यहाँ से उठ जाओ। उठते हो कि मैं दूँ एक लात ऊपर से।

ख़ोज़ी—ओ गीदी, ज़बान सँभाल; नहीं तो इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि ख़ून-खराब हो जायगा।

बज़ाज़—उठूँ फिर मैं?

ख़ोजी—उठके तमाशा भी देख ले!

बज़ाज़—बेधा है क्या?

ख़ोजी—बल्लाह, जो बे-ते किया, तो इतनी क़रौलियाँ...

ख़ोजी कुछ और कहने ही को थे कि बज़ाज़ ने बैठे-बैठे मुँह दबा दिया और एक चपत जमायी। चलिए, दोनों गुँथ गये। अब दारोग़ा जी को देखिए। बीच-बचाव किस मज़े से करते हैं कि ख़ोजी के दोनों हाथ पकड़ लिये और कमर दबाये हुए हैं और बज़ाज़ ऊपर से इनको ठोक रहा है। दारोग़ा साहब गला फाड़-फाड़ कर गुल मचाये जाते हैं कि मियाँ, क्यों लड़े मरते हो? भई, धौल-धप्पे की सनद नहीं। ख़ोजी अपने दिल में झल्ला रहे हैं कि अच्छे मीरफ़ैसली बने। इतने में किसी ने नवाब साहब से जा कर कह दिया कि मियाँ ख़ोजी, दारोग़ा और बज़ाज़ तीनों गुँथे पड़े हैं। उसी वक़्त बज़ाज़ भी दौड़ा हुआ आया और फ़रियाद की कि हुज़ूर, हम आपके यहाँ तो सस्ता माल देते हैं, मगर यह ख़ोजी हिसाब-किताब के वक़्त सर पर सवार हो गये। लाख-लाख कहा किये कि भई, हम अपने माल का भाव तुम्हारे सामने न बतायेंगे; मुल इन्होंने हारी मानी न जीती, और उल्टे पंजे झाड़ के चित-पट की ठहरायी। कमज़ोर, मार खाने की निशानी। मैंने वह गुद्दा दिया कि छठी का दूध याद करते होंगे। दारोग़ा भी रोते-पीटते आये कि दोहाई है, चारपाई की पट्टी तोड़ डाली, ख़ासदान तोड़ डाला और सैकड़ों गालियाँ दीं।

मियाँ ख़ोजी ऐसे धपियाये गये और इतनी बेभाव की पड़ी कि बस, कुछ पूछिए नहीं। नवाब ने पूछ—आख़िर झगड़ा क्या था?

दारोग़ा—हुज़ूर यह ख़ोजी बड़े ही तीखे आदमी हैं। बात-बात पर क़रौली भोंकते हैं, और गीदी तो तकिया-कलाम है। इस वक़्त लाला बलदेव ही से भिड़ पड़े। वह तो कहिए, मैंने बीच-बचाव कर दिया। वर्ना एक-आध का सिर ही फूट जाता।

बज़ाज़—बड़े झल्ले आदमी हैं। दारोग़ा जी बेचारे न आ जाँय तो कपड़े-वपड़े फाड़ डालें।

ख़ोजी—तो अब रोते काहे को हो? अब यह दुखड़ा लेके क्या बैठे हो।

नवाब—लप्पा-डग्गी तो नहीं हुई।

ख़ोजी—नहीं हुज़ूर, शरीफ़ों में कहीं हाथा-पाई होती है भला? हमने इनको ललकारा, इन्हों ने हमको डाँटा, मगर कुंदे तौल-तौल कर दोनों रह गये। भलेमानस पर हाथ उठाना कोई दिल्लगी है!

ख़ैर, मियाँ ख़ोजी तो महफ़िल में जा कर बैठे और उधर लाला बलदेव और दारोग़ा साहब हिसाब करने गये।

दारोग़ा—हाँ भाई, बताओ।

लाला—अजी बतायें क्या, जो चाहे दिलवा दो।

दारोग़ा—पहले यह बताओ, तुम्हारा आता क्या है? सौ, दो सौ, दस, बीस, पचास जो हो, कह दो।

लाला—दारोग़ा जी, आजकल कपड़ा बड़ा मँहगा है।

दारोग़ा—लाला, तुम निरे गावदी ही रहे। हमको मँहगे-सस्ते से क्या वास्ता? हमको तो अपने हक़ से मतलब। तुम तो इस तरह कहते हो, जैसे हमारी गिरह से जाता है।

लाला—फिर तो ७५३) निकालिए।

दारोग़ा—बस, अरे मियाँ, अबकी इतने दिनों में सात-साढ़े सात सौ ही की नौबत आयी?

लाला—जी हाँ, आप से कुछ परदा थोड़े ही है। दो सौ और पचपन रुपये का कपड़ा आया है; अंदर-बाहर, सब मिला कर। मगर परसों नवाब साहब कहने लगे। कि अबकी तो तुम्हारा कोई पाँच-छह सौ का माल आया होगा। मैंने कहा कि ऐसे मौक़े पर चूकना गधापन है। वह तो पाँच-छह सौ बताते थे, मेरे मुँह से निकल गया कि हिसाब किये से मालूम होगा। मुल कोई आठ-सात सौ का आया होगा। तो अब ७५३) ही रखिए। इसमें हमारा और आपका समझौता हो जायगा।

दारोग़ा—अजी, समझौता कैसा, हम-तुम कुछ दो तो हैं नहीं; और हमारे-तुम्हारे तो बाप-दादा के वक्त से दोस्ताना है। बोलो, कितने पर फ़ैसला होता है?

लाला—बस, दो सौ छब्बीस तो हमको एक दीजिये और तीन सौ और दीजिए। इसके बाद बढ़े सो आपका।

दारोग़ा—(हँस कर) अच्छा भई, मंजूर। हाथ पर हाथ मारो। मगर ७५३) रु० ६ आ० की रसीद लिखो, जिनमें मालूम हो कि आने-पाई से हिसाब लैस है।

लाला—बड़े काइयाँ हो दारोग़ा जी! अजी, २२७) रु० ६ आ० कुल आपका?

ख़ोजी—बल्कि आपके बाप का।

यह आवज़ सुन कर दोनों चौंके। इधर-उधर देखते हैं, कोई नज़र ही नहीं आता। दारोग़ा के हवास ग़ायब। बज़ाज़ के बदन में खून का नाम नहीं। इतने में फिर आवाज़ आयी—कहो, कुछ यारों का भी हिस्सा है? तब दोनों के रहे-सहे होश और भी उड़ गये।

अब सुनिए—मियाँ ख़ोजी खपरैल के पिछवाड़े एक मोखे की राह से सब सुन रहे थे। जब कुल कारवाई खतम हो गयी, तो आवाज़ लगायी। ख़ैर, दारोग़ा और लाला बलदेव ने उनको ढूँढ़ निकाला और लल्लो-पत्तो करने लगे।

बज़ाज़—हमारा क़सूर फिर माफ़ कीजिए।

दारोग़ा—अजी, ये ऐसे आदमी नहीं हैं। ये बेचारे किसी से लड़ने-भिड़ने वाले नहीं। बाक़ी लड़ाई-झगड़ा तो हुआ ही करता है। दिल में क़ुदरत आयी और साफ़ हो गये।

ख़ोजी—ये बातें तो उम्र भर हुआ करेंगी। मतलब की बात फ़रमाइए। लाओ कुछ इधर भी।

दारोग़ा—जो कहो।

ख़ोजी—सौ दिलवाइए पूरे। एक सौ लिये बग़ैर न टलूँगा। आज तुम दोनों ने मिल कर हमारी ख़ूब मरम्मत की है।

दरोग़ा—यह तीस रुपए तो एक लीजिए और यह दस का नोट। बस। और जो अलसेट कीजिए, तो इससे भी हाथ धोइए।

ख़ोजी—ख़ैर लाइए, चालीस ही क्या कम हैं।

दारोग़ा—हम समझते थे कि बस, हमी-हम हैं; मगर आप हमारे भी गुरु पैदा हुए।

मियाँ ख़ोजी और दारोग़ा साहब हाथ में हाथ दिये जा कर महफ़िल में बैठे, गोया दोनों में दाँत-काटी रोटी थी। मगर दारोग़ा का बस चलता, तो ख़ोजी को कालेपानी ही भेज देते, या ज़िंदा चुनवा देते। महफ़िल में लतीफ़े उड़ रहे थे।

नुदरत—हुज़ूर, आज एक आदमी ने हमसे पूछा कि अगर दरिया में नहायँ, तो मुँह किस तरफ़ रखें। हमने कहा कि भाई, अगर अक्लमंद हो, तो अपने कपड़ों की तरफ़ रुख़ रखो, वर्ना चोर उठा ले जायगा और आप ग़ोते ही खाते रह जायँगे।

हाफ़िज़—पुराना लतीफ़ा है।

आज़ाद—एक हकीम ने कहा कि जब तक मैं बिन ब्याहा था, तो बीबीवाले गूँगे हो गये थे और अब जो शादी कर ली, तो एक-एक मुँह में सौ-सौ ज़बानें हैं।

इतने में गंधी ने आ कर सलाम किया।

नवाब—दारोग़ा जी, इनको भी भुगता दो।

दारोग़ा और गंधी खपरैल में पहुँचे, तो दारोग़ा ने पूछा—कितना इत्र आया?

गंधी—देखिए, आपके यहाँ तो लिखा होगा।

दारोग़ा—हाँ, लिखा तो है। मगर ख़ुदा जाने वह काग़ज़ कहाँ पड़ा है। तुम अपनी याद से जो जी में आये, बता दो।

गंधी—३५ रु० तो कल के हुए, और ८० रु० उधर के। बेगम साहब ने अब की इत्र की भरमार ही कर दी। क़राबे के क़राबे ख़ाली कर दिये।

दारोग़ा—अच्छा भई, फिर इसमें किसी के बाप का क्या इज़ारा। शौक़ीन हैं, रईसज़ादी हैं, अमीर हैं। इत्र उन्हीं के लिए है, या हमारे आपके लिए? अच्छा, तो कुल ११५ रु० हुए न! तुम भी क्या याद करोगे। लो, सौ ये हैं और तीन नोट पाँच-पाँच के।

गंधी—अच्छा लीजिए, यह इत्र की शीशी आपके लिए लाया हूँ।

दारोग़ा—किस चीज़ का है?

गंधी—सूँघिए, तो मालूम हो। ख़ुदा जानता है, १० रु० तोले में झड़ाझड़ उड़ा जा रहा है।

मियाँ गंधी उधर रवाना हुए, इधर दारोग़ा जी ख़ुश-ख़ुश चले, तो आवाज़ आयी कि उस्ताद, इस शीशी में यारों का भी हिस्सा है। पीछे फिर के देखते हैं, तो मियाँ ख़ोजी घूमते हुए चले आते हैं।

दारोग़ा—यार, तुमने तो बेतरह पीछा किया।

ख़ोजी—अब की तो तुमको कुछ न मिला। मगर इस इत्र में से आधी शीशी लेंगे।

दारोग़ा—अच्छा भई, ले लेना। तुमसे तो कोर ही दबी है। दोनों आदमी जा कर महफ़िल में फिर शरीक हो गये।

३१

एक दिन पिछले पहर से खटमलों ने मियाँ खोजी के नाक में दम कर दिया। दिन भर का खून जोंक की तरह पी गये। हज़रत बहुत ही झल्लाये; चीख उठे, लाना क़रौली, अभी सबका खून चूस लूँ। यह हाँक जो औरों ने सुनी, तो नींद हराम हो गयी। चोर का शक हुआ। लेना लेना, जाने न पाये। सराय भर में हुल्लड़ मच गया। कोई आँखें मलता हुआ अँधेरे में टटोलता है, कोई आँखें फ़ाड़-फाड़ कर अपनी गठरी को देखता है, कोई मारे डर के आँखें बंद किये पड़ा है। मियाँ खोजी ने जो चोर-चोर की आवाज़ सुनी, तो खुद भी गुल मचाना शुरू किया—लाना मेरी क़रौली। ठहर! मैं भी आ पहुँचा। पीनक में सूझ गयी कि चोर आगे भागा जाता है, दौड़ते-दौड़ते ठोकर खाते हैं तो अररर धों! गिरे भी तो कहाँ, जहाँ कुम्हार के हंडे रखे थे। गिरना था कि कई हंडे चकनाचूर हो गये। कुम्हार ने ललकारा कि चोर-चोर। यह उठने ही को थे कि उसने आकर दबोच लिया और पुकारने लगा—दौड़ो-दौड़ो, चोर पकड़ लिया। मुसाफ़िर और भठियारे सब के सब दौड़ पड़े। कोई डंडा लिये है, कोई लट्ठ बाँधे। किसी को क्या मालूम कि यह चोर है, या मियाँ खोजी। खूब बेभाव की पड़ी। यार लोगों ने ताक ताक कर जन्नाटे के हाथ लगाये। खोजी की सिट्टी-पिट्टी भूल गयी; न क़रौली याद रही, न तमंचा। जब खूब पिट-पिटा चुके, तो एक मुसाफ़िर ने कहा—भई, यह तो खोजी मालूम होते हैं। जब चिराग़ जलाया गया, तो आप दबके हुए नज़र आये। मियाँ आज़ाद से किसी ने जा कर कह दिया कि तुम्हारे साथी खोजी चोरी की इल्लत में फँसे हैं, किसी मुसाफ़िर की टोपी चुरायी थी। दूसरे ने कहा—नहीं-नहीं, यह नहीं हुआ। हुआ यह कि एक कुम्हार की हाँड़ियाँ चुराने गये थे। मुल जाग हो गयी।

मियाँ आज़ाद को यह बात कुछ जँची नहीं। सोचे, खोजी बेचारे चोरी-चकारी क्या जानें। फिर चोरी भी करते तो हाँडियों की? दिल में ठान ली कि चलें और खोजी को बचा लायें। चारपाई से उतरे ही थे कि देखा, खोजी साहब झूमते चले आते हैं और बड़बड़ाते जाते हैं—हत् तेरी गीदी की, बड़ा आज़ाद बना है। चारपाई पर पड़ा जर्र-खर्र किया किया और हमारी खबर ही नहीं।

आज़ाद—खैर, हमको तो पीछे गालियाँ देना, पहले यह बताओ कि हाथ-पाँव तो नहीं टूटे?

खोजी—हाथ-पाँव! अजी, आप उस वक़्त होते तो देखते कि बंदे ने क्या-क्या जौहर दिखाये। पचास आदमी घेरे हुए थे, पूरे पचास, एक कम न एक ज़्यादा, और मैं फुलझड़ी बना हुआ था। बस, यह कैफ़ियत थी कि किसी को अंटी दी धम से ज़मीन पर, किसी को कूले पर लाद कर मारा। दो-चार मेरे रोब में आ कर थरथरा के

गिर ही तो पड़े। दस-पाँच की हड्डी-पसली चकनाचूर कर दी। जो सामने आया, उसे नीचा दिखाया।

आज़ाद—सच?

खोजी—खुदाई भर में कोई ऐसा जीवटदार आदमी दिखा तो दीजिए।

आज़ाद—भई, खुदाई भर का हाल तो खुदा ही को खूब मालूम है। मगर इतनी गवाही तो हम भी देंगे कि आप-सा बेहया दुनिया भर में न होगा।

दोनों आदमी इस वक़्त सो रहे, दूसरे दिन सबेरे नवाब साहब के यहाँ पहुँचे।

आज़ाद—जनाब, रुख़सत होने आया हूँ। जिंदगी है, तो फिर मिलूँगा।

नवाब—क्या कूच की तैयारी कर दी? भई, वापस आना, तो मुलाक़ात ज़रूर करना।

आज़ाद और खोजी रुख़सत हुए, तो खोजी पहुँचे ज़नानी ड्योढ़ी पर और दरबान से बोले—यार, ज़रा बुआ ज़ाफ़रान को नहीं बुला देते। दरबान ने आवाज़ दी—बुआ ज़ाफ़रान, तुम्हारे मियाँ आये हैं।

बुआ ज़ाफ़रान के मियाँ खोजी से बिलकुल मिलते-जुलते थे, ज़रा फ़र्क़ नहीं। वही सवा बालिश्त का क़द, वही दुबले-पतले हाथ-पाँव। ज़ाफ़रान उनसे रोज़ कहा करती थी—तुम अफ़ीम खाना छोड़ दो। वह कब छोड़नेवाले थे भला। इसी सबब से दोनों में दम भर नहीं बनती थी। ज़ाफ़रान ने जो बाहर आ कर देखा, तो हज़रत पीनक ले रहे हैं। जल-भुनकर खाक ही तो हो गयी। जाते ही मियाँ खोजी के पट्टे पकड़ कर एक, दो, तीन, चार, पाँच चाँटे लगा ही तो दिये। खोजी का नशा हिरन हो गया। चौंक कर बोले—लाना तो क़रौली, खोपड़ी पिलपिली हो गयी। हाथ छुड़ाकर भागना चाहा; मगर वह देवनी नवाब का माल खा-खा कर हथनी बनी फिरती थी। इनको चुरमुर कर डाला। इधर गुल-गपाड़े की आवाज़ हुई, तो बेगम साहबा, मामा, लौंडियाँ, सब परदे के पास दौड़ीं।

बेगम—ज़ाफ़रान, आख़िर यह है क्या? रुई की तरह इस बेचारे को तूम के धर दिया।

मामा—हुज़ूर, ज़ाफ़रान का क़सूर नहीं, यह उस मरदुए का क़सूर है जो जोरू के हाथ बिक गया है। (खोजी के कान पकड़ कर) जोरू के हाथ से जूतियाँ खाते हो, और ज़रा चूँ नहीं करते?

खोजी—हाय अफ़सोस! अजी, यह जोरू किस मरदूद की है। खुदा-खुदा करो! भला मैं इस हुड़दंगी, काली-कलूटी डाइन के साथ ब्याह करता! मार-मार के भुरकस निकाल लिया।

बुआ ज़ाफ़रान ने जो ये बातें सुनीं, तो वह आवाज़ ही नहीं। ग़ौर करके देखती हैं, तो यह कोई और ही है। दाँतों के तले उँगली दबाकर खामोश हो रहीं।

लौंडी—ऐ वाह बुआ ज़ाफ़रान! इतनी भी नहीं पहचानतीं। यह बेचारे तो नवाब साहब के यहाँ बने रहते थे। आख़िर तुमको सूझी क्या?

बेगम साहब ने भी ज़ाफ़रान को खूब आड़े हाथों लिया। इतने में किसी ने नवाब साहब से सारा क़िस्सा कह दिया! महफ़िल भर में क़हक़हा पड़ गया।

नवाब—ज़ाफ़रान की सज़ा यही है कि खोजी को दे दी जायँ।

खोजी—बस, गुलाम के हाल पर रहम कीजिए। ग़ज़ब खुदा का! मियाँ के धोखे-धोखे में तो इसने हमारे हाथ-पाँव ढीले कर दिये और जो कहीं सचमुच मियाँ ही होते, तो चटनी ही कर डालती। क्या कहें, कुछ बस नहीं चलता, नहीं नवाबी होती, तो इतनी क़रौलियाँ भोंकी होतीं कि उम्र भर याद करती। यहाँ कोई ऐसे-वैसे नहीं। घास नहीं खोदा किये हैं।

बड़ी देर तक अंदर-बाहर क़हक़हे पड़े, तब दोनों आदमी फिर से रुखसत हो कर चले। रास्ते में मियाँ आज़ाद मारे हँसी के लोट-लोट गये।

खोजी—जनाब, आप हँसते क्या हैं? मैंने भी ऐसी-ऐसी चुटकियाँ ली हैं कि ज़ाफ़रान भी याद ही करती होगी।

आज़ाद—मियाँ, डूब मरो जा कर। एक औरत से हाथापाई में जीत न पाये!

खोजी—जी, वह औरत सौ मर्द के बराबर है। चिमट पड़े, तो आपके भी हवास उड़ जायँ।

दोनों आदमी सराय पहुँच कर चलने की तैयारी करने लगे। खाना खा कर बोरिया-बक़चा सँभाल स्टेशन को चले।

खोजी—हज़रत, चलने को तो हम चलते हैं, मगर इतनी शर्तें आपको क़बूल करनी होंगी—

(१) क़रौली हमको ज़रूर ले दीजिए।

(२) बरस भर के लिए अफ़ीम ले लीजिए। मैं अपने लादे-लादे फिरूँगा। वर्ना जँभाइयों पर जँभाइयाँ आयेंगी और बेमौत मर जाऊँगा। आप तो औरतों की तरह नशे के आदी नहीं; मगर मैं बग़ैर अफ़ीम पिये एक क़दम न चलूँगा। परदेस में अफ़ीम मिले, या न मिले, कहाँ ढूँढता फिरूँगा?

(३) इतना बता दीजिए कि वहाँ बुआ ज़ाफ़रान की सी डंडपेल देवनियाँ तो नज़र न आयेंगी? वल्लाह, क्या कस-कस के लातें लगायी हैं, और क्या तान-तान के मुक्केबाज़ी की है कि पलेथन ही निकाल डाला।

(४) सराय में हम अब तमाम उम्र न उतरेंगे, और जो जहाज़ पर कुम्हार हुए तो हम डूब ही मरेंगे। हम ठहरे आदमी भारी-भरकम, कहीं पाँव फिसल गया और एक-आध हँडा टूट गया, तो कुम्हार से ठाँय-ठाँय हो जायगी।

(५) जिस रईस की सोहबत में बज़ाज़ आते होंगे, वहाँ हम न जायँगे।

(६) जहाँ आप चलते हैं, वहाँ काँजीहौस तो नहीं है कि गधे के धोखे में कोई हमको कान पकड़ के काँजीहौस पहुँचा दे।

(७) टट्टू पर हम सवार न होंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।

(८) मीठे पुलाव रोज़ पकें।

(९) हमको मियाँ ख़ोजी न कहना। जनाब ख्वाजा साहब कहा कीजिए। यह ख़ोजी के क्या माने?

(१०) मोरचे पर हम न जायँगे। लूट-मार में जो कुछ हाथ आये, वह हमारे पास रखा जाय।

(११) गोली खाने के तीन घंटे पहले और मरने के दो घड़ी पहले हमें बतला देना।

(१२) अगर हम मर जायँ, तो पता लगा कर हमारे वालिद के पास ही हमारी लाश दफ़न करना। अगर पता न लगे, तो किसी क़ब्रिस्तान में जा कर सबसे अच्छी क़ब्र के पास हमको दफ़न करना। और लिख देना कि यह इनके वालिद की क़ब्र है।

(१३) पीनक के वक़्त हमको हरगिज़ न छेड़ना।

आज़ाद—तुम्हारी सब शर्तें मंजूर। अब तो चलिएगा।

ख़ोजी—एक बात और बाक़ी रह गयी।

आज़ाद—लगे हाथों वह भी कह डालिए।

ख़ोजी—मैं अपनी दादीजान से तो पूछ लूँ।

आज़ाद—क्या वह अभी जिंदा हैं? ख़ुदा झूठ न बुलाये, तो आप कोई पचास के पेटे में होंगे? और वह इस हिसाब से कम से कम क्या डेढ़ सौ बरस की भी न होंगी?

ख़ोजी—अजी, मैं दिल्लगी करता था। उनकी तो हड्डियों तक का पता न होगा।

स्टेशन पर पहुँचे। गुल-गपाड़ा मचा हुआ था। दोनों आदमी भीड़ काट कर अंदर दाखिल हुए, तो देखा, एक आदमी गेरुए कपड़े पहने खड़ा है। फ़क़ीरों की सी दाढ़ी, बाल कमर तक, मूँछें मुड़ी हुई, कोई पचास के पेटे में। मगर चेहरा सुर्ख़, जैसे लाल अंगारा; आँखें आगभभूका।

आज़ाद—(एक सिपाही से) क्यों भई, क्या यह कोई फ़क़ीर हैं?

सिपाही—फ़क़ीर नहीं, चंडाल है। कोई चार महीने हुए, यहाँ आया और एक आदमी को सब्ज़ बाग़ दिखा कर अपना चेला बनाया। रफ़्ता-रफ़्ता और लोग भी शागिर्द हुए। फिर तो हज़रत पुजने लगे। अब कोई तो कहता है कि बाबा जी ने दस सेर मिठाई दरिया में डाल दी और दूसरे दिन जा कर कहा—गंगा जी, हमारी अमानत हमको वापस कर दो। दरिया लहरें मारता हुआ बाबा जी के पास आया और दस सेर गरमागरम मिठाई किसी ने आप ही आप उनके दामन में बाँध दी। कोई क़समें खा-खा कर कहता है कि कई मुर्दे इन्होंने ज़िंदा कर दिये। एक साहब ने यहाँ तक बढ़ाया कि एक दिन मूसलाधार मेंह बरस रहा था और इन पर बूँद ने असर न किया। कोई फ़रिश्ता इन पर छतरी लगाये रहा।

आज़ाद—चिकने घड़े बन गये।

सिपाही—कुछ पूछिए नहीं। उन लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि यह क़ैदखाने से निकल जायँगे; मगर तीन दिन से हवालात मे हैं, और अब सिट्टी-पिट्टी

भूली हुई है। मैं जो उधर से आऊँ-जाऊँ, तो रोज़ देखूँ कि भीड़ लगी हुई है; मगर औरतें ज़्यादा और मर्द कम। जो आता है, वह सिजदा करता है आपकी देखा-देखी मैं गया, मेरी देखा-देखी आप गये। बाबा जी के यहाँ रोज़ दरबार लगने लगा।

एक दिन का ज़िक्र है कि बाबा जी ने अपनी कोठरी में टाट के नीचे दस-पाँच रुपये रख दिये और चुपके से बाहर निकल आये। जब दरबार जम गया, तो एक आदमी ने कहा—बाबा जी, हमको कुछ दिखाइए। बिना कुछ देखे हम एक न मानेंगे। बाबा जी ने आँखें नीली-पीली कीं और शेर की तरह गरजे—लोगों के होश उड़ गये। दो-चार डरपोक आदमियों ने तो मारे डर के आँखें बंद कर लीं। एक आदमी ने कहा—बाबा, अनजान है। इस पर रहम कीजिए। दूसरा बोला—नादान है, जाने दीजिए।

'फ़क़ीर—नहीं, इससे पूछो, क्या देखेगा?

'आदमी—बाबा, मैं तो रुपयों का भूखा हूँ।

फ़क़ीर—बच्चा, फकीरों को दौलत से क्या काम? मगर तेरी खातिर करना भी ज़रूरी है। चल, चल, चल। बरसो, बरसो, बरसो। खन, खन, खन। अच्छा बच्चा, कुटी में देख; टाट का कोना उठा। खुदा ने तेरे लिए कुछ भेजा ही होगा। मगर दाहना सुर चलता हो, तभी जाना; नहीं तो धोखा खायगा। वहाँ कोई डरावनी सूरत दिखायी दे, तो डर मत जाना; नहीं तो मर जायगा।

'बाबा जी ने कुटी के एक कोने में परदा डाल दिया था और उस परदे में एक आदमी का मुँह काला करके बिठा दिया था। अब तो आदमी डरा कि न जाने कैसी भयानक सूरत नज़र आयेगी। कहीं डर जाऊँ, तो जान ही जाती रहे। बाबा जी एक-एक से कहते हैं, मगर किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। तब एक नौजवान ने उठ कर कहा—लीजिए, मैं जाता हूँ।

'फ़क़ीर—बच्चा, जाता तो है, मगर जरा सँभल कर जाना।

'नौजवान बेधड़क कोठरी में घुस गया। टाट के नीचे से रुपए निकाल कर जेब में रख लिये और चलने ही को था कि परदे में से वह काला आदमी निकल पड़ा और जवान की तरफ मुँह खोल कर झपटा। जवान ने आव देखा न ताव, लक्ड़ी उसकी हलक़ में डाल दी और इतनी चोटें लगायीं कि बौखला दिया। जब वह रुपये लिये अकड़ता हुआ बाहर निकला, तो हवाली-मवाली सब दंग कि यह तो खुश-खुश आते हैं और हम समझे थे कि अब इनकी लाश देखेंगे।

'नौजवान—(फ़क़ीर से) कहिए हज़रत, और कोई करामात दिखाइएगा?

'फ़क़ीर—बच्चा, तुम्हारी जवानी पर हमें तरस आ गया।

'नौजवान—पहले जा कर अंदर देखिए तो आपके देव साहब की क्या हालत है? जरा मरहम-पट्टी कीजिए।

'अगर वहाँ समझदार लोग होते, तो समझ जाते कि बाबा जी पूरे ठग हैं; मगर

वहाँ तो सभी ज़ाहिल थे। वे समझे, बेशक बाबा जी ने नौजवान पर रहम किया। ख़ैर बाबा जी ने ख़ूब हाँथ-पाँव फैलाये। एक दिन किसी महाजन के यहाँ गये। वहाँ महल्ले भर के मर्द और औरतें जमा हो गयीं। रात को जब सब लोग चले गये, तो इन्होंने महाजन के लड़के से कहा—हम तुमसे बहुत ख़ुश हैं। जो चाहे माँग ले। लड़का इनके क़दमों पर गिर पड़ा। आपने फ़रमाया कि एक कोरी हाँड़ी लाओ, चूल्हा गरम करो; मगर लकड़ी न हो, कंडे हों। कुम्हार ने सब सामान चुटकियों में लैस कर दिया। तब आपने लोहे का एक पत्तर मँगवाया। उसे हाँड़ी में पानी भर कर डाल दिया। पानी को ले कर कुछ पढ़ा। थोड़ी देर के बाद एक पुड़िया दी और कहा—वह सफेद दवा उसमें डाल दे। थोड़ी देर के बाद जब महाजन का लड़का अंदर गया, तो बाबा जी ने लोहे का पत्तर निकाल दिया और अपने पास से सोने का पत्तर हाँड़ी में डाल दिया, और चल दिये। महाजन का लड़का बाहर आया, तो बाबा जी का पता नहीं। हाँड़ी को जो देखो, तो लोहे का पत्तर ग़ायब, सोने का थक्का मौजूद। महल्ले भर में शोर मच गया। लोग बाबा जी को ढूँढ़ने लगे। आख़िर यहाँ तक नौबत पहुँची कि एक मालदार की बीबी ने चकमें में आ कर अपना पाँच-छ हजार का ज़ेवर उतार दिया। बाबा जी ज़ेवर ले कर उड़ गये। साल भर तक कहीं पता न चला। परसों पकड़े गये हैं।'

थोड़ी देर के बाद गाड़ी आयी। दोनों आदमी जा बैठे।

३२

सुबह को गाड़ी एक बड़े स्टेशन पर रुकी। नये मुसाफ़िर आ-आ कर बैठने लगे। मियाँ ख़ोजी अपने कमरे के दरवाज़े पर खड़े घुड़कियाँ जमा रहे थे—आगे जाओ, यहाँ जगह नहीं है; क्या मेरे सिर पर बैठोगे? इतने में एक नौजवान दूल्हा बराती कपड़े पहने आ कर गाड़ी में बैठ गया। बरात के और आदमी असबाब लदवाने में मसरूफ़ थे। दुलहिन और उसकी लौंडी ज़नाने कमरे में बैठायी गयी थीं। गाड़ी चलनेवाली ही थी कि एक बदमाश ने गाड़ी में घुस कर दूल्हे की गरदन पर तलवार का ऐसा हाथ लगाया कि सिर कट कर धड़ से अलग हो गया। उस बेगुनाह की लाश फड़कने लगी। स्टेशन पर कुहराम मच गया। सैकड़ों आदमी दौड़ पड़े और क़ातिल को गिरफ़्तार कर लिया। यहाँ तो यह आफ़त थी, उधर दुलहिन और महरी में और ही बातें हो रही थीं।

दुलहिन—दिलबहार, देखो तो, यह गुल कैसा है? जरी झाँक कर देखना तो!

दिलबहार—हैं-हैं! किसी ने एक आदमी को मार डाला है। चबूतरा सारा लहू-लहान है।

दुलहिन—अरे ग़ज़ब! क्या जाने, कौन था बेचारा!

दिलबहार—अरे! बात क्या है! लाश के सिरहाने खड़े तुम्हारे देवर रो रहे हैं।

एक दफ़े लाश की तरफ़ से आवाज़ आयी—हाय, भाई, तू किधर गया! दुलहिन का कलेजा धक-धक करने लगा। भाई-भाई करके कौन रोता है। अरे ग़ज़ब! वह घबरा कर रेल से उतरी और छाती पीटती हुई चली। लाश के पास पहुँच कर बोली—हाय, लुट गयी! अरे लोगो, यह हुआ क्या?

दिलबहार—हैं-हैं दुलहिन, तुम्हारा नसीब फूट गया।

इतने में स्टेशन की दो-चार औरतें—तार-बाबू की बीबी, गार्ड की लड़की, ड्राइवर की भतीजी वगैरह ने आ कर समझाना शुरू किया। स्टेशन मातमसरा बन गया। लोग लाश के इर्द-गिर्द खड़े अफ़सोस कर रहे थे। बड़े-बड़े संगदिल आठ-आठ आँसू रो रहे थे। सीना फटा जाता था। एकाएक दुलहिन ने एक ठंडी साँस ली, जोर से हाय करके चिल्लायी और अपने शौहर की लाश पर धम से गिर पड़ी। चंद मिनट में उसकी लाश भी तड़प कर सर्द हो गयी। लोग दोनों लाशों को देखते थे, और हैरत से दाँतों उँगली दबाते थे। तक़दीर के क्या खेल हैं, दुलहिन के हाथ-पाँव में मेंहदी लगी हुई, सिर से पाँव तक ज़ेवरों से लदी हुई; मगर दम के दम में कफ़न की नौबत आ गयी। अभी स्टेशन से एक पालकी पर चढ़ कर आयी थी, अब ताबूत में जायगी। अभी कपड़ों से इत्र की महक आ रही थी कि काफ़ूर की तदबीरें होने लगीं। सुबह को दरवाज़े पर रोशनचौकी और शहनाई बज रही थी, अब मातम की सदा है। थोड़ी ही देर हुई कि शहर के लोग छतों और दूकानों

से बरात देख रहे थे, अब जनाज़ा देखेंगे। दिलबहार दोनों लाशों के पास बैठी थी; मगर आँसुओं का तार बँधा हुआ था। वह दुलहिन के साथ खेली थी। दुनिया उसकी नज़रों में अँधेरी होगयी थी। दूल्हा के ख़िदमतगार क़ातिल को ज़ोर-ज़ोर से जूते और थप्पड़ लगा रहे थे और मरनेवाले को याद करके ढाड़ें मार-मार के रोते थे। ख़ैर, स्टेशन मास्टर ने लाशों को उठवाने का इंतजाम किया। गाड़ी तो चली गयी। मगर बहुत से मुसाफ़िर रेल पर से उतर आये। बला से टिकट के दाम गये। उस क़ातिल को देख कर सबकी आँखों से ख़ून टपकता था। यही जी चाहता था कि इसको इसी दम पीस डालें। इतने में लाल कुर्ती का एक गोरा, जो बड़ी देर से चिल्ला-चिल्ला कर रो रहा था, ग़ुस्से को रोक न सका, जोश में आके झपटा और क़ातिल की गरदन पकड़ कर उसे ख़ूब पीटा।

आज़ाद और मियाँ खोजी भी रेल से उतर पड़े थे। दोनों लाशों के साथ उनके घर गये। राह में हज़ारों आदमियों की भीड़ साथ हो गयी। जिन लोगों ने उन दोनों की सूरत ख़्वाब में भी न देखी थी, जानते भी न थे कि कौन हैं और कहाँ रहते हैं, वे भी ज़ार-ज़ार रोते थे। औरतें बाज़ारों, झरोखों और छतों पर से छाती पीटती थीं कि ख़ुदा ऐसी घड़ी सातवें दुश्मन को भी न दिखाये। दूकानदारों ने जनाज़े को देखा और दूकान बढ़ा के साथ हुए। रईसज़ादे सवारियों पर से उतर-उतर पड़े और जनाज़े के साथ चले। जब दोनों लाशें घर पर पहुँचीं, तो सारा शहर उस जगह मौजूद था। दुलहिन का बाप हाय-हाय कर रहा था और दूल्हे का बाप सब्र की सिल छाती पर रखे उसे समझाता था – भाई सुनो, हमारी और तुम्हारी उम्र एक है, हमारे मरने के दिन नज़दीक हैं। और दो-चार बरस बेहयाई से जिये तो जिये, वर्ना अब चल-चलाव है। किसी को हम क्या रोयें। जिस तरह तुम आज अपनी प्यारी बेटी को रो रहे हो, इसी तरह हज़ारों आदमियों को अपनी औलाद का ग़म करते देख चुके हो। इसका अफ़सोस ही क्या ? वह ख़ुदा की अमानत थी, ख़ुदा के सिपुर्द कर दी गयी।

उधर क़ातिल पर मुक़दमा पेश हुआ और फाँसी का हुक्म हो गया। सुबह के वक़्त क़ातिल को फाँसी के पास लाये। फाँसी देखते ही बदन के रोएँ खड़े हो गये। बड़ी हसरत के साथ बोला—सब भाइयों को सलाम। यह कह कर फाँसी की तरफ़ नज़र की और ये शेर पढ़े—

कोई दम कीजिए किसी तौर से आराम कहीं;
चैन देती ही नहीं गरदिशे अय्याम कहीं।
सैद लाग़र हूँ, मेरी जल्द ख़बर ले सैयाद;
दम निकल जाय तड़प कर न तहे दाम कहीं।

खोजी—क्यों मियाँ, शेर तो उसने कुछ बेतुके से पढ़े। भला इस वक़्त शेर का क्या ज़िक्र था।

आज़ाद—चुप भी रहो। उस बेचारे की जान पर बन आयी है, और तुमको मज़ाक़ सूझता है—

उन्हें कुछ रहम भी आता है या रब, वक़्ते खूँ-रेज़ी;
छुरी जब हल्क़े-आज़िज़ पर रवाँ जल्लाद करते हैं।

क़ातिल फाँसी पर चढ़ा दिया गया और लाश फड़कने लगी। इतने में लोगों ने देखा कि एक आदमी घोड़ा कड़कड़ाता सामने से आ रहा है। वह सीधा जेलखाने में दाखिल हुआ और चिल्ला कर बोला—खुदा के वास्ते एक मिनिट की मुहलत दो। मगर वहाँ तो लाश फड़क रही थी। यह देखते ही सवार धम से घोड़े से गिर पड़ा और रो कर बोला—यह तीसरा था। जेल के दारोग़ा ने पूछा—तुम कौन हो? उसने फिर आहिस्ता से कहा—यह तीसरा था। अब एक एक आदमी उससे पूछता है कि मियाँ, तुम कौन हो और रोक लो, रोक लो की आवाज़ क्यों दी थी? वह सबको यही जवाब देता है—यह तीसरा था।

आज़ाद—आपकी हालत पर अफ़सोस आता है।

सवार—भई, यह तीसरा था।

इनसान का भी अजब हाल है। अभी दो ही दिन हुए कि शहर भर इस क़ातिल के खून का प्यासा था। सब दुआ कर रहे थे कि इसके बदन को चील-कौए खायँ। वे भी इस बूढ़े की हालत देख कर रोने लगे। क़ातिल की बेरहमी याद न रही। सब लोग उस बूढ़े सवार से हमदर्दी करने लगे! आखिर, जब बूढ़े के होश-हवास दुरुस्त हुए, तो यों अपना क़िस्सा कहने लगा—

मैं क़ौम का पठान हूँ। तीन ऊपर सत्तर बरस का सिन हुआ। खुदा ने तीन बेटे दिये। तीनों जवान हुए और तीनों ने फाँसी पायी। एक ने एक क़ाफ़िले पर छापा मारा। उस तरफ़ लोग बहुत थे। काफ़िलेवालों ने उसे पकड़ लिया और अपने-आप एक फाँसी बना कर लटका दिया। जिस वक़्त उसकी लाश को फाँसी पर से उतारा मैं भी वहाँ जा पहुँचा। लड़के की लाश देख कर ग़श की नौबत आयी मगर चुप। अगर ज़रा उन लोगों को मालूम हो जाय कि यह उसका बाप है; तो मुझे भी जीता न छोड़ें। एकाएक किसी ने उनसे कह दिया कि यह उसका बाप है। यह सुनते ही दस-पंद्रह आदमी चिपट गये और आग जला कर मुझसे कहा कि अपने लड़के की लाश को इसमें जला। भाई, जान बड़ी प्यारी होती है। इन्हीं हाथों से, जिनसे लड़के को पाला था, उसे आग में जला दिया।

'अब दूसरे लड़के का हाल सुनिए—वह रावलपिंडी में राह-राह चला जाता था कि एक आदमी ने, जो घोड़े पर सवार था, उसको चाबुक से हटाया! उसने झल्ला कर तलवार म्यान से खींची और उसके दो टुकड़े कर डाले। हाकिम ने फाँसी का हुक्म दिया। और आज का हाल तो आप लोगों ने खुद ही देखा। इस लड़की के बाप ने क़रार किया था कि मेरे बेटे के साथ निकाह पढ़वावेगा। लड़के ने जब देखा कि यह दूसरे की बीबी बनी, तो आपे से बाहर हो गया!'

मियाँ आज़ाद और खोजी बड़ी हसरत के साथ वहाँ से चले।

खोजी—चलिए, अब किसी दूकान पर अफ़ीम खरीद लें।

आज़ाद—अजी, भाड़ में गयी आपकी अफ़ीम। आपको अफ़ीम की पड़ी है, यहाँ मारे ग़म के खाना-पीना भूल गये।

ख़ोजी—भई, रंज घड़ी दो घड़ी का है। यह मरना-जीना तो लगा ही रहता है।

दोनों आदमी बातें करते हुए जा रहे थे, तो क्या देखते हैं कि एक दूकान पर अफ़ीम झड़ाझड़ बिक रही है। ख़ोजी की बाँछें खिल गयीं, मुरादें मिल गयीं। जाते ही एक चवन्नी दूकान पर फेंकी। अफ़ीम ली, लेते ही घोली और घोलते ही गट-गट पी गये।

ख़ोजी—अब आँखें खुलीं।

आज़ाद—यों नहीं कहते कि अब आँखें बंद हुईं!

ख़ोजी—क्यों उस्ताद, जो हम हाकिम हो जायँ, तो बड़ा मजा आये। मेरा कोई अफ़ीमची भाई किसी को क़त्ल भी कर आये, तो बेदाग़ छोड़ दूँ।

आज़ाद—तो फिर निकाले भी जल्द जाइए।

दोनों आदमी यही बातें करते हुए एक सराय में जा पहुँचे। देखा, एक बूढ़ा हिंदू जमीन पर बैठा चिलम पी रहा है।

आज़ाद—राम-राम भई, राम-राम!

बूढ़ा—सलाम साहब, सलाम। सुथना पहने हो और राम-राम कहते हो?

आज़ाद—अरे भाई, राम और ख़ुदा एक ही तो हैं। समझ का फेर है। कहाँ जाओगे?

बूढ़ा—गाँव यहाँ से पाँच चौकी है। पहर रात का घर से चलेन, नहावा, पूजन कीन, चबेना बाँधा और ठंडे-ठंडे चले आयन। आज कचहरी माँ एक तारीख़ हती। साँझ ले फिर चले जाब। जमींदारी माँ अब कचहरी धावे के सेवाय और का रहिगा?

आज़ाद—तो जमींदार हो? कितने गाँव हैं तुम्हारे?

बूढ़ा—ऐ हजूर, अब यो समझो, कोइ दुइ हज़ार खरच-बरच करके बच रहत हैं।

आज़ाद ने दिल में सोचा कि दो हज़ार साल की आमदनी और बदन पर ढंग के कपड़े तक नहीं! गाढ़े की मिरज़ई पहने हुए है; इसकी कंजूसी का भी ठिकाना है? यह सोचते हुए दूसरी तरफ़ चले, तो देखा, एक क़ालीन बड़े तकल्लुफ़ से बिछा है और एक साहब बड़े ठाट से बैठे हुए हैं। जामदानी का कुरता, अद्धी का अँगरखा, तीन रुपये की सफ़ेद टोपी, दो-ढाई सौ की जेबघड़ी, उसकी सोने की ज़ंजीर गले में पड़ी हुई। क़रीब ही चार-पाँच भले आदमी और बैठे हुए हैं और दोसेरा तंबाकू उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने पूछा, तो मालूम हुआ, आप भी एक जमींदार हैं। पाँच-छह कोस पर एक क़सबे में मकान है। कुछ 'सीर' भी होती है। ज़मींदारी से सौ रुपए माहवार की बचत होती है।

आज़ाद—यहाँ किस ग़रज़ से आना हुआ।

रईस—कुछ रुपये क़र्ज़ लेना था, मगर महाजन दो रुपये सैकड़ा सूद माँगता है।

मियाँ आज़ाद ने जमींदार साहब के मुंशी को इशारे से बुलाया, अलग ले जा कर यों बातें करने लगे—

आज़ाद—हज़रत, हमारे ज़रिये से रुपया लीजिए। दस हज़ार, बीस हज़ार, जितना कहिए; मगर जागीर कुर्क करा लेंगे और चार रुपये सैकड़ा सूद लेंगे।

मुंशी—वाह! नेकी और पूछ-पूछ! अगर आप चौदह हज़ार भी दिलवा दें, तो बड़ा एहसान हो। और, सूद चाहे पाँच रुपए सैकड़ा लीजिए तो कोई परवा नहीं। सूद देने में तो हम आँधी हैं।

आज़ाद—बस, मिल चुका। यह सूद की क्या बात-चीत है भला? हम कहीं सूद लिया करते हैं? मुनाफ़ा नहीं कहते?

मुंशी – अच्छा हुजूर, मुनाफ़ा सही।

आज़ाद—अच्छा, यह बताओ कि जब सौ रुपये महीना बच रहता है, तो फिर चौदह हज़ार क़र्ज़ क्यों लेते हैं?

मुंशी—जनाब, आपसे तो कोई परदा नहीं। सौ पाते हैं, और पाँच सौ उड़ाते हैं। अच्छा खाना खाते हैं, बारीक और कीमती कपड़े पहनते हैं, यह सब आये कहाँ से? बंक से लिया, महाजनों से लिया; सब चौदह हज़ार के पेटे में आ गये। अब कोई टका नहीं देता।

आज़ाद दिल में उस बूढ़े ठाकुर का इन रईस साहब से मुक़ाबिला करने लगे। यह भी ज़मींदार, यह भी ज़मींदार; उनकी आमदनी डेढ़ सौ से ज़्यादा, इनकी मुश्किल से सौ; वह गाढ़े की धोती और गाढ़े की मिरज़ई पर खुश हैं और यह शरबती और जामदानी फड़काते हैं। वह ढाई तल्ले का चमरौधा जूता पहनते हैं, यहाँ पाँच रुपया की सलीमशाही जूतियाँ। वह पालक और चने की रोटियाँ खाते हैं और यह दो वक़्त शीरमाल और मुर्ग़पुलाव पर हाथ लगाते हैं, वह टके गज़ की चाल चलते हैं, यहाँ हवा के घोड़ों पर सवार। दोनों पर फटकार! वह कंजूस और यह फ़ज़ूलख़र्च। वह रुपये को दफ़न किये हुए, यह रुपये लुटाते फिरते हैं। वह खा नहीं सकते, तो यह बचा नहीं सकते।

शाम को दोनों आदमी रेल पर सवार हो कर पूना जा पहुँचे।

३३

रेल से उतर कर दोनों, आदमियों ने एक सराय में डेरा जमाया और शहर की सैर को निकले। यों तो यहाँ की सभी चीजें भली मालूम होती थीं, लेकिन सबसे ज़्यादा जो बात उन्हें पसंद आयी, वह यह थी कि औरतें बिला चादर और घूँघट के सड़कों पर चलती-फिरती थीं। शरीफ़ज़ादियाँ बेहिजाब नक़ाब उठाये; मगर आँखों में हया और शर्म छिपी हुई।

ख़ोजी—क्यों मियाँ, यह तो कुछ अजब रस्म है? ये औरतें मुँह खोले फिरती हैं। शर्म और हया सब भून खायी। वल्लाह, क्या आज़ादी है!

आज़ाद—आप ख़ासे अहमक़ हैं। अरब में, अजम में अफगानिस्तान में, मिसर में, तुर्किस्तान में, कहीं भी परदा है? परदा तो आँख का होता है। कहीं चादर हया सिखाती है? जहाँ घूँघट काढ़ा, और नज़र पड़ने लगी।

ख़ोजी—अजी, मैं दुनिया की बात नहीं चलाता। हमारे यहाँ तो कहारियाँ और मालिनें तक परदा करती हैं, न कि शरीफ़ज़ादियाँ ही! एक क़दम तो बेपरदे के जाती नहीं।

आज़ाद—अरे मियाँ, नक़ाब को शर्म से क्या सरोकार? आँख की हया से बढ़ कर कोई परदा ही नहीं; हमारे मुल्क में तो परदे का नाम नहीं; मगर हिंदुस्तान का तो बाबा आदम ही निराला है।

ख़ोज़ी—आपका मुल्क कौन? जरा आपके मुल्क का नाम तो सुनूँ।

आज़ाद—कश्मीर। वही कश्मीर जिसे शायरों ने दुनिया का फ़िरदौस माना है। वहाँ हिंदू-मुसलमान औरतें बुरक़ा ओढ़ कर निकलती हैं; मगर यह नहीं कि औरतें घर के बाहर क़दम ही न रखें। यह रोग तो हिंदुस्तान ही में फैला है! हम तो जब तुर्की से आयँगे, तो यहीं बिस्तर जमायेंगे और हुस्नआरा को साथ ले कर आज़ादी के साथ हवा खायँगे।

ख़ोजी—यार, बात तो अच्छी है, मगर मेरी बीबी तो इस लायक़ ही नहीं कि हवा खिलाने ले जाऊँ। कौन अपने ऊपर तालियाँ बजवाये? फिर अब तो बूढ़ी हुई और रंग भी ऐसा साफ़ नहीं।

आज़ाद—तो इसमें शरम की कौन सी बात है? आप उनके काले मुँह से झेंपते क्यों हैं?

ख़ोजी—जब हब्श जाऊँगा, तो वहाँ हवा खिलाऊँगा। आप नई रोशनी के लोग हैं। आपकी हुस्नआरा आपसे भी बढ़ी हुई, जो देखे फड़क जाय कि क्या चाँद-सूरज की जोड़ी है। ऐसी शक़्ल-सूरत हो, तो हवा खिलाने में कोई मुज़ायक़ा नहीं। हम अब क्या जोश दिखायें; न वह उमंग है, न वह तरंग।

आज़ाद—हम कहते हैं, बुआ ज़ाफ़रान को ब्याह लो और एक टट्टू ले दो। बस, इसी तरह वह भी बाज़ारों में हवा खायँ।

खोजी—(कान पकड़ कर) या खुदा, बचाइयो। पीच पी, हज़ार निआमत खायी। मारे चपतों के खोपड़ी गंजी कर दी थी। क्या वह भूल गया?

आज़ाद—यहाँ से बंबई भी तो क़रीब है।

खोजी—अरे ग़ज़ब! क्या जहाज़ पर बैठना होगा? तो भई, मेरे लिए अफ़ीम ले दो।

पूने से बंबई तक दिन में कई गाड़ियाँ जाती थीं। दोनों आदमियों ने सराय में पहुँच कर खाना खाया और बंबई रवाना हुए। शाम हो गयी थी। एक होटल में जा कर ठहरे। आज़ाद तो दिन भर के थके हुए थे, लेटते ही खर्राटे लेने लगे। खोजी अफ़ीमची आदमी, नींद कहाँ? इसी फ़िक्र में बैठे हुए थे कि नींद को क्योंकर बुलाऊँ। इतने में क्या देखते हैं कि एक लंबी-तड़ंगी, पँचहत्थी औरत चमकती-दमकती चली आती है। पूरे सात फुट का क़द, न जौ-भर कम, न जौ-भर ज़्यादा। धानी चादर ओढ़े, इठला-इठला कर चलती हुई मियाँ खोजी के पास आ कर खड़ी हो गयी। खोजी ने उसकी तरफ़ नज़र डाली, तो उसने एक तीखी चितवन से उनको देखा और आगे चली। आपको शरारत जो सूझी तो सीटी बजाने लगे। सीटी की आवाज़ सुनते ही वह इनकी तरफ़ झुक पड़ी और छमाछम करती हुई कमरे में चली आयी। अब मियाँ खोजी के हवास पैतरे हुए कि अगर आज़ाद की आँख खुल गयी, तो ले ही डालेंगे; और जो कहीं रीझ गये, तो हमारी ख़ैरियत नहीं। हम बस, नीबू और नोन चाट कर रह जायँगे। इशारे से कहा—जरी आहिस्ता बोलो।

औरत—अरे वाह मियाँ! अच्छे मिले।

खोजी—मियाँ आज़ाद सोये हुए हैं।

औरत—इनका बड़ा लिहाज़ करते हो; क्या बाप हैं तुम्हारे?

खोजी—खुदा के वास्ते चुप भी रहो।

औरत—चलो, हम-तुम दूसरी कोठरी में चल कर बैठें।

दोनों पास की एक कोठरी में जा बैठे। औरत ने अपना नाम केसर बतलाया और बोली—अल्लाह जानता है, तुम पर मेरी जान जाती है। खुदा की क़सम, क्या हाथ-पाँव पाये हैं कि जी चाहता है, चूम लूँ। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

खोजी—(अकड़ कर) अभी क्या, जवानी में देखना हमको!

क्या खूब अभी जवानी शायद आनेवाली है। कुछ ऊपर पचास का सिन हुआ, और आप अभी लड़के ही बने हुए हैं। उस औरत ने आपको उँगलियों पर नचाना शुरू किया, लेकिन आप समझे कि सचमुच रीझ ही गयी और भी बफलने लगे।

औरत—डील-डौल कितना प्यारा है कि जी खुश हो गया। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

खोजी—अगर मैं कसरत करूँ, तो अच्छे-अच्छे पहलवानों को लड़ा दूँ।

औरत—ज़रा कान तो फटफटा लो, शाबाश !

खोजी—एक बात कहूँ, बुरा तो न मानोगी ?

औरत—बुरा मानूँगी, तो ज़रा खोपड़ी सहला दूँगी

खोजी—जाँबख़्शी करो, तो कहूँ ।

औरत—(चपत लगा कर) क्या कहता है, कह ।

खोजी—भई, यह धौल-धप्पा शरीफ़ों में जायज़ नहीं ।

औरत—तुझ मुए को कौन निगोड़ी शरीफ़ समझती है ।

एक चपत और पड़ी । खोजी ने त्योरियाँ बदल कर कहा—भई, आदत मुझे पसंद नहीं । मुझे भी ग़ुस्सा आ जायगा ।

औरत—आँखें क्या नीली-पीली करता है ? फोड़ दूँ दोनों आँखें ?

खोजी—अब हमारा मतलब तो इस झंझट में ख़ब्त हुआ जाता है । अब तो बताओ, कुछ माँगें, तो दोगी ?

औरत—हाँ, क्यों नहीं, एक लप्पड़ इधर और दूसरा उधर । क्या माँगते हो ?

खोजी—कहना यह है कि...मगर कहते हुए दिल काँपता है ।

औरत—अब मैं तुमको ठीक न बनाऊँ कही ?

खोजी—तुम्हारे साथ ब्याह करने को जी चाहता है ।

औरत—ऐ, अभी तुम बच्चे हो । दूध के दाँत तक तो टूटे नहीं । ब्याह क्या करोगे भला ?

खोजी—वाह-वाह ! मेरे दो बच्चे खेलते हैं । अभी तक इनके नज़दीक लौंडे ही हैं हम ।

औरत—अच्छा, कुछ कमाई-वमाई तो निकाल, और दाढ़ी मुड़वा ।

खोजी—(दस रुपये दे कर) लो, यह हाज़िर है ।

औरत—देखूँ । ऊँह, हाथी के मुँह में जीरा !

खोजी—लो, यह पाँच और लो । अजी, मैं तुमको बेगम बना कर रखूँगा ।

औरत—अच्छा, एक शर्त से शादी करूँगी । तड़के उठ के मुझे सात बार सलाम करना और मैं सात चपतें लगाऊँगी ।

खोजी—अजी, बल्कि और दस ।

औरत—अच्छा, इसी बात पर कुछ और निकालो ।

खोजी—लो, यह पाँच और लो । तुम्हारे दम के लिए सब कुछ हाजिर है ।

औरत ने झट से मियाँ खोजी को गोद में उठा लिया और बगल में दबा कर ले चली, तो ख़ोजी बहुत चकराये । लाख हाथ-पाँव मारे, मगर उसने जो दबाया, तो इस तरह ले चली, जैसे कोई चिड़ीमार जानवरों को फड़फड़ाते हुए ले चले । अब सारा ज़माना देख रहा है कि ख़ोजी फड़कते हुए जाते हैं और वह औरत छम-छम करती चली जाती है ।

खोजी—अब छोड़ती है, या नहीं ?

औरत—अब उम्र-भर तो छोड़ने का नाम न लूँगी। हम भलेमानसों की बहू-बेटियाँ छोड़ देना क्या जानें। बस, एक के सिर हो रहीं। भागे कहाँ जाते हो मियाँ।

खोजी—मैं कुछ क़ैदी हूँ?

औरत—(चपत लगा कर) और नहीं, कौन है तू? अब मैं कहीं जाने भी दूँगी?

खोजी पीछे हटने लगे, तो उसने पट्टे पकड़ कर खूब बेभाव की लगायी। अब यह झल्लाये और गुल मचाया कि कोई है? लाना क़रौली? बहुत से तमाशाई खड़े हँस रहे थे।

एक—क्या है मियाँ? यह धर पकड़ कैसी?

औरत—आप कोई क़ाज़ी हैं? यह हमारे मियाँ हैं; हम चाहे चपतियायें चाहे पीटें! किसी को क्या?

दूसरा—मेहरारू गर्दन दाबे उठाये लिये जात है, वह क़रौली निकारत है।

खोजी—बुरे फँसे! यारो, ज़रा मियाँ आज़ाद को सराय से बुलाना।

औरत ने फिर खोजी को गोद में उठाया और मशक की तरह पीठ पर रख कर 'मसक दरियाव, ठंडा पानी' कहती हुई ले चली।

एक आदमी—कैसे मर्द हो जी! औरत से जीत नहीं पाते? बस, इज्ज़त डुबो दी बिलकुल।

खोजी—अजी, इस औरत पर शैतान की फटकार। यह तो मरदों के कान काटती है।

इतने में मियाँ आज़ाद की नींद खुली, तो खोजी ग़ायब। बाहर निकले, तो देखा खोजी को एक औरत दबाये खड़ी है। ललकार कर कहा—तू कौन है! उन्हें छोड़ती क्यों नहीं?

औरत ने खोजी को छोड़ दिया और सलाम करके बोली—हुज़ूर, मेरा इनाम हुआ। मैं बहुरुपिया हूँ।

दूसरे दिन खोजी मियाँ आज़ाद के साथ शहर की सैर करने चले, तो शहर भर के लौंडे-लहाड़िये साथ, पीछे-पीछे तालियाँ बजाते जाते हैं। एक बोला—कहो चड्ढा, बीबी ने चाँद गंजी कर दी न? हत् तेरे की! दूसरा बोला—कहो उस्ताद, खोपड़ी का क्या रंग है?

बेचारे खोजी को रास्ता चलना मुश्किल हो गया। दो-चार आदमियों ने बहुरुपिये की तारीफ़ की, तो खोजी जल-भुन कर खाक़ हो गये। अब किसी से न बोलते हैं, न चालते। दुम दबाये, डग बढ़ाये, गर्दन, झुकाये पत्तातोड़ भाग रहे हैं। बारे खुदा-खुदा करके दोपहर को फिर सराय में आये। नीम की ठंडी-ठंडी छाँह में लेट गये, तो एक भठियारी ने मुसकिरा के कहा—गाज पड़े ऐसी औरत पर, जो मियाँ को गोद में उठाये और बाज़ार भर में नचाये। ग़रज़ सराय की भठियारियों ने खोजी को ऐसा उँगलियों पर नचाया कि खुदा की पनाह! ऐसे झेंपे कि क़रौली तक भूल गये।

इतने में क्या देखते हैं कि एक लम्बे डील-डौल का खूबसूरत जवान तमंचा

कमर से लगाये, ऊदी पगड़ी सिर पर जमाये, बाँकी-तिरछी छवि दिखाता हुआ अकड़ता चला आता है। भठियारियाँ छिप-छिप के झाँकने लगीं। समझीं कि मुसाफिर, है, बोलीं—मियाँ, इधर आओ, यहाँ बिस्तर जमाओ। मियाँ मुसाफिर, देखो, कैसा साफ-सुथरा मकान है! पकरिया की ठंडी-ठंडी छाँह है, ज़रा तो तकलीफ़ होगी नहीं। सिपाही बोला—हमें बाज़ार से कुछ सौदा खरीदना है। कोई हमारे साथ चले, तो सौदा खरीद कर हम आ जायँ। एक भठियारी बोली—चलिए, हम चलते हैं। दूसरी बोली—लौंडी हाज़िर है। सिपाही ने कहा—मैं किसी परायी औरत को नहीं ले जाना चाहता। कोई पढ़ा-लिखा मर्द चले, तो पाँच रुपये दें। मियाँ खोजी के कान में जो भनक पड़ी, तो कुलबुला कर उठ बैठे और कहा—मैं चलता हूँ, मगर पाँचों नक़द गिनवा दीजिए। मैं अलसेट से डरता हूँ। सिपाही ने झट से पाँचों गिन दिये। रुपये तो खोजी ने टेंट में रखे और सिपाही के साथ चले। रास्ते में जो इन्हें देखता है, क़हक़हा लगाता है—बचा की खोपड़ी जानती होगी, छठी का दूध याद आ गया होगा! जब चारों ओर से बौछारें पड़ने लगीं तो खोजी बहुत ही झल्लाये और गुल मचा कर एक-एक को डाँटने लगे। चलते-चलते एक अफ़ीम की दूकान पर पहुँचे।

सिपाही—कहो भई जवान, है शौक़? पिलवाऊँ?

खोजी—अजी, मैं तो इस पर आशिक़ हूँ।

सिपाही ने मियाँ खोजी को खूब अफ़ीम पिलायी। जब खूब सरूर गँठे तो सिपाही ने उनको साथ लिया और चला। बातें होने लगीं। खोजी बोले—भई, अफ़ीम पिलायी है, तो मिठाई भी खिलवाओ। एहसान करे, तो पूरा।

सिपाही—अजी, अभी लो। ये चार गंडे की पँचमेल मिठाई हलवाई की दूकान से लाओ।

हलवाई की दूकान से खोजी ने लड़-लड़ के खूब मिठाई ली और झूमते हुए चले। भूख के मारे रास्ते ही में डलियाँ निकाल कर चखनी शुरू कर दीं। सिपाही कनखियों से देखता जाता था; मगर आँख चुरा लेता था। आखिर दोनों आदमी एक बज़ाज़ की दूकान पर पहुँचे। सिपाही ने खोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इनके अँगरखे के बराबर जामदानी निकाल दीजिए।

बज़ाज़—हुज़ूर, अपने अँगरखे के लिए लें, तो कुछ हमें भी मिल रहे। इनका तो अँगरखा और पाजामा सब गज़ भर में तैयार है।

खोजी—निकालो, जामदानी निकालो। बहुत बातें न बनाओ। अभी एक धक्का दूँ, तो पचास लुढ़कनियाँ खाओ।

बज़ाज़—लीजिए, क्या जामदानी है। बहुत बढ़िया! मोल तोल दस रुपये गज। मगर सात रुपये गज़ से कौड़ी कम न होगी।

सिपाही—भई, हम तो पाँच रुपये के दाम देंगे।

बज़ाज़—अब तकरार कौन करे। आप छह के दाम दे दें।

सिपाही—अच्छा, दो गज़ उतार दो।

सिपाही ने बज़ाज से सब मिला कर कोई पचीस रुपये का कपड़ा लिया और गट्ठा बाँध कर उठ खड़ा हुआ।

बज़ाज़—रुपये ?

सिपाही—अभी घर से आकर देंगे ! ज़रा कपड़े पसंद तो करा लायें। यह हमारा साला बैठा है, हम अभी आये।

वह तो ले-दे कर चल दिया। खोजी अकेले रह गये। जब बहुत देर हो गयी, तो बज़ाज़ ने गर्दन नापी—कहाँ चले आप ! कहाँ, चले कहाँ ?

खोजी—हम क्या किसी के गुलाम हैं ?

बज़ाज़—गुलाम नहीं हो तो और हो कौन ! तुम्हारे बहनोई तुमको बिठा कर कपड़ा ले गये हैं।

खोजी पीनक से चौंके थे। सिपाही और बज़ाज़ में जब बातें हो रही थीं तब वह पीनक में थे। झल्ला कर बोले—अबे किसका बहनोई ? और कौन साला ? कुछ वाही हुआ है ?

इतने में एक आदमी ने आ कर खोजी से कहा—तुम्हारे बहनोई तुम्हें यह खत दे गये हैं। खोजी ने खोल कर पढ़ा तो लिखा था—

'हत् तेरे की, क्यों ? खा गया न झाँसा ? देख, अबकी फिर फाँसा। तब की बीबी बनके चपतियाया, अब की बहनोई बनके झाँसा दिया। और अफ़ीम खाओगे ?'

खोजी 'अरे !' करके रह गये। वाह रे बहुरुपिये, अच्छा घनचक्कर बनाया। ख़ैर, और तो जो हुआ, वह हुआ, अब यहाँ से छुटकारा कैसे हो। बज़ाज इस दम टुटरूँ-टूँ, और क़रौली पास नहीं। मगर एक दफ़े रोब जमाने की ठानी। दूकान के नीचे उतर कर बोले—इस फेर में भी न रहना ! मैंने बड़े-बड़ों की गर्दनें ढीली कर दी हैं।

बज़ाज़—यह रोब किसी और पर जमाइएगा। जब तक आप के बहनोई न आयेंगे, दूकान से हिलने न दूँगा।

बारे थोड़ी ही देर में एक आदमी ने आ कर बज़ाज़ को पचीस रुपये दिये और कहा—अब इनको छोड़ दीजिए।

३४

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर आज़ाद से एक आदमी ने आकर कहा—जनाब, आज मेला देखने न चलिएगा ? वह-वह सूरतें देखने में आती हैं कि देखता ही रह जाय।

नाज़ से पायँचे उठाये हुए, शर्म से जिस्म को चुराये हुए !
नशए-बादए शबाब से चूर, चाल मस्ताना, हुस्न पर मग़रूर।
सैकड़ों बल कमर को देती हुई, जाने ताऊस कब्क लेती हुई।

चलिए और मियाँ ख़ोजी को साथ लीजिए। आज़ाद रँगीले थे ही, चट तैयार हो गये। सज-धज कर अकड़ते हुए चले। कोई पचास क़दम चले होंगे कि एक झरोखे से आवाज़ आयी—

ख़ुदा जाने यह आराइश करेगी क़त्ल किस-किसको;
तलब होता है शानः आइने को याद करते हैं।

मियाँ आज़ाद ने जो ऊपर नज़र की, तो झरोखे का दरवाज़ा ख़ोजी की आँख की तरह बंद हो गया। आज़ाद हैरान कि ख़ुदा, यह माजरा क्या है ? यह जादू था, छलावा था, आख़िर था क्या ? आज़ाद के साथी ने यह रंग देखा, तो आहिस्ते से कहा—हज़रत, इस फेर में न पड़िएगा।

इतने में देखा कि वह नाज़नीन फिर नक़ाब उठाये झरोखे पर आ खड़ी हुई और अपनी महरी से बोली—फीनस तैयार कराओ, हम मेले जायँगे।

आज़ाद कुछ कहनेवाले ही थे कि ऊपर से एक काग़ज़ नीचे आया। आज़ाद ने दौड़ कर उठाया, तो मोटे क़लम से लिखा था—

'दिल्लगी करती हैं परियाँ मेरे दीवाने से'।

आज़ाद पढ़ते ही उछल पड़े। यह शेर पढ़ा—

'हम ऐसे हो गये अल्लाहो-अकबर ! ऐ तेरी क़ुदरत;
हमारे नाम से अब हाथ वह कानों पै धरते हैं।'

इतने में एक महरी अंदर से आयी और मुसकिरा कर मियाँ आज़ाद को इशारे से बुलाया। आज़ाद ख़ुश-ख़ुश महताबी पर पहुँचे, तो दिल बाग़ बाग़ हो गया। देखा, एक हसीना बड़े ठाट-बाट से एक कुर्सी पर बैठी है। मियाँ आज़ाद को कुर्सी पर बैठने का इशारा किया और बोली—मालूम होता है, आप चोट खाये हैं; किसी के ज़ुल्फ़ में दिल फँसा है—

खुलते हैं कुछ इश्तियाक़ के तौर;
रुख़ मेरी तरफ़, नज़र कहीं और।

आज़ाद ने देखा तो इस नाज़नीन की शक्ल व सूरत हुस्नआरा से मिलती थी।

वही सूरत, वही गुलाब सा चेहरा ! वही नशीली आँखें ! बाल बराबर भी फ़र्क़ नहीं। बोले—बरसों इस कूचे की सैर की; मगर अब दिल फँसा चुके।

हसीना—तो बिसमिल्लाह, जाइए।

आज़ाद—जैसी हुज़ूर की मरज़ी।

हसीना—वाह री, बददिमाग़ी ! कहिए, तो आपका कच्चा चिट्ठा कह चलूँ ? मियाँ आज़ाद आप ही का नाम है न ? हुस्नआरा से आप ही की शादी होनेवाली है न ?

आज़ाद—ये बातें आपको कैसे मालूम हुईं ?

हसीना—क्यों, क्या पते की कही ! अब बता ही दूँ ? हुस्नआरा मेरी छोटी चचाज़ाद बहन है। कभी-कभी ख़त आ जाता है। उसने आपकी तसवीर भेजी है और लिखा है कि उन्हें बंबई में रोक लेना। अब आप हमारे यहाँ ठहरें। मैं आपको आज़माती थी कि देखूँ, कितने पानी में हैं। अब मुझे यक़ीन आ गया कि हुस्नआरा से आपको सच्ची मुहब्बत है।

आज़ाद—तो फिर मैं यहीं उठ आऊँ ?

हसीना—ज़रूर।

आज़ाद—शायद आपके घर में किसी को नागवार गुज़रे ?

हसीना—वाह, आप ख़ूब जानते हैं कि कोई शरीफ़ज़ादी किसी अजनबी आदमी को इस तरह बेधड़क अपने यहाँ न बुलायेगी। क्या मैं नहीं जानती कि तुम्हारे भाई साहब किसी ग़ैर आदमी को बैठे देखेंगे, तो उनकी आँखों से ख़ून टपकने लगेगा ? मगर वह तो ख़ुद इस वक़्त तुम्हारी तलाश में निकले हैं। बहुत देर से गये हुए हैं, आते ही होंगे। अब आप मेरे आदमी को भेज दीजिए। आपका असबाब ले आये।

आज़ाद ने ख़ोजी के नाम यह रुक़्क़ा लिखा—

ख़्वाजा साहब,

असबाब ले कर इस आदमी के साथ चले आइए। यहाँ इत्तिफ़ाक़ से हुस्नआरा की बहन मिल गयीं। यार, हम-तुम दोनों है क़िस्मत के धनी। यहाँ अफ़ीम की दूकान भी क़रीब ही है।

तुम्हारा

आज़ाद।'

३५

खोजी ने दिल में ठान ली कि अब जो आयेगा, उसको खूब ग़ौर से देखूँगा। अब की चकमा चल जाय, तो टाँग की राह निकल जाऊँ। दो दफ़े क्या जानें, क्या बात हो गयी कि वह चकमा दे गया। उड़ती चिड़िया पकड़नेवाले हैं। हम भी अगर यहाँ रहते होते, तो उस मरदूद बहुरुपिये को चचा ही बना कर छोड़ते

इतने में सामने एकाएक एक घसियारा घास का गट्ठा सिर पर लादे, पसीने में तर आ खड़ा हुआ और खोजी से बोला—हुजूर, घास तो नहीं चाहिए ?

खोजी—(खूब ग़ौर से देख कर) चल, अपना काम कर। हमें घास-वास कुछ नहीं चाहिए। घास कोई और खाते होंगे।

घसियारा—ले लीजिए हुजूर, हरी हरी दूब है।

खोजी—चल बे चल, हम पहचान गये। हमसे बहुत चकमेबाज़ी न करना बचा। अब की पलेथन ही निकाल डालूँगा। तेरे बहुरुपिये की दुम में रस्सा।

इत्तिफ़ाक़ से घसियारा बहरा था। वह समझा, बुलाते हैं। इनकी तरफ़ आने लगा। तब तो मियाँ खोजी ग़ुस्सा जब्त न कर सके और चिल्ला उठे—ओ गीदी, बस, आगे न बढ़ना; नहीं तो सिर धड़ से जुदा होगा। यह कह कर लपके और गट्ठा पकड़ कर चाहा कि घसियारे को चपत लगावें। उसने जो छुड़ाने के लिए ज़ोर किया, तो मियाँ खोजी मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे और गट्ठा उनके ऊपर गिर पड़ा। तब आप गट्ठे के नीचे से गुर्राने लगे—अबे ओ गीदी, इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि छठी का दूध याद आ जायगा। बदमाश ने नाकों दम कर दिया। बारे बड़ी मुश्किल से आप गट्ठे के नीचे से निकले और मुँह फुलाये बैठे थे कि आज़ाद का आदमी आ कर बोला—चलिए, आपको मियाँ आज़ाद ने बुलाया है।

खोजी—किससे कहता है ? कंबख़्त अब की सँदेसिया बन कर आया ! तब की घसियारा बना था। पहले औरत का भेस बदला ! फिर सिपाही बना। चल, भाग।

आदमी—रुक्का तो पढ़ लीजिए।

खोजी—मैं जलती-बलती लकड़ी से दाग दूँगा, समझे ? मुझे कोई लौंडा मुक़र्रर किया है ? तेरे जैसे बहुरुपिये यहाँ जेब में पड़े रहते हैं।

आदमी ने जा कर आज़ाद से सारा हाल कहा—हुजूर, वह तो कुछ झल्लाये से मालूम होते हैं। मैं लाख-लाख कहा किया, उन्होंने एक तो सुनी नहीं। बस, दूर ही दूर से गुर्राते रहे।

आज़ाद—ख़त का जवाब लाये ?

आदमी—ग़रीबपरवर, कहता जाता हूँ कि क़रीब फटकने तो दिया नहीं जवाब किससे लाता ?

ये बातें हो ही रही थीं कि उस हसीना के शौहर आ पहुँचे और कहने लगे—शहर भर घूम आया, सैकड़ों चक्कर लगाये, मगर मियाँ आज़ाद का कहीं पता न चला। सराय में गया, तो वहाँ खबर मिली कि आये हैं। एक साहब बैठे हुए थे, उनसे पूछा तो बड़ी दिल्लगी हुई। ज्यों ही मैं क़रीब गया, तो वह कुलबुला कर उठ खड़े हुए—कौन ? आप कौन ? मैंने कहा—यहाँ मियाँ आज़ाद नामी कोई साहब तशरीफ़ लाये हैं ? बोले—फिर आपसे वास्ता ? मैंने कहा—साहब, आप तो काटे खाते हैं ! तो मुझे ग़ौर से देख कर बोले—इस बहुरुपिये ने तो मेरी नाक में दम कर दिया। आज भलेमानस की सूरत बना कर आये हैं।

बेगम—जरी ऊपर आओ देखो, हमने मियाँ आज़ाद को घर बैठे बुलवा लिया। न कहोगे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

मिरज़ा—हज़रत, आपको देखने के लिए आँखें तरसती थीं।

आज़ाद—मेरी वजह से आपको बड़ी तकलीफ़ हुई।

मिरज़ा—जनाब, इसका ज़िक्र न कीजिए। आपसे मिलने की मुद्दत से तमन्ना थी।

उधर मियाँ खोजी अपने दिल में सोचे कि बहुरुपिये को कोई ऐसा चमका देना चाहिए कि वह भी उम्र भर याद करे। कई घंटे तक इसी फ़िक्र में ग़ोते खाते रहे। इतने में मिरज़ा साहब का आदमी फिर आया। खोजी ने उससे खत ले कर पढ़ा, तो लिखा था—आप इस आदमी के साथ चले आइए, वर्ना बहुरुपिया आपको फिर धोखा देगा। भाई, कहा मानो, जल्द आओ। खोजी ने आज़ाद की लिखावट पहचानी, तो असबाब वग़ैरह समेट कर खिदमतगार के सिपुर्द किया और कहा—तू जा, हम थोड़ी देर में आते हैं। खिदमतगार तो असबाब ले कर उधर चला, इधर आप बहुरुपिये के मकान का पता पूछते हुए जा पहुँचे। इत्तिफ़ाक से बहुरुपिया घर में न था, और उसकी बीबी अपने मैके भेजने के लिए कपड़ों का एक पार्सल बना रही थी। तीस रुपये की एक गड्डी भी उसमें रख दी थी। पार्सल तैयार हो चुका, तो लौंडी से बोली—देख, कोई पढ़ा-लिखा आदमी इधर से निकले, तो इस पार्सल पर पता लिखवा लेना। लौंडी राह देख रही थी कि मियाँ खोजी जा निकले।

खोजी—क्यों नेकबख्त, ज़रा पानी पिला दोगी ?

लौंडी यह सुनते ही फूल गयी। खोजी की बड़ी खातिरदारी की, पान खिलाया, हुक्का पिलाया और अंदर से पार्सल ला कर बोली—मियाँ, इस पर पता तो लिख दो।

खोजी—अच्छा, लिख दूँगा। कहाँ जायगा ? किसके नाम है ? कौन भेजता है ?

लौंडी—मैं बीबी से सब हाल पूछ आऊँ, बतलाऊँ।

खोजी—अच्छी बात है, जल्द आना।

लौंडी दौड़ कर पूछ आयी और पता-ठिकाना बताने लगी।

खोज़ी चकमा देने तो गये ही थे, झट पार्सल पर अपना लखनऊ का पता लिख दिया और अपनी राह ली। लौंडी ने फ़ौरन डाकखाने में पार्सल दिया और

रजिस्ट्री कराके चलती हुई। थोड़ी देर के बाद बहुरुपिया जो घर में घुसा, तो बीबी ने कहा—तुम भी बड़े भुलक्कड़ हो। पार्सल पर पता तो लिखा ही न था। हमने लिखवा कर भेज दिया।

बहुरुपिया—देखूँ, रसीद कहाँ है? (रसीद पढ़ कर) ओफ़! मार डाला। बस, ग़ज़ब ही हो गया।

बीबी—खैर तो है!

बहुरुपिया—तुमसे क्या बताऊँ? यह वही मर्द है, जिससे मैंने कई रुपये ऐंठे थे। बड़ा चकमा दिया।

३६

मियाँ आज़ाद मिरज़ा साहब के साथ जहाज़ की फ़िक्र में गये। इधर ख़ोजी ने अफ़ीम की चुस्की लगायी और पलँग पर दराज़ हुए। जैनब लौंडी जो बाहर आयी, तो हज़रत को पीनक में देख कर ख़ूब खिलखिलायी और बेगम से जाकर बोली—बीबी, जरी परदे के पास आइए, तो लोट-लोट जाइए। मुआ ख़ोजी अफ़ीम खाये औंधे मुँह पड़ा हुआ है। जरी आइए तो सही। बेगम ने परदे के पास से झाँका, तो उनको एक दिल्लगी सूझी। झप से एक बत्ती बनायी और जैनब से कहा कि ले, चुपके से इनकी नाक में बत्ती कर। जैनब एक ही शरीर; बिस की गाँठ। वह जा कर बत्ती में तीता मिर्च लगा लायी और ख़ोजी की खटिया के नीचे घुस कर मियाँ ख़ोजी की नाक में आधी बत्ती दाख़िल ही तो कर दी। उफ़! इस वक़्त मारे हँसी के लिखा नहीं जाता। ख़ोजी जो कुल बुला कर उठे, तो आःछीं, छीं-छीं, ओ गेद—अःछीः। ओ गीदी कहने को थे कि छींक आ गयी, और बिगड़े। ओ ना—आछ। ओ नामा-कूल कहने को थे कि छींक ने ज़बान बंद कर दी। इत्तिफ़ाक़ से पड़ोस में एक पुराने फैशन के भले आदमी नौकरी की तलाश में एक हाकिम के पास जानेवाले थे। वह जैसे ही सामने आये, वैसे ही ख़ोजी ने छींका। बेचारे अंदर चले गये। पान खाया, ज़रा देर इधर-उधर टहले। फिर ड्योढ़ी तक पहुँचे कि छींक पड़ी। फिर अंदर गये। चिकनी डली खायी। रवाना होने ही को थे कि इधर आःछीं की आवाज़ आयी और उधर बीबी ने लौंडी दौड़ायी कि चलिए, अंदर बुलाती हैं। अंदर जाके उन्होंने जूते बदले, पानी पिया और रुख़्सत हुए। बाहर आ कर इक्के पर बैठने ही को थे कि ख़ोजी ने नाक की दुनाली बंदूक से एक और फ़ैर दाग़ दी। तब तो बहुत ही झल्लाये। हत् तेरी नाक काटूँ और पाऊँ तो कान भी साफ़ कतर लूँ। मर्दक ने मिर्चों की नास ली है क्या? नाक क्या नकछींकनी की झाड़ी है। मनहूस ने घर से निकलना मुश्किल कर दिया। बीबी अंदर से बोली कि नाक ही कटे मुए की। ज़री जैनब को बुला कर पूछो तो कि यह किस नकटे को बसाया है? अल्लाह करे, गधे की सवारी नसीब हो।

मियाँ-बीबी पानी पी-पी कर बेचारे को कोस रहे थे। उधर ख़ोजी का छींकते-छींकते हुलिया बिगड़ रहा था। बेगम साहबा घर के अंदर हँसी के मारे लोटी पड़ती थीं। मगर वाह री जैनब! वह दम साधे अब तक चारपाई के नीचे दबकी पड़ी थी। मगर मारे हँसी के बुरा हाल था। जब छींकों का ज़ोर ज़रा कम हुआ, तो उन्होंने गुल मचाया, ओ गीदी, भला वे बहुरुपिये, निकाली न कसर तूने! अच्छा बचा, चचा ही बना कर छोड़ूँ तो सही। चारपाई से उठे, मुँह-हाथ धोया। ठंडे-ठंडे पानी से ख़ूब तरेड़े दिये; खोपड़ी पर ख़ूब पानी डाला, तब ज़रा तसकीन हुई। बैठ कर बहु-

रुपिये को कोसने लगे—खुदा करे, साँप काटे मरदूद को। न जाने मेरे साथ क्या ज़िद पड़ गयी है। कल तेरे छप्पर पर चिनगारी न रख दी, तो कहना।

यों कोसते हुए उन्होंने सब दरवाज़े बंद कर लिये कि बहुरुपिया फिर न आ जाय। अब तो जैनब चकरायी। कलेजा धक-धक करने लगा और क़रीब था कि चीख कर निकल भागे, मगर जब मियाँ खोजी चारपाई पर दराज़ हो गये और नाक पर हाथ रख लिया, तो जैनब की जान में जान आयी। चुपके से खिसकती हुई निकली और अंदर भागी।

बेगम—जाओ, फिर नाक में बत्ती करो।

जैनब—ना बीबी, अब मैं नहीं जाने की। सिड़ी-सौदाई आदमी के मुँह कौन लगे।

जैनब का देवर दस बरस का छोकड़ा बड़ा ही शरीर था। नस-नस में शरारत भरी हुई थी। कमरे में जाके झाँका, तो देखा, हज़रत पीनक ले रहे हैं। कुत्ता घर में बँधा था। झट उसको ज़ंजीर से खोल ज़ंजीर में रस्सी बाँधी और बाहर ले जा कर चारपाई के पाये में कुत्ते को बाँध दिया। खोजी की टाँग में भी वही रस्सी बाँध दी और चंपत हो गया। कुत्ते ने जो भूँकना शुरू किया, तो खोजी चौंक कर उठे। देखते हैं तो टाँग में रस्सी और रस्सी में कुत्ता। अब इधर खोजी चिल्लाते हैं, उधर कुत्ता चिल्ल-पों मचाता है। जैनब दौड़ी हुई घर में से आयी। खैर तो है! क्या हुआ? अरे, तुम्हारी टाँग में कुत्ता कौन बाँध गया?

खोजी—यह उसी बहुरुपिये मर्दक का काम है, किसी और को क्या पड़ी थी?

जैनब—मगर, मुआ आया किधर से? किवाड़े तो सब बंद पड़े हुए हैं।

खोजी—यही तो मुझे भी हैरत है। मगर अब की मैंने भी नाक पर इस ज़ोर से हाथ रखा कि बहुरुपिया भी मेरा लोहा मान गया होगा। मगर यह तो सोचो कि आया किस तरफ़ से?

जैनब—मियाँ, कहते डर मालूम होता है। इस जगह एक शैतान रहता है।

खोजी—शैतान! अजी नहीं, यह उस बहुरुपिये ही का काम है।

जैनब—अब तुम यों थोड़े ही मानोगे। एक दिन शैतान चारपाई उलट देगा, तो मालूम होगा।

खोजी—यह बात थी, तो अब तक हमसे क्यों न कहा भला! जान लेगी किसी की?

जैनब—मैं भी कहूँ कि बंद दरवाज़े से कुत्ता आया कैसे? मेरा माथा ठनका था, मुदा बोली नहीं।

खोजी—अब आज़ाद आयें, तो उनको आड़े हाथों लूँ। वह भूत चुड़ैल एक के भी क़ायल नहीं। सोयें तो मालूम हो।

खोजी तो इसी फ़िक्र में बैठे-बैठे पीनक लेने लगे। आज़ाद और मिरज़ा साहब आये, तो उन्हें ऊँघते देख कर दोनों हँस पड़े।

आज़ाद—(खोजी के कान में) क्या पहुँच गये?

खोजी ने हाँक लगायी—'बहुरुपिया, बहुरुपिया', और इस ज़ोर से आज़ाद का हाथ पकड़ लिया कि अपने हिसाब चोर को गिरफ़्तार किया था। आँखें तो हज़रत की बंद हैं, मगर बहुरुपिया बहुरुपिया गुल मचाते जाते हैं। मियाँ आज़ाद ने इस ज़ोर से झटका दिया कि हाथ छूट गया और खोजी फट से मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे। आज़ाद ने गुल मचाया कि भागा, भागा, वह बहुरुपिया भागा जाता है। खोजी भी 'लेना-लेना' कहते हुए लपके। दस ही पाँच क़दम चल कर आप हाँफ गये और बोले—'निकल गया, निकल गया।' मैंने तो गर्दन नापी थी, मगर नाली बीच में आ गयी इससे बच गया, वर्ना पकड़ ही लेता।

आज़ाद—अजी, मैं तो देख ही रहा था कि आप बहुरुपिये के कल्ले तक पहुँच गये थे।

इतने में एक क़ाज़ी साहब मियाँ आज़ाद से मिलने आये। आज़ाद ने नाम पूछा, तो बोले—अब्दुल कुद्दूस।

खोजी—क्या ! उस्तु खुद्दूस ! यह नयी गढ़त का नाम है।

आज़ाद—निहायत गुस्ताख आदमी हो तुम। बस, चोंच सँभालो।

खोजी की आँखें बंद थीं। जब आज़ाद ने डाँट बतायी तो आपने आँखें खोल दीं। क़ाज़ी साहब पर नज़र पड़ी। देखते ही आग हो गये और बकने लगे—और देखिएगा जरी, मरदूद आज मौलाना बन कर आया है। भई, गिरगिट के से रंग बदलता है। उस दिन घसियारा बना था; आज मौलवी बन बैठा।

क़ाज़ी साहब बहुत झेंपे। मगर आज़ाद ने कहा कि जनाब, यह दीवाना है। यों ही ऊल ज़लूल बका करता है।

जब क़ाज़ी साहब चले गये, तब आज़ाद ने खोजी को खूब ललकारा—नामाक़ूल ! बिना देखे-भाले, बेसमझे-बूझे, जो चाहता है, बक देता है। कुछ पढ़े-लिखे होते, तो आदमियों की क़द्र करते। लिखे न पढ़े, नाम मुहम्मद फ़ाज़िल।

खोजी—जी हाँ, बस, अब एक आप ही बड़े लुक़मान बने हैं। हमको यह समझाते हैं कि कोई गधा है। और यहाँ अरबी चाटे बैठे हैं। अफ़आल, फ़ालुआ मा फ़ालअत। और सुनिए—ग़ल्लम्, ग़ल्लमा, ग़ल्लमू।

मिरज़ा—यह कौन सीग़ा है भाई ?

खोजी—जी, यह सीग़ा अल्लम-ग़ल्लम है। यहाँ दीवान के दीवान ज़बान पर हैं। मगर मुफ़्त की शेखी ज़ताने से क्या फ़ायदा !

मिरज़ा साहब के घर के सामने एक तालाब था। खोजी अभी अपने कमाल की डींग मार ही रहे थे कि शोर मचा—एक लड़का डूब गया। दौड़ो, दौड़ो। पैराक अपने करतब दिखाने लगे। कोई पुल पर से कूदा धम। कोई चबूतरे से आया तड़। कोई मल्लाही चीरता है, कोई खड़ी लगा रहा है। नैसिखिये अपने किनारे ही पर हाथ-पाँव मारते हैं, और डरपोक आदमी तो दूर से ही सैर देख रहे हैं। भई, पानी और आग से ज़ोर नहीं चलता, इनसे दूर ही रहना चाहिए।

आज़ाद ने जो शोर सुना तो दौड़े हुए पुल पर आये और धम से कूद पड़े। गोता लगाते ही उस लड़के का हाथ मिल गया। निकाल कर किनारे लाये, तो देखा, जान बाक़ी है। लोगों ने मिल कर उसको उलटा लटकाया। जब पानी निकल गया, तो लड़के को होश आया।

अब सुनिए कि वह लड़का बंबई के एक पारसी रईस रुस्तम जी का इकलौता लड़का था। अभी आज़ाद लड़के को होश में लाने की फ़िक्र ही कर रहे थे कि किसी ने जाकर रुस्तम जी को यह ख़बर सुनायी। बेचारे दौड़े आये और आज़ाद को गले से लगा लिया।

रुस्तम—आपने अपने लड़के को डूबने से बचाया। बंदा आपका बहुत शुक्र-गुज़ार है।

आज़ाद—अगर आपस में इतनी हमदर्दी भी न हो, तो आदमी ही क्या?

ख़ोजी—सच है, सच है। हम ऐसे शेरों के तुम ऐसे शेर ही होते हैं। मैं भी अगर यहाँ होता, तो ज़रूर कूद पड़ता। मगर यार, अब दुआ माँगनी पड़ी कि यह मोटी तोंदवाला भी किसी दिन ग़ोता खाय, तो फिर यारों के गहरे हैं।

आज़ाद—(पारसी से) मैं बड़े मौक़े से पहुँच गया!

रुस्तम—अपने को बड़ी ख़ुशी का बातचीत।

ख़ोजी—कुछ उल्लू का पट्ठा मालूम होता है।

रुस्तम—काल आप आवे, तो हमारा लेडी लोग आपको गाना सुनावें।

ख़ोजी—अजी, क्या बेवक़्त की शहनाई बजाते हो? अजी, कुछ अफ़ीम घोलो, चुस्की लगाओ, मिठाई मँगवाओ। रईस की दुम बने हैं।

आज़ाद—कल मैं जरूर आऊँगा।

रईस—आप तो अपना का बाप है।

ख़ोजी—बल्कि दादा। ख़ूब पहचाना, वाह पट्ठे!

रुस्तम जी आज़ाद से यह वादा ले कर चले गये, तो ख़ोजी और आज़ाद भी घर आये। शाम को रुस्तम जी ने पाँच हजार रुपयों की एक थैली आज़ाद के पास भेजी और ख़त में लिखा कि आप इसे ज़रूर क़बूल करें। मगर आज़ाद ने शुक्रिये के साथ लौटा दिया।

३७

ज़रा ख्वाजा साहब की क़िता देखिएगा। वल्लाह, इस वक़्त फोटो उतारने के क़ाबिल हैं। न हुआ फोटो। सुबह का वक़्त है। आप खारुए की एक लुंगी बाँधे पीपल के दरख़्त के साये में खटिया बिछाये ऊँघ रहे हैं, मगर गुड़गुड़ी भी एक हाथ में थामे हैं। चाहें पियें न, मगर चिलम पर कोयले दहकते रहें! इत्तिफ़ाक़ से एक चील ने दरख़्त पर से बीट कर दी। तब आप चौंके और चौंकते ही आ ही गये। बहुत उछले-कूदे और इतना गुल मचाया कि मुहल्ला भर सिर पर उठा लिया। हत् तेरे गीदी की, हमें भी कोई वह समझ लिया है। आज चील बन कर आया है। क़रौली तो वहाँ तक पहुँचेगी नहीं; तोड़ेदार बंदूक होती, तो वह ताक के निशाना लगाता कि याद ही करता।

आज़ाद—यह किस पर गर्म हो रहे हो ख्वाजा साहब?

खोजी—और ऊपर से पूछते हो, किस पर गर्म हो रहे हो? गर्म किस पर होंगे! वही बहुरुपिया है, जो मौलवी बन कर आया था।

मिरज़ा—तो फिर अब उसे कुछ सज़ा दीजिए।

खोजी—सज़ा क्या खाक दूँ! मैं ज़मीन पर, वह आसमान पर। कहता तो हूँ कि तोड़ेदार बंदूक मँगवा दीजिए, तो फिर देखिए, कैसा निशाना लगाता हूँ। मगर आपको क्या पड़ी है। जायगा तो गरीब ख्वाजा के माथे ही।

मिरज़ा—हम बतायें, एक ज़ीना मँगवा दें और आप पेड़ पर चढ़ जायँ; भाग कर जायगा कहाँ?

खोजी—(उछल कर) लाना हाथ।

मिरज़ा साहब ने आदमी से कहा कि बड़ा ज़ीना अंदर से ले आओ; मगर जल्द लाना। ऐसा न हो कि बैठ रहो।

खोजी—हाँ मियाँ, इसी साल आना। मेरे यार, देखो, ऐसा न हो कि गीदी भाग निकले।

आदमी जब अंदर सीढ़ी लेने गया, बेगम ने पूछा—सीढ़ी क्या होगी?

आदमी—हूज़ूर, वही जो सिड़ी हैं ख़फ़क़ान, उन पर कहीं चील ने बीट कर दी; तो अब सीढ़ी लगा कर पेड़ पर चढ़ेंगे।

हँसोड़ औरत, खूब ही खिलखिलायीं और फौरन, छत पर जा पहुँचीं। आबी दुपट्टा खिसका जाता है, जूड़ा खुला पड़ता है और जैनब को ललकार रही हैं कि उससे कहो, जल्द सीढ़ी ले जाय। मियाँ खोजी ने सीढ़ी देखी, तो कमर कसी और काँपते हुए जीने पर चढ़ने लगे। जब आख़िरी ज़ीने पर पहुँच कर दरख़्त की टहनी पर बैठे, तो चील की तरफ़ मुँह करके बोले—गाँस लिया, गाँस लिया; फाँस लिया, फाँस लिया, हत् तेरे गीदी की, अब जाता कहाँ है? ले, अब मैं भी कल्ले पर

आ पहुँचा। बचा, आज ही तो फँसे हो। रोज झाँसे देकर उड़ंछू हो जाया करते थे। अब सोचो तो, जाओगे किधर से? ले, आइए बस, अब चोट के सामने। मैंने भी क़रौली तेज़ कर रखी है।

इतने में पीछे फिर कर जो देखते हैं, तो ज़ीना ग़ायब। लगे सिर पीटने। इधर चील भी फ़ुर से उड़ गयी। इधर के रहे न उधर के। बेगम साहबा ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो तालियाँ बजा कर हँसने लगीं।

खोजी—यह मिरज़ा साहब कहाँ गये। जरी चार आँखें तो कीजिए हमसे। आख़िर हमको आसमान पर चढ़ा कर ग़ायब कहाँ हो गये? अरे यारो, कोई साँस डकार ही नहीं लेता। अरे मियाँ आज़ाद! मिरज़ा साहब! कोई है, या सब मर गये? आख़िर हम कब तक यहाँ टँगे रहें?

बेगम—अल्लाह करे, पीनक आये।

खोजी—यह कौन बोला? (बेगम को देख कर) वाह हुज़ूर, आपको तो ऐसी दुआ न देनी चाहिए।

मियाँ आज़ाद सोचे कि खोजी अफ़ीमी आदमी, ऐसा न हो, पाँव डगमगा जायँ, तो मुफ़्त का ख़ून हमारी गर्दन पर हो। आदमी से कहा—ज़ीना लगा दो। बेगम ने जो सुना, तो हज़ारों क़समें दीं—ख़बरदार, सीढ़ी न लगाना। बारे सीढ़ी लगा दी गयी और खोजी नीचे उतरे। अब सबसे नाराज़ हैं। सबको आँखें दिखा रहे हैं—आप लोगों ने क्या मुझे मसख़रा समझ लिया है। आप लोगों जैसे मेरे लड़के होंगे।

इतने में एक आदमी ने आ कर मिरज़ा साहब को सलाम किया।

मिरज़ा—बंदगी। कहाँ रहे सलारी, आज तो बहुत दिन के बाद दिखायी दिये।

सलारी—कुछ न पूछिए खुदावंद, बड़ी मुसीबत में फँसा हूँ।

मिरज़ा—क्या है क्या? कुछ बताओ तो?

सलारी—क्या बताऊँ, कहते शर्म आती है। परसों मेरा दामाद मेरी लड़की को लिये गाँव जा रहा था। जब थाने के क़रीब पहुँचा, तो थानेदार साहब घोड़े पर सवार हो कर कहीं जा रहे थे। इनको देखते ही बाग रोक ली और मेरे दामाद से पूछा—तुम कौन हो? उसने अपना नाम बताया। अब थानेदार साहब इस फ़िक्र में हुए कि मेरी लड़की को बहला कर रख लें और दामाद को धता बता दें। बोले—बदमाश, यह तेरी बीबी नहीं हो सकती। सच बता, यह कौन है? और तू इसे कहाँ से भगा लाया है?

दामाद—यह मेरी जोरू है।

थानेदार—सुअर, हम तेरा चालान कर देंगे। तेरी ऐसी क़िस्मत कहाँ कि यह हसीना तुझको मिले! अगर तू हमारी नौकरी कर ले तो अच्छा; नहीं तो हम चालान करते हैं। (औरत से) तुम कौन हो, बोलो?

दामाद—दरोग़ा जी, आप मुझसे बातें कीजिए।

मेरी लड़की मारे शर्म के गड़ी जाती थी। गर्दन झुका कर थर-थर काँपती थी।

अपने दिल में सोचती थी कि अगर ज़मीन में गढ़ा हो जाता, तो मैं धँस जाती। सिपाही अलग ललकार रहा है और थानेदार अलग कल्ले पर सवार

दामाद—मेरे साथ किसी सिपाही को भेज दीजिए। मालूम हो जाय कि यह मेरी ब्याहता बीवी है या नहीं।

थानेदार—चुप बदमाश, मैं बदमाशों की आँख पहचान जाता हूँ। तुम कहाँ के ऐसे ख़ुशनसीब हो कि ऐसी परी तुम्हारे हाथ आयी। यह सब बनावट की बातें हैं।

सिपाही—हाँ, दारोग़ा जी, यही बात है।

आख़िर थानेदार साहब मेरी लड़की को एक दरख़्त की आड़ में ले गये और सिपाही ने मेरे दामाद को दूसरी तरफ़ ले जाके खड़ा किया। थानेदार बोला—बीबी, जरा गर्दन तो उठाओ। भला तुम इस परकटे के क़ाबिल हो! ख़ुदा ने चेहरा तो नूर सा दिया है, लेकिन शौहर लंगूर सा।

लड़की—मुझे वह लंगूर ही पसंद है।

इधर तो थानेदार साहब यह इजहार ले रहे थे, उधर सिपाही मेरे दामाद को और ही पट्टी पढ़ा रहे थे। भाई, सुनो, सूबेदार साहब के सामने तो मैं उनकी सी कह रहा था। न कहूँ, तो जाऊँ कहाँ? मगर इनकी नीयत बहुत ख़राब है। छटा हुआ गुरगा है।

दामाद—और कुछ नहीं, बस, मैं समझ गया कि फाँसी ज़रूर पाऊँगा। अब तो मुझे चाहे जाने दे या न जाने दे मैं इसे बेमारे न रहूँगा। अब बेइज़्ज़ती में बाक़ी क्या रह गया।

थानेदार—सिपाही, सिपाही, यह कहती हैं कि यह आदमी इन्हें भगा लाया है।

लड़की—जिसने यह कहा हो, उस पर आसमान फट पड़े।

दामाद—अब आपकी मरज़ी क्या है? जो हो, साफ़-साफ़ कहिए।

ख़ैर, थानेदार साहब एक कुर्सी पर डट गये और मेरी लड़की से कहा कि तुम इस सामनेवाली कुर्सी पर बैठो। अब ख़याल कीजिए कि गृहस्थ औरत बिना घूँघट निकाले कुएँ तक पानी भरने भी नहीं जाती, वह इतने आदमियों के सामने कुर्सी पर कैसे बैठती। सिपाही झुक-झुक कर देख रहे थे और वह बेचारी गर्दन झुकाये बुत की तरह खड़ी थी। तब थानेदार ने धमक कर कहा—तुम दस बरस के लिए भेजे जाओगे। पूरे दस बरस के लिए!

दामाद—जब कोई जुर्म साबित हो जाय।

थानेदार—हाँ, आप क़ानून भी जानते हैं? तो हम अब ज़ाब्ते की कार्रवाई करें।

दामाद—यह कुल कार्रवाई ज़ाब्ते ही की तो है। ख़ैर, इस वक़्त तो आपके बस में हूँ, जो चाहे कीजिए। मगर मेरा ख़ुदा सब देख रहा है।

थानेदार—तुम हमारा कहा क्यों नहीं मान लेते? हम बस, इतना चाहते हैं कि तुम नौकरी कर लो और अपनी जोरू को ले कर यहीं रहा करो।

दामाद—आपसे मैं अब भी मिन्नत से कहता हूँ कि इस बात को दिल से निकाल डालिए। नहीं तो बात बढ़ जायगी।

इतने में किसी ने पीछे से आ कर मेरे दामाद की मुश्कें कस लीं और ले चले, और एक सिपाही मेरी लड़की को थानेदार साहब के घर की तरफ़ ले चला। अब रात का वक़्त है। एक कमरे में थानेदार लड़की के पैरों पर गिर पड़ा। उसने एक ठोकर दी और झपट कर इस तेज़ी से भागी कि थानेदार के होश उड़ गये। अब ग़ौर कीजिए कि कमसिन औरत, परदेस का वास्ता, अँधेरी रात, रास्ता गुम, मियाँ नदारद। सोची, या ख़ुदा, कहाँ जाऊँ और क्या करूँ? कभी मियाँ की मुसीबत पर रोती, कभी अपनी हालत पर। इस तरह गिरती पड़ती चली जाती थी कि एक तिलंगे से भेंट हो गयी। बोला—कौन जाता है? कौन जाता है छिपा हुआ? लड़की थर-थर काँपने लगी। डरते-डरते बोली—ग़रीब औरत हूँ। रास्ता भूल कर इधर निकल आयी। आख़िर बड़ी मुश्किल से कानों का करन-फूल दे कर अपना गला छुड़ाया। आगे बढ़ी, तो उसका शौहर मिल गया। सिपाहियों ने उसे एक मकान में बंद कर दिया था, मगर वह दीवार फाँद कर निकल भागा आ रहा था। दोनों ने ख़ुदा का शुक्र किया और एक सराय में रात काटी। सुबह को मेरे दामाद ने थानेदार को घोड़े पर से खींच कर इतनी लकड़ियाँ मारीं कि बेदम हो गया। गाँववाले तो थानेदार के दुश्मन थे ही, एक ने भी न बचाया; बल्कि जब देखा कि अधमरा हो गया, तो दो-चार ने लातें भी जमायीं। अब मेरा दामाद मेरे घर में छिपा बैठा है। बतलाइए, क्या करूँ?

ख़ोजी—मुझे तो मालूम होता है कि यह भी उसी बहुरुपिये की शरारत थी।

सलारी—कौन बहुरुपिया?

मिरज़ा—तुम्हारी समझ में न आयेगा। यह क़िस्सा-तलब बात है।

सलारी—तो फिर मुझे क्या हुक्म होता है? हम तो गरीब टके के आदमी हैं। मगर आबरूदार हैं।

आज़ाद—बस, जा कर चैन करो। जब शोर-गुल मचे, तो आना। सलाह की जायगी।

सलारी ने सलाम किया और चला गया।

३८

ख़ोजी ने एक दिन कहा—अरे यारो, क्या अंधेर है। तुम रूम चलते-चलते बुड्ढे हो जाओगे। स्पीचें सुनीं, दावतें चखीं, अब बक़चा सँभालो और चलो। अब चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, हम एक न मानेंगे। चलिए, उठिए। कूच बोलिए।

आज़ाद—मिरजा साहब, इतने दिनों में ख़ोजी ने एक यही तो बात पक्की कही। अब जहाज़ का जल्द इंतिज़ाम कीजिए।

ख़ोजी—पहले यह बताइए कि कितने दिनों का सफ़र है?

आज़ाद—इससे क्या वास्ता? हम कभी जहाज़ पर सवार हुए हों तो बतायें।

ख़ोजी—जहाज़! हाय ग़ज़ब! क्या तरी-तरी जाना होगा? मेरी तो रूह काँपने लगी। भैया, मैं नहीं जाने का।

आज़ाद—अजी, चलो भी, वहाँ तुरकी औरत के साथ तुम्हारा ब्याह कर देंगे।

ख़ोजी—ख़ुश्की-ख़ुश्की चलो तो भई, मैं चलूँगा। समुद्र में जाते पाँव डगमगाता है।

मिरज़ा—जनाब, आपको शर्म नहीं आती? इतनी दूर तक साथ आये, अब साथ छोड़ देते हो? डूब मरने की बात है।

ख़ोजी—क्या ख़ूब! यों भी डूबूँ और वों भी डूबूँ। ख़ुश्की ही ख़ुश्की क्यों नहीं चलते?

मिरज़ा—आप भी वल्लाह, निरे चोंच ही रहे। ख़ुश्की की राह से कितने दिनों में पहुँचोगे भला? ख़ुश्की की एक ही कही।

ख़ोजी—अब आपसे हुज्जत कौन करे। जहाज़ का कौन एतबार। ज़रा किसी सूराख़ की राह से पानी आया, और बस, पहुँचे जहन्नुम सीधे।

आज़ाद—तो न चलोगे? साफ़-साफ़ बता दो। अभी सबेरा है।

ख़ोजी—चलें तो बीच खेत, मगर पानी का नाम सुना और कलेजा दहल उठा! भला क्यों साहब, यह तो बताइए कि समुद्र का पाट गंगा के पाट से कोई दूना होगा या कुछ कम-बेश?

मिरज़ा—जी, बस, और क्या। चलिए, आपको समुंदर दिखलावें न, थोड़े ही फ़ासले पर है।

ख़ोजी—क्यों नहीं। हमको ले चलिए और झप से चपरगट्टू करके जहाज़ पर बिठा दीजिए। एक शर्त से चलते हैं। बेगम साहबा ज़मानत करें। हमारे सिर की क़सम खायँ कि ज़बरदस्ती न करेंगे।

आज़ाद—इसमें क्या दिक़्क़त है। चलिए, हम बेगम साहबा से कहलाये देते हैं। आप और आपके बाप, दोनों के सिर की क़सम खा लें तो सही।

मिरज़ा—हाँ-हाँ, वह ज़मानत कर देंगी। आइए, उठिए।

मियाँ आज़ाद और मिरज़ा, दोनों मिल कर गये और बेगम से कहा—इस सिड़ी से इतना कह देना कि तू जहाज़ देखने जा। ये लोग ज़बरदस्ती सवार न करेंगे। बेगम साहबा ने जो सारी दास्तान सुनी, तो तिनक कर बोलीं कि हम न कहेंगे। आप लोगों ने ज़रा सी बात न मानी और सीढ़ी हटा ली। अच्छा, खैर, परदे के पास बुला लो।

ख़ोजी ने परदे के पास आ कर सलाम किया; मगर जवाब कौन दे। बेगम साहबा तो मारे हँसी के लोटी जाती हैं। मियाँ आज़ाद के ख़याल से अपनी चुलबुलाहट पर लजाती भी हैं और खिलखिलाती भी। शर्म और हँसी, दोनों ने मिल कर रुख़सारों को और भी सुर्ख़ कर दिया। इतने में ख़ोजी ने फिर हाँक लगायी कि हुजूर ने गुलाम को क्यों याद फ़रमाया है?

मिरज़ा—कहती हैं कि हम ज़मानत किये लेते हैं।

ख़ोजी—आप रहने दीजिए, उन्हीं को कहने दीजिए।

बेगम—ख्वाजा साहब, बंदगी। आप क्या पूछते हैं।

ख़ोजी—ये लोग मुझे जहाज़ दिखाने लिये जाते हैं। जाऊँ या न जाऊँ! जो हुक्म हो, वह करूँ।

बेगम—कभी भूले से न जाना। नहीं फिर के न आओगे।

ख़ोजी—आप इनकी ज़मानत करती हैं।

बेगम—मैं किसी की ज़ामिन-वामिन नहीं होती। 'ज़र दीजिए ज़ामिन न हूजिए'। ये डुबो ही देंगे। मुई क़रौली रखी ही रहेगी।

ख़ोजी—चलिए, बस, हद हो गयी। अब हम नहीं जाने के।

आज़ाद—भई, तुम ज़रा साथ चल कर सैर तो देख आओ।

ख़ोजी—वाह! अच्छी सैर है। किसी की जान जाय, आपके नज़दीक सैर है। उस जानेवाले पर तीन हरफ़।

ख़ैर, समझा-बुझा कर दोनों आदमी ख़ोजी को ले चले। जब समुद्र के किनारे पहुँचे तो ख़ोजी उसे देखते ही कई क़दम पीछे हटे और चीख़ पड़े। फिर दस-पाँच क़दम पीछे खिसके और रोने लगे। या ख़ुदा, बचाइए! लहरें देखते ही किसी ने कलेजे को मसोस लिया।

मिरज़ा—क्या लुत्फ़ है! ख़ुदा की क़सम, जी चाहता है, फाँद ही पड़ूँ।

ख़ोजी—कहीं भूल से फाँदने वाँदने का इरादा न करना। हयादार के लिए एक चुल्लू काफ़ी है।

आज़ाद—अजब मसख़रा है भई एक आँख से रोता है, एक आँख से हँसता है।

इतने में दो-चार मल्लाह समाने आये। ख़ोजी ने जो उन्हें ग़ौर से देखा, तो मिरज़ा साहब से बोले--ये कौन हैं भई? इनकी तो कुछ वजा ही निराली है। भला, ये हमारी बोली समझ लेंगे?

मिरज़ा—हाँ हाँ, खूब। उर्दू खूब समझते हैं।

खोजी—(एक मल्लाह से) क्यों भई माँझी, जहाज़ पर कोई जगह ऐसी भी है, जहाँ समुंदर नज़र न आये और हम आराम से बैठे रहें ? सच बताना उस्ताद ! अजी, हम पानी से बहुत डरते हैं भई !

माँझी—हम आपको ऐसी जगह बैठा देंगे, जहाँ पानी क्या, आसमान तो सूझ ही न पड़े।

खोजी—अरे, तेरे कुरबान। एक बात और बता दो। गन्ने मिलते जाँयगे राह में या उनका अकाल है ?

माँझी—गन्ने वहाँ कहाँ ? क्या कुछ मंडी है ? अपने साथ चाहे जितने ले चलिए।

खोजी—हाय, गँडेरियाँ ताज़ी-ताज़ी खाने में न आयेंगी। भला हलवाई की दूकान तो होगी ? आख़िर ये इतने शौक़ीन अफ़ीमची जो जाते हैं, तो खाते क्या हैं ?

माँझी—अजी, जो चाहो, साथ रख लो।

खोजी—और जो मुँह-हाथ धोने को पानी की ज़रूरत हो तो कहाँ से आवे ?

आज़ाद—पागल है पूरा ! इतना नहीं समझता कि समुंदर में जाता है और पूछता है कि पानी कहाँ से आयेगा।

खोजी—तो आप क्यों उलझ पड़े ? आपसे पूछता कौन है ? क्यों यार माँझी, भला हम गन्ने यहाँ से बाँध ले चलें और जहाज़ पर चूसें, मगर छिलके फेकेंगे कहाँ। आख़िर हम दिन भर में चार-छह पौंड़े खाया ही चाहें।

आज़ाद—यह बड़ी टेढ़ी खीर है, गन्नों के छिलके खाने पड़ेंगे।

खोजी—आपसे कौन बोलता है ? क्यों भई, जो क़रौली बाँधें तो हर्ज तो नहीं है कुछ ?

माँझी—लैसन ले लीजिएगा, और क्या हर्ज है ?

खोजी—देखिए, एक बात तो मालूम हुई न ! अच्छा यह बताओ कि बहुरुपिये तो जहाज़ पर नहीं चढ़ने पाते !

माँझी—चाहे जो सवार हो। दाम दे, सवार हो ले।

खोजी—यह तो तुमने बेढब सुनायी। जहाज़ पर कुम्हार तो नहीं होते ?

माँझी—आज तलक कोई कुम्हार नहीं गया।

खोजी—ऐ, मैं तेरी ज़बान के कुरबान। बड़ी ढारस हुई। खैर कुम्हार से तो बचे। बाक़ी रहा बहुरुपिया। उस गीदी को समझ लूँगा। इतनी क़रौलियाँ भोंकूँ कि याद ही करे। हाँ, बस एक और बात भी बता देना। यह क़ैद तो नहीं है कि आदमी सुबह-शाम ज़रूर ही नहाय ?

माँझी—मालूम देता है, अफ़ीम बहुत खाते हो ?

खोजी—हाँ खूब पहचान गये। यह क्योंकर बूझ गये भाई ? शौक़ हो, तो निकालूँ ?

माँझी—राम-राम ! हम अफ़ीम छूते तक नहीं।

ख़ोजी—ओ गीदी ! टके का आदमी और झख मारता है। निकालूँ क़रौली ?

मिरज़ा—हाँ, हाँ, ख्वाजा साहब ! देखिए, जरी क़रौली म्यान ही में रहे।

ख़ोजी—ख़ैर, आप लोगों की ख़ातिर है। वर्ना उधेड़ कर धर देता पाजी को। आप लोग बीच में न पड़ें, तो भुरकुस ही निकाल दिया होता।

इतने में घोड़े पर सवार एक अँगरेज आ कर आज़ाद से बोला—इस दरख्त का क्या नाम है ?

आज़ाद—इसका नाम तो मुझे मालूम नहीं। हम लोग ज़रा इन बातों की तरफ कम ध्यान देते हैं।

अँगरेज—हम अपने मुल्क की सब घास फूस पहचानता है।

ख़ोजी—विलायत का घसियारा मालूम होता है।

अँगरेज—चिड़िया का इल्म जानता है आप ?

आज़ाद—जी नहीं यह इल्म यहाँ नहीं सिखाया जाता।

अँगरेज—चिड़िया का इल्म हम खूब जानता है।

ख़ोजी—चिड़ीमार है लंदन का। बस, क़लई खुल गयी।

अँगरेज घोड़ा बढ़ा कर निकल गया। इधर आज़ाद और मिरज़ा साहब के पेट में हँसते-हँसते बल पड़ गये।

३९

शाम के वक़्त मिरज़ा साहब की बेगम ने परदे के पास आ कर कहा—आज इस वक़्त कुछ चहल-पहल नहीं है; क्या ख़ोजी इस दुनिया से सिधार गये ?

मिरज़ा—देखो ख़ोजी, बेगम साहबा क्या कह रही हैं।

ख़ोजी—कोई अफ़ीम तो पिलवाता नहीं, चहल-पहल कहाँ से हो ? लतीफ़े सुनाऊँ, तो अफ़ीम पिलवाइएगा ?

बेगम—हाँ, हाँ, कहो तो। मरो भी, तो पोस्ते ही के खेत में दफ़नाये जाओ। काफ़ूर की जगह अफ़ीम हो, तो सही।

ख़ोजी—एक ख़ुशनवीस थे। उनके क़लम से ऐसे हरूफ़ निकलते थे, जैसे साँचे के ढले हुए। मगर इन हज़रत में एक सख़्त ऐब यह था कि ग़लत न लिखते थे।

आज़ाद—कुछ जाँगलू हो क्या ?

ख़ोजी—ख़ुदा इन लोगों से बचाये। भई, मेरे तो नाकों दम हो गया। बात पूरी सुनी नहीं और एतराज़ करने को मौजूद। बात काटने पर उधार खाये हुए हो। मेरा मतलब यह था कि वह ग़लत न लिखते थे; मगर ऐब यह था कि अपनी तरफ़ से कुछ मिला देते थे। एक दफ़े एक आदमी को क़ुरान लिखाने की ज़रूरत हुई। सोचे कि इनसे बढ़ कर कोई ख़ुशनवीस नहीं, अगर दस-पाँच रुपये ज़्यादा भी खर्च हों, तो बला से, लिखवायेंगे इन्हीं से।

बेगम—ऐ वाह री अक़ल ! कोई आप ही के से जाँगलू होंगे। गली-गली तो छापेखाने हैं। कोई छपा हुआ क़ुरान क्यों न मोल ले लिया ?

ख़ोजी—हुज़ूर, वह सीधे-सादे मुसलमान थे। मंतिक (न्याय) नहीं पढ़े थे। ख़ैर, साहब ख़ुशनवीस के पास पहुँचे और कहा—हज़रत, जो उजरत माँगिए, दूँगा; मगर अर्ज़ यह है, कहिए, कहूँ, कहिए, न कहूँ। ख़ुशनवीस ने कहा—ज़रूर कहिए। ख़ुदा की क़सम, ऐसा लिखूँ कि जो देखे, फड़क जाय। वह बोले—हज़रत, यह तो सही है, लेकिन अपनी तरफ़ से कुछ न बढ़ा दीजिएगा। ख़ुशनवीस ने कहा—क्या मजाल; आप इतमीनान रखिए, ऐसा न होने पावेगा। ख़ैर, वह हज़रत तो घर गये, इधर मियाँ ख़ुशनवीस लिखने बैठे। जब ख़तम कर चुके, तो किताब ले कर चले। लीजिए हुज़ूर क़ुरान मौजूद है। उन्होंने पूछा—एक बात साफ़ फ़रमा दीजिए। कहीं अपनी तरफ़ से तो कुछ नहीं मिला दिया ? ख़ुशनवीस ने कहा—जनाब, बदलते या बढ़ाते हुए हाथ काँपते थे। मगर इसमें जगह-जगह शैतान का नाम था। मैंने सोचा, ख़ुदा के कलाम में शैतान का क्या ज़िक्र ? इसलिए कहीं आपके बाप का नाम लिख दिया, कहीं अपने बाप का।

बेगम—बस, यही लतीफ़ा है ? यह तो सुन चुकी हूँ।

खोजी—इस धाँधली की सनद नहीं। जब अफ़ीम पिलाने का वक़्त आया तो धाँधली करने लगीं !

मिरज़ा साहब बोले—अजी, यह पिलवावें या न पिलवावें, मैं पिलवाये देता हूँ। यह कह कर उन्होंने एक थाली में थोड़ा सा कत्था घोल कर खोजी को पिला दिया। खोजी को दिन को तो ऊँट सूझता न था; रात को कत्थे और अफ़ीम के रंग में क्या तमीज़ करते। पूरा प्याला चढ़ा लिया और अफ़ीम पीने के ख़याल से पीनक लेने लगे। मगर जब रात ज़्यादा गयी तो आपको अँगड़ाइयाँ आने लगी; जम्हाइयों की डाक बैठ गयी, आँखों से पानी जारी हो गया। डिबिया जेब से निकाली कि शायद कुछ खुरचन-उरचन पड़ी-पड़ायी हो, तो इस दम जी जायँ। मगर देखा, तो सफाचट ! बस, सन से जान निकल गयी। आधी रात का वक़्त, अब अफ़ीम आये तो कहाँ से ? सोचे, भई, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, अफ़ीम कहीं न कहीं से ढूँढ़ ही लावेंगे। दन से चल ही तो खड़े हुए। गली में सिपाही से मुठभेड़ हुई।

सिपाही—कौन ?

खोजी—हम हैं ख्वाजा साहब।

सिपाही—किस दफ़्तर में काम करते हो ?

खोजी—पुलिस के दफ्तर में। मानिकजी-भाईजी की जगह पर आज से काम करते हैं। यार, इस वक़्त कहीं से जरा सी अफीम लाओ, तो बड़ा एहसान हो। आख़िर उस्ताद, पाला हमीं से पड़ेगा। तुम्हारे ही दफ़्तर में हैं।

सिपाही—हाँ, हाँ, लीजिए, इसी दम। मैं तो ख़ुद अफ़ीम खाता हूँ। अफ़ीम तो लो यह है, मगर इस वक़्त घोलिएगा काहे में ?

खोजी—वाह ! सिपाही हो कि बातें ! घर की हुकूमत है ! सरकारी सिपाही को सभी मानते हैं।

सिपाही—अच्छा, चलो, पिला दें।

खोजी—वाह सूबेदार साहब ! बड़े बुरे वक़्त काम आये। हम, आप जानिए, अफ़ीमची आदमी, शाम को अफ़ीम खाना भूल गये, आधी रात को याद आया। डिबिया खोली, तो सन्नाटा। ले, कहीं से पानी और प्याली दिलवाओ, तो जी उठें।

खैर, सिपाही ने खोजी को खूब अफ़ीम पिलवायी। यहाँ तक कि घर को लौटे, तो रास्ता भूल गये। एक भलेमानस के दरवाज़े पर पहुँचे, तो पीनक में सूझी कि यही मिरज़ा साहब का मकान है। लगे ज़ंजीर खड़खड़ाने—खोलो, खोलो। भई, अब तो खड़ा नहीं रहा जाता। दरवाज़ा खोल देना।

ख्वाजा साहब तो बाहर खड़े गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाते हैं, और अंदर उस मकान में मियाँ का दम निकला जाता है। कोई एक ऊपर दस बरस का सिन, खेल-कूद के दिन, खोजी के भी चचा, दुबले-पतले हाथ-पाँव, क़द तीन कम सवा दो इंच का। सिवा हड्डी और चमड़े के गोश्त का कहीं नाम नहीं। और उनकी बीबी ख़ासी देवनी, हट्टी-कट्टी मुसंडी, बड़े डील-डोल की औरत, उठती जवानी, मगर एक आँख

की कानी। एक घूँसा तानके लगावे, तो शीदी लंधौर का भुरकस निकल जाय। कोई दो-तीन कम बीस बरस की उम्र। दोनों मीठी नींद सो रहे थे कि ख़ोजी ने धमधमाना शुरू किया।

मियाँ—या ख़ुदा, बचाइयो। इस अँधेरी रात में कौन आया? मारे डर के रूह काँपती है; मगर जो बीबी को जगाऊँ और मर्दाने कपड़े पहना कर ले जाऊँ, तो यह हज़रत भी काँपने लगें।

ख़ोजी—खोलो, मीठी नींद सोनेवालो, खोलो। यहाँ जाते देर नहीं हुई, और किवाड़े झप से बंद कर लिये? खटिया-वटिया सब ग़ायब कर दी?

मियाँ—बेगम, बेगम, क्या सो गयीं?

वहाँ सुनता कौन है, जवानी की नींद है कि दिल्लगी। कोई चारपाई भी उलट दे, तो कानों-कान ख़बर न हो। सिर पर चक्की चले। तो भी आँख न खुले। मियाँ आँखों को मारे डर के एक हाथ से बंद किये बीबी के सिरहाने खड़े हैं; मगर थर-थर काँप रहे हैं। आख़िर एक बार किचकिचाके ख़ूब जोर से कंधा हिलाया और बोले—ओ बेगम, सुनती हो कि नहीं? जगी हैं, मगर दम साधे पड़ी हैं। बेगम—(हाथ झटक-कर) ऐ हटो, लेके कंधा उखाड़ डाला। अल्लाह करे, ये हाथ टूटें। हमारी मीठी मीठी नींद ख़राब कर दी। ख़ुदा जानता है, मैं तो समझी, हालाडोला आ गया। ख़ुदा-ख़ुदा करके ज़रा आँख लगी, तो यह आफ़त आयी। अब की जगाया, तो तुम जानोगे। फिर अपने दाँव को तो बैठ कर रोते हैं। बेहया, चल दूर हो।

मियाँ—अरे, क्या फिर सो गयी? जैसे नींद के हाथों बिक गयी हो। बेगम, सुनती हो कि नहीं?

बेगम—क्या है, क्या? कुछ मुँह से बोलोगे भी? बेगम-बेगम की अच्छी रट लगायी है। डर लगता हो तो मुँह ढाँप कर सो रहो। एक तो आप न सोयें, दूसरे हमारी नींद भी हराम करें।

ख़ोजी—अरे, भई खोलो! मर गया पुकारते-पुकारते।

मियाँ—बेगम ख़ुदा करे, बहरी हो जायँ। देखो तो यहाँ किवाड़ कौन तोड़े डालता है? बंदा तो इस अँधियारी में हुमसनेवाला नहीं। जरी तुम्हीं दरवाज़े तक जा कर देख लो।

बेगम—जी! मेरी पैजार उठती है। तुम्हारी तो वही मसल हुई कि 'रोटी खाय दस-बारह, दूध पिये मटका सारा, काम करने को नन्हा बेचारा।' पहले तो मैं औरत ज़ात डर गयी तो फिर कैसी हो? चोर-चाकर से बीबी को भिड़वाते हैं। मर्द बने हैं, जोरुआ से कहते हैं कि बाहर जा कर चोर से लड़ो।

ख़ोजी—अजी, बेगम साहब, ख़ुदा की क़सम, अफ़ीम लाने गया था। जरी दरवाज़ा खुलवा दीजिए। यह मिरज़ा साहब, और मौलाना आज़ाद तो मेरी जान के दुश्मन हैं।

बेगम ने जो अफ़ीम का नाम सुना, तो आग-भभूका हो गयीं। उठ कर मियाँ के

एक लात लगायी और ऊपर से कोसने लगीं—इस अफ़ीम को आग लगे, पीनेवाले का सत्यानाश हो जाय। एक तो मेरे माँ बाप ने इस निखट्टू के खूँटे में बाँधा, दूसरे इसके माँ-बाप ने अफ़ीम इसकी घुट्टी में डाल दी। क्यों जी, तुमने तो क़सम खायी थी कि आज से अफ़ीम न पिऊँगा? न तुम्हारी क़सम का एतबार, न ज़बान का। क़सम भी क्या मूली-गाजर है कि कर-कर करके चबा गये!

मियाँ—(गर्द झाड़-पोंछ कर) क्यों जी, और जो मैं भी एक लात कसके जमाने के लायक़ होता तो फिर कैसी ठहरती?

बीबी—मैं तो पहले बातों से समझाती हूँ और कोई न समझे तो फिर लातों से खबर लेती हूँ। मैं तो इस फ़िक्र में हूँ कि तुमको खिला-पिला कर हट्टा-कट्टा बना दूँ, पड़ोसी ताने न दें। और तुम पियो अफ़ीम तो जी जले या न जले?

मियाँ साहब दिल ही दिल में अपने माँ-बाप को गालियाँ दे रहे थे। यहाँ खान-पान आदमी, बीबी लाके बिठा दी देवनी। वे तो ब्याह करके छुट्टी पा गये, लातें हमें खानी पड़ती हैं। मैं तो समझा कि अपना काम ही तमाम हो गया; मगर बेहया ज्यों का त्यों मौजूद। बोले—तुम्हारी जान की क़सम, कौन मरदूद चंडू के क़रीब भी गया हो। आज या कभी अफ़ीम की सूरत भी देखी हो। और यों खामख्वाह बदगुमानी का कौन सा इलाज है। ज़री चलके देखो तो! आखिर है कौन? आव देखा न ताव, कस कर एक लात जमा दी, बस। और जो कहीं कमर टूट जाती?

खोजी पीनक में ज़ंजीर पकड़े थे। इधर मियाँ-बीबी चले, तो इस तरह कि बीबी आगे-आगे चिमटा हाथ में लिये हुए और मियाँ पीछे-पीछे मारे डर के आँखें बंद किये हुए। दरवाज़ा खुला, तो खोजी धम से गिरे सिर के बल और मियाँ मारे ख़ौफ़ के खोजी पर अर-र-र करके आ रहे। बीबी ने ऊपर से दोनों को दबोचा। खोजी का नशा हिरन हो गया। निकल कर भागे तो नाक की सीध पर चलते हुए मिरज़ा साहब के मकान पर दाखिल। वहाँ देखा, खिदमतगार पड़ा खर्राटे ले रहा है। चुपके से अपनी खटिया पर दराज़ हुए; मगर मारे हँसी के बुरा हाल था। सोचे, हम तो थे ही, यह मियाँ हमारे भी चचा निकले।

४०

सुबह का वक़्त था। मियाँ आज़ाद पलँग से उठे तो देखा, बेगम साहबा मुँह खोले बेतकल्लुफ़ी से खड़ी उनकी ओर कनखियों से ताक रही हैं। मिरज़ा साहब को आते देखा, तो बदन को चुरा लिया, और छलाँग मारी, तो जैनब की ओट में थीं।

मिरज़ा—कहिए, आज क्या इरादे हैं?

आज़ाद—इस वक़्त हमको किसी ऐसे आदमी के पास ले चलिए, जो तुरकी के मामलों से खूब वाक़िफ़ हो। हमें वहाँ का कुछ हाल मालूम ही नहीं। कुछ सुन तो लें। वहाँ के रंग-ढंग तो मालूम हों।

मिरज़ा—बहुत खूब; चलिए, मेरे एक दोस्त हेडमास्टर हैं। बहुत ही जहीन और यारबाश आदमी हैं।

आज़ाद तैयार हुए तो बेगम ने कहा—ऐ, तो कुछ खाते तो जाओ। ऐसी अभी क्या जल्दी है?

आज़ाद—जी नहीं। देर होगी।

बेगम—अच्छा, चाय तो पी लीजिए,

थोड़ी देर में दोनों आदमियों ने चाय पी, पान खाये और चले। हेडमास्टर का मकान थोड़ी ही दूर था, खट से दाखिल। सलाम-वलाम के बाद आज़ाद ने रूम और रूस की लड़ाई का ताज़ा हाल पूछा।

हेडमास्टर—तुरकी की हालत बहुत नाज़ुक हो गयी है।

खोजी—यह बताइए कि वहाँ तोप दग़ रही है या नहीं? दनादन की आवाज़ कान में आती है या नहीं?

हेडमास्टर—दनादन की आवाज़ तो यहाँ तक आ चुकी; मगर लड़ाई छिड़ गयी है और खूब ज़ोरों से हो रही है।

खोजी—उफ्, मेरे अल्लाह! यहाँ तो जान ही निकल गयी।

आज़ाद—मियाँ, हिम्मत न हारो। खुदा ने चाहा, तो फ़तह है।

खोजी—अजी, हिम्मत गयी भाड़ में, यहाँ तो क़ाफ़िया तंग हुआ जाता है।

आज़ाद—लड़ाई रूस से हो रही है, या आपस में?

हेडमास्टर—आपस ही में समझिए। अक्सर सूबे बिगड़ गये और लड़ाई हो रही है।

आज़ाद—यह तो बुरी हुई।

खोजी—बुरी हुई, तो फिर जाते क्यों हो? क्या तबाही आयी है?

हेडमास्टर—सर्विया की फ़ौज सरहद को पार कर गयी। तुरकों से एक लड़ाई भी

हुई। सुना है कि सर्विया हार गया। मगर उसका कहना है कि यह सब ग़लत है। हम डटे हुए हैं, और तुरकों को बासिनिया की सरहद पर ज़क दी।

खोजी—अब मेरे गये बग़ैर बेड़ा न पार होगा। क़सम ख़ुदा की, इतनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि परे के परे साफ़ हो जायँ। दिल्लगी है कुछ।

हेडमास्टर—दूसरी ख़बर यह है कि सर्विया और तुरकों में सख़्त लड़ाई हुई, मगर न कोई हारा, न जीता। सर्विया वाले कहते हैं कि हमने तुरकों को भगा दिया।

खोजी—भई आज़ाद, सुनते हो ? वापस चलो। अजी, शर्त तो यही है न कि तमग़े लटका कर आओ ? आप वापस चलिए मैं एक तमग़ा बनवा दूँगा।

कुछ देर तक मियाँ आज़ाद और हेडमास्टर साहब में यही बातें होती रहीं। दस बजते-बजते यहाँ से रुख़सत हो कर घर आये। जब खाना खा कर बैठे तो बेग़म साहबा ने आज़ाद से कहा—हज़रत, ज़रा इस मिसरे पर कोई मिसरा लगाइए—

इसलिए तसवीर जानाँ हमने खिंचवायी नहीं।

आज़ाद—हाँ-हाँ सुनिए—

ग़ैर देखे उनकी सूरत इसकी ताब आयी नहीं;
इसलिए तसवीर जानाँ······नहीं।
उसकी फ़ुरक़त ज़ेहन में अपने कभी आयी नहीं;
इसलिए तसवीर जानाँ······नहीं।

बेगम—कहिए, आपकी ख़ातिर से तारीफ़ कर दें। मगर मिसरे ज़रा फीके हैं।

आज़ाद—अच्छा, ले आप ही कोई चटपटा मिसरा कहिए।

बेगम—ऐ, हम औरतज़ात, भला शेर-शायरी क्या जानें। और जो आपकी यही मरज़ी है, तो लीजिए—

लौहे-दिल ढूँढा किये पर हाथ ही आयी नहीं,
इसलिए ... ... नहीं।

खोजी—वाह, बेगम साहब! आपने तो सुलेमान सावजी के भी कान काटे। पर अब ज़रा मेरी उपज भी सुनिएगा—

पीनके-अफ़यूँ से टुक फ़ुरसत कभी पायी नहीं,
इसलिए ... ... नहीं।

इस मिसरे का सुनना था कि मिरज़ा साहब, उनकी हँसोड़ बीबी और मियाँ आज़ाद—हँसते-हँसते लोट गये। अभी यही चर्चा हो रही थी कि इतने में एक आदमी ने बाहर से आवाज़ दी। मिरज़ा ने जैनब से कहा कि जाओ, देखो तो कौन है ? मियाँ ख़लीफ़ा हों तो कहना, इस वक़्त हम बाल न बनवायेंगे। तीसरे पहर को आ जाइए। जैनब आटा गूँध रही थी। 'अच्छा' कह कर चुप हो रही। आदमी ने फिर बाहर से आवाज दी। तब तो जैनब को मज़बूर हो कर उठना ही पड़ा। नाक-भौं चढ़ाती, नौकर को जली-कटी सुनाती चली। जो है, मेरी ही जान का गाहक है। जिसे देखो, मेरा ही दुश्मन। वाह, एक काम छोड़ दूसरे पर लपको। अबकी

चौंद हो, तो मैं तनख्वाह लेके अपने घर बैठ रहूँ। क्यों, निगोड़ी नौकरी का भी कुछ अकाल है? जैनब का क़ायदा था कि काम सब करती थी, मगर बड़बड़ा कर। बात-बात पर तिनक जाना तो गोया उसकी घूँटी में पड़ा था। मगर अपने काम में चुस्त थी। इसलिए उसकी खातिर होती थी। मुँह फुला कर बाहर गयी। पहले तो जाते ही ख़िदमतगार को खूब आड़े हाथों लिया—क्या घर भर में मैं ही अकेली हूँ? जो पुकारता है, मुझी को पुकारता है। मुए उल्लू के मुँह में नाम पड़ गया है।

ख़िदमतगार ने कहा—मुझसे क्यों बिगड़ती हो? यह मियाँ आये हैं; हुजूर से जा कर इनका पैग़ाम कह दो। मगर ज़रा समझ-बूझ कर कहना। सब बातें सुन लो अच्छी तरह।

जैनब—(उस आदमी से) कौन हो जी? क्या कहते हो? तुम्हें भी इसी वक़्त आना था?

आदमी—मल्लाह हूँ, और हूँ कौन? जा कर अपने मियाँ से कह दो, आज जहाज़ रवाना होगा। अभी दस घंटे की देर है। तैयार हो जाइए।

जैनब ने अंदर जा कर यह खबर दी। बेगम साहबा ने जहाज़ का नाम सुना, तो धक से रह गयीं। चेहरे का रंग फीका पड़ गया। कलेजा धड़-धड़ करने लगा। अगर ज़ब्त न करतीं, तो आँसू जारी हो जाते।

मिरज़ा—लीजिए हज़रत, अब कूच की तैयारी कीजिए।

आज़ाद—तैयार बैठा हूँ। यहाँ कोई बड़ा लंबा चौड़ा सामान तो करना नहीं। एक बैग, एक दरी, एक लोटा, एक लकड़ी। चलिए, अल्लाह-अल्लाह, खैरसल्लाह। वक़्त पर दन से खड़ा हूँगा।

खोज़ा—यहाँ भी वही हाल है। एक डिबिया, एक प्याली, चंडू पीने की एक निगाली; एक क़तार, एक दोना मिठाई का, एक चाकू, एक क़रौली; बस, अल्लाह अल्लाह, खैरसल्लाह। बंदा भी कील-काँटे से दुरुस्त है।

यह सुन कर मियाँ आज़ाद और मिरज़ा साहब- दोनों हँस पड़े। मगर बेगम साहबा के होंठों पर हँसी न आयी। मिरज़ा साहब, तो उसी वक़्त मल्लाह से बातें करने के लिए बाहर चले गये और यहाँ मियाँ आज़ाद और बेगम साहबा, दोनों अकेले रह गये। कुछ देर तक बेगम ने मारे रंज के सिर तक न उठाया। फिर बहुत सँभल कर बोलीं—मेरा तो दिल बैठा जाता है।

आज़ाद—आप घबराइए नहीं, मैं जल्दी वापस आऊँगा।

बेगम—हाय, अगर इतनी ही उम्मेद होती, तो रोना काहे का था?

आज़ाद—सब्र को हाथ से न जाने दीजिए। खुदा बड़ा क़ारसाज़ है।

बेगम—आँखों में अँधेरा सा छा गया। क्या आज ही जाओगे? आज ही? तुम्हारे जाने के बाद मेरी न जाने क्या हालत होगी!

आज़ाद—खुदा ने चाहा, तो हँसी-खुशी फिर मिलेंगे।

इतने में मिरज़ा साहब ने आ कर कहा कि सुबह को तड़के जहाज़ रवाना होगा।

बेगम—यों जाने को सभी जाते हैं, लाखों मर्द-औरत हर साल हज कर आते हैं; मगर लड़ाई में शरीक होना! बस, यही ख़याल तो मारे डालता है।

आज़ाद—ये लाखों आदमी जो लड़ने जाते हैं, क्या सब के सब मर ही जाते हैं? फिर क़ज़ा का वक़्त कौन टाल सकता है? जैसे यहाँ, वैसे वहाँ।

मिरज़ा—भई, मेरा तो दिल गवाही देता है कि आप सुर्ख़रू हो कर आयेंगे। और यों तो ज़िंदगी और मौत ख़ुदा के हाथ है।

बेगम—ये सब बातें तो मैं भी जानती हूँ! मगर समझाऊँ किसे?

मिरज़ा—जब जानती हो, तब रोना-धोना बेकार है। हाथ-मुँह धो डालो। जैनब, पानी लाओ। यही तो तुममें ऐब है कि सुबह का काम शाम को और शाम का काम सुबह को करती हो। लाओ पानी झटपट।

जैनब—या अल्लाह! अब आलू छीलूँ या पानी लाऊँ!

आख़िर जैनब दिल ही दिल में बुरा-भला कहती पानी लायी। बेगम ने मुँह धोया और बोलीं—अब मैं कोई ऐसी बात न कहूँगी, जिससे मियाँ आज़ाद को रंज हो।

ख़ोजी—अजी मियाँ आज़ाद! चलने का वक़्त करीब आया। कुछ मेरी भी फ़िक्र है? वह क़रौली लेते ही लेते रह गये? अफ़ीम का क्या बंदोबस्त किया? यार, कहीं ऐसा न हो कि अफ़ीम राह में न मिले और हम जीते जी मर मिटें। जरी जैनब को बाज़ार तक भेज कर कोई साठ-सत्तर क़तारे तो नर्म नर्म मँगवा दीजिए। नहीं तो मैं जीता न फिरूँगा।

जैनब—हाँ, जैनब ही तो घर भर में फालतू है। लपक कर बाज़ार से ले क्यों नहीं आते? क्या चूड़ियाँ टूट जायँगी? और मैं औरतज़ात अफ़ीम लेने कहाँ जाऊँगी भला?

बेगम—रास्ते में इस पगले के सबब से ख़ूब चहल-पहल रहेगी।

आज़ाद—हाँ, इसी लिए तो लिये जाता हूँ। मगर देखिए, क्या क्या बेहूदगियाँ करते हैं?

ख़ोजी—अजी, आपसे सौ क़दम आगे रहूँ, तो सही।

मिरज़ा—इसमें क्या शक है? लेकिन उस तरफ़ कोई बहुरुपिया हुआ, तो कैसी ठहरेगी?

ख़ोजी—सच कहता हूँ, इतनी क़रौलियाँ भोकूँ कि याद करे। मैं दग़ानेवाली पलटन में रिसालदार था। अवध में ख़ुदा जाने कितनी गढ़ियाँ जीत लीं।

बेगम—ऐ रिसालदार साहब, आपकी क़रौली क्या हुई? मोरचा खा गयी हो तो साफ़ कर लीजिए। ऐसा न हो, मोरचे पर म्यान ही में रहे।

जैनब—रिसालदार साहब, हमारे लिए वहाँ से क्या लाइएगा?

ख़ोजी—अजी, जीते आवें, तो यही बड़ी बात है। यहाँ तो बदन काँप रहा है।

इन्हीं बातों में चलने का वक़्त आ गया। आज़ाद ने अपना और खोजी का सामान बाँधा। बग्घी तैयार हुई। जब मियाँ आज़ाद ने चलने के लिए लकड़ी उठायी, तो बेगम बेचारी बेअख़्तियार रो दीं। काँपते हुए हाथों से इमामज़ामिन की अशरफ़ी बाँधी और कहा—जिस तरह पीठ दिखाते हो, उसी तरह मुँह भी दिखाना।

मियाँ आज़ाद, मिरज़ा और खोजी जा कर बग्घी पर बैठे। जब गाड़ी चली, तो खोजी बोले—हमसे कोई नहाने को कहेगा, तो हम क़रौली ही भोंक देंगे।

मिरज़ा—तो जब कोई कहे न ?

खोजी—हाँ, बस, इतना याद रखिएगा ज़रा। और, हम यह भी बताये देते हैं कि गन्ना चूस-चूस कर समुंदर के बाप में फेकेंगे, और जो कोई बोलेगा, तो दबोच बैठेंगे। हाँ, ऐसे-वैसे नहीं हैं यहाँ !

सामने समुद्र नज़र आने लगा।

४१

हुस्नआरा मीठी नींद सो रही थी। ख्वाब में क्या देखती है कि एक बूढ़े मियाँ सब्ज़ कपड़े पहने उसके क़रीब आ कर खड़े हुए और एक किताब दे कर फ़रमाया कि इसे लो और इसमें फ़ाल देखो। हुस्नआरा ने किताब ली और फ़ाल देखा, तो यह शेर था—

हमें क्या ख़ौफ़ है, तूफ़ान आवे या बला टूटे।

आँख खुल गयी तो न बूढ़े मियाँ थे, न किताब। हुस्नआरा फ़ाल-वाल की क़ायल न थी; मगर फिर भी दिल को कुछ तसकीन हुई। सुबह को वह अपनी बहन सिपहआरा से इस ख्वाब का ज़िक्र कर रही थी कि लौंडी ने आज़ाद का ख़त ला कर उसे दिया।

हुस्नआरा—हम पढ़ेंगे।

सिपहआरा—वाह, हम पढ़ेंगे।

हुस्नआरा—(प्यार से झिड़क कर) बस, यही बात तो हमें भाती नहीं।

सिपहआरा—न भावें, धमकाती क्या हो?

हुस्नआरा—मेरी प्यारी बहन, देखो, बड़ी बहन का इतना कहना मान जाओ। लाओ ख़त ख़ुदा के लिए।

सिपहआरा—हम तो न देंगे।

हुस्नआरा—तुम तो ख़ाहमख्वाह ज़िद करती हो, बच्चों की तरह मचली जाती हो।

सिपहआरा—रहने दीजिए, वाह-वाह! हम आज़ाद का ख़त न पढ़ें?

यह कहकर सिपहआरा ने आज़ाद का ख़त पढ सुनाया—

'अब तो जाते हैं हिंद से आज़ाद,
फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया।

आज जहाज़ पर सवार होता हूँ। दो घंटे और हिंदुस्तान में हूँ। उसके बाद सफ़र, सफ़र, सफ़र। मैं ख़ुश हूँ। मगर इस ख़याल से जी बेचैन है कि तुम बेक़रार होगी। अगर यह मालूम हो जाता कि तुम भी ख़ुश हो, तो जी जाता। अब तो यही धुन है कि कब रूम पहुँचूँ। बस, रुख्सत।

—तुम्हारा आज़ाद।

'हाँ, प्यारी सिपहआरा को खूब समझाना। उनका दिल बहुत नर्म है। इस वक़्त ख़ोजी पानी की सूरत देख कर मचल रहे हैं।'

हुस्नआरा—यह मुआ ख़ोजी अभी जीता ही है?

सिपहआरा—उसे तो पानी का नाम सुन कर जूड़ी चढ़ आती थी।

हुस्नआरा—आख़िर बेचारे जहाज़ पर सवार हो गये! अब देखें, रूम से कब ख़त आता है?

सिपहआरा—अब तो फ़ाल पर ईमान लायी ? देखा, मैं क्या कहती थी ? अब मिठाई खिलवाइए। जरी, कोई यहाँ आना। पाँच रुपये की पँचमेल मिठाई लाओ।

हुस्नआरा—यह क्या ख़ब्त है ?

सिपहआरा—आपकी बला से। एक डली तुम भी खा लेना।

हुस्नआरा—ख़ूब ! पाँच रुपये की मिठाई, और उसमें हमको एक डली मिले ? आते ही आते आधी न चख जाऊँ, तो कहना।

सिपहआरा—वाह, दे चुकी मैं ! ऐसी कच्ची नहीं हूँ।

हुस्नआरा—भला, किताब से आगे का हाल क्या मालूम होगा ? मुझे बड़ी हँसी आती है, जब कोई फ़ाल देखता है। आँखें बंद किये हुए थोड़ी देर बड़बड़ाये, और किताब खोली। फिर अपने-अपने तौर पर मतलब निकालने लगे। यह सब ढकोसला है। हमको बड़े उस्ताद ने सबक़ पढ़ाया है।

थोड़ी देर में सिपाही ने बाहर से आवाज़ दी कि मामा, मिठाई ले जाओ। सि[illegible]आरा दौड़ी—मुझे देना। हुस्नआरा अलग फुर्ती से झपटी कि हमें,हमें। अब मामा बेचारी किसको दे, एक चंगेल, दो गाहक। उसने हुस्नआरा को चंगेली दे दी।

हुस्नआरा—अब बतलाइए, खाने में लग्गा लगाऊँ ? बरफ़ी पर चाँदी के चमकते हुए वर्क़ कितनी बहार देते हैं।

सिपहआरा—मामा, तुम दीवानी हो गयी हो कुछ ? रुपये हमने दिये थे या इन्होंने ? पराया माल क्या झप से उठा दिया ! वाह-वाह ! हाँ-हाँ—कहती जाती हूँ, सुनती ही नहीं।

मामा—वह आपकी बड़ी...

सिपहआरा—चलो, बस रहने भी दो। ऊपर से बातें बनाती हो।

सिपहआरा ने मिठाई बाँटी, तो मामा हुस्नआरा की बूढ़ी दादी को भी उसमें से दस-पाँच डलियाँ दे आयी।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी !

मामा—हुजूर, हुस्नआरा ने फ़ाल देखी थी।

बूढ़ी—फ़ाल कैसी ?

मामा—चिट्ठी आयी थी कहीं से।

बूढ़ी—चिट्ठी कैसी ?

मामा—बीबी, वही जो हैं, देखिए, क्या नाम है उनका जदाई।

बूढ़ी—जदाई कैसी ? ला, मेरी छड़ी तो दे।

बूढ़ी बेगम कमर झुकाये, लठिया टेकते हुए चलीं। आ कर देखा, दोनों बहन मिठाई चख रही हैं।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी आयी है ?

सिपहआरा—अम्माँजान, हुस्नआरा हमसे शर्त हारी है। कहती थीं, हमारे दीवान-हाफ़िज़ में चार सौ सफ़े हैं; मैंने कहा, नहीं चार सौ चालीस हैं।

बूढ़ी—यह बात थी ! मामा सठिया गयी है क्या ? जाने क्या-क्या बकती थी।

शाम के वक़्त दोनों बहनें सहेलियों के साथ हाथ में हाथ दिये छत पर अठखेलियाँ कर रही थीं। एक ने दूसरे के चुटकी ली, किसी ने किसी को गुदगुदाया, ज़रा ख़याल नहीं कि तिमंज़िले पर खड़ी हैं, जरा पाँव डगमगाया तो ग़ज़ब ही हो जाय। हवा सन-सन चल रही थी। एकाएक एक पतंग आ कर गिरी। सिपहआरा ने लपक कर लूट लिया। आहाहा, इस पर तो किसी ने कुछ लिखा है—माहीजालवाला पतंग, सब की सब दौड़ पड़ीं। हुस्नआरा ने ये शेर पढ़ कर सुनाये—

बहुत तेज़ है आजकल तीरे मिज़गाँ;
कोई दिल निशाना हुआ 'चाहता है।
मेरे क़त्ल करने को आता है क़ातिल;
तमाम आज क़िस्सा हुआ चाहता है।

हुस्नआरा का माथा ठनका कि कुछ दाल में काला है। ताड़ गयी कि कोई नये आशिक़ पैदा हुए, मुझ पर या सिपहआरा पर शैदा हुए। मालूम नहीं, कौन है ? कहीं मुझे बाहर देख तो नहीं लिया ? दिमाग़ फिर गया है मुए का। जब सब सहेलियाँ अपने-अपने घर चली गयीं तो हुस्नआरा ने बहन से कहा—तुम कुछ समझीं ? यह पतंग पर क्या लिखा था ? तुम तो खेल रही थीं; मैं उस वक्त से इसी फ़िक्र में हूँ कि माजरा क्या है ?

सिपहआरा—कुछ-कुछ तो मैं भी समझती हूँ; मगर अब किसी से कहो-सुनो नहीं।

हुस्नआरा—लच्छन बुरे हैं। इस पतंग को फाड़-फूड़ कर फेक दो। कोई देखने न पाये।

इतने में ख़िदमतगार ने मामा को आवाज़ दी और मामा बाहर से एक लिफ़ाफ़ा ले आयी। हुस्नआरा ने जो लिफ़ाफ़ा लिया, तो मारे ख़ुशबू के दिमाग़ तर हो गया। फिर माथा ठनका। ख़ुशबू कैसी ! मामा से बोली—किसने दिया है ?

मामा—एक आदमी ख़िदमतगार को दे गया है। नाम नहीं बताया। दिया और लंबा हुआ।

सिपहआरा—खोलो तो, देखो है क्या ?

लिफ़ाफ़ा खोला, तो एक ख़त निकला। लिखा था—'एक ग़रीब मुसाफ़िर हूँ, कुछ दिनों के लिए आपके पड़ोस में आ कर ठहरा हूँ। इसलिए कोई ग़ैर न समझिएगा। सुना है कि आप दोनों बहनें शतरंज खेलने में बर्क़ हैं। यह नक़्शा भेजता हूँ। मेरी ख़ातिर से इसे हल कर दो, तो बड़ा एहसान हो। मैंने तो बहुत दिमाग़ लड़ाया, पर नक़्शा समझ में न आया।

—मिरज़ा हुमायूँ फ़र।'

इस ख़त के नीचे शतरंज का एक नक़्शा दिया हुआ था।

सिपहआरा—बा जी, सच कहना, यह तो कोई बड़े उस्ताद मालूम होते हैं। मगर

तुम ज़रा ग़ौर करो, तो चुटकियों में हल कर लो। तुम तो बड़े-बड़े नक़्शे हल कर लेती हो। भला इसकी क्या हक़ीक़त है!

हुस्नआरा—बहन, यह नक़्शा इतना आसान नहीं है। इसको देखो तो अच्छी तरह। मगर यह तो सोचो कि भेजा किसने है!

सिपहआरा—हुमायूँ फ़र तो किसी शाहज़ादे ही का नाम होगा। मामा को बुलाओ और कहो, सिपाही से पूछे, कौन लाया था? क्या कहता था? आदमी का पता मिल जाय, तो भेजनेवाले का पता मिला दाख़िल है।

मामा ने बाहर जा कर इशारे से सिपाही को बुलाया।

सिपाही—कहो, क्या कहती हो?

मामा—जरी, इधर तो आ।

सिपाही—वहाँ कोने में क्या करूँ आनके। कोई वहाँ हौले-हौले बातें करते देखेगा, तो क्या कहेगा। यहाँ से निकलवा दोगी क्या?

मामा—ऐ चल छोकरे! कल का लौंडा, कैसी बातें करता है? छोटी बेगम पूछती हैं कि जो आदमी लिफ़ाफ़ा लाया था, वह किधर गया? कुछ मालूम है?

सिपाही—वह तो बस लाया, और देके चम्पत हुआ; मगर मुझे मालूम है, वह, सामनेवाले बाग़ में एक शाहज़ादे आनके टिके हैं, उन्हीं का चोबदार था।

हुस्नआरा ने यह सुना, तो बोली—शाहज़ादे तो हैं, मगर बदतमीज़।

सिपहआरा—यह क्यों?

हुस्नआरा—अव्वल तो किसी कुँआरी शरीफ़ज़ादी के नाम ख़त भेजना बुरा, दूसरे पतंग गिराया। ख़त भेजा, वह भी इत्र में बसा हुआ।

सिपहआरा—बा जी, यह तो बदगुमानी है कि खत को इत्र से बसाया। शाहज़ादे हैं, हाथ की ख़ुशबू ख़त में भी आ गयी। मगर ख़त अदब से लिखा है।

हुस्नआरा—उनको ख़त भेजने की जुर्रत क्योंकर हुई। अब ख़त आये, तो न लेना, ख़बरदार। वह शाहज़ादे, हमारा उनका मुक़ाबला क्या? और फिर बदनामी का डर।

सिपहआरा—अच्छा, नक़्शा तो सोचिए। इसमें तो कोई बुराई नहीं!

हुस्नआरा ने बीस मिनट तक ग़ौर किया और तब हँस कर बोली—लो, हल कर दिया। न कहोगी। अल्लाह जानता है, बड़ी टेढ़ी खीर है। लाओ, फिर अब जवाब तो लिख भेजें। मगर डर मालूम होता है कि कहीं उँगली देते ही पहुँचा न पकड़ लें। जाने भी दो। मुफ़्त की बदनामी उठाना भला कौन सी दानाई है!

सिपहआरा—नहीं-नहीं बहन, ज़रूर लिख भेजो। फिर चाहे कुछ न लिखना।

हुस्नआरा—अच्छा, लाओ लिखें, जो होना होगा, सो होगा!

सिपहआरा—हम बतायें। ख़त-वत तो लिखो नहीं, बस, इस नक़्शे को हल करके डाक में भेज दो।

शहर से कोई दो कोस के फ़ासले पर एक बाग़ है, जिसमें एक आलीशान इमारत बनी हुई है। इसी में शाहज़ादा हुमायूँ फ़र आ कर ठहरे हैं। एक दिन शाम के वक़्त शाहज़ादा साहब बाग़ में सैर कर रहे थे और दिल ही दिल में सोचते जाते थे कि शाम भी हो गयी मगर ख़त का जवाब न आया। कहीं हमारा ख़त भेजना उन्हें बुरा तो न मालूम हुआ। अफ़सोस, मैंने जल्दी की। जल्दी का काम शैतान का। अपने ख़त और उसकी इबारत को सोचने लगे कि कोई बात अदब के ख़िलाफ़ ज़बान से निकल गयी हो तो ग़ज़ब ही हो जाय। इतने में क्या देखते हैं कि एक आदमी साँड़नी पर सवार दूर से चला आ रहा है। समझे, शायद मेरे ख़त का जवाब लाता होगा। ख़िदमतगारों से कहा कि देखो, यह कौन आदमी है? ख़त लाया है या ख़ाली हाथ आया है? आदमी लोग दौड़े ही थे कि साँड़नी सवार हवा हो गया।

थोड़ी देर में एक चपरासी नज़र आया। समझे, बस, यह क़ासिद है। चपरासी ने दरबान को ख़त दिया और शाहज़ादा साहब की बाँछें खिल गयीं। दिल ने गवाही दी कि सारी मुरादें मिल गयीं। ख़त खोला, तो एक लेक्चर का नोटिस था। मायूस हो कर ख़त को रख दिया और सोचा कि अब ख़त का जवाब आना मुश्किल है। ग़म ग़लत करने को एक ग़ज़ल गाने लगे। इतने ही में डाक का हरकारा लाल पगिया जमाये, धानी दगला फड़काये, लहबर तोते की सूरत बनाये आ पहुँचा और ख़त दे कर रवाना हुआ। शाहज़ादे ने ख़त खोला और इबारत पढ़ी तो फड़क गये। हाय, क्या प्यारी ज़बान है, क्या बोल-चाल है। ज़बान और बयान में भी निगाह की तरह जादू कूट-कूट कर भरा है। उस नाज़ुक हाथ के सदक़े, जिसने ये सतरें लिखी हैं। लिखते वक़्त कलाई लचकी जाती होगी। एक-एक लफ़्ज़ से शोख़ी टपकती है, एक-एक हरफ़ से रंगीनी झलकती है। और नक़्शा तो ऐसा हल किया कि क़लम तोड़ दिये। आख़िर में लिखा था—

इश्क़ का हाल बेसवा जानें,
हम बहू-बेटियाँ ये क्या जानें?

ख़ुद ही शेर पढ़ते थे और ख़ुद ही जवाब देते थे।

एकाएक उनके एक दोस्त आये और बोले—कहिए, कुछ जवाब आया? या धता बता दिया?

शाहज़ादा—वाह, धता तुम जैसों को बताती होंगी। लो, यह जवाब है।

दोस्त—(लिफ़ाफ़ा पढ़ कर) वाह, बड़े अदब से ख़त लिखा है।

शाहज़ादा—जनाब, कुछ बाज़ारी औरतें थोड़े हैं। एक-एक लफ़्ज से शराफ़त बरसती है।

दोस्त—फिर पूछते क्या हो ! गहरे हैं। हमें न भूलिएगा।

अब शाहज़ादे को फ़िक्र हुई कि किसी तरह मुलाक़ात की ठहरे। बने या बिगड़े। जब आमने-सामने बात हो, तब दिल को चैन आये। सोचते-सोचते आपको एक हिकमत सूझ ही गयी। मूँछों का सफ़ाया कर दिया, नकली बाल लगा लिये, ज़नाने कपड़े पहने और पालकी पर सवार हो कर हुस्नआरा के दरवाज़े पर जा पहुँचे। अपनी महरी को साथ ले लिया था। महरी ने पुकारा—अरे, कोई है ? जरी अंदर खबर कर दो कि मिरज़ा हुमायूँ फ़र की बहन मिलने आयी हैं।

बड़ी बेगम ने जो सुना, तो आ कर हुस्नआरा से बोलीं—ज़रा क़रीने से बैठाना। तमीज़ से बातें करना। कोई भारी सा जोड़ा पहन लो, समझीं !

हुस्नआरा—अम्माँजान, कपड़े तो बदल लिये हैं ?

बड़ी बेगम—देखूँ। यह क्या सफ़ेद दुपट्टा है ?

हुस्नआरा—नहीं, अम्माँजान, गुलाबी है। वही जामदानी का दुपट्टा जि[illegible] कामदानी की आड़ी बेल है।

बड़ी बेगम—बेटा, कोई और भारी जोड़ा निकालो।

हुस्नआरा—हमें तो यही पसंद है।

इतने में आशिक़ बेगम पालकी से उतरीं और जा कर बोलीं—आदाब बजा लाती हूँ।

हुस्नआरा—तस्लीम ! आइए।

आशिक़—आओ बहन, गले तो मिलें।

दोनों बहनें बेझिझक आशिक़ बेगम से गले मिलीं।

सिपहआरा—

आमद हमारे घर में किसी महलक़ा की है ;
यह शाने किर्दगार यह कुदरत ख़ुदा की है।

हुस्नआरा—

यह कौन आया है रख कर फूल, मुए अंबर अफ़शाँ में ;
सबा इतरायी फिरती है जो इन रोजों गुलिस्ताँ में।

आशिक़—

'सफ़दर' ज़बाँ से राज़े मुहब्बत अयाँ न हो ;
दिल आशनाए-दर्द हो, लब पर फ़ुग़ाँ न हो।

सिपहआरा—आपने आज ग़रीबों पर करम किया। हमारे बड़े नसीब।

आशिक़—बहन, हमारी तो कई दिन से ख्वाहिश थी कि आपसे मिलें, मगर फिर हम सोचे कि शायद आपको नागवार हो। हम तो ग़रीब हैं। अमीरों से मिलते हुए ज़रा वह मालूम होता है।

हुस्नआरा—बजा है। आप तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से शाहज़ादी हैं, हम तो आपकी रिआया हैं।

आशिक़—आप दोनों बहनें एक दिन कोठे पर टहल रही थीं, तो हुमायूँ फ़र ने मुझे बुला कर दिखाया था।

हुस्नआरा ने गिलौरी बना कर दी और आशिक़ बेगम ने उन्हीं के हाथों से खायी। कत्था केवड़े में बसा हुआ, चाँदी-सोने का वर्क़ लगा हुआ, चिकनी डली और इलायची। ग़रज़ कि बड़े तक़ल्लुफ़ वाली गिलौरियाँ थी। थोड़ी देर के बाद तरह-तरह के खाने दस्तरख़्वान पर चुने गये और तीनों ने मिल कर खाना खाया। खाना खा कर आशिक़ बेगम ने बेतक़ल्लुफ़ी से हुस्नआरा की रानों पर सिर रख दिया और लेट रहीं। सिपहआरा ने उठ कर कश्मीर का एक दुशाला उढ़ा दिया और क़रीब आ कर बैठ गयी।

आशिक़—बहन, अल्लाह जानता है, तुम दोनों बहनें चाँद को भी शरमाती हो।

हुस्नआरा—और आप ?

अपने जोबन से नहीं यार ख़बरदार हनोज़ ;
नाज़ी-अंदाज़ से वाक़िफ़ नहीं ज़िनहार हनोज़।

तीनों में बहुत देर तक बातें होती रहीं। दस बजे के क़रीब आशिक़ बेगम उठ बैठीं और फ़रमाया कि बहन, अब हम रुख़सत होंगे। ज़िंदगी है तो फिर मिलेंगे।

सिपहआरा—

बेचैन कर रहा है क्या-क्या दिलोजिगर को ;
हरदम किसी का कहना, जाते हैं हम तो घर को।

इस तरह मुहब्बत की बातें करके आशिक़ बेगम रुख़सत हुईं और जाते वक़्त कह गयीं कि एक दिन आपको हमारे यहाँ आना पड़ेगा। पालकी पर सवार हो कर आशिक़ बेगम ने मामाओं, ख़िदमतगारों और दरबानों को दो-दो अशर्फ़ियाँ इनाम की दीं और चुपके से मामा को एक तसवीर दे कर कहा कि यह दे देना।

कहारों ने तो पालकी उठायी और मामा ने अंदर जा कर तसवीर दी। हुस्न-आरा ने देखा, तो धक से रह गयीं। तसवीर के नीचे लिखा था—

'प्यारी,

मैं आशिक़ बेगम नहीं हूँ, हुमायूँ फ़र हूँ। अब अगर तुमने बेवफ़ाई की तो ज़हर खा कर जान दे दूँगा।'

हुस्नआरा—बहन, ग़ज़ब हो गया !

सिपहआरा—क्या, हुआ क्या ? बोलो तो !

हुस्नआरा—लो, यह तसवीर देखो।

सिपहआरा—(तसवीर देख कर) अरे, ग़ज़ब हो गया ! इसने तो बड़ा ज़ुल दिया।

हुस्नआरा—(हीरे की कील नाक से निकाल कर) बहन, मैं तो यह खा कर सो रहती हूँ।

सिपहआरा—(कील छीन कर) उफ़् ज़ालिम ने बड़ा धोखा दिया।

हुस्नआरा—हम गले मिल चुकीं। ज़ालिम जानू पर सिर रख कर सोया।

सिपहआरा—मगर बा जी, इतना तो सोचो कि बहन कह-कह कर बात करते थे। बहन बना गये हैं।

हुस्नआरा—यह सब बातें हैं। किसकी बहन और कैसा भाई!—

वह यों मुझे देख कर गया है;
खाल उसकी जो खींचिए, सज़ा है!

सिपहआरा—वाह! किसी की मजाल पड़ी है जो हमसे शरारत करे!

हुस्नआरा—ख़बरदार, अब उससे कुछ वास्ता न रखना। आदमियों को ताकीद कर दो कि किसी का ख़त बेसमझे-बूझे न लें, वर्ना निकाल दिये जायँगे!

सिपहआरा—जरी सोच लो। लोग अपने दिल में क्या कहेंगे कि अभी तो इतने जोश से मिलीं और अभी यह नादिरी हुक्म।

हुस्नआरा—हाँ, सच तो है। अभी तक हमी तुम जानते हैं।

सिपहआरा—कहीं ऐसा न हो कि वह किसी से ज़िक्र कर दें।

हुस्नआरा—इससे इतमिनान रखो। वह शोहदे तो हैं नहीं।

सिपहआरा—वाह, शोहदे नहीं, तो और हैं कौन! शोहदों के सिर पर क्या सींग होते हैं?

हुस्नआरा—अब आज से छत पर न चढ़ना।

सिपहआरा—वाह बहन, बीच खेत चढ़ें। किसी ने देख ही लिया तो क्या! अपना दिल साफ़ रहना चाहिए।

हुस्नआरा—मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि शाहज़ादे साहब तुम्हारी फ़िक्र में हैं।

सिपहआरा—चलिए, बस, अब छेड़खानी रहने दीजिए।

हुस्नआरा—अरे वाह! दिल में तो ख़ुशी हुई होगी। चाहे ज़बान से न कहो।

सिपहआरा—आप भी क्या वाही-तबाही बकती हैं?

हुस्नआरा—आख़िर बुरा क्या है? शाहज़ादे हैं कि नहीं। और सूरत तो तुम देख ही चुकी हो। लो आज के दूसरे ही महीने दरवाज़े पर शहनाई बजती होगी।

सिपहआरा—हम उठ कर चले जायँगे, हाँ! यह हँसी हमको गवारा नहीं।

हुस्नआरा—ख़ुदा की क़सम, मैं दिल्लगी से नहीं कहती। आख़िर उस बेचारे में क्या बुराई है! हसीन, मालदार, शौक़ीन, नेकबख़्त।

सिपहआरा—बस, और दस-पाँच बातें कहिए न।

सिपहआरा के दिल पर इन बातों का बहुत बड़ा असर हुआ। आदमी की तबीयत भी क्या जल्द पलटा खाती है। अभी तो हुमायूँ फ़र को बुरा-भला कह रही थीं और अब दिल ही दिल में खिली जाती हैं कि हाँ, है तो सच! आख़िर उनमें ऐब ही क्या है?

दोनों बहनों में तो ये बातें हो रही थीं और वह महरी, जो आशिक़ बेगम के साथ

आयी थी, दरवाज़े पर चुपकी खड़ी सुन रही थी। जब हुस्नआरा चुप हुईं, तो उसने अंदर पहुँच कर सलाम किया।

हुस्नआरा—कौन हो ?

महरी—हुज़ूर, मैं हूँ अच्छन।

हुस्नआरा—कहाँ से आयी हो ?

महरी—आप मुझे इतनी जल्द भूल गयीं ! बेगम साहबा ने भेजा है।

हुस्नआरा—बेगम साहबा कौन ?

महरी—वही आशिक़ बेगम जो आपसे मिल गयी हैं।

हुस्नआरा—कहो, क्या पैग़ाम भेजा है।

महरी—(मुसकिरा कर) हुज़ूर को ज़रा वहाँ तक तकलीफ़ दी है।

महरी का मुसकिराना दोनों बहनों को बहुत बुरा लगा। मगर करतीं क्या। महरी उन्हें चुप देख कर फिर बोली—बेगम साहबा ने फ़रमाया है कि अगर कुछ हर्ज न हो, तो इस वक़्त हमारे यहाँ आइए।

सिपहआरा—कह देना, हमें फ़ुरसत नहीं।

महरी—उन्होंने कहा है कि अगर आपको फ़ुरसत न हो, तो मैं ख़ुद ही आ जाऊँ।

सिपहआरा—जी, कुछ ज़रूरत नहीं है। बस, अब दूर ही से सलाम है। और अब आज से तुम न आना यहाँ। सुना कि नहीं ?

महरी—बहुत अच्छा। लौंड़ी हुक्म बजा लावेगी। बेगम साहबा की जैसी नौकरी, वैसी ही हुज़ूर की।

सिपहआरा—चलो, बस। बहुत बातें न बनाओ। कह देना, ख़ैर इसी में है कि अब कोई ख़त वत न आये। शाहज़ादे हैं, इससे छोड़ दिया, कोई दूसरा होता तो ख़ून हो जाता। इतने बड़े शाहज़ादे और ग़रीब शरीफ़ज़ादियों पर नज़र डालते हैं। बस चले, तो वह सज़ा दूँ कि उम्र भर याद करें। वाह ! अच्छा जाल फैलाया है।

हुस्नआरा—बस, अब ख़ामोश भी रहो। कोई सुन लेगा। अब कुछ कहो न सुनो। (महरी से) चलो, सामने से हटो।

महरी—हुज़ूर, जानबख़्शी हो तो अर्ज़ करूँ।

हुस्नआरा—अब तुम जाओ, हमने कई दफ़े कह दिया। नहीं पछताओगी।

महरी रवाना हुई। क़सम खायी कि अब नहीं आने की। सिपहआरा का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल-भभूका हो गया। हुस्नआरा समझाती थीं कि बहन, अब और बातों का खयाल करो। लेकिन सिपहआरा ठंडी न होती थीं। बहुत देर के बाद बोलीं—बस, मालूम हुआ कि कोई शोहदा है; अगर सच्ची मुहब्बत है, तो हया और शर्म के साथ ज़ाहिर करना चाहिए या इस बेतुकेपन से ?

४३

शाहज़ादा हुमायूँ फ़र महरी को भेज कर टहलने लगे, मगर सोचते जाते थे कि कहीं दोनों बहनें ख़फ़ा न हो गयी हों, तो फिर बेढब ठहरे। बात की बात जाय, और शायद जान के भी लाले पड़ जायँ। देखें, महरी क्या खबर लाती है। खुदा करे, दोनों महरी को साथ ले कर छत पर चली आवें। इतने में महरी आयी और मुँह फुला कर खड़ी हो गयी।

शाहज़ादा—कहो, साफ़-साफ़।

महरी—हुजूर, क्या अर्ज़ करूँ!

शाहज़ादा—वह तो हम तुम्हारी चाल ही से समझ गये थे कि बेढब हुई। कह चलो, बस।

महरी—अब लौंडी वहाँ नहीं जाने की।

शाहज़ादा—पहले मतलब की बात तो बताओ कि हुआ क्या?

महरी—मैंने जा कर परदे के पास से सुना कि आप ही की बातें चुपके-चुप[illegible] रही हैं। मैं जो गयी, तो बड़ी बहन ने रुखाई के साथ बातें कीं, और छोटी बहन तो बस, बरस ही पड़ीं। मैं खड़ी काँप रही थी कि किस मुसीबत में पड़ी। बहुत तेज़ होके बोलीं—अब न आना, नहीं तो तुम जानोगी। और उनसे भी कान खोलके कह देना कि बहुत चल न निकलें। बहुत ही बिगड़ीं। मैं चोर की तरह चुपके-चुपके सुनती रही।

हुमायूँ—अफ़सोस! तो बहुत ही बिगड़ीं?

महरी—क्या कहूँ हुजूर, अपने आपे ही में नहीं थीं।

हुमायूँ—हमने बड़ी ग़लती की। पहले तो हमें जाना न था, और गये तो पहचनवाना न था।

महरी—अब जाने वाने का इरादा न कीजिएगा?

दूसरे दिन हुमायूँ फ़र छत पर निकले, तो क्या देखते हैं कि हुस्नआरा बेगम अपने कोठे पर चढ़ी हैं और मुँह पर नक़ाब डाले खड़ी हैं। इतने में सिपहआरा भी ऊपर आयीं और शाहज़ादे को देखते ही उचक कर आड़ में हो रहीं। दम के दम में हुस्नआरा भी आँखों से ओझल हो गयीं। बेचारे नज़र भर कर देखने भी न पाये थे कि दोनों नज़र से ग़ायब हो गयीं। सोचे, ऐसी ही हया फट पड़ी थी, तो कोठे पर क्यों आयीं!

अब उधर की कैफ़ियत सुनिए। हुस्नआरा को मालूम ही न था कि हज़रत इस वक़्त कोठे पर टहल रहे हैं। जब सिपहआरा ने कोठे पर आ कर शाहज़ादे को देख लिया तो चुपके से कहा—बहन, यहीं बैठ जाओ, वह ताक-झाँक से बाज़ न आवेंगे।

हुस्नआरा ने छलाँग भरी, तो खट से नीचे। सिपहआरा भी उचक कर ज़ीने पर जा पहुँची!

हुस्नआरा—पटकी पड़े। ऐ वाह, अच्छा घर परख लिया है।

सिपहआरा—मेरा बस चले, तो उसका घर उजड़वा दूँ।

हुस्नआरा—यह क्या सितम करती हो? घर आबाद करते हैं या उजड़वाते हैं?

सिपहआरा—बा जी, अल्लाह खैर करे। यह मुआ जब देखो, कोठे पर खड़ा रहता है।

हुस्नआरा—तो तुम काहे को अपनी ज़बान खराब करती हो? आदमी ही तो वह भी है!

सिपहआरा—बा जी, तुम चाहे मानो, चाहे न मानो; यह मुआ बहुरुपिया है कोई।

इतने में एक लौंडो ने आ कर कहा—लीजिए, बड़ी बेगम साहब ने यह मिठाई दी है। वह जो उस दिन आयी नहीं थीं, उन्होंने मिठाइयों के दो ख्वान भेजे हैं।

लौंडी की लड़की का नाम प्यारी था। उसने मिठाई जो देखी, तो तुतला कर बोली—जला सी हमें दीजिए।

सिपहआरा—अरे वाह, इनको दीजिए। बड़ी वह बनके आयी हैं! अच्छा, इतना बता दे कि कै ब्याह करेगी?

प्यारी—पहले मिठाई दीजिए, तो बताऊँ।

सिपहआरा—तो मिल चुकी। गढ़ैया में मुँह धो आ।

प्यारी—मैं एक खसम करूँगी, औल फिल छोड़के दूसला। और फिल तीसला। फिल चौथा। उन सबको लातें माल माल के निकाल दूँगी। ले, अब दीजिए।

सिपहआरा—जा अब न दूँगी।

हुस्नआरा—दे दो, दे दो, रो रही है।

सिपहआरा—अच्छा ले, मगर पानी न पीने दूँगी।

प्यारी—हाँ, न पीऊँगी। लाओ तो जला।

इस पर क़हक़हा पड़ा। जरा सी लड़की और कैसी बातें बनाती है! इतने में बड़ी बेगम आ कर बोलीं—अरे, तुम्हारी वही गोइयाँ जो उस दिन आयी थीं, उन्हीं के यहाँ से मिठाई के दो ख्वान आये हैं। एक औरत साथ थी। कह गयी है कि दोनों बहनों को कल बुलाया है। सो कल किसी वक़्त चली जाना, घड़ी दो घड़ी दिल बहलाके चली आना। नहीं तो मुफ़्त की शिकायत होगी।

हुस्नआरा—कल की कल के हाथ है अम्माँजान!

बेगम साहबा तो चली गयीं। इधर हुस्नआरा का रंग उड़ गया। बोलीं—बहन, यह टेढ़ी खीर है।

सिपहआरा—एक काम कीजिए। अब बे खुशामद के काम न चलेगा। उनके नाम एक खत लिखिए और साफ़-साफ़ मतलब समझा दीजिए। मुए को अच्छे-अच्छे

लटके याद हैं। जब इधर दाल न गली, तो अम्माँजान से लासा लगाया और वह भी कितनी भोली हैं !

एकाएक दरवाज़े पर एक नया गुल खिला। दस बारह आदमियों ने मिल कर गाना शुरू किया—

मान करे नँदलाल सों,
सोहागिन जचा मान करे नँदलाल सों।
दूध-पूत और अन्न-धन-लच्छमी
गोद खिलाये नँदलाल सों। मान०।

दस पाँच आदमी गाते हैं। दो-चार ताल देते जाते हैं। दो-एक मजीरा बजाते हैं। एक हज़रत ढोलकी थप-थपाते हैं।

घर भर में खलबली मच गयी कि यह माजरा क्या है? लड़का किसके हुआ है? बड़ी बेगम बेवा, दोनों बहनें कुँआरी। यह क्या अंधेर है भई !

मामा—अरे, तुम कौन लोग हो?

कई आदमी—ऐ हुज़ूर, खुदा सलामत रखे। भाँड़ हैं।

एक साहब हिनहिना कर बोले—मेरे बछेड़े की कुछ न पूछो। यह माँ के पेट ही से हिनहिनाता निकला था।

दूसरे साहब ने उचक कर फ़रमाया- हें-हें-हें, दो बागे हैं, और उधर तालियाँ बज रही हैं। 'मान करे नँदलाल...'

बड़ी बेगम—अरे लोगों, यह है क्या? यह दिन-दहाड़े क्या अंधेर है? इन निगोड़े भाँड़ों से पूछो—आये किसके यहाँ हैं?

दरबान—चुप रहो जी, आख़िर कहाँ आये हो?

एक भाँड़—वाह शेरा, क्यों न हो। क्या तुम हिलाके भूँके हो।

दरबान—आख़िर तुम लोगों से किसने क्या कहा? कुछ घास तो नहीं खा गये हो?

मामा—यह क्या ग़ज़ब करते हो !

भाँड़—ग़ज़ब पड़े बुरे की जान पर, और आँख लड़े हमसे।

सिपाही—मियाँ, क़सम खा कर कहते हैं कि यहाँ लड़का-वड़का नहीं हुआ। तुम मानते ही नहीं हो।

भाँड़—वाह जवान! क्यों न हो, खड़ी मूँछें और चढ़ी दाढ़ी।

सिपाही—(आहिस्ता) भला लड़का होगा किसके? दो लड़कियाँ, वे कुँआरी हैंगी; एक बड़ी बेगम, वह बूढ़ी खप्पट। और तो कोई औरत ही नहीं; तुम यह बक क्या रहे हो !

भाँड़—यह अच्छी दिल्लगी है भई, फिर उस मर्दक ने कहा ही क्यों था?

सिपाही—यह काँटे किसके बोये हुए हैं?

भाँड़—अरे साहब, कुछ न पूछिए। बड़ा चकमा हो गया।

दरबान—ले, अब मजीरा वजीरा हटाओ; नहीं तो यहीं ठीक किये जाओगे।

भाँड़—वल्लाह, हो बड़े नमकहलाल।

उधर दोनों बहनों में यों बातें होने लगीं—

सिपहआरा—यह उसी की शरारत है।

हुस्नआरा—किनकी? नहीं; तोबा।

सिपहआरा—आप चाहे न मानें, हम तो यही कहेंगे।

हुस्नआरा—बहन, वह शाहज़ादा हैं, उनसे यह हरकत नहीं हो सकती।

सिपहआरा—अच्छा, फिर ये भाँड़ क्यों आये? अगर किसी ने बहका कर भेजा नहीं, तो आये कैसे?

हुस्नआरा—हाँ, कहती तो सच हो; मगर अल्लाह जानता है, उससे ऐसी हरकत नहीं हो सकती।

सिपहआरा—आप मेरे कहने से उन्हें एक खत लिख भेजिए कि फिर ऐसी हरकत की, तो हम ज़हर ही खा लेंगे।

हुस्नआरा खत लिखने पर राजी हो गयीं और यों खत लिखा—

'हया से मुँह न मोड़ेंगे, सताये जिसका जी चाहे;
वफ़ादारी में हमको आजमाये जिसका जी चाहे।
कभी मानिंदे गौहर आबरू 'सफदर' न जायेगी;
बज़ाहिर खाक में हमको मिलाये जिसका जी चाहे।

अरे ज़ालिम, कुछ खुदा का डर भी है? क्यों जी, शरीफ़ों की ये ही हरकतें होती है? शर्म नहीं आती! बहन बना कर अब ये शरारतें करते हो! ये ही मरदों के काम हैं! अगर अब किसी को भेजा तो हम हीरे की कनी खा लेंगी। खून तुम्हारी गर्दन पर होगा। आखिर तुम अपने दिल में हमको समझते क्या हो? अगर भूत सिर पर सवार है, तो कहीं और मुँह काला कीजिए। हम घरगिरस्त शरीफ़ज़ादियाँ, इन बातों से क्या वास्ता? दिल लेना जानें न दिल देना।

'काँटों में न हो अगर उलझना,
थोड़ा लिखा बहुत समझना।'

हुमायूँ फ़र के पास जब यह खत पहुँचा तो बहुत शरमाये। समझ गये कि यहाँ हमारी दाल न गलेगी। दिल में इरादा कर लिया कि अब भूल कर भी ऐसी चालें न चलेंगे।

४४

हुस्नआरा और सिपहआरा, दोनों रात को सो रही थीं कि दरबान ने आवाज़ दी—मामा जी, दरवाज़ा खोलो।

मामा—दिलबहार, देखो कौन पुकारता है?

दिलबहार—ऐ वाह, फिर खोल क्यों नहीं देतीं?

मामा—मेरी उठती है जूती; दिन भर की थकी-माँदी हूँ।

दिलबहार—और यहाँ कौन चंदन-चौकी पर बैठा है?

दरबान—अजी, लड़ लेना पीछे, पहले किवाँड़े खोल जाओ।

मामा—इतनी रात गये क्यों आफ़त मचा रखा है?

दरबान—अजी, खोलो तो, सवारियाँ आयी हैं।

हुस्नआरा—कहाँ से? अरे दिलबहार! मामा! क्या सब की सब मर गयीं? अब हम जायँ दरवाज़ा खोलने!

हुस्नआरा की आवाज़ सुन कर सब की सब एक दम उठ खड़ी हुई। मामा ने परदा करा कर सवारियाँ उतरवायीं।

सिपहआरा—अख़्ख़ाह रूहअफ़ज़ा बहन हैं, और बहारबेगम। आइए, बंदगी।

ये दोनों हुस्नआरा की चचेरी बहनें थीं। दोनों की शादी हो चुकी थी। ससुराल से दोनों बहनों से मुलाक़ात करने आयी थीं। चारों बहनें गले मिलीं। ख़ैर-आफ़ियत के बाद हुस्नआरा ने कहा—दो बरस के बाद आप लोगों से मुलाक़ात हुई।

बहारबेगम—हाँ, और क्या!

सब की सब बातें करते-करते सो गयीं। सुबह को हुस्नआरा ने बड़ी बेगम से दोनों बहनों के आने की ख़बर सुनायी।

बड़ी बेगम—जभी मेरी बायीं आँख फड़कती थी। मैं भी कहूँ कि अल्लाह, क्या ख़ुशख़बरी सुनूँगी। कहाँ, हैं कहाँ, ज़रा बुलाओ तो।

हुस्नआरा—अभी सो रही हैं।

बड़ी बेगम—ऐ, तो जगा दे बेटा! अच्छी तो हैं?

हुस्नआरा ने आ कर देखा, तो दोनों ग़ाफ़िल सो रही हैं। रूहअफ़ज़ा की लटें काली नागिन की तरह बल खा कर तकिये पर से पलँग के नीचे लहरा रही हैं। बहारबेगम का दुपट्टा कहीं है, दुलाई कहीं। हाथ सीने पर रखे हुए खर्राटे ले रही हैं।

हुस्नआरा—अजी, सोती ही रहिएगा! अम्माँजान बुलाती हैं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, अब तक आँखों में नींद भरी है। नमाज़ पढ़ लूँ, तो चलूँ।

हुस्नआरा—(बहारबेगम का हाथ हिला कर) ऐ बहन, अब उठो।

बहारबेगम—अल्लाह, इतना दिन चढ़ आया! सारे घर में धूप फैल गयी।

हुस्नआरा—उठिए, अम्मौंजान बुला रही हैं।

बहारबेगम—रूहअफ़ज़ा को तो जगाओ।

सिपहआरा—वह क्या बैठी हैं सामने।

दोनों ने उठ कर नमाज़ पढ़ी और बड़ी बेगम के पास चलीं। रूहअफ़ज़ा जाते ही बड़ी बेगम से चिमट गयीं। बहार भी उनसे गले मिलीं और अदब के साथ फ़र्श पर बैठीं।

बड़ी बेगम—क्यों रूहअफ़ज़ा, अब तो उस बीमारी ने पीछा छोड़ा? क्या कहते हैं, तोबा, मुझे तो उसका नाम भी नहीं आता।

सिपहआरा—(मुसकिरा कर) डेंगू बुखार। आप तो रोज़-रोज़ भूल जाती हैं।

बड़ी बेगम—हाँ, वही डंकू।

सिपहआरा—डंकू नहीं, डेंगू।

रूहअफ़ज़ा—अब एक महीने से पीछा छुटा है कहीं। मेरी तो जान पर बन आयी थी।

बड़ी बेगम—चेहरा कैसा ज़र्द पड़ गया है!

बहारबेगम—अब तो आप इन्हें अच्छी देखती हैं! यह तो घुल कर काँटा हो गयी थीं।

बड़ी बेगम—हकीम मुहम्मदहुसेन ने इलाज किया था न वहाँ?

रूहअफ़ज़ा—जी नहीं, एक डॉक्टर था।

बड़ी बेगम—ऐ है, भूले से इलाज न करना डागडर-वागडर का।

रूहअफ़ज़ा—मैं तो उसकी बोली ही न समझूँ। कहे, ज़बान दिखाओ। जब मुँह दिखावें तब तो ज़बान दिखावें? मैंने कहा—यह तो हश्र तक नहीं होने का। फ़िर नब्ज़ देखी, तो हाथ परदे से निकाल लिया और कहा, चूड़ियाँ उतार डालो। मैंने सोने की चूड़ियाँ तो उतार डालीं, मगर शीशे की एक चूड़ी पहने रही। तब कहने लगा, हमसे बातें करो। तब तो मैंने दूल्हा भाई को बुलाया और कहा—वाह साहब, आप तो अच्छे डॉक्टर को लाये! मुँह क्या, हम तो एड़ी भी न दिखावें और कहता है, हमसे बातें करो। यहाँ निगोड़ी गिटपिट किसे आती है! बस, दरगुज़री ऐसे इलाज से। आप इन्हें धता बताइए। इतने में उसने घड़ी जेब से निकाली और कहने लगा—गिनती गिनो। सुनिए, जैसे लड़कियों के मदरसे में इम्तहान ले रहे हों। आखिर मैंने एक-दो-पाँच-बीस-ग्यारह—अनाप-शनाप बका। बड़ी कड़वी दवाइयाँ दीं। बारे बच गयी।

बड़ी बेगम—बहार। यह तुम महीनों खत क्यों नहीं भेजती हो?

बहारबेगम—अम्माँजान, खतों का तो मैं तार बाँध दूँ, मगर जब कोई लिखनेवाला भी हो।

रूहअफ़ज़ा—यह तो गिरस्ती के धंधे में ऐसी पड़ गयीं कि पढ़ा-लिखा सब चौपट कर दिया।

हुस्नआरा—और दूल्हा भाई ने तो खत लिखने की क़सम खायी है।

रूहअफ़ज़ा – दिन भर बैठे शेर कहा करते हैं।

बड़ी बेगम—कहो, तुम्हारी सास तो अच्छी हैं!

बहारबेगम—हाँ, न मुझे मौत आती है, न उन्हें।

हुस्नआरा—कल परसों तक दूल्हा भाई यहाँ आवेंगे, तो मैं उनको खूब झाड़ूँगी।

बड़ी बेगम—बहार, सच्ची बात तो यह है कि तुम भी ज़रा तेज़-मिज़ाज हो।

सिपहआरा—जो एक गर्म और एक नर्म हो, तो बात बने। और जो दोनों तेज़ हुए, तो कैसे बने?

बहारबेगम --अब तुम अपनी सास से न लड़ना। तुम नर्म ही रहना। मेरे तो नाक में दम आ गया।

बड़ी बेगम—अबकी मिरज़ा यहाँ आयें, तो समझाऊँ।

बहारबेगम—अम्माँजान, मुझसे उनसे हश्र तक न बनेगी। जो कोई लौंडी-बाँदी भी मुझसे अच्छी तरह बातें करे, तो जल मरती हैं। और मैं जान-बूझ कर और जलाती हूँ।

हुस्नआरा—बहन, मिल-जुल कर रहना चाहिए।

बहारबेगम—जब तुम ससुराल जाओगी, ऐसी ही सास पाओगी और फिर मिल-जुल कर रहोगी, तो सात बार सलाम करूँगी।

रूहअफ़ज़ा—झगड़ा सारा यह है कि दूल्हा भाई इनकी खातिर बहुत करते हैं। बस, इनकी सास जली मरती हैं कि यह जोरू की खातिर क्यों करता है?

बहारबेगम—अल्लाह जानता है, हज़ारों दफे तरह दे जाती हूँ; मगर जब नहीं रहा जाता, तो मैं भी बकने लगती हूँ। मुझे तो उन्होंने बेहया कर दिया। अब वह एक कहती हैं, तो मैं दस सुनाती हूँ।

बड़ी बेगम—(पीठ ठोक कर) शाबाश!

हुस्नआरा—मेरी तरफ़ से पीठ ठोक दीजिएगा।

बहारबेगम—बहन, अभी किसी से पाला नहीं पड़ा। हमको तो ऐसा दिक़ कर रखा है कि अल्लाह करे, अब वह मर जायँ, या हम।

चारों बहनें यहाँ से उठ कर अपने कमरे में गयीं और बनाव-सिंगार करने लगीं। हुस्नआरा, सिपहआरा और रूहअफ़ज़ा तो बन-ठन कर मौजूद हो गयीं; मगर बहार-बेगम अभी बाल ही सँवार रही थीं।

रूहअफ़ज़ा—इन्हें जब देखो, बाल ही सँवारा करती हैं।

बहारबेगम—तुम आये दिन यही ताना दिया करती हो।

रूहअफ़ज़ा—ऐसी तो सूरत भी नहीं अल्लाह ने बनायी है!

बहारबेगम ने कोई दो घंटे में कंघी-चोटी से फ़राग़त पायी। फिर चारों निकल कर बातें करने लगीं। सिपहआरा डली कतरती थीं, हुस्नआरा गिलौरियाँ बनाती थीं,

रूहअफ़ज़ा एक तसवीर की तरफ़ ग़ौर से देखती थीं; मगर बहारबेगम की निगाह आईने ही पर थी।

सिपहआरा—अरे, अब तो आईना देख चुकीं ? या घंटों सूरत ही देखा कीजिएगा ?

बहारबेगम—तुम कहती जाओ, हम जवाब ही न देंगे।

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह जानता है, इन्हें यह मरज़ है।

सिपहआरा—हाँ, मालूम तो होता है।

बहारबेगम—तुम सब बहनें एक हो गयीं। अपनी ही ज़बान थकाओगी।

हुस्नआरा—रूहअफ़ज़ा, तुम उठ कर आईने पर कपड़ा गिरा दो।

रूहअफ़ज़ा—चिढ़ जायँगी।

हुस्नआरा—हाँ बहन, बताओ तो, यह बात क्या है ? सास से बनती क्यों नहीं तुमसे ?

बहारबेगम—ऐसी सास को तो बस, चुपके से ज़हर दे दे। कुछ कम सत्तर की होने आयीं, अभी ख़ासी कठौता सी बनी हैं। मेरा हाथ पकड़ लें, तो छुड़ाना मुश्किल हो जाय। मुई देवनी है।

हुस्नआरा—क्या यह भी कोई ऐब है ?

बहारबेगम—एक दिन का ज़िक्र सुनो, किसी के यहाँ से महरी आयी। कुछ मेवे लायी थी। वह उस वक़्त झूठ-मूठ क़ुरान-शरीफ़ पढ़ रही थीं। महरी ने आके मुझको सलाम किया और मेवे की तश्तरी सामने रख दी। बस, दिन भर मुँह फुलाये रहीं।

हुस्नआरा—मगर बातें तो बड़ी मीठी-मीठी करती हैं।

बहारबेगम—एक दिन किसी ने उनको दो चकोतरे दिये। उन्होंने एक चकोतरा मुझको भेजा और एक मेरी ननँद को। वह उनसे भी बढ़ कर बिस की गाँठ। जा कर माँ से जड़ दिया कि भाई ने हमको आधा सड़ा हुआ चकोतरा दिया और भाभी को बड़ा सा ! बस, इस पर सुबह से शाम तक चरखा कातती रहीं।

हुस्नआरा—मैं एक बात पूछूँ? सच-सच कहना। दूल्हा भाई तो प्यार करते हैं ?

बहारबेगम—यही तो ख़ैर है।

हुस्नआरा—दिल से ?

बहारबेगम—दिल और जान से

हुस्नआरा—भला, माँ से बनती है !

बहारबेगम—वह ख़ुद जानते हैं कि बुढ़िया चिड़चिड़ी औरत है।

हुस्नआरा—बहन, वह तो बड़ी हैं ही, मगर तुम भी तेज़ी के मारे उनको और जलाती हो। जो मिलके चलो, वह तुम्हारा पानी भरने लगें।

बहारबेगम—अच्छा तुम्हीं बताओ, कैसे मिल के चलूँ ?

हुस्नआरा—अब की जब जाओ, तो अदब के साथ झुक कर सलाम करो।

बहारबेगम—किसको ?

हुस्नआरा—अपनी सास को, और किसको।

बहारबेगम—वाह ! मर जाऊँ, मगर सलाम न करूँ मुरदार को।

हुस्नआरा—बस, यही तो बुरी बात है।

बहारबेगम—रहने दीजिए, बस। वह तो हमको देख कर जल मरें, और हम उनको झुकके सलाम करें। एक दिन मामा से बोलीं कि हमारा पानदान उसको क्यों दे आयी ? मेरे मुँह से बस, इतनी-सी बात निकल गयी कि मेरी सास काहे को हैं, यह तो मेरी सौत हैं। बस, इस पर इतना बिगड़ीं कि तोबा ही भली ?

हुस्नआरा—बहन, तुमने भी तो ग़ज़ब किया। तुम्हारे नज़दीक यह इतनी सी ही बात थी ? सास को सौत बनाया, और उसको इतनी सी ही बात कहती हो ! अगर तुम्हारी बहू आये और तुम्हें सौत बनाये, तब देखूँगी, उछलती-कूदती हो कि नहीं।

सिपहआरा—उफ् ! बड़ी बुरी बात कही।

रूहअफ़ज़ा—तो अब बन चुकी बस।

बहारबेगम—तुम सबको उसने कुछ रिशवत ज़रूर दी है। जब कहती हो, उसी की सी।

सिपहआरा—हमारी बहन, और ऐसी मुँह फ़ट ! सास को सौत बनाये !

हुस्नआरा—और फिर शरमाये न शरमाने दे।

बहारबेगम—अच्छा बताइए, तो पहले झुकके सलाम करूँ खूब जमीन पर सो कर। फिर ?

हुस्नआरा—मेरे तो बहन, रोंगटे खड़े हो गये कि तुमसे यह कहा क्योंकर गया !

बहारबेगम—बताओ-बताओ। हमारी क़सम, बताओ।

हुस्नआरा—तुम हँसोगी, और हमें होगा रंज।

बहारबेगम—नहीं, हँसेंगे नहीं। बोलो।

हुस्नआरा—जा कर सलाम करो।

बहारबेगम—जो वह जवाब न दें, तो अपना-सा मुँह ले कर रह जाऊँ ?

सिपहआरा—वाह ! ऐसा हो नहीं सकता।

हुस्नआरा—न जवाब दें, तो क़दमों पर गिर पड़ो।

बहारबेगम—मेरी पैज़ार गिरती है क़दमों पर। वह जैसा मेरे साथ करती हैं, वैसा उनकी आँखों, घुटनों के आगे आये।

हुस्नआरा—खर्च तो उजला है, या कंजूस है ?

बहारबेगम—तीन सौ वसीके के हैं, ढाई सौ गाँव से आते हैं। नक़द कोई डेढ़ लाख से ज़्यादा ही ज़्यादा होगा। मकान, बाग़ दूकानें अलग हैं। वकालत में कोई छह सात सौ का महीना मिलता है।

हुस्नआरा—तुमको क्या देते हैं ?

बहारबेगम—बुढ़िया से चुरा कर मेरे ऊपर के खर्च के लिए सौ रुपये मुक़र्रर हैं।

सिपहआरा—रूहअफ़ज़ा बहन, तुम्हारे मियाँ क्या तनख्वाह पाते हैं ?

रूहअफ़ज़ा—चार सौ हुए हैं। चार-पाँच सौ ज़मीन से मिल जाते हैं।

हुस्नआरा—तुम्हारी सास तो अच्छी हैं।

रूहअफ़ज़ा—हाँ, बेचारी बड़ी सीधी हैं। हाँ, उनकी लड़की ने अलबत्ता मेरी नाक में दम कर दिया है। जब आती है, रोज़ माँ को भरा करती है।

सिपहआरा—बहारबेगम जो वहाँ होतीं, तो उनसे भी न बनती।

बहारबेगम—अच्छा, चुप ही रहिएगा, नहीं तो काट खाऊँगी। बड़ी वह बनके आयी हैं।

इतने में काली-काली घटा छा गयी। ठंडी-ठंडी हवा चलने लगी। बहार ने कहा—जी चाहता है, छत पर से दरिया की सैर करें। सबने कहा – हाँ-हाँ, चलिए। मगर हुस्नआरा को याद आ गयी कि हुमायूँ फ़र ज़रूर खबर पायेंगे और कोठे पर आके सतायेंगे। लेकिन मजबूर थी। चारों चौकड़ियाँ भरती हुई छत पर जा पहुँचीं। हवा इस ज़ोर से चलती थी कि दुपट्टा खिसका जाता था। गोरा-गोरा बदन साफ़ नज़र आता था। किसी ने जा कर हुमायूँ फ़र से कह दिया कि इस वक़्त तो सामने-वाला कोठा इंदर का अखाड़ा हो रहा है। उनको ताब कहाँ ! चट से कोठे पर आ पहुँचे। सिपहआरा ऊपर के कमरे में हो रहीं। रूहअफ़ज़ा वहीं बैठ गयीं। हुस्नआरा ने एक छलाँग भरी, तो रावटी में। मगर बहारबेगम ने बेढब आँखें लड़ायीं। हुमायूँ फ़र ने बहुत झुक कर सलाम किया।

बहारबेगम—आँखें ही फूटें, जो इधर देखे।

हुमायूँ—(हाथ के इशारे से) अपना गला आप काट डालूँगा।

बहारबेगम—शौक़ से।

नन्हीं-नन्हीं बूँदे पड़ने लगीं और चारों परियाँ नीचे चल दीं। मिरज़ा हुमायूँ फ़र मुँह ताकते रह गये।

हुस्नआरा—(बहार से) आप तो खूब डटके खड़ी हो गयीं।

बहारबेगम—क्यों, क्या कोई घोल कर पी जायगा ! मैं इन्हें जानती हूँ, हुमायूँ फ़र तो हैं।

सिपहआरा—तुम क्योंकर जानती हो बहन !

बहारबेगम—ऐ वाह, और सुनिएगा लड़कपन में हम खेला किये हैं। इनके साथ। खूब चपतें जमाया किये हैं इनको ! इनकी माँ और दादी में खूब झोटमझोटा हुआ करता था।

इतने में मामा ने आ कर कहा—बड़ी बेगम साहबा ने ये मेवे भेजे हैं।

सिपहआरा—देखूँ। ये चिलग़ोज़े लेती जाओ।

प्यारी—हमको दीजिए।

सिपहआरा—इनको दीजिए। 'पीर न शहीद, नकटों को छापा।' सबके बदले इनको दीजिए।

हुस्नआरा—अच्छा, पहले सलाम कर।

चारों बहनों ने मज़े से मेवे चखे। एक दूसरी के हाथ से छीन-छीन कर खाती थीं। जवानी की उमंग का क्या कहना!

उधर मिरज़ा हुमायूँ फ़र अपनी छत पर खड़े यह शेर पढ़ रहे थे—

न मुड़ कर भी बेदर्द क़ातिल ने देखा;
तड़पते रहे नीम जाँ कैसे-कैसे।

जब बड़ी देर तक छत पर किसी को न देखा तो, यह शेर ज़बान पर लाये—

कल बदामोज (रक़ीब) ने क्या तुमको सिखाया है हाय!
आज वह आँख, वह चमक, वह इशारा ही नहीं।

४५

एक दिन हुस्नआरा को सूझी कि आओ, अब की अपनी बहनों को जमा करके एक लेक्चर दूँ। बहारबेगम बोलीं—क्या ? क्या दोगी ?

हुस्नआरा—लेक्चर—लेक्चर। लेक्चर नहीं सुना कभी ?

बहारबेगम—लेक्चर क्या बला है ?

हुस्नआरा—वही, जो दूल्हा भाई जलसों में आये दिन पढ़ा करते हैं।

बहारबेगम—तो हम क्या तुम्हारे दूल्हा भाई के साथ-साथ घूमा करते हैं ? जाने कहाँ-कहाँ जाते हैं, क्या पढ़-पढ़के सुनाते हैं। इतना हमको मालूम है कि शेर बहुत कहते हैं। एक दिन हमसे कहने लगे—चलो, तुमको सैर करा लायें। फिटन पर बैठ लो। रात का वक़्त है, तुम दुशाले से खूब मुँह और जिस्म चुरा लेना। मैंने कानों पर हाथ धरे कि न साहब, बंदी ऐसी सैर से दरगुज़री। वहाँ जाने कौन-कौन हो, हम नहीं जाने के।

सिपहआरा—अब की आवें तो उनके साथ हम ज़रूर जायें !

बहारबेगम—चलो, बैठो, लड़कियाँ बहनोइयों के साथ यों नहीं जाया करतीं।

रूहअफ़ज़ा—मगर सुनेगा कौन ? दस-पाँच लड़कियाँ और भी तो हों कि हमी-तुम टुटरूँ टूँ ?

सिपहआरा—देखिए, मैं बुलवाती हूँ। अभी मामा को भेजे देती हूँ।

हुस्नआरा—मगर नज़ीर को न बुलवाओ। उनके साथ जानीबेगम भी आयेंगी वह बात बात में शाखें निकालती हैं। उन्हें खब्त है कि हमसे बढ़ कर कोई हसीन ही नहीं। 'शक़्ल चुड़ैलों की, नाज़ परियों का'; दिन-रात बनाव-सँवार ही में लगी रहती हैं।

सिपहआरा—फिर अच्छा तो है ! बहारबेगम से भिड़ा देना।

थोड़ी देर में डोलियों पर-डोलियाँ और बग्घियों पर बग्घियाँ आने लगीं। दरबान बार-बार आवाज़ देता था कि सवारियाँ आयी हैं। लौंडियाँ जा-जा कर मेहमानों को सवारियों पर से उतरवाती थीं और वे चमक-चमक कर अंदर आती थीं। आख़िर में जानीबेगम और नज़ीरबेगम भी आयीं। जानीबेगम की बोटी-बोटी फड़कती थी; आँखें नाचती रहती थीं। नज़ीरबेगम भोली-भाली शरमीली लड़की थी। शरम से आँखें झुकी पड़ती थीं। जब सब आ चुकीं, तो हुस्नआरा ने अपना लेक्चर सुनाना शुरू किया—

'मेरी प्यारी बहनो, सास-बहुओं के झगड़े, ननँद-भावजों के बखेड़े, बात-बात पर तकरार, मियाँ-बीबी की जूती-पैजार से ख़ुदा की पनाह। इन बुरी बातों से ख़ुदा बचाये। भलेमानसों की बहू-बेटियों में ऐसी बात न आने पाये। इस फूट की हमारे ही देश में इतनी गर्मबाज़ारी है कि सास की ज़बान पर कोसना जारी है, बहू मसरूफ़

गिरिया व ज़ारी है और मियाँ की अक़्ल मारी है। ननँद भावज से मुँह फुलाये हुए, भावज ननँद से त्योरियाँ चढ़ाये हुए। बहू हिचकियाँ ले-ले कर रोती है, सास ज़हर खा कर सोती है। और, जो सास ग़ुस्सेवर हुई और बहू ज़बान की तेज़, तो मार-पीट की नौबत पहुँचती है। मियाँ अगर बीबी की सी कहें, तो अम्माँ की घुड़कियाँ सहें; अम्माँ की सी कहें, तो बीबी की बातें सुनें। माँ उधर, बीबी इधर कान भरती है, वह इनके और यह उनके नाम से कानों पर हाथ धरती हैं।

'मगर ताली एक हाथ से नहीं बजती। सास भली हो, तो बहू को मना ले; और बहू आदमी हो, तो सास को आदमी बना ले। एक शरीफ़ज़ादी ने अपनी मामा से कहा कि हमारी सास तो हमारी सौत हैं। ख़ुदा जाने, उनकी ज़बान से यह बात कैसे निकली! इस पर भी उन्हें दावा है कि हम शरीफ़ज़ादी हैं। अगर वह हमारी राय पर चलें, तो उनकी सास उन्हें अपने सिर पर बिठायें। वह सीधी जा कर सास के क़दमों पर गिर पड़ें और आज से उनकी किसी बात का जवाब न दें। क्या उनकी सास का सिर फिर गया है, या उन्हें बावले कुत्ते ने काटा है? बहू अगर सास की ख़िदमत करे, तो दुनिया भर की सासों में कोई ऐसी न मिले, जो छेड़ कर बहू से लड़े।

'अब सोचो तो ज़रा दिल में, इस तक़रार और जूती-पैज़ार का अंजाम क्या है? घर में फूट, एक दूसरे की सूरत से बेज़ार, लौंडियों-बाँदियों में ज़लील, सारी दुनिया में बदनाम, घर तबाह। एक चुप हज़ार बला को टालती है, फ़साद को जहन्नुम में डालती है। हाँ, जो यह ख़याल हो कि सास एक कहें, तो दस सुनायें, वह दो बातें कहें, तो बीस मरतबे उनको उल्लू बनायें, तो बस, मेल हो चुका। सास न हुई, भूनी मूँग हुई। आख़िर उसका भी कोई दरजा है या नहीं? या बस, बहू ससुराल में जाते ही मालकिन बन बैठे, सास को ताक़ पर रख दे और मियाँ पर हुकूमत चलाने लगे? अब मैं आप लोगों से इतना चाहती हूँ कि सच-सच अपनी-अपनी सासों का हाल बयान कीजिए।'

एक—अल्लाह करे, हमारी सास को आज रात ही को हैज़ा हो।

दूसरी—अल्लाह करे, हमारी सास को हैज़ा हो गया हो।

तीसरी—अल्लाह करे, हमारी सास ऐसी जगह मरे, जहाँ एक बूँद पानी न मिले।

बहारबेगम—या ख़ुदा, मेरी सास के पाँव में बावला कुत्ता काटे और वह भूँक-भूँक कर मरे।

चौथी—हम तो अपनी सास को पहले ही चट कर गये। जहन्नुम चली गयीं।

पाँचवीं—सास तो सास, हमारी ननँद ने नाक में दम कर दिया।

जानीबेगम—मेरी सास तो मेरे आगे चूँ नहीं कर सकतीं। बोलीं, और मैंने गला घोंटा।

इस लेक्चर का और किसी पर तो ज्यादा नहीं, मगर नज़ीरबेगम पर बहुत असर

हुआ। हुस्नआरा से बोलीं—बहन, हम कल से आया करेंगे, हमें कुछ पढ़ाओगी?

हुस्नआरा—हाँ, हाँ, ज़रूर आओ।

जानीबेगम—ऐ वाह, यह क्या पढ़ायेंगे भला! हमारे पास आओ, तो हम रोज़ पढ़ा दिया करें।

नज़ीरबेगम—आपके तो पड़ोस ही में रहते हैं हम, मगर बहन, तुम तो हुड़दंगा सिखाती हो। दिन भर कोठे पर घोड़े की तरह दौड़ा करती हो, कभी नीचे कभी ऊपर।

जानीबेगम—(नज़ीरबेगम का हाथ पकड़ कर) मरोड़ डालूँ हाथ!

नज़ीर—देखा, देखा; बस, कभी हाथ मरोड़ा, कभी ढकेल दिया।

जानीबेगम—(नज़ीर का गाल काट कर) अब खुश हुईं?

सिपहआरा—ऐ वाह, लेके गाल काट लिया।

जानीबेगम—फिर औरत हैं, या मर्द हैं कोई!

नज़ीरबेगम—अब आप अपनी मुहब्बत रहने दें।

जब सब मेहमान बिदा हुए, तो चारों बहनें मिलकर गयीं और बड़ी बेगम के साथ एक ही दस्तरख़ान पर खाना खाया। खाते वक़्त यों गुफ्तगू हुई—

बहारबेगम—हुस्नआरा की शादी कहीं तजवीजी?

बड़ी बेगम—हाँ, फ़िक्र में तो हूँ।

बहारबेगम—फ़िक्र नहीं अम्माँजान, अब दिन-दिन चढ़ता है।

बड़ी बेगम—अपने जान तो जल्दी ही कर रही हूँ।

बहारबेगम—जल्दी क्या दो-चार बरस में?

रूहअफ़ज़ा—बहन, अल्लाह-अल्लाह करो।

बहारबेगम—बेचारी सिपहआरा भी ताक रही हैं कि हम इनका भी ज़िक्र करें।

सिपहआरा—देखिए, यह छेड़खानी अच्छी नहीं, हाँ!

बड़ी बेगम—(मुस्करा कर) तुम जानो, यह जानें।

बहारबेगम—अभी कल शाम ही को तो तुमने कहा था कि अम्माँजान से हमारे ब्याह की सिफ़ारिश करो। आज मुकरती हो? भला खाओ तो क़सम कि तुमने नहीं कहा?

सिपहआरा—वाह, ज़रा-ज़रा सी बात पर कोई क़सम खाया करता है!

रूहअफ़ज़ा—पानी मरता है कुछ?

सिपहआरा—जी हाँ, आप भी बोलीं?

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, क़सम खा जाओ न!

सिपहआरा—काहे को खायँ?

बड़ी बेगम—ऐ, तो चिढ़ती क्यों हो बेटी!

सिपहआरा—अम्माँजान, झूठ-मूठ लगाती हैं। चिढ़ें नहीं?

रूहअफ़ज़ा—क्या! झूठ-मूठ?

सिपहआरा—और नहीं तो क्या?

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, हमारे सिर की क़सम खाओ।

सिपहआरा—अल्लाह करे, मैं मर जाऊँ।

रूहअफ़ज़ा—चलो बस, रो दीं। अब कुछ न कहो।

बहारबेगम—अम्माँजान, एक रईस हैं। उनका लड़का कोई उन्नीस-बीस बरस का होगा! खुदा जानता है, बड़ा हसीन है। आजकल सिकन्दरनामा पढ़ता है।

बड़ी बेगम—खाने पीने से खुश हैं?

रूहअफ़ज़ा—खुश? आठ तो घोड़े हैं उनके यहाँ।

बहारबेगम—अम्माँजान, वह लड़का हुस्नआरा के ही लायक़ है। दो लड़के हैं। दोनों लायक़, होशियार, नेकचलन। हमारे यहाँ दूसरे-तीसरे आया करते हैं।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर मंजूर कीजिए।

बड़ी बेगम—अच्छा, अच्छा, सोच लूँ।

हुस्नआरा ने यह बात चीत सुनी तो होश उड़ गये। खुदा ही खैर करे। ये दोनों बहनें अम्माँजान को पक्का कर रही हैं। कहीं मंजूर कर लें, तो ग़ज़ब ही हो जाय। बेचारे आज़ाद वहाँ मुसीबतें झेल रहे हैं, और यहाँ जश्न हो। इस फ़िक्र में उससे अच्छी तरह खाना भी न खाया गया। अपने कमरे में आ कर लेट रही और मुँह ढाँप कर खूब रोयी। खाना खाने के बाद वे तीनों भी आयीं और हुस्नआरा को लेटे देख कर झल्लायीं।

बहारबेगम—मकर करती होंगी। सोयेंगी क्या अभी।

सिपहआरा—नहीं बहन, यह तकिये पर सिर रखते ही सो जाती हैं।

बहारबेगम—जी हाँ, सुन चुकी हूँ। एक तुमको तकिये पर सिर रखते ही नींद आ जाती है, दूसरे इनको।

रूहअफ़ज़ा—(गुदगुदा कर) उठो बहन, हमारा ही खून पिये, जो न उठे। मेरी बहन न, उठ बैठो। शाबाश!

सिपहआरा—सोने दीजिए। आँखें मारे नींद के मतवाली हो रही हैं।

बहारबेगम—रसीली मतवालियों ने जादू डाला। हमारे यहाँ पड़ोस में रोज़ तालीम होती है। मगर हमारे मियाँ को इसकी बड़ी चिढ़ है कि औरतें नाच देखें या गाना सुनें। मर्दों की भी क्या हालत है! घर की जोरू से बातें न करें, बाहर शेर। अल्लाह जानता है, हम तो उन सब मुई बेसवाओं को एड़ी-चोटी पर कुरबान कर दें। एक ने मिस्सी की धड़ी जमायी थी, जैसे बत्तख ने कीचड़ खायी हो।

रूहअफ़ज़ा—(हुस्नआरा को चूम कर) उठो बहन!

हुस्नआरा—(आँखें खोल कर) सिर में दर्द है।

बहारबेगम—संदली-रंगों से माना दिल मिला;
दर्द सर की किसके माथे जायगी।

हुस्नआरा—यहाँ इन झगड़ों में नहीं पड़ते।

बहारबेगम—दुरुस्त।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर किसी से आँख लड़ायी है, इसी से नींद आयी है। अच्छा अब सच-सच कह दो, किससे दिल मिला है?—दिल दीजिए तो यार तरहदार देख कर।

सिपहआरा और क्या!—

माशूक कीजिए तो परीज़ाद कीजिए।

हुस्नआरा—किसी से मिलने का अब हौसला नहीं है जाँ;

बहुत उठाये मज़े उनसे आशना हो कर।

रूहअफ़ज़ा—बस, बहुत बातें न बनाइए। हम सब सुन चुकी हैं। भला किसी पर दिल नहीं आया, तो आँखों से आँसू क्यों कर निकले? जरी, आइने में सूरत देखिए।

सिपहआरा—ऐ बहन, यह धान-पान आदमी, जरी सिर में दर्द हुआ, और लेट रहीं।

बहारबेगम—लड़की बातें बनाती है। हमको चुटकियों पर उड़ाती है।

हुस्नआरा—अब आप जो चाहे कहें। यहाँ न कोई आशिक़ है, न कोई माशूक़।

रूहअफ़ज़ा—उड़ो न। कह चलूँ सब?

हुस्नआरा—हाँ, हाँ, कहिए। सौ काम छोड़के। आपको खुदा की क़सम।

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, इस वक़्त दिल क्यों भर आया?

हुस्नआरा—

दिल ही तो है न संग व ख़िश्त, दर्द से भर न आये क्यों,

रोयेंगे हम हज़ार बार, कोई हमें रुलाये क्यों?

बहारबेगम—(तालियाँ बजा कर) खुल गयी न बात?

रूहअफ़ज़ा—जादू वह, जो सिर पर चढ़के बोले।

हुस्नआरा—मुँह में ज़बान है, जो चाहो, बको।

बहारबेगम—अच्छा, बड़ी सच्ची हो, तो एक बात करो। हम एक हाथ में कोई चीज़ लें और दूसरा हाथ खाली रखें। फिर मुट्ठी बाँधके आयें, और तुम एक हाथ पर हाथ मारो। जो खाली हाथ पर पड़े, तो तुम झूठी। दूसरे हाथ पर पड़े, तो हम झूठे।

हुस्नआरा—ऐ वाह, छोकरियों का खेल।

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह, और आप हैं क्या!

सिपहआरा—अच्छा, आप आइए। मगर हम दोनों हाथ देख लेंगे।

बहारबेगम—हाँ-हाँ, देख लेना।

बहारबेगम ने दूसरे कमरे में जा कर एक छोटी-सी शीशे की गोली दाहिने हाथ में रखी और बायाँ हाथ खाली। दोनों मुट्ठियाँ खूब जोर से बंद कर लीं और आ कर बोलीं—अच्छा, मारो हाथ पर हाथ।

हुस्नआरा—ये वाहियात बातें हैं।

रूहअफ़ज़ा—तो काँपी क्यों जाती हो ?

सिपहआरा—बा जी, बोलो, किस हाथ में है ?

हुस्नआरा—उधरवाले में।

सिपहआरा—नहीं बा जी, धोखा खाती हो। हम तो बायें हाथ पर मारते हैं।

बहारबेगम—(बायाँ हाथ खोल कर) सलाम।

सिपहआरा—अरे, वह हाथ तो दिखाओ।

बहारबेगम—देखो। है शीशे की गोली कि नहीं ?

हुस्नआरा—देखा! कहा था कि उस हाथ में है। कहा न माना।

रूहअफ़ज़ा—कहिए, अब तो सच है ?

हुस्नआरा—ये सब ढकोसले हैं।

बहारबेगम—अच्छा बहन, अब इतना बता दो कि मियाँ आज़ाद कौन हैं ?

हुस्नआरा—क्या जानें, क्या वाही-तबाही बकती हो।

बहारबेगम—अब छिपाने से क्या होता है भला! सुन तो चुके ही हैं हम।

हुस्नआरा—बतायें क्या, जब कुछ बात भी हो ?

सिपहआरा—इन दोनों बहनों ने ख्वाब देखा था कल मालूम होता है।

हुस्नआरा—हाँ, सच कहा। ख्वाब देखा होगा।

रूहअफ़ज़ा—ख्वाब तो नहीं देखा; मगर सुना है कि सूरत-शक्ल में करोड़ों में एक हैं।

बहारबेगम—हुस्नआरा ने तो अपना जोड़ छाँट लिया, अब सिपहआरा का निकाह हुमायूँ फ़र के साथ हो जाय, तो हम समझें कि यह बड़ी ख़ुशनसीब हैं।

सिपहआरा—मेरे तो तलवों को भी न पहुँचें।

हुस्नआरा—तूती का कौए से जोड़ लगाती हो ?

बहारबेगम—वाह, चेहरे से नूर बरसता है। जी चाहता है कि घंटों देखा करें। अम्माँ से आज ही तो कहूँगी मैं।

हुस्नआरा—कह दीजिएगा, धमकाती क्या हो!

सिपहआरा—आपके कहने से होता क्या है ? यहाँ कोई पसंद भी करे!

रूहअफ़ज़ा—इनकार करोगी, तो पछताओगी।

४६

सबेरे हुस्नआरा तो कुछ पढ़ने लगी और बहारबेगम ने सिंगारदान मँगा कर निखरना शुरू किया।

हुस्नआरा—बस, सुबह तो सिंगार, शाम तो सिंगार। कंघी-चोटी, तेल-फुलेल। इसके सिवा तुम्हें और किसी चीज़ से वास्ता नहीं। रूहअफ़ज़ा सच कहती हैं कि तुम्हें इसका रोग है।

बहारबेगम—चलो, फिर तुम्हें क्या? तुम्हारी बातों में ख़याल बँट गया, माँग टेढ़ी हो गयी।

हुस्नआरा—है-है! ग़ज़ब हो गया। यहाँ तो दूल्हा भाई भी नहीं हैं! आख़िर यह निखार दिखाओगी किसे?

बहारबेगम—हम उठ कर चले जायँगे। तुम छेड़ती जाती हो और यह मुआ छपका सीधा नहीं रहता।

हुस्नआरा—अब तक माँग का ख़याल था, अब छपके का ख़याल है।

बहारबेगम—अच्छा, एक दिन हम तुम्हारा सिंगार कर दें, ख़ुदा की क़सम, वह जोबन आ जाय कि जिसका हक़ है।

हुस्नआरा—फिर अब साफ़-साफ़ कहलाती हो। तुम लाख बनो-ठनो, हमारा जोबन ख़ुदादाद होता है। हमें बनाव-चुनाव की क्या ज़रूरत भला!

बहारबेगम—अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बन लो।

हुस्नआरा—अच्छा, सिपहआरा से पूछो। जो यह कहें वह ठीक।

सिपहआरा—जिस तरह बहार बहन निखरती हैं, उस तरह अगर तुम भी निखरो, तो चाँद का टुकड़ा बन जाओ। तुम्हारे चेहरे पर सुर्ख़ी और सफ़ेदी के सिवा नमक भी बहुत है। मगर वह गोरी-चिट्टी हैं बस, नमक नहीं।

रूहअफ़ज़ा—सच्ची बात तो यह है कि हुस्नआरा हम सबमें बढ़-चढ़ कर हैं।

इतने में एक फिटन खड़खड़ाती हुई आयी, मुश्की जोड़ी जुती हुई। नवाब ख़ुरशेदअली उतर कर बड़ी बेगम के पास पहुँचे और सलाम किया।

बड़ी बेगम—आओ बेटा, बायीं आँख जब फड़कती है, तब कोई न कोई आता ज़रूर है। उस दिन आँख फड़की, तो लड़कियाँ आयीं। यह रूहअफ़ज़ा की क्या हालत हो गयी है?

नवाब साहब—अब तो बहुत अच्छी हैं! मगर परहेज़ नहीं करतीं। तीता मिर्च न हो, तो खाना न खायँ। फिर भला अच्छी क्योंकर हों?

यहाँ से बातें करके नवाब साहब उस कमरे में पहुँचे, जिसमें चारों बहनें बैठी थीं। नवाब साहब का लिबास देखिए, जुर्राब ख़ाकी रंग का, घुटन्ना चुस्त, कुर्ता सफ़ेद फलालैन का। उस पर स्याह बनात का दगला और हरी गिरंट की गोट। बाँकी तुक्के-

दार टोपी। पाँव में स्याह वारनिश का बूट, एक सफ़ेद दुलाई ओढ़े हुए। हुस्नआरा और सिपहआरा ने नीची गरदन करके बंदगी की। रूहअफ़ज़ा ने कहा—आप बे-इत्तला किये हमारे कमरे में क्यों चले आये साहब ?

नवाब साहब—हुक्म हो, तो लौट जाऊँ।

बहारबेगम शौक़ से। बिन बुलाये कोई नहीं आता। लो सिपहआरा, अब इनके साथ बग्घी पर हवा खाने जाओ।

सिपहआरा—वाह, क्या झूठ-मूठ लगाती हो। भला मैंने कब कहा था।

रूहअफ़ज़ा—हम गवाह हैं।

नवाब साहब—अच्छा, फिर उसमें ऐब ही क्या है ?

इतने में रूहअफ़ज़ा एक शीशे की तश्तरी में चिकनी डलियाँ रख कर लायी। नवाब साहब ने दो उठा कर खा लीं और 'आख थू, आख थू !' करते-करते बोले—पानी मँगाओ ख़ुदा के वास्ते।

वह चिकनी डली असल में मिट्टी की थी। चारों बहनों ने क़हक़हा लगाया और हज़रत बहुत झेंपे। जब मुँह धो चुके, तो सिपहआरा ने एक गिलौरी दी।

नवाब साहब —(गिलौरी खोल कर) अब बे देखे भाले खानेवाले की ऐसी-तैसी। कहीं इसमें मिरचें न झोंक दी हों। इस वक़्त तो भूख लगी हुई है। आँतें कुलहु-अल्लाह पढ़ रही हैं।

हुस्नआरा—बासी खीर खाइए, तो लाऊँ ?

नवाब साहब—नेकी और पूछ-पूछ ?

हुस्नआरा जा कर एक कुफ़ली उठा लायी। नवाब साहब ने बड़ी खुशी से ली, मगर खोलते हैं तो मेंढकी उचक कर निकल पड़ी !

नवाब साहब—खूब ! यह रूहअफ़ज़ा से भी बढ़ कर निकलीं। 'बड़ी बी तो बड़ी बी, छोटी बी सुभान अल्लाह।'

रात को नवाब साहब आराम करने गये, तो बहारबेगम ने पूछा—कहो, तुम्हारी अम्माँजान तो जीती हैं ? या ढुलक गयीं ?

नवाब साहब—क्या बेतुकी उड़ाती हो, ख्वाहमख्वाह दिल दुखाती हो। ऐसी बातें करती हो कि सारा शौक़ ठंडा पड़ जाता है।

बहारबेगम—हाँ, उनकी तो मुहब्बत फट पड़ी है तुमको। बत्तीस धार का दूध पिलाया है कि नहीं !

नवाब साहब—इसी से आने को जी नहीं चाहता था।

बहारबेगम—तो क्यों आये ? क्या चकला निगोड़ा उजड़ गया है ? या बाज़ार में किसी ने आग लगा दी ?

नवाब साहब—अच्छा, इस वक़्त तो ख़ुदा के लिए ये बातें न करो ? कोई छह दिन के बाद मुलाकात हुई है।

बहारबेगम—क्या कहीं आज और ठिकाना न लगा ?

नवाब साहब—तुम तो जैसे लड़ने पर तैयार हो कर आयी हो।

बहारबेगम—क्यों? आज प्राटन साहब न बनोगे? कोट-पतलून पहनके न जाओगे? मुझसे उड़ते हो!

नवाब साहब रंगीन-मिज़ाज आदमी थे। बहारबेगम को उनके सैर-सपाटे बुरे मालूम होते थे। इसी सबब से कभी-कभी मियाँ-बीबी में चख़ चल जाती थी। मगर अबकी मरतबा बहारबेगम ने एक ऐसी बात सुनी थी कि आँखों से ख़ून बरसने लगा था। एक दिन नवाब साहब कोट-पतलून डाट कर एक बँगले पर जा पहुँचे और दरवाज़ा खटखटाया। अंदर से आदमी ने आ कर पूछा—आप कहाँ से आते हैं? आपने कहा – हमारा नाम प्राटन साहब है। मेम साहब को बुलाओ। अब सुनिए, एक कुँजड़िन जो पड़ोस में रहती थी, वहाँ तरकारी बेचने गयी हुई थी। वह इन हज़रत को पहचान गयी और घर में आ कर बहारबेगम से कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। बेगम सुनते ही आग-भभूका हो गयीं और सोचीं कि आज आने तो दो, कैसा आड़े-हाथों लेती हूँ कि छठी का दूध याद आ जाय। मगर उसी दिन यहाँ चली आयीं और बात ज्यों की त्यों रह गयी। भरी तो बैठी ही थीं, इस वक़्त मौक़ा मिला, तो उबल पड़ीं। नवाब ने जो पते-पते की सुनी, तो सन्नाटे में आ गये।

बहारबेगम—कहिए प्राटन साहब, मिज़ाज तो अच्छे हैं?

नवाब साहब—तुम क्या कहती हो? मेरी समझ ही में नहीं आता कुछ।

बहारबेगम—हाँ, हाँ, आप क्या समझेंगे। हम हिंदोस्तानी और आप ख़ासी विलायत के प्राटन साहब! हमारी बोली आप क्या समझेंगे?

नवाब साहब—कहीं भंग तो नहीं पी गयी हो?

बहारबेगम—अब भी नहीं शरमाते?

नवाब साहब—ख़ुदा गवाह है, जो कुछ समझ में भी आया हो।

बहारबेगम—जलाये जाओ और फिर कहो कि धुआँ न निकले। मैं क्या जानती थी कि तुम प्राटन साहब बन जाओगे!

इधर तो मियाँ-बीबी में नोक-झोंक हो रही थी, उधर उनकी सालियाँ दरवाज़े के पास खड़ी चुपके-चुपके झाँकतीं और सारी दास्तान सुन रही थीं। मारे हँसी के रहा न जाता था। आख़िर जब एक मरतबा बहार ने ज़ोर से नवाब का हाथ झटक कर कहा—आप तो प्राटन साहब हैं, मैं आपको अपने घर में न घुसने दूँगी—तो सिपहआरा खिलखिला कर हँस पड़ी। बहार ने हँसी की आवाज़ सुनी, तो धक से रह गयी। नवाब भी हक्का-बक्का हो गये।

नवाब साहब—तुम्हारी बहनें बड़ी शोख़ हैं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, सलाम!

सिपहआरा—दूल्हा भाई, बंदगीअर्ज़।

हुस्नआरा—मैं भी प्राटन साहब को आदाबअर्ज़ करती हूँ।

नवाब साहब—समझा दो, यह बुरी बात है।

सिपहआरा—बिगड़ते क्यों हो प्राटन साहब !

बहारबेगम—(कमरे से निकल कर) ऐ, तो अब भागी कहाँ जाती हो ?

रूहअफ़ज़ा—बहन, अब जाइए। प्राटन साहब से बातें कीजिए।

बहारबेगम—आओ-आओ, तुम्हें ख़ुदा की क़सम।

सिपहआरा—कोई भाई-बंद अपना हो, तो आयें। भला प्राटन साहब को क्या मुँह दिखायें ?

नवाब साहब—इस प्राटन के नाम ने तो हमें खूब झंडे पर चढ़ाया। कैसे रुसवा हुए !

बहारबेगम—अपनी करतूतों से।

सिपहआरा—अब तो क़लई खुल गयी ?

तीनों बहनों ने नवाब साहब को खूब आड़े हाथों लिया। बेचारे बहुत झेंपे। जब वे चली गयीं, तो बहारबेगम ने भी प्राटन साहब का क़सूर माफ़ कर दिया—

दिलों में कहने-सुनने से अदावत आ ही जाती है ;
जब आँखें चार होती हैं, मुहब्बत आ ही जाती है।

४७

आज हम उन नवाब साहब के दरबार की तरफ चलते हैं, ज़हाँ खोजी और आज़ाद ने महीनों मुसाहबत की थी और आज़ाद बटेर की तालाश में महीनों सैर-सपाटे करते रहे थे। शाम का वक़्त था। नवाब साहब एक मसनद पर शान से बैठे हुए थे। इर्द-गिर्द मुसाहब लोग बैठे हुक़्क़े गुड़गुड़ाते थे। बी अलारक्खी भी जा कर मसनद का कोना दबा कर बैठीं।

नवाब साहब—यों आइए, बी साहब!

अलारक्खी—(खिसक कर) बहुत खूब!

मुसाहब—(दूसरे मुसाहब के कान में) क्या ज़माना है, वाह! हम शरीफ़ और शरीफ़ के लड़के और यह इज़्ज़त कि जूतियों पर बैठे हैं। कोई टके को नहीं पूछता।

नुदरत—यार, क्या कहें, अब्बाजान चकलेदार थे, जिसका चाहा, भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। डंका सामने बजता था। इन्हीं आँखों के सामने दोनों तरफ़ आदमी झुक-झुक कर सलाम करते थे, और इन्हीं आँखों यह भी देख रहे हैं कि बेसवा आ कर मसनद पर बैठ गयी और हम नीचे बैठे हैं। वाह री क़िस्मत! फूट गयी।

नवाब साहब—आपका नाम क्या है बी साहब?

अलारक्खी—हुजूर, मुझे अलारक्खी कहते हैं।

नवाब साहब—क्या प्यारा नाम है!

नुदरत—हुजूर, चाहे आप बुरा मानें या भला, हम तो बीच खेत कहेंगे कि आपके यहाँ शरीफ़ों की क़दर नहीं। ग़ज़ब ख़ुदा का, यह टके की बाज़ारी औरत मसनद पर आके बैठ जाय और हम शरीफ़ लोग ठोकरें खायें! आसमान नहीं फट पड़ता! कैसे-कैसे गौखे रईस जमा हैं दुनिया में।

इतना कहना था कि हाफ़िज़ जी बिगड़ खड़े हुए और लपक के नुदरत के मुँह पर एक लप्पड़ जमाया। वह आदमी थे करारे, लप्पड़ खाते ही आग हो गये। झपटके हाफ़िज़ जी को दे पटका। इस पर कुल मुसाहब और हवाली-मवाली उठ खड़े हुए।

एक—छोड़ दे बे!

दूसरा—इतनी लातें लगाऊँगा कि भुरकस निकल जायगा।

तीसरा—मर्दक, जिसका नमक खाता है, उसी को गालियाँ सुनाता है!

नवाब साहब—निकाल दो इसे बाहर।

हाफ़िज़—देखिए तो नमकहराम की बातें!

नवाब साहब—आज से दरबार में न आने पाये।

तीन-चार आदमियों ने मिल कर हाफ़िज़ जी को छुड़ाया। दरबार में हुल्लड़ मचा हुआ था। अलारक्खी खड़े-खड़े थरथराती थीं और नवाब साहब उनको दिलासा देते जाते थे।

एक मुसाहब—(अलारक्खी से) ऐ हुजूर, आप न घबरायें।

दूसरा मुसाहब—वल्लाह बी साहबा, जो आप पर ज़रा भी आँच आने पाये।

नवाब—तुम तो मेरी पनाह में हो जी !

अलारक्खी—जी हाँ, मगर खौफ़ मालूम होता है।

नवाब—अभी उस मूजी को यहाँ से निकलवाये देता हूँ।

हाफ़िज़—हुजूर, वह बाहर खड़े सबको गालियाँ दे रहे हैं।

सबने मिल कर मियाँ नुदरत को बाहर तो निकाल दिया; पर वह टर्रा आदमी था, बाहर जा कर एँड़ी-बेंड़ी सुनाने लगा—ऐसे रईस पर आसमान फट पड़े, जो इन टके-टके की औरतों को शरीफ़ों से अच्छा समझे। किसी ज़माने में हम भी हाथी-नशीन थे। चौदह-चौदह हाथी हमारे दरवाज़े पर झूमते थे। आज इस नवबढ़ रईस ने हमको फ़र्श पर बिठाया और मालज़ादी को मसनद पर जगह दी। खुदा इस मर्दक से समझे !

नवाब साहब—यह कौन गुल मचा रहा है।

एक मुसाहब—वही है हुजूर।

दूसरा मुसाहब—नहीं हुजूर, वह कहाँ ! वह भागा पत्तातोड़। यह कोई फ़क़ीर है। भूखों मरता है।

नवाब—कुछ दिलवा दो भई !

एक मुसाहब ने दारोग़ा जी को बुलाया और उनसे दस रुपये ले कर बाहर चला। जब उसके लौट आने पर भी बाहर का शोर न बंद हुआ, तो नवाब ने खिदमतगार को भेजा कि देख, अब कौन चिल्ला रहा है ? खिदमतगार ने बाहर जा कर जो देखा, तो मियाँ नुदरत खड़े गालियाँ सुना रहे हैं। जब वह नवाब साहब के पास जाने लगा, तो दारोग़ा जी ने उसे रोक कर समझाया—अगर तुमने ठीक-ठीक बतला दिया, तो हम तुमको मार ही डालेंगे। खबरदार, यह न कहना कि मियाँ नुदरत ग़ालियाँ दे रहे हैं। बल्कि यों बयान करना कि वह फ़क़ीर तो दस रुपये ले कर चल दिया, मगर और कई फ़क़ीर, जो उस वक़्त वहाँ मौजूद थे, आपको दुआएँ दे रहे हैं। उनका सवाल है कि हुजूर के दरबार से कुछ उन्हें भी मिले।

नवाब साहब ने यह सुना, तो उन्हें यक़ीन आ गया। बेचारे भोले-भाले आदमी थे, हुक्म दिया कि इसी वक़्त सब फ़क़ीरों को इनाम मिले, कोई दरबार से नामुराद न लौटे; वर्ना मैं ज़हर खा कर मर जाऊँगा।

हाफ़िज़—दारोग़ा जी, इन फ़क़ीरों को चालीस रुपये दे दीजिए।

नवाब—क्या, चालीस ! भला सौ रुपये तो तकसीम करो !

मुसाहब—ऐ, खुदा सलामत रखे।

हाफ़िज़—वाह-वाह, क्यों न हो मेरे नवाब।

दारोग़ा ने सौ रुपये लिये और बाहर निकले। कई मुसाहब भी उनके साथ-साथ बाहर आ पहुँचे।

एक—ऐसे गौखे रईस कहाँ मिलेंगे ?

दूसरा—क्या पागल है, वल्लाह !

हाफ़िज़—बेवक़ूफ़, काठ का उल्लू ।

दारोग़ा—कह देंगे कि दे आये ।

हाफ़िज़—लेकिन जो फिर गुल मचाये ?

दारोग़ा—अजी, उसको निकाल बाहर कर दो । दो धक्के ।

सबने मियाँ नुदरत को घेर लिया और कोसों तक रगेदते हुए ले गये । वह गालियाँ देते हुए चले । अलारक्खी को भी ख़ूब कोसा ।

नवाब ने लाखों क़समें दीं कि अलारक्खी खाना खायें और कुछ दिन उसी बग़ीचे में आराम से रहें; मगर अलारक्खी ने एक न मानी । मियाँ नुदरत का उसे बार-बार ताने देना, उसे टके की औरत और बेसवा कहना उसके दिल में काँटे की तरह खटक रहा था । उसकी आँखों में आँसू भर आये ।

नवाब—सच कहिए बी साहबा, आख़िर आप क्यों इस क़दर रंजीदा हैं । अगर मुझसे कोई ख़ता हुई हो, तो माफ़ करो ।

अलारक्खी—जाने हमें इस वक़्त क्या याद आया । आपसे क्या बतायें । दिल ही तो है ।

नवाब—मुझसे तो कोई क़सूर नहीं हुआ !

अलारक्खी—हुज़ूर, ये सब क़िस्मत के खेल हैं । हमारी सी बेहया ज़िंदगी किसी की न हो ? माँ बाप ने अंधे कुएँ में ढकेल दिया; आप तो चैन उड़ाया किये, हमें भाड़ में झोंक गये । हमारे बूढ़े मियाँ शादी करते ही दूसरे शहर में जा बसे । हम उनके नाम को रो बैठे । जब वह अंटागफ़ील हो गये, तो हमारी माँ ने बड़ा जश्न किया और एक दूसर लड़के से शादी ठहरायी । मगर अम्माँ से किसी ने कह दिया—ख़बरदार, लड़की को अब न ब्याहना, भलेमानसों में बेवा का निकाह नहीं होता । बस, अम्माँ चट से बदल गयीं । आख़िर मैं एक रात को घर से निकल भागी । लेकिन उस दिन से आज तक जैसी पाक पैदा हुई थी, वैसी ही हूँ । आज उस आदमी ने जो मुझे टके की औरत और बेसवा बनाया, तो मेरा दिल भर आया । कसम ले लीजिए, जो मियाँ आज़ाद के सिवा किसी से कभी आँखें लड़ी हों ।

नवाब—कौन, कौन ? किसका नाम तुमने लिया ?

हाफ़िज़—अच्छा पता लगा । वह तो नवाब साहब के दोस्त हैं ।

नवाब—हमको उनकी ख़बर मिले, तो फ़ौरन बुलवा लें ।

अलारक्खी—वह तो कहीं बाहर गये हैं । कुछ दिनों हमारी सराय में ठहरे थे । अच्छे ख़ूबसूरत जवान हैं । उनको एक भोले-भाले नवाब मिल गये थे । नवाब ने एक बटेर पाला था । मियाँ आज़ाद ने उसे काबुक से निकाल कर छिपा लिया । नवाब के मुसाहबों ने बटेर की ख़ूब तारीफ़ें कीं । किसी ने कहा, क़ुरान पढ़ता था; किसी ने कहा, रोज़े रखता था । सबने मिल कर नवाब को उल्लू बना लिया । मियाँ आज़ाद

को ऊँटनी दी गयी कि जा कर बटेर ढूँढ़ लाओ। आज़ाद ऊँटनी ले कर हमारे यहाँ बहुत दिन तक रहे।

नवाब साहब मारे शर्म के गले जाते थे। उम्र भर में आज ही तो उन्हें खयाल आया कि ऐसे मुसाहबों से नफ़रत करना लाज़िम है। मुसाहबों ने लाख-लाख चाहा कि रंग जमायें, मगर नवाब और भी बददिमाग़ हो गये।

नवाब—वह भोला-भाला नवाब मैं ही हूँ। आपने इस वक़्त मेरी आँखें खोल दीं।

मुसाहब—ग़रीबपरवर, खुदा जानता है, हम लोग कट मरनेवाले हैं।

नवाब—बस, हम समझ गये।

हाफ़िज़—हुजूर, तोप-दम कर दीजिए, जो ज़रा खता हो। हम लोग जान देनेवाले आदमी हैं।

नवाब—बस, चिढ़ाओ नहीं। अब कलई खुल गयी।

मुसाहब—खुदा जानता है।

नवाब—अब क़समें खाने की कुछ ज़रूरत नहीं। जो हुआ सो हुआ, आगे समझा जायगा।

अलारक्खी—जो मुझको मालूम होता, तो यह ज़िक्र ही कभी न करती।

नवाब—खुदा की क़सम, तुमने मुझ पर और मेरे बाप पर, दोनों पर इस वक़्त एहसान किया। तुम ज़िक्र न करतीं, तो मैं हमेशा अंधा बना रहता, तुमने तो इस वक़्त मुझे जिला लिया।

मुसाहब—जिसने जो कह दिया, वही हुजूर ने मान लिया। बस, यही तो खराबी है। ज़रा हमारी खिदमतों को देखें, तो हमको मोतियों में तोलें—क़सम खुदा की—मोतियों में तोलें।

नवाब—मेरा बस चले, तो तुम सबको कालेपानी भेज दूँ। और ऊपर से बातें बनाते हो? बटेर भी रोज़ा रखते हैं?

हाफ़िज़—खुदावंद, खुदा की खुदाई में क्या कुछ बईद है।

नवाब—चलो बस, खुदाई में दखल न दो। मालूम हुआ, बड़े दीनदार हो। मेरा बस चले, तो तुमको ऐसी जगह क़त्ल करूँ, जहाँ पानी तक न मिले।

हाफ़िज़—अगर कोई क़सूर साबित हो, तो क़त्ल कर डालिए।

मुसाहब—खुदावंद, वह आज़ाद एक ही गुर्गा है, बड़ा दग़ाबाज़।

अलारक्खी—बस, बस, उनको न कुछ कहिएगा। उनका सा आदमी कोई हो तो ले!

नवाब—क्या शक है। खैर, अब भी सबेरा है, सस्ते छूटे।

अलारक्खी—छूटे तो सस्ते। ऐ हाँ, यह कहाँ की नमकहलाली है कि बटेर को रोज़ादार और नमाज़ी बना दिया? जो सुनेगा, क्या कहेगा?

नवाब—नमकहलाल के बच्चे बने हैं!

मुसाहब—खुदावंद! जो चाहे, कह लीजिए, हम लोग हुज्जत और तकरार थोड़े ही कर सकते हैं।

नवाब—अजी, तुम तो ज़हर दे दो, संखिया खिला दो ! ख़ूब देख चुका ।

अलारक्खी—ऐसे बेईमानों से ख़ुदा बचाये ।

मुसाहब—हाँ, मसनद पर बैठ कर जो चाहो कह लो। बज़ार में झोटमझोट करती फिरती हो, और यहाँ आके बातें बनाती हो ।

नवाब—बस, ज़बान बंद करो। मेरा दिल खट्टा हो गया ।

मुसाहब—जो हम ख़तावार हों, तो हमारा ख़ुदा हमसे समझे। ज़रा भी किसी बात में नमकहरामी की हो, तो हम पर आसमान फट पड़े। हुज़ूर चाहे न मानें, मगर दुनिया कहती है कि जैसे मुसाहब हुज़ूर को मिले हैं, वैसे बड़े ख़ुश क़िस्मतों को मिलते हैं ।

नवाब—यों कहो कि जिसकी क़िस्मत फूट जाती है, उसको तुम जैसे गुर्गे मिलते हैं। बस, आप लोग बोरिया-बँधना उठाइए और चलते-फिरते नज़र आइए ।

मुसाहब—हुज़ूर, मरते दम तक साथ न छोड़ेंगे, न छोड़ेंगे ।

हाफ़िज़—यह दामन छोड़ कर कहाँ जायें ?

मिरज़ा—कहीं ठिकाना भी है ?

हाफ़िज़—ठिकाना तो सब कुछ हो जाय, मगर छोड़ कर जाने को भी जब जी चाहे ! जिसका इतने दिन तक नमक खाया, उससे भला अलग होना कैसे गवारा हो ? मार डालिए, मगर हम तो इस ड्योढ़ी से नहीं जाने के। यह दर और यह सर। मरें भी, तो हुज़ूर ही की चौखट पर, और जनाज़ा भी निकले, तो इसी दरवाज़े से !

नवाब—बातें न बनाओ। जहाँ सींग समाय, चले जाओ ।

हाफ़िज़—हुज़ूर को ख़ुदा सलामत रखे। जहाँ हुज़ूर का पसीना गिरे, वहाँ हमारा ख़ून ज़रूर गिरेगा ।

मगर नवाब साहब इन चकमों में न आये। ख़िदमतगारों को हुक्म दिया कि इन सबों को पकड़ कर बाहर निकाल दो। अगर न जायें, तो ठोकर मार कर निकाल दो।

अब बी अलारक्खी का भी हाल सुनिए। उनको मियाँ नुदरत की बातों का ऐसा कलक हुआ, दिल पर ऐसी चोट लगी कि अपने कुल ज़ेवर और असबाब बेच कर बस्ती के बाहर एक टीले पर फ़क़ीरों की तरह रहने लगीं। क़सम खा ली कि जब तक आज़ाद रूम से न लौटेंगे, इसी तरह रहूँगी ।

४८

जिस जहाज़ पर मियाँ आज़ाद और ख़ोजी सवार थे, उसी पर एक नौजवान अँगरेज़ अफसर और उसकी मेम भी थी। अँगरेज का नाम चार्ल्स अपिल्टन था और मेम का वेनेशिया। आज़ाद को उदास देख कर वेनेशिया ने अपने शौहर से पूछा—इस जेंटिलमैन से क्योंकर पूछें कि यह बार-बार लंबी साँसें क्यों ले रहा है?

साहब—तुम ऐसे-वैसे आदमियों को जेंटिलमैन क्यों कहती हो? यह तो निगर (काला आदमी) है।

मेम—निगर तो हम हब्शी को कहते हैं। यह तो गोरा-चिट्टा, ख़ूबसूरत आदमी है।

साहब—तो क्या ख़ूबसूरत होने से ही कोई जेंटिलमैन हो जाता है? इँगलैंड के सब सिपाही गोरे होते हैं, तो क्या इससे ये सब के सब जेंटिलमैन हो गये?

मेम—तुम तो अपनी दलील से आप क़ायल हो गये। जब गोरे चमड़े से कोई जेंटिलमैन नहीं होता, तो फिर तुम सब क्यों जेंटिलमैन कहलाओ? और इन लोगों को निगर क्यों कहो? वाह, अच्छा इंसाफ है!

इतने में जहाज़ के एक कोने से आवाज़ आयी कि ओ गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो लाश फड़कती होती।

मियाँ आज़ाद डरे कि ऐसा न हो, मियाँ ख़ोजी किसी अँगरेज से लड़ पड़ें, अफ़ीम की लहर में किसी से बेवजह झगड़ पड़ें। क़रीब जा कर पूछा—यह क्यों बिगड़े जी? किस पर गुल मचाया?

ख़ोजी—अजी, जाओ भी, यहाँ शिकार हाथ से जाता रहा। वल्लाह, गिरफ़्तार ही कर लिया था। गीदी को पाता, तो इतनी क़रौलियाँ लगाता कि छठी का दूध याद आ जाता। मगर मेरा पाँव फिसल गया और वह निकल गया!

आज़ाद—तुम्हें एक आँच की हमेशा कसर रह जाती है। यह था कौन?

ख़ोजी—था कौन, वही बहुरूपिया! और किसको पड़ी थी भला!

आज़ाद—बहुरूपिया!

ख़ोजी—जी हाँ, बहुरूपिया! बड़ा ताज्जुब हुआ आपको?

आज़ाद—भई हाँ, ताज्जुब कहीं लेने जाना है। क्या बहुरूपिया भी जहाज़ पर सवार हो लिया है? बड़ा लागू है भई!

ख़ोजी—सवार नहीं हुआ, तो आया कहाँ से?

आज़ाद—क्या सोते हो ख़ोजी, या पीनक में हो?

ख़ोजी—ख़ोजी की ऐसी-तैसी। फिर तुमने ख़ोजी कहा हमको!

आज़ाद—माफ़ करना भई, क़सूर हुआ।

ख़ोजी—वाह, अच्छा क़सूर हुआ ! किसी के जूते लगाइए और कहिए, क़सूर हुआ। जब देखो, ख़ोजी-ख़ोजी।

आज़ाद—अच्छा जनाब ख्वाजा साहब, अब तो राज़ी हुए! यह बहुरूपिया कहाँ से आ गया ?

ख़ोजी—अरे साहब, अब तो ख्वाब में भी आने लगा। अभी मैं सोता था, आप आ पहुँचे। मेरे हाथ में उस वक़्त अफीम की डिबिया थी। फेंकके डिबिया और लेके कतारा जो पीछे झपटा, तो दो कोस निकल गया। मगर शामत यह आयी कि एक जगह ज़रा सा पानी पड़ा था! मेरी तो जान ही निकल गयी। फिसला, तो आरा रा रा धों!

आज़ाद—क्या गिर पड़े ? जाओ भी!

ख़ोजी—बस, कुछ न पूछिए। मेरा गिरना ऐसा मालूम हुआ, जैसे हाथी पहाड़ से गिरा। धड़ाम-धड़ाम!

आज़ाद—इसमें क्या शक़ है! आपके हाथ-पाँव ही ऐसे हैं। वह तो कहिए, बड़ी ख़ैरियत गुज़री!

ख़ोजी—और क्या! मगर जाता कहाँ है गीदी। रगेद के मारूँ। यहाँ पलटन में सूबेदारी कर चुके हैं।

मेम और साहब, दोनों मियाँ आज़ाद और ख़ोजी की बातें सुन रहे थे। साहब तो उर्दू ख़ूब समझते थे, मगर मेम साहब कोरी थीं। साहब ने तर्जुमा करके बताया, तो वेनेशिया भी मारे हँसी के लोट गयी! यह इंच भर का आदमी, एक-एक माशे के हाथ पाँव और आपके गिरने से इतनी बड़ी आवाज़ हुई कि जैसे हाथी गिरे!

साहब—सिड़ी है कोई। जाने क्या वाही-तबाही बकता है।

मेम—तुम चुप रहो। हम इस जेंटिलमैन से पूछते हैं, यह कौन पागल है।

साहब—अच्छा, मगर हिंदोस्तानी बदतमीज़ होते हैं। तुम इससे बातें न करो।

मेम—अच्छा, तुम्हीं पूछो।

इस पर साहब ने उँगली के इशारे से आज़ाद को बुलाया। आज़ाद भला कब सुननेवाले थे। बोले ही नहीं। साहब पलटनी आदमी, चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल हो गया। ख़याल हुआ कि वेनेशिया तालियाँ बजायेगी कि एक निगर तक मुख़ातिब न हुआ, बात का जवाब तक न दिया। वेनेशिया ने जब यह हालत देखी तो इठलाती और मुस्कराती हुई मियाँ आज़ाद की तरफ़ गयी। आज़ाद लेडियों से बोलने-चालने के आदी तो थे ही, एक ख़ूबसूरत लेडी को आते देखा, तो टोपी उतार कर सलाम किया और पूछा—आप कहाँ तशरीफ़ ले जायँगी ?

मेम—घर जा रही हूँ। यह ठिगना आदमी कौन है ? ख़ूब बातें करता है। हँसते-हँसते पेट में बल पड़-पड़ गये।

आज़ाद—जी हाँ, बड़ा मसख़रा है।

मेम—चार्ली, यह तो कहते हैं कि वह बौना मसख़रा है।

साहब—इसकी बातें बड़े मज़े की होती हैं।

साहब का ग़ुस्सा ठंडा हो गया। आज़ाद का डील-डौल देख कर डर गये। इधर-उधर की बातें होने लगीं। इतने में जहाज़ पर एक दिल्लगीबाज़ को सूझी कि आओ, ख़ोजी को बनायें। दो-चार और शोहदे उससे मिल गये। जब देखा कि मियाँ ख़ोजी पीनक में सो गये, तो एक आदमी ने दो लाल मिरचें उनकी नाक में डाल दीं। ख़ोजी ने जो आँख खोली, तो मारे छींकों के बौखला गये। बावले कुत्ते की तरह इधर-उधर दौड़ने लगे। मेम और साहब तालियाँ बजा-बजा कर हँसने लगे।

आज़ाद—जनाब ख़्वाजा साहब !

ख़ोजी—बस, अलग रहिएगा, आक् छीं !

आज़ाद—आख़िर यह हुआ क्या ? कुछ बताओ तो !

ख़ोजी—चलिए, आपको क्या; चाहे जो कुछ हुआ ! आ...छीं !

आज़ाद—यार, यह उसी बहुरूपिये की शरारत है।

ख़ोजी—देखिए तो, कितनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि आ...छीं। याद ही तो करे—छीं।

आज़ाद—मगर तुम तो गिर-गिर पड़ते हो मियाँ ! एक दफ़े जी कड़ा करके पकड़ क्यों नहीं लेते ?

ख़ोजी—नाक में मिरचें डाल दीं। गीदी ने।

आज़ाद—अबकी आप ताक में बैठे रहिए। बस, आते ही पकड़ लीजिए। मगर है बड़ा शरीर, सचमुच नाक में दम कर दिया।

ख़ोजी—कुछ ठिकाना है ! नाक में मिरचें झोंकने की कौन सी दिल्लगी है ?

आज़ाद—और क्या साहब, यह बेजा बात है।

ख़ोजी—बेजा-वेजा के भरोसे न रहिएगा, मैं किसी दिन हाथ-पाँव ढीले कर दूँगा। कहाँ के बड़े कड़ेख़ाँ हैं आप ! मैंने भी सूबेदारी की है।

आज़ाद—तो आप मेरे हाथ-पाँव क्यों ढीले करते हैं ? मैंने तो आपका कुछ बिगाड़ा नहीं।

ख़ोजी—[आँखें खोल कर] अरे ! यह आप थे ! भई, माफ़ करना। बस, देखते जाओ, अब गिरफ़्तार ही किया चाहता हूँ गीदी को।

आज़ाद—लेकिन, ज़रा होशियार रहिएगा ? बहुरूपिया गया जहन्नम में, ऐसा न हो, कोई हज़रत रुपये-पैसे गायब कर दें, बेवक़ूफ़ कहीं का ! अबे गधे, यहाँ बहुरूपिया कहाँ ?

ख़ोजी—बस, चोंच सँभालिए, बंदा चलता है। दोस्ती हो चुकी। कुछ आपके गुलाम नहीं हैं। और सुनिए, हम गधे हैं। क्या जाने कितने गधे हमने बना डाले।

आज़ाद—ख़ैर, यही सही। लेकिन जाइएगा कहाँ ? यहाँ भी कुछ खुश्की है ?

ख़ोजी—अरे ओ जहाज़ के कप्तान ! जहाज़ रोक ले—अभी रोक ले।

साहब—वह यों न सुनेगा। दो-चार हाथ क़रौली के लगाइए, तो फिर सुने।

इतने में हाजरी खाने का वक़्त आया। आज़ाद ने बेतकल्लुफी के साथ उन दोनों के साथ खाना खाया। फिर तीनों टहलने लगे। आज़ाद को वेनेशिया की एक-एक छवि भाती थी और वह हसीना कभी शोख़ी से इठलाती थी, कभी नाज़ के साथ मुसकिराती थी। इतने में ख़ोजी ने यह शेर पढ़ा—

गर तुम नहीं तो और बुते महजबीं सही,
हमको तो दिल्लगी से ग़रज़ है, कहीं सही।

आज़ाद ने जो यह शेर सुना, तो ख़ोजी के पास आ कर बोले—यह क्या ग़ज़ब करते हो जी? इसका शौहर शेर ख़ूब समझ लेता है।

ख़ोजी—वह गीदी इन इशारों को क्या जाने।

आज़ाद—तुम बड़े शरीर हो।

ख़ोजी—क्यों उस्ताद, हमी से यह उड़नघाइयाँ बताते हो, क्यों? सच कहना, हुस्नआरा के लगभग है कि नहीं। बम्बईवाली बेगम भी ऐसी ही शोख़ थी।

वेनेशिया ने ख़ोजी को मुसकिराते देखा, तो उँगली के इशारे से बुलाया। ख़ोजी तो रेशाख़तमी हो गये। बहुत ऐंठते और अकड़ते हुए चले। गोया लंधौर पहलवान के भी चचा हैं। वाह, क्यों न हो। इस वक़्त ज़रा पाँव फिसले, तो दिल्लगी हो। मेम साहब के पास पहुँचे।

आज़ाद—टोपी उतार कर सलाम करो ख़ोजी।

ख़ोजी का लफ़्ज़ सुनना था कि ख़्वाजा साहब का ग़ुस्सा एक सौ बीस दरजे पर जा पहुँचा। बस, पलट पड़े और पलटते ही उलटे पाँव भागने लगे।

आज़ाद—ओ गीदी, जो पलट गया, तो इतनी क़रौलियाँ भोंकी होंगी कि छठी का दूध याद आ गया होगा।

मेम—क्यों ख़ोजी, क्या मुझसे ख़फ़ा हो गये?

आज़ाद—क्यों भई, क्या शैतान ने फिर उँगली दिखा दी? मियाँ ख़ोजी?

ख़ोजी—ख़ोजी पर ख़ुदा की मार! ख़ोजी पर शैतान की फटकार! एक दफ़ा ख़ोजी कहा, मैं ख़ून पी कर रह गया, अब फिर दोहराया। ख़ुदा जाने, कब का दिया इस गाढ़े वक़्त काम आया। नहीं तो मारे क़रौलियों के भुट्टा सा सिर उड़ा देता। लाख गया-गुज़रा हूँ, तो क्या हुआ, उम्र भर रिसालदारी की है, घास नहीं खोदी।

मेम—अच्छा, यह खोजी के नाम पर बिगड़े! हम समझे, हमसे रूठ गये।

खोजी—नहीं मेम साहब, कैसी बात आप फ़रमाती हैं!

आज़ाद—ज़रा इनसे इनकी बीबी जान का हाल पूछिए। उसका नाम बुआ ज़ाफ़रान है। देवनी है देवनी।

ख़ोजी ने बुआ ज़ाफ़रान का नाम सुना, तो रंग फ़क़ हो गया और सहम कर आँखें बंद कर लीं। आज़ाद ने जब वेनेशिया से सारा क़िस्सा कहा, तो मारे हँसी के लोट-लोट गयी।

४९

एक आलीशान महल की छत पर हुस्नआरा और उनकी तीनों बहनें मीठी नींद सो रही हैं। बहारबेगम की ज़ुल्फ़ से अम्बर की लपटें आती थीं; रूहअफ़ज़ा के घूँघरवाले बाल नौजवानों के मिज़ाज की तरह बल खाते थे; सिपहआरा की मेंहदी अजब लुत्फ़ दिखाती थी और हुस्नआरा बेगम के गोरे-गोरे मुखड़े के गिर्द काली-काली ज़ुल्फ़ों को देख कर धोखा होता था कि चाँद ग्रहण से निकला है।

इधर तो ये चारों परियाँ बेख़बर आराम में हैं, उधर शाहज़ादा हुमायूँ फ़र अपने दोस्त मीर साहब से इधर-उधर की बातें कर रहे हैं।

मीर—कुछ अड़ोसी-पड़ोसियों का तो हाल कहिए। दोनों हसीनें नज़र आती हैं या नहीं?

शाहज़ादा—अरे मियाँ, अब तो चौकड़ी है। एक से एक बढ़-चढ़-कर। सब मस्त हैं। मगर बला की हयादार।

मीर—यह कहिए, गहरे हो उस्ताद!

शाहज़ादा—अजी, अभी ख्वाब देख रहा था एक महरी हुस्नआरा का ख़त लायी है। खत पढ़ रहा था कि आप बला की तरह आ पहुँचे। जी चाहता है, गोली मार दूँ।

मीर—क्यों साहब, आपने तो कान पकड़े थे।

शाहज़ादा—दिल पर क़ाबू भी तो हो?

मीर—कलंक का टीका लगाओगे? ख़ुदा के लिए फिर तोबा करो। आख़िर चारों छोकड़ियों में से आप रीझे किस पर? या चारों पर दिल आया है?

शाहज़ादा—चार निकाह तो जायज़ हैं!

मीर—तो यह कहिए, चारों पर दाँत हैं।

शाहज़ादा—नहीं मियाँ, हँसता हूँ। दो ही तो कुँआरी हैं।

ये बातें हो ही रही थीं कि एकाएक महल्ले में चोर-चोर का गुल मचा। कोई चिराग़ जलाता है कोई बीबी के ज़ेवर टटोलता है। चारों तरफ खलबली मच गयी। पूछने से मालूम हुआ कि बड़ी बेगम साहबा के घर में चोर घुसा था। शाहज़ादे ने जो यह बात सुनी, तो मीर साहब से बोले—भई मौक़ा तो अच्छा है। चलो, इस वक़्त ज़रा हो आयें। इसी बहाने एहसान जतायें।

मीर—सोच लो, ऐसा न हो, पीछे मेरे माथे जाय। तुम तो शाहज़ादे बन कर छूट जाओगे, उल्लू मैं बनूँगा। आख़िर वहाँ चल कर क्या कहोगे?

शाहज़ादा—अजी, कहेंगे क्या! बस, अफ़सोस करेंगे। शायद इसी फेर में एक झलक मिल जाय। और नहीं, तो आवाज़ ही सुन लेंगे।

दोनों आदमी बेगम साहबा के मकान पर पहुँचे, तो क्या देखते हैं कि चालीस-पचास आदमी एक चोर को घेरे खड़े हैं और चारों तरफ़ से उस पर बेभाव की पड़ रही हैं। एक ने तड़ से चपत जमायी, दूसरे ने खोपड़ी पर धौल लगायी। चोर पर इतनी पड़ी कि बिलबिला गया। झल्ला-झल्ला कर रह जाता था। दो-तीन भले आदमी लोगों को समझा रहे थे, बस करो, अब तो खोपड़ी पिलपिली कर दी। क्या ज़माते ही जाओगे?

एक—भाई, खूब हाथ गरमाये।

दूसरा—हम तो पोले हाथ से लगाते थे। जिसमें चोट कम आये, मगर आवाज़ खूब हो।

चोर—छूटूँगा तो एक-एक से समझूँगा। क्या करूँ, बेबस हूँ; वर्ना सबको पीस कर धर देता।

बहारबेगम के मियाँ भी खड़े थे। बोले—एक ही शैतान है।

शाहज़ादा—आखिर, यह आया किधर से?

नवाब साहब—मैं घूम कर कोई दस बजे के लगभग आया। खाना खा कर लेटा ही था कि नींद आ गयी। यह गुल मचा, तो तलवार ले कर दौड़ पड़ा। अब सुनिए, मैं तो ऊपर से आ रहा हूँ, और चोर नीचे से ऊपर जाता है। रास्ते में मुठभेड़ हुई। इसने छुरी निकाली, मगर मैंने भी तलवार का वह हाथ चलाया कि ज़रा हाथ ओछा न पड़े, तो भंडारा खुल जाय। फिर तो ऐसा सहमा की होश उड़ गये। भागते राह न मिली। अब छत पर पहुँचा और चाहता था कि झपट कर नीचे कूद पड़े; मगर मेरी छोटी साली ने इस फुरती से रस्सी का फंदा बना कर फेंका कि उलझ कर गिरा। उठ कर भागने को ही था कि मैं गले पर पहुँच गया और जाते ही छाप बैठा। औरतों ने दोहाई देना शुरू की; लेकिन मैंने न छोड़ा। आपने इस वक़्त कहाँ तकलीफ़ फ़रमायी?

शाहज़ादा—मैंने कहा, चल कर देखूँ क्या बात हुई। बारे शुक्र है कि खैरियत हुई। मगर आपकी साली बड़ी दिलेर हैं। दूसरी औरत हो, तो डर जाय।

यहाँ तो यह बातें हो रही थीं, उधर अंदर चारों बहनों में भी यही ज़िक्र था। चारों हँस-हँस कर यही बातें कर रही थीं—

सिपहआरा—है-है- बाजी, मैंने जब उस काले-काले संडे को देखा, तो सन से जान निकल गयी।

रूहअफ़ज़ा—मुआ तंबाकू का पिंडा।

हुस्नआरा—वह तो खैर गुज़री कि संदूक हाथ से गिर पड़ा, नहीं तो सब मूस ले जाता।

सिपहआरा—बहारबेगम की चिड़चिड़ी सास लाखों ही सुनाती कि मेरी बहू के गहने सब बेच खाये।

बहारबेगम—चोर-चोर की भनक कान में पड़ी, तो मैं कुलबुला कर चौंक पड़ी।

भागी, तो जूड़ा भी खुल गया। अल्लाह जानता है, बड़ी मिहनत से बाँधा था। चलो खैर !

रूहअफ़ज़ा—बस, हमारी बाजी को चोटी कंघी की फ़िक्र रहती है।

हुस्नआरा—जितना इनको इस बात का ख़याल है, उतना हमारे ख़ानदान-भर में किसी को नहीं है। जभी तो दूल्हा भाई इतने दीवाने रहते हैं।

बहारबेगम—चलो, बैठी रहो; छोटे मुँह बड़ी बात !

हुस्नआरा—दूल्हा भाई को इनके साथ इश्क़ है।

बहारबेगम—क्या टर-टर लगायी है नाहक़ !

अब दिल्लगी सुनिए कि मिरज़ा हुमायूँ फ़र बाहर बैठे चुपके-चुपके सारी बातें सुन रहे थे। नवाब बेचारे कट-कट गये, मगर चुप। अंदर जा कर समझायें, तो अदब के ख़िलाफ़; चुपके बैठे रहें, तो भी रहा नहीं जाता। जान अज़ाब में थी। खैर, हुक्क़ा पी कर शाहज़ादा रुख़सत हुए। उनके चले जाने के बाद नवाब साहब अंदर आये और बोले—तुम लोगों की भी अजब आदत है। जब देखोगी कि कोई ग़ैर आदमी आके बैठा है, बस, तभी गुल मचाओगी। इस वक़्त एक भलेमानस बैठे थे और यहाँ चुहल हो रही थी।

बहारबेगम—वह भलामानस निगोड़ा कौन था, जो इतने वक़्त पंचायत करने आ बैठा ?

रूहअफ़ज़ा—तो अब कोई उनके मारे अपने घर में बात न करे ! घोट कर मार न डालिए।

हुस्नआरा—हम भी तो सुनें, वह भलेमानस कौन थे ?

नवाब—अजी, यही, जो सामने रहते हैं, शाहज़ादे।

हुस्नआरा—तो आपने आ कर हमसे कह क्यों न दिया ? फिर हम काहे को बोलते ?

बहारबेगम—अपनी ख़ता न कहेंगे, दूसरों को ललकारेंगे।

नवाब—उस वक़्त वहाँ से आने का मौका न था। मुझसे पूछा कि चोर को किसने पकड़ा। मैंने कहा, मेरी छोटी साली ने तो बहुत ही हँसे।

नवाब साहब बाहर चले गये, तो फिर बातें होने लगीं—

सिपहआरा—ज़रा उसकी ढिठाई तो देखो कि चोर का नाम सुनते ही आ डटा। भला क्या वजह थी इसकी ? ऐसा कहाँ का बड़ा रुस्तम था ?

हुस्नआरा—तीन बजे के वक़्त आप जो आये, तो क्यों आये !

रूहअफ़ज़ा—मैं बताऊँ ! उसको यह ख़बर न होगी कि दूल्हा भाई घर पर हैं। यह न होते, तो घर में घुस पड़ता।

सिपहआरा—काम तो शोहदों के जैसे हैं।

अब एक और दिल्लगी सुनिए। चोर आया, गुल गपाड़ा हुआ, पकड़ा गया;

जमाने भर में हुल्लड़ मचा, महल्ला भर जाग उठा; चोर थाने पर पहुँचा; मगर बड़ी बेगम साहबा अभी तक खर्राटे ही ले रही हैं। जब जागीं, तो मामा से बोलीं—कुछ गुल सा मचा था अभी ?

मामा—हाँ, कुछ आवाज़ तो आयी थी !

बेगम—जरी, किसी से पूछो तो।

मामा—ऐ बीबी, पूछना इसमें क्या है ? भेड़िया-वेड़िया आया होगा।

बेगम—मैंने आज हाथी को ख्वाब में देखा है; अल्लाह बचाये।

इतने में चोर के आने की खबर मिली। तब तो बेगम साहबा के होश उड़ गये। मामा को भेजा कि जा पूछ, कुछ ले तो नहीं गया।

हुस्नआरा—अम्माँजान बहुत जल्द जागीं ! क्या तू भी घोड़े बेच कर सोयी थी ! अल्लाह री नींद !

मामा—जरी आँख लग गयी थी। मगर कुछ गुल की आवाज़ ज़रूर आयी थी।

हुस्नआरा—महल्ला भर जाग उठा, तुम्हारे नज़दीक कुछ ही कुछ गुल था। ठीक ! जाके अम्माँ से कह दे कि चोर आया था, मगर जाग हो गयी।

सिपहआरा—ऐ, काहे के वास्ते बहकती हो। मामा, तू जाके सो रह; शोर-गुल कहीं कुछ न था, कोई सोते में बर्रा उठा होगा।

हुस्नआरा—नहीं मामा, यह दिल्लगी करती हैं। चोर आया था।

मामा—ऐ, गया चूल्हे में निगोड़ा चोर ! इधर आने का रुख़ करे, तो आँखें ही फूट जायँ। क्या हँसी-ठट्ठा है।

सिपहआरा—देखो तो सही भला !

मामा—अभी बेगम साहबा सुन लें, तो दुनिया सिर पर उठा लें।

मामा ने जा कर बेगम से कहा—हुजूर, कुछ है न वै, वेकार को जगाया। न भेड़िया, न चोर, कोई सोते-सोते बर्रा उठा था।

बेगम—जरा बाहर जा कर तो पूछ कि यह गुल कैसा था ?

महरी—बीबी, मैं अभी बाहर से आयी हूँ, कोठे पर कलमुँहा आया था। कोठरी का कुलुफ तोड़ कर जब संदूक उठाया, तो जाग हो गयी। इतने में नवाब साहब कोठे पर से नंगी तलवार लिये दौड़ आये।

बेगम—नवाब साहब के दुश्मनों को तो कहीं चोट-ओट नहीं आयी ?

महरी—ना बीबी, एक फाँस तक तो चुभी नहीं।

बेगम—चोर कुछ ले तो नहीं गया।

महरी—एक झंझी तक नहीं।

बेगम—चोर अब कहाँ है ?

महरी—ख़ादिमहुसैन थाने पर ले गया।

मामा—अब चक्की पीसनी पड़ेगी।

बेगम—तू तो कहती थी कि कोई सोते-सोते बर्रा उठा था। झूठी ज़माने भर की! चल, जा, हट!

अब थाने का हाल सुनिए। थानेदार नदारद; जमादार शराब पिये मस्त; कांस्टेबिल अपनी-अपनी ड्यूटी पर। एक कांस्टेबिल पहरे पर पड़ा सो रहा था। ख़ादिमहुसैन ने बहुत गुल मचाया। तब जाके हज़रत की नींद खुली। बिगड़े कि मुझे जगाया क्यों? चोर को छोड़ दो।

ख़ादिमहुसैन—वाह, छोड़ देने की एक ही कही। मैं भी थाने में मुहर्रिर रह चुका हूँ।

कांस्टेबिल—न छोड़ोगे तुम?

ख़ादिमहुसैन—होश की दवा करो मियाँ! इसके साथ तुमको भी फँसाऊँ तो सही।

कांस्टेबिल—(चोर से) तुझे इन्होंने अपने यहाँ कै घंटे रखा था?

चोर—पकड़ के बस यहाँ ले आये!

कांस्टेबिल—दुत गौखे! अबे, तू कहना कि मैं राह-राह चला जाता था, इनसे मुझसे लागडाट थी। इन्होंने घात पा कर मुझे पकड़ लिया, खूब पीटा और चार घंटे तक अस्तबल की कोठरी में बंद रखा।

चोर—लागडाट क्या बताऊँ?

कांस्टेबिल—कह देना कि मेरी जोरू पर यह बुरी निगाह डालते थे। बस, लागडाट हो गयी।

चोर—मगर मेरी जोरू तो चार बरस हुए, एक के साथ निकल गयी।

कांस्टेबिल—बस, तो बात बन गयी! कह देना, इन्हीं की साज़िश से निकली थी। तो इन पर दो जुर्म क़ायम होंगे। एक यह कि तुमको झूठ-मूठ फाँस लिया, दूसरे ज़बरदस्ती क़ैद रखा।

ख़ादिमहुसैन—तुम्हारी बातों पर कुछ हँसी आती है, कुछ ग़ुस्सा।

कांस्टेबिल—जब बड़ा घर देखोगे, तब हँसी का हाल खुल जायगा।

ख़ादिमहुसैन—हमारे घर में चोरी हो और हमीं फँसें?

ख़ैर कांस्टेबिल साहब रोज़नामचा लिखने बैठे। ख़ादिमहुसैन ने सारी दास्तान बयान की। जब उसने यह कहा कि नवाब साहब तलवार ले कर दौड़े, तो कांस्टेबिल नें क़लम रोक दिया और कहा—ज़रा ठहरो, तलवार का लैसंस उनके पास है?

ख़ादिमहुसैन—उनके साथ तो बीस सिपाही तलवार बाँधे निकलते हैं। तुम एक लैसंस लिये फिरते हो!

आख़िर रिपोर्ट खतम हुई और ख़ादिम अपने घर आया।

एक दिन मियाँ आज़ाद मिस्टर और मिसेज़ अपिल्टन के साथ खाना खा रहे थे कि एक हँसोड़ आ बैठे और लतीफ़े कहने लगे। बोले—अजी, एक दिन बड़ी दिल्लगी हुई। हम एक दोस्त के यहाँ ठहरे हुए थे। रात को उसके ख़िदमतगार की बीबी दस अंडे चट कर गयी। जब दोस्त ने पूछा, तो ख़िदमतगार ने बिगड़ी बात बना कर कहा कि बिल्ली खा गयी। मगर मैंने देख लिया था। जब बिल्ली आयी तो वह औरत उसे मारने दौड़ी। मैंने कहा—बिल्ली को मार न डालना, नहीं तो फिर अंडे हज़म न होंगे।

आज़ाद—बात तो यही है। खाय कोई, बिल्ली का नाम बद।

अपिल्टन—आप शादी क्यों नहीं करते?

हँसोड़—शादी करना तो आसान है, मगर बीबी का सँभालना मुश्किल। हाँ, एक शर्त पर हम शादी करेंगे। बीबी दस बच्चों की माँ हो।

मेम—बच्चों की क़ैद क्यों की?

हँसोड़—आप नहीं समझीं। अगर जवान आयी, तो उसके नख़रे उठाते-उठाते नाक में दम आ जायगा; अधेड़ बीबी हुई तो नख़रे न करेगी और बच्चे बड़े काम आयेंगे।

आज़ाद—वह क्या?

हँसोड़—कहत के दिनों में बेच लेंगे।

इतने में क्या देखते हैं कि मियाँ खोजी लुढ़कते हुए चले आते हैं। एक सूखा कतारा हाथ में है।

आज़ाद—आइए। बस, आप ही की कसर थी।

खोजी—मुझे बैठे-बैठे खयाल आया कि किसी से पूछूँ तो कि यह समुंदर है क्या चीज़ और किसकी दुआ से बना है?

हँसोड़—मैं बताऊँ! अगले ज़माने में एक मुल्क था घामड़-नगर।

खोजी—जरी ठहर जाइएगा। वहाँ अफ़ीम भी बिकती थी?

हँसोड़—उस मुल्क के बाशिंदे बड़े दिलेर होते थे, मगर क़द के छोटे। बिलकुल टेनी मुर्गे के बराबर।

खोजी—(मूँछों पर ताव दे कर) हाँ-हाँ, छोटे क़द के आदमी तो दिलेर होते ही हैं।

हँसोड़—और कोई बगैर क़रौली बाँधे घर से न निकलता था।

खोजी—(अकड़ कर) क्यों मियाँ आज़ाद, अब न कहोगे?

हँसोड़—मगर उन लोगों में एक ऐब था, सब के सब अफ़ीम पीते थे।

खोजी—(त्योरियाँ चढ़ा कर) ओ गीदी !

आज़ाद—हैं-हैं । शरीफ़ आदमियों से यह बदज़बानी !

खोजी—हम तो सिर से पाँव तक फुँक गये, आप शरीफ़ लिये फिरते हैं ।

हँसोड़—वहाँ की औरतें बड़ी गरांडील होती थीं । जहाँ मियाँ ज़रा बिगड़े, और बीबी ने बगल में दबा कर बाज़ार में घसीटा ।

खोजी—अहाहा, सुनते हो यार ! वह बहुरूपिया वहीं का था । अब तो उस गीदी का मकान भी मिल गया । चचा बना कर छोड़ूँ, तो सही ।

हँसोड़—वे सब रिसालदारी करते थे ।

खोजी—और वहाँ क्या-क्या होता था ? उस मुल्क के आदमियों की तसवीरें भी आपके पास हैं ?

हँसोड़—थीं तो, मगर अब नहीं रहीं । बस, बिलकुल तुम्हारे ही से हाथ-पाँव थे । करारे जवान । पौंडे बहुत खाते थे ।

खोजी—ओहोहो ! वे सब हमारे ही बाप-दादा थे । देखो भाई आज़ाद, अब यह बात अच्छी नहीं । वहाँ से तो लम्बे-चौड़े वादे कर के लाये थे कि क़रौली ज़रूर ले देंगे, और यहाँ साफ़ मुकर गये । अब हमें क़रौली मँगा दो, तो खैरियत है, नहीं तो हम बिगड़ जायँगे । वल्लाह, कौन गीदी दम भर ठहरे यहाँ ।

आज़ाद—और यहाँ से आप जायँगे कहाँ ? जहन्नुम में ?

वेनेशिया—कुछ रुपये भी हैं ? जहाज़ का किराया कहाँ से दोगे ?

आज़ाद—मैं इनका खज़ानची हूँ । यह घर जायँ, किराया मैं दे दूँगा ।

हँसोड़—इस खज़ानची के लफ़्ज़ पर हमें एक लतीफ़ा याद आया । शादी के पहले नौजवान लेडियाँ अपने आशिक़ को अपना खज़ाना कहती हैं । शादी होने के बाद उसे खज़ानची कहने लगती हैं । खज़ानची के खज़ानची और मियाँ के मियाँ !

वेनेशिया—अच्छा हुआ, तुम्हारी बीबी चल बसीं; नहीं तो तुम्हारी किफ़ायत उनकी जान ही ले लेती ।

हँसोड़—अजीब औरत थी, शादी के बाद ऐसी रोनी सूरत बनाये रहती थी कि मालूम होता था, आज बाप के मरने की खबर आयी है । दो बरस के बाद हमसे छह महीने के लिए जुदाई हुई । अब जो देखता हूँ, तो और ही बात है । बात-बात पर मुसकिराना और हँसना । बात हुई और खिल गयी । मैंने पूछा, क्या तुम वही हो जो नाक-भौं चढ़ाये रहती थीं ? मुसकिरा कर कहा—हाँ, हूँ, तो वही । मैंने कहा—खैर, काया-पलट तो हुई । हँसके बोली—वाह इसमें ताज्जुब काहे का । एक दिन मुझे खयाल आ गया, बस, तब से अब हर वक़्त हँसती हूँ । तब तो मैंने अपना मुँह पीट लिया । रोनी सूरत बना कर बोला—हम तो खुश हुए थे कि अब हमसे तुमसे खूब बनेगी, मगर मालूम हो गया कि तुम्हारी हँसी और रोने, दोनों का एतबार नहीं । अगर तुम्हें इसी तरह बैठे-बैठे किसी दिन खयाल आ गया कि रोना अच्छा, तो फिर रोना ही शुरू कर दोगी ।

आज़ाद—मुझे भी एक बात याद आ गयी। हमारे महल्ले में एक ख्वाजा साहब रहते थे। उनके एक लड़की थी, इतनी हसीन कि चाँद भी शरमा जाय। बात करते वक़्त बस यही मालूम होता था कि मुँह से फूल झड़ते हैं। उसकी शादी एक गँवार ज़ाहिल से हुई, जो इतना बदसूरत था कि उससे बात करने का भी जी न चाहता था। आख़िर लड़की इसी ग़म में कुढ़-कुढ़ कर मर गयी।

५१

कई दिन तक तो जहाज़ ख़ैरियत से चला गया, लेकिन पेरिस के करीब पहुँच-कर जहाज़ के कप्तान ने सबको इत्तिला दी कि एक घंटे में बड़ी सख्त आँधी आनेवाली है। यह ख़बर सुनते ही सबके होश-हवास ग़ायब हो गये। अक़्ल ने हवा बतलायी, आँखों में अँधेरी छायी, मौत का नक़्शा आँखों के सामने फिरने लगा। तुर्रा यह कि आसमान फ़क़ीरों के दिल की तरह साफ़ था, चाँदनी खूब निखरी हुई, किसी को सानगुमान भी नहीं हो सकता था कि तूफ़ान आयेगा; मगर बेरोमिटर से तूफ़ान की आमद साफ़ ज़ाहिर थी। लोगों के बदन के रोंगटे खड़े हो गये, जान के लाले पड़ गये; या खुदा, जायें तो कहाँ जायें, और इस तूफ़ान से नजात क्योंकर पायें ! कप्तान के भी हाथ-पाँव फूल गये और उसके नायब भी सिट्टी-पट्टी भूल गये। सीढ़ियों से तख़्ते पर आते थे और घबरा कर फिर ऊपर चढ़ जाते थे। कप्तान लाख-लाख समझाता था, मगर किसी को उसकी बात का यक़ीन न आता था—

किसी तरह से समझता नहीं दिले नाशाद;
वही है रोना, वही चीखना, वही फ़रियाद।

इतने में हवा ने वह ज़ोर बाँधा कि लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। कप्तान ने एक पाल तो रहने दिया, और जहाज़ को खुदा की राह पर छोड़ दिया। लहरों की यह कैफ़ियत की आसमान से बातें करती थीं। जहाज़ झोंके खा कर गेंद की तरह इधर से उधर उछलता था। सब-के-सब ज़िंदगी से हाथ धो बैठे, अपनी जानों को रो बैठे। बच्चे सहम कर अपनी माँओं से चिपटे जाते थे। कोई औरत मुँह ढँक कर रोती थी कि उम्र भर की कमाई इस समुद्र में गँवायी। कोई अपने प्यारे बच्चे को छाती से लगा कर कहती—बेटा, अब हम रुख़सत होते हैं। पर वह नादान मुसकिराता था और इस भोलेपन से माँ के दिल पर बिजलियाँ गिराता था। किसी को मारे ख़ौफ़ के चुप लग गयी थी, किसी के हाथ-पाँवों में कँपकँपी थी। कोई समुद्र में कूद पड़ने का इरादा करके रह जाता था, कोई बैठा देवतों को मनाता था। क्या बूढ़े, क्या जवान, सबकी अक़्ल गुम थी। वेनेशिया के चेहरे का रँग काफ़ूर हो गया। हँसोड़ के दिल से हँसी का ख़याल कोसों दूर हो गया। मियाँ आज़ाद का चेहरा ज़र्द, अपिल्टन के हाथ-पाँव सर्द। मियाँ आज़ाद सोचने लगे, या खुदा, यह किस मुसीबत से दो-चार किया, माशूक़ के एवज़ मौत को गले का हार किया ! जी लगाने की खूब सज़ा पायी, इश्क़ की धुन में जान भी गँवायी। हमारी हड्डियाँ तक गल जायेंगी; पर हुस्नआरा हमारी ख़बर भी न पायेंगी। सिपहआरा बार-बार फ़ाल देखेंगी कि आज़ाद कब मैदान से सुर्ख़रू हो कर आयेंगे और हम कब मसजिद में घी के चिराग़ जलायेंगे; मगर आज़ाद की किश्ती ग़ोते खाती है और ज़रा देर में तह की ख़बर लाती है।

जहाज़ में तो यह कुहराम मचा था, मगर खोजी लंबी ताने सो ही रहे थे। इस नींद पर खुदा की मार, इस पीनक पर शैतान की फटकार! आज़ाद ने जगाया कि ख्वाजा साहब, उठिए, तूफ़ान आया है। हज़रत ने लेटे ही लेटे भुनभुना कर फ़रमाया कि चुप गीदी, हमने ख्वाब में बहुरूपिया पकड़ पाया है। तब तो आज़ाद झल्लाये और कस कर एक लात लगायी। खोजी कुलबुला कर उठ बैठे और समुद्र की भयानक सूरत देखी, तो काँप उठे।

कप्तान खूब समझता था कि हालत हर घड़ी नाज़ुक होती जाती है; लेकिन पुराना आदमी था, कलेजा मजबूत किये हुए था। इससे लोगों को तसल्ली होती थी कि शायद जान बच निकले। सामने पेरिम का जज़ीरा नज़र आता था; मगर वहाँ तक पहुँचना मुहाल था। सब के सब दुआ कर रहे थे कि जहाज़ किसी तरह इस टापू तक पहुँच जाय। मरने की तैयारियाँ हो रही थीं। इतने में आज़ाद ने क्या देखा कि अपिल्टन वेनेशिया का हाथ पकड़ कर तख्ते पर खड़े रो रहे हैं। आज़ाद को देखते ही बेनेशिया ने कहा—मिस्टर आज़ाद, रुखसत! हमेशा के लिए रुखसत!

आज़ाद—रुखसत!

हँसोड़—है-है! लो, अब भँवर में जहाज़ आ गया।

यह सुन कर औरतों ने वह फ़रियाद मचायी कि लोगों के कलेजे दहल गये।

अपिल्टन—बस, इतनी ही दुनिया थी!

आज़ाद—हाँ, इतनी ही दुनिया थी!

खोजी—भई आज़ाद, खुदा गवाह है, मैं इस वक़्त अफ़ीम के नशे में नहीं। अफ़सोस, तुम्हारी जान जाती है, हुस्नआरा समझेंगी कि आज़ाद ने धोखा दिया। हाय आज़ाद, तेरी जवानी मुफ्त गयी।

एकाएक जहाज तीन बार घूमा और हवा के झोंके से कई गज के फ़ासले पर जा पहुँचा। अब लाइफ-बोट के सिवा और कोई तदबीर न थी। जहाज़ डूबने ही को था, दस फुट से ज्यादा पानी उसमें समा गया था। लाइफ-बोट समुद्र में उतारे गये और आज़ाद लड़कों और औरतों को उठा-उठा कर लाइफबोट में बैठाने लगे। उनकी अपनी ज़ान खतरे में थी, मगर इसकी उन्हें परवा न थी! जब वह वेनेशिया के पास पहुँचे, तो उसने इनसे हाथ मिलाया और अपिल्टन और वह, दोनों लाइफ-बोट में कूद पड़े। आज़ाद की दिलेरी पर लोग हैरत से दाँतों तले उँगली दबाते थे। लोगों को यक़ीन हो गया था कि यह कोई फ़रिश्ता है, जो बेगुनाहों की जान बचाने के लिए आया है।

टापू के वाशिंदे किनारे पर खड़े रोशनी कर रहे थे कि शोले उठें और जहाज़ के लोग समझ जायँ कि ज़मीन क़रीब है। सैकड़ों आदमी गुल मचाते थे, तालियाँ बजाते थे। कुछ लोग रो रहे थे। मगर कुछ ऐसे भी थे, जो दिल में खिले जाते थे कि अब पौ बारह हैं।

एक—बस, अब जहाज़ डूबा। तड़के ही से लैस होकर आ डटूँगा।

दूसरा—हमें एक बार जवाहिरात का एक संदूक मिल गया था।

तीसरा—अजी हमने इसी तरह बहुत-कुछ पैदा किया।

चौथा—अज़ी, क्या बकते हो? कुछ तो खुदा से डरो। वे सब तो मुसीबत में हैं, और तुम लोगों को लूट की धुन सवार है। शर्म हो, तो चुल्लू-भर पानी में डूब मरो।

मियाँ खोजी बार-बार हिम्मत बाँध कर लाइफ-बोट की तरफ़ जाते और डर कर लौट आते थे। आखिर आजाद ने उन्हें भी घसीट कर लाइफ-बोट में पहुँचाया। वहाँ जाते ही उन्होंने गुल मचाया कि अफ़ीम की डिबिया तो वहीं रह गयी! मियाँ जरी कोई लपकके हमारी डिबिया ले आये। आजाद ने कहा—मियाँ तुम भी कितने पागल हो? यहाँ जानों के लाले पड़े हैं, तुम्हें अपनी डिबिया ही की फ़िक्र है।

लालफ-बोट कुल तीन थे उनमें मुश्किल से पचास-साठ आदमी बैठ सकते थे। लेकिन हर शख्स चाहता था कि मैं भी लाइफ-बोट में पहुँच जाऊँ। कप्तान ने यह हालत देखी, तो ज़ंजीरें खोल दीं। किश्तियाँ बह निकलीं। अब बाक़ी आदमियों की जो हालत हुई, वह बयान में नहीं आ सकती। अगर कोई फ़ोटोग्राफ़र इन बद-नसीबों की तसवीर उतारता, तो बड़े से बड़े संगदिल भी उसे देख कर सिर धुनते। मौत चिमटी जाती है, और मौत के पंजों में फँसी हुई जान फड़फड़ा रही है। मगर जान बड़ी प्यारी चीज है। लोग खूब जानते थे कि जहाज़ के डूबने में देर नहीं,

लाइफ-बोट भी दूर निकल गये। मगर फिर भी यह उम्मेद है, शायद किसी तरह बच जायँ। दो बदनसीब बहनें यों बातें कर रही थीं—

बड़ी बहन—कूद पड़ो पानी में। शायद बच जायँ।

छोटी बहन—लहरें कहीं न कहीं पहुँचा ही देंगी।

बड़ी—अम्माँ सुनेंगी तो क्या करेंगी?

छोटी—मैं तो कूदती हूँ।

बड़ी—क्यों जान देती है?

एक औरत ने अपने प्यारे बच्चे को समुद्र में फेक दिया और कहा—यह लड़का तेरे सिपुर्द करती हूँ।

यह कह कर खुद भी गिर पड़ी।

अब सुनिए; जिस लाइफ-बोट पर वेनेशिया, और अपिल्टन थे, वह हवा के झोंके से पेरिम से दूर हट गया। वेनेशिया ने कहा—अब कोई उम्मेद नहीं।

अपिल्टन—खुदा पर भरोसा रखो।

वेनेशिया—या खुदा, हमें बचा ले। हम बेगुनाह हैं।

अपिल्टन—सब्र, सब्र!

वेनेशिया—लो, आज़ाद की किश्ती भी इधर ही आने लगी। अब कोई न बचेगा।

दोनों किश्तियाँ थोड़े ही फासले पर जा रही थीं, इतने में एक लहर ने अपिल्टन की किश्ती को ऐसा झोंका दिया कि वह नीचे ऊपर होने लगी और तीन आदमी समुद्र में गिर पड़े। अपिल्टन भी उनमें से एक थे। उनके गिरते ही वेनेशिया ने एक चीख मारी और बेहोश हो गयी। आज़ाद ने यह हाल देखा, तो फ़ौरन बोट पर से कूद पड़े और जान हथेली पर लिये हुए, लहरों को चीरते, अपिल्टन की मदद को चले। इधर अपिल्टन का कुत्ता भी पानी में कूदा और उनके सिर के बाल दाँतों से पकड़े ऊपर लाया। मियाँ आज़ाद भी तैरते हुए जा पहुँचे और अपिल्टन को पकड़ लिया। उसी वक़्त किश्ती भी आ पहुँची और लोगों ने मदद दे कर अपिल्टन को खींच लिया। मगर किश्ती इतनी तेज़ी से निकल गयी कि आज़ाद उस पर न आ सके। अब उनके लिए मौत का सामना था। मगर वह कलेजा मजबूत किये टापू की तरफ तैरते चले जाते थे। टापूवालों ने उन्हें आते देखा, तो और भी हौसला बढ़ाया, और हिम्मत दिलायी। सब के सब दुआ कर रहे थे कि या खुदा, इस जवान को बचा। ज्यों ही आज़ाद टापू के करीब पहुँचे, रस्सियाँ फेंकी गयीं और आज़ाद ऊपर आये। सब ने उनकी पीठ ठोंकी। वेनेशिया ने मियाँ आज़ाद से कहा— तुम न होते तो, मैं कहीं की न रहती। तुम्हारा एहसान कभी न भूलूँगी।

अपिल्टन—भाई, देखना, भूल न जाना। टर्की से ख़त लिखते रहना।

आज़ाद—ज़रूर, ज़रूर!

वेनेशिया—आज़ाद, जैसे बहन को अपने भाई की मुहब्बत होती है, वैसे ही मुझको तुम्हारी मुहब्बत है।

आज़ाद—मैं जहाँ रहूँगा, आप लोगों से ज़रूर मिलूँगा।

खोजी—यार, हमारी अफ़ीम की डिबिया जहाज़ ही में रह गयी। देखें, किस ख़ुश नसीब के हाथ लगती है।

सब लोग यह जुमला सुन कर खिलखिला कर हँस पड़े।

५२

माल्टा में आर्मीनिया, अरब, यूनान, स्पेन, फ्रांस सभी देशों के लोग हैं। मगर दो दिन से इस जज़ीरे में एक बड़े गरांडील जवान का गुज़र हुआ है। क़द कोई आध गज का हाथ-पाँव दो-दो माशे के; हवा ज़रा तेज़ चले, तो उड़ जायँ। मगर बात बात पर तीखे हुए जाते हैं। किसी ने ज़रा तिर्छी नज़र से देखा, और आपने क़रोली सीधी की। न दीन की फ़िक्र थी, न दुनिया की, बस, अफ़ीम हो, और चाहे कुछ हो या न हो।

आज़ाद ने कहा—भई, तुम्हारा यह फ़िक़रा उम्र भर न भूलेगा कि देखें हमारी अफ़ीम की डिबिया किस खुशनसीब के हाथ लगती है।

ख़ोजी—फिर, उसमें हँसी की क्या बात है? हमारी तो जान पर बन आयी और आपको दिल्लगी सूझती है। जहाज़ के डूबने का किस मर्दक को रंज हो। मगर अफ़ीम के डूबने का अलबत्ता रंज है। दो दिन से जम्हाइयों पर जम्हाइयाँ आती हैं। पैसे लाओ, तो देखूँ, शायद कहीं मिल जाय।

मियाँ आज़ाद ने दो पैसे दिये और आप एक दूकान पर पहुँच कर बोले—अफ़ीम लाना जी?

दूकानदार ने हाथ से कहा कि हमने समझा नहीं।

खोजी—अजब जाँगलू है! अबे, हम अफ़ीम माँगते हैं।

दूकानदार हँसने लगा।

खोजी—क्या फटी जूती की तरह दाँत निकालता है! लाता है अफ़ीम कि निकालूँ क़रौली!

इतने में मियाँ आज़ाद पहुँचे और पूछा—यहाँ क्या खरीदारी होती है?

ख़ोजी—अजी, यहाँ तो सभी जाँगलू ही जाँगलू रहते हैं। घंटे भर से अफ़ीम माँग रहा हूँ, सुनता ही नहीं।

आज़ाद—फिर कहने से तो आप बुरा मानते हैं। भला यह बारूद बेचता है या अफ़ीम? बिलकुल गौखे ही रहे!

खोजी—अगर अफ़ीम का यही हाल रहा, तो तुर्की तक पहुँचना मुहाल है।

आज़ाद—भई, हमारा कहा मानो। हमें टर्की जाने दो और तुम घर जाओ।

ख़ोजी—वाहवा, अब मैं साथ छोड़नेवाला नहीं। और मैं चला जाऊँगा, तो तुम लड़ोगे किसके बिरते पर?

आज़ाद—बेशक, आप ही के बिरते पर तो मैं लड़ने जाता हूँ न!

खोजी—कौन! क़सम खाके कहता हूँ, जब सुनिएगा; यही सुनिएगा कि ख्वाजा साहब ने तोप में कील लगा दी।

आज़ाद—जी, इसमें क्या शक है।

२१

ख़ोजी—शक-वक के भरोसे न रहिएगा ! अकेली लकड़ी चूल्हे में भी नहीं जलती। जिस वक़्त ख़्वाजा साहब अरबी घोड़े पर सवार होंगे और अकड़ कर बैठेंगे, उस वक़्त अच्छे-अच्छे जंडैल-कंडैल झुक-झुक कर सलाम करेंगे।

इतने में एक हब्शी सामने से आ निकला। करारा जवान, मछलियाँ भरी हुई, सीना चौड़ा। ख़ोजी ने जो देखा कि एक आदमी अकड़ता हुआ सामने से आ रहा है, तो आप भी ऐंठने लगे। हब्शी ने क़रीब आ कर कंधे से जरा धक्का दिया, तो मियाँ ख़ोजी ने बीस लुढ़कनियाँ खायीं। मगर बेहया तो थे ही, झाड़-पोंछ कर उठ खड़े हुए, और हब्शी को ललकार कर कहा—अबे ओ गीदी, न हुई क़रौली इस वक़्त। ज़रा मेरा पैर फिसला गया, नहीं तो वह पटकनी देता कि अंजर-पंजर ढीले हो जाते!

आज़ाद—तुम क्या, तुम्हारा गाँव भर तो इसका मुक़ाबला कर ले!

ख़ोजी—अच्छा, लड़ा कर देख लो न! छाती पर न चढ़ बैठूँ, तो ख़्वाजा नाम नहीं। कहो, ललकारूँ जा कर।

आज़ाद—बस, जाने दीजिए। क्यों हाथ-पाँव के दुश्मन हुए हो!

दूसरे दिन जहाज वहाँ से रवाना हुआ। आज़ाद को बार-बार हुस्नआरा की याद आती थी। सोचते थे, कहीं लड़ाई में मारा गया, तो उससे मुलाक़ात भी न होगी। ख़ोजी से बोले—क्यों जी, हम अगर मर गये, तो तुम हुस्नआरा को हमारे मरने की ख़बर दोगे, या नहीं?

ख़ोजी—मरना क्या हँसी-ठट्ठा है? मरते हैं हम जैसे दुबले-पतले बूढ़े अफ़ीमची कि तुम ऐसे हट्टे-कट्टे जवान?

आज़ाद—शायद हमीं तुमसे पहले मर जायँ?

ख़ोजी—हम तुमको अपने पहले मरने ही न देंगे। उधर तुम बीमार हुए, और हमने इधर ज़हर खाया।

आज़ाद—अच्छा, जो हम डूब गये?

ख़ोजी—सुनो मियाँ, डूबनेवाले दूसरे ही होते हैं। वह समुंदर में डूबने नहीं आया करते, उनके लिए एक चुल्लू काफी होता है।

आज़ाद—ज़रा देर के लिए मान लो कि हम मर गये तो इत्तिला दोगे न?

ख़ोजी—पहले तो हम तुमसे पहले ही डूब जायँगे, और अगर बदनसीबी से बच गये, तो जा कर कहेंगे—आज़ाद ने शादी कर ली, और गुलछर्रे उड़ा रहे हैं।

आज़ाद—तब तो आप दोस्ती का हक़ ख़ूब अदा करेंगे!

ख़ोजी—इसमें हिकमत है।

आज़ाद—क्या है, हम भी सुनें?

ख़ोजी—इतना भी नहीं समझते! अरे मियाँ, तुम्हारे मरने की ख़बर पा कर हुस्नआरा की जान पर बन आयेगी, वह सिर पटक-पटक कर दम तोड़ देगी; और जो यह सुनेगी कि आज़ाद ने दूसरी शादी कर ली, तो उसे तुम्हारे नाम से नफ़रत हो जायगी, और रंज तो पास फटकने भी न पायेगा। क्यों, है न अच्छी तरकीब?

आज़ाद—हाँ, है तो अच्छी !

ख़ोजी—देखा, बूढ़े आदमी डिबिया में बंद कर रखने के क़ाबिल होते हैं। तुम लाख पढ़ जाओ, फिर लौंडे ही हो हमारे सामने। मगर तुम्हारी आजकल यह क्या हालत है ? कोई किताब पढ़ कर दिल क्यों नहीं बहलाते ?

आज़ाद—जी उचाट हो रहा है। किसी काम में जी नहीं लगता।

ख़ोजी—तो ख़ूब सैर करो। यार, पहले तो हमें उम्मेद ही नहीं कि हिंदोस्तान पहुँचें; लेकिन जिंदा बचे, और हिंदोस्तान की सूरत देखी, तो ज़मीन पर क़दम न रखेंगे। लोगों से कहेंगे, तुम लोग क्या जाना, माल्टा कहाँ है ? ख़ूब गप्पें उड़ायेंगे।

यों बातें करते हुए दोनों आदमी एक कोठे में गये। वहाँ क़हवे की दूकान थी। आज़ाद ने एक आदमी के हाथ अफ़ीम मँगायी। ख़ोजी ने अफ़ीम देखी तो खिल गये। वहीं घोली और चुस्की लगायी। वाह आज़ाद, क्यों न हो, यह एहसान उम्र-भर न भूलूँगा। इस वक़्त हम भी अपने वक़्त के बादशाह हैं—

फ़िक्र दुनिया की नहीं रहती है मैख़्वारों में ;
ग़म ग़लत हो गया जब बैठ गये यारों में।

उस दूकान में बहुत से अख़बार मेज़ पर पड़े थे। आज़ाद एक किताब देखने लगे। मालिक-दूकान ने देखा, तो पूछा—कहाँ का सफ़र है ?

आज़ाद—टर्की जाने का इरादा है।

मालिक—वहाँ हमारी भी एक कोठी है। आप वहीं ठहरिएगा।

आज़ाद—आप एक ख़त लिख दें, तो अच्छा हो।

मालिक—ख़ुशी से। मगर आजकल तो वहाँ जंग छिड़ी है !

आजाद—अच्छा, छिड़ गयी ?

मालिक—हाँ, छिड़ गयी। लड़ाई सख़्त होगी। लोहे से लोहा लड़ेगा।

जब आज़ाद यहाँ से चलने लगे, तो मालिक ने अपने लड़के के नाम ख़त लिख कर आज़ाद को दिया। दोनों आदमी वहाँ से आ कर जहाज़ पर बैठे।

५३

रात के ग्यारह बजे थे, चारों बहनें चाँदनी का लुत्फ़ उठा रही थीं। एकाएक मामा ने कहा—ऐ हुजूर, जरी चुप तो रहिए। यह गुल कैसा हो रहा है? आग लगी है कहीं।

हुस्नआरा—अरे, वह शोले निकल रहे हैं। यह तो बिलकुल क़रीब है।

नवाब साहब—कहाँ हो सब की सब! ज़रूरी सामान बाँध कर अलग करो। पड़ोस में शाहज़ादे के यहाँ आग लग गयी। ज़ेवर और जवाहिरात अलग कर लो। असबाब और कपड़े को जहन्नुम में डालो।

बहारबेगम—हाय, अब क्या होगा!

हुस्नआरा—हाय-हाय, शोले असमान की ख़बर लाने लगे!

नीचे उतर कर सबों ने बड़ी फुरती से सब चीज़ें बाहर निकालीं और फिर कोठे पर गयीं, तो क्या देखती हैं कि हुमायूँ फ़र की कोठी में आग लगी है और हर तरफ़ से शोले उठ रहे हैं। ये सब इतनी दूर पर खड़ी थीं, मगर ऐसा मालूम होता था कि चारों तरफ़ भट्ठी ही भट्ठी है। धन्नियाँ जो चटकीं, तो बस, यही मालूम हुआ कि बादल गरज रहा है।

बहारबेगम—हाय, लाखों पर पानी पड़ गया!

सिपहआरा—बहन, इधर तो आओ। देखो, हज़ारों आदमी जमा हैं। ज़रा देखो, वह कौन है? है-है! वह कौन है?

बहारबेगम—कहाँ कौन है?

सिपहआरा—यह महताबी पर कौन है?

हुस्नआरा—अरे, यह तो हुमायूँ फ़र हैं। ग़ज़ब हो गया। अब यह क्योंकर बचेंगे?

सिपहआरा फूट-फूट कर रोने लगी। फिर बोली—बा जी, अब होगा क्या? चारों तरफ़ आग है। बचेगा क्योंकर बेचारा!

बहारबेगम—इसकी जवानी पर तरस आता है।

हुस्नआरा मुँह ढाँप कर ख़ूब रोयीं। सिपहआरा का यह हाल था कि आँसुओं का तार न टूटता था। हुमायूँ फ़र महताबी पर इस ताक में सोये थे कि शायद इन हसीनों में से किसी का जलवा नज़र आये। लेकिन ठंडी हवा चली, तो आँख लग गयी। जब आग लगी और चारों तरफ़ गुल मचा, तो जागे; लेकिन कब? जब महताबी के नीचे के हिस्से में चारों तरफ़ आग लग चुकी थी। ख़िदमतगारों के हाथ-पाँव फूल गये। यही सोचते थे, किसी तरह से इस बेचारे की जान बचायें। असबाब बटोरने की फ़िक्र किसे! कोई शाहज़ादे की जवानी को याद करके रोता

था, कोई सिर धुन कर कहता था—गरीब बूढ़ी माँ के दिल पर क्या गुज़रेगी ! शहर से गोल के गोल आदमी आ कर जमा हो गये। सिपाही और चौकीदार, शहर के रईस और अफ़सर उमड़े चले आते थे। दरिया से हज़ारों घड़े पानी लाया जाता था। भिश्ती और मज़दूर आग बुझाने में मसरूफ़ थे। मगर हवा इस तेज़ी पर थी कि पानी तेल का काम देता था। शाहज़ादे इस नाउम्मेदी की हालत में सोच रहे थे कि जिन लोगों के दीदार के लिए मैंने अपनी जान गँवायी, उन्हें मालूम हो जाय, तो मैं समझूँ कि जी उठा। इतने में इधर नज़र पड़ी, तो देखा कि सब की सब औरतें कोठे पर खड़ी हाय-हाय कर रही हैं। सोचे, ख़ैर शुक्र है ! जिसके लिए जान दी, उसको अपना मातम करते तो देख लिया। एकाएक उन्हें अपना छोटा भाई याद आया। उसकी तरफ़ मुख़ातिब हो कर कहा—भाई, घर-बार तुम्हारे सुपुर्द है। माँ को तसल्ली देना कि हुमायूँ फ़र न रहा, तो मैं तो हूँ। यह फ़िक़रा सुन कर सब लोग रोने लगे। इतने में आग के शोले और क़रीब आये और हवा ने और ज़ोर बाँधा, तो शाहज़ादा ने सिपहआरा की तरफ़ नज़र करके तीन बार सलाम किया। चारों बहनें दीवारों से सिर टकराने लगीं कि हाय, यह क्या सितम हुआ ! शाहज़ादे ने यह कैफ़ियत देखी, तो इशारे से मना किया। लेकिन दोनों बहनों की आँखों में इतने आँसू भरे हुए थे कि उन्हें कुछ दिखायी न दिया।

सिपहआरा खिड़की के पास जा कर फिर सिर पीटने लगी। हुमायूँ फ़र उसे देख कर अपना सदमा भूल गये और हाथ बाँध कर दूर ही से कहा—अगर यह करोगी, तो हम अपनी जान दे देंगे ! गोया जान बचने की उम्मेद ही तो थी ! चारों तरफ़ आग के शोले उठ रहे थे, धुआँ बादल की तरह छाया हुआ था, भागने की कोई तदबीर नहीं। हवा कहती है कि मैं आज ही तेज़ी दिखलाऊँगी, और आप कहते हैं कि मैं अपनी जान दे दूँगा।

इतने में जब आग बहुत ही क़रीब आ गयी, तो हुमायूँ फ़र की हिम्मत छूट गयी। बेचैनी की हालत में सारी छत पर घूमने लगे। आख़िर यहाँ तक नौबत आयी कि जो लोग क़रीब खड़े थे, वह लपटों के मारे और दूर भागने लगे। आग हुमायूँ फ़र से सिर्फ़ एक गज़ के फ़ासले पर थी। आँच से फुँके जाते थे। जब ज़िंदगी की कोई उम्मेद न रही, तो आख़िरी बार सिपहआरा की तरफ़ टोपी उतार कर सलाम किया और बदन को तौल कर धम से कूद पड़े।

उधर सिपहआरा ने भी एक चीख मारी और खिड़की से नीचे कूदी।

शाहज़ादा साहब नीचे घास पर गिरे। यहाँ ज़मीन बिलकुल नर्म और गीली थी। गिरते ही बेहोश हो गये। लोग चारों तरफ़ से दौड़ पड़े और हाथों-हाथ ज़मीन से उठा लिया। लुत्फ़ की बात यह कि सिपहआरा को भी ज़रा चोट नहीं लगी थी। उसने उठते ही कहा कि लोगो, हुमायूँ शाहज़ादा बचा हो, तो हमें दिखा दो। नहीं तो उसी की क़ब्र में हमको भी ज़िंदा दफ़न कर देना।

इतने में नवाब साहब ने सिपहआरा को अलग ले जा कर कहा—तुम घबराओ नहीं। शाहज़ादा साहब खैरियत से हैं।

सिपहआरा—हाय! दूल्हा भाई, मैं क्योंकर मानूँ!

नवाब साहब—नहीं बहन, आओ, हम उन्हें अभी दिखाये देते हैं।

सिपहआरा—फिर दिखाओ मेरे दूल्हा भाई!

नवाब साहब—जरा भीड़ छँट जाय, तो दिखाऊँ। तब तक घर चली चलो।

सिपहआरा—फिर दिखाओगे? हमारे सिर पर हाथ रख कर कहो।

नवाब साहब—इस सिर की क़सम ज़रूर दिखायेंगे।

सिपहआरा को अंदर पहुँचा कर नवाब साहब हुमायूँ फ़र के यहाँ पहुँचे, तो देखा कि टाँग में कुछ चोट आयी है। डॉक्टर पट्टी बाँध रहा है और बहुत से आदमी उन्हें घेरे खड़े हैं। लोग इस बात पर बहस कर रहे हैं कि आग लगी क्योंकर? रात भर शाहज़ादे की हालत बहुत ख़राब रही। दर्द के मारे तड़प-तड़प उठते। सुबह को चारपाई से उठ कर बैठे ही थे कि चिट्ठीरसाँ ने आ कर एक ख़त दिया। शाहज़ादे साहब ने इस ख़त को नवाब साहब की तरफ़ बढ़ा दिया। उन्होंने यह मज़मून पढ़ सुनाया—

अजी हज़रत, तसलीम।

सच कहना, कैसा बदला लिया! लाख-लाख समझाया, मगर तुमने न माना। आख़िर, तुम ख़ुद ही मुसीबत में पड़े। तुमने हमारा दिल जलाया है, तो हम तुम्हारा घर भी न जलायें? जिस वक़्त यह ख़त तुम्हारे पास पहुँचेगा, मकान जल-भुन के ख़ाक हो गया होगा।

शहसवार।

शाहज़ादे साहब ने यह मज़मून सुना, तो त्योरियों पर बल पड़ गये और चेहरा मारे गुस्से के सुर्ख़ पड़ गया।

५४

रात का वक़्त था, एक सवार हथियार साजे, रातों-रात घोड़े को कड़कड़ाता हुआ बगटुट भागा जाता था। दिल में चोर था कि कहीं पकड़ न जाऊँ! जेलखाना झेलूँ। सोच रहा था, शाहज़ादे के घर में आग लगायी है, ख़ैरियत नहीं। पुलीस की दौड़ आती ही होगी। रात भर भागता ही गया। आख़िर सुबह को एक छोटा सा गाँव नज़र आया। बदन थक कर चूर हो गया था। अभी घोड़े से उतरा ही था कि बस्ती की तरफ से गुल की आवाज़ आयी। वहाँ पहुँचा, तो क्या देखता है कि गाँव भर के बाशिंदे जमा हैं, और दो गँवार आपस में लड़ रहे हैं। अभी यह वहाँ पहुँचा ही था कि एक ने दूसरे के सिर पर ऐसा लट्ठ मारा कि वह ज़मीन पर आ रहा। लोगों ने लट्ठ मारनेवाले को गिरफ़्तार कर लिया और थाने पर लाये। शहसवार ने दरियाफ़्त किया, तो मालूम हुआ कि दोनों की एक जोगिन से आशनाई थी।

सवार—यह जोगिन कौन है भई?

एक गँवार—इतनी उमिर आयी, अस जोगिन कतहूँ न दीख।

इतने में थानेदार आ गये। ज़ख़मी को चारपाई पर डाल कर अस्पताल भिजवाया और ख़ूनी को गवाहों के साथ थाने ले गये। मियाँ सवार भी उनके साथ हो लिये, थाने में तहक़ीक़ात होने लगी।

थानेदार—यह किस बात पर झगड़ा हुआ जी?

चौकीदार—हुज़ूर, वह सास जौन जोगिन बनी है।

थानेदार—हम तुमसे इतना पूछता है किस बात पर लड़ाई हुआ?

चौकीदार—जैसे इहौ वहाँ जात रहै और वहौ वहाँ जात रहै। तौन आपस में लाग-डाँट ह्वै गयी। ए बस एक दिन मार-धार ह्वै गयी बस, लाठी चलै लाग। मूर से रकत बहुत बहा।

मौलवी—सूबेदार साहब, आज दोनों ने ख़ूब कुज्जियाँ चढ़ायी थीं।

थानेदार—आप कौन हैं?

मौलवी—हुज़ूर, गाँव का क़ाज़ी हूँ।

थानेदार—यहीं मकान है आपका?

मौलवी—जी हाँ, पुराना रईस हूँ।

शहसवार—बेशक!

थानेदार—देहातवाले भी अजीब जाँगलू होते हैं। एक बार एक देहाती मुशायरे में जाने का इत्तफ़ाक़ हुआ। बड़े-बड़े गँवार के लट्ठ जमा थे। एक साहब ने शेर पढ़ा, तो आख़िर में फ़रमाते हैं—बीमार हौं। लोग हैरत में थे कि इस हौं के क्या माने? फिर हज़रत ने फरमाया—सरशार हौं। मारे हँसी के लोट गया। हाँ, मौलवी साहब, फिर क्या हुआ?

मौलवी—बस, जनाब, फ़िर दोनों में कुश्ती हुई। कभी यह ऊपर, वह नीचे, कभी वह नीचे, यह ऊपर। तब तो मैं भागा कि चौकीदार से कहूँ। धौड़ता गया।

थानेदार—जनाब, इस महावरे को याद रखिएगा।

मौलवी—बस, मैं धौड़के पूरन चौकीदार के मकान पर गया। उसकी जोड़, बोली—

सवार—कौन बोली ?

थानेदार—(हँस कर) सुना नहीं आपने ? जोड़ !

मौलवी—हुजूर, हुक्काम हैं, आपको हँसना न चाहिए।

थानेदार—जी हाँ, मैं हुक्काम हूँ; मगर आप भी तो उमरों हैं ! हाँ, फ़रमाओ जी

मौलवी—देखिए, फ़रमाता हूँ।

सवार—अब हँसी ज़ब्त नहीं हो सकती।

मौलवी—बस जनाब, वहाँ से मैं इस चौकीदार को लाया। वहाँ आ कर देखा, तो खून के दरिया बह रहे थे।

इतने में ख़बर आयी कि ज़ख़मी दुनिया से रवाना हो गया। थानेदार साहब मारे ख़ुशी के फूल गये। मामूली मार-पीट 'ख़ून' हो गयी। ख़ूनी का चालान किया और जज ने उसे फाँसी की सज़ा दे दी।

जिस वक़्त ख़ूनी को फाँसी हो रही थी, मियाँ सवार भी तमाशा देखने आ पहुँचे। मगर उस वक़्त की हालत देख कर उनके दिल पर ऐसा असर हुआ कि आँखें खुल गयीं। सोचने लगे—दुनिया से नाता तोड़ लें। किसी से हसद और कीना न रखें। अगर कहीं पकड़ गया होता, तो मुझे भी यों ही फाँसी मिलती। ख़ुदा ने बहुत बचाया। मगर ज़रा इस जोगिन को देखना चाहिए। यह दिल में ठान कर जोगिन के मकान की तरफ़ चले।

जब लोगों से पूछते हुए उसके मकान पर पहुँचे, तो देखा कि एक ख़ूबसूरत बाग़ है और एक छोटा सा ख़ुशनुमा बँगला, बहुत साफ़ सुथरा। मकान क्या, परीख़ाना था। जोगिन के क़रीब जा कर उसको सलाम किया। जोगिन के पोर-पोर पर जोबन था। जवानी फटी पड़ती थी। सिर से पैर तक संदली कपड़े पहने हुए थी। शहसवार हज़ार जान से लोट पोट हो गये। जोगिन इनकी चितवनों से ताड़ गयी कि हज़रत का दिल आया है।

सवार—बड़ी दूर से आपका नाम सुन कर आया हूँ।

जोगिन—अक्सर लोग आया करते हैं। कोई आये, तो ख़ुशी नहीं, न आये, तो रंज नहीं।

सवार—मैं चाहता हूँ कि उम्र भर आपके क़दमों के तले पड़ा रहूँ।

जोगिन—आपका मकान कहाँ है ?

सवार—

घर बार से क्या फ़क़ीर को काम ?
क्या लीजिए छोड़े गाँव का नाम।

जोगिन—यहाँ कैसे आये ?

सवार—रमते जोगी तो हैं ही, इधर भी आ निकले।

जोगिन—आख़िर इतना तो बतलाओ कि हो कौन ?

सवार—एक बदनसीब आदमी।

जोगिन—क्यों ?

सवार—अपने कर्मों का फल।

जोगिन—सच है !

सवार—मुझे इश्क़ ही ने तो गारद कर दिया। एक बेगम की दो लड़कियाँ हैं। उनसे आँखें लड़ गयीं। जीते जी मर मिटा।

जोगिन—शादी नहीं हुई ?

सवार—एक दुश्मन पैदा हो गया। आज़ाद नाम था। बहुत ही ख़ूबसूरत सजीला जवान।

मियाँ आज़ाद का नाम सुनते ही जोगिन के चेहरे का रंग उड़ गया। आँखों से आँसू गिरने लगे। शहसवार दंग थे कि बैठे-बिठाये इसे क्या हो गया।

सवार—ज़रा दिल को ढारस दो, आख़िर तुम्हें किस बात का रंज है ?

जोगिन—

ख़ौफ़ से लेते नहीं नाम कि सुन ले न कोई;
दिल ही दिल में तुम्हें हम याद किया करते हैं।

हमारी दास्तान ग़म से भरी हुई है ! सुन कर क्या करोगे। हाँ, तुम्हें एक सलाह देती हूँ। अगर चाहते हो कि दिल की मुराद पूरी हो, तो दिल साफ़ रखो।

सवार—तुम्हारे सिवा अगर किसी और पर नज़र पड़े, तो आँखें फूट जायँ !

जोगिन—यही दिल की सफ़ाई है ?

सवार—शीशी से गुलाब निकाल लो। मगर गुलाब की बू बाक़ी रहेगी। दुनिया को छोड़ तो बैठें, पर इश्क़ दिल से न जायगा। अब हम चाहते हैं कि तुम्हारे ही साथ जिंदगी बसर करें। आज़ाद उसके साथ रहें, हम तुम्हारे साथ।

जोगिन—भला तुम आज़ाद को पाओ, तो क्या करो ?

सवार—कच्चा ही चबा जाऊँ ?

जोगिन—तो फिर हमसे न बनेगी ? अगर तुम्हारा दिल साफ़ नहीं, तो अपनी राह लगो।

सवार—अच्छा, अब आज से आज़ाद का नाम ही न लेंगे।

५५

आज़ाद का जहाज़ जब इस्कंदरिया पहुँचा, तो वह खोजी के साथ एक होटल में ठहरे। अब खाना खाने का वक़्त आया, तो खोजी बोले—लाहौल, यहाँ खानेवाले की ऐसी तैसी चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मगर हम जरा सी तकलीफ के लिए अपना मज़हब न छोड़ेंगे। आप शौक़ से जायँ और मज़े से खायँ; हमें माफ़ ही रखिए।

आज़ाद—और अफ़ीम खाना मज़हब के खिलाफ़ नहीं ?

खोजी—कभी नहीं ! और, अगर हो भी तो क्या यह ज़रूरी है कि एक काम मज़हब के खिलाफ़ किया, तो और सब काम मज़हब के खिलाफ़ ही करें ?

आज़ाद—अजी, तो किस गधे ने तुमसे कहा कि यहाँ खाना मज़हब के खिलाफ़ है ? मेज-कुर्सी देखी और चीख उठे कि मज़हब के खिलाफ़ है ? इस खब्त की भी कोई दवा है !

खोजी—अजी, वह खब्त ही सही। आप रहने दीजिए।

आज़ाद—खाओ, या जहन्नुम में जाओ।

खोजी—जहन्नुम में वे जायँगे, जो यहाँ खायँगे। यहाँ तो सीधे जन्नत में पहुँचेंगे।

आज़ाद—वहाँ अफीम कहाँ से आयेगी ?

इतने में दो तुर्की आये और अपनी कुर्सियों पर बैठ कर मज़े से खाने लगे। आज़ाद की चढ़ी बनी। पूछा, ख्वाजा साहब, बोल गीदी, अब शरमाया या नहीं ! खोजी ने पहले तो कहा, ये मुसलमान नहीं हैं। फिर कहा, शायद हों ऐसे-वैसे ! मगर जब मालूम हुआ कि दोनों खास तुर्की के रहनेवाले हैं, तो बोले—आप लोग यहाँ होटल में खाना खाते हैं ? क्या यह मज़हब के खिलाफ़ नहीं ?

तुर्की—मज़हब के खिलाफ़ क्यों होने लगा ?

आखिर, खोजी झेंपे। फिर होटल में खाना खाया। थोड़ी देर के बाद आज़ाद तो एक साहब से मिलने चले और खोजी ने पीनक लेना शुरू किया। जब नींद खुली, तो सोचे कि हम बैठे-बैठे कब तक यहीं मक्खियाँ मारेंगे। आओ देखें, अगर कोई हिंदुस्तानी भाई मिल जाय, तो ग़प्पें उड़ें। इधर-उधर टहलने लगे। आखिरकार एक हिंदुस्तानी से मुलाक़ात हुई। सलाम-बंदगी के बाद बातें होने लगीं। ख्वाजा साहब ने पूछा—क्यों साहब, यहाँ कोई अफ़ीम की दूकान है ? उस आदमी ने इसका कुछ जवाब ही नहीं दिया। खोजी तीखे आदमी। उनका भला यह ताब कहाँ कि किसी से सवाल करें और वह जवाब न दे ? बिगड़ खड़े हुए—न हुई क़रौली, खुदा की क़सम ! वरना तमाशा दिखा देता।

हिंदुस्तानी ने समझा, यह पागल है। अगर बोलूँगा, तो खुदा जाने, काट खाय, या चोट करे। इससे यही अच्छा कि चुप ही रहो। मियाँ खोजी समझे कि

दब गया, और भी अकड़ गये। उसने समझा, अब चोट किया ही चाहता है। ज़रा पीछे हट गया। उसका पीछे हटना था कि मियाँ खोजी और भी शेर हुए। मगर कुंदे तौल-तौल कर जाते थे। फिर रोब से पूछा—क्यों बे, यहाँ ठंडा पानी मिल सकता है? वह गरीब झट-पट ठंडा पानी लाया। खोजी ने दो-चार घूँट पानी पिया और अकड़ कर बोले—माँग, क्या माँगता है? उस आदमी ने समझा, यह ज़रूर दीवाना है! आपकी हालत तो इतनी खराब है, पल्ले टका तो है नहीं और कहते हैं—माँग, क्या माँगता है? खोजी ने फिर तन कर कहा—माँग कुछ। उस आदमी ने डरते-डरते कहा—यह जो हाथ में है, दे दीजिए।

खोजी का रंग उड़ गया। जान तक माँगता, तो देने में दरेग़ न करते; मगर चीनिया बेगम तो नहीं दी जाती। उससे पूछा—तुम यहाँ कब से हो, क्या नाम है? उसने जवाब दिया—मुझे तहौवरखाँ कहते हैं!

खोजी—भला, इस होटल में मुसलमान लोग खाते हैं?

तहौवरखाँ—बराबर! क्यों न खायँ?

होटलवालों ने मिसकोट की कि खोजी को छेड़ना चाहिए। इस होटल में क़ाहिरा का रहनेवाला बौना था। लोग सोचे, इस बौने और खोजी से पकड़ हो तो अच्छा। बौना बड़ा शरीर था। लोगों ने उससे कहा—चलो, तुम्हारी कुश्ती बदी गयी है। वह देखो, एक आदमी हिंदोस्तान से आया है। कितना अच्छा जोड़ है। यह सुन कर बौना मियाँ खोजी के क़रीब गया और झुक कर सलाम किया। खोजी ने जो देखा कि एक आदमी हमसे भी ऊँचा मिला, तो अकड़ कर आँखों से सलाम का जवाब दिया। बौने ने इधर-उधर देख कर एक दफ़ा मौक़ा जो पाया, तो मियाँ खोजी की टोपी उतार कर पड़ाक से एक धौल जमायी और टोपी फेंक कर भागा। मगर ज़रा-ज़रा से पाँव, भाग कर जाता कहाँ? खोजी भी झपटे। आगे-आगे बौना और पीछे-पीछे मियाँ खोजी। कहते जाते थे—ओ गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो इसी दम भोंक देता। आखिर बौना हाँप कर खड़ा हो गया। तब तो खोजी ने लपक-कर हाथ पकड़ा और पूछा—क्यों बे! इस पर बौने ने मुँह चिढ़ाया। खोजी ग़ुस्से में भरे तो थे ही, आपने भी एक धप जड़ी।

खोजी—और लेगा?

बौना—(अपनी ज़बान में) छोड़, नहीं मार ही डालूँगा।

खोजी—दे मारूँ उठा कर?

बौना—रात आने दो।

खोजी ने झल्ला कर बौने को उठा कर दे मारा, चारों खाने चित्त, और अकड़ कर बोले—वो मारा! और लेगा! खोजी से ये बातें?

इतने में आज़ाद आ गये। खोजी तने बैठे थे, उम्र भर में उन्होंने आज पहली ही मर्तबा एक आदमी को नीचा दिखाया था! आज़ाद को देखते ही बोले—इस वक़्त एक कुश्ती और निकली!

आज़ाद—कुश्ती कैसी ?

खोजी—कैसी होती है कुश्ती ? कुश्ती और क्या ?

आज़ाद—मालूम होता है, पिटे हो।

खोजी—पिटनेवाले की ऐसी-तैसी ! और कहनेवाले को क्या कहूँ ?

आज़ाद—कुश्ती निकाली !

तहौवरख़ाँ—हाँ हुजूर यह सच कहते हैं।

खोजी—लीजिए, अब तो आया यक़ीन !

आज़ाद—क्या हुआ, क्या ?

तहौवरख़ाँ—जी, यहाँ एक बौना है। उसने इनके एक धौल लगायी।

आज़ाद—देखा न ! मैं तो समझा ही था कि पिटे होगे।

खोजी—पूरी बात तो सुन लो।

तहौवरख़ाँ—बस, धौल खा कर लपके। उसके कई चपतें लगायीं और उठा कर दे पटका।

खोजी—वह पटखनी बतायी कि याद ही तो करता होगा। दो महीने तक खटिया से न उठ सकेगा।

तहौवरख़ाँ—वह देखिए, सामने खड़ा कौन अकड़ रहा है ! तुम तो कहते थे कि दो महीने तक उठ ही न सकेगा।

रात को कोई नौ बजे खोजी ने पानी माँगा। अभी पानी पी ही रहे थे कि कमरे का लैंप गुल हो गया और कमरे में चटाख-चटाख की आवाज़ गूँजने लगी।

खोजी—अरे, यह तो वही बौना मालूम होता है। पानी इसी ने पिलाया था और चपत भी इसी ने जड़ी। दिल में कहा—क्या तड़का न होगा ? ज़िंदा खोद कर गाड़ दूँ तो सही।

खोजी पानी पी कर लेटे कि दस्त की हाजत हुई। बौने ने पानी में जमालगोटा मिला दिया था। तिल-तिल पर दस्त आने लगे। मशहूर हो गया कि खोजी को हैज़ा हुआ। डॉक्टर बुलाया गया। उसने दवा दी और खोजी दस्तों के मारे निढाल हो कर चारपाई पर गिर पड़े। आज़ाद एक रईस से मिलने गये थे। होटल के एक आदमी ने उनको जा कर इत्तला दी। घबराये हुए आये। खोजी ने आज़ाद को देख कर सलाम किया, और आहिस्ता से बोले—रुख़सत ! ख़ुदा करे, तुम जल्द यहाँ से लौटो। यह कह कर तीन बार कल्मा पढ़ा।

आज़ाद—कैसी तबीयत है ?

खोजी—मर रहा हूँ, एक हाफ़िज़ बुलवाओ और उससे कहो, क़ुरान शरीफ़ पढ़े।

आज़ाद—अजी, तुम दो दिन में अच्छे हो जाओगे।

खोजी—ज़िंदगी और मौत ख़ुदा के हाथ है। मगर भाई, ख़ुदा के वास्ते ज़रा अपनी जान का ख्याल रखना। हम तो अब चलते हैं। अब तक हँसी-ख़ुशी तुम्हारा

साथ दिया; मगर अब मजबूरी है। आब-दाने की बात है, हमको यहाँ की मिट्टी घसीट लायी।

आज़ाद—अजी नहीं आज के चौथे रोज़ दनदनाओगे। देख लेना। डंड पेलते होगे।

ख़ोजी—ख़ुदा के हाथ है।

आज़ाद—देखिए, कब मुलाक़ात होती है।

ख़ोजी—इस बूढ़े को कभी-कभी याद करते रहना। एक बात याद रखना, परदेस का वास्ता है, सबसे मिल-जुल कर रहना। जूती-पैज़ार, लड़ाई-झगड़ा किसी से न करना। समझदार हो तो क्या, आख़िर बच्चे ही हो। यार, जुदाई ऐसी अखर रही है कि बस, क्या बयान करूँ।

आज़ाद—अच्छे हो जाओ, तो हिंदोस्तान चले जाना।

ख़ोजी—अरे मियाँ, यहाँ दम भर का भरोसा नहीं है।

दूसरे दिन आज़ाद ख़ोजी से रुख़सत हो कर जहाज़ पर सवार हुए। इतने दिनों के बाद ख़ोजी की जुदाई से उन्हें बहुत रंज हो रहा था। थोड़ी देर के बाद नींद आ गयी, तो ख़्वाब देखा कि वह हुस्नआरा बेगम के दरवाज़े पर पहुँचे हैं और वह उन्हें फूलों का एक गुलदस्ता दे रही हैं। एकाएक तोप दग़ी और आज़ाद की आँख खुल गयी। जहाज़ कुस्तुनतुनिया पहुँच गया था।

५६

आज़ाद तो उधर क़ाहिरे की हवा खा रहे थे, इधर हुस्नआरा बीमार पड़ीं। कुछ दिन तक तो हकीमों और डॉक्टरों की दवा हुई, फिर गंडे-ताबीज़ की बारी आयी। आख़िर आबोहवा तब्दील करने की ठहरी। बहारबेगम के पास गोमती के किनारे एक बहुत अच्छी कोठी थी। चारों बहनें बड़ी बेगम और घर के नौकर-चाकर सब इस नयी कोठी में आ पहुँचे।

बेगम—मकान तो बड़ा कुशादा है ! देखूँ, चंद्रबेधी है या सूर्यबेधी।

हुस्नआरा—हाँ अम्माँजान, यह ज़रूर देखना चाहिए।

रूहअफ़ज़ा—ले लो, ज़रूर। हज़ार काम छोड़ कर।

दोनों बहनें हँसती-बोलती मकान के दालान और कमरे देखने लगीं। छत पर एक कमरे के दरवाज़े जो खोले, तो देखा, दरिया लहरें मार रहा है। हुस्नआरा ने कहा—बाजी, इस वक्त जी खुश हो गया। हमारी पलँगड़ी यहीं बिछे। बरसों की बीमार यहाँ रहे, तो दो दिन में अच्छा-भला चंगा हो जाय।

सिपहआरा—बहार बहन, भला कभी अँधेरे-उजाले दूल्हा भाई नहाने देते हैं दरिया में !

बहारबेगम—ऐ है, इसका नाम भी न लेना। इनको बहुत चिढ़ है इस बात की।

सुबह का वक़्त था, चारों बहनें ऊँची छत पर हवा खाने लगीं कि इतने में एक तरफ से धुआँ उठा। हुस्नआरा ने पूछा—यह धुआँ कैसा है ?

रूहअफ़ज़ा—इस घाट पर मुर्दे जलाये जाते हैं।

हुस्नआरा—मुर्दे यहीं जलते हैं ?

बहारबेगम—हाँ, मगर यहाँ से दूर है।

सिपहआरा—हाय, क्या जाने कौन बेचारा जल रहा होगा ?

रूहअफ़ज़ा—जिंदगी का भरोसा नहीं।

बड़ी बेगम ने सुना कि यहाँ मुर्दे जलाये जाते हैं, तो होश उड़ गये। बोलीं—ऐ बहार, तुम यहाँ कैसे रहती हो ? खुरशेद दूल्हा आयें, तो उनसे कहूँ।

हुस्नआरा—फ़ायदा ? बरसों से तो वह यहाँ रहते हैं; भला तुम्हारे कहने से मकान छोड़ देंगे !

सिपहआरा—यह हमेशा यहाँ रहते हैं, कुछ भी नहीं होता। हम जो दो दिन रहेंगे, तो मुर्दे आ कर चिपट जायँगे भला !

बड़ी बेगम का बस चलता, तो खड़े-खड़े चली जातीं; मगर अब मजबूर थीं। यहाँ से चारों बहनें दूसरी छत पर गयीं तो बहारबेगम ने कहा—यह जो उस तरफ दूर तक ऊँचे-ऊँचे टीले नज़र आते हैं, यहाँ आबादी थी। जहाँ तुम बैठी हो, यहाँ

वज़ीर का मकान था। मजाल क्या था कि कोई इस तरफ़ आ जाता! मगर अब वहाँ ख़ाक उड़ती है, कुत्ते लोट रहे हैं।

इतने में एक किश्ती इसी घाट पर आ कर रुकी। उस पर से दो आदमी उतरे, एक बूढ़े थे, दूसरा नौजवान। दोनों एक क़ालीन पर बैठे और बातें करने लगे। बूढ़े मियाँ ने कहा—मियाँ आज़ाद सा दिलेर जवान भी कम देखने में आयेगा। यह उन्हीं का शेर है—

सीने को चमन बनायेंगे हम,
गुल खायेंगे गुल खिलायेंगे हम।

जवान (गुलबाज़)—मियाँ आज़ाद कौन थे जनाब ?

इस पर बूढ़े मियाँ ने आज़ाद की सारी दास्तान बयान कर दी। दोनों बहनें कान लगा कर दोनों आदमियों की बातें सुनती थीं और रोती थीं। हैरत हो रही थी कि ये दोनों कौन हैं और आज़ाद को कैसे जानते हैं ? महरी से कहा—जाके पता लगा कि वह दोनों आदमी, जो दरख़्त के साये में बैठे हुक्क़ा पी रहे हैं, कौन हैं ? महरी ने एक भिश्ती के लड़के को इस काम पर तैनात किया। लड़के ने ज़रा देर में आ कर कहा—दोनों आदमी सराय में ठहरेंगे और दो दिन यहाँ रहेंगे। मगर हैं कौन, यह पता न चला। महरी ने जा कर यही बात हुस्नआरा से कह दी। हुस्नआरा ने कहा—उस लड़के को यह चवन्नी दो और कहो, जहाँ ये टिकें, इनके साथ जाये और देख आये। महरी ने ज़ोर से पुकारा—अबे ओ शुबराती! सुन, इन दोनों आदमियों के साथ जा। देख, कहाँ टिकते हैं।

शबराती—अजी, अभी पहुँचा।

शुबराती चले। रास्ते में आपको शौक़ चर्राया कि छक्कामीरी खेलें। एक घंटे में शुबराती ने कोई डेढ़ पैसे की कौड़ियाँ जीतीं। मगर लालच का बुरा हो, जमे, तो दम के दम में डेढ़ पैसा वह हारे, और बारह कौड़ियाँ गिरह से गयीं, वहाँ से उदास हो कर चले। राह में बंदर का तमाशा हो रहा था। अब मियाँ शुबराती जा चुके। कभी बँदरिया को छेड़ा, कभी बकरे पर ढेला फेका। मदारी ने देखा कि लौंडा तेज़ है, तो बोला—इधर आओ जवान, आदमी हो कि जानवर ?

शुबराती—आदमी।

मदारी—सुअर कि शेर ?

शुबराती—हम शेर, तुम सुअर।

मदारी—गधा कि गधी ?

शुबराती—गधा।

मदारी—उल्लू कि बैल!

शुबराती—तुम उल्लू, तुम्हारे बाप बैल, और तुम्हारे दादा बछिया के ताऊ।

थोड़ी देर के बाद मियाँ शुबराती यहाँ से रवाना हुए, तो एक रईस के यहाँ एक

सपेरा साँप का तमाशा दिखा रहा था। मियाँ शुबराती भी डट गये। सँपेरा तोंबी में भैरवी का रंग दिखाता था।

रईस ने कहा—तब जानें, जब किसी के सिर से साँप निकालो।

सपेरे ने कहा—हजूर, मंतर में सब कुदरत है। मुल कोई आध सेर आटा तो पेट भर खाने को दो। जिसके बदन से कहिए, साँप निकालूँ।

लौंडे यह सुन कर हुर्र हो गये कि धरे न जायँ। मियाँ शुबराती डटे खड़े रहे।

सपेरा—वाह जवान, तुम्हीं एक बहादुर हो।

शुबराती—और हमारे बाप हमसे बढ़ कर।

सपेरा—यहाँ बैठ तो जाओ।

मियाँ शुबराती बेधड़क जा बैठे। सपेरे ने झूठमूठ कोई मंत्र पढ़ा और ज़ोर से मियाँ शुबराती की खोपड़ी पर धप जमा कर कहा यह लीजिए साँप। वाह-वाह का दौंगड़ा बज गया। रईस ने सँपेरे को पाँच रुपये इनाम दिये और कहा—इस लौंडे को भी चार आने पैसे दे दो। मियाँ शुबराती ने चवन्नी पायी, तो फूले न समाये। जाते ही गोल-गप्पेवाले से पैसे के कचालू, धेले के दही-बड़े, धेले की सोंठ की टिकिया ली और चखते हुए चले। फिर तकिये पर जा कर कौड़ियाँ खेलने लगे। दो पैसे की कौड़ियाँ हारे। वहाँ से उठे, तो हलवाई की दूकान पर एक आने की पूरियाँ खायीं और कुएँ पर पानी पिया। वहाँ से आ कर महरी को पुकारा।

महरी—कहो, वह हैं?

शुबराती—वह तो चले गये।

महरी—कुछ मालूम है, कहाँ गये?

शुबराती—रेल पर सवार हो कर कहीं चल दिये।

महरी ने जा कर हुस्नआरा से यह खबर कही, तो उन्होंने कहा—लौंडे से पूछो, शहर ही में हैं या बाहर चले गये? महरी ने जा कर फिर शुबराती से पूछा—शहर में हैं या बाहर चले गये? शुबराती को इसकी याद न रही कि मैंने पहले क्या कहा था, बोला—किसी और सराय में उठ गये।

महरी—क्यों रे झूठे, तू तो कहता था, रेल पर चले गये?

शुबराती—मैंने?

महरी—चल झूठे, तू गया कि नहीं।

शुबराती—अब्बा की क़सम, गया था।

महरी—चल दूर हो, मुआ झूठा।

इतने में बड़ी बेगम का पुराना नौकर हुसैनबख्श आ गया। हुस्नआरा ने उसे बुला कर कहा—बड़े मियाँ, एक साहब आज़ाद के जाननेवालों में यहाँ आये हैं और किसी सराय में ठहरे हैं। तुम ज़रा इस लौंडे शुबराती के साथ उस सराय तक जाओ और पता लगाओ कि वह कौन साहब हैं। अब मियाँ शुबराती चकराये कि खुदा ही ख़ैर करे। दिल में चोर था, कहीं ऐसा न हो कि वह अभी सराय में टिके ही हों,

तो मुझ पर बेभाव की पड़ने लगें। दबे दाँतों कहा, चलिए। आगे-आगे हुसैनबख्श और पीछे-पीछे मियाँ शुबराती चले। राह में शुबराती ने एक लौंडे की खोपड़ी पर धप जमायी, और आगे बढ़े, तो एक दीवाने पर कई ढेले फेंके, और दो क़दम गये, तो एक बूढ़ी मामा से कहा—नानी, सलाम। वह गालियाँ देने लगी, मगर आप बहुत खिलखिलाये। और आगे चले, तो एक अंधा मिला। आपने उससे कहा—आगे गड्ढा है, और उसकी लाठी छीन ली। हुसैनबख्श कभी मुसकिराते थे, कभी समझाते। चलते-चलते एक तेली मिला, मियाँ शुबराती ने पूछा—क्यों भई तेली, मरना, तो अपनी खोपड़ी मुझे दे देना। मंतर जगाऊँगा। तेली ने कहा—चुप! लौंडा बड़ा शरीर है। और आगे बढ़े, तो एक रँगरेज़ से पूछा—क्यों बड़े भाई, अपनी दाढ़ी नहीं रँगते? उसने कहा—कहो, तुम्हारे बाप की दाढ़ी रँग दें नील से। अब सुनिए, दो हिंदू बोरिया-बक़चा सँभाले कहीं बाहर जाने के लिए घर से निकले। मियाँ शुबराती एक आँख दबा कर सामने जा खड़े हुए। वे समझे, सचमुच काना है। एक ने कहा—अबे, हट सामने से ओ बे काने! आपने वह आँख खोल दी। दूसरी दबा ली। दोनों आदमी इसे असगुन समझ कर अंदर चले गये। इतने में एक कानी औरत सामने से आयी। मियाँ शुबराती ने देखते ही हाँक लगायी—'एक लकड़िया बाँसे की, कानी आँख तमाशे की।'

ज्यों ही दोनों सराय में पहुँचे, हुसैनबख्श ने बढ़ कर बूढ़े मियाँ को सलाम किया। बड़े मियाँ बोले—जनाब, मियाँ आज़ाद से मेरी पुरानी मुलाक़ात है। मेरी लड़कियों के साथ वह मुद्दत तक खेला किये हैं। मेरी छोटी लड़की से उनके निकाह की भी तजवीज़ हुई थी; मगर अब तो वह एक बेगम से क़ौल हार चुके हैं। इसके बाद कुछ और बातें हुईं। शाम को हुसैनबख्श रुख़सत हुए और घर आ कर हुस्नआरा से कहा—वह तो आज़ाद के पुराने मुलाक़ाती हैं। शायद आज़ाद ने उनकी एक लड़की से निकाह करने का वादा भी किया है। यह सुनते ही हुस्नआरा का रंग फ़क़ हो गया। रात को हुस्नआरा ने सिपहआरा से कहा—कुछ सुना? उस बुड्ढे की एक लड़की के साथ आज़ाद का निकाह होनेवाला है।

सिपहआरा—ग़लत बात है।

हुस्नआरा—क्यों?

सिपहआरा—क्यों क्या, आज़ाद ऐसे आदमी ही नहीं।

हुस्नआरा—दिल्लगी हो, जो कहीं आज़ाद उससे भी इक़रार कर गये हों। चलो ख़ैर, चार निकाह तो जायज़ भी हैं। लेकिन अल्लाह जानता है, यक़ीन नहीं आता। आज़ाद अगर ऐसे हरजाई होते तो जान हथेली पर ले कर रूम न जाते।

हुस्नआरा ने ज़बान से तो यह इतमीनान ज़ाहिर किया, पर दिल से यह खयाल दूर न कर सकी कि मुमकिन है, आज़ाद ने वहाँ भी क़ौल हारा हो। एक तो उनकी तबीयत पहले ही से खराब थी, उस पर यह नयी फ़िक्र पैदा हुई तो फिर बुखार आने

२२

लगा। दिल को लाख लाख समझातीं कि आज़ाद बात के धनी हैं, लेकिन यह ख़याल दूर न होता। इधर एक नयी मुसीबत यह आ गयी कि उनके एक आशिक और पैदा हो गये। यह हज़रत बहारबेगम के रिश्ते में भाई होते थे। नाम था मिर्ज़ा अस्करी। अस्करी ने हुस्नआरा को लड़कपन में देखा था। एक दिन बहारबेगम से मिलने आये, और सुना कि हुस्नआरा बेगम आजकल यहीं हैं, तो उन पर डोरे डालने लगे। बहारबेगम से बोले—अब तो हुस्नआरा सयानी हुई होंगी ?

बहारबेगम—हाँ, ख़ुदा के फ़जल से अब सयानी हैं।

अस्करी—दोनों बहनों में हुस्नआरा गोरी हैं न ?

बहारबेगम—ऐ, दोनों ख़ासी गोरी-चिट्टी हैं; मगर हुस्नआरा जैसी हसीन हमने तो नहीं देखी। गुलाब के फूल जैसा मुखड़ा है।

अस्करी—तुम हमारी बहन कैसी हो ?

बहारबेगम—इसके क्या मानें ?

अस्करी—अब साफ़-साफ़ क्या कहूँ, समझ जाओ। बहन हो, बड़ी हो, इतने ही काम आओ। फिर और नहीं तो क्या आक़बत में बख़्शाओगी ?

बहारबेगम—अस्करी, ख़ुदा जानता है, हमें दिल से तुम्हारी मुहब्बत है।

अस्करी—बरसों साथ-साथ खेले हैं।

बहारबेगम—अरे, यों क्यों नहीं कहते कि मैंने गोदियों में खिलाया है।

अस्करी—यह हम न मानेंगे। ऐसी आप कितनी बड़ी हैं मुझसे। बरस नहीं हद दो बरस।

बहारबेगम—ऐ लो, इस झूठ को देखो, छतें पुरानी हैं।

अस्करी—अच्छा, फिर कोई पँद्रह-बीस बरस की छुटाई बड़ाई है ?

बहारबेगम—हई है ?

अस्करी—अच्छा, अब फिर किस दिन काम आओगी ?

बहारबेगम—भई, अगर हुस्नआरा मंजूर कर लें, तो है। मैं आज अम्माँजान से ज़िक्र करूँगी।

इतने में हुस्नआरा बेगम ने ऊपर से आवाज़ दी—ऐ बाजी, जरी हमको हरे-हरे मुलायम सिंघाड़े नहीं मँगा देतीं ? मुहम्मद अस्करी ने रसूख़ियत जताने के लिए मामा से कहा—मेरे आदमी से जा कर कहो कि चार सेर ताज़े सिंघाड़े तुड़वा कर ले आये। हुस्नआरा ने जो उनकी आवाज़ सुनी, तो सिपहआरा से पूछा—यह कौन आया है ? सिपहआरा ने कहा—ऐ, वही तो हैं अस्करी ! थोड़ी देर में मिर्ज़ा अस्करी तो चले गये, और चलते वक़्त बहारबेगम से कह गये कि हमने जो कहा है, उसका ख़याल रहे। बहारबेगम ने कहा—देखो, अल्लाह चाहे तो आज के दूसरे ही महीने हुस्नआरा बेगम के साथ मँगनी हो। हुस्नआरा उसी वक़्त नीचे आ रही थीं। यह बात उनके कान में पड़ गयी। पाँव-तले से मिट्टी निकल गयी। उलटे-पाँव लौट गयीं और सिपहआरा से यह क़िस्सा कहा। उसके भी होश उड़ गये। कुछ देर तक दोनों

बहनें सन्नाटे में पड़ी रहीं। फिर सिपहआरा ने दीवाने-हाफ़िज़ उठा लिया और फ़ाल देखी, तो सिरे पर ही यह शेर निकला—

बेरौ ईं दाम मुर्ग़ें दिगर नेह;
कि उनका रा बुलंद अस्त आशियाना।

(यह जाल दूसरी चिड़िया पर डाल। उनका का घोंसला बहुत ऊँचा है।)

सिपहआरा यह शेर पढ़ते ही उछल पड़ी। बोली—लो फतह है। बेड़ा पार हो गया।

इतने में बहारबेगम आ पहुँचीं और हुस्नआरा से बोली—तुम लोगों ने मिर्ज़ा अस्करी को तो देखा होगा? कितना ख़ूबसूरत जवान है!

सिपहआरा—देखा क्यों नहीं; वही शौक़ीन से आदमी हैं न?

बहारबेगम—अबकी आयेगा तो ओट में से दिखा दूँगी। बड़ा हँसमुख, मिलनसार आदमी है। जिस वक़्त आता है, मकान भर महकने लगता है। मेरी बीमारी में बेचारा दिन भर में तीन-तीन फेरे करता था।

हुस्नआरा ये बातें सुन कर दिल ही दिल में सोचने लगी कि यह कह क्या रही हैं। कैसे अस्करी? यहाँ तो आज़ाद को दिल दे चुके। वह टर्की सिधारे, हम कौल हारे। इनको अस्करी की पड़ी है। बहार बेगम ने बड़ी देर तक अस्करी की तारीफ़ की; मगर हुस्नआरा कब पसीजनेवाली थीं। आखिर, बहारबेगम ख़फ़ा हो कर चली गयीं।

दूसरे दिन जब अस्करी फिर आये, तो बहारबेगम ने उनसे कहा—मैंने हुस्नआरा से तुम्हारा ज़िक्र तो किया, मगर वह बोली तक नहीं। उस मुए आज़ाद पर लट्टू हो रही हैं।

अस्करी—मैं एक तरकीब बताऊँ, एक काम करो। जब हुस्नआरा बेगम और तुम पास बैठी हो, तो आज़ाद का ज़िक्र ज़रूर छेड़ो। कहना, अस्करी अभी-अभी अखबार पढ़ता था, उसका एक दोस्त है आज़ाद, वह नानबाई का लड़का है। उसकी बड़ी तारीफ़ छपी है। कहता था, इस नानबाई के लौंडे की खुशक़िस्मती को तो देखो, कहाँ जा कर शिप्पा लड़ाया है! जब वह कहें कि आज़ाद शरीफ़ आदमी हैं, तो कहना, अस्करी के पास आज़ाद के न जाने कितने खत पड़े हैं। वह क़सम खाता है कि आज़ाद नानबाई का लड़का है, बहुत दिनों तक मेरे यहाँ हुक्के भरता रहा।

यह कह कर मिर्ज़ा अस्करी तो विदा हुए, और बहारबेगम हुस्नआरा के पास पहुँचीं।

हुस्नआरा—कहाँ थीं बहन? आओ, दरिया की सैर करें।

बहारबेगम—ज़रा अस्करी से बातें करने लगी थी। किसी अखबार में उनके एक दोस्त की बड़ी तारीफ़ छपी है। क्या जाने, क्या नाम बताया था? भला ही

सा नाम है। हाँ, खूब याद आया, आज़ाद। मगर कहता था कि नानबाई का लड़का है।

हुस्नआरा—किसका ?

बहारबेगम—नानबाई का लड़का बताता था। तुम्हारे आशिक़ साहब का भी तो यही नाम है। कहीं वही अस्करी के दोस्त न हों।

सिपहआरा—वाह, अच्छे आपके अस्करी हैं जो नानबाइयों के छोकरों से दोस्ती करते फिरते हैं।

बहार तो यह-आग लगाकर चलती हुई, इधर हुस्नआरा के दिल में खलबली मची। सोचीं, आज़ाद के हाल से किसी को इत्तला तो है नहीं, शायद नानबाई ही हों। मगर यह शक़्ल-सूरत, यह इल्म और कमाल, यह लियाक़त और हिम्मत नानबाई में क्योंकर आ सकती है ? नानबाई फिर नानबाई हैं। आज़ाद तो शाहज़ादे मालूम होते हैं। सिपहआरा ने कहा—बाजी, बहार बहन तो उधार खाये बैठी हैं कि अस्करी के साथ तुम्हारा निकाह हो। सारी कारस्तानी उसी की है। अस्करी के हथकंडों से अब बचे रहना। वह बड़ा नटखट मालूम होता है।

शाम को मामा ने एक ख़त ला कर हुस्नआरा को दिया। उन्होंने पूछा—किसका ख़त है ?

मामा—पढ़ लीजिए।

सिपहआरा—क्या डाक पर आया है ?

मामा—जी नहीं, कोई बाहर से दे गया है।

हुस्नआरा ने ख़त खोल कर पढ़ा। ख़त का मजमून यह था—

क़दम रख देख कर उल्फ़त के दरिया में जरा ऐ दिल;
ख़तरा है डूब जाने का भी दरिया के नहाने में।

हुस्नआरा बेगम की ख़िदमत में आदाब। मैं जताये देता हूँ कि आज़ाद के फेर में न पड़िए। वह नीच क़ौम आपके क़ाबिल नहीं। नानबाई का लड़का, तंदूर जलाने में ताक़, आटा गूँधने में मश्शाक़। वह और आपके लायक़ हो ! अव्वल तो पाजी, दूसरे दिल का हरज़ाई, और फिर तुर्रा यह कि अनपढ़ ! बहार बहन मुझे ख़ूब जानती हैं। मैं अच्छा हूँ या बुरा, इसका फ़ैसला वही कर सकती हैं। आज़ाद मेरे दुश्मन नहीं, मैं उन्हें ख़ूब जानता हूँ। इसी सबब से आपको सलाह देता हूँ कि आप उसका खयाल दिल से दूर कर दें। खुदा वह दिन न दिखाये कि आज़ाद से तुम्हारा निकाह हो।

तुम्हारा
अस्करी

हुस्नआरा ने इस ख़त के जवाब में यह शेर लिखा—

न छेड़ ऐ निकहते बादे-बहारी, राह लग अपनी;
मुझे अठखेलियाँ सूझी हैं, हम बेजार बैठे हैं।

सिपहआरा ने कहा—क्यों बाजी, हम क्या कहते थे ? देखा, वही बात हुई न ? और झूठा तो इसी से साबित है कि मियाँ आज़ाद को अनपढ़ बताते हैं। खुदा की शान, यह और आज़ाद को अनपढ़ कहें ! हम तो कहते ही थे कि यह बड़ा नटखट मालूम होता है।

हुस्नआरा ने यह पुर्ज़ा मामा को दिया कि जा, बाहर दे आ। अस्करी ने यह ख़त पाया, तो जल उठे। दिल में कहा—अगर आज़ाद को नीचा न दिखाया, तो कुछ न किया। जा कर बड़ी बेगम से मिले और उनसे खूब नमक-मिर्च मिला-मिला-कर बातें कीं। बहारबेगम ने भी हाँ-में-हाँ मिलायी और अस्करी की खूब तारीफ़ें कीं। आज़ाद को जहाँ तक बदनाम करते बना, किया। यहाँ तक कि आखिर बड़ी बेगम भी अस्करी पर लट्टू हो गयीं मगर हुस्नआरा और सिपहआरा अस्करी का नाम सुनते ही जल उठती थीं। दोनों आज़ाद को याद कर-करके रोया करतीं, और बहारबेगम बार-बार अस्करी का ज़िक्र करके उन्हें दिक़ किया करतीं। यहाँ तक कि एक दिन बड़ी बेगम के सामने सिपहआरा और बहारबेगम में एक झौड़ हो गयी। बहार कहती थीं कि हुस्नआरा की शादी मिर्ज़ा अस्करी से होगी, और ज़रूर होगी। सिपहआरा कहती थीं—यह मुमकिन नहीं।

एक दिन बड़ी बेगम ने हुस्नआरा को बुला भेजा, लेकिन जब हुस्नआरा गयीं, तो मुँह फेर लिया। बहारबेगम भी वहीं बैठी थीं। बोलीं—अम्माँजान तुमसे बहुत नाराज़ हैं हुस्नआरा !

बेगम—मेरा नाम न लो।

बहारबेगम—जी नहीं, आप ख़फ़ा न हों। मजाल है, आपका हुक्म न मानें।

बेगम—सुना हुआ है सब।

बहारबेगम—हुस्नआरा, अम्माँजान के पास आओ।

हुस्नआरा परेशान कि अब क्या करूँ। डरते-डरते बड़ी बेगम के पास जा बैठीं। बड़ी बेगम ने उनकी तरफ़ देखा तक नहीं।

बहारबेगम—अम्माँजान, यह आपके पास आयी हुई हैं, इनका क़सूर माफ़ कीजिए।

बेगम—जब यह मेरे कहने में नहीं हैं, तो मुझसे क्या वास्ता ? अस्करी सा लड़का मशाल ले कर भी ढूँढ़ें, तो न पाये। मगर इन्हें अपनी ही ज़िद है।

बहारबेगम—हुस्नआरा, खूब सोच कर इसका जवाब दो।

बेगम—मैं जवाब-सवाब कुछ नहीं माँगती।

बहारबेगम—आप देख लीजिएगा, हुस्नआरा आपका कहना मान लेंगी।

बेगम—बस, देख लिया !

बहारबेगम—अम्माँजान, ऐसी बातें न कहिए।

बेगम—दिल जलता है बहार, दिल जलता है ! अपने दिल में क्या-क्या सोचते थे, मगर अब उठ ही जायँ यहाँ से, तो अच्छा।

यह कह कर बड़ी बेगम उठ कर चली गयीं। हुस्नआरा भी ऊपर चली गयी और

लेट कर रोने लगीं। थोड़ी देर में बहार ने आ कर कहा—हुस्नआरा, जरी पर्दे ही में रहना, अस्करी आते हैं। हुस्नआरा ने अस्करी का नाम सुना, तो काँप उठीं। इतने में अस्करी आ कर, बरामदे में खड़े हो गये।

बहारबेगम—बैठो अस्करी!

अस्करी—जी हाँ, बैठा हूँ। खूब हवादार मकान है। इस कमरे में तुम रहती हो न?

बहारबेगम—नहीं, इसमें हमारी बहनें रहती हैं।

अस्करी—अब हुस्नआरा की तबीयत कैसी है?

बहारबेगम—पूछ लो, बैठी तो हैं।

अस्करी—नहीं, बताओ तो आखिर?

बहारबेगम—तुम भी तो हकीम हो? भला पर्दे के पास से नब्ज़ तो देखो?

हुस्नआरा मुसकिरायीं। सिपहआरा ने कहा—ऐ, हटो भी! बड़े आये वहाँ से हकीम!

बहारबेगम—तुम तो हवा से लड़ती हो।

सिपहआरा—लड़ती ही हैं!

अस्करी—इस वक़्त खाना खा चुकी होंगी। शाम को नब्ज़ देख लूँगा।

बहारबेगम—ऐ, अभी खाना कहाँ खाया?

सिपहआरा—हाँ-हाँ खा चुकी हैं।

मिर्ज़ा अस्करी तो रुख़सत हुए, मगर बहारबेगम को सब्र कहाँ? पूछा—हुस्नआरा, अब बोलो, क्या कहती हो? सिपहआरा तिनक कर बोली—अब कोई और बात भी है, या रात-दिन यही ज़िक्र है? कह दिया एक दफ़ा कि जिस बात से यह चिढ़ती हैं, वह क्यों करो।

बहारबेगम—होना वही है, जो हम चाहती हैं।

हुस्नआरा—ख़ैर, बहन, जो होना है, हो रहेगा। उसका जिक्र ही क्या?

सिपहआरा—बहार बहन, नाहक़ बैठे-बिठाये रंज बढ़ाती हो।

बहारबेगम—याद रखना, अम्माँजान अभी-अभी क़सम खा चुकी हैं कि वह तुम दोनों की सूरत न देखेंगी। बस, तुम्हें अब अख्तियार है, चाहे मानो, चाहे न मानो।

कई दिन इसी तरह गुज़र गये। हुस्नआरा जब बड़ी बेगम के सामने जातीं, तो वह मुँह फेर लेतीं। दोनों बहनें रात-दिन रोया करतीं। सोचीं कि यह तो सब के सब हमारे खिलाफ़ हैं, आओ, रूहअफ़ज़ा को बुलायें, शायद वह हमारा साथ दें। मामा ने कहा—मैं अभी-अभी जाती हूँ। जहाँ तक बन पड़ेगा, बहुत कहूँगी। और, कहना क्या है, ले ही आऊँगी।

इतने में बहारबेगम ने आ कर कहा—ऐ हुस्नआरा, जरी पर्दा करके अस्करी को नब्ज़ दिखा दो। ज़ीने पर खड़े हैं। हुस्नआरा मजबूर हो गयी। सिपहआरा को इशारे से बुलाया और कहा—बहार बहन तो बाहर ही बैठेंगी। मेरे बदले तुम नब्ज़ दिखा दो। सिपहआरा ने मुसकिरा कर कहा—अच्छा, और पर्दे के पास बैठ कर नब्ज़ दिखायी।

अस्करी—दूसरा हाथ लाइए।

बहारबेगम—बुख़ार तो नहीं है ?

अस्करी—थोड़ा सा बुख़ार तो ज़रूर है। कमज़ोरी बहुत है।

जब अस्करी चले गये, तो हुस्नआरा ने बहारबेगम से कहा—आपके अस्करी तो बड़े होशियार हैं!

बहारबेगम—क्या शक भी है ?

हुस्नआरा—उफ़, मारे हँसी के बुरा हाल है। वाह रे हकीम!

सिपहआरा—'नीम हकीम, ख़तरे जान।'

बहारबेगम—यह काहे से ?

हुस्नआरा—नब्ज़ किसकी देखी थी ?

बहारबेगम—तुम्हारी।

हुस्नआरा—अरे वाह, कहीं देखी हो न ? बस, देख ली हिकमत।

बहारबेगम—फिर किसकी नब्ज़ देखी ? क्या सिपहआरा बैठ गयी थीं ?

सिपहआरा—और नहीं तो क्या ? कमज़ोरी बताते थे। कमज़ोरी हमारे दुश्मनों को हो!

बहारबेगम—भला इलाज में क्या हँसी करनी थी ?

बाहर जा कर बहार ने अस्करी को ख़ूब आड़े-हाथों लिया—ऐ बस, जाओ भी, मुफ़्त में हमको बद बनाया! हुस्नआरा ने हँसी-हँसी में सिपहआरा को अपनी जगह बिठा दिया, और तुम ज़रा न पहचान सके। ख़ुदा जानता है, मुझे बहुत शरम आयी।

शाम को रूहअफ़ज़ा बेगम आ पहुँचीं और बड़ी बेगम के पास जा कर सलाम किया।

बड़ी बेगम—तुम कब आयीं ?

रूहअफ़ज़ा—अभी-अभी चली आती हूँ। हुस्नआरा कहाँ हैं ?

बहारबेगम—हमें उनका हाल मालूम नहीं। कोठे पर हैं।

रूहअफ़ज़ा—जरी, बुलवाइए!

बहारबेगम—दोनों बहनें हमसे ख़फ़ा हैं।

रूहअफ़ज़ा कोठे पर गयी, तो दोनों बहनें उनसे गले मिल कर ख़ूब रोयीं।

रूहअफ़ज़ा—यह तुमको क्या हो गया हुस्नआरा ? वह सूरत ही नहीं। माजरा क्या है ?

सिपहआरा—अब तो आप आयी हैं; सब कुछ मालूम हो जायगा। सारा घर हमसे फिरंट हो रहा है। हमें तो खाना-पीना उठना-बैठना सब हराम है!

बहारबेगम को यह सब्र कैसे होता कि रूहअफ़ज़ा आयें और दोनों बहनें इनसे अपना दुखड़ा रोयें। आ कर धीरे से बैठ गयीं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, यह क्या बात है! आख़िर किस बात पर यह रंजारंजी हो रही है ?

बहारबेगम — मैं तुमसे पूछती हूँ, अस्करी में क्या बुराई है ? शरीफ़ नहीं है वह, या पढ़ा-लिखा नहीं है, या अच्छे ख़ानदान का नहीं है ? आख़िर इनके इनकार का सबब क्या है ?

सिपहआरा— हमने एक दफ़े कह दिया कि हम अस्करी का नाम नहीं सुनना चाहते ।

रूहअफ़ज़ा—तो यह कहो, बात बहुत बढ़ गयी है। मुझे ज़रा भी कुछ हाल मालूम होता, तो फ़ौरन ही आ जाती ।

बहारबेगम — अब आयी हो, तो क्या बना लोगी ? यह एक न मानेंगी ।

रूहअफ़ज़ा — वह तो शायद मान भी जायँ, मगर आपका मान जाना अलबत्ता मुश्किल है ।

बहारबेगम—यह कहिए, आप इनकी तरफ़ से लड़ने आयी हैं ?

रूहअफ़ज़ा— हाँ, हमसे तो यह नहीं देखा जाता कि ख़ाहमख़्वाह झगड़ा हो ।

ये बातें हो रही थीं कि बड़ी बेगम साहब भी लठिया टेकती हुई आयीं ।

रूहअफ़ज़ा—आइए अम्माँजान, बैठिए ।

बेगम—मैं बैठने नहीं आयी, यह कहने आयी हूँ कि अस्करी के साथ हुस्नआरा का निकाह ज़रूर होगा । इसमें सारी दुनिया एक तरफ़ हो, मैं किसी की न सुनूँगी । मैं जान दे दूँगी। यह न मानेंगी, तो ज़हर खा लूँगी; मगर करूँगी यही, जो कह रही हूँ।

बड़ी बेगम यह कह कर चली गयीं । हुस्नआरा इतना रोयीं कि आँखें लाल हो गयीं। रूहअफ़ज़ा ने समझाया, तो बोलीं – बहन, अम्माँजान मानेंगी नहीं, और हम सिवा आज़ाद के और किसी के साथ शादी न करेंगे ? नतीजा यह होना है कि हमी न होंगे ।

५७

हुस्नआरा बेगम की जान अज़ाब में थी। बड़ी बेगम से बोल-चाल बंद, बहार-बेगम से मिलना-जुलना तर्क। अस्करी रोज़ एक नया गुल खिलाता। वह एक ही काइयाँ था, रूहअफ़ज़ा को भी बातों में लगा कर अपना तरफ़दार बना लिया। मामा को पाँच रुपये दिये। वह उसका दम भरने लगी। महरी को जोड़ा बनवा दिया, वह भी उसका कलमा पढ़ने लगी। नवाब साहब उसके दोस्त थे ही। हुसैनबख्श को भी गाँठ लिया। बस, अब सिपहआरा के सिवा हुस्नआरा का कोई हमदर्द न था। एक दिन रूहअफ़ज़ा चुपके-चुपके उधर आयीं, तो देखा, कमरे के सब दरवाज़े बंद हैं। शीशे से झाँक कर देखा, हुस्नआरा रो रही हैं और सिपहआरा उदास बैठी हैं। रूहअफ़ज़ा का दिल भर आया। धीरे से दरवाज़ा खोला और दोनों बहनों को गले लगा कर कहा—आओ, हवा में बैठें। जरीं, मुँह धो डालो। यह क्या बात है! जब देखो, दोनों बहनें रोती रहती हो?

सिपहआरा—बहन, जान-बूझ कर क्यों अनजान बनती हो? भला आपसे भी कोई बात छिपी है! मगर आप भी हमारे खिलाफ़ हो गयीं! खैर अल्लाह मालिक है।

रूहअफ़ज़ा—तुम्हारी तो नयी बातें हैं? जहाँ तुम्हारा पसीना गिरे, वहाँ हम लहू गिरायें, और तुम समझती हो कि हम तुम्हें जलाते हैं। हम तो मुहब्बत से पूछते हैं, और तुम हमीं पर बिगड़ती हो।

हुस्नआरा—सुनो बाजी, तुम कौन सी बातें नहीं जानती हो, जो पूछती हो। हम साफ़ साफ़ कह चुके कि या तो उम्र भर कुँआरी ही रहेंगे या आज़ाद के साथ निकाह होगा।

सिपहआरा—ऐसे-ऐसे ३६० अस्करी हों, तो क्या? हलवा खाने को मुँह चाहिए।

रूहअफ़ज़ा—अब इस वक़्त बात बढ़ जायगी। और कोई बात करो।

हुस्नआरा—हम इतना चाहते हैं कि आप ज़रा इन्साफ़ करें।

रूहअफ़ज़ा—मगर यह गुत्थी क्यों कर सुलझेगी?

इतने में मामा ने अखबार ला कर रख दिया! हुस्नआरा ने पढ़ना शुरू किया। एकाएक एक मज़मून देख कर चौंक उठी। मज़मून यह था कि मियाँ आज़ाद ने टर्की में एक साईस की बीबी से शादी कर ली। साईस को ज़हर दिलवा दिया और अब साईसिन के साथ गुलछर्रे उड़ा रहे हैं। हुस्नआरा ने अखबार फेंक दिया और उठ कर कमरे में चली गयीं। सिपहआरा ने भाँप लिया कि ज़रूर आज़ाद की कुछ खबर है। अखबार उठा कर देखने लगीं, तो यह मज़मून नज़र पड़ा। सन्नाटे में आ गयीं। जिस आज़ाद के लिए वहाँ सारी दुनिया से लड़ाई हो रही थी, जिसका दोनों

आसरा लगाये बैठी थीं, उसका यह हाल! हुस्नआरा को जा कर तसकीन देने लगी—बाजी, यह सब ग़लत है।

हुस्नआरा—क़िस्मत की ख़ूबी है।

सिपहआरा—हम तो फ़ाल देखेंगे।

हुस्नआरा—हमारा तो दिल टूट गया। हाय, हम क्या जानते थे कि मुहब्बत यह बुरा दिन दिखायेगी।

हाल अव्वल से यह न था ज़ाहिर,
कि इसी ग़म में होंगे हम आख़िर।

अपना किया अपने आगे आया। मियाँ आज़ाद के हथकंडे क्या मालूम थे। इनको हमारा ज़रा ख़याल न आया। एक नीच क़ौम की औरत को ब्याहा। हुस्नआरा को भूल गये। यहाँ महीनों इसी रंज में गुज़र गये कि टर्की क्यों भेजा। बैठे बिठाये उनकी जान के दर पे क्यों हुई। रात-दिन दुआ माँगी कि वह ख़ैरियत से घर आयें। मगर यह क्या मालूम था कि एकाएक यह ग़म की बिजली गिर पड़ेगी। क़िस्मत फूट गयी अब तो यही आरज़ू है कि एक दफ़ा चार आँखें हों, फिर झुक कर सलाम करूँ।

सिपहआरा—अगर यही करना था, तो इतनी दूर गये क्या करने थे?

रूहअफ़ज़ा कमरे में आयी, तो देखा, हुस्नआरा दुलाई ओढ़े पड़ी हैं। बदन पर हाथ रखा, तो तेज़ बुखार। हुस्नआरा उन्हें देख कर रोने लगीं। रूहअफ़ज़ा बोलीं—बहन, तबीयत को क़ाबू में रखो। ऐसा भी नौज़ कोई बीमारी में घबराये। बहारबेगम ने सुना, तो वह भी घबराई हुई आयीं। बदन पर हाथ रखा, तो मालूम हुआ, जैसे किसी ने झुलसा दिया। हुस्नआरा ने रो कर कहा—बाजी, हर तरह की बीमारी मैंने उठायी है; मगर दिल कभी इतना कमज़ोर न हुआ था। मालूम होता है कि जान निकल रही है। बहारबेगम ने बड़ी बेगम को बुलवाया। वह भी बदहवास आयीं और हुस्नआरा के माथे पर हाथ रख कर बोलीं—अल्लाह, यह हुआ क्या!

बहारबेगम—बुख़ार सा बुख़ार है!

नवाब साहब दौड़े हुए आये। देखा, तो कुहराम मचा हुआ है। इतने में अस्करी आये। बहारबेगम ने कहा—भैया जरी नब्ज तो देखो। यह दम के दम में क्या हो गया?

अस्करी—(नब्ज़ देख कर) बहन, क्या बताऊँ, नब्ज़ ही नहीं मिलती!

इस फ़िक़रे पर बहारबेगम सिर पीटने लगीं। नवाब साहब ने समझाया, यह वक़्त दवा और इलाज का है, रोना तो उम्र-भर है। अस्करी फ़ौरन् बड़े हकीम साहब को बुलाने गये। शाहज़ादा हुमायूँ फ़र भी आये थे। बोले—मैं जा कर सिविलसर्जन को साथ लाता हूँ। सर्जन साहब आये और नब्ज़ देख कर कहा—दिल पर कोई सदमा पहुँचा है। किसी अज़ीज़ के मरने की ख़बर सुनी हो, या ऐसी ही कोई और

बात हो। नुस्खा लिखा और फ़ीस ले कर चल दिये। इतने में बड़े हकीम साहब आये और नब्ज़ देख कर अस्करी के कान में कहा—काम तमाम हो गया। नुस्खा लिख कर आप भी बाहर गये। बहारबेगम सबसे ज़्यादा बेकरार थीं।

शाम का वक़्त था, बड़ी बेगम नमाज़ पढ़ रही थीं, बहारबेगम उदास बैठी हुई थीं, नवाब साहब हुमायूँ फ़र के साथ इसी बीमारी का जिक्र कर रहे थे कि एकाएक अंदर से रोने की आवाज़ आयी।

नवाब साहब—क्या हुआ, क्या ! हुआ क्या !!

बहारबेगम—जो कुछ होना था, वह हो गया।

नवाब साहब ने जा कर देखा, तो हुस्नआरा की आँख फिर गयी थीं और बदन ठंडा हो गया था। नवाब साहब को देखते ही बड़ी बेगम ने एक ईंट उठायी और सिर पर पटक ली। सिपह आरा ने तीन बार दीवार से सिर टकराया। नवाब साहब डाक्टर को बुलाने दौड़े।

५८

रूम पहुँचकर आज़ाद एक पारसी होटल में ठहरे। उसी होटल में जार्जिया की एक लड़की भी ठहरी हुई थी। उसका नाम था मीडा। आज़ाद खाना खा कर अख़बार पढ़ रहे थे कि मीडा को बाग़ में टहलते देखा। दोनों की आँखें चार हुईं। आज़ाद के कलेजे में तीर सा लगा। मीडा भी कनखियों से देख रही थी कि यह कौन आदमी है। आदमी तो निहायत हसीन है, मगर तुर्की नहीं मालूम होता है।

आज़ाद को भी बाग़ की सैर करने की धुन सवार हुई, तो एक फूल तोड़ कर मीडा के सामने पेश किया, मीडा ने फूल तो ले लिया, मगर बिना कुछ कहे-सुने घोड़े पर सवार हो कर चली गयी। आज़ाद सोच रहे थे कि यहाँ किसी से जान न पहचान, अब इस हसीना को क्योंकर देखेंगे? इसी फ़िक्र में बैठे थे कि होटल का मालिक आ पहुँचा। आज़ाद ने उससे बातों बातों में पता लगा लिया कि यह एक कुँआरी लेडी है। इसकी ख़ूबसूरती की दूर-दूर चर्चा है। जिसे देखिए, इसका आशिक़ है। पियानो बजाने का दिली शौक़ है। घोड़े पर ऐसा सवार होती है कि अच्छे-अच्छे शहसवार दंग रह जाते हैं।

शाम के वक़्त आज़ाद एक किताब देख रहे थे कि एक औरत ने आ कर कहा—एक साहब बाहर आपकी तलाश में खड़े हैं। आज़ाद को हैरत कि यह कौन है? बाहर आये, तो देखा, एक औरत मुँह पर नक़ाब डाले खड़ी है। इन्हें देखते ही उसने नक़ाब उलट दी। यह मीडा थी।

मीडा—मैं वही हूँ, जिसे आपने फूल दिया था।

आज़ाद—और मैंने आपकी सूरत को अपने दिल पर खींच लिया था।

मीडा—यहाँ कब तक ठहरिएगा?

आज़ाद—लड़ाई में शरीक़ होना चाहता हूँ।

मीडा—इस लड़ाई का बुरा हो, जिसने हज़ारों घरों को बरबाद कर दिया! भला, अगर आप न जायँ, तो कोई हर्ज़ है?

आज़ाद—मजबूरी है!

मीडा ने आज़ाद का हाथ पकड़ लिया और बाग़ में टहलते-टहलते बोली—जब तक आप यहाँ रहेंगे, मैं रोज़ आऊँगी।

आजाद—मेरे लिए यह बड़ी खुशनसीबी की बात है। मैं अच्छी सायत देख कर घर से चला था।

मीडा—आपने वज़ीर जंग से अपने लिए क्या तय किया?

आज़ाद—अभी तो उनसे मिलने की नौबत ही नहीं आयी।

मीडा—मुझे उम्मेद है कि मैं आपको कोई अच्छा ओहदा दिला सकूँगी।

आज़ाद—आपका वतन कहाँ है?

मीडा—जार्जिया।

आज़ाद—तो यह कहिए, आप कोहक़ाफ़ की परी हैं।

इस तरह की बातें करके मीडा चली गयी। आज़ाद कुछ देर तक सन्नाटे में खड़े रहे। इतने में एक फ्रांसीसी अफ़सर आ कर बोला—तुम अभी किससे बातें कर रहे थे?

आज़ाद—मिस मीडा से।

अफ़सर—तुम्हें मालूम हैं, उससे मेरी शादी होनेवाली है?

आज़ाद—बिलकुल नहीं।

यह सुनते ही उस अफ़सर ने, जिसका नाम जदाब था, तलवार खींच कर आज़ाद पर हमला किया। आज़ाद ने खाली दी। एकाएक किसी ने पीछे से आज़ाद पर तलवार चलायी। तलवार छिछलती हुई बायें कंधे पर लगी। पलट कर आज़ाद ने जो एक तुला हुआ हाथ लगाया, तो वह ज़ख़्मी हो कर गिर पड़ा। आज़ाद सँभलने ही को थे कि जदाब फिर उन पर झपटा। आज़ाद ने फिर खाली दी और कहा—मैं चाहूँ तो तुम्हें मार सकता हूँ। मगर मुझे तुम्हारी जवानी पर रहम आता है। यह कह कर आज़ाद ने पैतरा बदला और तलवार उसके हाथ से छीन ली। इतने में होटल से कई आदमी निकल आये और आज़ाद की तारीफ़ करने लगे। जदाब ने शरमिंदा हो कर कहा—मुझे इसका अफ़सोस है कि मेरे एक दोस्त ने मुझसे बग़ैर पूछे आप पर पीछे से हमला किया। इसके लिए मैं आपसे माफ़ी माँगता हूँ। दोनों आदमी गले तो मिले, मगर फ्रांसीसी के दिल से कुदूरत न गयी।

दूसरे दिन मियाँ आज़ाद हमीदपाशा के पास गये, जो जंग के वज़ीर थे। हमीद ने आजाद का डील-डौल देखा और उनकी बातचीत सुनी, तो फ़ौज़ी ओहदा देने का वादा कर लिया। आज़ाद खुश-खुश लौटे आते थे कि मीडा घोड़े पर सवार आ पहुँची।

मीडा—आप कहाँ गये थे?

आज़ाद—वज़ीर-जँग के पास। कल तो आपकी बदौलत मेरी जान ही गयी थी।

मीडा—सुन चुकी हूँ।

आज़ाद—अब आपसे बोलते डर मालूम होता है!

मीडा—जीत तो तुम्हारी ही हुई। तुम मुझे दिल में बुरा समझ रहे होगे; मगर मेरा दिल क़ाबू से बाहर है। मेरा दिल तुम पर आया है। मैं चाहती हूँ, मेरी तुम्हारे साथ शादी हा।

आज़ाद—मुझे अफ़सोस है कि मेरी शादी तय हो चुकी है। खुदा को गवाह करके कहता हूँ, आपकी एक-एक अदा मेरे दिल में चुभ गयी है। मगर मैं मजबूर हूँ।

मीडा ने उदास हो कर कहा—पछताओगे, और घोड़ा बढ़ा दिया। उसी रात को मीडा ने हमीदपाशा से जा कर कहा कि आज़ाद नाम का जो हिन्दुस्तानी आज आपके पास आया था, वह रूस का मुखबिर है। उससे होशियार रहिएगा।

हमीद—तुम्हें इसका पूरा यक़ीन है?

मीडा—मुझे आज़ाद के एक दोस्त ही से यह बात मालूम हुई।

हमीद—तुम्हारा जिम्मा।

मीडा—बेशक।

यह आग लगा कर मीडा घर आयी; मगर बार-बार यह सोचती थी कि मैंने बहुत बुरा किया। एक बेगुनाह को मुफ्त में फँसाया। ख़याल आया कि जा कर वज़ीर-जंग से कह दे कि आज़ाद बेगुनाह है; मगर बदनामी के ख़ौफ़ से जाने की हिम्मत न पड़ती थी। मियाँ आजाद होटल में बैठे हुक्का पी रहे थे कि एक तुर्की अफसर ने आ कर कहा—आपको टर्की की सरकार ने क़ैद कर लिया।

आज़ाद—मुझको ?

अफसर—जी हाँ।

आज़ाद—आप ग़लती कर रहे हैं।

अफ़सर—नहीं, मुझे आप ही का पता दिया गया है।

आज़ाद—आखिर मेरा क़सूर ?

अफ़सर—मुझे बताने का हुक्म नहीं।

तीन दिन तक आज़ाद क़ैदख़ाने में रहे, चौथे दिन हमीदपाशा के सामने लाये गये।

हमीद—मुझे मालूम हुआ कि तुम रूसी जासूस हो।

आजाद—बिलकुल ग़लत। मैं काश्मीर का रहनेवाला हूँ। आप बतला सकते हैं हैं किसने मुझ पर इलज़ाम लगाया ?

हमीद—एक शरीफ़ लेडी ने, जिसका नाम मीडा है।

आज़ाद मीडा का नाम सुनते ही सन्नाटे में आ गये। दिल के टुकड़े-टुकड़े हो गये। मुँह से एक बात भी न निकली। अब आज़ाद फ़िर क़ैदख़ाने में आये, तो मुँह से बेअख़्तियार निकल गया—मीडा ! मीडा !! तूने मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया !

आज़ाद को इसका इतना रंज हुआ कि उसी दिन से बुख़ार आने लगा। दो-तीन दिन में उनकी हालत इतनी ख़राब हो गयी कि जेल के दारोग़ा ने सुबह-शाम सैर करने का हुक्म दे दिया। एक दिन वह शाम को बाहर सैर कर रहे थे कि एक खूबसूरत नौजवान घोड़ा दौड़ाता हुआ उनके क़रीब आ कर खड़ा हो गया।

जवान—माफ़ कीजिएगा, आपकी सूरत मेरे एक दोस्त से मिलती है। मैंने समझा शायद वही हों। आप कुछ बीमार मालूम पड़ते हैं !

आज़ाद—जी हाँ, कुछ बीमार हूँ। मुझे ख़याल आता है कि मैंने कहीं आपको देखा है।

जवान—शायद देखा हो।

यह कह कर वह मुसकिराया। आजाद ने फ़ौरन् पहचान लिया। यह मुसकिराहट मीडा की थी। आज़ाद ने कहा—मीडा, तुमने मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया। मुझे तुमसे ऐसी उम्मेद न थी।

मीडा—मैं अपने किये पर खुद शरमिंदा हूँ। मुझे माफ़ करो।

५९

मियाँ ख़ोजी पंद्रह रोज़ में ख़ासे टाँठे हो गये, तो कांसल से जा कर कहा—मुझे आज़ाद के पास भेज दिया जाय। कांसल ने उनकी दरख़्वास्त मंजूर कर ली। दूसरे दिन ख़ोजी जहाज पर बैठ कर कुस्तुनतुनियाँ चले। उधर मियाँ आज़ाद अभी तक क़ैद-ख़ाने में ही थे। हमीदपाशा ने उनके बारे में ख़ूब तहक़ीक़ात की थी, और गो उन्हें इतमिनान हो गया था कि आज़ाद रूसी जासूस नहीं हैं, फिर भी अब तक आज़ाद रिहा न हुए थे।

एक दिन मियाँ आज़ाद क़ैदख़ाने में बैठे हुए थे कि एक फ्रांसीसी क़ैदी आया। उस पर भी जासूसी का इल्ज़ाम था। आज़ाद ने पूछा—आपने अपनी सफ़ाई नहीं पेश की?

फ्रांसीसी—अंधेर है, अंधेर! मैं तो इन तुर्कों का जानी दुश्मन हूँ।

आज़ाद—मुझे यह सुन कर अफ़सोस हुआ। मैं तो तुर्कों का आशिक़ हूँ। ऐसी दिलेर क़ौम दुनिया में नहीं है।

फ्रांसीसी—अभी आप इन लोगों को अच्छी तरह नहीं जानते। आप ही को बेव-जह क़ैद कर लिया।

आज़ाद—लड़ाई के दिनों में सभी जगह ऐसी ग़लतियाँ हो जाती हैं।

फ्रांसीसी—आप रूसी ज़बान नहीं जानते?

आज़ाद—बिलकुल नहीं।

फ्रांसीसी—रूस की सरकार ने बहुत मजबूर हो कर लड़ाई की है।

आज़ाद—मैं तो समझता हूँ, रूसवालों की ज़्यादती है, सारा यूरोप टर्की का दुश्मन है।

इस तरह की बातें करके फ्रांसीसी चला गया और दूसरे ही दिन मियाँ आज़ाद आज़ाद कर दिये गये। यह क़ैदी फ्रांसीसी न था, हमीदपाशा ने एक तुर्की अफ़सर को आज़ाद के दिल का भेद लेने के लिए भेजा था।

शाम का वक़्त था, आज़ाद बैठे हुए मीडा से बातें कर रहे थे कि एक आदमी ने आ कर कहा—हुजूर, एक नाटा सा आदमी बाहर खड़ा है, और कहता है कि हमें कोठी के अंदर ज़ाने दो। आज़ाद ने कहा—आने दो। एक मिनट में मियाँ ख़ोजी आ कर खड़े हो गये। आज़ाद ने दौड़ कर उन्हें गले लगा लिया और ख़ैर-आफ़ियत पूछने के बाद अपनी राम कहानी सुनायी। मियाँ ख़ोजी ने जब आज़ाद के क़ैद होने का हाल सुना, तो बिगड़ कर बोले—ख़ुदा ने चाहा, तो हम तुम्हारा बदला लेंगे। खड़े-खड़े बदला न ले लें, तो नाम नहीं!

आज़ाद—ख़ैर, अब इसका अफ़सोस न कीजिए। मिस मीडा अभी आती होंगी, ज़रा उनके सामने बेहूदगी न क़ीजिएगा।

खोजी—भई, अभी उन्हें मत आने दो। ज़रा हम बन-ठन लें। अफ़सोस यही है कि हमारे पास क़रौली नहीं। बेक़रौली के हमसे कुछ न हो सकेगा।

आज़ाद—क्या उनसे लड़िएगा ?

खोजी—नहीं साहब, लड़ना कैसा ! बेक़रौली के जोबन नहीं आता। आप ये बातें क्या जानें।

इतने में मिस मीडा दूसरे कमरे से निकल आयीं। खोजी ने अपना ठाट बनाने के लिए मेज़ पर का कपड़ा ओढ़ लिया, तौलिया सिर में बाँधा और एक छुरी हाथ में ले कर मीडा की तरफ़ घूरने लगे ! मीडा ने जो उनकी सूरत देखी, तो मुसकिरा दी। खोजी खिल गये। आज़ाद से बोले—क्यों आज़ाद, सच कहना, मुझे देखते ही कैसा खिल गयीं ! मीडा ने आज़ाद से पूछा—यह कौन आदमी है ?

आज़ाद—एक पागल है। इसको यह ख़ब्त है कि जो औरत इसे देखती है, रीझ जाती है। तुम ज़रा इसको बनाओ।

मीडा ने खोजी को इशारे से क़रीब बुलाया। आप जा कर एक कुर्सी पर डट गये।

मीडा—(हाथ में हाथ दे कर) आपका नाम क्या है ?

खोजी—(आज़ाद से) मुझे समझाते जाओ जी !

आज़ाद ने दुभाषिये का काम करना शुरू किया। मीडा जो कहती थी, उनको समझाते थे, और वह जो कुछ कहते थे, इसे समझाते थे।

मीडा—कल आपकी दावत है। आप शराब पीते हैं ?

खोजी—हाँ—नहीं। मगर अच्छा; नहीं-नहीं। कह दो अफ़ीम पीता हूँ।

मीडा—यह आपका गुलाब सा चेहरा कुम्हला जायगा !

खोजी ने अकड़ कर आज़ाद की तरफ़ देखा।

मीडा—आप कुछ गाना भी जानते हैं।

खोजी—हाँ, और नाचना भी जानता हूँ।

मीडा—अहो-हो, तो फिर नाचो।

खोजी ने नाचना शुरू किया। अब मीडा हँसने लगी, तो आप और भी फूल गये। थोड़ी देर में मीडा होटल से चली गयी। तब आज़ाद ने कहा—भई खोजी, यह बात अच्छी नहीं। मैं तुमको ऐसा नहीं जानता था।

खोजी—तो मैं क्या करूँ ? जब वह ख़ुद ही मेरे पीछे पड़ी हुई है, तो रुखाई करना भी तो अच्छा नहीं मालूम होता।

थोड़ी देर में मीडा का ख़त आया। आज़ाद ने कहा—जनाब ख़्वाजा साहब, हमको तो ज़रा ख़त दिखाना।

खोजी—बस, बस, चलिए, अलग हटिए।

आज़ाद—लाओ, हम पढ़ दें। तुमसे भला क्या पढ़ा जायगा ?

खोजी—अजब आदमी हैं आप ! आप कहाँ के ऐसे बड़े आलिम हैं !

खोजी ने खत को तीन बार चूमा और आज़ाद को अलग बुला कर पढ़ने को दिया। लिखा था—

'मेरे प्यारे जवान, तुम्हारी एक-एक अदा ने मेरे दिल में जगह कर ली है। तुम्हारी सारस की सी गर्दन और बंदर की सी हरकतें जब याद आती हैं, तो मैं उछल-उछल पड़ती हूँ। अब यह बताओ कि आज किस वक़्त आओगे? यह खत अपने दोस्त आज़ाद को न दिखाना और वादे पर ज़रूर आना।'

खोजी—यार, तुम्हें तो सब हाल मालूम हो गया, मगर उससे कह न देना।

आज़ाद—मैं तो जा कर शिकायत करूँगा कि हमसे छिपाया क्यों? अभी-अभी खत भेजता हूँ।

खोजी—खैर, जाइए, कह दीजिए। वह हम पर आशिक़ हैं। तुम ऐसे हज़ार लगी-लिपटी बातें करें, होता क्या है। आपकी हक़ीक़त ही क्या है!

आज़ाद—यार, अब तुम्हारे साथ न रहेंगे।

खोजी—आखिर, सबब बताइए।

आज़ाद—ग़ज़ब खुदा का! मीडा सी माहरू और हमारे सामने तुम्हें यह खत लिखे।

खोजी खिलखिला कर हँस पड़े। बोले—यह बात है? हम जवान ही ऐसे हैं, इसको कोई क्या करे। लेकिन अगर तुम खिलाफ़ हो गये, तो वल्लाह, मैं मीडा से बात तक न करूँगा। मुझे जान से भी ज़्यादा प्यारे हो। क़सम खुदा की, अब दुनिया में तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नहीं। बस फ़क़त तुम! और हम तो बूढ़े हुए। यह भी मिस मीडा की मेहरबानी है। अजी, मिसर में तो तुम न थे। वहाँ पर भी एक औरत मुझ पर आशिक़ हो गयी थी! मगर खराबी यह थी कि न हम उसकी बात समझें, न वह हमारी! हाँ इशारों में खूब बातें हुईं। अच्छा, फिर एक हजाम तो बुलाओ। आज जाना है न!

आज़ाद ने एक हज्जाम बुलवाया। हजामत बनने लगी।

खोजी—घोटो, घोटो। घोटे जा। अभी खूँटी बाक़ी हैं। खूब घोटो।

हज्जाम ने फिर छुरा फेरा। खोजी ने फिर टटोल कर कहा—अभी खूँटी बाक़ी है, घोटो।

हज्जाम—तो हुज़ूर, कब तक घोटा करूँ!

खोजी—दूने पैसे देंगे हम।

हज्जाम—माना, मगर कोई हद भी है?

खोजी—तुमको इससे क्या मतलब!

हज्जाम—खून निकलने लगेगा।

आज़ाद—और अच्छा है; लोग कहेंगे, नौसा के चेहरे से खून बरसता है।

खोजी—हाँ, खूब सोची।

हज्जाम—(क़िसबत सँभाल कर) अब किसी और नाई से घुटवाइए।

आज़ाद—अच्छा, पट्टे तो कतरते जाओ।

हज्जाम ने झल्ला कर आधे बाल कतर डाले। एक तरफ़ की आधी मूँछ उड़ा दी। ख़ोजी एक तो यों ही बड़े हसीन थे, अब हज्जाम ने बाल कतर कर और भी ठीक बना दिया। ख़ोजी ने जो आईने में अपनी सूरत देखी, तो मूँछें नदारद। झल्ला कर कहा—ओ गीदी, यह क्या किया? हज्जाम डरा कि कहीं यह साहब मार न बैठें।

आज़ाद—क्यों, क्यों ख़फ़ा हो गये भई!

ख़ोजी—इसने पट्टे ऊल-जलूल कतरे, और आप बोले तक नहीं?

आज़ाद—मैं सच कहता हूँ, आप इतने हसीन कभी न थे।

ख़ोजी—और चेहरे की तो फ़िक्र करो!

आज़ाद—हाँ, हाँ, घबराते क्यों हो?

ख़ोजी—हमको याद आता है कि नौशा के सामने छोटे-छोटे लड़के ग़ज़लें पढ़ते हैं। दो-एक लौंडे बुलवा लीजिए, तो उनको ग़ज़लें रटा दें।

आज़ाद ने दो लड़के बुलवाये, और मियाँ ख़ोजी उनको ग़ज़लें याद कराने लगे। एक ग़ज़ल मियाँ आज़ाद ने यह बतलायी—

भला यह तो बताओ कि यह कौन बशर है;
सब सूरते-लंगूर, फ़क़त दुम की कसर है।

ख़ोजी—चलिए, बस अब दिल्लगी रहने दीजिए। वाह, अच्छे मिले!

आज़ाद—अच्छा, और ग़ज़ल लिखवाये देता हूँ—

फ़ुग़ाँ है, आह है, नाला है, बेकरारी है;
फ़िराक़े-यार में हालत अजब हमारी है।

ख़ोजी—वाह, शादी को इस शेर से क्या वास्ता!

आज़ाद—अच्छा साहब, ग़ज़ल याद करवा दीजिए—

कहा था बुलबुल से हाल मैंने
तेरे सितम का बहुत छिपा कर;
यह किसने उनको ख़बर सुनायी
कि हँस पड़े फूल खिलखिला कर।
मेरे जनाज़े को उनके कूचे में
नाहक़ अहबाब लेके आये;
निगाहे-हसरत से देखते हैं
वह रुख़ से परदा उठा-उठा कर।

ख़ोजी—वाह, जनाज़े को शादी से क्या मतलब है भला!

आज़ाद—ऊपरवाला शेर पसंद है?

ख़ोजी—हाँ; हँसना और खिलखिलाना, ऐसे लफ़्ज़ हों, तो क्या पूछना!

आज़ाद—अच्छा, और सुनिए।

खोजी—नहीं, इतना ही काफ़ी है। ज़रा बाजेवालों की तो फ़िक्र कीजिए। हाथी, घोड़े, पालकी, सभी चाहिए। मगर हमारे लिए जो घोड़ा मँगवाइएगा, वह ज़रा सीधा हो।

आज़ाद—भला, घोड़ा न मिले, तो खच्चर हो तो कैसा?

खोजी—वाह, आपने मुझे कोई गधा समझा है?

इतने में होटल का मैनेजर आ गया और यह तैयारियाँ देख कर हँसने लगा।

खोजी—क्यों साहब, यह आप हँसे क्यों?

मैनेजर—जनाब, यहाँ शरीफ़ लोग शादियों में बाजे-गाजे नहीं ले जाते, और पैदल ही जाते हैं। हाँ एक बात हो सकती है, दस-पाँच आदमियों को थालियाँ दे दीजिए, बाँस की खपाचों से उन्हें बजाते जायँ। आवाज़ की आवाज़ और बाजे का बाजा।

खोजी—भई आज़ाद, सोच लो।

आज़ाद—वह जब यहाँ दस्तूर ही नहीं, तो फिर क्या किया जायगा? हाँ, नौशे का पैदल जाना ज़रा बदनामी की बात है।

मैनेजर—तो पैदल न जाइए। जिस तरह यहाँ के रईस लोग जाते हैं, उस तरह जाइए—आदमी की गोद में।

खोजी—मंजूर। मगर हमको उठा सकेगा कोई?

मैनेजर—हम इसका बंदोबस्त कर देंगे। आप घबरायें नहीं।

दो घड़ी दिन रहे खोजी की बरात चली। तीन मजदूर आगे-आगे थालियाँ बजाते जाते हैं, दो लौंडे आगे-पीछे साथ। खोजी एक मज़दूर की गोद में, गेरुए कपड़े पहने, अकड़े बैठे हैं। एकाएक आप बोले—अरे रे रे! रोक लो बरात। रोक लो। पंशाखेवाले कहाँ हैं? कोई बोलता ही नहीं। परदेश में भी इंसान पर क्या मुसीबत पड़ती है? अब मैं दूलहा बन कर रहूँ, या इंतजाम करूँ! ये दोनों गीदी तो निरे जाँगलू ही निकले। फिर याद आया कि निशान का हाथी तो है ही नहीं। अरे! करौली भी नहीं। हुक्म दिया कि लौटा दो बरात। चलो होटल में।

आज़ाद—यह क्यों भई? क्या बात है? लौटे क्यों जाते हो?

खोजी—निशान का हाथी तो है ही नहीं।

आज़ाद—अजब आदमी हो भई, आप लड़ने जाते हैं, या शादी करने? और फिर यहाँ हाथी कहाँ? कहिए तो खच्चर पर एक झंडी रखवा दें।

इतने में मिस मीडा आती हुई दिखायी दीं। खोजी उन्हें देखते ही और भी अकड़ गये। क्या कहूँ, मेरे साथ के आदमी सब गोली मार देने लायक़ हैं। कोई इंतजाम ही न किया।

मीडा—ख़ैर, कल आ जाइएगा। मगर आप से एक बात कहनी है। यहाँ एक रूसी बहुत दिनों से मेरा आशिक़ है। पहले उससे लड़ो, फिर हमारे साथ शादी हो।

खोजी—मजाल है उसकी कि मेरे सामने खड़ा हो जाय? हम पचास आदमियों

से अकेले लड़ सकते हैं। जब बरात होटल पहुँची, तो मीडा ने कहा—तो उनसे कब लड़िएगा?

खोजी—जब कहिए। खून पी जाऊँगा।

मीडा—अच्छा, कल तैयार रहिएगा।

दूसरे दिन मीडा ने एक तुर्की पहलवान को ला कर होटल में बिठा दिया और खोजी से बोली—लीजिए, आपका दुश्मन आ गया। खोजी ने जब उसे देखा, तो होश उड़ गये। दुनिया भर के आदमियों से दो मुट्ठी ऊँचा। दिल में सोचने लगे, यह तो कच्चा ही खा जायगा। एक चपत दे, तो हम ज़मीन में धँस जायँ। इससे लड़ेगा कौन भला? मारे डर के ज़रा पीछे हट गये। मीडा ने कहा—आप तो अभी से डरने लगे। खोजी एकाएक धड़ाम से गिर पड़े और चिल्लाने लगे—इस तरह का दर्द हो रहा है कि कुछ न पूछो। अफ़सोस, दिल की दिल ही में रह गयी! वल्लाह, वह पटकनी देता कि कमर टूट जाती। मगर खुदा को मंजूर न था। तुर्की पहलवान ने इनका हाथ पकड़ कर एक झटका दिया, तो दस क़दम पर जा गिरे। बोले—ओ गीदी, ज़रा बीमार हो गया हूँ, नहीं तो कच्चा ही खा जाता, नमक भी न माँगता।

आखिर इस बात पर फ़ैसला हुआ कि जब खोजी अच्छे हो जायँ, तो फिर किसी दिन कुश्ती हो।

६०

मियाँ शहसवार का दिल दुनिया से तो गिर गया था, मगर जोगिन की उठती जवानी देख कर धुन समायी कि इसको निकाह में लावें। उधर जोगिन ने ठान ली थी कि उम्र भर शादी न करूँगी। जिसके लिए जोगिन हुई, उसी की मुहब्बत का दम भरूँगी। एक दिन शहसवार ने जो सुना कि सिपहआरा कोठे पर से कूद पड़ी, तो दिल बेअख्तियार हो गया। चल खड़े हुए कि देखें, माजरा क्या है ? रास्ते में एक मुंशी से मुलाकात हो गयी। दोनों आदमी साथ-साथ बैठे, और साथ ही साथ उतरे। इत्तफ़ाक़ से रेल से उतरते ही मुंशी जी को हैज़ा हो गया। देखते-देखते चल बसे। शहसवार ने जो देखा कि मुंशी के पास दौलत काफ़ी है, तो फ़ौरन उनके बेटे बन गये और सारा माल असबाब ले कर चम्पत हो गये। सात हजार की अशर्फ़ियाँ, दस हज़ार के नोट और कई सौ रुपये हाथ आये। रईस बन बैठे। फौरन जोगिन के पास लौट गये।

जोगिन—क्या गये नहीं ?

शहसवार—आधी ही राह से लौट आये। मगर हम अमीर हो कर आये हैं।

जोगिन—अमीर कैसे ! बोलो ? हमको बनाते हो ?

शहसवार—क़सम ख़ुदा की, हज़ारों ले कर आया हूँ। आँखें खुल जायँगी।

दुनिया के भी अजब कारख़ाने हैं। शहसवार को बाईस हज़ार तो नक़द मिले और जब कपड़ों की गठरी खोली, तो एक टोपी निकल आयी, जिसमें हीरे और मोती टँके हुए थे। जोगिन के आशिक़ों में एक जौहरी भी था। उसने यह टोपी बीस हज़ार में ख़रीद ली। जब जौहरी चला गया, तो शहसवार ने जोगिन से कहा—लो, अब तो अल्लाह मियाँ ने छप्पर फाड़ के दौलत दी। कहो, अब निकाह की ठहरती है ? क्यों मुफ़्त में जवानी खोती हो ?

जोगिन—अब रंग लायी गिलहरी। ओछे के घर तीतर, बाहर रखूँ कि भीतर। रुपये क्या मिल गये, अपने आपको भूल गये।

शहसवार सचमुच ओछा था। अब तक तो आप जोगिन की ख़ुशामद करते थे, ढई दिये बैठे थे कि कभी न कभी तो दिल पसीजेगा; मगर अब ज़मीन पर पाँव ही नहीं रखते। बात-बात पर तिनकते है। जोगिन तो दुनिया से मुँह मोड़े बैठी थी, इनके चोंचले क्यों बर्दाश्त करती ? शहसवार से नफ़रत करने लगी।

एक दिन शहसवार हवा के घोड़े पर सवार डींग मारने लगे—इस वक़्त हम भी लाख के पेटे में हैं। और लाख रुपये जिसके पास होते हैं, उनको लोग तीन-चार लाख का आदमी आँकते हैं। अब दो घोड़े और लेंगे। मगर हम यह महाजनी कारख़ाना न रखेंगे कि चारजामा और ज़ीनपोश। बस, अँगरेजी काठी और एक जोड़ी फिटन के लिए। जो देखे, कहे, रईस जाता है। और रईस के क्या दो सींग

होते हैं सिर पर ? एक कोठी भी बनवायेंगे। कोई ताल्लुक़ेदार अपना इलाका बेचे, तो खड़े-खड़े खरीद लें।

जोगिन—अच्छा, खाना तो खा लो।

शहसवार—आज खाना क्या पका है ?

जोगिन—बेसन की रोटी।

शहसवार—यह तो रईसों का खाना नहीं।

जोगिन—रईस कौन है ?

शहसवार—हम-तुम, दोनों। क्या अब भी रईस होने में शक है ? हाँ, ख़ूब याद आया, एक हाथी भी ख़रीदेंगे।

जोगिन—हाँ, बस इसी की कसर थी। दो-तीन गधे भी ख़रीदना।

शहसवार—गधे तो रईसों के यहाँ नहीं देखे।

जोगिन—नयी बात सूझी।

शहसवार—हाँ, ख़ूब सूझी।

जोगिन—फिर, यह सब कब ख़रीदोगे ?

शहसवार—जब चाहें ! रुपये का तो सारा खेल है। तीस-चालीस हज़ार रुपये बहुत होते हैं। इन्सान गिने, तो बरसों में गिनती ख़तम हो।

जोगिन—अजी, दो-तीन आदमी तो इतने अर्से में मर जायँ, दस-पाँच की आँखें फूट जायँ।

उस दिन से शहसवार की हालत ही कुछ और हो गयी। कभी रोते, कभी बहकी-बहकी बातें करते। आख़िर जोगिन ने वहाँ से कहीं भाग जाने का इरादा किया। पड़ोस में एक आदमी रहता था, जो मोम के खिलौने ख़ूब बनाता था। मोम के आदमी ऐसे बनाता कि असल का धोखा होता था। उसे बुला कर जोगिन ने उसके कान में कुछ कहा और कारीगर दस दिन की मुहलत ले कर रुख़सत हुआ।

नौ दिन तक तो जोगिन ने किसी तरह काटे, दसवें दिन एकाएक शहसवार ने उसे देखा, तो चुपचाप पड़ी है। बुलाया; जवाब नदारत। क़रीब जा कर देखा तो पछाड़ खा कर गिर पड़े। लगे दीवार से सिर टकराने। जी में आया कि ज़हर खा लें और इसी के साथ चले चलें। क्या लुत्फ़ से दिन कटते थे, अब ये रुपये किस काम आवेंगे। जान जाने का रंज नहीं, मगर यह रुपया कहाँ जायगा ? आख़िर वसीयत लिखी कि मेरे बाद मेरी सारी जायदाद सिपहआरा को दी जाय। यह वसीयत लिख कर शहसवार ने सिर पीटना शुरू किया। खिलौना बनानेवाला कारीगर उसे समझाने लगा—सब्र कीजिए। हाय, क्या मिज़ाज था ! यह कह कर वह अपने भाई को बुला लाया। दोनों ने लाश को ख़ूब लपेट कर कंधे पर उठाया। मियाँ शहसवार पीछे-पीछे चले।

कारीगर—तुम क्यों आते हो ? क़ब्रिस्तान बहुत दूर है।

शहसवार—क़ब्र तक तो चलने दो।

कारीगर—क्या ग़ज़ब करते हो। थानेवालों को ख़बर हो गयी तो मुफ्त में धरे जाओगे।

शहसवार—मिट्टी तो दे दूँ।

कारीगर—बस, अब साथ न आइए।

६१

क़ैदख़ाने से छूटने के बाद मियाँ आज़ाद को रिसाले में एक ओहदा मिल गया। मगर अब मुश्किल यह पड़ी कि आज़ाद के पास रुपये न थे। दस हज़ार रुपये के बग़ैर तैयारी मुश्किल। अजनबी आदमी, पराया मुल्क, इतने रुपये का इंतज़ाम करना आसान न था। इस फ़िक्र में मियाँ आज़ाद कई दिन तक ग़ोते खाते रहे। आख़िर यही सोचा कि यहाँ कोई नौकरी कर लें और रुपये जमा हो जाने के बाद फ़ौज में जायँ। मन मारे बैठे हुए थे कि मीडा आ कर कुर्सी पर बैठ गयी। जिस तपाक के साथ आज़ाद रोज़ पेश आया करते थे, उसका आज पता न था! चकरा कर बोली—उदास क्यों हो! मैं तो तुम्हें मुबारकबाद देने आयी थी। यह उलटी बात कैसी?

आज़ाद—कुछ नहीं। उदास तो नहीं हूँ।

मीडा—ज़रा आईने में सूरत तो देखिए।

आज़ाद—हाँ मीडा, शायद कुछ उदास हूँ। मैंने तुमसे अपने दिल की कोई बात कभी नहीं छिपायी। मुझे ओहदा तो मिल गया, मगर यहाँ टका पास नहीं। कुछ समझ में नहीं आता क्या करूँ?

मीडा—बस, इसी लिए आप इतने उदास हैं! यह तो कोई बड़ी बात नहीं। तुम इसकी कोई फ़िक्र न करो।

यह कह कर मीडा चली गयी और थोड़ी देर बाद उसके आदमी ने आ कर एक लिफ़ाफ़ा आज़ाद के हाथ में रख दिया। आज़ाद ने लिफ़ाफ़ा खोला, तो उछल पड़े। इस्तंबोल-बैंक के नाम बीस हज़ार का चेक था। आज़ाद रुपये पा कर ख़ुश तो हुए, मगर यह अफ़सोस ज़रूर हुआ कि मीडा ने अपने दिल में न जाने क्या समझा होगा। उसी वक़्त बैंक गये, रुपये लिये और सब सामान ठीक करके दूसरे दिन फ़ौज में दाखिल हो गये।

दोपहर के वक़्त घड़घड़ाहट की आवाज़ आयी। ख़ोजी ने सुना, तो बोले—यह आवाज़ कैसी है भई? हम समझ गये। भूचाल आने वाला है। इतने में किसी ने कहा—फ़ौज जा रही है। ख़ोजी कोठे पर चढ़ गये। देखा, फ़ौज सामने आ रही है। यह घड़घड़ाहट तोपख़ाने की थी। ज़रा देर में आज़ाद पर नज़र पड़ी। घोड़े की बाग़ उठाये, रान जमाये चले जाते थे। ख़ोजी ने पुकारा—मियाँ आज़ाद! अरे मियाँ, इधर, इधर! वाह, सुनते ही नहीं। फ़ौज़ में क्या हो गये, मिज़ाज ही नहीं मिलते। हम भी पलटन में रह चुके हैं, रिसालदार थे, पर यह न था कि किसी की बात न सुनें।

सारे शहर में एक मेला सा लगा हुआ था, कोठे फटे पड़ते थे। औरतें अपने

शौहरों को लड़ाई पर जाते देखती थीं और उन पर फूलों की बौछार करती थीं। माँएँ अपने बेटों के लिए खुदा से दुआ कर रही थीं।

फ़ौज़ तो मैदान को गयी और मियाँ खोजी मिस मीडा से मिलने चले। मीडा की एक सहेली का नाम था मिस रोज़। मीडा खोजी को देखते ही बोली—लीजिए, मैंने आपकी शादी मिस रोज़ से ठीक कर दी। अब कल बरात ले कर आइए।

खोजी—खुदा आपको इस नेकी का बदला दे। मैं तो वज़ीर-जंग को भी नवेद दूँगा।

मीडा—अजी, सुलतान को भी बुलाइए।

खोजी—तो फिर बंदोबस्त कीजिए। शादी के लिए नाच सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। अगर तबले पर थाप न पड़ी, महफ़िल न जमी, तो शादी ही क्या!

मीडा—मगर यहाँ तो आदमी का नाच मना है। कहीं कोई औरत नाचे, तो गजब ही हो जाय।

खोजी—अच्छा, फिर किसी सबील से नाच का नाम तो हो जाय।

मीडा—इसकी तदबीर यों कीजिए कि किसी बंदर नचानेवाले को बुला लीजिए। खर्च भी कम और लुत्फ़ भी ज़्यादा। तीन बंदरवाले काफ़ी होंगे।

खोजी—तीन तो मनहूस हैं। पाँच हो जायँ, तो अच्छा!

खैर, दूसरे दिन खोजी बरात सजा कर मीडा के मकान की ओर चले। आगे निशान का खच्चर था, पीछे रीछ और बंदर। दस पाँच लड़के मशालें लिये खोजी के चारों तरफ़ चले जाते थे; और खोजी टट्टू पर सवार, गेरुए रंग की पोशाक पहने सियाह पगड़ी बाँधे, अकड़े बैठे थे। टट्टू इतना मरियल था कि खोजी बार-बार उछलते थे, एड़-पर-एड़ लगाते थे, मगर वह दो क़दम आगे जाता था तो चार क़दम पीछे। एकाएक टट्टू बैठ गया। इस पर लड़कों ने उसे डंडे मारना शुरू किया। खोजी बिगड़ कर बोले—ओ मसखरो, तुम सब हँसते क्या हो! जल्द कोई तदबीर बताओ, वर्ना मारे क़रौलियों के भौला दूँगा।

साईस—हुजूर, मैं इस घोड़े की आदत खूब जानता हूँ। यहि बग़ैर चाबुक खाये उठनेवाला नहीं।

खोजी—तू मसलहत करता है कि किसी तदबीर से टट्टू को मनाता है?

साईस—आप उतर पड़िए।

खोजी उतर पड़े और साईस ने टट्टू को मार-मार कर उठाया। खोजी फिर सवार होने चले। एक पैर रकाब पर रख कर दूसरा उठाया ही था कि टट्टू चलने लगा। खोजी अरा-रा करके धम से ज़मीन पर आ रहे। पगड़ी यह गिरी, क़रौली वह गिरी। डिबिया एक तरफ़, टट्टू एक तरफ़। साईस ने कहा—उठिए, उठिए। घोड़े से गिरना शहसवारों ही का काम है। जिसे घोड़ा नसीब नहीं, वह क्या गिरेगा?

खोजी—खैरियत यह हुई कि मैं घोड़े पर न गिरा, वर्ना मेरे बोझ से उसका काम ही तमाम हो जाता।

ख़ोजी ने फिर सिर पर पगड़ी रखी, करौली कमर से लगायी और एक लड़के से पूछा—यहाँ आईना तो कहीं नहीं मिलेगा? फिर से पोशाक सजी है, ज़रा मुँह तो देख लेते।

लड़का—आईना तो नहीं है, कहिए पानी ले आऊँ। उसी में मुँह देख लीजिए। यह कह कर वह एक हाँड़ी में पानी लाया। ख़ोजी पीनक में तो थे ही, हाँड़ी जो उठायी तो सारा पानी ऊपर आ रहा। बिगड़ कर हाँड़ी पटक दी। फिर आगे बढ़े। मगर दो-चार क़दम चल कर याद आया कि मिस रोज़ का मकान तो मालूम ही नहीं; बरात जायगी कहाँ? बोले—यारो, ग़ज़ब हो गया! जुलूस रोक लो। कोई मकान जानता है?

साईस—कौन मकान?

ख़ोजी—वही जी जहाँ चलना है।

साईस—मुझे क्या मालूम? जिधर कहिए चलूँ।

ख़ोजी—तुम लोग अजीब घामड़ हो। बरात चली और दुलहिन के घर का पता तक न पूछा।

साईस—नाम तो बताइए? किसी से पूछ लिया जाय।

ख़ोजी—अरे भई, मुझे उनका नाम न लेना चाहिए। अटकल से चलो उसी तरफ़।

साईस—अरे, कुछ नाम तो बताइए!

ख़ोजी—कोहक़ाफ़ की परी कह दो। पूरा नाम हम न लेंगे।

एक तरफ़ कई आदमी बैठे हुए थे। साईस ने पूछा—यहाँ कोई परी रहती है?

एक आदमी ने कहा—मुझे और तो नहीं मालूम, मगर शहर-बाहर पूरब की तरफ़ जो एक तालाब है, वहाँ पार साल जो एक फ़क़ीर टिके थे, उनके पास एक परी थी।

ख़ोजी—लो, चल न गया पता! उसी तालाब की तरफ़ चले चलो।

अब सुनिए। उस तालाब पर एक रईस की कोठी थी। उसकी बीवी मर गयी थी। घर में मातम हो रहा था। दरवाज़े पर जो यह शोर-गुल मचा, तो उसने अपने नौकरों से पूछा—यह कैसा गुल है? बाहर निकल कर खूब पीटो बदमाशों को! दो-तीन आदमी डंडे ले-ले कर फाटक से निकले।

ख़ोजी—वाह रे आप के यहाँ का इंतज़ाम! कब से बरात खड़ी, और दरवाजे पर रोशनी तक नदारद!

एक आदमी—तू कौन है बे? क्या रात को बंदर नचाने आया है?

ख़ोजी—ज़बान सँभाल। जा कर अपने मालिक से कह, बरात आ गयी है।

आदमियों ने बारात को पीटना शुरू किया। ख़ोजी पर एक चपत पड़ी, तो पगड़ी गिर पड़ी। दूसरे ने टट्टू पर डंडे जमाये।

ख़ोजी—भई, ऐसी दिल्लगी न करो। कुछ कम्बख़्ती तो नहीं आयी तुम सबकी?

बंदर वालों पर जब मार पड़ी, तो वे सब भागे। लड़के भी चिराग़ फेंक फाँक कर भागे। टट्टू ने भी एक तरफ़ की राह ली। बेचारे ख़ोजी अकेले पिट-पिटा कर होटल की तरफ़ चले।

६२

जोगिन शहसवार से जान बचा कर भागी, तो रास्ते में एक वकील साहब मिले। उसे अकेले देखा, तो छेड़ने की सूझी। बोले—हुजूर को आदाब। आप इस अँधेरी रात में अकेले कहाँ जाती हैं?

जोगिन—हमें न छेड़िए।

वकील—शाहज़ादी हो? नवाबज़ादी हो? आख़िर हो कौन?

जोगिन—ग़रीबज़ादी हूँ।

वकील—लेकिन आवारा।

जोगिन—जैसा आप समझिए।

वकील—मुझे डर लगता है कि तुम्हें अकेला पा कर कोई दिक़ न करे। मेरा मकान क़रीब है, वहीं चल कर आराम से रहो।

जोगिन—मुझे आपके साथ जाने में कोई उज्र नहीं; मगर शर्त यही है कि मेरी इज्ज़त के ख़िलाफ़ कोई बात न हो।

वकील—यह आप क्या फर्माती हैं? मैं शरीफ़ आदमी हूँ।

वकील साहब देखने में तो शरीफ़ मालूम होते थे, मगर दिल के बड़े खोटे थे। जोगिन ने समझा कि इस वक़्त और कहीं जाना तो मुनासिब नहीं। रात को यहीं रह जाऊँ, तो क्या हरज? वकील साहब के घर गयी तो देखा, एक कमरे में टाट पर दरी बिछी है, और एक टूटी मेज़ पर क़लम-दावात रखी है। समझ गयी, यह कोई टुटपूँजिए वकील हैं।

रात ज़्यादा आ गयी थी। जब जोगिन सोयी, तो वकील साहब ने अपने नौकर सलारबख्श को यों पट्टी पढ़ायी—तुम सुबह इनसे कहना कि वकील साहब बहुत बड़े रईस हैं। इनके बाप चकलेदार थे। इनके यहाँ दो बग्घियाँ हैं और आदमियों की तनख्वाह महीने में तीन सौ रुपये देते हैं।

सलारबख्श—भला वह यह न कहेंगी कि रईस हैं, तो फटेहालों क्यों रहते हैं? एक तो खटिया आपके पास, और उस पर ये बातें कि हम ऐसे और हम वैसे। हाँ, मैं इतना कह दूँगा कि हमारे हुजूर दिल के बड़े वह हैं।

वकील—वह के क्या माने?

सलारबख्श—अजी, चालाक हैं।

वकील—आज खाना दिल लगा कर पकाना।

सलारबख्श—तो किसी बावरची को बुला लीजिए न! दो रुपये खरचिए, तो अच्छे से अच्छे खाने पकवा दूँ। और, इनके लिए कोई मामा रखिए। वे इसके बात न बनेगी। हाँ, चाहे मार डालिए हमें, हम झूठ न बोलेंगे कभी।

वकील—देखो, सब फ़िक्र हो जायगी।

सलारबख्श—फ़िक्र क्या ख़ाक होगी ? मुक़दमेवाले तो आते ही नहीं।

वकील—अजी, एक मुक़दमे में उम्र भर की कसर निकल जायगी।

सलारबख्श—तो क्या मिलेगा एक मुक़दमे में ?

वकील—अजी, मिलने की न कहो ! मिलें, तो दो लाख मिल जायँ।

सलारबख्श—ऐं, इतना झूठ ! मियाँ, मैं नौकरी नहीं करने का। देखिए, छत न गिर पड़े कहीं ! लोग कहते हैं, काल पड़ता है, हैज़ा आता है, मेंह नहीं बरसता। बरसे क्या ख़ाक, इस झूठ को तो देखिए, कुछ ठिकाना है, दो लाख एक मुक़दमे में आप पायेंगे ! कभी बाबा राज ने भी दो लाख की सूरत देखी थी ? हमने तो आपके बाबा को भी जूतियाँ चटकाते ही देखा। वह तो कहिए, फ़क़ीर की दुआ से रोटियाँ चली जाती हैं। यही ग़नीमत समझो ?

वकील—तुम बड़े गुस्ताख़ हो !

सलारबख्श—मैं तो खरी-खरी कहता हूँ।

वकील—ख़ैर, कल एक काम तो करना ! ज़रा दो-एक आदमियों को लगा लाना।

सलारबख्श—क्या करना ?

वकील—दो आदमियों को मुवक्किल बना कर ले आना, जिसमें यह समझें कि इनके पास मुक़दमे बहुत आते हैं। हम तो रंग जमाते हैं न अपना। यह बात ! समझे !

सलारबख्श—अगर दो-एक को फाँस-फूँस कर लाये भी, तो फ़ायदा क्या ? टका तो वसूल न होगा।

वकील—वह समझेंगी तो कि यह बहुत बड़े वकील हैं।

सलारबख्श—अच्छा, इस वक़्त तो सोइए। सुबह देखी जायगी।

दोनों आदमी सोये। सबसे पहले जोगिन की आँख खुली। सलारबख्श से बोली—क्यों जी, इनका नाम क्या है ?

सलारबख्श—इनका नाम है हींगन।

जोगिन—क्या ? हींगन ? तब तो शरीफ़ जरूर होंगे। और इनके बाप का नाम क्या है ? बैंगन !

सलारबख्श—बाप का नाम मदारी।

जोगिन—वाह, बस, मालूम हो गया। और पेशा क्या है ?

सलारबख्श—दलाली करते हैं।

जोगिन—ऐं, यह दल्लाल हैं ?

सलारबख्श—जी, और क्या ! बाप-दादे के वक़्त से दलाली होती आती है।

वकील साहब लेटे-लेटे सुन रहे थे और दिल ही दिल में सलारबख्श को गालियाँ दे रहे थे कि पाजी ने जमा-जमाया रंग फीका कर दिया। इतने में बारह की तोप दग़ी और वकील साहब उठ बैठे।

वकील—पानी लाओ। आज वह दूसरा ख़िदमतगार कहाँ है ?

सलारबख्श—हुजूर, चिट्ठी ले गया है।

वकील—और मामा नहीं आयी ?

सलारबख्श—रात उसके लड़का हुआ है।

वकील—और कालेखाँ कहाँ मर गया आज !

सलारबख्श—लालखाँ के पास गया है हुजूर !

वकील—और हमार मुहर्रिर ?

सलारबख्श—उन्हें नवाब साहब ने बुलवा भेजा है।

वकील—सब मुवक्किल कहाँ हैं ?

सलारबख्श—हुजूर सब वापस चले गये।

वकील—कुछ परवा नहीं। हमको मुक़दमों की क्या परवा !

सलारबख्श—हुजूर के घर की रियासत क्या कम है !

वकील—(जोगिन से) आज तो आप खूब सोयीं।

जोगिन—मारे सर्दी के रात भर काँपती रही। क़सम ले लो, जो आँख भी झपकी हो। यह तो बताइए, आपका नाम क्या है ?

वकील—हमारा नाम मौलवी मिर्ज़ा मुहम्मद सादिक़अली बेग, वकील अदालत।

जोगिन—'घर की पुटकी बासी साग।'

वकील—ऐं, और सुनिए।

जोगिन—तुम्हारा नाम हींगन है ? और बैंगन के लड़के हो ? दलाली करते हो ?

वकील—हींगन किस पाजी का नाम है ?

सलारबख्श—इनसे किसी ने हींगन कह दिया होगा।

वकील—तेरे सिवा और कौन कहने बैठा होगा ?

सलारबख्श—तो क्या मैं ही अकेला आपका नौकर हूँ कुछ ? पंद्रह-बीस आदमी हैं। किसी ने कह दिया होगा ! इसको हम क्या करें ले भला !

वकील—ऊपर से और हँसता है बेग़ैरत ! (जोगिन से) हमसे एक फ़क़ीर ने कहा है कि तुम जल्द बादशाह होनेवाले हो।

जोगिन—हाँ, फिर उल्लू तुम्हारे सिर पर बैठा ही चाहता है। दो ही तरह से ग़रीब आदमी बादशाह हो सकता है—या तो टाँग टूट जाय, या उल्लू सिर पर बैठे। अच्छा, आपकी आमदनी क्या होगी ?

वकील—यह न पूछो। कुछ रुपया गाँव से आता है, कुछ वसीक़ा है, कुछ वकालत से पैदा करते हैं।

जोगिन—और सवारी क्या है आपके पास ?

वकील—आजकल तो बस, एक पालकी है और दो घोड़े।

जोगिन—बँधते कहाँ हैं ?

सलारबख्श—इधर एक अस्तबल है, और उसके पास ही फ़ीलख़ाना।

जोगिन—ऐं, क्या आपके पास हाथी भी है ?

वकील—नहीं जी कहने दो इसे। यह यों ही कहा करता है।

जोगिन—अच्छा, वकालत में क्या मिलता होगा?

वकील—अब तो आजकल मुक़द्दमे ही कम हैं।

जोगिन—तो भी भला?

सलारबख्श—इसकी न पूछिए, किसी महीने में दो-चार हाथी आ गये, किसी महीने दस-पाँच ऊँट मिल गये।

वकील—तू उठ जा यहाँ से। हज़ार बार कह दिया कि मसख़रेपन से हमको नफ़रत है; मगर मानता ही नहीं शैतान! तुझसे कुछ कहा था हमने!

सलारबख्श—हाँ, हाँ, याद आ गया। लीजिए अभी जाता हूँ।

वकील साहब सलारबख्श के साथ बरामदे में आये कि कुछ और समझा दें, तो सलारबख्श ने कहा—अभी सबों को फाँसे लाता हूँ। आप इतमिनान से बैठें। मगर यह भी बैठी रहें, जिसमें लोग समझें कि वकील की बड़ी आमदनी है। मैं कह दूँगा कि गाना सुनने के लिए नौकर रखा है। सौ रुपये महीना देते हैं।

वकील—सौ नहीं दो सौ कहना!

सलारबख्श—वही बात कहिएगा, जो बेतुकी हो। भला किसी को भी दुनिया में यक़ीन आवेगा कि यह वकील दो सौ रुपये खर्च कर सकता है?

वकील—क्यों, क्यों?

सलारबख्श—अब आप तो हिंदी की चिंदी निकालते हैं। धेले-धेले पर तो आप मुक़द्दमे लेते हैं; दो सौ की रक़म भला आप क्या खर्च करेंगे?

वकील—अच्छा, बक न बहुत। जा, फाँस ला दो-चार को।

सलारबख्श बाहर जा कर दो-चार अड़ोसियों-पड़ोसियों को सिखा कर-पढ़ा कर मूँछों पर ताव देते हुए आया और हुक़्क़ा भर कर जोगिन के सामने पेश किया!

जोगिन—क्या कक्कड़वाले की दूकान से लाये हो? हटा ले जाओ इसे! तुम्हें मदरिया भी नहीं जुरता?

वकील—अरे, तू यह हुक़्क़ा कहाँ से उठा लाया? वह हुक़्क़ा कहाँ है, जो नसीरुद्दीन हैदर के पीने का था? वह गंगा-जमनी गुड़गुड़ी कहाँ है, जो हमारे साले ने भेजी थी।

सलारबख्श—वह हुजूर के बहनोई ले गये।

वकील—तो आखिर, पेचवान और चाँदी का हुक़्क़ा क्यों नहीं निकालते? यह भदेसल हुक़्क़ा उठा लाये वहाँ से।

सलारबख्श—खुदावंद, वह सब तो बंद हैं।

जोगिन—आख़िर यह सब समान बंद कहाँ है? ज़री सा तो मकान आपका, मुर्ग़ी के टापे के बरब्बर। वह किन कोठों में बंद है सबका सब?

इतने में एक मुक़दमेवाला आया। एक हाथ में झाड़, दूसरे में पंजा। आते ही झाड़ कोने में खड़ी कर दी और पंजा टेक कर बैठा गया। वकील साहब सिर से पैर

तक फुँक गये। पूछा—तुम कौन? उसने कहा—हम भंगी हैं साहब! जोगिन मुसकिरायी। वकील ने सलारबख्श की तरफ़ देखा। सलारबख्श सिर खुजलाने लगा।

वकील—क्या चाहता है?

भंगी—हुजूर, मेरी टट्टी का एक बाँस कोई निकाल ले गया। हुजूर को वकील करने आया हूँ। गुलामहूँ ख़ुदावंद।

वकील—कोई है, निकाल दो इस पाजी को।

सलारबख्श—ख़ुदावंद, अमीरों का मुक़दमा तो आप लें, और ग़रीबों का कौन ले? वकील तो दर्जी की सुई है, कभी रेशम में, कभी लट्ठे में!

वकील—ग़रीबों का मुक़दमा ग़रीब वकील ले।

सलारबख्श—अब तो हुजूर, इसकी फ़रियाद सुन ही लें। अच्छा मेहतर, बताओ क्या दोगे?

मेहतर—हमारे पास तो दो मट्टू-साही हैं।

वकील—(झल्ला कर) निकालो, निकालो इस कम्बख्त को!

वकील साहब ने गुस्से में मेहतर की झाड़ू उठा ली और उस पर खूब हाथ साफ़ किया। वह झाड़ू-पंजा छोड़ कर भागा।

जोगिन—अच्छा, आप अब अलग ही रहिएगा। जा कर गुस्ल कीजिए।

वकील—आज तो बड़ी सर्दी है।

जोगिन—अल्लाह जानता है, गुस्ल करो, नहीं तो छुएँगे नहीं।

सलारबख्श—हाँ, सच तो कहती हैं।

वकील—तू चुप रह।

जोगिन ने सलारबख्श को हुक्म दिया कि तुम पानी भरो। सलारबख्श पानी भर लाये। वकील साहब ने रोते-रोते कपड़े उतारे, लुँगी बाँधी और बैठे। जैसे बदन पर पानी पड़ा, आप गुल मचा कर भागे। सलारबख्श चमड़े का डोल लिये हुए पीछे दौड़ा। फिर पानी पड़ा, फिर रोये। जोगिन मारे हँसी के लोट-लोट गयी। बारे किसी तरह आपका गुस्ल पूरा हुआ। थर-थर काँप रहे थे। मुँह से बात न निकलती थी। उस पर सलारबख्श ने पंखा झलना शुरू किया, तब तो और भी झल्लाये और कस कर उसे दो-तीन लातें लगायीं। सलारू भाग खड़े हुए।

जोगिन—अब यह दरी तो उठवाओ।

वकील—क्यों, दरी ने क्या क़सूर किया?

सलारबख्श—हुजूर, भंगी तो इसी पर बैठा था।

वकील—अरे, तू फिर बोला! क़सम ख़ुदा की, मारते-मारते उधेड़ कर रख दूँगा।

जोगिन—सलारबख्श, यह चाँदनी उठा ले जाओ।

दरी उठी, तो कलई खुल गयी। नीचे एक फटा-पुराना टाट पड़ा था, बाबा आदम के वक़्त का। वकील कट गये। जोगिन ने कहा—ले, अब इस पर कोई फ़र्श बिछवाओ।

वकील—वह बड़ी दरी लाओ, जो छकड़े पर लद कर आयी थी।

सलारबख्श—वह! उसको तो एक लौंडा चुरा ले गया।

जोगिन—खुदा की पनाह, छकड़े पर लद कर तो मुई दरी आयी, और ज़रा सा लौंडा चुरा ले गया!

वकील—अच्छा, वह न सही, जाओ, और जो कुछ मिले उठा लाओ।

यह कह कर वकील साहब तो बरामदे में चले गये और सलारबख्श जा कर अपना कम्बल और एक दस्तरख्वान उठा लाया। वकील कमरे में आये, तो देखा कि दस्तरख्वान बिछा हुआ है और जोगिन खिलखिला कर हँस रही है। सलारबख्श एक कोठरी में छिप रहा था। वकील ने झल्ला कर डंडा निकाला और कोठरी में घुस कर उसे दो-तीन डंडे लगाये। फिर डाँट कर कहा—आखिर जो तू मेरा नमक खाता है, तो मेरा रंग क्यों फीका करता है? मैं एक कहूँ तो दो कहा कर। खैर-ख्वाही के माने यह हैं। सिखला दिया, समझा दिया; मगर तू हिंदी की चिंदी निकालता है।

सलारबख्श—अच्छा, हुज़ूर जैसा कहते हैं, वही करूँगा। और भी जो कुछ समझाना हो, समझा दीजिए। फिर मैं नहीं जानता।

वमील—अच्छा, हम जाते हैं, तू आ कर कहना कि क़सूर माफ़ कीजिए। और रोना खूब।

वकील साहब यह हिदायत करके चले गये और जोगिन से बातें करने लगे। इतने में सलारबख्श रोता हुआ आया। जोगिन धक से रह गयी। सलारू थोड़ी देर तक खूब रोये, फिर वकील के क़दमों पर गिर कर कहा—हुज़ूर, मेरा क़सूर माफ़ करें।

वकील—अबे, तो कोई इस तरह रोता है?

जोगिन—मैं तो समझी कि आपके अज़ीज़ों में से कोई चल बसा।

इतने में वकील साहब के नाम एक खत आया। जोगिन ने पूछा—किसका खत है?

वकील—साहब के पास से आया है।

जोगिन—कौन साहब? कोई अँगरेज हैं?

वकील—हाँ, जिले के हाकिम हैं। हमसे याराना है।

सलारबख्श—आपसे न! और उनसे भी तो याराना है, जिन्होंने जुर्माना ठोंक दिया था?

वकील—साहब ने हमें बुलाया है।

जोगिन—तो शायद आज तुम्हारी दावत वहीं है? तभी आज खाना-वाना नहीं पक रहा है। दोपहर होने को आयी, और अभी तक चूल्हा नहीं जला।

वकील—अरे सलारू, खाना क्यों नहीं पकाता?

सलारबख्श—बाज़ार बंद है।

जोगिन—आग लगे तेरे मसखरेपन को! यहाँ आँतें कूँ-कौं कर रही हैं, और तुझे दिल्लगी सूझती है!

वकील ने बाहर जा कर सलारू से कहा—बनिये से आटा क्यों नहीं लाता ?

सलारबख्श—हुज़ूर, कोई दे भी ! कोई दस बरस से तो हिसाब नहीं हुआ। बाज़ार में निकलता हूँ, तो चारों तरफ़ से तकाजे होने लगते हैं।

वकील—अबे, इस वक़्त तो किसी बहाने से माँग ला। आखिर कभी-न-कभी मुक़दमे आवेंगे ही। हमेशा यों ही सन्नाटा थोड़े ही रहेगा ?

ख़ैर, सलारबख्श ने खाना पकाया, और कोई चार बजे आठ मोटी-मोटी रोटियाँ; एक प्याली में माष की दाल और दूसरी में आध पाव गोश्त रख कर लाया !

वकील—अबे, आज पुलाव नहीं पका ?

सलारबख्श—हुज़ूर, बिल्ली खा गयी।

वकील—और गोश्त भी एक ही तरह का पकाया ?

सलारबख्श—हुज़ूर मैं पानी भरने चला गया, तो कुत्ता चख गया।

जोगिन—यहाँ की बिल्ली और कुत्ते बड़े लागू हैं !

सलारबख्श—कुछ न पूछिए।

इतने में किसी ने दरवाज़े पर हाथ मारा।

सलारबख्स—कौन साहब हैं ?

वकील—देखो, मामू साहब न हों। कह देना, घर में नहीं हैं।

सलारबख्श—हुज़ूर, वह है मम्मन तेली।

वकील—कह दो, हम तेल-वेल न लेंगे। रात को हमारे यहाँ मोमबत्तियाँ जलती हैं, और खाने में तेल आता नहीं। फिर तेली का यहाँ क्या काम ?

सलारबख्श—मुक़दमा लाया है हुज़ूर !

तेली मैले-कुचैले कपड़े पहने हाथ में कुप्पी लिये आ कर बैठ गया।

वकील—क्या माँगता है ?

तेली—एक आदमी ने हम पर नालिश कर दी है हुज़ूर ! अब आप ही बचावें तो बच सकता हूँ।

वकील—मेहनताना क्या दोगे ?

सलारबख्श—हाय, हाय, पहले इसकी फ़रियाद तो सुनो कि वह कहता क्या है ! बस, मुर्दा दोज़ख़ में जाय चाहे बिहिश्त में, आपको अपने हलवे-माँडे से काम। बताओ भई, क्या दोगे ?

तेली—एक पली तेल।

वकील—निकाल दो इसे, निकाल दो !

तेली—अच्छा साहब, तीन पली ले लो।

सलारबख्श—अच्छा, आधी कुप्पी तेल दे दो। बस, इतना कहना मानो।

वकील—हैं-हैं, क्यों शरह बिगाड़ते हो ? तुम जाओ जी !

सलारबख्श—पहले देखिए तो ! राज़ी भी होता है ?

तेली आधी कुप्पी तेल देने पर राज़ी न हुआ और चला गया ? थोड़ी देर के बाद सलारबख्श ने दबी जबान कहा—हुजूर शाम को क्या पकेगा ?

वकील—अबे, शाम तो हो गयी । अब क्या पकेगा ?

सलारबख्श—खुदावंद, इस तरह तो मैं टें हो जाऊँगा । आप न खायँ, हमारे वास्ते तो बतला दीजिए ।

वकील—अपने वास्ते छिछड़े ले आ जा कर ।

सलारबख्श—(आहिस्ता से) वे भी बचने जो पावें आपसे ।

जोगिन को हँसी आ गयी । वकील ने कहा—मेरी बात पर हँसती होगी ? मैं ऐसी ही कहता हूँ । इस पर जोगिन को और भी हँसी आयी ।

वकील—अल्लाह री शोखी—

> खूब रू जितने हैं दिल लेती है सबकी शोखी;
> है मगर आपकी शोखी तो ग़ज़ब की शोखी !

रात को जोगिन ने अपने पास से पैसे दे कर बाज़ार से खाना मँगवाया, और खा कर सोयी । सुबह को वकील साहब की नींद खुली, तो देखा, जोगिन का कहीं पता नहीं । घर भर में छान मारा । हाथ-पाँव फूल गये । बोले—सलारू ग़ज़ब हो गया ! हमारी क़िस्मत फूट गयी ।

सलारबख्श—फूट गयी खुदावंद, आपकी क़िस्मत फूट गयी ।

वकील—फिर अब ?

सलारबख्श—क्या अर्ज़ करूँ हुजूर !

वकील—घर भर में तो देख चुके न तुम ?

सलारबख्श—हाँ और तो सब देख चुका, अब एक परनाला बाक़ी है, वहाँ आप झाँक लें ।

६३

ज़माना भी गिरगिट की तरह रंग बदलता है। वही अलारक्खी जो इधर-उधर ठोकरें खाती-फिरती थी, जो जोगिन बनी हुई एक गाँव में पड़ी थी, आज सुरैया बेगम बनी हुई सरकस के तमाशे में बड़े ठाट से बैठी हुई है। यह सब रुपये का खेल है।

सुरैया बेगम—क्यों महरी, रोशनी काहे की है? न लैंप, न झाड़, न कँवल और सारा खेमा जगमगा रहा है।

महरी—हुजूर, अक़्ल काम नहीं करती, जादू का खेल है। बस, दो अंगारे जला दिये और दुनिया भर जगमगाने लगी।

सुरैयाबेगम—दारोग़ा कहाँ हैं? किसी से पूछें तो कि रोशनी काहे की है?

महरी—हुजूर, वह तो चले गये।

सुरैया बेगम—क्या बाजा है, वाह-वाह!

महरी—हुजूर, गोरे बजा रहे हैं।

सुरैया बेगम—जरा घोड़ों को तो देखो, एक से एक बढ़-चढ़ कर हैं। घोड़े क्या, देव हैं। कितना चौड़ा माथा है और जरा सी थुँथनी! कितनी थोड़ी सी जमीन में चक्कर देते हैं! वल्लाह, अक़्ल दंग है!

महरी—बेगमसाहब, कमाल है।

सुरैया बेगम—इन मेमों का जिगर तो देखो, अच्छे-अच्छे शहसवारों को मात करती हैं।

महरी—सच है हुजूर, यह सब जादू के खेल हैं।

सुरैया बेगम—मगर जादूगर भी पक्के हैं।

महरी—ऐसे जादूगरों से ख़ुदा समझे।

इस पर एक औरत जो तमाशा देखने आयी थी, चिढ़ कर बोली—ऐ वाह, यह बेचारे तो हम सबका दिल ख़ुश करें, और आप कोसें! आख़िर उनका क़ुसूर क्या है; यही न कि तमाशा दिखाते हैं?

महरी—यह तमाशेवाले तुम्हारे कौन हैं?

औरत—तुम्हारे कोई होंगे।

महरी—फिर तुम चिटकीं तो क्यों चिटकीं?

औरत—बहन, किसी को पीठ-पीछे बुरा न कहना चाहिए।

महरी—ऐ, तो तुम बीच में बोलनेवाली कौन हो?

औरत—तुम सब तो जैसे लड़ने आयी हो। बात की, और मुँह नोच लिया।

सुरैया बेगम के साथ महरी के सिवा और भी कई लौंडियाँ थी, उनमें एक का नाम अब्बासी था। वह निहायत हसीना और बला की शोख़ थी। उन सबों ने मिल कर इस औरत को बनाना शुरू किया—

महरी—गाँव की मालूम होती हैं !

अब्बासी—गँवारिन तो हैं ही, यह भी कहीं छिपा रहता है ?

सुरैया बेगम—अच्छा, अब बस, अपनी ज़बान बंद करो। इतनी मेमें बैठी हैं, किसी की ज़बान तक न हिली। और हम आपस में कटी मरती हैं।

इतने में सामने एक जीब्रा लाया गया। सुरैया बेगम ने कहा—यह कौन जानवर है ? किसी मुल्क का गधा तो नहीं है ? चूँ तक नहीं करता। कान दबा दौड़ा जाता है।

अब्बासी—हुज़ूर, बिलकुल बस में कर लिया।

महरी—इन फिरंगियों की जो बात है, अनोखी, ज़रा इस मेम को तो देखिए, अच्छे-अच्छे शहसवारों के कान काटे।

सवार लेडी ने घोड़े पर ऐसे-ऐसे करतब दिखाये कि चारों तरफ़ तालियाँ पड़ने लगीं। सुरैया बेगम ने भी खूब तालियाँ बजायीं। ज़नाने दरजे के पास ही दूसरे दरजे में कुछ और लोग बैठे थे। बेगम साहब को तालियाँ बजाते सुना तो एक रँगीले शेख़ जी बोले—

कोई माशूक़ है इस परदए ज़ंगारी में।

मिरज़ा साहब—रगों में शोख़ी कूट-कूट कर भरी है।

पंडित जी—शौक़ीन मालूम होती हैं।

शेख़ जी—वल्लाह, अब तमाशा देखने को जी नहीं चाहता।

मिरज़ा साहब—एक सूरत नजर आयी।

पंडित जी—तुम बड़े ख़ुशनसीब हो।

ये लोग तो यों चहक रहे थे। इधर सरकस में एक बड़ा कठघरा लाया गया, जिसमें तीन शेर बंद थे। शेरों के आते ही चारों तरफ़ सन्नाटा छा गया। अब्बासी बोली—देखिए हुज़ूर, वह शेर जो बीचवाले कठघरों में बंद है, वही सबसे बड़ा है।

महरी—और ग़ुस्सेवर भी सबसे ज़्यादा। मालूम होता है कि आदमी का सिर निगल जायेगा।

सुरैया बेगम—कहीं कठघरा तोड़ कर निकल भागें तो सबको खा जायँ।

महरी—नहीं हुज़ूर, सधे हुए हैं। देखिए, वह आदमी एक शेर का कान पकड़ कर किस तौर पर उसे उठाता-बैठाता है। देखिए-देखिए हजूर, उस आदमी ने एक शेर को लिटा दिया और किस तरह पाँव से उसे रौंद रहा है।

अब्बासी—शेर क्या है, बिलकुल बिल्ली है। देखिए, अब शेर से उस आदमी की कुश्ती हो रही है। कभी शेर आदमी को पछाड़ता है, कभी आदमी शेर के सीने पर सवार होता है।

यह तमाशा कोई आध घंटे तक होता रहा। इसके बाद बीच में एक बड़ी मेज़ बिछायी गयी और उस पर बड़े-बड़े गोश्त के टुकड़े रखे गये। एक आदमी ने सींख को एक टुकड़े में छेद दिया और गोश्त को कठघरे में डाला। गोश्त का पहुँचना

था कि शेर उसके ऊपर ऐसा लपका जैसे किसी जिंदा जानवर पर शिकार करने के लिए लपकता है। गोश्त को मुँह में दबा कर बार-बार डकारता था और जमीन पर पटक देता था। जब डकारता, मकान गूँज जाता और सुननेवालों के रोंगटे खड़े हो जाते। बेगम ने घबरा कर कहा—मालूम होता है, शेर कटघरे से निकल भागा है। कहाँ हैं दारोग़ा जी, ज़रा उनको बुलाना तो!

बेगम साहब तो यहाँ मारे डर के चीख रही थीं और उनसे थोड़ी ही दूर पर वकील साहब और मियाँ सलारबख्श में तकरार हो रही थी—

वकील—रुक क्यों गया बे? बाहर क्यों नहीं चलता?

सलारबख्श—तो आप ही आगे बढ़ जाइए न!

वकील—तो अकेले हम कैसे जा सकते हैं?

सलारबख्श—यह क्यों? क्या भेड़िया खा जायगा? या पीठ पर लाद कर उठा ले जायगा, ऐसे दुबले पतले भी तो आप नहीं हैं। बैठिए तो काँख दे।

वकील—बग़ैर नौकर के जाना हमारी शान के खिलाफ़ है।

सलारबख्श—तो आपका नौकर कौन है? हम तो इस वक़्त मालिक मालूम होते हैं?

वकील—अच्छा, बाहर निकल कर इसका जवाब दूँगा; देख तो सही!

सलारबख्श—अजी, जाओ भी; जब यहाँ ही जवाब न दिया तो बाहर क्या बनाओगे? अब चुपके ही रहिए। नाहक़-बिन-नाहक़ को बात बढ़ेगी।

वकील—बस, हम इन्हीं बातों से तो ख़ुश होते हैं।

सलारबख्श—ख़ुदा सलामत रखे हुजूर को। आपकी बदौलत हम भी दो गाल हँस-बोल लेते हैं।

वकील—यार, किसी तरह इस सुरैया बेगम का पता तो लगाओ कि यह कौन हैं। शिब्बोजान तो चकमा देकर चली गयीं; शायद यही निक़ाह पर राज़ी हो जायँ!

सलारबख्श—जरूर! और ख़ूबसूरत भी आप ऐसे ही हैं।

सुरैया बेगम चुपके-चुपके ये बातें सुनती और दिल ही दिल में हँसती जाती थी। इतने में एक ख़ूबसूरत जवान नज़र पड़ा। हाँथ-पाँव साँचे के ढले हुए, मसें भीगती हुईं, मियाँ आज़ाद से सूरत बिलकुल मिलती थी। सुरैया बेगम की आँखों में आँसू भर आये। अब्बासी से कहा—जरी, दारोग़ा साहब को बुलाओ। अब्बासी ने बाहर आ कर देखा तो दारोग़ा साहब हुक्का पी रहे हैं। कहा—चलिए, नादिरी हुक्म है कि अभी-अभी बुला लाओ।

दारोग़ा—अच्छा-अच्छा। चलते हैं। ऐसी भी क्या जल्दी है! ज़रा हुक्क़ा तो पी लेने दो।

अब्बासी—अच्छा, न चलिए, फिर हमको उलाहना न दीजिएगा! हम जताये जाते हैं।

दारोग़ा—(हुक्क़ा पटक कर) चलो साहब, चलो। अच्छी नौकरी है, दिन-रात

गुलामी करो तब भी चैन नहीं। यह महीना खत्म हो ले तो हम अपने घर की राह लें।

दारोग़ा साहब जब सुरैया बेगम के पास पहुँचे तो उन्होंने आहिस्ता से कहा—वह जो कुर्सी पर एक जवान काले कपड़े पहन कर बैठा हुआ है, उसका नाम जा कर दर्याफ़्त करो। मगर आदमियत से पूछना।

दारोग़ा—या खुदा, हुजूर बड़ी कड़ी नौकरी बोलीं। गुलाम को ये सब बातें याद क्योंकर रहेंगी। जैसा हुक्म हो।

अब्बासी—ऐ, तो बातें कौन ऐसी लम्बी-चौड़ी हैं जो याद न रहेंगी?

दारोग़ा—अरे भाई, हममें-तुममें फ़र्क़ भी तो है! तुम अभी सत्रह-अठारह वर्ष की हो और यहाँ बिलकुल सफ़ेद हो गये हैं। खैर, हुजूर, जाता हूँ।

दारोग़ा साहब ने जवान के पास जा कर पूछा तो मालूम हुआ कि उनका नाम मियाँ आज़ाद है। बेगम साहब ने आज़ाद का नाम सुना तो मारे खुशी के आँखों में आँसू भर आये। दारोग़ा को हुक्म दिया, जा कर पूछ आओ, अलारक्खी को भी आप जानते हैं? आज नमक का हक़ अदा करो। किसी तरकीब से इनको मकान तक लाओ।

दारोग़ा साहब समझ गये कि इस जवान पर बीवी का दिल आ गया। अब खुदा ही खैर करे। अगर अलारक्खी का ज़िक्र छेड़ा और ये बिगड़ गये तो बड़ी किरकिरी होगी। और अगर न जाऊँ तो यह निकाल बाहर करेंगी। चले, पर हर क़दम पर सोचते जाते थे कि न जाने क्या आफ़त आये। जा कर जवान के पास एक कुर्सी पर बैठ गये और बोले—एक अर्ज़ है हुजूर, मगर शर्त यह है कि आप खफ़ा न हों। सवाल के जवाब में सिर्फ़ 'हाँ' या 'नहीं' कह दें।

जवान—बहुत खूब! 'हाँ' कहूँगा या 'नहीं'।

दारोग़ा—हुजूर का गुलाम हूँ।

जवान—अजी, आप इतना इसरार क्यों करते हैं, आपको जो कुछ कहना हो कहिए। मैं बुरा न मानूँगा।

दारोग़ा—एक बेगम साहब पूछती हैं कि हुजूर अलारक्खी के नाम से वाक़िफ़ हैं?

जवान—बस, इतनी ही बात! अलारक्खी को मैं खूब जानता हूँ। मगर यह किसने पूछा है?

दारोग़ा—कल सुबह को आप जहाँ कहें, वहाँ आ जाऊँ। सब बातें तय हो जायँगी।

जवान—हज़रत, कल तक की खबर न लीजिए, वरना आज रात को मुझे नींद न आयेगी।

दारोग़ा ने जा कर बेगम साहब से कहा—हुजूर वह तो इसी वक़्त आने को कहते हैं। क्या कह दूँ! बेगम बोलीं—कह दो, ज़रूर साथ चलें।

उसी जगह एक नवाब अपने मुसाहबों के साथ बैठे तमाशा देख रहे थे।

नवाब ने फ़रमाया—क्यों मियाँ नत्थू, यह क्या बात निकाली है कि जिस जानवर को देखो, बस में आ गया। अक़्ल काम नहीं करती।

नत्थू—ख़ुदावंद, बस बात सारी यह है कि ये लोग अक़्ल के पुतले हैं। दुनिया के परदे पर कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसका इल्म इनके यहाँ न हो। चिड़िया का इल्म इनके यहाँ, हल चलाने का इल्म इनके यहाँ, गाने-बजाने का इल्म इनके यहाँ। कल जो बारहदरी की तरफ़ से हो कर गुज़रा तो देखा, बहुत से आदमी जमा हैं। इतने में अँगरेजी बाजा बजने लगा तो हुज़ूर, जो गोरे बाजा बजाते थे, उनके सामने एक एक किताब खुली हुई थी। मगर बस, धोंतू, धोंतू, ! इसके सिवा कोई बोल ही सुनने में नहीं आया।

मिरज़ा—हुज़ूर के सवाल का जवाब तो दो! हुज़ूर पूछते हैं कि जानवरों को बस में क्योंकर लाये!

नत्थू—कहा न कि इनके यहाँ हर बात का इल्म है। इल्म के ज़ोर से देखा होगा कि कौन जानवर किस पर आशिक़ है। बस, वही चीज़ मुहैया कर ली।

नवाब—तसल्ली नहीं हुई। कोई ख़ास वजह ज़रूर है।

नत्थू—हुज़ूर, हिंदोस्तान का नट भी वह काम करता है जो किसी और से न हो सके। बाँस गाड़ दिया, ऊपर चढ़ गया और अँगूठे के ज़ोर से खड़ा हो गया।

मिरज़ा—हुज़ूर गुलाम ने पता लगा लिया। जो कभी झूठ निकले तो नाक कटवा डालूँ। बस, हम समझ गये। हुज़ूर आज तक कोई बड़े से बड़ा पहलवान भी शेर से नहीं लड़ सका। मगर इस जवान की हिम्मत को देखिए कि अकेला तीन-तीन शेरों से लड़ता रहा। यह आदमी का काम नहीं है, और अगर है तो कोई आदमी कर दिखाये! हुज़ूर के सिर की क़सम, यह जादू का खेल है। वल्लाह, जो इसमें फ़र्क़ हो तो नाक कटवा डालूँ।

नवाब—सुभान-अल्लाह, बस यही बात है।

नत्थू—हाँ, यह माना। यहाँ पर हम भी क़ायल हो गये। इंसाफ़ शर्त है।

नवाब—और नहीं तो क्या, ज़रा सा आदमी, और आधे दर्जन शेरों से कुश्ती लड़े! ऐसा हो सकता है भला! शेर लाख कमजोर हो जाय, फिर शेर है। ये सब जादू के जोर से शेर, रीछ और सब जानवर दिखा देते हैं। असल में शेर-वेर कुछ भी नहीं हैं। सब जादू ही जादू है।

नत्थू—हुज़ूर हर तरह से रुपया खींचते हैं। हुज़ूर के सिर की क़सम। हिंदोस्तानी इससे अच्छे शेर बना कर दिखा दें। क्या यहाँ जादूगरी है ही नहीं? मगर क़दर तो कोई करता ही नहीं। हुज़ूर, ज़रा ग़ौर करते तो मालूम हो जाता कि शेर लड़ते तो थे, मगर पुतलियाँ नहीं फिरती थीं। बस, यहाँ मालूम हो गया कि जादू का खेल है।

ज़बरख़ाँ—वल्लाह, मैं भी यही कहनेवाला था। मियाँ नत्थू मेरे मुँह से बात छीन ले गये।

नत्थू—भला शेरों को देख कर किसी को डर लगता था ? ईमान से कहिएगा।

ज़बरखाँ—मगर जब जादू का खेल है तो शेर से लड़ने में कमाल ही क्या है ?

नवाब—और सुनिए, इनके नज़दीक कुछ कमाल ही नहीं ! आप तो वैसे शेर बना दीजिए ! क्या दिल्लगीबाज़ी है ? कहने लगे, इसमें कमाल ही क्या है।

मिरजा—हुज़ूर यह ऐसे ही बेपर की उड़ाया करते हैं।

नत्थू—जादू के शेरों से न लड़े तो क्या सचमुच के शेरों से लड़ें ? वाह री आपकी अक़्ल !

नवाब—कहिए तो उससे, जो समझदार हो। बेसमझ से कहना फ़ज़ूल हैं।

नत्थू—हुज़ूर, कमाल यह है कि हज़ारों आदमी यहाँ बैठे हैं, मगर एक की समझ में न आया कि क्या बात है।

नवाब—समझे तो हमीं समझे !

मिरजा—हुज़ूर की क्या बात है। वल्लाह, खूब समझे !

इतने में एक खिलाड़ी ने एक रीछ को अपने ऊपर लादा और दूसरे की पीठ पर एक पाँव से सवार हो कर उसे दौड़ाने लगा। लोग दंग हो गये। सुरैया बेगम ने उस आदमी को पचास रुपये इनाम दिये।

वकील साहब ने यह कैफ़ियत देखी तो सुरैया बेगम का पता लगाने के लिए बेक़रार हो गये। सलारबख़्श से कहा—भैया सलारू, इस बेगम का पता लगाओ। कोई बड़ी अमीर-कबीर मालूम होती है।

सलारबख़्श—हमें तो यह अफ़सोस है कि तुम भालू क्यों न हुए। बस, तुम इसी लायक़ हो कि रस्सों से जकड़ कर दौड़ाये।

वकील—अच्छा बचा, क्या घर न चलोगे ?

सलारबख़्श—चलेंगे क्यों नहीं, क्या तुम्हारा कुछ डर पड़ा है ?

वकील—मालिक से ऐसी बातें करता है ? मगर यार, सुरैया बेगम का पता लगाओ।

मियाँ आज़ाद नवाब और वकील दोनों की बातें सुन-सुन कर दिल ही दिल में हँस रहे थे। इतने में नवाब साहब ने आज़ाद से पूछा—क्यों जनाब, यह सब नज़रबंदी है या कुछ और ?

आज़ाद—हज़रत, यह सब तिलस्मात का खेल है। अक़्ल काम नहीं करती।

नवाब—सुना है, पाँच कोस के उधर का आदमी अगर आये तो उस पर जादू का खाक असर न हो।

आज़ाद—मगर इनका जादू बड़ा कड़ा जादू है। दस मंजिल का आदमी भी आये तो चकमा खा जाये।

नवाब—आपके नज़दीक वह कौन अँगरेज बैठा था ?

आज़ाद—जनाब, अँगरेज और हिंदोस्तानी कहीं नहीं हैं। सब जादू का खेल है।

नवाब—इनसे जादू सीखना चाहिए।

आज़ाद—ज़रूर सीखिए। हज़ार काम छोड़ कर।

जब तमाशा ख़त्म हो गया तो सुरैया बेगम ने आज़ाद को बहुत तलाश कराया, मगर कहीं उनका पता न चला। वह पहले ही एक अँगरेज के साथ चल दिये थे। बेगम ने दारोग़ा जी को खूब डाँटा और कहा—अगर तुम उन्हें न लाओगे तो तुम्हारी खाल खिंचवा कर उसमें भुस भरूँगी!

६४

सुरैया बेगम मियाँ आज़ाद की जुदाई में बहुत देर तक रोया कीं, कभी दारोग़ा पर झल्लायीं, कभी अब्बासी पर बिगड़ीं, फिर सोचतीं कि अलारक्खी के नाम से नाहक़ बुलवाया, बड़ी भूल हो गयी; कभी ख़याल करतीं की वादे के सच्चे हैं, क़ल शाम को ज़रूर आयेंगे, हज़ार काम छोड़ के आयेंगे। रात भींग गयी थी, महरियाँ सो रही थीं, महलदार ऊँघता था, शहर-भर में सन्नाटा था; मगर सुरैया बेगम की नींद मियाँ आज़ाद ने हराम कर दी थी—

भरे आते हैं आँसू आँख में ऐ यार क्या बाइस,
निकलते हैं सदफ़ से गौहरे शहवार क्या बाइस ?

सारी रात परेशानी में गुजरी, दिल बेक़रार था, किसी पहलू चैन नहीं आता था, सोचतीं कि अगर मियाँ आज़ाद वादे पर न आये तो कहाँ ढूँढूँगी, बूढ़े दारोग़ा पर दिल ही दिल में झल्लाती थीं कि पता तक नहीं पूछा। मगर आज़ाद तो पक्का वादा कर गये थे, लौट कर ज़रूर मिलेंगे, फिर ऐसे बेदर्द कैसे हो गये कि हमारा नाम भी सुना और परवा न की। यह सोचते-सोचते उन्होंने यह ग़ज़ल गानी शुरू की—

न दिल को चैन मर कर भी हवाए यार में आये;
तड़प कर ख़ुल्द से फिर कूचए दिलदार में आये।
अजब राहत मिली, कुछ दीन-दुनिया की नहीं परवा;
जुनूँ के साया में पहुँचे बड़ी सरकार में आये।
एवज़ जब एक दिल के लाख दिल हों मेरे पहलू में;
तड़पने का मज़ा तब फ़ुरक़ते दिलदार में आये।
नहीं परवा, हमारा सिर जो कट जाये तो कट जाये;
थके बाजू न क़ातिल का न बल तलवार में आये।
दमे-आख़िर वह पोंछे अश्क 'सफ़दर' अपने दामन से;
इलाही रहम इतना तो मिज़ाजे यार में आये।

सुरैया बेगम को सारी रात जागते गुज़री। सवेरे दारोग़ा ने आ कर सलाम किया।

बेगम—आज का इक़रार है न ?

दारोग़ा—हाँ हुज़ूर, ख़ुदा मुझे सुर्ख़रू करे। अलारक्खी का नाम सुन कर तो वह बेख़ुद हो गये। क्या अर्ज़ करूँ हुज़ूर !

बेगम—अभी जाइए और चारों तरफ़ तलाश कीजिए।

दारोग़ा—हुज़ूर, ज़रा सवेरा तो हो ले, दो-चार आदमियों से मिलूँ, पूछूँ-बूछूँ, तब तो मतलब निकले। यों उटक्करलैस किस मुहल्ले में जाऊँ और किससे पूछूँ ?

अब्बासी—हुज़ूर, मुझे हुक्म हो तो मैं भी तलाश करूँ। मगर भारी सा जोड़ा लूँगी।

बेगम—जोड़ा ? अल्लाह जानता है, सिर से पाँव तक ज़ेवर से लदी होगी।

बी अब्बासी बन-ठन कर चलीं और उधर दारोग़ा जी मियाने पर लद कर रवाना हुए। अब्बासी तो खुश-खुश जाती थी और यह मुँह बनाये सोच रहे थे कि जाऊँ तो कहाँ जाऊँ ? अब्बासी लहँगा फड़काती हुई चली जाती थी कि राह में एक नवाब साहब की एक महरी मिली। दोनों में घुल-घुल कर बातें होने लगीं।

अब्बासी—कहो बहन, खुश तो हो ?

बन्नू—हाँ बहन, अल्लाह का फ़ज़ल है। कहाँ चलीं ?

अब्बासी—कुछ न पूछो बहन, एक साहब का पता पूछती फिरती हूँ।

बन्नू—कौन हैं, मैं भी सुनूँ।

अब्बासी—यह तो नहीं जानती, पर नाम है मियाँ आज़ाद। खासे घबरू जवान हैं।

बन्नू—अरे, उन्हें मैं खूब जानती हूँ। इसी शहर के रहनेवाले हैं। मगर हैं बड़े नटखट, सामने ही तो रहते हैं। कहीं रीझी तो नहीं हो ? है तो जवान ऐसा ही।

अब्बासी—ऐ, हटो भी ? यह दिल्लगी हमें नहीं भाती।

बन्नू—लो, यह मकान आ गया। बस, इसी में रहते हैं ! जोरू न जाँता, अल्लाह मियाँ से नाता।

बन्नू तो अपनी राह गयी, अब्बासी एक गली में हो कर एक बुढ़िया के मकान पर पहुँची। बुढ़िया ने पूछा—अब किस सरकार में हो जी !

अब्बासी—सुरैया बेगम के यहाँ।

बुढ़िया—और उनके मियाँ का क्या नाम है ?

अब्बासी—जो तजवीज करो।

बुढ़िया—तो क्वाँरी हैं या बेवा ! कोई जान-पहचान मुलाक़ाती है या कोई नहीं है ?

अब्बासी—एक बूढ़ी सी औरत कभी-कभी आया करती हैं। और तो हमने किसी को आते-जाते नहीं देखा।

बुढ़िया—कोई देवज़ाद भी आता-जाता है ?

अब्बासी—क्या मजाल ! चिड़िया तक तो पर नहीं मार सकती ? इतने दिनों में सिर्फ़ कल तमाशा देखने गयी थीं।

बुढ़िया—ऐ लो, और सुनो ! तमाशा देखने जाती है और फिर कहती हो कि ऐसी-वैसी नहीं हैं ? अच्छा, हम टोह लगा लेंगी।

अब्बासी—उन्होंने तो क़सम खायी है कि शादी ही न करूँगी, और अगर करूँगी भी तो एक खूबसूरत जवान के साथ जो आपका पड़ोसी है। मियाँ आज़ाद नाम है।

बुढ़िया—अरे, यह कितनी बड़ी बात है ! गो मैं वहाँ बहुत कम आती-जाती हूँ, पर वह मुझे खूब जानते हैं। बिल्कुल घर का सा वास्ता है। तुम बैठो, मैं अभी आदमी भेजती हूँ।

वह कह कर बुढ़िया ने एक औरत को बुला कर कहा—छोटे मिरज़ा के पास जाओ और कहो कि आपको बुलाती हैं। या तो हमको बुलाइए या ख़ुद आइए।

इस औरत का नाम मुबारक क़दम था। उसने जा कर मिरज़ा आज़ाद को बुढ़िया का पैग़ाम सुनाया—हुज़ूर, वह ख़बर सुनाऊँ कि आप भी फड़क जायँ। मगर इनाम देने का वादा कीजिए।

आज़ाद—आज़ाद नहीं, अगर मालामाल न कर दें।

मुबारक—उछल पड़िएगा।

आज़ाद—क्या कोई रक़म मिलनेवाली है ?

मुबारक—अजी, वह रक़म मिले कि नवाब हो जाओ। एक बेगम साहबा ने पैग़ाम भेजा है। बस, आप मेरी बुढ़िया के मकान तक चले चलिए।

आज़ाद—उनको यहीं न बुला लाओ।

मुबारक—मैं बैठी हूँ, आप बुलवा लीजिए।

थोड़ी देर में बुढ़िया एक डोली पर सवार आ पहुँची और बोली—क्या इरादे हैं ? कब चलिएगा ?

आज़ाद—पहले कुछ बातें तो बताओ। हसीन है न ?

बुढ़िया—अजी, हुस्न तो वह है कि चाँद भी मात हो जाय, और दौलत का तो कोई ठिकाना नहीं; तो कब चलने का इरादा है ?

आज़ाद—पहले ख़ूब पक्का-पोढ़ा कर लो, तो मुझे ले चलो। ऐसा न हो कि वहाँ चल कर झेंपना पड़े।

हमारे मियाँ आज़ाद और इस मिरज़ा आज़ाद में नाम के सिवा और कोई बात नहीं मिलती थी। वह जितने ही दिलेर, ईमानदार, सच्चे आदमी थे; उतने ही यह फ़रेबी, जालिये और बदनियत थे। बहुत मालदार तो थे नहीं; मगर सवा सौ रुपये वसीक़े के मिलते थे। अकेला दम, न कोई अज़ीज़, न रिश्तेदार; पल्ले सिरे के बदमाश, चोरों के पीर, उठाईगीरों के लँगोटिये यार, डाकुओं के दोस्त, गिरहकटों के साथी। किसी की जान लेना इनके बायें हाथ का करतब था। जिससे दोस्ती की, उसी की गरदन काटी। अमीर से मिल-जुल कर रहना और उसकी घुड़की-झिड़की सहना, इनका ख़ास पेशा था। लेकिन जिसके यहाँ दख़ल पाया, उसको या तो लँगोटी बँधवा दी या कुछ ले-दे के अलग हुए। शहर के महाजन और साहूकार इनसे थरथर काँपते रहते! जिस महाजन से जो माँगा, उसने हाज़िर किया और जो इनकार किया तो दूसरे रोज़ चोरी हो गयी। इनके मिज़ाज की अजब कैफ़ियत थी। बच्चों में बच्चे, बूढ़ों में बूढ़े, जवानों में जवान। कोई बात ऐसी नहीं जिसका उन्हें तजर्बा न हो। एक साल तक फौज में भी नौकरी की थी। वहाँ आपने एक दिन यह दिल्लगी की कि रिसाले के बीस घोड़ों की अगाड़ी-पिछाड़ी खोल डाली। घोड़े हिनहिना कर लड़ने लगे। सब लोग पड़े सो रहे थे। घोड़े जो खुले, तो सब के सब चौंक पड़े। एक बोला—लेना-लेना! चोर-चोर! पकड़ लेना, जाने न पाये। बड़ी मुश्किल से चंद घोड़े पकड़े गये। कुछ ज़ख़्मी हुए, कुछ भाग गये। अब तहक़ीक़ात शुरू हुई। मिरज़ा आज़ाद भी सबके साथ हमदर्दी करते थे और उस बदमाश पर बिगड़ रहे थे जिसने घोड़े छोड़े थे। अफ़सर से बोले—यह शैतान का काम है, ख़ुदा की क़सम।

अफ़सर—उसकी गोशमाली की जायगी।

आज़ाद—वह इसी लायक़ है। मिल जाय तो चचा ही बना कर छोड़ूँ!

ख़ैर, एक बार एक दफ़्तर में आप क्लर्क हो गये। एक दिन आपको दिल्लगी सूझी, सब अमलों के जूते उठा कर दरिया में फेंक दिये। सरिश्तेदार उठे, इधर-उधर जूता ढूँढ़ते हैं, कहीं पता ही नहीं। नाज़िर उठे, जूता नदारद। पेशकार को साहब ने बुलाया, देखते हैं तो जूता ग़ायब।

पेशकार—अरे भाई, कोई साहब जूता ही उड़ा ले गये।

चपरासी—हुज़ूर, मेरा जूता पहन लें।

पेशकार—वाह, अच्छा लाला विशुनदयाल, ज़रा अपना बूट तो उतार दो।

लाला विशुनदयाल पटवारी थे। इनका लक्कड़तोड़ जूता पहन कर पेशकार साहब बड़े साहब के इजलास पर गये।

साहब—वेल-वेल पेशकार, आज बड़ा अमीर हो गया। बहुत बड़ा क़ीमती बूट पहना है।

पेशकार—हुजूर, कोई साहब जूता उड़ा ले गये। दफ़्तर में किसी का जूता नहीं बचा।

बड़े साहब तो मुस्करा कर चुप हो गये; मगर छोटे साहब बड़े दिल्लगीबाज़ आदमी थे। इजलास से उठ कर दफ्तर में गये तो देखते हैं कि क़हक़हे पर क़हक़हा पड़ रहा है। सब लोग अपने-अपने जूते तलाश रहे हैं। छोटे साहब ने कहा—हम उस आदमी को इनाम देना चाहते हैं जिसने यह काम किया। जिस दिन हमारा जूता ग़ायब कर दे, हम उसको इनाम दें।

आज़ाद—और अगर हमारा जूता ग़ायब कर दे तो हम पूरे महीने की तनख्वाह दे दें।

एक बार मिरज़ा आज़ाद एक हिंदू के यहाँ गये। वह इस वक़्त रोटी पका रहे थे। आपने चुपके से जूता उतारा और रसोई में जा बैठे, ठाकुर ने डाँट कर कहा—एँ, यह क्या शरारत!

आज़ाद—कुछ नहीं, हमने कहा, देखें, किस तदबीर से रोटी पकाते हो।

ठाकुर—रसोई जूठी कर दी!

आज़ाद—भई, बड़ा अफ़सोस हुआ। हम यह क्या जानते थे। अब यह खाना बेकार जायगा?

ठाकुर—नहीं जी, कोई मुसलमान खा लेगा।

आज़ाद—तो हमसे बढ़ कर और कौन है?

आज़ाद बिस्मिल्लाह कह कर थाली में हाथ डालने को थे कि ठाकुर ने ललकारा—हैं-हैं, रसोई तो जूठी कर चुके, अब क्या बरतनों पर भी दाँत है?

ख़ैर, आज़ाद ने पत्तों में खाना खाया और दुआ दी कि ख़ुदा करे, ऐसा एक उल्लू रोज़ फँस जाये।

डोम-धारी, तबलिये, गवैये, कलावंत, कथक, कोई ऐसा न था जिससे मिरज़ा आज़ाद से मुलाक़ात न हो। एक बार एक बीनकार को दो सौ रुपये इनाम दिये। तब से उस गिरोह में इनकी धाक बैठ गयी थी। एक बार आप पुलीस के इंस्पेक्टर के साथ जाते थे। दोनों घोड़ों पर सवार थे। आज़ाद का घोड़ा टर्रा था और इनसे बिना मज़ाक के रहा न जाये। चुपके से उतर पड़े। घोड़ा हिनहिनाता हुआ इंस्पेक्टर साहब के घोड़े की तरफ चला? उन्होंने लाख सँभाला, लेकिन गिर ही पड़े। पीठ में बड़ी चोट आयी।

अब सुनिए, बुढ़िया और अब्बासी जब बेगम साहब के यहाँ पहुँचीं तो बेगम का कलेजा धड़कने लगा। फौरन कमरे के अंदर चली गयीं। बुढ़िया ने आ कर पूछा—हुजूर, कहाँ तशरीफ रखती हैं?

बेगम—अब्बासी, कहो क्या खबरें हैं?

अब्बासी—हुजूर के अक़बाल से सब मामला चौकस है।

बेगम—आते हैं या नहीं ? बस, इतना बता दो।

अब्बासी—हुजूर, आज तो उनके यहाँ एक मेहमान आ गये। मगर कल ज़रूर आयेंगे।

इतने में एक महरी ने आ कर कहा—दारोग़ा साहब आये हैं।

बेगम—आ गये ! जीते आये, बड़ी बात !

दारोग़ा—हाँ हुजूर, आपकी दुआ से जीता आया। नहीं तो बचने की तो कोई सूरत ही न थी।

बेगम—ख़ैर, यह बतलाओ, कहीं पता लगा ?

दारोग़ा—हुजूर के नमक की क़सम कि शहर का कोई मुकाम न छोड़ा।

बेगम—और कहीं पता न चला ? है न !

दारोग़ा—कोई कूचा, कोई गली ऐसी नहीं जहाँ तलाश न की हो।

बेगम—अच्छा, नतीजा क्या हुआ ? मिले या न मिले ?

दारोग़ा—हुजूर, सुना कि रेल पर सवार हो कर कहीं बाहर जाते हैं। फौरन गाड़ी किराये की और स्टेशन पर जा पहुँचा, मियाँ आज़ाद से चार आँखें हुई कि इतने में सीटी कूकी और रेल खड़खड़ाती हुई चली। मैं लपका कि दो-दो बातें कर लूँ, मगर अँगरेज ने हाथ पकड़ लिया।

बेगम—यह सब सच कहते हो न ?

दारोग़ा—झूठ कोई और बोला करते होंगे।

बेगम—सुबह से तो कुछ खाया न होगा ?

दारोग़ा—अगर एक घूँट पानी के सिवा कुछ और खाया हो तो क़सम ले लीजिए।

अब्बासी—हुजूर, हम एक बात बतायें तो इनकी शेख़ी अभी-अभी निकल जाये। कहारों को यहीं बुला कर पूछना शुरू कीजिए !

बेगम साहब को यह सलाह पसंद आयी। एक कहार को बुला कर तहक़ीक़ात करने लगीं।

अब्बासी—बचा, झूट बोले तो निकाल दिये जाओगे।

कहार—हुजूर, हमें जो सिखाया है, वह कह देते हैं।

अब्बासी—क्या कुछ सिखाया भी है ?

कहार—सुबह से अब तक सिखाया ही किये या कुछ और किया ? यहाँ से अपनी ससुराल गये। वहाँ किसी ने खाने को भी न पूछा तो वहाँ से एक मजलिस में गये। हिस्से लिये और चख कर बोले—कहीं ऐसी जगह चलो जहाँ किसी की निगाह न पड़े। हम लोगों ने नाके से बाहर एक तकिये में मियाना उतारा। दारोग़ा जी ने वहाँ नानबाई की दूकान से सालन और रोटी मँगा कर खायी। हम लोगों को चबैने के लिए पैसे दिये। दिन भर सोया किये। शाम को हुक्म दिया, चलो।

अब्बासी—दारोग़ा साहब, सलाम ! अजी, इधर देखिए दारोग़ा साहब !

बेगम—क्यों साहब, यह झूठ ! रेल पर गये थे ? बोलिए !

दारोग़ा—हुजूर, यह नमकहराम है, क्या अर्ज़ करूँ !

दारोगा का बस चलता तो कहार को जीता चुनवा देते, मगर बेबस थे। बेगम ने कहा—बस, जाओ। तुम किसी मसरफ़ के नहीं हो !

रात को अब्बासी बेगम साहब से मीठी-मीठी बातें कर रही थीं कि गाने की आवाज़ आयी। बेगम ने पूछा—कौन गाता है ?

अब्बासी—हुजूर, मुझे मालूम है। यह एक वकील हैं। सामने मकान है। वकील को तो नहीं जानती, मगर उनके यहाँ एक आदमी नौकर है, उसको ख़ूब जानती हूँ। सलारबख्श नाम है। एक दिन वकील साहब इधर से जाते थे। मैं दरवाज़े पर खड़ी थी। कहने लगे—महरी साहब, सलाम ! कहो, तुम्हारी बेगम साहब का नाम क्या है ? मैंने कहा, आप अपना मतलब कहिए, तो कहने लगे—कुछ नहीं, यों ही पूछता था।

बेगम—ऐसे आदमियों को मुँह न लगाया करो।

अब्बासी—मुख़तार है हुजूर, महताबी से मकान दिखायी देता है।

बेगम—चलो देखें तो, मगर वह तो न देख लेंगे ! जाने भी दो।

अब्बासी—नहीं हुजूर, उनको क्या मालूम होगा। चुपके से चल कर देख लीजिए। बेगम साहब महताबी पर गयीं तो देखा कि वकील साहब पलँग पर फैले हुए हैं और सलारू हुक्का भर रहा है। नीचे आयीं तो अब्बासी बोली—हुजूर, वह सलार-बख्श कहता था कि किसी पर मरते हैं।

बेगम—वह कौन थी ? ज़रा नाम तो पूछना।

अब्बासी—नाम तो बताया था, मगर मुझे याद नहीं है। देखिए, शायद ज़ेहन में आ जाय। आप दस-पाँच नाम तो लें।

बेगम—नज़ीरबेगम, ज़ाफ़रीबेगम, हुसेनीख़ानम, शिब्बोख़ानम !

अब्बासी—(उछल कर) जी हाँ, यही, यही; मगर शिब्बोख़ानम नहीं, शिब्बो-जान बताया था।

सुरैया बेगम ने सोचा इस पगले का पड़ोस अच्छा नहीं, जुल देके चली आयी हूँ, ऐसा न हो, ताक-झाँक करे ! दरवाज़े तक आ ही चुका, अब्बासी और सलारू में बातचीत भी हुई; अब फ़क़त इतना मालूम होना बाक़ी है कि यही शिब्बोजान हैं। कहीं हमारे आदमियों पर यह भेद खुल जाय तो ग़ज़ब ही हो जाय। किसी तरह मकान बदल देना चाहिए। रात को तो इसी ख़याल में सो रहीं। सुबह को फिर वही धुन समायी कि आज़ाद आयें और अपनी प्यारी-प्यारी सूरत दिखायें। वह अपना हाल कहें, हम अपनी बीती सुनायें। मगर आज़ाद अब की मेरा यह ठाट देखेंगे तो क्या ख़याल करेंगे। कहीं यह न समझें कि दौलत पा कर मुझे भूल गयी। अब्बासी को बुला कर पूछा—तो आज कब जाओगी ?

अब्बासी—हुजूर, बस कोई दो घड़ी दिन रहे जाऊँगी और बात की बात में साथ ले कर आ जाऊँगी।

उधर मिरज़ा आज़ाद बन-ठन कर जाने ही को थे कि एक शाह साहब खट-पट करते हुए कोठे पर आ पहुँचे। आज़ाद ने झुक कर सलाम किया और बोले—आप खूब आये। बतलाइए, हम जिस काम को जाना चाहते हैं वह पूरा होगा या नहीं?

शाह—लगन चाहिए। धुन हो तो ऐसा कोई काम नहीं जो पूरा न हो।

आज़ाद—गुस्ताखी माफ़ कीजिए तो एक बात पूछूँ, मगर बुरा न मानिएगा!

शाह—गुस्ताखी कैसी, जो कुछ कहना हो शौक़ से कहो।

आज़ाद—उस पगली औरत से आपको क्यों मुहब्बत है?

शाह—उसे पगली न कहो, मैं उसकी सूरत पर नहीं, उसकी सीरत पर मरता हूँ। मैंने बहुत से औलिया देखे, पर ऐसी औरत मेरी नज़र से आज तक नहीं गुज़री। अलारक्खी सचमुच जन्नत की परी है। उसकी याद कभी न भूलेगी। उसका एक आशिक़ आप ही के नाम का था।

इन्हीं बातों में शाम हो गयी, आसमान पर काली घटाएँ छा गयीं और ज़ोर से मेंह बरसने लगा। आज़ाद ने जाना मुलतवी कर दिया। सुबह को आप एक दोस्त की मुलाक़ात को गये। वहाँ देखा कि कई आदमी मिल कर एक आदमी को बना रहे हैं और तालियाँ बजा रहे हैं। वह दुबला-पतला, मरा-पिटा आदमी था। इनको क़रीने से मालूम हो गया कि वह चंडूबाज़ है। बोले—क्यों भाई चंडूबाज़, कभी नौकरी भी की है?

चंडूबाज़—अजी हज़रत, उम्र भर डंड पेले और जोड़ियाँ हिलायीं। शाही में अब्बाजान की बदौलत हाथी-नशीन थे। अभी पारसाल तक हम भी घोड़े पर सवार हो कर निकलते थे। मगर जुए की लत थी, टके-टके को मुहताज हो गये। आखिर, सराय में एक भटियारी अलारक्खी के यहाँ नौकरी कर ली।

आज़ाद—किसके यहाँ?

चंडूबाज़—अलारक्खी नाम था। ऐसी खूबसूरत कि मैं क्या अर्ज़ करूँ।

आज़ाद—हाँ, रात को भी एक आदमी ने तारीफ़ की थी।

चंडूबाज़—तारीफ़ कैसी! तसवीर ही न दिखा दूँ?

यह कह कर चंडूबाज़ ने अलारक्खी की तसवीर निकाली।

आज़ाद—ओ-हो-हो!

> अजब है खींची मुसव्विर ने किस तरह तसवीर;
> कि शोखियों से वह एक रंग पर रहें क्योंकर!

चंडूबाज़—क्यों, है परी या नहीं?

आज़ाद—परी, परी, असली परी!

चंडूबाज़—उसी सराय में मियाँ आज़ाद नाम के एक शरीफ़ टिके थे। उन पर आशिक हो गयीं। बस, कुछ आप ही की सी सूरत थी।

आज़ाद—अब यह बताओ कि वह आजकल कहाँ है ?

चंडूबाज—यह तो नहीं जानते, मगर यहीं कहीं हैं। सराय से तो भाग गयी थीं।

आज़ाद ने ताड़ लिया कि अलारक्खी और सुरैया बेगम में कुछ न कुछ भेद ज़रूर है। चंडूबाज़ को अपने घर लाये और खूब चंडू पिलाया। जब दो-तीन छींटे पी चुके तो आज़ाद ने कहा—अब अलारक्खी का मुफ़स्सल हाल बताओ।

चंडूबाज़—अलारक्खी की सूरत तो आप देख ही चुके, अब उनकी सीरत का हाल सुनिए। शोख़, चुलबुली, चंचल, आगभभूका, तीखी चितवन, मगर हँसमुख। मियाँ आज़ाद पर रीझ गयीं। अब आज़ाद ने वादा किया कि निकाह पढ़वायेंगे, मगर क़ौल हार कर निकल गये। इन्होंने नालिश कर दी, पकड़ आये, मगर फिर भाग गये। इसके बाद एक बेगम हुस्नआरा थीं, उस पर रीझे। उन्होंने कहा—रूम की लड़ाई में नाम पैदा करके आओ तो हम निकाह पर राज़ी हों। बस, रूम की राह ली। चलते वक़्त उनकी अलारक्खी से मुलाक़ात हुई तो उनसे कहा—हुस्नआरा तुम्हें मुबारक हो, मगर हमको न भूल जाना। आज़ाद ने कहा—हरगिज़ नहीं।

आज़ाद—हुस्नआरा कहाँ रहती हैं ?

चंडूबाज़—यह हमें नहीं मालूम।

आज़ाद—अलारक्खी को देखो तो पहचान लो या न पहचानो ?

चंडूबाज़—फौरन पहचान लें। न पहचानना कैसा ?

मियाँ चंडूबाज़ तो पीनक लेने लगे। इधर अब्बासी मिरज़ा आज़ाद के पास आयी और कहा—अगर चलना है तो चले चलिए, वरना फिर आने जाने का ज़िक्र न कीजिएगा। आपके टालमटोल से वह बहुत चिढ़ गयी हैं। कहती हैं, आना हो तो आयें और न आना हो तो न आयें। यह टालमटोल क्यों करते हैं ?

आज़ाद ने कहा—मैं तैयार बैठा हूँ। चलिए।

यह कह कर आज़ाद ने गाड़ी मँगवायी और अब्बासी के साथ अंदर बैठे। चंडूबाज़ कोचबक्स पर बैठे। गाड़ी रवाना हुई। सुरैया बेगम के महल पर गाड़ी पहुँची तो अब्बासी ने अंदर जा कर कहा—मुबारक, हुजूर आ गये।

बेगम—शुक्र है !

अब्बासी—अब हुजूर चिक की आड़ बैठ जायँ।

बेगम—अच्छा, बुलाओ।

आज़ाद बरामदे में चिक के पास बैठे। अब्बासी ने कमरे के बाहर आ कर कहा—बेगम साहब फ़रमाती हैं कि हमारे सिर में दर्द है, आप तशरीफ़ ले जाइए।

आज़ाद—बेगम साहब से कह दीजिए कि मेरे पास सिर के दर्द का एक नायाब नुसखा है।

अब्बासी—वह फ़रमाती हैं कि ऐसे-ऐसे मदारी हमने बहुत चंगे किये हैं।

आज़ाद—और अपने सिर के दर्द का इलाज नहीं कर सकता !

बेगम—आपकी बातों से सिर का दर्द और बढ़ता है। खुदा के लिए आप मुझे इस वक़्त आराम करने दीजिए।

आज़ाद—हम ऐसे हो गये अल्लाह अकबर ऐ तेरी कुदरत ;

हमारा नाम सुन कर हाथ वह कानों प' धरते हैं।

या तो वह मज़े-मज़े की बातें थीं; और अब यह बेवफ़ाई !

बेगम—तो यह कहिए कि आप हमारे पुराने जाननेवालों में हैं। कहिए, मिज़ाज तो अच्छे हैं ?

आज़ाद—दूर से मिज़ाजपुर्सी भली मालूम नहीं होती।

बेगम—आप तो पहेलियाँ बुझवाते है। ऐ अब्बासी, यह किस अजनबी को सामने ला कर बिठा दिया ? वाह-वाह !

अब्बासी—(मुस्करा कर) हुज़ूर ज़बरदस्ती धँस पड़े।

बेगम—मुहल्लेवालों को इत्तिला दो।

आज़ाद—थाने पर रपट लिखवा दो और मुश्कें बँधवा दो।

यह कह कर आज़ाद ने अलारक्खी की तसवीर अब्बासी को दी और कहा—इसे हमारी तरफ़ से पेश कर दो। अब्बासी ने जा कर बेगम साहब को वह तसवीर दी। बेगम साहब तसवीर देखते ही दंग हो गयीं। ऍं, इन्हें यह तसवीर कहाँ मिली ? शायद यह तसवीर छिपा कर ले गये थे। पूछा—इस तसवीर की क्या क़ीमत है ?

आज़ाद—यह बिकाऊ नहीं है।

बेगम—तो फिर दिखायी क्यों ?

आज़ाद—इसकी क़ीमत देनेवाला कोई नज़र नहीं आता।

बेगम—कुछ कहिए तो, किस दाम की तसवीर है !

आज़ाद—हुज़ूर मिला लें। एक शाहज़ादे इस तसवीर के दो लाख रुपये देते थे।

बेगम—यह तसवीर आपको मिली कहाँ ?

आज़ाद—जिसकी यह तसवीर है उससे दिल मिल गया है।

बेगम—ज़री मुँह धो आइए।

इस फ़िक़रे पर अब्बासी कुछ चौंकी, बेगम साहब से कहा—ज़री हुज़ूर मुझे तो दें। मगर बेगम ने संदूकचा खोल कर तसवीर रख दी।

आज़ाद—इस शहर की अच्छी रस्म है। देखने को चीज़ ली और हज़म ! बी अब्बासी, हमारी तसवीर ला दो।

बेगम—लाखों कुदूरतें हैं, हजारों शिकायतें।

आज़ाद—किससे ?

कुदूरत उनको है मुझसे नहीं है सामना जब तक ;

इधर आँखें मिलीं उनसे उधर दिल मिल गया दिल से।

बेगम—अजी, होश की दवा करो।

आज़ाद—हम तो इस ज़ब्त के क़ायल हैं।

बेगम—(हँस कर) बजा।

आज़ाद—अब तो खिलखिला कर हँस दीं। खुदा के लिए, अब इस चिक के बाहर आओ या मुझी को अंदर बुलाओ। नक़ाब और घूँघट का तिलस्म तोड़ो। दिल बेक़ाबू है।

बेगम—अब्बासी, इनसे कहो कि अब हमें सोने दें। कल किसी की राह देखते-देखते रात आँखों में कट गयी।

आज़ाद—दिन का मौक़ा न था, रात को मेंह बरसने लगा।

बेगम—बस, बैठे रहो।

यह अबस कहते हो, मौक़ा न था और घात न थी;
मेंहदी पाँवों में न थी आपके, बरसात न थी।
कजअदाई के सिवा और कोई बात न थी;
दिन को आ सकते न थे आप तो क्या रात न थी?
बस, यही कहिए कि मंजूर मुलाक़ात न थी।

आज़ाद—माशूक़पन नहीं अगर इतनी कजी न हो।

अब्बासी दंग थी कि या खुदा, यह क्या माजरा है। बेगम साहब तो जामे से बाहर ही हुई जातीं हैं। महरियाँ दाँतों अँगुलियाँ दबा रही थीं। इनको हुआ क्या है। दारोग़ा साहब कटे जाते थे, मगर चुप।

बेगम—कोई भी दुनिया में किसी का हुआ है? सबको देख लिया। तड़पा तड़पा कर मार डाला। खैर, हमारा भी खुदा है।

आज़ाद—पिछली बातों को अब भूल जाइए।

बेगम—बेमुरौवतों को किसी के दर्द का हाल क्या मालूम? नहीं तो क्या वादा करके मुकर जाते!

आज़ाद—नालिश भी तो दाग़ दी आपने!

बेगम—इन्तज़ार करते-करते नाक में दम आ गया!

राह उनकी तकते-तकते यह मुद्दत गुज़र गयी;
आँखों को हौसला न रहा इन्तज़ार का।

आज़ाद, बस दिल ही जानता है। ठान ली थी कि जिस तरह मुझे जलाया है, उसी तरह तरसाऊँगी। इस वक़्त कलेजा बाँसों उछल रहा है। मगर बेचैनी और भी बढ़ती जाती है! अब उधर का हाल तो कहो, गये थे!

आज़ाद—वहाँ का हाल न पूछो। दिल पाश-पाश हुआ जाता है।

सुरैया बेगम ने समझा कि अब पाला हमारे हाथ रहा। कहा—आखिर, कुछ तो कहो। माजरा क्या है?

आज़ाद—अजी, औरत की बात का एतबार क्या?

बेगम—वाह, सबको शामिल न करो। पाँचों अँगुलियाँ बराबर नहीं होतीं। अब यह बतलाइए कि हमसे जो वादे किये थे, वे याद हैं या भूल गये?

इक़रार जो किये थे कभी हमसे आपने ;
कहिए, वे याद हैं कि फ़रामोश हो गये ?

आज़ाद—याद हैं। न याद होना क्या माने ?

बेगम—आपके वास्ते हुक्क़ा भर लाओ।

आज़ाद—हुक्म हो तो अपने ख़िदमतगार से हुक्क़ा मँगवा लूँ। अब्बासी, ज़रा उनसे कहो, हुक्का भर लायें।

अब्बासी ने जा कर चंडूबाज़ से हुक्का भरने को कहा। चंडूबाज हुक्क़ा ले कर ऊपर गये तो अलारक्खी को देखते ही बोले—कहिए अलारक्खी साहब, मिज़ाज तो अच्छे हैं ?

सुरैया बेगम धक से रह गयीं। वह तो कहिए, ख़ैर गुज़री कि अब्बासी वहाँ पर न थी। वरना बड़ी किरकिरी होती। चुपके से चंडूबाज़ को बुला कर कहा—यहाँ हमारा नाम सुरैया बेगम है। ख़ुदा के वास्ते हमें अलारक्खी न कहना। यह तो बताओ, तुम इनके साथ कैसे हो लिये। तुमसे इनसे तो दुश्मनी थी ? चलते वक़्त कोड़ा मारा था।

चंडूबाज़—इसके बारे में फिर अर्ज़ करूँगा।

आज़ाद—क्या ख़ुदा की शान है कि ख़िदमतगार को अंदर बुलाया जाय और मालिक तरसे !

बेगम—क्यों घबराते हो ? ज़रा बातें तो कर लेने दो ? उस मुए मसखरे को कहाँ छोड़ा ?

आज़ाद—वह लड़ाई पर मारा गया।

बेगम—ऐ है, मार डाला गया ! बड़ा हँसोड़ था बेचारा !

सुरैया बेगम ने अपने हाथों से गिलौरियाँ बनायीं और अपने ही हाथ से मिरज़ा आज़ाद को खिलायीं। आज़ाद दिल में सोच रहे थे कि या ख़ुदा, हमने कौन सा ऐसा सवाब का काम किया, जिसके बदले में तू हम पर इतना मिहरबान हो गया है ! हालाँ कि न कभी की जान, न पहचान। यक़ीन हो गया कि ज़रूर हमने कोई नेक काम किया होगा। चंडूबाज़ को भी हैरत हो रही थी कि अलारक्खी ने इतनी दौलत कहाँ पायी। इधर-उधर भौचक्के हो-हो कर देखते थे, मगर सबके सामने कुछ पूछना अदब के ख़िलाफ़ समझते थे। इतने में आज़ाद बोले—ज़माना भी कितने रंग बदलता है।

सुरैया बेगम—हाँ, यह तो पुराना दस्तूर है। लोग इक़रार कुछ करते हैं और करते कुछ हैं।

आज़ाद—यों नहीं कहतीं कि लोग चाहते कुछ हैं और होता कुछ और है।

सुरैया बेगम—दो-चार दिन और सब्र करो। जहाँ इतने दिनों ख़ामोश रहे, अब चंद रोज तक और चुपके रहो।

चंडूबाज़—ख़ुदावंद, ये बातें तो हुआ ही करेंगी, अब चलिए, कल फिर आइएगा। मगर पहले बी अला...।

सुरैया बेगम—ज़रा समझ-बूझ कर !

चंडूबाज़—क़ुसूर हुआ।

आज़ाद—हम समझे ही नहीं, क्या क़ुसूर हुआ ?

सुरैया बेगम—एक बात है। यह ख़ूब जानते हैं।

आज़ाद—फिर अब चलूँ ! मगर ऐसा न हो कि यह सारा जोश दो-चार दिन में ठंडा पड़ जाय। अगर ऐसा हुआ तो मैं जान दे दूँगा।

सुरैया बेगम—मैं तो यह ख़ुद ही कहने को थी। तुम मेरी ज़बान से बात छीन ले गये।

आज़ाद—हमारी मुहब्बत का हाल ख़ुदा ही जानता है।

सुरैया बेगम—ख़ुदा तो सब जानता है, मगर आपकी मुहब्बत का हाल हमसे ज़्यादा और कोई नहीं जानता। या (चंडूबाज की तरफ़ इशारा करके) यह जानते हैं। याद है न ? अगर अब की भी वैसा ही इक़रार है तो ख़ुदा ही मालिक है।

आज़ाद—अब उन बातों का ज़िक्र ही न करो।

सुरैया बेगम—हमें इस हालत में देख कर तुम्हें ताज्जुब तो जरूर हुआ होगा कि इस दरजे पर यह कैसे पहुँच गयी। वह बूढ़ा याद है जिसकी तरफ़ से आपने ख़त लिखा था ?

आज़ाद मिरज़ा कुछ जानते होते तो समझते, हाँ-हाँ कहते जाते थे।

आख़िर इतना कहा—तुम भी तो वकील के पास गयी थीं ? और हमको पकड़वा बुलाया था ? मगर सच कहना, हम भी किस चालाकी से निकल भागे थे ?

सुरैया बेगम—और उसका आप को फ़ख्र है। शरमाओ न शरमाने दो।

आज़ाद—अजी, वह मौका ही और था।

सुरैया बेगम ने अपना सारा हाल कह सुनाया। अपना जोगिन बनना, शहसवार का आना, थानेदार के घर से भागना, फिर वकील साहब के यहाँ फँसना, ग़रज़ सारी बातें कह सुनायीं।

आज़ाद—ओफ्-ओह, बहुत मुसीबतें उठायीं !

सुरैया बेगम—अब तो यही जी चाहता है कि शुभ घड़ी निकाह हो तो सारा ग़म भूल जाय।

चंडूबाज़—हम बेगम साहब की तरफ़ होंगे। आप ही ने तो कोड़ा जमाया था !

आज़ाद—कोड़ा अभी तक नहीं भूले ! हम तो बहुत सी बातें भूल गये।

सुरैया बेगम—अब तो रात बहुत ज़्यादा गयी, क्यों न नीचे जा कर दारोग़ा साहब के कमरे में सो रहो।

आज़ाद उठने ही को थे कि अजान की आवाज कान में आयी। बातों में तड़का हो गया। आज़ाद वहाँ से चले तो रास्ते में सुरैया बेगम का हाल पूछने लगे—क्यों जी, बेगम साहब हमको वही आज़ाद समझती हैं ? क्या हमारी-उनकी सूरत बिलकुल मिलती है ?

चंडूबाज़—जनाब, आप उनसे बीस हैं, उन्नीस नहीं।

आज़ाद—तुमने कहीं कह तो नहीं दिया कि और आदमी है ?

चंडूबाज़—वाह-वाह, मैं कह देता तो आप वहाँ धँसने भी पाते ? अब कहिए तो जा कर जड़ दूँ। बस, ऐसी ही बातों से तो आग लग जाती है !

ये बातें करते हुए आजाद घर पहुँचे और गाड़ी से उतरने ही को थे कि कई कान्स्टेबलों ने उनको घेर लिया, आज़ाद ने पैंतरा बदल कर कहा—ऐं, तुम लोग कौन हो ?

जमादार ने आगे बढ़ कर वारंट दिखाया और कहा—आप मेरे हिरासत में हैं।

चंडूबाज़ दबके-दबके गाड़ी में बैठे थे। एक सिपाही ने उनको भी निकाला। आज़ाद ने ग़ुस्से में आ कर दो कान्स्टेबलों को थप्पड़ मारे, तो उन सबों ने मिल कर उनकी मुश्कें कस लीं और थाने की तरफ़ ले चले। थानेदार ने आज़ाद को देखा तो बोले—आइए मिरज़ा साहब, बहुत दिनों के बाद आप नज़र आये। आज आप कहाँ भूल पड़े ?

आज़ाद—क्या मरे हुए से दिल्लगी करते हो ! हवालात से बाहर निकाल दो तो मज़ा दिखाऊँ। इस वक़्त जो चाहो, कह लो, मगर इजलास पर सारी क़लई खोल दूँगा। जिस जिस आदमी से तुमने रिश्वत ली है, उनको पेश करूँगा, भाग कर जाओगे कहाँ ?

थानेदार—रस्सी जल गयी, मगर रस्सी का बल न गया।

आज़ाद तो डींगें मार रहे थे और चंडूबाज़ को चंडू की धुन सवार थी। बोले—अरे यारो, ज़री चंडू पिलवा दो भई ! आख़िर इतने आदमियों में कोई चंडूबाज़ भी है, या सब के सब रूखे ही हैं ?

थानेदार—अगर आज चंडू न मिले तो क्या हो ?

चंडूबाज़—मर जायँ और क्या हो ?

थानेदार—अच्छा देखें, कैसे मरते हो ? कोई शर्त बदता है ? हम कहते हैं कि अगर इसको चंडू न मिले तो यह मर जाय।

इन्स्पेक्टर—और हम कहते हैं कि यह कभी न मरेगा।

चंडूबाज़—वाह री तक़दीर, समझे थे, अलारक्खी के यहाँ अब चैन करेंगे, चैन तो रहा दूर, क़िस्मत यहाँ ले आयी।

थानेदार—अलारक्खी कौन ? यह बता दो, तो चंडू मँगा दूँ।

चंडूबाज़—साहब, एक औरत है जो सराय में रहती थी।

अब सुनिए, शाम के वक़्त सुरैया बेगम बन-ठन कर बैठी आज़ाद का इंतज़ार कर रही थी। मगर आज़ाद तो हवालात में थे। वहाँ आता कौन ? अब्बासी को आज़ाद के गिरफ़्तार होने की ख़बर तो मिल गयी, मगर उसने सुरैया बेगम से कहा नहीं।

शाहज़ादा हुमायूँ फ़िर कई महीने तक नेपाल की तराई में शिकार खेल कर लौटे, तो हुस्नआरा की महरी अब्बासी को बुलवा भेजा। अब्बासी ने शाहज़ादा के आने की खबर सुनी तो चमकती हुई आयी। शाहज़ादे ने देखा तो फड़क गये। बोले— आइए, बी महरी साहबा हुस्नआरा बेगम का मिज़ाज तो अच्छा है ?

अब्बासी—हाँ, हुज़ूर !

शाहज़ादा—और दूसरी बहन ? उनका नाम तो हम भूल गये।

अब्बासी—बेशक, उनका नाम तो आप ज़रूर ही भूल गये होंगे। कोठे पर से धूप में आईना दिखाये, घूरा-घूरी किये और लोगों से पूछे—बड़ी बहन ज़्यादा हसीन हैं या छोटी ? है ताज्जुब की बात कि नहीं ?

शाहज़ादा—हमें तो तुम हसीन मालूम होती हो।

अब्बासी—ऐ हुज़ूर, हम ग़रीब आदमी, भला हमें कौन पूछता है ?

शाहज़ादा—हमारे घर पड़ जाओ।

अब्बासी—हुज़ूर तो मुझे शर्मिंदा करते हैं। अल्लाह जानता है, क्या मिज़ाज पाया है। यही हँसना-बोलना रह जाता है हुज़ूर !

शाहज़ादा—अब किसी तरकीब से ले चलो।

अब्बासी—हुज़ूर, भला मैं कैसे ले चलूँ ! रईसों का घर, शरीफ़ों की बहू-बेटियों में पराये मर्द का क्या काम।

शाहज़ादा—कोई तरकीब सोचो, आख़िर किस दिन काम आओगी ?

अब्बासी—आज तो किसी तरह मुमकिन नहीं। आज एक मिस आनेवाली हैं।

शाहज़ादा—फिर किसी तरकीब से मुझे वहाँ पहुँचा दो। आज तो आँखें सेकने का ख़ूब मौका है।

अब्बासी—अच्छा, एक तदबीर है। आज बाग़ ही में बैठक होगी। आप चल कर किसी दरख़्त पर बैठ रहें।

शाहज़ादा—नहीं भाई, यह हमें पसंद नहीं। कोई देख ले तो नाहक उल्लू बनूँ। बस, तुम बाग़बान को गाँठ लो। यही एक तदबीर है।

अब्बासी ने आ कर माली को लालच दिया। कहा—अगर शाहज़ादा को अंदर पहुँचा दो तो दो अशर्फ़ियाँ इनाम दिलवाऊँ। माली राज़ी हो गया। तब अब्बासी ने आ कर शाहज़ादे से कहा—लीजिए हज़रत, फ़तह है ! मगर देखिए, धोती और मीरज़ाई पहननी पड़ेगी और मोटे कपड़े की भद्दी सी टोपी दीजिए, तब वहाँ पहुँच पाइएगा।

शाम को हुमायूँ फ़र ने माली का वेष बनाया और माली के साथ बाग़ में पहुँचे तो देखा कि बाग़ के बीचोबीच एक पक्का और ऊँचा चबूतरा है और चारों बहनें

कुर्सियों पर बैठी मिस फैरिंगटन से बातें कर रही हैं। माली ने फूलों का एक गुलदस्ता बना कर दिया और कहा—जा कर मेज़ पर रख दो। हुमायूँ फ़र ने मिस साहब को झुक कर सलाम किया और एक कोने में चुपचाप खड़े हो गये।

सिपहआरा—हीरा-हीरा, यह कौन है ?

हीरा—हुजूर, गुलाम है आपका। मेरा भांजा है।

सिपहआरा—क्या नाम है ?

हीरा—लोग हुमायूँ कहते हैं हुजूर !

सिपहआरा—आदमी तो सलीक़ेदार मालूम होता है। अरे हुमायूँ, थोड़े फूल तोड़ ले और महरी को दे दे कि मेरे सिरहाने रख दे।

शाहज़ादा ने फूल तोड़ कर महरी को दिये और फूलों के साथ रूमाल में एक रुक़्का बाँध दिया। ख़त का मज़मून यह था—

'मेरी जान,

अब सब्र की ताक़त नहीं। अगर जिलाना हो तो जिला लो, वरना कोई हिकमत काम न आयेगी !

हुमायूँ फ़र'

जब शाहज़ादा हुमायूँ फ़र चले गये तो सिपहआरा ने माली से कहा—अपने भांजे को नौकर रख लो।

माली—हुजूर, सरकार ही का नमक तो खाता है ! यों भी नौकर है, वों भी नौकर है।

सिपहआरा—मगर हुमायूँ तो मुसलमानों का नाम होता है।

माली—हाँ हुजूर, वह मुसलमान हो गया है।

दूसरे दिन शाम को सिपहआरा और हुस्नआरा बाग़ में आयीं तो देखा, चबूतरे पर शतरंज के दो नक़्शे खिंचे हुए हैं।

सिपहआरा—कल तक तो ये नक़्शे नहीं थे। अहाहा, हम समझ गये। हुमायूँ माली ने बनाये होंगे।

माली—हाँ हुजूर, उसी ने बनाया है।

सिपहआरा—बहन, जब जानें कि नक़्शा हल कर दो।

हुस्नआरा—बहुत टेढ़ा नक़्शा है ! इसका हल करना मुश्किल है (माली से) क्यों जी, तुम्हारे भांजे को शतरंज खेलना किसने सिखाया ?

माली—हुजूर, उसको शौक़ है, लड़कपन से खेलता है।

हुस्नआरा—उससे पूछो, इस नक़्शे को हल कर देगा ?

माली—कल बुलवा दूँगा हुजूर !

सिपहआरा—इसका भांजा बड़ा मनचला मालूम होता है।

हुस्नआरा—हाँ, होगा। इस ज़िक्र को जाने दो।

सिपहआरा—क्यों-क्यों, बाजीजान ! तुम्हारे चेहरे का रंग क्यों बदल गया ?

हुस्नआरा—कल इसका जवाब दूँगी।

सिपहआरा—नहीं, आखिर बताओ तो ? तुम इस वक़्त खफ़ा क्यों हो ?

हुस्नआरा—यह मिरज़ा हुमायूँ फ़र की शरारत है।

सिपहआरा—ओफ़ ओह ! यह हथकंडे !

हुस्नआरा—(माली से) सच-सच बता; यह हुमायूँ कौन है ? खबरदार जो झूठ बोला !

सिपहआरा—भांजा है तेरा ?

माली—हुजूर ! हुजूर !

हुस्नआरा—हुजूर-हुजूर लगायी है, बताता नहीं। तेरा भांजा और यह नक़्शे बनाये ?

माली—हुजूर, मैं माली नहीं हूँ, जाति का कायस्थ हूँ, मगर घर-बार छोड़ कर बाग़बानी करने लगा। हमारा भांजा पढ़ा-लिखा हो तो कौन ताज्जुब की बात है !

हुस्नआरा—चल झूठे, सच-सच बता। नहीं अल्लाह जानता है, खड़े खड़े निकलवा दूँगी।

सिपहआरा अपने दिल में सोचने लगी कि हुमायूँ फ़र ने बेतौर पीछा किया। और फिर अब तो उनको खबर पहुँच ही गयी है तो फिर माली बनने की क्या ज़रूरत है !

हुस्नआरा—खुदा गवाह है ! सज़ा देने के काबिल आदमी है। भलमनसी के यह मानी नहीं हैं कि किसी के घर में माली या चमार बन कर घुसे। यह हीरा निकाल देने लायक़ है। इसको कुछ चटाया होगा, जभी फिसल पड़ा।

माली के होश उड़ गये। बोला—हुजूर मालिक हैं। बीस बरस से इस सरकार का नमक खाता हूँ; मगर कोई क़ुसूर गुलाम से नहीं हुआ। अब बुढ़ापे में हुजूर यह दाग़ न लगायें।

हुस्नआरा—कल अपने भांजे को ज़रूर लाना।

सिपहआरा—अगर क़ुसूर हुआ है तो सच-सच कह दे।

माली—हुजूर, झूठ बोलने की तो मेरी आदत नहीं।

दूसरे दिन शाहज़ादा ने माली को फिर बुलवाया और कहा—आज एक बार और दिखा दो।

माली—हुजूर, ले चलने में तो गुलाम को उज्र नहीं, मगर डरता हूँ कि कहीं बुढ़ापे में दाग़ न लग जाय।

शाहज़ादा—अजी वह मौक़ूफ़ कर देंगी तो हम नौकर रख लेंगे।

माली—सरकार, मैं नौकरी को नहीं, इज्ज़त को डरता हूँ।

शाहज़ादा—क्या महीना पाते हो ?

माली—६ रुपये मिलते हैं हुजूर !

शाहजादा—आज से ६ रुपये यहाँ से तुम्हारी जिंदगी भर मिला करेंगे। क्यों, हमारे आने के बाद औरतें कुछ कहती नहीं थीं ?

माली—आपस में कुछ बातें करती थीं; मगर मैं सुन नहीं सका। तो मैं शाम को आऊँगा।

शाहज़ादा—तुम डरो नहीं, तुम्हारा नुक़सान नहीं होने पायेगा।

माली तो सलाम करके रवाना हुआ और हुमायूँ फ़र दुआ माँगने लगे कि किसी तरह शाम हो। बार-बार कमरे के बाहर जाते, बार-बार घड़ी की तरफ़ देखते। सोचे, आओ ज़रा सो रहें। सोने में वक़्त भी कट जायगा और बेकरारी भी कम हो जायेगी। लेटे; मगर बड़ी देर तक नींद न आयी। खाना खाने के बाद लेटे तो ऐसी नींद आयी कि शाम हो गयी। उधर सिपहआरा ने हीरा माली को अकेले में बुला कर डाँटना शुरू किया। हीरा ने रो कर कहा—नाहक़ अपने भांजे को लाया। नहीं तो यह लथाड़ क्यों सुननी पड़ती।

सिपहआरा—कुछ दीवाना हुआ है बुड्ढे! तेरा भांजा और इतना सलीक़े-दार ? इतना हसीन ?

हीरा—हुज़ूर, अगर भांजा न हो तो नाक कटवा डालूँ।

सिपहआरा—(महरी से) ज़रा तू इसे समझा दे कि अगर सच-सच बतला दे तो कुछ इनाम दूँ।

महरी ने माली को अलग ले जा कर समझाना शुरू किया—अरे भले आदमी बता दे। जो तेरा रत्ती भर नुक़सान हो तो मेरा जिम्मा।

हीरा—इस बुढ़ौती में कलंक का टीका लगवाना चाहती हो ?

महरी—अब मुझसे तो बहुत उड़ो नहीं, शाहज़ादा हुमायूँ फ़र के सिवा और किसी की इतनी हिम्मत नहीं हो सकती। बता, थे वही कि नहीं ?

हीरा—हाँ आये तो वही थे।

महरी—(सिपहआरा से) लीजिए हुज़ूर, अब इसे इनाम दीजिए।

सिपहआरा—अच्छा हीरा, आज जब वह आयें तो यह काग़ज़ दे देना।

इत्तिफ़ाक़ से हुस्नआरा बेगम भी टहलती हुई आ गयीं। वह भी दफ्ती पर एक शेर लिख लायी थीं। सिपहआरा को दे कर बोलीं—हीरा से कह दो, जिस वक़्त हुमायूँ फ़र आयें, यह दफ्ती दिखा दे।

सिपहआरा—ऐ तो बाजी, जब हुमायूँ फ़र हों भी ?

हुस्नआरा—कितनी सादी हो ! जब हों भी !

सिपहआरा—अच्छा, हुमायूँ फ़र ही सही ! यह शेर तो सुनाओ।

हुस्नआरा—हमने यह लिखा है—

> असीरे हिर्स वशहवत हर कि शुद नाकाम मीबाशद ;
> दरीं आतश कसे गर पुख्ता बाशद खाम मीबाशद।

(जो आदमी हिर्स और शहवत में क़ैद हो गया, वह नाकाम रहता है। इस आग में अगर कोई पक्का भी हो तो भी कच्चा रहता है।)

हीरा ने झुक कर सलाम किया और शाम को हुमायूँ फ़र के मकान पहुँचा।

हुमायूँ—आ गये? अच्छा, ठहरो। आज बहुत सोये।

हीरा—खुदावंद, बहुत खफ़ा हुईं और कहा कि हम तुमको मौकूफ़ कर देंगे।

हुमायूँ—तुम इसकी फ़िक्र न करो।

हीरा—हुज़ूर, मुझे आध सेर आटे से मतलब है।

झुटपुटे वक़्त हुमायूँ हीरा के साथ बाग़ में पहुँचे। यहाँ हीरा ने दोनों बहनों के लिखे हुए शेर हुमायूँ फ़र को दिखाये। अभी वह पढ़ ही रहे थे कि हुस्नआरा बाग़ में आ गयी और हीरा को बुला कर कहा—तुम्हारा भांजा आया?

हीरा—हाज़िर है हुज़ूर!

हुस्नआरा—बुलाओ।

हुमायूँ ने आ कर सलाम किया और गरदन झुका ली।

हुस्नआरा—तुम्हारा क्या नाम है जी?

हुमायूँ—हुमायूँ।

हुस्नआरा—क्यों साहब, मकान कहाँ है?

हुमायूँ—

घर बार से क्या फ़क़ीर को काम;
क्या लीजिए छोड़े गाँव का नाम?

हुस्नआरा—अल्लाह, आप शायर भी हैं।

हुमायूँ—हुज़ूर, कुछ बक लेता हूँ।

हुस्नआरा—कुछ सुनाओ।

हुमायूँ—हुक्म हो तो ज़मीन पर बैठ जाऊँ।

सिपहआरा—बड़े गुस्ताख़ हो तुम। कहीं नौकर हो?

हुमायूँ—जी हाँ हुज़ूर, आजकल शाहज़ादा हुमायूँ फ़र की बहन के यहाँ नौकर हूँ।

इतने में बड़ी बेगम आ गयीं। हुमायूँ फ़र मारे ख़ौफ़ के भाग गये।

६७

सुरैया बेगम ने आज़ाद मिरज़ा के क़ैद होने की खबर सुनी तो दिल पर बिजली सी गिर पड़ी। पहले तो यक़ीन न आया, मगर जब खबर सच्ची निकली तो हाय-हाय करने लगी।

अब्बासी—हुजूर, कुछ समझ में नहीं आया। मगर उनके एक अज़ीज़ हैं। वह पैरवी करनेवाले हैं। रुपये भी खर्च करेंगे।

सुरैया बेगम—रुपया निगोड़ा क्या चीज़ है। तुम जा कर कहो कि जितने रुपयों की जरुरत हो, हमसे लें।

अब्बासी आज़ाद मिरज़ा के चाचा के पास जा कर बोली—बेगम साहब ने मुझे आपके पास भेजा है और कहा है कि रुपये की ज़रूरत हो तो हम हाज़िर हैं। जितने रुपये कहिए, भेज दें।

यह बड़े मिरज़ा आज़ाद से भी बढ़ कर बगड़ेबाज़ थे। सुरैया बेगम के पास आ कर बोले—क्या कहूँ बेगम साहब, मेरी तो इज्ज़त खाक में मिल गयी।

सुरैया बेगम—या मेरे अल्लाह, क्या यह ग़ज़ब हो गया?

बड़े मिरजा—क्या करूँ, सारा ज़माना तो उनका दुश्मन है। पुलिस से अदावत, अमलों से तकरार। मेरे पास इतने रुपये कहाँ कि पैरवी करूँ। वकील बग़ैर लिये-दिये मानते नहीं। जान अज़ाब में है।

सुरैया बेगम—इसकी तो आप फ़िक्र ही न करें। सब बंदोबस्त हो जायगा। सौ दो सौ, जो कहिए, हाज़िर है।

बड़े मिरज़ा—फ़ौजदारी के मुक़दमे में ऊँचे वकील ज़रा लेते बहुत हैं। मैं कल एक बारिस्टर के पास गया था। उन्होंने कहा कि एक पेशी के दो सौ लूँगा। अगर आप चार सौ रुपये दे दें तो उम्मेद है कि शाम तक आज़ाद तुम्हारे पास आ जायँ।

बेगम साहब ने चार सौ रुपये दिलवा दिये। बड़े मिरज़ा रुपये ले कर बाहर गये और थोड़ी देर के बाद आ कर चरपाई पर धम से गिर पड़े और बोले—आज तो इज्ज़त ही गयी थी, मगर खुदा ने बचा लिया। मैं जो यहाँ से गया तो एक साहब ने आ कर कहा—आज़ाद मिरज़ा को थानेदार हथकड़ी पहना कर चौक से ले जायगा। बस, मैंने अपना सिर पीट लिया। इत्तिफ़ाक़ से एक रिसालदार मिल गये। उन्होंने मेरी यह हालत देखी तो कहा—दो सौ रुपये दो तो पुलिसवालों को गाँठ लूँ। मैंने फ़ौरन दो सौ रुपये निकाल कर उनके हाथ पर रखे। अब दो सौ और दिलवाइए तो वकीलों के पास जाऊँ। बेगम ने दो सौ रुपये और दिलवा दिये। बड़े मिरज़ा दिल में खुश हुए, अच्छा शिकार फँसा। रुपये ले कर चलते हुए।

इधर सुरैया बेगम रो रो कर आँखें फोड़े डालती थीं, महरियाँ समझातीं, दिन-रात रोने से क्या फ़ायदा, अल्लाह पर भरोसा रखिए; उसकी मर्ज़ी हुई तो आज़ाद मिरज़ा

दो-चार दिन में घर आयेंगे। मगर ये नसीहतें बेगम साहब पर कुछ असर न करती थीं। एक दिन एक महरी ने आ कर कहा—हुजूर, एक औरत ड्योढ़ी पर खड़ी है। कहिए तो बुलाऊँ! बेगम ने कहा—बुला लो। वह औरत परदा उठा कर आँगन में दाखिल हुई और झुक कर बेगम को सलाम किया। उसकी सजधज सारी दुनिया की औरतों से निराली थी। गुलबदन का चुस्त पाजामा, बाँका अमामा, मखमल का दगला, उस पर हलका कारचोबी का काम, हाथ में आबनूस का पिंजड़ा, उसमें एक चिड़िया बैठी हुई। सारा घर उसी की ओर देखने लगा। सब की सब दंग थीं कि या खुदा, यह उठती जवानी, गुलाब सा रंग, और यों गली-कूचों की सैर करती फिरे! अब्बासी बोली—क्यों बीबी, तुम्हारा मकान कहाँ है? और यह पहनावा किस मुल्क का है? तुम्हारा नाम क्या है बीबी?

औरत—हमारा घर मन-चले जवानों का दिल है और नाम माशूक़।

यह कह कर उसने पिंजड़ा सामने रख दिया और यों चहकने लगी—हुजूर, आपको यक़ीन न आयेगा। कल मैं परिस्तान में बैठी वहाँ की सैर देख रही थी कि पहाड़ पर बड़े जोरों की आँधी आयी और इतनी गर्द उड़ी कि आसमान के नीचे एक और असमान नज़र आने लगा। इसके साथ ही घड़घड़ाहट की आवाज़ आयी और एक उड़नखटोला आसमान से उतर पड़ा।

अब्बासी—अरे, उड़नखटोला! इसका ज़िक्र तो कहानियों में सुना करते थे।

औरत—बस हुजूर, उस उड़नखटोले में से एक सचमुच की परी उतरी और दम के दम में खटोला ग़ायब हो गया। वह परी असल में परी न थी, वह एक इनसान था। मैं उसे देखते ही हज़ार जान से आशिक़ हो गयी। अब सुना है कि वह बेचारा कहीं क़ैद हो गया है।

सुरैया बेगम—क्या, क़ैद है! भला, उस जवान का नाम भी तुम्हें मालूम है?

औरत—जी हाँ हुजूर, मैंने पूछ लिया है। उसे आज़ाद कहते हैं।

सुरैया बेगम—अरे! यह तो कुछ और ही गुल खिला। किसी ने तुम्हें बहका तो नहीं दिया?

औरत—हुजूर, वह आपके यहाँ भी आये थे। आप भी उन पर रीझी हुई हैं।

सुरैया बेगम—मुझे तो तुम्हारी सब बातें दीवानों की बकझक मालूम होती हैं। कहाँ परी, कहाँ आज़ाद, कहाँ उड़नखटोला! समझ में कोई बात नहीं आती।

औरत—इन बातों को समझने के लिए ज़रा अक़्ल चाहिए।

यह कह कर उसने पिंजड़ा उठाया और चली गयी।

थोड़ी देर में दारोग़ा साहब ने अंदर आ कर कहा—दरवाज़े पर थानेदार और सिपाही खड़े हैं। मिरज़ा आज़ाद जेल से भाग निकले हैं। और वही आज औरत के वेष में आये थे। बेगम साहब के होश-हवास गायब हो गये! अरे, यह आज़ाद थे!

६८

आज़ाद अपनी फ़ौज़ के साथ एक मैदान में पड़े हुए थे कि एक सवार ने फ़ौज़ में आ कर कहा—अभी बिगुल दो। दुश्मन सिर पर आ पहुँचा। बिगुल की आवाज़ सुनते ही अफ़सर, प्यादे, सवार सब चौंक पड़े। सवार ऐंठते हुए चले, प्यादे अकड़ते हुए बढ़े। एक बोला—मार लिया है। दूसरे ने कहा—भगा दिया है। मगर अभी तक किसी को मालूम नहीं कि दुश्मन कहाँ है। मुख़बिर दौड़ाये गये तो पता चला कि रूस की फ़ौज़ दरिया के उस पार पैर जमाये खड़ी है। दरिया पर पुल बनाया जा रहा है और अनोखी बात यह थी कि रूसी फ़ौज़ के साथ एक लेडी, शहसवारों की तरह रान-पटरी जमाये, कमर से तलवार लटकाये, चेहरे को नकाब से छिपाये, अजब शोखी और बाँकपन के साथ लड़ाई में शरीक़ होने के लिए आयी है। उसके साथ दस जवान औरतें घोड़ों पर सवार चली आ रही हैं। मुख़बिर ने इन औरतों की कुछ ऐसी तारीफ़ की कि लोग सुन कर दंग रह गये। बोला—इस रईसज़ादी ने क़सम खायी है कि उम्र भर क्वाँरी रहूँगी। इसका बाप एक मशहूर जनरल था, उसने अपनी प्यारी बेटी को शहसवारी का फ़न खूब सिखाया था। रूस में बस यही एक औरत है जो तुर्कों से मुक़ाबला करने के लिए मैदान में आयी है। उसने क़सम खायी है कि आज़ाद का सिर ले कर ज़ार के क़दमों पर रख दूँगी।

आज़ाद—भला, यह तो बतलाओ कि अगर वह रईस की लड़की है तो उसे मैदान से क्या सरोकार? फिर मेरा नाम उसको क्योंकर मालूम हुआ?

मुख़बिर—अब यह तो हुज़ूर, वही जानें, उनका नाम मिस क्लारिसा है। वह आपसे तलवार का मुक़ाबिला करना चाहती हैं। मैदान में अकेले आप से लड़ेंगी, जिस तरह पुराने ज़माने में पहलवानों में लड़ाई का रिवाज़ था।

आज़ाद पाशा के चेहरे का रंग उड़ गया। अफ़सरों ने उनको बनाना शुरू किया। आज़ाद ने सोचा, अगर क़बूल किये लेता हूँ तो नतीजा क्या! जीता, तो कोई बड़ी बात नहीं। लोग कहेंगे, लड़ना-भिड़ना औरतों का काम नहीं। अगर चोट खायी तो जग की हँसाई होगी। मिस मीडा ताने देंगी। अलारक्खी आड़े हाथों लेंगी कि एक छोकरी से चरका खा गये। सारी डींग ख़ाक में मिल गयी। और अगर इनकार करते हैं तो भी तालियाँ बजेंगी कि एक नाज़ुकबदन औरत के मुक़ाबिले से भागे। जब ख़ुद कुछ फ़ैसला न कर सके तो पूछा—दिल्लगी तो हो चुकी, अब बतलाइए कि मुझे क्या करना चाहिए?

जनरल—सलाह यही है कि अगर आपको बहादुरी का दावा है तो क़बूल कर लीजिए, वरना चुपके ही रहिए।

आज़ाद—जनाब, ख़ुदा ने चाहा, तो एक चोट न खाऊँ और बेदाग़ लौट आऊँ। औरत लाख दिलेर हो, फिर भी औरत है!

जनरल—यहाँ मूछों पर ताव दे लीजिए, मगर वहाँ क़लई खुल जायगी।

अनवर पाशा—जिस वक़्त वह हसीना हथियार कस कर सामने आयेगी, होश उड़ जायँगे। ग़श पर ग़श आयँगे। ऐसी हसीन औरत से लड़ना क्या कुछ हँसी है? हाथ न उठेगा। मुँह की खाओगे। उसकी एक निगाह तुम्हारा काम तमाम कर देगी।

आज़ाद—इसकी कुछ परवा नहीं! यहाँ तो दिली आरज़ू है कि किसी नाज़नीन की निगाहों के शिकार हों।

यही बातें हो रही थीं कि एक आदमी ने कहा—कोई साहब हज़रत आज़ाद को ढूँढ़ते हुए आये हैं। अगर हुक्म हो, तो बुला लाऊँ। बड़े तीखे आदमी हैं। मुझसे लड़ पड़े थे। आज़ाद ने कहा, उसे अंदर आने दो। सिपाही के जाते ही मियाँ खोजी अकड़ते हुए आ पहुँचे।

आज़ाद—मुद्दत के बाद मुलाक़ात हुई, कोई ताज़ा खबर कहिए।

खोजी—कमर तो खोलने दो, अफ़ीम घोलूँ, चुस्की लगाऊँ तो होश आये। इस वक़्त थका-माँदा, मरा-मिटा आ रहा हूँ। साँस तक नहीं समाती है।

आज़ाद—मिस मीडा का हाल तो कहो!

खोजी—रोज़ कुम्मैत घोड़े पर सवार दरिया किनारे जाती हैं। रोज़ अखबार पढ़ती हैं। जहाँ तुम्हारा नाम आया, बस, रोने लगीं।

आज़ाद—अरे, यह अँगुली में क्या हुआ है जी! जल गयी थी क्या?

खोजी—जल नहीं गयी थी जी, यह अपनी सूरत गले का हार हुई।

आज़ाद—ऐ, यह माजरा क्या है? एक कान कौन कतर ले गया है?

खोजी—न हम इतने हसीन होते, न परियाँ जान देतीं!

आज़ाद—नाक भी कुछ चिपटी मालूम होती है।

खोजी—सूरत, सूरत! यही सूरत बला-ए-जान हो गयी। इसी के हाथों यह दिन देखना पड़ा।

आज़ाद—सूरत-मूरत नहीं, आप कहीं से पिट कर आये हैं। कमज़ोर, मार खाने की निशानी; किसी से भिड़ पड़े होंगे। उसने ठोंक डाला होगा! यही बात हुई है न?

खोजी—अजी, एक परी ने फूलों की छड़ियों से सज़ा दी थी।

आज़ाद—अच्छा, कोई खत-वत लाये हो? या चले आये यों ही हाथ झुलाते?

खोजी—दो-दो खत हैं। एक मिस मीडा का, दूसरा हुरमुज़ जी का।

आज़ाद और खोजी नहर के किनारे बैठे बातें कर रहे थे। अब जो आता है, खोजी को देख कर हँसता है। आखिर खोजी बिगड़ कर बोले—क्या भीड़ लगायी है? चलो, अपना काम करो।

आज़ाद—तुमको किसी से क्या वास्ता, खड़े रहने दो।

खोजी—अजी नहीं, आप समझते नहीं हैं। ये लोग नज़र लगा देंगे।

आज़ाद—हाँ, आपका कल्ला-ठल्ला देख कर नज़र लग जाय तो ताज्जुब भी नहीं।

ख़ोजी—अजी, वह एक सूरत ही क्या कम है ! और क़सम ले लो कि किसी मर्दक को अब तक मालूम हुआ हो कि हम इतने हसीन हैं ! और हमें इसका कुछ ग़रूर भी नहीं—

मुतलक़ नहीं ग़रूर ज़मालोकमाल पर ।

आज़ाद—जी हाँ, बाकमाल लोग कभी ग़रूर नहीं करते, सीधे-सादे होते ही हैं। अच्छा, आप अफ़ीम घोलिए, साथ है या नहीं ?

ख़ोजी—जी नहीं, और क्या ! आपके भरोसे आते हैं ? अच्छा, लाओ, निकलवाओ । मगर ज़रा उम्दा हो । कमसरियट के साथ तो होती होगी ?

आज़ाद—अब तुम मरे । भला यहाँ अफ़ीम कहाँ ? और कमसरियट में ? क्या ख़ूब !

ख़ोजी—तब तो बे-मौत मरे । भई, किसी से माँग लो ।

आज़ाद—यहाँ अफ़ीम का किसी को शौक ही नहीं ।

ख़ोजी—इतने शरीफ़ज़ादे हैं और अफ़ीमची एक भी नहीं ? वाह !

आज़ाद—जी हाँ, सब गँवार हैं । मगर आज दिल्लगी होगी, जब अफ़ीम न मिलेगी और तुम तड़पोगे, बिलबिलाओगे ।

ख़ोजी—यह तो अभी से जम्हाइयाँ आने लगीं । कुछ तो फ़िक्र करो यार !

आज़ाद—अब यहाँ अफ़ीम न मिलेगी । हाँ, क़रौलियाँ जितनी चाहो, मँगा दूँ ।

ख़ोजी—(अफ़ीम की डिबिया दिखा कर) यह भरी है अफीम ! क्या उल्लू समझे थे ! आने के पहले ही मैंने हुरमुज़ जी से कहा कि हुज़ूर, अफ़ीम मँगवा दें । अच्छा, यह लीजिए हुरमुज़ जी का ख़त ।

आज़ाद ने ख़त खोला तो यह लिखा था—

'माई डियर आज़ाद,

ज़रा ख़ोजी से ख़ैर व आफ़ियत तो पूछिए, इतना पिटे कि दो दाँत टूट गये, कान कट गये और घूँसे और मुक्के खाये । आप इनसे इतना पूछिए कि लालारुख़ कौन है ?

तुम्हारा

हुरमुज़ ।'

आज़ाद—क्यों साहब, यह लालारुख़ कौन है ?

ख़ोजी—ओफ़ओह, हम पर चकमा चल गया । वाहरे हुरमुज़ जी, वल्लाह ! अगर नमक न खाये होता तो जा कर क़रौली भोंक देता ।

आज़ाद—नहीं, तुम्हें वल्लाह, बताओ तो, यह लालारुख़ कौन है ?

ख़ोजी—अच्छा हुरमज़ जी समझेंगे ।

सौदा करेंगे दिल का किसी दिलरुबा के साथ
इस बावफ़ा को बेचेंगे एक बेवफ़ा के हाथ ।

हाय लालारुख़, जान जाती है, मगर मौत भी नहीं आती ।

आज़ाद—पिटे हुए हो, कुछ हाल तो बतलाओ । हसीन है ?

ख़ोजी—(झल्ला कर) जी नहीं, हसीन नहीं है। काली-कलूटी हैं। आप भी वल्लाह, निरे चोंच ही रहे ! भला, किसी ऐसी-वैसी की जुर्रत कैसे होती कि हमारे साथ बात करती ! याद रखो, हसीन पर जब नज़र पड़ेगी, हसीन ही की पड़ेगी। दूसरे की मजाल नहीं।

'ग़ालिब' इन सीमी तनों के वास्ते,
चाहनेवाला भी अच्छा चाहिए।

आज़ाद—अच्छा, अब लालारुख़ का तो हाल बताओ।

ख़ोजी—अजी, अपना काम करो, इस वक़्त दिल काबू में नहीं है। वह हुस्न है कि आपके बाबाजान ने भी न देखा होगा। मगर हाथों में चुल है। घंटे भर में पाँच सात बार ज़रूर चपतियाती थीं। खोपड़ी पिलपिली कर दी। बस, हमको इसी बात से नफ़रत थी। वरना, नखशिख से दुरुस्त ! और चेहरा चमकता हुआ, जैसे आब-नूस ! एक दिन दिल्लगी-दिल्लगी में उठ कर एक पचास जूते लगा दिये, तड़-तड़-तड़ ! हैं, हैं, यह क्या हिमाक़त है, हमें यह दिल्लगी पसंद नहीं, मगर वह सुनती किसकी हैं ! अब फ़रमाइए, जिस पर पचास जूते पड़ें, उसकी क्या गति होगी। एक रोज़ हँसी-हँसी में कान काट लिया। एक दिन दूकान पर खड़ा हुआ सौदा ख़रीद रहा था। पीछे से आ कर दस जूते लगा दिये। एक मरतबे एक हौज़ में हमको ढकेल दिया। नाक टूट गयी। मगर हैं लाखों में लाजवाब !

तर्जे-निगाह ने छीन लिये ज़ाहिदों के दिल,
आखें जो उनकी उठ गयीं दस्ते दुआ के साथ।

आज़ाद—तो यह कहिए, हँसी-हँसी में ख़ूब जूतियाँ खायीं आपने !

ख़ोजी—फिर यह तो है ही, और इश्क़ कहते किसे हैं ? एक दफ़ा मैं सो रहा था, आने के साथ ही इस ज़ोर से चाबुक जमायी कि मैं तड़प कर चीख उठा। बस, आग हो गयीं कि हम पीटें, तो तुम रोओ क्यों ? जाओ, बस, अब हम न बोलेंगी। लाख मनाया, मगर बात तक न की। आख़िर यह सलाह ठहरी कि सरे बाज़ार वह हमें चपतियाएँ और हम सिर झुकाये खड़े रहें।

लब ने जो जिलाया तो तेरी आँख ने मारा ;
क़ातिल भी रहा साथ मसीहा के हमेशा।
परदा न उठाया कभी चेहरा न दिखाया ;
मुश्ताक़ रहे हम रुख़े ज़ेबा के हमेशा।

आज़ाद—किसी दिन हँसी-हँसी में आपको ज़हर न खिला दे ?

खोजी—क्यों साहब खिला दें क्यों नहीं कहते ? कोई कंडेवाली मुक़र्रर की है। वह भी रईसज़ादी हैं ! आपकी मिस मीडा पर गिर पड़ें तो यह कुचल जायँ। अच्छा हमारी दास्तान तो सुन चुके, अपनी बीती कहो।

आज़ाद—एक नाज़नीन हमसे तलवार लड़ना चाहती है। क्या राय है ? पैग़ाम भेजा है कि किसी दिन आज़ाद पाशा से और हमसे अकेले तलवार चले।

खोजी—मगर तुमने पूछा तो होता कि सिन क्या है ? शक़्ल-सूरत कैसी है ?

आज़ाद—सब पूछ चुके हैं। रूस में उसका सानी नहीं है। मिस मीडा यहाँ होतीं तो खूब दिल्लगी रहती। हाँ, तुमने तो उनका खत दिया ही नहीं। तुम्हारी बातों में ऐसा उलझा कि उसकी याद ही न रही।

खोजी ने मीडा का खत निकाल कर दिया। यह मज़मून था—

'प्यारे आज़ाद,

आजकल अखबारों ही में मेरी जान बसती है। मगर कभी-कभी खत भी तो भेजा करो। यहाँ जान पर बन आयी है, और तुमने वह चुप्पी साधी है कि खुदा की पनाह। तुमसे इस बेवफ़ाई की उम्मेद न थी।

यों तो मुँह-देखे की होती है मुहब्बत सबको,
जब मैं जानूँ कि मेरे बाद मेरा ध्यान रहे।

तुम्हारी
मीडा।'

६९

दूसरे दिन आज़ाद का उस रूसी नाज़नीन से मुक़ाबिला था। आज़ाद को रात-भर नींद नहीं आयी। सबेरे उठ कर बाहर आये तो देखा कि दोनों तरफ़ की फौजें आमने-सामने खड़ी हैं और दोनों तरफ़ से तोपें चल रही हैं।

ख़ोजी दूर से एक ऊँचे दरख़्त की शाख़ पर बैठे लड़ाई का रंग देख रहे थे और चिल्ला रहे थे, होशियार, होशियार! यारो, कुछ ख़बर भी है? हाय! इस वक़्त अगर तोड़ेदार बंदूक होती तो परे के परे साफ़ कर देता। इतने में आज़ाद पाशा ने देखा कि रूसी फ़ौज़ के सामने एक हसीना कमर में तलवार लटकाये, हाथ में नेज़ा लिये, घोड़े पर शान से बैठी सिपाहियों को आगे बढ़ने के लिए ललकार रही है। आज़ाद की उस पर निगाह पड़ी तो दिल में सोचे, ख़ुदा इसे बुरी नज़र से बचाये। यह तो इस क़ाबिल है कि इसकी पूजा करे। यह, और मैदान-जंग! हाय-हाय, ऐसा न हो कि उस पर किसी का हाथ पड़ जाय। ग़ज़ब की चीज़ है यह हुस्न, इंसान लाख चाहता है, मगर दिल खिंच ही जाता है, तबीयत आ ही जाती है।

उस हसीना ने जो आज़ाद को देखा तो यह शेर पढ़ा—

सँभल के रखियो क़दम राहे-इश्क़ में मजनूँ,
कि इस दयार में सौदा बरहनः पाई है।

यह कह कर घोड़ा बढ़ाया। आज़ाद के घोड़े की तरफ़ झुकी और झुकते ही उन पर तलवार का वार किया। आज़ाद ने वार ख़ाली दिया और तलवार को चूम लिया। तुर्कों ने इस जोर से नारा मारा कि कोसों तक मैदान गूँजने लगा। मिस क्लारिसा ने झल्ला कर घोड़े को फेरा और चाहा कि आज़ाद को दो टुकड़े कर दे, मगर जैसे ही हाथ उठाया, आजाद ने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया और तलवार को अपनी तलवार से रोक कर हाथ से उस परी का हाथ पकड़ लिया। तुर्कों ने फिर नारा मारा और रूसी झेंप गये। मिस क्लारिसा भी लजायी और मारे ग़ुस्से के झल्ला कर वार करने लगीं। बार-बार चोट आती थी, मगर आज़ाद की यह कैफ़ियत थी कि कुछ चोटें तलवार पर रोकीं और कुछ ख़ाली दीं। आज़ाद उससे लड़ तो रहे थे, मगर वार करते दिल काँपता था। एक दफ़ा उस शेरदिल औरत ने ऐसा हाथ जमाया कि कोई दूसरा होता, तो उसकी लाश ज़मीन पर फड़कती नज़र आती, मगर आज़ाद ने इस तरह बचाया कि हाथ बिलकुल खाली गया। जब उस ख़ातून ने देखा कि आज़ाद ने एक चोट भी नहीं खायी तो फिर झुँझला कर इतने वार किये कि दम लेना भी मुश्किल हो गया। मगर आज़ाद ने हँस-हँस कर चोटें बचायीं। आख़िर उसने ऐसा तुला हुआ हाथ घोड़े की गरदन पर जमाया कि गरदन कट कर दूर जा गिरी। आज़ाद फ़ौरन कूद पड़े और चाहते थे कि उछल कर मिस क्लारिसा के हाथ से तलवार छीन लें कि उसने घोड़े को चाबुक जमायी और अपनी फ़ौज़ की तरफ़

चली। आज़ाद सँभलने भी न पाये थे कि घोड़ा हवा हो गया। आज़ाद घोड़े पर लटके रह गये।

जब घोड़ा रूस की फ़ौज में दाखिल हुआ तो रूसियों ने तीन बार खुशी के आवाज़े लगाये और कोई चालीस-पचास आदमियों ने आज़ाद को घेर लिया। दस आदमियों ने एक हाथ पकड़ा, पाँच ने दूसरा हाथ। दो-चार ने टाँग ली। आज़ाद बोले—भई, अगर मेरा ऐसा ही खौफ़ है तो मेरे हथियार खोल लो और क़ैद कर दो। दस आदमियों का पहरा रहे। हम भाग कर जायँगे कहा? अगर तुम्हारे यही हथकंडे हैं तो दस पाँच दिन में तुर्क जवान आप ही आप बँधे चले आयेंगे। मिस क्लारिसा की तरह पंद्रह-बीस परियाँ मोरचे पर जायँ तो शायद तुर्कों की तरफ़ से गोलंदाज़ी ही बंद हो जाय!

एक सिपाही—टँगे हुए चले आये, सारी दिलेरी धरी रह गयी!

दूसरा सिपाही—वाह री क्लारिसा! क्या फुर्ती है!

आज़ाद—इसमें तो शक नहीं कि इस वक़्त शिकार हो गये। मिस क्लारिसल की अदा ने मार डाला।

एक अफ़सर—आज हम तुम्हारी गिरफ़्तारी का जश्न मनायेंगे।

आज़ाद—हम भी शरीक़ होंगे। भला, क्लारिसा भी नाचेंगी?

अफ़सर—अजी, वह आपको अँगुलियों पर नचायेंगी। आप हैं किस भरोसे?

आज़ाद—अब तो खुदा ही बचाये तो बचें। बुरे फँसे।

तेरी गली में हम इस तरह से हैं आये हुए;
शिकार हो कोई जिस तरह चोट खाये हुए।

अफ़सर—आज तो हम फूले नहीं समाते। बड़े मूढ़ को फाँसा।

आज़ाद—अभी खुश हो लो; मगर हम भाग जायँगे! मिस क्लारिसा को देख कर तबीयत लहरायी, साथ चले आये।

अफ़सर—वाह, अच्छे जवाँमर्द हो! आये लड़ने और औरत को देख फिस पड़े। सूरमा कहीं औरत पर फिसला करते हैं?

आज़ाद—बूढ़े हो गये हो न! ऐसा तो कहा ही चाहो।

अफ़सर—हम तो आपकी शहसवारी की बड़ी धूम सुनते थे। मगर बात कुछ और ही निकली। अगर आप मेरे मेहमान न होते तो हम आपके मुँह पर कह देते कि आप शोहदे हैं। भले आदमी, कुछ तो गैरत चाहिए।

इतने में एक रूसी सिपाही ने आ कर अफ़सर के हाथ में एक खत रख दिया। उसने पढ़ा तो यह मज़मून था—

(१) हुक्म दिया जाता है कि मियाँ आज़ाद को साइबेरिया के उन मैदानों में भेजा जाय, जो सबसे ज़्यादा सर्द हैं।

(२) जब तक यह आदमी ज़िंदा रहे, किसी से बोलने न पाये। अगर किसी से बात करे तो दोनों पर सौ-सौ बेंत पड़ें।

(३) खाना सिर्फ एक वक़्त दिया जाय। एक दिन आध सेर उबाला हुआ साग और दूसरे दिन गुड़ और रोटी। पानी के तीन कटोरे रख दिये जायँ, चाहे एक ही बार पी जाय चाहे दस बार पिये।

(४) दस सेर आटा रोज़ पीसे और दो घंटे रोज़ दलेल बोली जाय। चक्की का पाट सिर पर रख कर चक्कर लगाये। ज़रा दम न लेने पाये।

(५) हफ़्ते में एक बार बरफ़ में खड़ा कर दिया जाय और बारीक कपड़ा पहनने को दिया जाय।

आज़ाद—बात तो अच्छी है, गरमी निकल जायगी।

अफ़सर—इस भरोसे भी न रहना। आधी रात को सिर पर पानी का तड़ेड़ा रोज़ दिया जायगा।

आज़ाद मुँह से तो हँस रहे थे, मगर दिल काँप रहा था कि ख़ुदा ही ख़ैर करे। ऊपर से हुक्म आ गया तो फ़रियाद किससे करें और फ़रियाद करें भी तो सुनता कौन है? बोले, ख़त्म हो गया या और कुछ है।

अफ़सर—तुम्हारे साथ इतनी रियायत की गयी है कि अगर मिस क्लारिसा रहम करें तो कोई हलकी सज़ा दी जाय।

आज़ाद—तब तो वह ज़रूर ही माफ़ कर देंगी।

यह कह कर आज़ाद ने यह शेर पढ़ा—

खोल दी है ज़ुल्फ़ किसने फूल से रुख़सार पर?
छा गयी काली घटा है आन कर गुलज़ार पर।

अफ़सर—अब तुम्हारे दीवानापन में हमें कोई शक न रहा।

आज़ाद—दीवाना कहो, चाहे पागल बनाओ। हम तो मरमिटे।

सख़्तियाँ ऐसी उठायीं इन बुतों के हिज्र में!
रंज सहते-सहते पत्थर सा कलेजा हो गया।

७०

शाम के वक़्त हलकी-फुलकी और साफ़-सुथरी छोलदारी में मिस क्लारिसा बनाव-चुनाव करके एक नाज़ुक आराम-कुर्सी पर बैठी थी। चाँदनी निखरी हुई थी, पेड़ और पत्ते दूध में नहाये हुए और हवा आहिस्ता-आहिस्ता चल रही थी! उधर मियाँ आज़ाद क़ैद में पड़े हुए हुस्नआरा को याद करके सिर धुनते थे कि एक आदमी ने आ कर कहा—चलिए, आपको मिस साहब बुलाती हैं। आज़ाद छोलदारी के क़रीब पहुँचे तो सोचने लगे, देखें यह किस तरह पेश आती है। मगर कहीं साइबेरिया भेज दिया तो बेमौत ही मर जायँगे। अंदर जा कर सलाम किया और हाथ बाँध कर खड़े हो गये। क्लारिसा ने तीखी चितवन कर कहा—कहिए मिज़ाज ठंडा हुआ या नहीं?

आज़ाद—इस वक़्त तो हुज़ूर के पंजे में हूँ, चाहे क़त्ल कीजिए, चाहे सूली दीजिए।

क्लारिसा—जी तो नहीं चाहता कि तुम्हें साइबेरिया भेजूँ, मगर वज़ीर के हुक्म से मजबूर हूँ! वज़ीर ने मुझे अख्तियार तो दे दिया है कि चाहूँ तो तुम्हें छोड़ दूँ, लेकिन बदनामी से डरती हूँ। जाओ रुखसत!

फ़ौज़ के अफ़सर ने हुक्म दिया कि सौ सवार आज़ाद को ले कर सरहद पर पहुँचा आयें। उनके साथ कुछ दूर चलने के बाद आज़ाद ने पूछा—क्यों यारो, अब जान बचने की भी कोई सूरत है या नहीं?

एक सिपाही—बस, एक सूरत है कि जो सवार तुम्हारे साथ जायँ वह तुम्हें छोड़ दें।

आज़ाद—भला, वे लोग क्यों छोड़ने लगे?

सिपाही—तुम्हारी जवानी पर तरस आता है। अगर हम साथ चले तो ज़रूर छोड़ देंगे।

तीसरे दिन आज़ाद पाशा साइबेरिया जाने को तैयार हुए! सौ सिपाही परे जमाये हुए, हथियारों से लैस, उनके साथ चलने को तैयार थे। जब आज़ाद घोड़े पर सवार हुए तो हज़ारहा आदमी उनकी हालत पर अफ़सोस कर रहे थे। कितनी ही औरतें रूमाल से आँसू पोंछ रही थीं। एक औरत इतनी बेक़रार हुई कि जा कर अफ़सर से बोली—हुज़ूर, यह आप बड़ा ग़ज़ब करते हैं। ऐसे बहादुर आदमी को आप साइबेरिया भेज रहे हैं।

अफ़सर—मैं मजबूर हूँ। सरकारी हुक्म की तामील करना मेरा फ़र्ज़ है।

दूसरी स्त्री—इस बेचारे की जान का खुदा हाफ़िज़ है। बेक़ुसूर जान जाती है।

तीसरी स्त्री—आओ, सब की सब मिल कर चलें और मिस साहब से सिफ़ारिश करें। शायद दिल पसीज जाय।

ये बातें करके वह कई औरतों के साथ मिस क्लारिसा के पास जा कर बोलीं—हुजूर, यह क्या ग़ज़ब करती हैं ! अगर आज़ाद मर गये तो आपकी कितनी बड़ी बदनामी होगी ?

क्लारिसा—उनको छोड़ना मेरे इमकान से बाहर है।

वह स्त्री—कितनी ज़ालिम ! कितनी बेरहम हो ! ज़रा आज़ाद की सूरत तो चल कर देख लो।

क्लारिसा—हम कुछ नहीं जानते !

अब तक तो आज़ाद को उम्मेद थी कि शायद मिस क्लारिसा मुझ पर रहम करें लेकिन जब इधर से कोई उम्मेद न रही और मालूम हो गया कि बिना साइबेरिया गये जान न बचेगी तो रोने लगे। इतने ज़ोर से चीखे कि मिस क्लारिसा के बदन के रोयें खड़े हो गये और थोड़ी ही दूर चले थे कि घोड़े से गिर पड़े।

एक सिपाही—अरे यारो, अब यह मर जायगा।

दूसरा सिपाही—मरे या जिये, साइबेरिया तक पहुँचाना ज़रूरी है।

तीसरा सिपाही—भई, छोड़ दो। कह देना, रास्ते में मर गया।

चौथा सिपाही—हमारी फ़ौज में ऐसा खूबसूरत और कड़ियल जवान दूसरा नहीं है। हमारी सरकार को ऐसे बहादुर अफ़सर की क़दर करनी चाहिए थी।

पाँचवाँ सिपाही—अगर आप सब लोग एक-राय हों तो हम इसकी जान बचाने के लिए अपनी जान खतरे में डालें। मगर तुम लोग साथ न दोगे।

छठा सिपाही—पहले इसे होश में लाने की फ़िक्र तो करो।

जब पानी के खूब छींटे दिये गये तो आज़ाद ने करवट बदली। सवारों को जान में जान आयी। सब उनको ले कर आगे बढ़े।

७१

आज़ाद तो साइबेरिया की तरफ़ रवाना हुए, इधर ख़ोजी ने दरख़्त पर बैठे-बैठे अफ़ीम की डिबिया निकाली। वहाँ पानी कहाँ? एक आदमी दरख़्त के नीचे बैठा था। आपने उससे कहा—भाईजान, जरा पानी पिला दो। उसने ऊपर देखा, तो एक बौना बैठा हुआ है। बोला—तुम कौन हो? दिल्लगी यह हुई कि वह फ्रांसीसी था। ख़ोजी उर्दू में बात करते थे, वह फ्रांसीसी में जवाब देता था।

ख़ोजी—अफ़ीम घोलेंगे मियाँ! ज़रा सा पानी दे डालो भाई!

फ्रांसीसी—वाह, क्या सूरत है! पहाड़ पर न जा कर बैठो?

ख़ोजी—भई वाह रे हिंदोस्तान! वल्लाह, इस फसल में सबीलों पर पानी मिलता है, केवड़े का बसा हुआ। हिंदू पौसरे बैठाते हैं और तुम ज़रा पानी भी नहीं देते।

फ्रांसीसी—कहीं ऊपर से गिर न पड़ना।

ख़ोजी—(इशारे से) अरे मियाँ पानी-पानी!

फ्रांसीसी—हम तुम्हारी बात नहीं समझते।

ख़ोजी—उतरना पड़ा हमें! अबे, ओ गीदी, ज़रा सा पानी क्यों नहीं दे जाता! क्या पाँवों की मेंहदी गिर जायगी?

फ्रांसीसी ने जब अब भी पानी न दिया तो ख़ोजी ऊपर से पत्ते तोड़-तोड़ फेंकने लगे। फ्रांसीसी झल्ला कर बोला—बचा, क्यों शामतें आयी हैं। ऊपर आ कर इतने घूँसे लगाऊँगा कि सारी शरारत निकल जायगी। ख़ोजी ने ऊपर से एक शाख़ तोड़ कर फेंकी। फ्रांसीसी ने इतने ढेले मारे कि ख़ोजी की खोपड़ी जानती होगी। इतने में एक तुर्क आ निकला। उसने समझा-बुझा कर ख़ोजी को नीचे उतारा। ख़ोजी ने अफ़ीम घोली, चुस्की लगायी और फिर दरख़्त पर जा कर एक मोटी शाख़ से टिक कर पीनक लेने लगे। अब सुनिए कि तुर्कों और रूसियों में इस वक़्त ख़ूब गोले चल रहे थे। तुर्कों ने जान तोड़ कर मुक़ाबिला किया, मगर फ्रांसीसी तोपख़ाने ने उनके छक्के छुड़ा दिये और उनका सरदार आसफ पाशा गोली खा कर गिर पड़ा। तुर्क तो हार कर भाग निकले। रूसियों की एक पलटन ने इस मैदान में पड़ाव डाला। ख़ोजी पीनक से चौंक कर यह तमाशा देख रहे थे कि एक रूसी जवान की नज़र उन पर पड़ी। बोला—कौन? तुम कौन हो? अभी उतर आओ।

ख़ोजी ने सोचा, ऐसा न हो कि फिर ढेले पड़ने लगें। नीचे उतर आये। अभी ज़मीन पर पाँव भी न रखा था कि एक रूसी ने इनको गोद में उठा कर फेंका तो धम से जमीन पर गिर गये।

ख़ोजी—ओ गीदी, ख़ुदा तुमसे और तुम्हारे बाप से समझे!

एक रूसी—भई, यह पागल है कोई।

दूसरा—इसको फ़ौज़ के साथ रखो। खूब दिल्लगी रहेगी।

रूसियों ने कई तुर्क सिपाहियों को क़ैद कर लिया था। ख़ोजी भी उन्हीं के साथ रख दिये गये। तुर्कों को देख कर उन्हें ज़रा तसकीन हुई। एक तुर्क बोला—तुम तो आज़ाद के साथ आये थे न? तुम उनके कौन हो?

ख़ोजी—मेरा लड़का है जी, तुम नौकर बनाते हो।

तुर्क—ऐं, आप आज़ाद पाशा के बाप हैं!

ख़ोजी—हाँ-हाँ, तो इसमें ताज्जुब की कौन बात है। मैंने ही तो आजाद को मार-मार कर लड़ना सिखाया।

तुर्कों ने ख़ोजी को आज़ाद का बाप समझ कर फ़ौजी क़ायदे से सलाम किया। तब ख़ोजी रोने लगे—अरे यारो, कहीं से तो हमें लड़के की सूरत दिखा दो। क्या तुमको इसी दिन के लिए पाल-पोस कर इतना बड़ा किया था? अब तुम्हारी माँ को क्या सूरत दिखाऊँगा?

तुर्क—आप ज़्यादा बेचैन न हों। आज़ाद ज़रूर छूटेंगे।

ख़ोजी—भई, मेरी इतनी इज़्ज़त न करो। नहीं तो रूसियों को शक हो जायगा कि यह आज़ाद पाशा के बाप हैं। तब बहुत तंग करेंगे।

तुर्क—ख़ुदा ने चाहा तो अफ़सर लोग आपको ज़रूर छोड़ देंगे।

ख़ोजी—जैसी मौला की मरज़ी!

७२

बड़ी बेगम का बाग़ परीख़ाना बना हुआ है। चारों बहनें रविशों में अठखेलियाँ करती हैं। नाज़ो-अदा से तौल-तौल कर क़दम धरती हैं। अब्बासी फूल तोड़-तोड़ कर झोलियाँ भर रही है। इतने में सिपहआरा ने शोख़ी के साथ गुलाब का फूल तोड़ कर गेतीआरा की तरफ़ फेंका। गेतीआरा ने उछाला तो सिपहआरा की ज़ुल्फ़ को छूता हुआ नीचे गिरा। हुस्नआरा ने कई फूल तोड़े और जहानारा बेगम से गेंद खेलने लगीं। जिस वक़्त गेंद फेंकने के लिए हाथ उठाती थीं, सितम ढाती थीं। वह कमर का लचकाना और गेसू का बिखरना, प्यारे-प्यारे हाथों की लोच और मुसकिरा-मुसकिरा कर निशानेबाज़ी करना अजब लुत्फ़ दिखाता था।

अब्बासी—माशा-अल्लाह, हुज़ूर किस सफ़ाई के साथ फेंकती हैं!

सिपहआरा—बस अब्बासी, अब बहुत ख़ुशामद की न लो। क्या जहानारा बहन सफ़ाई से नहीं फेंकतीं? बाजी ज़री झपटती ज़्यादा हैं। मगर हमसे न जीत पायेंगी। देख लेना।

अब्बासी—जिस सफ़ाई से हुस्नआरा बेगम गेंद खेलती हैं, उस सफ़ाई से जहानारा बेगम का हाथ नहीं जाता।

सिपहआरा—मेरे हाथ से भला फूल गिर सकता है! क्या मजाल!

इतने में जहानारा बेगम ने फूल को नोच डाला और उफ कह कर बोलीं—अल्लाह जानता है, हम तो थक गये।

सिपहआरा—ऐ वाह, बस इतने में ही थक गयीं? हमसे कहिए, शाम तक खेला करें।

अब सुनिए कि एक दोस्त ने मिरज़ा हुमायूँ फ़र को जा कर इत्तिला दी कि इस वक़्त बाग़ में परियाँ इधर से उधर दौड़ रही हैं। इस वक़्त की कैफ़ियत देखने क़ाबिल है। शाहज़ादे ने यह ख़बर सुनी तो बोले—भई, ख़ुशख़बरी तो सुनायी, मगर कोई तदबीर तो बताओ। ज़रा आँखें ही सेंक लें। हाँ, हीरा माली को बुलाओ। ज़रा देखें।

हीरा ने आ कर सलाम किया।

शाहज़ादा—भई, इस वक़्त किसी हिकमत से अपने बाग़ की सैर कराओ।

हीरा—ख़ुदावंद, इस वक़्त तो माफ़ करें, सब वहीं हैं।

शाहज़ादा—उल्लू ही रहे, अरे मियाँ, वहाँ सन्नाटा होता तो जा कर क्या करते! सुना है, चारों परियाँ वहीं हैं! बाग़ परिस्तान हो गया होगा! हीरा, ले चल, तुझे अपने नारायन की क़सम! जो माँगे, फ़ौरन दूँ।

हीरा—हुज़ूर ही का नमक खाता हूँ या किसी और का? मगर इस वक़्त मौक़ा नहीं है।

शाहज़ादा—अच्छा, एक शेर लिख दूँ, वहाँ पहुँचा दो।

यह कह कर शाहज़ादा ने यह शेर लिखा—

छकाया तूने आलम को साक़ी जामे-गुलगूँ से,
हमें भी कोई एक साग़र, हम भी हैं उम्मेदवारों में।

हीरा यह रुक्क़ा ले कर चला। शाहज़ादे ने समझा दिया कि सिपहआरा को चुपके से दे देना। हीरा गया तो देखा कि अब्बासी और बूढ़ी महरी में तक़रार हो रही है। सुबह के वक़्त अब्बासी हुस्नआरा के लिए कुम्हारिन के यहाँ से दो झँझरियाँ लायी थी। दाम एक आना बताया। बड़ी बेगम ने जो यह झँझरियाँ देखीं तो महरी को हुक्म दिया कि हमारे वास्ते भी लाओ। महरी वैसी ही झँझरियाँ दो आने को लायी। इस वक़्त अब्बासी डींग मारने लगी कि मैं जितनी सस्ती चीज़ लाती हूँ, कोई दूसरा भला ला तो दे। महरी और अब्बासी में पुरानी चश्मक थी। बोली—हाँ भई, तुम क्यों न सस्ती चीज़ लाओ! अभी कमसिन हो न?

अब्बासी—तुम भी तो किसी ज़माने में जवान थीं। बाज़ार भर को लूट लायी होगी। मेरे मुँह न लगना।

महरी—होश की दवा कर छोकरी! बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न बना मुई! ज़माने भर की अवारा! और सुनो?

अब्बासी—देखिए हुज़ूर, यह लाम क़ाफ़ ज़बान से निकालती हैं। और मैं हुज़ूर का लिहाज़ करती हूँ। जब देखो, ताने के सिवा बात ही नहीं करतीं।

महरी—मुँह पकड़ कर झुलस देती मुरदार का!

अब्बासी—मुँह झुलस अपने होतों-सोतों का।

महरी—हुज़ूर, अब हम नौकरी छोड़ देंगे। हमसे ये बातें न सुनी जायँगी।

अब्बासी—ऐं, तुम तो बेचारी नन्हीं हो। हमीं गरदन मारने के काबिल हैं! सच है, और क्या!

सिपहआरा—सारा क़ुसूर महरी का है। यही रोज़ लड़ा करती है अब्बासी से।

महरी—ऐ हुज़ूर, पीच पी हज़ार नेमत पायी! जो मैं ही झगड़ालू हूँ तो बिस्मिल्लाह, हुज़ूर लौंडी को आज़ाद कर दें। कोई बात न चीत, आप ही गाली-गुफ़्ते पर आमादा हो गयी।

जहानारा—'लड़ेंगे जोगी-जोगी और जायगी खप्पड़ों के माथे।' अम्माँजान सुन लेंगी तो हम सबकी खबर लेंगी।

अब्बासी—हुज़ूर इनसाफ़ से कहें। पहल किसकी तरफ़ से हुई।

जहानारा—पहल तो महरी ने की। इसके क्या मानी कि तुम जवान हो इससे सस्ती चीज़ मिल जाती है। जिसको गाली दोगी, वह बुरा मानेगी ही।

हुस्नआरा—महरी, तुम्हें यह सूझी क्या? जवानी का क्या ज़िक्र था भला!

अब्बासी—हुज़ूर, मेरा क़ुसूर हो तो जो चोर की सज़ा वह मेरी सज़ा।

महरी—मेरे अल्लाह, औरत क्या, बिस की गाँठ है।

अब्बासी—जो चाहो सो कह लो, मैं एक बात का भी जवाब न दूँगी।

महरी—इधर की उधर और उधर की इधर लगाया करती है। मैं तो इसकी नस-नस से वाक़िफ़ हूँ!

अब्बासी—और मैं तो तेरी क़ब्र तक से वाक़िफ़ हूँ!

महरी—एक को छोड़ा, दूसरे के बैठी, उसको खाया, अब किसी और को चट करेगी। और बातें करती है!

सत्तर...के बाद कुछ कहने ही को थी कि अब्बासी ने सैकड़ों गालियाँ सुनायीं। ऐसी जामे से बाहर हुई कि दुपट्टा एक तरफ़ और खुद दूसरी तरफ़। हीरा माली ने बढ़ कर दुपट्टा दिया तो कहा—चल हट, और सुनो! इस मुए बूढ़े की बातें! इस पर क़हक़ा पड़ा। शोर सुनते ही बड़ी बेगम साहब लाठी टेकती हुई आ पहुँची, मगर यह सब चुहल में मस्त थीं। किसी को खबर भी न हुई।

बड़ी बेगम—यह क्या शोहदापन मचा था? बड़े शर्म की बात है। आखिर कुछ कहो तो? यह क्या धमाचौकड़ी मची थी? क्यों महरी, यह क्या शोर मचा था?

महरी—ऐ हुजूर, बात मुँह से निकली और अब्बासी ने टेंटुआ लिया। और क्या बताऊँ।

बड़ी बेगम—क्यों अब्बासी, सच-सच बताओ! खबरदार!

अब्बासी-(रो कर) हुजूर!

बड़ी बेगम—अब टेसुए पीछे बहाना, पहले हमारी बात का जवाब दो।

अब्बासी—हुजूर, जहानारा बेगम से पूछ लें, हमें आवारा कहा, बेसवा कहा, कोसा, गालियाँ दी, जो ज़बान पर आया, कह डाला। और हुजूर, इन आँखों की ही क़सम खाती हूँ, जो मैंने एक बात का भी जवाब दिया हो। चुप सुना की।

बड़ी बेगम—जहानारा, क्या बात हुई थी? बताओ साफ़-साफ़।

जहानारा—अम्माँजान, अब्बासी ने कहा कि हम दो झँझरियाँ एक आने को लाये और महरी ने दो आने दिये, इसी बात पर तक़रार हो गयी।

बड़ी बेगम—क्यों महरी, इसके क्या माने? क्या जवानों को बाज़ारवाले मुफ़्त उठा देते हैं? बाल सफ़ेद हो गये, मगर अभी तक अवारापन की बू नहीं गयी। हमने तुमको मौक़ूफ़ किया, महरी! आज ही निकल जाओ।

इतने में मौक़ा पा कर हीरा ने सिपहआरा को शाहज़ादे का खत दिया। सिपहआरा ने पढ़ कर यह जवाब लिखा—भई, तुम तो ग़ज़ब के जल्दबाज़ हो। शादी-ब्याह भी निगोड़ा मुँह का नेवाला है! तुम्हारी तरफ़ से पैग़ाम तो आता ही नहीं।

हीरा खत ले कर चल दिया।

७३

कोठे पर चौका बिछा है और एक नाज़ुक पलँग पर सुरैया बेगम सादी और हलकी पोशाक पहने आराम से लेटी हैं। अभी हम्माम से आयी हैं। कपड़े इत्र में बसे हुए हैं। इधर-उधर फूलों के हार और गजरे रखे हैं, ठंडी-ठंडी हवा चल रही है। मगर तब भी महरी पंखा लिये खड़ी है। इतने में एक महरी ने आ कर कहा—दारोग़ा जी हुज़ूर से कुछ अर्ज़ करना चाहते हैं। बेगम साहब ने कहा—अब इस वक़्त कौन उठे। कहो, सुबह को आयें। महरी बोली—हुज़ूर कहते हैं, बड़ा ज़रूरी काम है। हुक्म हुआ कि दो औरतें चादर ताने रहें और दारोग़ा साहब चादर के उस पार बैठें। दारोग़ा साहब ने आ कर कहा—हुज़ूर, अल्लाह ने बड़ी ख़ैर की। ख़ुदा को कुछ अच्छा ही करना मंजूर था। ऐसे बुरे फँसे थे कि क्या कहें!

बेगम—ऐं, तो कुछ कहोगे भी?

दारोग़ा—हुज़ूर, बदन के रोयें खड़े होते हैं।

इस पर अब्बासी ने कहा—दारोग़ा जी, घास तो नहीं खा गये हो!' दूसरी महरी बोली—हुज़ूर, सठिया गये हैं। तीसरी ने कहा—बौखलाये हुए आये हैं। दारोग़ा साहब बहुत झल्लाये। बोले—क्या क़दर होती है, वाह! हमारी सरकार तो कुछ बोलती ही नहीं और महरियाँ सिर चढ़ी जाती हैं। हुज़ूर इतना भी नहीं कहतीं कि बूढ़ा आदमी है। उससे न बोलो।

बेगम—तुम तो सचमुच दीवाने हो गये हो। जो कहना है, वह कहते क्यों नहीं?

दारोग़ा—हुज़ूर, दीवाना समझें या गधा बनायें, गुलाम आज काँप रहा है। वह जो आज़ाद है, जो यहाँ कई बार आये भी थे, वह बड़े मक्कार, शाही चोर, नामी डकैत, परले सिरे के झगड़ेबाज़, काले जुआरी, धावत शराबी, ज़माने भर के बदमाश, छटे हुए गुर्गे, एक ही शरीर और बदज़ात आदमी हैं। तूती का पिंजड़ा ले कर वही औरत के भेष में आया था। आज सुना, किसी नवाब के यहाँ भी गये थे। वह आज़ाद जिनके धोखे में आप हैं, वह तो रूम गये हैं। इनका-उनका मुक़ाबिला क्या! वह आलिम-फ़ाज़िल, यह बेईमान-बदमाश। यह भी उसने ग़लत कहा कि हुस्नआरा बेगम का ब्याह हो गया।

बेगम—दारोग़ा, बात तो तुम पते की कहते हो, मगर ये बातें तुमसे बतायीं किसने?

दारोग़ा—हुज़ूर, वह चंडूबाज़ जो आज़ाद मिरज़ा के साथ आया था। उसी ने मुझसे बयान किया।

बेगम—ऐ है, अल्लाह ने बहुत बचाया।

महरी—और बातें कैसी चिकनी-चुपड़ी करता था!

दारोग़ा साहब चले गये तो बेगम ने चंडूबाज़ को बुलाया। महरियों ने परदा

करना चाहा तो बेगम ने कहा—जाने भी दो। बूढ़े खूसट से परदा क्या ?

चंडूबाज़—हुजूर, कुछ ऊपर सौ बरस का सिन है।

बेगम—हाँ, आज़ाद मिरज़ा का तो हाल कहो।

चंडूबाज़—उसके काटे का मंतर ही नहीं।

बेगम—तुमसे कहाँ मुलाक़ात हुई ?

चंडूबाज़—एक दिन रास्ते में मिल गये।

बेगम—वह तो क़ैद न थे ! भागे क्योंकर ?

चंडूबाज़—हुजूर, यह न पूछिए, तीन-तीन पहरे थे। मगर खुदा जाने, किस जादू-मंतर से तीनों को ढेर कर दिया और भाग निकला।

बेगम—अल्लाह बचाये ऐसे मूज़ी से।

चंडूबाज़—हुजूर, मुझे भी खूब सब्ज़बाग़ दिखाया।

महरी—अल्लाह जानता है, मैं उसकी आँखों से ताड़ गयी थी कि बड़ा नटखट है।

चंडूबाज़—हुजूर, यह कहना तो भूल ही गया था कि क़ैद से भाग कर थानेदार के मकान पर गया और उसे भी क़त्ल कर दिया।

बेगम—सब आदमियों में से निकल भागा ?

महरी—आदमी है कि जिन्नात ?

अब्बासी—हुजूर, हमें आज डर मालूम होता है। ऐसा न हो, हमारे यहाँ भी चोरी करे।

चंडूबाज़ रुख़सत हो कर गये तो सुरैया बेगम सो गयीं। महरियाँ भी लेटीं, मगर अब्बासी की आँखों में नींद न थी। मारे ख़ौफ़ के इतनी हिम्मत भी न बाक़ी रही कि उठ कर पानी तो पीती। प्यास से तालू में काँटे पड़े थे। मगर दबकी पड़ी थी। उसी वक़्त हवा के झोंकों से एक काग़ज़ उड़ कर उसकी चारपाई के क़रीब खड़खड़ाया तो दम निकल गया !

सिपाही ने आवाज़ दी—'सोनेवाले जागते रहो।' और यह काँप उठी। डर था, कोई चिमट न जाये। लाशें आँखों-तले फिरती थीं। इतने में बारह का गजर ठनाठन बजा। तब अब्बासी ने अपने दिल में कहा, अरे, अभी बारह ही बजे। हम समझे थे, सवेरा हो गया। एकाएक कोई विहाग की धुन में गाने लगा—

सिपहिया जागत रहियो,
इस नगरी के दस दरवाज़े निकस गया कोई और।
सिपहिया जागत रहियो।

अब्बासी सुनते-सुनते सो गयी; मगर थोड़ी देर में ठनाके की आवाज़ आयी तो जाग उठी। आदमी की आहट मालूम हुई। हाथ-पाँव काँपने लगे। इतने में बेगम साहब ने पुकारा—अब्बासी, पानी पिला। अब्बासी ने पानी पिलाया और बोली—हुजूर, अब कभी लाशों-वाशों का ज़िक्र न कीजिएगा। मेरा तो अजब हाल था। सारी रात आँखों में ही कट गयी।

बेगम—ऐसा भी डर किस काम का, दिन को शेर, रात को भेड़ ।

बेगम साहब सोने को ही थीं कि एक आदमी ने फिर गाना शुरू किया ।

बेगम—अच्छी आवाज़ है !

अब्बासी—पहले भी गा रहा था ।

महरी—ऐं, यह वकील हैं !

कुछ देर तक तीनों बातें करते-करते सो गयीं ! सबेरे मुँह-अँधेरे महरी उठी तो देखा कि बड़े कमरे का ताला टूटा पड़ा है । दो संदूक टूटे-फूटे एक तरफ़ रखे हुए हैं और असबाब सब तितर-बितर । गुल मचा कर कहा—अरे ! लुट गयी, हाय लोगों, लुट गयी ! घर में कुहराम मच गया । दारोग़ा साहब दौड़ पड़े । अरे, यह क्या ग़ज़ब हो गया । बेगम की भी नींद खुली । यह हालत देखी तो हाथ मल कर कहा—लुट गयी ! यह शोरगुल सुन कर पड़ोसिनें गुल मचाती हुई कोठे पर आयीं और बोलीं—बहन, यह बमचख कैसा है ! क्या हुआ ? ख़ैरियत तो है !

बेगम—बहन, मैं तो मर मिटी ।

पड़ोसिन—क्या चोरी हो गयी ? दो बजे तक तो मैं आप लोगों की बातें सुनती रही । यह चोरी किस वक़्त हुई ?

अब्बासी—बहन, क्या कहूँ, हाय !

पड़ोसिन—देखिए तो अच्छी तरह । क्या-क्या ले गया, क्या-क्या छोड़ गया ?

बेगम—बहन, किसके होश ठिकाने हैं ।

अब्बासी—मुझ जलम जली को पहले ही खटका हुआ था । कान खड़े हो गये; मगर फिर कुछ सुनायी न दिया । मैंने कुछ ख़याल न किया ।

दारोग़ा—हुज़ूर, यह किसी शैतान का काम है । पाऊँ तो खा ही डालूँ ।

महरी—जिस हाथ से संदूक तोड़े, वह कट कर गिर पड़े । जिस पाँव से आया उसमें कीड़े पड़ें । मरेगा बिलख-बिलख कर ।

अब्बासी—अल्लाह करे, अठवारे ही में खटिया मचमचाती निकले ।

महरी—मगर अब्बासी, तुम भी एक ही कलजिभी हो । वही हुआ ।

सुरैया बेगम ने असबाब की जाँच की तो आधे से ज़्यादा ग़ायब पाया । रो कर बोलीं—लोगों, मैं कहीं की न रही । हाय मेरे अब्बा, दौड़ो । तुम्हारी लाड़िली बेटी आज लुट गयी । हाय मेरी अम्माँजान ! सुरैया बेगम अब फ़क़ीरिन हो गयी ।

पड़ोसिन—बहन, ज़रा दिल को ढारस दो । रोने से और हलाकान होगी ।

बेगम—क़िस्मत ही पलट गयी । हाय !

पड़ोसिन—ऐ ! कोई हाथ पकड़ लो । सिर फोड़े डालती हैं । बहन, बहन ! खुदा के वास्ते सुनो तो ! देखो, सब माल मिला जाता है । घबराओ नहीं ।

इतने में एक महरी ने गुल मचा कर कहा—हुज़ूर, यह जोड़ी कड़े की पड़ी है ।

अब्बासी—भागते भूत की लँगोटी ही सही ।

लोगों ने सलाह दी कि थानेदार को बुलाया जाय, मगर सुरैया बेगम तो थाने-

दार से डरी हुई थी; नाम सुनते ही काँप उठीं और बोलीं—बहन, माल चाहे यह भी जाता रहे, मगर थानेवालों को मैं अपनी ड्योढ़ी न नाँघने दूँगी। दारोग़ा जी ने आँख ऊपर उठायी तो देखा, छत कटी हुई है। समझ गये कि चोर छत काट कर आया था। एकाएक कई कांस्टेबिल बाहर आ पहुँचे। कब वारदात हुई? नौ दफ़े तो हम पुकार गये। भीतर-बाहर से बराबर आवाज़ आयी। फिर यह चोरी कब हुई? दारोग़ा जी ने कहा—हमको इस टॉय-टॉय से कुछ वास्ता नहीं है जी! आये वहाँ से रोब जमाने! टके का आदमी और हमसे ज़बान मिलाता है। पड़े-पड़े सोते रहे और इस वक़्त तहक़ीक़ात करने चले हैं? साठ हज़ार का माल गया। कुछ ख़बर भी है!

कांस्टेबिलों ने जब सुना कि साठ हज़ार की चोरी हुई तो होश उड़ गये। आपस में यों बातें करने लगे—

एक—साठ हज़ार! पचास और दुइ साठ? काहे?

दूसरा—पचाफ दुइ साठ नहीं; पचास और दस साठ!

तीसरा—अजी ख़ुदा-ख़ुदा करो। साठ हज़ार। क्या निरे जवाहिरात ही थे? ऐसे कहाँ के सेठ हैं!

दारोग़ा—समझा जायगा, देखो तो सही? तुम सबकी साज़िश है।

एक—दारोग़ा, तरकीब तो अच्छी की! शाबाश!

दूसरा—बेगम साहब के यहाँ चोरी हुई तो बला से। तुम्हारी तो हाड़ियाँ चढ़ गयीं। कुछ हमारा भी हिस्सा है?

इतने में थानेदार साहब आ पहुँचे और कहा, हम मौक़ा देखेंगे। परदा कराया गया। थानेदार साहब अंदर गये तो बोले—अल्लाह, इतना बड़ा मकान है! तो क्यों न चोरी हो?

दारोग़ा—क्या? मकान इतना बड़ा देखा और आदमी रहते हैं सो नहीं देखते!

थानेदार—रात को यहाँ कौन सोया था?

दारोग़ा—अब्बासी, सबके नाम लिखवा दो।

थानेदार—बोलो अब्बासी महरी, रात को किस वक़्त सोयी थीं तुम?

अब्बासी—हुज़ूर, कोई ग्यारह बजे आँखें लगीं।

थानेदार—एक-एक बोटी फड़कती है। साहब के सामने इतना न चमकना।

अब्बासी—यह बातें मैं नहीं समझती। चमकना-मटकना बाज़ारी औरतें जानें। हम हमेशा बेगमों में रहा किये हैं। यह इशारे किसी और से कीजिए। बहुत थानेदारी के बल पर न रहिएगा। देखा कि औरतें ही औरतें घर में हैं तो पेट से पाँव निकाले।

थानेदार—तुम तो जामे से बाहर हुई जाती हो।

बेगम साहब कमरे में खड़ी काँप रही थीं। ऐसा न हो, कहीं मुझे देख ले। थानेदार ने अब्बासी से फिर कहा—अपना बयान लिखवाओ।

अब्बासी—हम चारपाई पर सो रहे थे कि एक बार आँख खुली। हमने सुराही से पानी उँड़ेला और बेगम साहब को पिलाया।

थानेदार—जो चाहो, लिखवा दो। तुम पर दरोग़हलफ़ी का जुर्म नहीं लग सकता।

अब्बासी—क्या ईमान छोड़ना है? जो ठीक-ठीक है वह क्यों छिपायें?

अब्बासी ने अँगुलियाँ मटका-मटका कर थानेदार को इतनी खरी-खोटी सुनायीं कि थानेदार साहब की शेखी किरकिरी हो गयी। दारोग़ा साहब से बोले—आपको किसी पर शक हो तो बयान कीजिए। बे-भेदिये के चोरी नहीं हो सकती। दारोग़ा ने कहा—हमें किसी पर शक नहीं। थानेदार ने देखा कि यहाँ रंग न जमेगा तो चुपके से रुख़सत हुए।

७४

खोजी आज़ाद के बाप बन गये तो उनकी इज़्ज़त होने लगी। तुर्की क़ैदी हरदम उनकी ख़िदमत करने को मुस्तैद रहते थे। एक दिन एक रूसी फ़ौज़ी अफ़सर ने उनकी अनोखी सूरत और माशे-माशे भर के हाँथ पाँव देखे तो जी चाहा कि इनसे बातें करें। एक फ़ारसीदाँ तुर्क को मुतरज्जिम बना कर ख्वाजा साहब से बातें करने लगा।

अफ़सर—आप आज़ाद पाशा के बाप हैं?

खोजी—बाप तो क्या हूँ, मगर खैर, बाप ही समझिए। अब तो तुम्हारे पंजे में पड़ कर छक्के छूट गये।

अफ़सर—आप भी किसी लड़ाई में शरीक़ हुए थे?

खोजी—वाह, और जिंदगी-भर करता क्या रहा? तुम जैसा गौखा अफ़सर आज ही देखा। हमारा कैंडा ही गवाही देता है कि हम फ़ौज के जवान हैं। कैंडे से नहीं पहचानते? इसमें पूछने की क्या ज़रूरत है! दगलेवाली पलटन के रिसालदार थे। आप हमसे पूछते हैं, कोई लड़ाई देखी है! जनाब, यहाँ वह-वह लड़ाइयाँ देखी हैं कि आदमी की भूख-प्यास बंद हो जाय।

अफ़सर—आप गोली चला सकते हैं?

खोजी—अजी हज़रत, अब फ़रद खुलवाइए। पूछते हैं गोली चलायी है! ज़रा सामने आ जाइए तो बताऊँ। एक बार एक कुत्ते से और हमसे लाग-डाट हो गयी। खुदा की क़सम, हमसे कुत्ता ग्यारह-बारह कदम पर पड़ा था। धरके दाग़ता हूँ तो पों-पों करता हुआ भाग खड़ा हुआ।

अफ़सर—ओ हो! आप खूब गोली चलाता है।

खोजी—अजी, तुम हमको जवानी में देखते!

अफ़सर ने इनकी बेतुकी बातें सुन कर हुक्म दिया कि दोनाली बंदूक लाओ। तब तो मियाँ खोजी चकराये। सोचे कि हमारी सात पीढ़ियों तक तो किसी ने बंदूक चलायी नहीं और न हमको याद आता है कि बंदूक कभी उम्र भर छुई भी हो; मगर, इस वक़्त तो आबरू रखनी चाहिए। बोले इस बंदूक में ग़ज़ तो नहीं होता?

अफ़सर—उड़ती चिड़िया पर निशाना लगा सकते हो?

खोजी—उड़ती चिड़िया कैसी! आसमान तक के जानवरों को भून डालूँ।

अफ़सर—अच्छा तो बंदूक लो।

खोजी—ताक कर निशाना लगाऊँ तो दरख्त की पत्तियाँ गिरा दूँ?

यह कह कर आप टहलने लगे।

अफ़सर—आप निशाना क्यों नहीं लगाता? उठाइए बंदूक।

खोजी ने ज़मीन में खूब ज़ोर से ठोकर मारी और एक ग़ज़ल गाने लगे। अफ़सर

दिल में खूब समझ रहा था कि यह आदमी महज डींगें मारना जानता है। बोला—अब बंदूक लेते हो या इसी बंदूक से तुमको निशाना बनाऊँ?

ख़ैर, बड़ी देर तक दिल्लगी रही। अफ़सर खोजी से इतना खुश हुआ कि पहरे-वालों को हुक्म दे दिया कि इन पर बहुत सख़्ती न रखना। रात को खोजी ने सोचा कि अब भागने की तदबीर सोचनी चाहिए वरना लड़ाई ख़त्म हो जायगी और हम न इधर के रहेंगे, न उधर के। आधी रात को उठे और ख़ुदा से दुआ माँगने लगे कि ऐ ख़ुदा! आज़ रात को तू मुझे इस क़ैद से नजात दे। तुर्कों का लश्कर नज़र आये और मैं गुल मचा कर कहूँ कि हम आ पहुँचे; आ पहुँचे। आज़ाद से भी मुलाक़ात हो और ख़ुश-ख़ुश वतन चलें।

यह दुआ माँग कर खोजी रोने लगे। हाय, अब वह दिन कहाँ नसीब होंगे कि नवाबों के दरबार में गप उड़ा रहे हों। वह दिल्लगी, वह चुहल अब नसीब हो चुकी। किस मज़े से कटी जाती थी और किस लुत्फ़ से गड़ेरियां चूसते थे! कोई खुटियाँ ख़रीदता है, कोई क़तारे चुकाता है। शोर गुल की यह कैफ़ियत है कि कान पड़ी आवाज़ नहीं सुनायी देती, मक्खियों की भिन्न-भिन्न एक तरफ़, छिलकों का ढेर दूसरी तरफ़, कोई औरत चंडूखाने में आ गयी तो और भी चुहल होने लगी।

दो बजे खोजी बाहर निकले तो उनकी नज़र एक छोटे से टट्टू पर पड़ी। पहरे-वाले सो रहे थे। खोजी टट्टू के पास गये और उसकी गरदन पर हाथ फेर कर कहा—बेटा, कहीं दग़ा न देना। माना कि तुम छोटे-मोटे टट्टू हो और ख़्वाजा साहब का बोझ तुमसे न उठ सकेगा, मगर कुछ परवा नहीं, हिम्मते मरदाँ मददे ख़ुदा। टट्टू को खोला और उस पर सवार हो कर आहिस्ता-आहिस्ता कैम्प से बाहर की तरफ़ चले। बदन काँप रहा था, मगर जब कोई सौ क़दम के फ़ासिले पर निकल गये तो एक सवार ने पुकारा—कौन जाता है? खड़ा रह!

खोजी—हम हैं जी ग्रासकट, सरकारी घोड़ों की घास छीलते हैं।

सवार—अच्छा तो चला जा।

खोजी जब ज़रा दूर निकल आये तो दो-चार बार खूब गुल मचाया—मार लिया, मार लिया! ख़्वाजा साहब दो करोड़ रूसियों में से बेदाग़ निकले आते हैं। लो भई तुर्को, ख़्वाजा साहब आ पहुँचे।

अपनी फ़तह का डंका बजा कर खोजी घोड़े से उतरे और चादर बिछा कर सोये तो ऐसी मीठी नींद आयी कि उम्र भर न आयी थी। घड़ी भर रात बाक़ी थी कि उनकी नींद खुली। फिर घोड़े पर सवार हुए और आगे चले। दिन निकलते-निकलते उन्हें एक पहाड़ के नज़दीक एक फ़ौज़ मिली। आपने समझा कि तुर्कों की फ़ौज़ है। चिल्ला-कर बोले—आ पहुँचे; आ पहुँचे! अरे यारो दौड़ो। ख़्वाजा साहब के क़दम धो-धो कर पीओ, आज ख़्वाजा साहब ने वह काम किया कि रुस्तम के दादा से भी न हो सकता। दो करोड़ रूसी पहरा दे रहे थे और मैं पैंतरे बदलता हुआ दन से ग़ायब, लकड़ी टेकी और उड़ा। दो करोड़ रूसी दौड़े, मगर मुझे पकड़ पाना दिल्लगी

नहीं। कह दिया, लो हम लम्बे होते हैं, चोरी से नहीं चले, डंके की चोट कह कर चले।

अभी वह यह हाँक लगा ही रहे थे कि पीछे से किसी ने दोनों हाथ पकड़ लिये और घोड़े से उतार लिया।

ख़ोजी—ऐं, कौन है भई ? मैं समझ गया मियाँ आज़ाद हैं।

मगर आज़ाद वहाँ कहाँ, यह रूसियों की फ़ौज़ थी। उसे देखते ही ख़ोजी का नशा हिरन हो गया। रूसियों ने उन्हें देख कर खूब तालियाँ बजायीं। ख़ोजी दिल ही दिल में कटे जाते थे, मगर बचने की कोई तदबीर न सूझती थी। सिपाहियों ने खोजी को चपतें जमानी शुरू कीं। उधर देखा, इधर पड़ी। ख़ोजी बिगड़ कर बोले—अच्छा गीदी, इस वक़्त तो बेबस हूँ, अबकी फँसाओ तो कहूँ। क़सम है अपने क़दमों की, आज तक कभी किसी को नहीं सताया। और सब कुछ किया, पतंग उड़ाये, चंडू पिया, अफ़ीम खायी, चरस के दम लगाये, मदक के छींटे उड़ाये, मगर किस मरदूद ने किसी ग़रीब को सताया हो !

यह सोच कर ख़ोजी की आँखों से आँसू निकल आये।

एक सिपाही ने कहा—बस, अब उसको दिक़ न करो। पहले पूछ लो कि यह है कौन आदमी। एक बोला—यह तुर्की है, कपड़े कुछ बदल डाले हैं। दूसरे ने कहा—यह गोइंदा है, हमारी टोह में आया है।

औरों को भी यही शुब्हा हुआ। कई आदमियों ने ख़ोजी की तलाशी ली। अब ख़ोजी और सब असबाब तो दिखाते हैं, मगर अफ़ीम की डिबिया नहीं खोलते।

एक रूसी—इसमें कौन चीज़ है ? क्यों तुम इसको खोलने नहीं देते ? हम ज़रूर देखेंगे।

ख़ोजी—ओ गीदी, मारूँगा बंदूक, धुआँ उस पार हो जायगा। खबरदार जो डिबिया हाथ से छुई ! अगर तुम्हारा दुश्मन हूँ तो मैं हूँ। मुझे चाहे मारो, चाहे क़ैद करो, पर मेरी डिबिया में हाथ न लगाना।

रूसियों को यक़ीन हो गया कि डिबिया में ज़रूर कोई क़ीमती चीज़ है। ख़ोजी से डिबिया छीन ली। मगर अब उनमें आपस में लड़ाई होने लगी। एक कहता था, डिबिया हमारी है, दूसरा कहता था, हमारी है। आख़िर यह सलाह हुई कि डिबिया में जो कुछ निकले वह सब आदमियों में बराबर-बराबर बाँट दी जाय। ग़रज़ डिबिया खोली गयी तो अफ़ीम निकली। सब के सब शर्मिंदा हुए। एक सिपाही ने कहा—इस डिबिया को दरिया में फेंक दो। इसी के लिए हममें तलवार चलते-चलते बची।

दूसरा बोला—इसे आग में जला दो।

ख़ोजी—हम कहे देते हैं, डिबिया हमें वापस कर दो, नहीं हम बिगड़ जायँगे तो क़यामत आ जायगी। अभी तुम हमें नहीं जानते !

सिपाहियों ने समझ लिया कि यह कोई दीवाना है, पागलख़ाने से भाग आया है। उन्होंने खोजी को एक बड़े पिंजरे में बंद कर दिया। अब मियाँ खोजी की

सिट्टी-पिट्टी भूल गयी। चिल्ला कर बोले—हाय आज़ाद ! अब तुम्हारी सूरत न देखेंगे। खैर, खोजी ने नमक का हक़ अदा कर दिया। अब वह भी क़ैद की मुसीबतें झेल रहा है और सिर्फ़ तुम्हारे लिए। एक बार ज़ालिमों के पंजे से किसी तरह मार-कूट कर निकल भागे थे, मगर तक़दीर ने फिर क़ैद में ला फँसाया। जवाँमरदों पर हमेशा मुसीबत आती है, इसका तो ग़म नहीं; ग़म इसी का है कि शायद अब तुमसे मुलाक़ात न होगी। खुदा तुम्हें खुश रखे, मेरी याद करते रहना—

शायद वह आयें मेरे जनाज़े प' दोस्तो,
आँखें खुली रहें मेरी दीदार के लिए।

७५

मियाँ आज़ाद कासकों के साथ साइबेरिया चले जा रहे थे। कई दिन के बाद वह डैन्यूब नदी के किनारे जा पहुँचे। वहाँ उनकी तबियत इतनी खुश हुई कि हरी-हरी दूब पर लेट गये और बड़ी हसरत से यह ग़ज़ल पढ़ने लगे—

रख दिया सिर को तेरो क़ातिल पर,
हम गिरे भी तो जाके मंज़िल पर।
आँख जब बिसमिलों में ऊँची हो,
सिर गिरे कटके पाय क़ातिल पर।
एक दम भी तड़प से चैन नहीं,
देख लो हाथ रखके तुम दिल पर।

यह ग़ज़ल पढ़ते-पढ़ते उन्हें हुस्नआरा की याद आ गयी और आँखों से आँसू गिरने लगे। कासक लोगों ने समझाया कि भई, अब वे बातें भूल जाओ, अब यह समझो कि तुम वह आज़ाद ही नहीं हो। आज़ाद खिल-खिला कर हँसे और ऐसा मालूम हुआ कि वह आपे में नहीं हैं। कासकों ने घबरा कर उनको सँभाला और समझाने लगे कि यह वक़्त सब्र से काम लेने का है। अगर होश-हवाश ठीक रहे तो शायद किसी तदबीर से वापस जा सको वरना खुदा ही हाफ़िज़ है। साइबेरिया से कितने ही क़ैदी भाग आते हैं, मगर तुम तो अभी से हिम्मत हारे देते हो।

इतने में वह जहाज़ जिस पर सवार हो कर आज़ाद को डैन्यूब के पार जाना था, तैयार हो गया। तब तो आज़ाद की आँखों से आँसुओं का ऐसा तार बँधा कि कासकों के भी रूमाल तर हो गये। जिस वक़्त जहाज़ पर सवार हुए दिल क़ाबू में न रहा। रो-रो कर कहने लगे—हुस्नआरा, अब आज़ाद का पता न मिलेगा। आज़ाद अब दूसरी दुनिया में हैं, अब ख्वाब में इस आज़ाद की सूरत न देखोगी जिसे तुमने रूम भेजा।

यह कहते-कहते आज़ाद बेहोश हो गये। कासकों ने उनको इत्र सुँघाया और खूब पानी के छींटे दिये तब जा कर कहीं उनकी आँखें खुलीं। इतने में जहाज़ उस पार पहुँच गया तो आज़ाद ने रूम की तरफ मुँह करके कहा—आज सब झगड़ा खत्म हो गया। अब आज़ाद की क़ब्र साइबेरिया में बनेगी और कोई उस पर रोनेवाला न होगा।

कासकों ने शाम को एक बाग में पड़ाव डाला और रात भर वहीं आराम किया। लेकिन जब सुबह को कूच की तैयारियाँ होने लगीं तो आज़ाद का पता न था। चारों तरफ़ हुल्लड़ मच गया, इधर-उधर सवार छूटे, पर आज़ाद का पता न पाया। वह बेचारे एक नयी मुसीबत में फँस गये थे।

सबेरे मियाँ आज़ाद की आँख जो खुली तो अपने को अजब हालत में पाया।

ज़ोर की प्यास लगी हुई थी, तालू सूखा जाता था, आँखें भारी, तबीयत सुस्त, जिस चीज़ पर नज़र डालते थे, धुँधली दिखायी देती थी। हाँ, इतना अलबत्ता मालूम हो रहा था कि उनका सिर किसी के जानू पर है। मारे प्यास के ओठ सूख गये थे, गो आँखें खोलते थे, मगर बात करने की ताक़त न थी। इशारे से पानी माँगा और जब पेट भर पानी पी चुके तो होश आया। क्या देखते हैं कि एक हसीन औरत सामने बैठी हुई है। औरत क्या, हूर थी। आज़ाद ने कहा, ख़ुदा के वास्ते बताओ कि तुम कौन हो? हमें कैसे यहाँ फाँस लायीं, मेरी तो कुछ समझ ही में नहीं आता, कासक कहाँ हैं? डैन्यूब कहाँ है? मैं यहाँ क्यों छोड़ दिया गया? क्या साइबेरिया इसी मुक़ाम का नाम है? हसीना ने आँखों के इशारे से कहा—सब्र करो, सब कुछ मालूम हो जायगा। आप तुर्की हैं या फ्रांसीसी?

आज़ाद—मैं हिंदी हूँ। क्या यह आप ही का मकान है?

हसीना—नहीं, मेरा मकान पोलैंड में है, मगर मुझे यह जगह बहुत पसंद है। आइए, आपको मकान की सैर कराऊँ।

आज़ाद ने देखा कि पहाड़ की एक ऊँची चोटी पर क़ीमती पत्थरों की एक कोठी बनी है। पहाड़ ढालू था और उस पर हरी-हरी घास लहरा रही थी। एक मील के फ़ासिले पर एक पुराना गिरजा का सुनहला मीनार चमक रहा था। उत्तर की तरफ़ डैन्यूब नदी अजब शान से लहरें मारती थी! किश्तियाँ दरिया में आती हैं। रूस की फ़ौजें दरिया के पार जाती हैं। मेढा हवा से उछल रहा है। कोठी के अंदर गये तो देखा कि पहाड़ को काट कर दीवारें बनी हैं। उसकी सजावट देख कर उनकी आँखें खुल गयीं। छत पर गये तो ऐसा मालूम हुआ कि आसमान पर जा पहुँचे। चारों तरफ़ पहाड़ों की ऊँची-ऊँची चोटियाँ हरी-हरी दूब से लहरा रही थीं। कुदरत का यह तमाशा देख कर आज़ाद मस्त हो गये और यह शेर उनकी ज़बान से निकला—

लगी है मेंह की झड़ी, बाग़ में चलो झूल,
कि झूलने का मज़ा भी इसी बहार में है।
यह कौन फूटके रोया कि दर्द की आवाज़,
रची हुई जो पहाड़ों के आबशार में है।

हसीना—मुझे यह जगह बहुत पसंद है। मैंने जिंदगी भर यहीं रहने का इरादा किया है, अगर आप भी यहीं रहते तो बड़े मज़े से ज़िंदगी कटती!

आज़ाद—यह आपकी मिहरबानी है! मैं तो लड़ाई खत्म हो जाने के बाद अगर छूट सका तो वतन चला जाऊँगा।

हसीना—इस खयाल में न रहिएगा, अब इसी को अपना वतन समझिए।

आज़ाद—मेरा यहाँ रहना कई जानों का गाहक हो जायगा। जिस ख़ातून ने मुझे लड़ाई में शरीक़ होने के लिए यहाँ भेजा है, वह मेरे इंतज़ार में रो-रो कर जान दे देगी।

हसीना—आपकी रिहाई अब किसी तरह मुमकिन नहीं। अगर आपको अपनी जान की मुहब्बत है तो वतन का खयाल छोड़ दीजिए, वरना सारी ज़िंदगी साइबेरिया में काटनी पड़ेगी।

आज़ाद—इसका कोई ग़म नहीं, मगर कौल जान के साथ है।

हसीना—मैं फिर समझाये देती हूँ। आप पछतायेंगे।

आज़ाद—आपको अख्तियार है।

यह सुनते ही उस औरत ने आज़ाद को फिर क़ैदख़ाने में भेजवा दिया।

अब मियाँ खोजी का हाल सुनिए। रूसियों ने उन्हें दीवाना समझ कर जब छोड़ दिया तो आप तुर्कों की फ़ौज़ में पहुँच कर दून की लेने लगे। हमने यों रूसियों से मुक़ाबिला किया और यों नीचा दिखाया। एक रूसी पहलवान से मेरी कुश्ती भी हो गयी, बहुत बफर रहा था। मुझसे न रहा गया। लँगोट कसा और खुदा का नाम ले कर ताल ठोंकके अखाड़े में उतर पड़ा, वह भी दाँव-पेंच में बर्क़ था और हाथ-पाँव ऐसे कि क्या कहूँ। मेरे हाथ-पाँव से भी बड़े।

एक सिपाही—एँ, अजी हम न मानेंगे। आपके हाथ-पाँव से ही हाथ-पाँव तो देव के भी न होंगे!

खोजी—बस, ज्यों ही उसने हाथ बढ़ाया, मैंने हाथ बाँध लिया। फिर जो ज़ोर करता हूँ तो हाथ खट से अलग!

सिपाही—अरे, हाथ ही तोड़ डाले। बेचारे को कहीं का न रखा!

खोजी—बस, फिर दूसरा आया, मैंने गरदन पकड़ी और अंटी दी, धम से गिरा। तीसरा आया, चपत जमायी और धर दबाया। चौथा आया, अडंगा मारा और धम से गिरा दिया। पाँचवाँ आया और मैंने मारे क़रौलियों के कचूमर निकाल लिया।

सिपाही—आपने बुरा किया। ताक़तवर लोग कमज़ोरों पर रहम किया करते हैं।

खोजी—तब कई सवार तोपें लिये हुए आये; मगर मैंने सबको पटका। आखिर कोई सत्तर आदमी मिल कर मुझ पर टूट पड़े तब जाके कहीं मैं गिरफ़्तार हुआ।

सिपाही—बस, सत्तर ही! सत्तर आदमियों को तो आप पीस कर धर देते। कम से कम कोई दो सौ तो ज़रूर होंगे!

खोजी—झूठ न बोलूँगा, मुझे सबों ने रखा बड़ी इज्ज़त के साथ। रात भर तो मैं वहीं रहा, सबेरा होते ही क़रौली ले कर ललकारा कि आ जाओ जिसको आना हो, बंदा चलता है। बस कोई दो करोड़ रूसी निकल पड़े—लेना-लेना! अरे मैंने कहा कि किसका लेना और किसका देना, आ जा जिसे आना हो। खुदा की क़सम जो किसी ने चूँ भी की हो। सब के सब डर गये।

तुर्क समझ गये कि निरा जाँगलू है। खोजी ने यही समझा कि मैंने इन सबों को उल्लू बनाया। दिन भर तो पीनक लेते रहे, शाम के वक़्त हवा खाने निकले। इत्तिफ़ाक़ से राह में एक गधा मिल गया। आप फ़ौरन गधे पर सवार हुए और टिक-टिक

करते चले। थोड़ी ही दूर गये थे कि एक आदमी ने ललकारा—रोक ले गधा, कहाँ लिये जाता है ?

खोजी—हट जा सामने से।

जवान—उतर गधे से। उतरता है या मैं दूँ खाने भर को ?

खोजी—तू नहीं छोड़ेगा, निकालूँ क़रौली फिर ?

आखिर, उस जवान ने खोजी को गधे से ढकेल दिया, तब आप चोर-चोर का गुल मचाने लगे। यह गुल सुन कर दो-चार आदमी आ गये और खोजी को चपतें जमाने लगे।

खोजी—तुम लोगों की क़ज़ा आयी है, मैं धुनके रख दूँगा।

जवान—चुपके से घर की राह लो, ऐसा न हो, मुझे तुम्हारी खोपड़ी सुहलानी पड़े।

इत्तिफ़ाक़ से एक तुर्की सवार का उस तरफ़ से गुज़र हुआ। खोजी ने चिल्ला कर कहा—दोहाई है सरकार की! यह डाकू मारे डालते हैं।

सवार ने खोजी को देख कर पूछा—तुम यहाँ कहाँ ?

खोजी—ये लोग मुझे तुर्की का दोस्त समझ कर मारे डालते हैं।

सवार ने उन आदमियों को डाँटा और अपने साथ चलने का हुक्म दिया। खोजी शेर हो गये। एक के कान पकड़े और कहा, आगे चल। दूसरे पर चपत जमायी और कहा, पीछे चल।

इस तरह खोजी ने इन बेचारों की बुरी गत बनायी, मगर पड़ाव पर पहुँच कर उन्हें छोड़वा दिया।

जब सब लोग खा कर लेटे तो खोजी ने फिर डींग मारनी शुरू की। एक बार मैं दरिया नहाने गया तो बीचोबीच में जा कर ऐसा ग़ोता लगाया कि तीन दिन पानी से बाहर न हुआ।

एक सिपाही—तब तो आप यों कहिए कि आप ग़ोताखोरों के उस्ताद हैं। कल ज़रा हमें भी ग़ोता ले कर दिखाइए।

खोजी—हाँ-हाँ, जब कहो।

सिपाही—अच्छा तो कल की रही।

खोजी ने समझा, यह सब रोब में आ जायँगे। मगर वे एक छटे गुर्गे। दूसरे दिन उन सबों ने खोजी को साथ लिया और दरिया नहाने को चले। पड़ाव से दरिया साफ़ नज़र आता था। खोजी के बदन के रोंगटे खड़े हो गये। भागने ही को थे कि एक आदमी ने रोक लिया और दो तुर्कों ने उनके कपड़े उतार लिये। खोजी की यह कैफ़ियत थी कि कलेजा थरथर काँप रहा था, मगर ज़बान से बात न निकलती थी। जब उन्होंने देखा कि अब गला न छूटेगा तो मिन्नतें करने लगे—भाइयो, मेरी जान के क्यों दुश्मन हुए हो ? अरे यारो, मैं तुम्हारा दोस्त हूँ, तुम्हारे सबब से इतनी ज़हमत उठायी, कैद हुआ और अब तुम लोग हँसी-हँसी में मुझे डुबा देना चाहते हो।

ग़रज़ ख़ोजी बहुत गिड़गिड़ाये, मगर तुर्कों ने एक न मानी। ख़ोजी मिन्नतें करते-करते थक गये तो कोसने लगे—ख़ुदा तुमसे समझे! यहाँ कोई अफ़सर भी नहीं है। न हुई क़रौली, नहीं इस वक़्त जीता चुनवा देता। ख़ुदा करे, तुम्हारे ऊपर बिजली गिरे। सब के सब कपड़े उतार लिये, गोया उनके बाप का माल था। अच्छा गीदी, अगर जीता बचा तो समझ लूँगा। मगर दिल्लगीबाज़ों ने इतने ग़ोते दिये कि वे बेदम हो गये और एक ग़ोता खा कर डूब गये।

आज़ाद को साइबेरिया भेज कर मिस क्लारिसा अपने वतन को रवाना हुई और रास्ते में एक नदी के किनारे पड़ाव किया। वहाँ की आब-हवा उसको ऐसी पसंद आयी कि कई दिन तक उसी पड़ाव पर शिकार खेलती रही। एक दिन मिस क्लारिसा ने सुबह को देखा कि उसके खेमे के सामने एक दूसरा बहुत बड़ा खेमा खड़ा हुआ है। हैरत हुई कि या खुदा, यह किसका सामान है। आधी रात तक सन्नाटा था, एकाएक खेमे कहाँ से आ गये! एक औरत को भेजा कि जा कर पता लगाये कि ये लोग कौन हैं। वह औरत जो खेमे में गयी तो क्या देखती है कि एक जवाहिरनिगार तख्त पर एक हूरों को शरमानेवाली शाहज़ादी बैठी हुई है। देखते ही दंग हो गयी। जा कर मिस क्लारिसा से बोली—हुजूर, कुछ न पूछिए, जो कुछ देखा, अगर ख्वाब नहीं तो जादू ज़रूर है। ऐसी औरत देखी कि परी भी उसकी बलायें ले।

क्लारिसा—तुमने कुछ पूछा भी कि हैं कौन?

लौंडी—हुजूर, मुझ पर तो ऐसा रोब छाया कि मुँह से बात ही न निकली। हाँ, इतना मालूम हुआ कि एक रईसज़ादी है और सैर करने के लिए आयी हैं।

इतने में वह औरत खेमे से बाहर निकल आयी। क्लारिसा ने झुक कर उसको सलाम किया और चाहा कि बढ़ कर हाथ मिलाये, मगर उसने क्लारिसा की तरफ़ तेज़ निगहों से देख कर मुँह फेर लिया। वह कोहक़ाफ़ की परी मीडा थी। जब से उसे मालूम हुआ था कि क्लारिसा ने आज़ाद को साइबेरिया भेजवा दिया है, वह उसके खून की प्यासी हो रही थी। इस वक़्त क्लारिसा को देख कर उसके दिल ने कहा कि ऐसा मौक़ा फिर हाथ न आयेगा, मगर फिर सोचा कि पहले नरमी से पेश आऊँ। बातों-बातों में सारा माजरा कह सुनाऊँ, शायद कुछ पसीजे।

क्लारिसा—तुम यहाँ क्या करने आयी हो?

मीडा—मुसीबत खींच लायी है, और क्या कहूँ। लेकिन आप यहाँ कैसे आयीं?

क्लारिसा—मेरा भी वही हाल है। वह देखिए, सामने जो क़ब्र है उसी में वह दफ़न है जिसकी मौत ने मेरी जिंदगी को मौत से बदतर बना दिया है। हाय! उसकी प्यारी सूरत मेरी निगाह के सामने है, मगर मेरे सिवा किसी को नज़र नहीं आती।

मीडा—मैं भी उसी मुसीबत में गिरफ़्तार हूँ। जिस जवान को दिल दिया, जान दी, ईमान दिया, वह अब नज़र नहीं आता, उसको एक ज़ालिम बाग़वान ने बाग़ से जुदा कर दिया। खुदा जाने, वह ग़रीब किन जंगलों में ठोकरें खाता होगा।

क्लारिसा—मगर तुम्हें यह तसकीन तो है कि तुम्हारा यार जिंदा है और कभी न कभी उससे मुलाक़ात होगी। मैं तो उसके नाम कोरो चुकी। मेरे और उसके

माँ-बाप शादी करने पर राज़ी थे, हम ख़ुश थे कि दिल की मुरादें पूरी होंगी, मगर शादी के एक ही दिन पहले आसमान टूट पड़ा, मेरे प्यारे को फ़ौज में शरीक़ होने का हुक्म मिला। मैंने सुना तो जान सी निकल गयी। लाख समझाया, मगर उसने एक न सुनी। जिस रोज़ यहाँ से रवाना हुआ, मैंने खूब मातम किया और रुख़सत हुई। यहाँ रात-दिन उसकी जुदाई में तड़पा करती थी, मगर अख़बारों में लड़ाई के हाल पढ़ कर दिल को तसल्ली देती थी। एकाएक अखबार में पढ़ा कि उसकी एक तुर्की पाशा से तलवार चली, दोनों जख्मी हुए, पाशा तो बच गया, मगर वह बेचारा जान से मारा गया। उस पाशा का नाम आज़ाद है। यह खबर सुनते ही मेरी आँखों में ख़ून उतर आया, दिल में ठान लिया कि अपने प्यारे के ख़ून का बदला आज़ाद से लूँगी। यह तय करके यहाँ से चली और जब आज़ाद मेरे हाथों से बच गया तो मैंने उसे साइबेरिया भेजवा दिया।

मीडा यह सुन कर बेहोश हो गयी।

जिस वक़्त खोजी ने पहला ग़ोता खाया तो ऐसे उलझे कि उभरना मुश्किल हो गया। मगर थोड़ी ही देर में तुर्कों ने ग़ोते लगा कर इन्हें ढूँढ़ निकाला। आप किसी क़दर पानी पी गये थे। बहुत देर तक तो होश ही ठिकाने न थे। जब ज़रा होश आया तो सबको एक सिरे से गालियाँ देना शुरू कीं। सोचे कि दो-एक रोज़ में ज़रा टाँठा हो लूँ तो इनसे खूब समझूँ। डेरे पर आ कर आज़ाद के नाम खत लिखने लगे। उनसे एक आदमी ने कह दिया था कि अगर किसी आदमी के नाम खत भेजना हो और पता न मिलता हो तो खत को पत्तों में लपेट दरिया के किनारे खड़ा हो और तीन बार 'भेजो-भेजो' कह कर खत को दरिया में डाल दे, खत आप ही आप पहुँच जायगा। खोजी के दिल में यह बात बैठ गयी। आज़ाद के नाम एक खत लिख कर दरिया में डाल आये। उस खत में आपने बहादुरी के कामों की खूब डींगें मारी थीं।

रात का वक़्त था, ऐसा अँधेरा छाया हुआ था, गोया तारीकी का दिल सोया हो। ठंडी हवा के झोंके इतने ज़ोर से चलते थे कि रूह तक काँप जाती थी। एका-एक रूस की फ़ौज़ से नक्कारे की आवाज़ आयी। मालूम हुआ कि दोनों तरफ़ के लोग लड़ने को तैयार हैं। खोजी घबरा कर उठ बैठे और सोचने लगे कि यह आवाज़ें कहाँ से आ रही हैं? इतने में तुर्की फ़ौज़ भी तैयार हो गयी और दोनों फ़ौज़ें दरिया के किनारे जमा हो गयीं। खोजी ने दरिया की सूरत देखी तो काँप उठे। कहा—अगर खुश्की की लड़ाई होती तो हम भी आज जौहर दिखाते। यों तो सब अफ़सर और सिपाही ललकार रहे थे, मगर खोजी की उमंगें सबसे बढ़ी हुई थीं। चिल्ला चिल्ला कर दरिया से कह रहे थे कि अगर तू खुश्क हो जाय तो मैं फिर मज़ा दिख-लाऊँ। एक हाथ में परे के परे काट कर रख दूँ।

गोला चलने लगा। तुर्कों की तरफ़ से एक इंजीनियर ने कहा कि यहाँ से आध मील के फ़ासिले पर किश्तियों का पुल बाँधना चाहिए। कई आदमी दौड़ाये गये कि जा कर देखें, रूसियों की फ़ौज़ें किस-किस मुक़ाम पर हैं। उन्होंने आ कर बयान किया कि एक कोस तक रूसियों का नाम-निशान नहीं है। फ़ौरन पुल बनाने का इंतज़ाम होने लगा। यहाँ से डेढ़ कोस पर पैंतीस किश्तियाँ मौजूद थीं। अफ़सर ने हुक्म दिया कि उन किश्तियों को यहाँ लाया जाय। उसी दम दो सवार घोड़े कड़कड़ाते हुए आये। उनमें से एक खोजी थे।

खोजी—पैंतीस किश्तियाँ यहाँ से आधा कोस पर मुस्तैद हैं। मैंने सोचा, जब तक सवार तुम्हारे पास पहुँचेंगे और तुम हुक्म दोगे कि किश्तियाँ आयें तब तक यहाँ खुदा जाने क्या हो जाय, इसलिए एक सवार को ले कर फौरन किश्तियों को इधर ले आया।

फ़ौज़ के अफ़सर ने यह सुना तो खोजी की पीठ ठोंक दी और कहा—शाबाश ! इस वक़्त तो तुमने हमारी जान बचा दी।

खोजी अकड़ गये। बोले—जनाब, हम कुछ ऐसे-वैसे नहीं हैं ! आज हम दिखा देंगे कि हम कौन हैं। एक-एक को चुन-चुन कर मारूँ !

इतने में इंजीनियरों ने फ़ुर्ती के साथ किश्ती का पुल बाँधने का इंतजाम किया। जब पुल तैयार हो गया तो अफ़सर ने कुछ सवारों को उस पार भेजा। खोजी भी उनके साथ हो लिये। जब पुल के बीच में पहुँचे तो एक दफ़ा गुल मचाया—ओ गीदी, हम आ पहुँचे।

तुर्कों ने उनका मुँह दबाया और कहा—चुप !

इतने में तुर्कों का दस्ता उस पार पहुँच गया। रूसियों को क्या खबर थी कि तुर्क लोग क्या कर रहे हैं। इधर खोजी जोश में आ कर तीन-चार तुर्कों को साथ ले दरिया के किनारे-किनारे घुटनों के बल चले। जब उनको मालूम हो गया कि रूसी फ़ौज़ थक गयी तो तुर्कों ने एक दम से धावा बोल दिया। रूसी घबरा उठे। आपस में सलाह की कि अब भाग चलें। खोजी भी घोड़े पर सवार थे, रूसियों को भागते देखा तो घोड़े को एक एड़ दी और भागते सिपाहियों में से सात आदमियों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। तुर्की फ़ौज़ में वाह-वाह का शोर मच गया। ख्वाजा साहब अपनी तारीफ़ सुन कर ऐसे खुश हुए कि परे में घुस गये और घोड़े को बढ़ा-बढ़ा कर तलवार फेंकने लगे। दम के दम में रूसी सवारों से मैदान खाली कर दिया। तुर्की फ़ौज़ में खुशी के शादियाने बजने लगे। ख्वाजा साहब के नाम फ़तह लिखी गयी। इस वक़्त उनके दिमाग़ सातवें आसमान पर थे। अकड़े खड़े थे। बात-बात पर बिगड़ते। हुक्म दिया—फ़ौज़ के जनरल से कहो, आज हम उनके साथ खाना खायेंगे। खाना खाने बैठे तो मुँह बनाया, वाह ! इतने बड़े अफ़सर और यह खाना। न मीठे चावल, न फिरनी, न पोलाव। खाना खाते वक़्त अपनी बहादुरी की कथा कहने लगे—वल्लाह, सबों के हौसले पस्त कर दिये। ख्वाजा साहब हैं कि बातें ! मेरा नाम सुनते ही दुश्मनों के कलेजे काँप गये। हमारा वार कोई रोक ले तो जानें। बरसों मुसीबतें झेली हैं तब जाके इस क़ाबिल हुए कि रूसियों के लश्कर में अकेले घुस पड़े ! और हमें डर किसका है ? बहिश्त के दरवाज़े खुले हुए हैं।

अफ़सर—हमने वज़ीर-जंग से दरख्वास्त की है कि तुमको इस बहादुरी का इनाम मिले।

खोजी—इतना ज़रूर लिखना कि यह आदमी दगलेवाली पलटन का रिसालदार था।

अफ़सर—दगलेवाली पलटन कैसी ? मैं नहीं समझा।

खोजी—तुम्हारे मारे नाक में दम है और तुम हिंदी की चिंदी निकालते हो। अवध का हाल मालूम है या नहीं ? अवध से बढ़ कर दुनिया में और कौन बादशाहत होगी ?

अफ़सर—हमने अवध का नाम नहीं सुना। आपको कोई खिताब मिले तो आप पसंद करेंगे ?

खोजी—वाह, नेकी और पूछ-पूछ !

उस दिन से सारी फ़ौज़ में खोजी की धूम मच गयी। एक दिन रूसियों ने एक पहाड़ी पर से तुर्कों पर गोले उतारने शुरू किये। तुर्क लोग आराम से लेटे हुए थे। एकाएक तोप की आवाज़ सुनी तो घबरा गये। जब तक मुक़ाबला करने के लिए तैयार हों तब तक उनके कई आदमी काम आये। उस वक़्त खोजी ने अपने सिपाहियों को ललकारा, तलवार खींच पहाड़ी पर चढ़ गये और कई आदमियों को ज़ख्मी किया, इससे उनकी और भी धाक बैठ गयी। जिसे देखो, उन्हीं की तारीफ़ कर रहा था

एक सिपाही—आपने आज वह काम किया है कि रुस्तम से भी न होता। अब आपके वास्ते कोई खिताब तजवीजा जायगा।

खोजी—मेरा आज़ाद आ जाय तो मेरी मिहनत ठिकाने लगे, वरना सब हेच है।

अफ़सर—जिस वक्त तुम घोड़े से गिरे, मेरे होश उड़ गये।

खोजी—गिरते ही सँभल भी गये थे।

अफ़सर—चित गिरे थे ?

खोजी—जी नहीं। पहलवान जब गिरेगा, पट गिरेगा

अफ़सर—जरा सा तो आप का क़द है और इतनी हिम्मत !

खोजी—क्या कहा, ज़रा सा कद, किसी पहलवान से पूछिए। कितनी ही कुश्तियाँ जीत चुका हूँ।

अफ़सर—हमसे लड़िएगा ?

खोजी—आप ऐसे दस हों तो क्या परवा ?

फ़ौज़ के अफसर ने उसी दिन वज़ीर-जंग के पास खोजी की सिफ़ारिश लिख भेजी।

खोजी थे तो मसखरे, मगर वफ़ादार थे। उन्हें हमेशा आज़ाद की धुन सवार रहती थी। बराबर याद किया करते थे। जब उन्हें मालूम हुआ कि आज़ाद को पोलैंड की शाहज़ादी ने क़ैद कर दिया है तो वह आज़ाद को खोजने निकले। पूछते-पूछते किसी तरह आज़ाद के कैदखाने तक पहुँच ही तो गये। आज़ाद ने उन्हें देखते ही गोद में उठा लिया।

खोजी—आज़ाद, आज़ाद, अरे मियाँ, तुम कौन हो?

आज़ाद—ओ-हो-हो!

खोजी—भाईजान, तुम भूत हो या प्रेत, हमें छोड़ दो। मैं अपने आज़ाद को ढूँढ़ने जाता हूँ।

आज़ाद—पहले यह बताओ कि यहाँ कैसे पहुँचे?

खोजी—सब बतलायेंगे मगर पहले यह तो बताओ कि तुम्हारी यह गति कैसी हो गयी?

आज़ाद ने सारी बातें खोजी को समझायीं, तो आपने कहा—वल्लाह, निरे गाउदी हो। अरे भाईजान, तुम्हारी जान के लाले पड़े हैं, तुमको चाहिए कि जिस तरह मुमकिन हो, शाहज़ादी को खुश करो, तुमको तो यह दिखाना चाहिए कि शाहज़ादी को छोड़ कर कहीं जाओगे ही नहीं। खूब इश्क़ जताओ, तब कहीं तुम्हारा ऐतबार होगा।

आज़ाद—हो सिड़ी तो क्या हुआ, मगर बात ठिकाने की करते हो, मगर यह तक़रीर कौन करे?

खोजी—और हम आये क्या करने हैं?

यह कह कर आप शाहज़ादी के सामने आ कर खड़े हो गये। उसने इनकी सूरत देखी तो हँस पड़ी। मियाँ खोजी समझे कि हम पर रीझ गयी। बोले—क्या लड़वाओगी क्या? आज़ाद सुनेगा तो बिगड़ उठेगा। मगर वाह रे मैं! जिसने देखा, वही रीझा और यहाँ यह हाल है कि किसी से बोलते तक नहीं। एक हो तो बोलूँ, दो हो तो बोलूँ, चार निकाह तक तो जायज़ हैं, मगर जब इंद्र का अखाड़ा पीछे पड़ जाय तो क्या करूँ?

शाहज़ादी—ज़रा बैठ तो जाइए। यह तो अच्छा नहीं मालूम होता कि मैं बैठी रहूँ और आप खड़े रहें।

खोजी—पहले यह बताओ कि दहेज़ क्या दोगी?

अरबिन – और अकड़ते किस बिरते पर हो। सूखी हड्डियों पर यह ग़रूर?

खोजी—तुम पहलवानों की बातें क्या जानो। यह चोर-बदन कहलाता है; अभी अखाड़े में उतर पड़ूँ तो फिर कैफ़ियत देखो।

अरबिन—टेनी मुर्ग़ी के बराबर तो आपका क़द है और दावा इतना लम्बा-चौड़ा !

खोजी—तुम गँवारिन हो, ये बातें क्या जानो। तुम क़द को देखा चाहो और यहाँ लम्बे आदमी को लोग बेवक़ूफ़ कहते हैं। शेर को देखो और ऊँट को देखो। मिस्र में एक बड़े ग्रांडील जवान को पटकनी बतायी। मारा, चारों खाने चित। उठ कर पानी भी न माँगा।

ख़ैर; बहुत कहने-सुनने से आप कुरसी पर बैठे तो दोनों टाँगें कुरसी पर रख लीं और बोले—अब दहेज़ का हाल बताओ। लेकिन मैं एक शर्त से शादी करूँगा, इन सब लौंडियों को महल बनाऊँगा और इनके अच्छे-अच्छे नाम रखूँगा। ताऊस-महल, गुलाम-महल...।

शाहज़ादी—तो आप अपनी शादी के फेर में हैं, यह कहिए।

खोजी—हँसती आप क्या हैं, अगर हमारा करतब देखना हो किसी पहलवान को बुलाओ। अगर हम कुश्ती निकालें तो शादी मंजूर ?

शाहज़ादी ने एक मोटी-ताज़ी हबशिन को बुलाया। खोजी ने आँख ऊपर उठायी तो देखते हैं कि एक काली-कलूटी देवनी हाथ में एक मोटा सोटा लिये चली आती है। देखते ही उनके होश उड़ गये। हबशिन ने आते ही इनके कंधे पर हाथ रखा तो इनकी जान निकल गयी। बोले—हाथ हटाओ।

हबशिन—दम हो तो हाथ हटा दो।

खोजी—मेरे मुँह न लगना, ख़बरदार !

हबशिन ने उनका हाथ पकड़ लिया और मरोड़ने लगी। खोजी झल्ला-झल्ला कर कहते थे, हाथ छोड़ दे। हाथ टूटा तो बुरी तरह पेश आऊँगा, मुझसे बुरा कोई नहीं।

हबशिन ने हाथ छोड़ कर उनके दोनों कान पकड़े और उठाया तो ज़मीन से छः अंगुल ऊँचे !

हबशिन—कहो, शादी पर राज़ी हो या नहीं ?

खोजी—औरत समझ कर छोड़ दिया। इसके मुँह कौन लगे !

इस पर हबशिन ने ख्वाजा साहब को गोद में उठाया और ले चली। उन्होंने सैकड़ों गालियाँ दीं—खुदा तेरा घर ख़राब करे, तुम पर आसमान टूट पड़े, देखो, मैं कहे देता हूँ कि पीस डालूँगा। मैं सिर्फ़ इस सबब से नहीं बोलता कि मर्द हो कर औरत ज़ात से क्या बोलूँ। कोई पहलवान होता तो मैं अभी समझ लेता, और समझता क्या ? मारता चारों खाने चित।

अरबिन—ख़ैर, दिल्लगी तो हो चुकी, अब यह बताओ कि आज़ाद से तुमने क्या कहा ? वह तो आपके दोस्त हैं।

खोजी—ऊँह, तुमको किसी ने बहका दिया, वह दोस्त नहीं, लड़के हैं। मैंने उसके नाम एक ख़त लिखा है, ले जाओ और उसका जवाब लाओ !

अरबिन आपका ख़त ले कर आज़ाद के पास पहुँची और बोली—हुज़ूर, आपके वालिद ने इस ख़त का जवाब माँगा है।

आज़ाद—किसने माँगा है ? तुमने यह कौन लफ्ज़ कहा ?

अरबिन—हुज़ूर के वालिद ने...। वह जो ठेंगने से आदमी हैं।

आज़ाद—वह सुअर मेरे घर का गुलाम है। वह मसख़रा है। हम उसके ख़त का जवाब नहीं देते।

अरबिन ने आ कर ख़ोजी से कहा—आपका ख़त पढ़ कर आपके लड़के बहुत ही ख़फ़ा हुए।

ख़ोजी—नालायक़ है कपूत, जी चाहता है, अपना सिर पीट लूँ।

शाहज़ादी ने कहा—जा कर आज़ाद पाशा को बुला लाओ, इस झगड़े का फ़ैसला हो जाय।

ज़रा देर में आज़ाद आ पहुँचे। ख़ोजो उन्हें देख कर सिटपिटा गये।

इधर तो शाहज़ादी ख़ोजी के साथ यों मज़ाक़ कर रही थी। उधर एक लौंडी ने आ कर कहा—हुज़ूर, दो सवार आये हैं और कहते हैं कि शाहज़ादी को बुलाओ। हमने बहुत कहा कि शाहजादी साहब को आज फ़ुरसत नहीं है, मगर वह नहीं सुनते।

शाहज़ादी ने ख़ोजी से कहा कि बाहर जा कर इन सवारों से पूछो कि वह क्या चाहते हैं ? ख़ोजी ने जा कर उन दोनों को ख़ूब ग़ौर से देखा और आ कर बोले—हुज़ूर, मुझे तो रईसज़ादे मालूम होते हैं। शाहज़ादी ने जा कर शाहज़ादों को देखा तो आज़ाद भूल गये। उन्हें एक दूसरे महल में ठहराया और नौकरों को ताक़ीद कर दी कि इन मेहमानों को कोई तकलीफ़ न होने पाये। आज़ाद तो इस ख़याल में बैठे थे कि शाहज़ादी आती होगी और शाहज़ादी नये मेहमानों की ख़ातिरदारी का इंतज़ाम कर रही थी। लौंडियाँ भी चल दीं, ख़ोजी और आज़ाद अकेले रह गये।

आज़ाद—मालूम होता है, उन दोनों लौंडों को देख कर लट्टू हो गयी।

ख़ोजी—तुमसे तो पहले ही कहते थे, मगर तुमने न माना। अगर शादी हो गयी होती तो मजाल थी कि ग़ैरों को अपने घर में ठहराती।

आज़ाद—जी चाहता है, इसी वक़्त चल कर दोनों के सिर उड़ा दूँ।

ख़ोजी—यही तो तुममें बुरी आदत है। ज़रा सब्र से काम लो, देखो क्या होता है।

७९

इन दोनों शाहज़ादों में एक का नाम मिस्टर क्लार्क था और दूसरे का हेनरी। दोनों की उठती जवानी थी। निहायत ख़ूबसूरत। शाहज़ादी दिन के दिन उन्हीं के पास बैठी रहती, उनकी बातें सुनने से उसका जी न भरता था। मियाँ आज़ाद तो मारे जलन के अपने महल से निकलते ही न थे। मगर ख़ोजी टोह लेने के लिए दिन में कई बार यहाँ आ बैठते थे। उन दोनों को भी ख़ोजी की बातों में बड़ा मज़ा आता।

एक दिन ख़ोजी दोनों शाहज़ादों के पास गये, तो इत्तिफ़ाक़ से शाहज़ादी वहाँ न थी। दोनों शाहज़ादों ने ख़ोजी की बड़ी ख़ातिर की। हेनरी ने कहा—ख़्वाजा साहब, हमको पहचाना ?

यह कह कर उसने टोप उतार दिया! ख़ोजी चौंक पड़े। यह मीडा थी। बोले—मिस मीडा, ख़ूब मिलीं।

मीडा—चुप-चुप! शाहज़ादी न जानने पाये। हम दोनों इसी लिए आये हैं कि आज़ाद को यहाँ से छुड़ा ले जायँ।

ख़ोजी—अच्छा, क्या यह भी औरत हैं ?

मीडा—यह वही औरत हैं जो आज़ाद को पकड़ ले गयी थीं।

ख़ोजी—अल्लाह, मिस क्लारिसा! आप तो इस क़ाबिल हैं कि आपका बायाँ क़दम ले।

मीडा—अब यह बताओ कि यहाँ से छुटकारा पाने की भी कोई तदबीर है ?

ख़ोजी—हाँ, वह तदबीर बताऊँ कि कभी पट ही न पड़े! यह शाहज़ादी बड़ी पीनेवाली है, इसे ख़ूब पिलाओ और जब बेहोश हो जाय तो ले उड़ो।

ख़ोजी ने जा कर आज़ाद से यह क़िस्सा कहा। आज़ाद बहुत ख़ुश हुए! बोले—मैं दोनों की सूरत देखते ही ताड़ गया था।

ख़ोजी—मिस क्लारिसा कहीं तुम्हें दग़ा न दे।

आज़ाद—अजी नहीं, यह मुहब्बत की घातें हैं।

ख़ोजी—अभी ज़रा देर में महफ़िल जमेगी। न कहोगे, कैसी तदबीर बतायी!

ख़ोजी ने ठीक कहा था। थोड़ी ही देर में शाहज़ादी ने इन दोनों आदमियों को बुला भेजा। ये लोग वहाँ पहुँचे तो शराब के दौर चल रहे थे।

शाहज़ादी—आज हम शर्त लगा कर पियेंगे।

हेनरी—मंजूर। जब तक हमारे हाथ से जाम न छूटे तब तक तुम भी न छोड़ो। जो पहले छोड़ दे वह हारा।

क्लार्क—(आज़ाद से) तुम कौन हो मियाँ, साफ़ बोलो !

आज़ाद—मैं आदमी नहीं हूँ, देवज़ाद हूँ। परियाँ मुझे ख़ूब जानती हैं।

क्लारिसा —

उड़ता है मुझसे ओ सितमईज़ाद किस लिए,
बनता है आदमी से परीज़ाद किस लिए ?

क्लारिसा ने शाहज़ादी को इतनी शराब पिलायी कि वह मस्त हो कर झूमने लगी। तब आज़ाद ने कहा—ख्वाजा साहब, आप सच कहना, हमारा इश्क़ सच्चा है या नहीं। मीडा, ख़ुदा जानता है, आज का दिन मेरी ज़िंदगी का सबसे मुबारक दिन है। किसे उम्मेद थी कि इस क़ैद में तुम्हारा दीदार होगा ?

खोजी – बहुत बहको न भाई, कहीं शाहज़ादी सुन रही हो तो आफ़त आ जाय।

आज़ाद—वह इस वक़्त दूसरी दुनिया में है।

खोजी – शाहज़ादी साहब, यह सब भागे जा रहे हैं, ज़रा होश में तो आइए।

आज़ाद—अबे चुप रह नालायक़। मीडा, बताओ, किस तदबीर से भागोगी ? मगर तुमने तो यह रूप बदला कि ख़ुदा की पनाह ! मैं यही दिल में सोचता था कि ऐसे हसीन शाहज़ादे कहाँ से आ गये, जिन्होंने हमारा रंग फीका कर दिया। वल्लाह, जो ज़रा भी पहचाना हो। मिस क्लारिसा, तुमने तो ग़ज़ब ही कर दिया। कौन जानता था कि साइबेरिया भेज कर तुम मुझे छुड़ाने आओगी !

मीडा—अब तो मौक़ा अच्छा है; रात ज़्यादा आ गयी है। पहरेवाले भी सोते होंगे, देर क्यों करें।

आज़ाद अस्तबल में गये और चार तेज़ घोड़े छाँट कर बाहर लाये। दोनों औरतें तो घोड़ों पर सवार हो गयीं, मगर खोजी की हिम्मत छूट गयी, डरे कि कहीं गिर पड़ें तो हड्डी-पसली चूर हो जाय। बोले—भई, तुम लोग जाओ; मुझे यहीं रहने दो। शाहज़ादी को तसल्ली देनेवाला भी तो कोई चाहिए। मैं उसे बातों में लगाये रखूँगा जिसमें उसे कोई शक न हो। ख़ुदा ने चाहा तो एक हफ़्ते के अंदर कुस्तुनतुनिया में तुमसे मिलेंगे।

यह कह कर खोजी तो इधर चले और वे तीनों आदमी आगे बढ़े। क़दम-क़दम पर पीछे फिर-फिर कर देखते थे कि कोई पकड़ने आ न रहा हो। सुबह होते-होते ये लोग डैन्यूब के किनारे आ पहुँचे और घोड़ों से उतर हरी-हरी घास पर टहलने लगे। एकाएक पीछे से कई सवार घोड़े दौड़ाते आते दिखायी पड़े। इन लोगों ने अपने घोड़े चरने को छोड़ दिये थे। अब भागें कैसे ? दम के दम में सब के सब सवार सिर पर आ पहुँचे और इन तीनों आदमियों को गिरफ़्तार कर लिया। अकेले आज़ाद भला तीस आदमियों का क्या मुक़ाबला करते !

दोपहर होते-होते ये लोग शाहज़ादी के यहाँ जा पहुँचे। शाहज़ादी तो ग़ुस्से से भरी बैठी थी। अंदर ही से कहला भेजा कि आज़ाद को क़ैद कर दो। यह हुक्म दे कर शाहज़ादों को देखने के लिए बाहर निकली तो शाहज़ादों की जगह दो शाहज़ादियाँ खड़ी नज़र आयीं ! धक से रह गयी। या ख़ुदा, यह मैं क्या देख रही हूँ !

क्लारिसा—बहन, मर्द के भेस में तो तुम्हें प्यार कर चुके। अब आओ, बहनें-बहनें मिल कर प्यार करें। हम वही हैं जिनके साथ तुम शादी करनेवाली हो।

शाहज़ादी—अरे क्लारिसा, तुम यहाँ कहाँ?

क्लारिसा—आओ गले मिलें। मुझे खौफ़ है कि कहीं तुम्हारे ऊपर कोई आफ़त न आ जाय। ऐसे नामी सरकारी क़ैदी को उड़ा लाना तुम्हें मुनासिब न था। वज़ीर-जंग को यह खबर मिल गयी है। अब तुम्हारी खैरियत इसी में है कि उस तुर्की जवान को हमारे हवाले कर दो।

शाहज़ादी समझ गयी कि अब आज़ाद को रुखसत करना पड़ेगा। आज़ाद से जा कर बोली—प्यारे आज़ाद, मैंने तुम्हारे साथ जो बुराइयाँ की हैं, उन्हें माफ़ करना। मैंने जो कुछ किया, दिल की जलन से मजबूर हो कर किया। तुम्हारी जुदाई मुझसे बरदाश्त न होगी। जाओ, रुखसत।

यह कह कर उसने क्लारिसा से कहा—शाहज़ादी, खुदा के लिए उन्हें साइबेरिया न भेजना। वज़ीरजंग से तुम्हारी जान-पहचान है! वह तुम्हारी बात मानते हैं, अगर तुम माफ़ कर दोगी, तो वह ज़रूर माफ़ कर देंगे।

उधर आज़ाद जब फ़ौज़ से गायब हुए तो चारों तरफ़ उनकी तलाश होने लगी। दो सिपाही घूमते-घामते शाहज़ादी के महल की तरफ़ आ निकले। इत्तिफ़ाक़ से खोजी भी अफ़ीम की तलाश में घूम रहे थे। उन दोनों सिपाहियों ने खोजी को आज़ाद के साथ पहले देखा था। खोजी को देखते ही पकड़ लिया और आज़ाद का पता पूछने लगे।

खोजी—मैं क्या जानूँ कि आज़ाद पाशा कौन है। हाँ, नाम अलबत्ता सुना है।

एक सिपाही—तुम आज़ाद के साथ हिंदुस्तान से आये हो और तुमको खूब मालूम है कि आज़ाद पाशा कहाँ हैं।

खोजी—कौन आज़ाद के साथ आया है? मैं पठान हूँ, पेशावर से आया हूँ, मुझसे आज़ाद से वास्ता?

मगर वह दोनों सिपाही भी छँटे हुए थे, खोजी के झाँसे में न आये। खोजी ने जब देखा कि इन ज़ालिमों से बचना मुश्किल है तो सोचे कि सिड़ी बन जाओ। कुछ का कुछ जवाब दो। मरना है तो दूसरे को ले कर मरो। मरना न होता तो अपना वतन छोड़ कर इतनी दूर आते ही क्यों। खास मज़े में नवाब के यहाँ दनदनाते थे। उल्लू बना-बना कर मज़े उड़ाते थे। चीनी की प्यालियों में मालवे की अफ़ीम घुलती थी, चंडू के छींटे उड़ते थे, चरस के दम लगते थे। वह सब मज़े छोड़-छाड़ कर उल्लू बने, मगर फँसे सो फँसे!

सिपाही—तुम्हारा नाम क्या है? सच-सच बता दो।

खोजी—कल तक दरिया चढ़ा था, आज चिड़िया दाना चुगेगी।

सिपाही—तुम्हारे बाप का क्या नाम था?

खोजी—हमको अपना नाम तो याद ही नहीं। बाप के नाम को कौन कहे?

सिपाही—तुम यहाँ किसके साथ आये?

खोजी—शैतान के साथ!

सिपाहियों ने जब देखा कि यह ऊल-जलूल बक रहा है तो उन्हें एक मोटे से दरख्त में बाँधा और बोले—ठीक-ठीक बतलाते हो तो बतला दो वरना हम तुम्हें फाँसी दे देंगे।

खोजी की आँखों से आँसू निकल पड़े। खुदा से दुआ माँगने लगे कि ऐ खुदा, मैं तो अब दुनिया से जा रहा हूँ, मगर मरते वक़्त दुआ माँगता हूँ कि आज़ाद का बाल भी बाँका न हो।

आखिर सिपाहियों को खोजी के सिड़ी होने का यक़ीन आ ही गया। छोड़ दिया। खोजी के सिर से यह बला टली तो चहकने लगे—तुम लोग ज़िंदगी के मज़े क्या जानो, हमने वह-वह मज़े उठाये हैं कि सुनो तो फड़क जाओ। नवाब साहब की

बदौलत बादशाह बने फिरते थे, सुबह से दस बजे तक चंडू के छींटे उड़े, फिर खाना खाया, सोये तो चार बजे की खबर लाये, चार बजे से अफ़ीम घूमने लगी, पौंडे छीले और गँड़ेरियाँ चूसीं, इतने में नवाब साहब निकल आये। वैसे रईस यहाँ कहाँ? वहाँ के एक अदना कहार ने बीस लाख की शराब अपनी बिरादरीवालों को एक रात में पिला दी। एक कहार ने सोने-चाँदी की कुज्जियों में शराब पिलायी। इस पर एक बूढ़े खुर्राट ने कहा—न भाई पंचो, आपन मरजाद न छोड़ब। हमरे बाप यही कुज्जी माँ पिहिन। हमरे दादा पिहिन, अब हम कहाँ के बड़े रईस होइ गयन! महरा नें सोने-चाँदी की प्यालियाँ मँगवायीं और फ़क़ीरों को बाँट दीं। दस हज़ार प्यालियाँ चाँदी की थीं और दस हजार सोने की। जब बादशाह को यह खबर मिली तो हुक्म दिया कि जितने कहार आये हों, सबको एक-एक लहँगा दिलवा दिया जाय। अब इस गयी-गुज़री हालत पर भी जो बात वहाँ है वह कहीं नहीं है।

सिपाही—आपके मुल्क में सिपाही तो अच्छे-अच्छे होंगे?

खोजी—हमारे मुल्क में एक से एक सिपाही मौजूद हैं। जो है अपने वक़्त का रुस्तम।

सिपाही—आप भी तो वहाँ के पहलवान ही मालूम होते हैं।

खोजी—इस वक़्त तो सर्दी ने मार डाला है, अब बुढ़ापा आया। जवानी में अलबत्ता मैं भी हाथी की दुम पकड़ लेता था तो हुमस नहीं सकता था। अब न वह शौक़, न वह दिल, अब तो फ़क़ीरी अख्तियार की।

सिपाही—आपकी शादी भी हुई है?

खोजी—आपने भी वही बात पूछी! फ़क़ीर आदमी, शादी हुई न हुई, बराबर के लड़के हैं।

सिपाही—आप कुछ पढ़े-लिखे भी हैं?

खोजी—ऊह, पूछते हैं, पढ़े लिखे हैं। यहाँ बिला पढ़े ही आलिमफ़ाज़िल हैं, पढ़ने का मरज़ नहीं पालते, यह आरज़ा तो यहीं देखा, अपने यहाँ तो चंडू, चरस, मदक के चरचे रहते हैं। हाँ, अगले जमाने में पढ़ने-लिखने का भी रिवाज था।

सिपाही—तो आपका मुल्क जाहिलों ही से भरा हुआ है?

खोजी—तुम खुद गँवार हो। हमारे यहाँ एक-एक पहलवान ऐसे पड़े हैं जो तीन-तीन हज़ार हाथ जोड़ी के हिलाते हैं। दंडों पर झुक गये तो चार पाँच हज़ार दंड पेल डाले। गुलचले ऐसे कि अँधेरी रात में सिर्फ़ आवाज़ पर तीर लगाया और निशाना खाली न गया।

ये बातें करके, खोजी ने अफ़ीम घोली और रूसियों से पीने के लिए कहा। और सबों ने तो इनकार किया, मगर एक मुसाफ़िर की शामत जो आयी तो उसने एक चुस्की लगायी। ज़रा देर में नशे ने रंग जमाया तो झूमने लगा। साथियों ने क़हक़हा लगाया।

खोजी—एक दिन का ज़िक्र है कि नवाब साहब के यहाँ हम बैठे गप्पें उड़ा रहे

थे। एक मौलवी साहब आये। यहाँ उस वक़्त सरूर डटा हुआ था, हमने अर्ज़ की, मौलवी साहब, अगर हुक्म हो तो एक प्याली हाज़िर करूँ। मौलवी ने आँखें नीली-पीली कीं और कहा—कोई मसखरा है बे तू! मैंने कहा—यार, ईमान से कह दो कि तुमने कभी अफ़ीम पी है या नहीं? मौलवी साहब इतने जामे से बाहर हुए कि मुझे हज़ारों गालियाँ सुनायीं। आज बड़ी सर्दी है, हम ठिठुरे जाते हैं।

सिपाही—यह वक़्त हवा खाने का है।

खोजी—खुदा की मार इस अक़्ल पर। यह वक़्त हवा खाने का है? यह वक़्त आग तापने का है। हमारे मुल्क के रईस इस वक़्त खिड़कियाँ बंद करके बैठे होंगे! हवा खाने की अच्छी कही, यहाँ तो रूह तक काँप रही है और आपको हवा खाने की सूझती है।

सिपाही—एक मुसाफिर ने हमसे कहा था कि हिंदोस्तान में लोग पुरानी रस्मों के बहुत पाबंद हैं। अब तक पुरानी लकीरें पीटते जाते हैं।

खोजी—तो क्या हमारे बाप-दादे बेवक़ूफ़ थे? उनकी रस्मों को जो न माने वह कपूत, जो रस्म जिस तरह पर चली आती है उसी तरह रहेगी।

सिपाही—अगर कोई रस्म खराब हो तो क्या उसमें तरमीम की ज़रूरत नहीं?

खोजी—लाख ज़रूरत हो तो क्या, पुरानी रस्मों में कभी तरमीम न करनी चाहिए। क्या वे लोग अहमक़ थे? एक आप ही बड़े अक्लमंद पैदा हुए!

रूसियों को खोजी की बातों में बड़ा मज़ा आया। उन्हें यक़ीन हो गया कि यह कोई दूसरा आदमी है। आज़ाद का दोस्त नहीं। खोजी को छोड़ दिया और कई दिन के बाद यह क़ुस्तुनतुनिया पहुँच गये।

एक दिन दो घड़ी दिन रहे चारों परियाँ बनाव-चुनाव करके हँस-खेल रही थीं। सिपहआरा का दुपट्टा हवा के झोंकों से उड़ा जाता था। जहानारा मोतिये के इत्र में बसी थीं। गेतीआरा का स्याह रेशमी दुपट्टा खूब खिल रहा था।

हुस्नआरा—बहन, यह गरमी के दिन और काला रेशमी दुपट्टा! अब कहने से तो बुरा मानिएगा, जहानारा बहन निखरें तो आज दूल्हा भाई आनेवाले हैं; यह आपने रेशमी दुपट्टा क्या समझ के फड़काया!

अब्बासी - आज चबूतरे पर अच्छी तरह छिड़काव नहीं हुआ।

हीरा—ज़रा बैठ कर देखिए तो, कोई दस मशकें तो चबूतरे ही पर डाली होंगी।

एकाएक महरी की छोकरी प्यारी दौड़ती हुई आयी और बोली—हुजूर, हमने यह आज बिल्ली पाली है। बड़ी सरकार ने खरीद दी और दो आने महीना बाँध दिया। सुबह को हम हलुआ खिलायेंगे। शाम को पेड़ा। उधर सिपहआरा और गेतीआरा गेंद खेलने लगीं तो हुस्नआरा ने कहा, अब रोज गेंद ही खेला करोगी? ऐसा न हो, आज भी अम्मीजान आ जायँ।

अब्बासी—हुजूर, गेंद खेलने में कौन सा ऐब है? दो घड़ी दिल बहलता है। बड़ी सरकार की न कहिए; वह बूढ़ी हुईं, बिगड़ी ही चाहें।

यही बातें हो रही थीं कि शाहज़ादा हुमायूँ फ़र हाथी पर सवार बग़ीचे की दीवार से झाँकते हुए निकले। सिपहआरा बेगम को गेंद खेलते देखा तो मुसकिरा दिये। हाथी तो आगे बढ़ गया, मगर हुस्नआरा को शाहज़ादे का यों झाँकना बुरा लगा। दारोग़ा को बुला कर कहा, कल इस दीवार पर दो रद्दे और चढ़ा दो, कोई हाथी पर इधर से निकल जाता है तो बेपरदगी होती है। सौ काम छोड़ कर यह काम करो।

जब दारोग़ा चले गये तो जहानारा ने कहा—सिपहआरा बहन ने इनको इतना ढीठ कर दिया, नहीं शाहज़ादे हों चाहे खुद बादशाह हों, ऐसी अंधेर-नगरी नहीं है कि जिसका जी चाहे, चला आये।

फिर वही चहल-पहल होने लगी। सिपहआरा और अब्बासी पचीसी खेलने लगीं।

अब्बासी—हुज़ूर, अबकी हाथ में यह गोट न पीटूँ तो अब्बासी नाम न रखूँ।

सिपहआरा—वाह! कहीं पीटी न हो।

अब्बासी—या अल्लाह, पचीस पड़ें। अरे! दिये भी तो तीन काने? बाज़ी खाक में मिल गयी।

हुस्नआरा—लेके हरवा न दी हमारी बाज़ी! बस अब दूर हो।

अब्बासी—ऐ बीबी, मैं क्या करूँ ले भला। पाँसा वही है लेकिन वक़्त ही तो है।

हुस्नआरा—अच्छा बाज़ी हो ले, तो हम फिर आयें।

सिपहआरा—अब मैं दाँव बोलती हूँ।

हुस्नआरा—हमसे क्या मतलब, वह जानें, तुम जानो। बोलो अब्बासी।

अब्बासी—हुजूर, जब बाज़ी सत्यानास हो गयी तब तो हमको मिली और अब हुजूर निकली जाती हैं।

हुस्नआरा—हम नहीं जानते। फिर खेलने क्यों बैठी थीं?

अब्बासी—अच्छा मंजूर हैं, फेकिए पाँसा।

सिपहआरा—दो महीने की तनख्वाह है, इतना सोच लो।

अब्बासी—ऐ हुजूर, आपकी जूतियों का सदक़ा, कौन बड़ी बात है। फेकिए तीन काने।

सिपहआरा ने जो पाँसा फेका तो पचीस! दूसरा पचीस, तीस, फिर पचीस, ग़रज़ सात पेचें हुईं। बोलीं—ले अब रुपये बायें हाथ से ढीले कीजिए। महरी, बाजी की संदूक़ची तो ले आओ, आलमारी के पास रखी है।

हुस्नआरा ने महरी को आँख के इशारे से मना किया। महरी कमरे से बाहर आ कर बोली—ऐ हुजूर, कहाँ है? वहाँ तो नहीं मिलती।

सिपहआरा—बस जाओ भी, हाथ झुलाती आयीं, चलो हम बतावें कहाँ है।

महरी—जो हुजूर बता दें तो और तो लौंडी की हैसियत नहीं है, मगर सेर भर मिठाई हुजूर की नज़र करूँ।

सिपहआरा महरी को साथ ले कर कमरे की तरफ़ चली। देखा तो संदूक़ची नदारद! हैं, यह संदूक़ची कौन ले गया? महरी ने लाख हँसी ज़ब्त की, मगर ज़ब्त न हो सकी। तब तो सिपहआरा झल्लायीं, यह बात है! मैं भी कहूँ, संदूक़ची कहाँ गायब हो गयी। तुम्हें क़सम है, दे दो।

सिपहआरा फिर नाक सिकोड़ती हुई बाहर आयी तो सबने मिल कर क़हक़हा लगाया। एक ने पूछा—क्यों, संदूक़ची मिली? दूसरी बोली—हमारा हिस्सा न भूल जाना। हुस्नआरा ने कहा—बहन, दस ही रुपया निकालना। अब्बासी ने कहा—हुजूर, देखिए, हमी ने जितवा दिया, अब कुछ रिश्वत दीजिए।

महरी—और बीबी, मैं भला काहे को छिपा देती, कुछ मेरी गिरह से जाता था।

सिपहआरा—बस-बस बैठो, चलीं वहाँ से बड़ी वह बनके।

महरी—अपनी हँसी को क्या करूँ, मुझी पर धोखा होता है।

इतने में दरबान ने आवाज़ दी, सवारियाँ आयी हैं, और ज़रा देर में दो औरतें डोलियों से उतर कर अंदर आयीं। एक का नाम था नज़ीर बेगम, दूसरी का जानी बेगम।

हुस्नआरा—बहुत दिन बाद देखा। मिज़ाज अच्छा रहा बहन? दुबली क्यों हो इतनी?

नज़ीर—माँदी थी, बारे खुदा-खुदा करके, अब सँभली हूँ।

हुस्नआरा—हमने तो सुना भी नहीं। जानी बेगम हमसे कुछ ख़फ़ा सी मालूम होती हैं, खुदा ख़ैर करे !

जानी—बस, बस, जरी मेरी ज़बान न खुलवाना, उलटे चोर कोतवाल को डाँटे। यहाँ तक आते मेंहदी घिस जाती।

जानी बेगम की बोटी बोटी फड़कती थी। नज़ीर बेगम भोली-भाली थीं। जानी बेगम ने आते ही आते कहा, हुस्नआरा आओ, आँख-मूँदी धप खेलें।

जहानारा—क्या यह कोई खेल है ?

जानी—ऐ है, क्या नन्हीं बनी जाती हैं !

नजीर—बस हम तुम्हारी इन्हीं बातों से घबराते हैं। अच्छी बातें न करोगी।

जानी—ऐ, वह निगोड़ी अच्छी बातें कौन सी होती हैं, सुनें तो सही।

नज़ीर—अब तुम्हें कौन समझाये।

जानी बेगम सिपहआरा के गले में हाथ डाल कर बाग़ीचे की तरफ ले गयीं तो हुस्नआरा ने कहा—इनके तो मिज़ाज ही नहीं मिलते।

बड़ी बेगम—बड़ी कल्ला दराज़ छोकरी है। इसके मियाँ की जान अज़ाब में है, हम तो ऐसे को अपने पास भी न आने दें।

हुस्नआरा—नहीं अम्माँजन, यह न फ़रमाइए, ऐसी नहीं है, मगर हाँ, ज़बान नहीं रुकती।

एकाएक जानी बेगम ने आ कर कहा—अच्छा बहन, अब रुख़सत करो। घर से निकले बड़ी देर हुई।

हुस्नआरा—आज तुम दोनों न जाने पाओगी। अभी आये कितनी देर हुई ?

जानी—नज़ीर बेगम को चाहे न जाने दो, मैं तो जाऊँगी ही। मियाँ के आने का यही वक़्त है। मुझे मियाँ का जितना डर है, उतना और किसी का नहीं। नज़ीर की आँखों का तो पानी मर गया है।

नज़ीर—इसमें क्या शक, तुम बेचारी बड़ी ग़रीब हो।

इसी तरह आपस में बहुत देर तक हँसी-दिल्लगी होती रही। मगर जानी बेगम ने किसी का कहना न माना। थोड़ी ही देर में वह उठ कर चली गयीं।

सुरैया बेगम चोरी के बाद बहुत ग़मगीन रहने लगीं। एक दिन अब्बासी से बोलीं—अब्बासी, दिल को ज़रा तस्कीन नहीं होती। अब हम समझ गये कि जो बात हमारे दिल में है वह हासिल न होगी।

शीशा हाथ आया न हमने कोई साग़र पाया;
साक़िया ले तेरी महफ़िल से चले भर पाया।

सारी ख़ुदाई में हमारा कोई नहीं।

अब्बासी ने कहा—बीबी, आज तक मेरी समझ में न आया कि वह, जिसके लिए आप रोया करती हैं, कौन हैं? और यह जो आज़ाद आये थे, यह कौन हैं। एक दिन बाँकी औरत के भेष में आये, एक दिन गोसाईं बनके आये।

सुरैया बेगम ने कुछ जवाब न दिया। दिल ही दिल में सोची कि जैसा किया वैसा पाया। आख़िर हुस्नआरा में कौन सी बात है जो हममें नहीं। फ़र्क़ यही है कि वह नेकचलन हैं और मैं बदनाम।

यह सोच कर उनकी आँखें भर आयीं, जी भारी हो गया। गाड़ी तैयार करायी और हवा खाने चलीं। रास्ते में सलारू और उसके वकील साहब नज़र पड़े। सलारू कह रहा था—जनाब, हम वह नौकर हैं जो बाप बनके मालिक के यहाँ रहते हैं। आपको हमारी इज्ज़त करनी चाहिए। इत्तिफ़ाक़ से वकील साहब की नज़र इस गाड़ी पर पड़ी। बोले—ख़ैर, बाप पीछे बन लेना, जरी जा कर देखो तो, इस गाड़ी में कौन सवार है? सलारू ने कहा, हुज़ूर, मैं फटेहालों हूँ, क्या जाऊँ! आप भारी-भरकम आदमी हैं, कपड़े भी अच्छे-अच्छे पहने हैं। आप ही जायँ। वकील साहब ने नज़दीक आ कर कोचवान से पूछा—किसकी गाड़ी है? कोचवान पंजाब का रहनेवाला पठान था। झल्ला कर बोला—तुमसे क्या वास्ता, किसी की गाड़ी है!

सलारू बोले—हाँ जी, तुमको इससे क्या वास्ता कि किसकी गाड़ी है? हट जाओ रास्ते से। देखते हैं कि सवारियाँ हैं, मगर डटे खड़े हैं। अभी जो कोई उनका अज़ीज़ साथ होता तो उतर के इतना ठोकता कि सिट्टी-पिट्टी भूल जाती। तुम वहाँ खड़े होनेवाले कौन हो?

वकील साहब को एक तो यही गुस्सा था कि कोचवान ने डपटा, उस पर सलारू ने पाजी बनाया। लाल-लाल आँखों से घूर कर रह गये, पाते तो खा ही जाते।

सलारू—यह तो न हुआ कि कोचवान को एक डंडा रसीद करते। उलटे मुझ पर बिगड़ रहे हो।

कोचवान चाहता था कि उतर कर वकील साहब की गरदन नापे, मगर सुरैया बेगम ने कोचवान को रोक लिया और कहा—घर लौट चलो।

बेगम साहब जब घर पहुँचीं तो दारोग़ा जी ने आ कर कहा कि हुज़ूर, घरसे आदमी

आया है। मेरा पोता बहुत बीमार है। मुझे हुजूर रुखसत दें। यह लाला खुशवक़्त राय मेरे पुराने दोस्त हैं, मेरी एवज़ काम करेंगे।

सुरैया बेगम ने कहा—जाइए, मगर जल्द आइएगा।

दूसरे दिन सुरैया बेगम ने लाला खुशवक़्तराय से हिसाब माँगा। लाला साहब पुराने फ़ैशन की दस्तार बाँधे, चपकन पहने, हाथ में क़लमदान लिये आ पहुँचे।

सुरैया बेगम—लाला, क्या सरदी मालूम होती है, या जूड़ी आती है, लेहाफ़ दूँ!

लाला साहब—हुजूर, बारहों महीने इसी पोशाक में रहता हूँ। नवाब साहब के वक़्त में उनके दरबारियों की यही पोशाक थी। अब वह ज़माना कहाँ, वह बात कहाँ, वह लोग कहाँ। मेरे वालिद ६ रुपया माहवारी तलब पाते थे। मगर बरकत ऐसी थी कि उनके घर के सब लोग बड़े आराम से रहते थे। दरवाज़े पर दो दस्ते मुक़र्रर थे। बीस जवान। अस्तबल में दो घोड़े। फ़ीलख़ाने में एक मादा हाथी! एक ज़माना वह था कि दरवाज़े पर हाथी झूमता था। अब वह कोने में जान बचाये बैठे हैं।

यह कहते-कहते लाला साहब नवाब साहब की याद करके रोने लगे।

एकाएक महरी ने आ कर कहा—हुजूर, आज फिर लुट गये। लाला साहब भी पगड़ी सँभालते हुए चले। सुरैया बेगम झपटी कि चल कर देखें तो, मगर मारे रंज के चलना मुश्किल हो गया। जिस कोठरी में लाला साहब सोये थे उसमें सेंध लगी है। सेंध देखते ही रोएँ खड़े हो गये। रो कर बोलीं—बस अब कमर टूट गयी। मुहल्ले में हलचल मच गयी। फिर थानेदार साहब आ पहुँचे, तहक़ीकात होने लगी।

थानेदार रात को इस कोठरी में कौन सोया था?

लाला साहब—मैं! ग्यारह बजे से सुबह तक।

थानेदार—तुम्हें किस वक़्त मालूम हुआ कि सेंध लगी?

लाला साहब—दिन चढ़े।

थानेदार—बड़े ताज्जुब की बात है कि रात को कोठरी में आदमी सोये, उसके कल्ले पर सेंध दी जाय और उसको ज़रा भी खबर न हो। आप कितने दिनों से यहाँ नौकर हैं? आपको पहले कभी न देखा।

लाला साहब—मैं अभी दो ही दिन का नौकर हूँ। पहले कैसे देखते।

सुरैया बेगम की रूह काँप रही थी कि खुदा ही खैर करे। माल का माल गया और यह कम्बख्त इज्ज़त का अलग गाहक है। खैर, थानेदार साहब तो तहक़ीक़ात करके लम्बे हुए। इधर सुरैया बेगम मारे ग़म के बीमार पड़ गयीं। कई दिन तक इलाज होता रहा, मगर कुछ फ़ायदा न हुआ। आख़िर एक दिन घबरा कर हुस्नआरा को एक खत लिखवाया जिसमें अपनी बेक़रारी का रोना रोने के बाद आज़ाद का पता पूछा था और हुस्नआरा को अपने यहाँ मुलाक़ात करने के लिए बुलाया था। हुस्नआरा बेगम के पास यह खत पहुँचा तो दंग हो गयीं। बहुत सोच-समझ कर खत का जवाब लिखा।

'बेगम साहब की ख़िदमत में आदाब !

आपका ख़त आया, अफ़सोस ! तुम भी उसी मरज़ में गिरफ़तार हो। आपसे मिलने का शौक़ तो है, मगर आ नहीं सकती, अगर तुम आ जाओ तो दो घड़ी ग़म-ग़लत हो। आज़ाद का हाल इतना मालूम है कि रूम की फ़ौज़ में अफसर हैं। सुरैया बेगम, सच कहती हूँ कि अगर बस चलता तो इसी दम तुम्हारे पास जा पहुँचती। मगर ख़ौफ़ है कि कहीं मुझे लोग ढीठ न समझने लगें।

तुम्हारी

हुस्नआरा'

यह ख़त लिख कर अब्बासी को दिया। अब्बासी ख़त ले कर सुरैया बेगम के मकान पर पहुँची, तो देखा कि वह बैठी रो रही हैं।

अब सुनिए कि वकील साहब ने सुरैया बेगम की टोह लगा ली। दंग हो गये कि या ख़ुदा, यह यहाँ कहाँ। घर जा कर सलारू से कहा। सलारू ने सोचा, मियाँ पागल तो हैं ही, किसी औरत पर नज़र पड़ी होगी, कह दिया शिब्बोजान हैं। बोला —हुज़ूर, फिर कुछ फ़िक्र कीजिए। वकील साहब ने फ़ौरन ख़त लिखा—

'शिब्बोजान, तुम्हारे चले जाने से दिल पर जो कुछ गुज़री, दिल ही जानता है। अफ़सोस, तुम बड़ी बेमुरव्वत निकलीं। अगर जाना ही था तो मुझसे पूछ कर गयी होतीं। यह क्या कि बिला कहे-सुने चल दीं, अब ख़ैर इसी में है कि चुपके से चली आओ। जिस तरह किसी को कानोकान ख़बर न हुई और तुम चल दीं, उसी तरह अब भी किसी से कहो न सुनो, चुपचाप चली आओ। तुम ख़ूब जानती हो कि मैं नामीगिरामी वकील हूँ।

तुम्हारा

वकील'

सलारू ने कहा—मियाँ, ख़ूब ग़ौर करके लिखना और नहीं हम एक बात बतावें। हमको भेज दीजिए, मैं कहूँगा, बीबी, वह तो मालिक हैं, पहले उनके गुलाम से तो बहस कर लो। गो पढ़ा-लिखा नहीं हूँ; मगर उम्र भर लखनऊ में रहा हूँ !

वकील साहब ने सलारू को डाँटा और ख़त में इतना और बढ़ा दिया, अगर चाहूँ तो तुमको फँसा दूँ। लेकिन मुझसे यह न होगा। हाँ, अगर तुमने बात न मानी तो हम भी दिक़ करेंगे।

यह ख़त लिख कर एक औरत के हाथ सुरैया बेगम के पास भेज दिया। बेगम ने लाला साहब से कहा—ज़रा यह ख़त पढ़िए तो। लाला साहब ने ख़त पढ़ कर कहा, यह तो किसी पागल का लिखा मालूम होता है। वह तो ख़त पढ़ कर बाहर चले गये और सुरैया बेगम सोचने लगीं कि अब क्या किया जाय ? यह मूज़ी बेतरह पीछे पड़ा। सबेरे लाला ख़ुशवक़्त राय सुरैया बेगम की ड्योढ़ी पर आये तो देखा कि यहाँ कुह-राम मचा हुआ है। सुरैया बेगम और अब्बासी का कहीं पता नहीं। सारा महल छान डाला गया, मगर बेगम साहब का पता न चला। लाला साहब ने घबरा कर कहा—

ज़रा अच्छी तरह देखो, शायद दिल्लगी में कहीं छिप रही हों। ग़रज़ सारे घर में तलाशी की, मगर बेफ़ायदा।

लाला साहब—यह तो अजीब बात है, आखिर दोनों चली कहाँ गयीं? ज़रा असबाब-वसबाब तो देख लो, है या सब ले-देके चल दीं।

लोगों ने देखा कि ज़ेवर का नाम भी न था। जवाहिरात और क़ीमती कपड़े सब नदारद।

८३

शाहज़ादा हुमायूँ फ़र भी शादी की तैयारियाँ करने लगे। सौदागरों की कोठियों में जा-जा कर सामान खरीदना शुरू किया। एक दिन एक नवाब साहब से मुलाक़ात हो गयी। बोले—क्यों हज़रत, यह तैयारियाँ!

शाहज़ादा—आपके मारे कोई सौदा न खरीदे?

नवाब—जनाब,

चितवनों से ताड़ जाना कोई हमसे सीख जाय।

शाहज़ादा—आपको यक़ीन ही न आये तो क्या इलाज?

नवाब—खैर, अब यह फ़रमाइए, हैदर को पटने से बुलवाइएगा या नहीं? भला दो हफ़्ते तक धमा-चौकड़ी रहे। मगर उस्ताद, तायफ़े नोक के हों। रद्दी कलावंत होंगे तो हम न आयेंगे। बस यह इंतज़ाम किया जाय कि दो महफ़िलें हों। एक रईसों के लिए और एक क़द्रदानों के लिए।

इधर तो यह तैयारियाँ हो रही थीं, उधर बड़ी बेगम के यहाँ यह खत पहुँचा कि शाहज़ादा हुमायूँ फ़र को गुर्दे के दर्द की बीमारी है और दमा भी आता है। कई बार वह जुए की इल्लत में सज़ा पा चुका है। उसको किसी नशे से परहेज़ नहीं।

बड़ी बेगम ने यह खत पढ़वा कर सुना तो बहुत घबरायीं। मगर हुस्नआरा ने कहा, यह किसी दुश्मन का काम है। आज तक कभी तो सुनते कि हुमायूँ फ़र जुए की इल्लत में पकड़े गये। बड़ी बेगम ने कहा—अच्छा, अभी जल्दी न करो। आज डोमिनियाँ न आयें। कल-परसों देखा जायगा।

दूसरे दिन अब्बासी यह खत ले कर शाहज़ादा हुमायूँ फ़र के पास गयी। शाहज़ादा ने खत पढ़ा तो चेहरा सुर्ख़ हो गया। कुछ देर तक सोचते रहे। तब अपने संदूक से एक खत निकाल कर दोनों की लिखावट मिलायी।

अब्बासी—हुजूर ने दस्तखत पहचान लिया न?

शाहज़ादा—हाँ, खूब पहचाना, पर यह बदमाश अपनी शरारत से बाज़ नहीं आता। अगर हाथ लगा तो ऐसा ठीक बनाऊँगा कि उम्र भर याद करेगा। लो, तुम यह खत भी बेगम साहब को दिखा देना और दोनों खत वापस ले आना।

यह वही खत था जो शाहज़ादे की कोठी में आग लगने के बाद आया था।

रात भर शाहज़ादा को नींद नहीं आयी, तरह-तरह के खयाल दिल में आते थे। अभी चारपाई से उठने भी न पाये थे कि भाँड़ों का गोल आ पहुँचा। लाला कालीचरन ने जो ड्योढ़ी का हिसाब लिखते थे, खिड़की से गरदन निकाल कर कहा—अरे भाई, आज क्या...

इतना कहना था कि भाँड़ों ने उन्हें आड़े हाथों लिया। एक बोला—हमें तो सूम मालूम होता है। दूसरे ने कहा—लखनऊ के कुम्हारों के हाथ चूम लेने के क़ाबिले

हैं। सचमुच का बनमानुस बना कर खड़ा कर दिया। तीसरे ने कहा—उस्ताद, दुम की कसर रह गयी। चौथा बोला—फिर ख़ुदा और इन्सान के काम में इतना फ़र्क़ भी न रहे! लाला साहब झल्लाये तो इन लोगों ने और भी बनाना शुरू किया। चोट करता है, ज़रा सँभले हुए। अब उठा ही चाहता है। एक बोला—भला बताओ तो, यह बनमानुस यहाँ क्योंकर आया? किसी ने कहा—चिड़ीमार लाया है। किसी ने कहा—रास्ता भूल कर बस्ती की तरफ़ निकल आया है। आख़िर एक अशर्फ़ी दे कर भाड़ों से नजात मिली।

दूसरे दिन शाहज़ादा सुबह के वक़्त उठे तो देखा कि एक ख़त सिरहाने रखा है। ख़त पढ़ा तो दंग हो गये।

'सुनो जी, तुम बादशाह के लड़के हो और हम भी रईस के बेटे हैं। हमारे रास्ते में न पड़ो, नहीं तो बुरा होगा! एक दिन आग लगा चुका हूँ, अगर सिपहआरा के साथ तुम्हारी शादी हुई तो जान ले लूँगा। जिस रोज़ से मैंने यह ख़बर सुनी है, यही जी चाह रहा है कि छुरी ले कर पहुँचूँ और दम के दम में काम तमाम कर दूँ। याद रखो कि मैं बेचोट किये न रहूँगा।'

शाहज़ादा हुमायूँ फ़र उसी वक़्त साहब-ज़िला की कोठी पर गये और सारा क़िस्सा कहा। साहब ने खुफ़िया पुलीस के एक अफ़सर को इस मामले की तहक़ीक़ात करने का हुक्म दिया।

साहब से रुख़सत हो कर वह घर आये तो देखा कि उनके पुराने दोस्त हाजी साहब बैठे हुए हैं। यह हज़रत एक ही घाघ थे, आलिमों से भी मुलाक़ात थी, बाँकों से भी मिलते-जुलते रहते थे। शाहज़ादा ने उनसे भी इस ख़त का ज़िक्र किया। हाजी साहब ने वादा किया कि हम इस बदमाश का ज़रूर पता लगायेंगे।

शहसवार ने इधर तो हुमायूँ फ़र को क़त्ल करने की धमकी दी, उधर एक तहसीलदार साहब के नाम सरकारी परवाना भेजा। आदमी ने जा कर दस बजे रात को तहसीलदार को जगाया और यह परवाना दिया—

'आपको क़लमी होता है कि मुबलिग पाँच हज़ार रुपया अपनी तहसील के ख़ज़ाने से ले कर, आज रात को कालीडीह के मुक़ाम पर हाज़िर हों। अगर आपको फ़ुरसत न हो तो पेशकार को भेजिए, ताकीद जानिए।'

तहसीलदार ने ख़ज़ानची को बुलाया, रुपया लिया, गाड़ी पर रुपया लदवाया और चार चपरासियों को साथ ले कर कालीडीह चले। वह गाँव यहाँ से दो कोस पर था। रास्ते में एक घना जंगल पड़ता था। बस्ती का कहीं नाम नहीं। जब उस मुक़ाम पर पहुँचे तो एक छोलदारी मिली। वहाँ जा कर पूछा—क्या साहब सोते हैं?

सिपाही—साहब ने अभी चाय-पी है। आज रात भर लिखेंगे। किसी से मिल नहीं सकते!

तहसीलदार—तुम इतना कह दो कि तहसीलदार रुपया ले कर हाज़िर है।

चपरासी ने छोलदारी में जा कर इत्तला की। साहब ने कहा, बुलाओ। तहसील-

दार साहब अंदर गये तो एक आदमी ने उनका मुँह जोर से दबा दिया और कई आदमी उन पर टूट पड़े। सामने एक आदमी अँगरेजी कपड़े पहने बैठा था। तहसीलदार खूब जकड़ दिये गये तो वह मुसकिरा कर बोला—वेल तहसीलदार ! तुम रुपया लाया, अब मत बोलना। तुम बोला और मैंने गोली मारी। तुम हमको अपना साहब समझो।

तहसीलदार—हुजूर को अपने साहब से बढ़ कर समझता हूँ, वह अगर नाराज़ होंगे तो दरजा घटा देंगे। आप तो छुरी से बात करेंगे।

शहसवार ने तहसीलदार को चकमा दे कर रुख़सत किया और अपने साथियों में डींग मारने लगा—देखा, इस तरह यार लोग चकमा देते हैं। साथी लोग हाँ में हाँ मिला रहे थे कि इतने में एक गंधी तेल की कुप्पियाँ और बोतलें लटकाये छोलदारी के पास आया और बोला—हुजूर, सलाम करता हूँ। आज सौदा बेचने ज़रा दूर निकल गया था, लौटने में देर हो गयी। आगे घना जंगल है, अगर हुक्म हो तो यहीं रह जाऊँ ?

शहसवार—किस-किस चीज़ का इत्र है ? ज़रा मोतिये का तो दिखाओ।

गंधी—हुजूर, अव्वल नम्बर का मोतिया है, ऐसा शहर में मिलेगा नहीं।

शहसवार ने ज्यों ही इत्र लेने के लिए हाथ बढ़ाया, गंधी ने सीटी बजायी और सीटी की आवाज़ सुनते ही पचास-साठ कांस्टेबिल इधर-उधर से निकल पड़े और शहसवार को गिरफ़्तार कर लिया। यह गंधी न था, इंस्पेक्टर था, जिसे हाकिम-ज़िला ने शहसवार का पता लगाने के लिए तैनात किया था।

मियाँ शहसवार जब इंस्पेक्टर के साथ चले तो रास्ते में उन्हें ललकारने लगे। अच्छा बचा, देखो तो सही, जाते कहाँ हो।

इंस्पेक्टर—हिस्स ! चोर के पाँव कितने, चौदह बरस को जाओगे।

शहसवार—सुनो मियाँ, हमारे काटे का मंत्र नहीं, ज़रा ज़बान को लगाम दो, वरना आज के दसवें दिन तुम्हारा पता न होगा।

इंस्पेक्टर—पहले अपनी फ़िक्र तो करो।

शहसवार—हम कह देंगे कि इस इंस्पेक्टर की हमसे अदावत है।

इंस्पेक्टर—अजी, कुढ़-कुढ़ कर जेलख़ाने में मरोगे।

इधर बड़ी बेगम के यहाँ शादी की तैयारियाँ हो रही थीं। डोमिनियों का गाना हो रहा था। उधर शाहज़ादा हुमायूँ फ़र एक दिन दरिया की सैर करने गये। घटा छायी हुई थी। हवा ज़ोरों के साथ चल रही थी। शाम होते-होते आँधी आ गयी और किश्ती दरिया में चक्कर खा कर डूब गयी। मल्लाह ने किश्ती के बचाने की बहुत कोशिश की, मगर मौत से किसी का क्या बस चलता है। घर पर यह ख़बर आयी तो कुहराम मच गया। अभी कल की बात है कि दरवाज़े पर भाँड़ मुबारकबाद गा रहे थे, आज बैन हो रहा है, कल हुमायूँ फ़र जामे में फूले नहीं समाते थे कि दूल्हा बनेंगे, आज दरिया में ग़ोते खाते हैं। किसी तरफ़ से आवाज़ आती है—हाय मेरे बच्चे! कोई कहता है—हैं, मेरे लाल को क्या हुआ! रोनेवाला घर भर और समझानेवाला कोई नहीं। हुमायूँ फ़र की माँ रो-रो कर कहती थीं, हाय! मैं दुखिया इसी दिन के लिए अब तक जीती रही कि अपने बच्चे की मय्यत देखूँ। अभी तो मसें भी नहीं भीगने पायी थीं कि तमाम बदन दरिया में भीग गया। बहन रोती थी, मेरे भैया, ज़री आँख तो खोलो। हाय, जिन हाथों से मैंने मेंहदी रची थी उनसे अब सिर और छाती पीटती हूँ। कल समझते थे कि परसों बरात सजेगी, खुशियाँ मनायेंगे और आज मातम कर रहे हैं। उठो, अम्माँजान तुम्हारे सिरहाने खड़ी रो रही हैं।

यहाँ तो रोना-पीटना मचा हुआ था, वहाँ बड़ी बेगम ने ज्यों ही ख़बर पायी आँखों से आँसू जारी हो गये। अब्बासी से कहा—जा कर लड़कियों से कह दे कि नीचे बाग़ में टहलें। कोठे पर न जायँ। अब्बासी ने जा कर यह बात कुछ इस तरह कही कि चारों बहनों में कोई न समझ सकीं। मगर जहानारा ताड़ गयी। उठ कर अंदर गयी तो बड़ी बेगम को रोते देखा। बोली—अम्माँजान, साफ़-साफ़ बताओ।

बड़ी बेग़म—क्या बताऊँ बेटी, हुमायूँ फ़र चल बसे।

जहानारा—अरे!

बड़ी बेगम—चुप-चुप, सिपहआरा न सुनने पाये। मैंने गाड़ी तैयार होने का हुक्म दिया है, चलो बाग़ को चलें, तुम ज़रा भी ज़िक्र न करना।

जहानारा—हाय अम्मीजान, यह क्या हुआ?

बड़ी बेगम—ख़ुदा के वास्ते बेटी, चुप रहो, बड़ा बुरा वक़्त जाता है।

जहानारा—उफ़, जी घबराता है, हमको न ले चलिए, नहीं सिपहआरा समझ जायँगी। हमसे रोना ज़ब्त न हो सकेगा, कहा मानिए, हमको न ले चलिए।

बड़ी बेगम—यहाँ इतने बड़े मकान में अकेली कैसे रहोगी?

जहानारा—यह मंजूर है, मगर ज़ब्त मुमकिन नहीं।

सब की सब दिल में खुश थीं कि बाग़ की सैर करेंगे; मगर यह ख़बर ही न थी

कि बड़ी बेगम किस सबब से बाग़ लिये जाती हैं। चारों बहनें पालकी गाड़ी पर सवार हुईं और आपस में मज़े-मज़े की बातें करती हुई चलीं। मगर अब्बासी और जहानारा के दिल पर बिजलियाँ गिरती थीं। बाग़ में पहुँच कर जहानारा ने सिर-दर्द का बहाना किया और लेट रहीं, चारों बहनें चमन की सैर करने लगीं। सिपहआरा ने मौका पा कर कहा—अब्बासी, एक दिन हम और शाहज़ादे इस बाग़ में टहल रहे होंगे। निकाह हुआ और हम उनको बाग़ में ले आये। हम पाँच रोज़ यहाँ ही रहेंगे। अब्बासी की आँखों से बेअख़्तियार आँसू निकल पड़े। दिल में कहने लगी, किधर ख़याल है, कैसा निकाह और कैसी शादी ? वहाँ जनाज़े और कफ़न की तैया-रियाँ हो रही होंगी।

एकाएक सिपहआरा ने कहा—बहन, हिचकियाँ आने लगीं।

हुस्नआरा—कोई याद कर रहा होगा।

अब सुनिए कि उसी बाग़ के पास एक शाह साहब का तकिया था जिसमें कई शाहज़ादों और रईसों की क़ब्रें थीं। हुमायूँ फ़र का जनाज़ा भी उसी तकिये में गया, हज़ारों आदमी साथ थे। बाग़ के एक बुर्ज से बहनों ने इस जनाज़े को देखा तो सिपहआरा बोली—बाजीजान, किससे पूछें कि यह किस बेचारे का जनाज़ा है। ख़ुदा उसको बख्शे।

हुस्नआरा—ओफ ओह ! सारा शहर साथ है। अल्लाह, यह कौन मर गया, किससे पूछें ?

अब्बासी—हुजूर, जाने भी दें, रात के वक़्त लाश न देखें।

हुस्नआरा—नहीं, गुलाब माली से कहो, अभी-अभी पूछे।

अब्बासी थरथर काँपने लगी। गुलाब माली के कान में कुछ कहा। वह बाग़ का फाटक खोल कर बाहर गया, लोगों से पूछा। फिर दोनों में कानाफूसी हुई। इसके बाद अब्बासी ने ऊपर जा कर कहा। हुजूर, कोई रईस थे। बहुत दिनों से बीमार थे। यहाँ क़ज़ा आ पहुँची।

गेतीआरा—कुछ ठिकाना है ! आदमियों का कहाँ से कहाँ तक ताँता लगा हुआ है।

सिपहआरा—ख़ुदा जाने, जवान था या बूढ़ा ?

अब्बासी ने बड़ी बेगम से जा कर जनाज़े का हाल कहा तो उन्होंने सिर पीट कर कहा—तुम्हें हमारी क़सम है जो उलटे पाँव न चली जाओ।

हुस्नआरा—अम्माँजान, आप नाहक़ घबराती हैं, आख़िर यहाँ खड़े रहने में क्या डर है ?

बड़ी बेगम—अच्छा, तुमको इससे क्या मतलब।

सिपहआरा—किसी का जनाज़ा जाता है। लाखों आदमी साथ हैं।

हुस्नआरा—ख़ुदा जाने, कौन था बेचारा।

बड़ी बेगम—अल्लाह के वास्ते चली जाओ !

जहानारा—इतनी क़समें देती जाती हैं और कोई सुनता ही नहीं।

सिपहआरा—बाजी, सुनिए, कैसी दर्दनाक ग़ज़ल है! ख़ुदा जाने कौन गा रहा है।

शबे फ़िराक़ है और आँधियाँ हैं आहों की;
चिराग़ को मेरे ज़ुलमत कदे में बार नहीं।
ज़मीन प्यार से मुझको गले लगाती है;
अज़ाब है यह दिला गोर में फ़िशार नहीं।
पस अज़ फ़िना भी किसी तौर से क़रार नहीं;
मिला बहिश्त तो कहता हूँ कूय यार नहीं।

अब्बासी—कोई बूढ़ा आदमी था।

सिपहआरा—तो फिर क्या ग़म!

बड़ी बेगम—तो फिर जितने बूढ़े मर्द और बूढ़ी औरतें हों, सबको मर जाना चाहिए?

सिपहआरा—ऐसी बातें न कहिए, अम्माँजान!

हुस्नआरा—बूढ़े और जवान सबको मरना है एक दिन।

बड़ी बेगम और सिपहआरा नीचे चली गयीं। हुस्नआरा भी जा रही थीं कि क़ब्रिस्तान से आवाज़ आयी—हाय हुमायूँ फ़र, तुमसे इस दग़ा की उम्मेद न थी।

हुस्नआरा—ऐं अब्बासी, यह किसका नाम लिया?

अब्बासी—हुज़ूर, बहादुर मिरज़ा कहा, कोई बहादुर मिरज़ा होंगे।

हुस्नआरा—हाँ, हमीं को धोखा हुआ। पाँव-तले से ज़मीन निकल गयी।

जब तीनों बहनें नीचे पहुँच गयीं, तो बड़ी बेगम ने कहा—आख़िर तुम्हारे मिज़ाज में इतनी ज़िद क्यों है?

हुस्नआरा—अम्माँजान, वहाँ बड़ी ठंडी हवा थी।

बड़ी बेगम—मुरदा वहाँ आया हुआ है और इस वक़्त, भला सोचो तो।

सिपहआरा—फिर इससे क्या होता है!

बड़ी बेगम—चलो बैठो, होता क्या है!

तीनों बहनें लेटीं तो सिपहआरा को नींद आ गयी, मगर हुस्नआरा और गेती-आरा की आँख न लगी। बातें करने लगीं!

हुस्नआरा—क्या जाने, कौन बेचारा था?

गेतीआरा—कोई उसके घरवालों के दिल से पूछे।

हुस्नआरा—कोई बड़ा शाहज़ादा था!

गेतीआरा—हमें तो इस वक़्त चारों तरफ़ मौत की शक्ल नज़र आती है।

हुस्नआरा—क्या जाने, अकेले थे या लड़के-वाले भी थे।

गेतीआरा—ख़ुदा जाने, मगर था अभी जवान।

हुस्नआरा—देखो बहन, सैकड़ों आदमी जमा हैं, मगर कैसा सन्नाटा है! जो है, ठंडी साँसें भरता है!

इतने में सिपहआरा भी जाग पड़ीं ! बोलीं—कुछ मालूम हुआ बाजीजान, इस बेचारे की शादी हुई थी कि नहीं ? जो शादी हुई होगी तो सितम है ।

हुस्नआरा—ख़ुदा न करे कि किसी पर ऐसी मुसीबत आये ।

सिपहआरा—बेचारी बेवा अपने दिल में न जाने क्या सोचती होगी ?

हुस्नआरा—इसके सिवा और क्या सोचती होगी कि मर मिटे !

रात को सिपहआरा ने ख्वाब में देखा कि हुमायूँ फ़र बैठे उनसे बातें कर रहे रहे हैं ।

हुमायूँ—ख़ुदा का हज़ार शुक्र है कि आज यह दिन दिखाया, याद है, हम तुमसे गले मिले थे ?

सिपहआरा—बहुरूपिये के भी कान काटे !

हुमायूँ—याद है, जब हमने महताबी पर कनकौआ ढाया था ?

सिपहआरा—एक ही ज़ात शरीफ़ हैं आप ।

हुमायूँ—अच्छा, तुम यह बताओ कि दुनिया में सबसे ज़्यादा ख़ुशनसीब कौन है ?

सिपहआरा—हम !

हुमायूँ—और जो मैं मर जाऊँ तो तुम क्या करो ?

इतना कहते-कहते हुमायूँ फ़र के चेहरे पर ज़र्दी छा गयी और आँखें उलट गयीं। सिपहआर एक चीख मार कर रोने लगीं । बड़ी बेगम और हुस्नआरा चीख सुनते ही घबरायी हुई सिपहआरा के पास आयीं । बड़ी बेगम ने पूछा—क्या है बेटी, तुम चिल्लायीं क्यों ?

अब्बासी—ऐ हुजूर, जरी आँख खोलिए ।

बड़ी बेगम—बेटा, आँख खोल दो ।

बड़ी मुश्किल से सिपहआरा की आँखें खुलीं । मगर अभी कुछ कहने भी न पायी थीं कि किसी ने बाग़ीचे की दीवार के पास रो कर कहा—हाय शाहज़ादा हुमायूँ फ़र !

सिपहआरा ने रो कर कहा—अम्मीजान, यह क्या हो गया ! मेरा तो कलेजा उलटा जाता है ।

दीवार के पास से फिर आवाज़ आयी—हाय हुमायूँ फ़र ! क्या मौत को तुम पर ज़रा भी रहम न आया ?

सिपहआरा—अरे, क्या यह मेरे हुमायूँ फ़र हैं !! या ख़ुदा, यह क्या हुआ अम्मीजान !

बड़ी बेगम—बेटी सब्र करो, ख़ुदा के वास्ते सब्र करो ।

सिपहआरा—हाय, कोई हमें प्यारे शाहज़ादे की लाश दिखा दो ।

बड़ी बेगम—बेटा मैं तुम्हें समझाऊँ कि इस सिन में तुम पर यह मुसीबत पड़ी और तुम मुझे समझाओ कि इस बुढ़ापे में यह दिन देखना पड़ा ।

सिपहआरा—हाय, हमें शाहज़ादे की लाश दिखा दो । अम्मीजान, अब सब्र

की ताक़त नहीं रही, मुझे जाने दो, ख़ुदा के लिए मत रोको, अब शर्म कैसी और हिजाब किसके लिए ?

बड़ी बेगम—बेटी, ज़रा दिल को मज़बूत रखो, ख़ुदा की मर्ज़ी में इनसान को क्या दख़ल !

सिपहआरा—क्या कहती हैं आप अम्मीजान, दिल कहाँ है, दिल का तो कहीं पता ही नहीं। यहाँ तो रूह तक पिघल गयी।

बड़ी बेगम—बेटी, खूब खुल कर रो लो। मैं नसीबों-जली यही दिन देखने के लिए बैठी थी !

सिपहआरा—आँसू नहीं है अम्मीजान, रोऊँ कैसे ? बदन में जान ही नहीं रही, बाजीजान को बुला दो। इस वक़्त वह भी मुझे छोड़ कर चल दीं ?

हुस्नआरा अलग जा कर रो रही थीं। आयीं, मगर ख़ामोश। न रोयीं, न सिर पीटा, आ कर बहन के पलंग के पास बैठ गयीं।

सिपहआरा—बाजी, चुप क्यों हो ! हमें तकसीन तक नहीं देतीं; वाह !

हुस्नआरा ख़ामोश बैठी रहीं, हाँ, सिर उठा कर सिपहआरा पर नज़र डाली।

सिपहआरा—बाजी, बोलिए, आख़िर चुप कब तक रहिएगा ?

इतने में रूहअफ़ज़ा भी आ गयीं, उन्होंने मारे ग़म के दीवार पर सिर पटक दिया था। सिपहआरा ने पूछा—बहन, यह पट्टी कैसी बँधी है ?

रूहअफ़ज़ा—कुछ नहीं, यों ही।

सिपहआरा—कहीं सिर-विर तो नहीं फोड़ा ? अम्मीजान, अब दिल नहीं मानता, ख़ुदा के लिए हमें लाश दिखा दो। क्यों अम्मीजान; शाहज़ादे की माँ की क्या हालत होगी ?

बड़ी बेगम—क्या बताऊँ बेटी—

औलाद किसी की न जुदा होवे किसी से-
बेटी, कोई इस दाग़ को पूछे मेरे जी से !

इतने में एक आदमी ने आ कर कहा कि हुमायूँ फ़र की माँ रो रही हैं और कहती हैं कि दुलहिन को लाश के क़रीब लाओ। हुमायूँ फ़र की रूह खुश होगी। बड़ी बेगम ने कहा—सोच लो, ऐसा कभी हुआ नहीं है; ऐसा न हो कि मेरी बेटी डर जाय, उसका तो और दिल बहलाना चाहिए, न कि लाश दिखाना। और लोगों से पूछो, उनकी क्या राय है। मेरे तो हाथ-पाँव फूल गये हैं।

आख़िर यह राय तय पायी कि दुलहिन लाश पर ज़रूर जायँ।

सिपहआरा चलने को तैयार हो गयीं।

बड़ी बेगम—बेटा, अब मैं क्या कहूँ, तुम्हारी जो मर्ज़ी हो वह करो।

सिपहआरा—बस, हमें लाश दिखा दो, फिर हम कोई तकलीफ़ न देंगे।

बड़ी बेगम—अच्छा जाओ, मगर इतना याद रखना कि जो मरा वह ज़िंदा नहीं हो सकता।

सिपहआरा ने अब्बासी को हुक्म दिया कि जा कर संदूक लाओ। संदूक आया तो सिपहआरा ने अपना क़ीमती जोड़ा निकाला, सुहाग का इत्र मला, क़ीमती दुपट्टा ओढ़ा जिसमें मोतियों की बेल लगी हुई थी। सिर पर जड़ाऊ छपका, जड़ाऊ टीका, चोटी में सीसफूल, नाक में नथ, जिसके मोतियों की क़ीमत अच्छे-अच्छे जौहरी न लगा सकें, कानों में पत्ते, बालियाँ, बिजलियाँ, करनफूल, गले में मोतियों की माला, तौक़, चंदनहार, चम्पाकली, हाथों में कंगन, चूड़ियाँ, पोर-पोर छल्ले, पाँव में पाय-ज़ेब, छागल। इस तरह सोलहों सिंगार करके वह बड़ी बेगम और अब्बासी के साथ पालकी गाड़ी में सवार हुईं। शहर में धूम मच गयी कि दुलहिन दूल्हा की लाश पर जाती हैं। शाहज़ादे की माँ को इत्तला दी गयी कि दुलहिन आती हैं। ज़रा देर में गाड़ी पहुँच गयी। हज़ारों आदमियों ने छाती पीटना शुरू किया। सिपहआरा ने गाड़ी से उतरते ही लाश को छाती से लगाया और उसके सिरहाने बैठ कर ऊँची आवाज़ से कहा—प्यारे शाहज़ादे, जरी आँख खोल कर मुस्करा दो। बस, दो दिन हँसा कर उम्र भर रुलाओगे? जरी अपनी दुलहिन को तो आँख-भरके देख लो। क्यों जी, यही मुहब्बत थी, इसी दिन के लिए दिल मिलाया था?

शाहज़ादे की माँ ने सिपहआरा को छाती से लगा कर कहा—बेटी, हुमायूँ फ़र तुम्हारे बड़े दुश्मन निकले। हाय, यह अंधेर भी कहीं होता है कि दुलहिन लाश पर आये। निकाह के वक़्त वकील और गवाह तो दूर रहे, दूसरा मुक़दमा छिड़ गया।

सिपहआरा ने अपनी माँ की तरफ़ देख कर कहा—अम्माँजान, आपने हमारे साथ बड़ी दुश्मनी की। पहले ही शादी कर देतीं तो यों नामुराद तो न जाती।

इधर तो यह कुहराम मचा हुआ था, उधर शहर के बेफ़िक्रे अपनी खिचड़ी अलग ही पकाते थे।

एक औरत—आज जब घर से निकली थी तो काने आदमी का मुँह देखा था। इधर डोली में पाँव गया और उधर पट से छींक पड़ी।

दूसरा आदमी—अजी बीबी, न कुछ छींक से होता है, न किसी से, 'करम-लेख नहिं मिटै करै कोई लाखन चतुराई।' क़िस्मत के लिखे को कोई भी आज तक मिटा सका है? देखिए, करोड़ों रुपये घर में भरे हैं, मगर किस काम के!

मौलवी—मियाँ, दुनिया के यही कारख़ाने हैं, इनसान को चाहिए कि किसी से न झगड़े, न किसी से फ़साद करे, बस, ख़ुदा की याद करता रहे।

एक बुढ़िया—सुनते हैं कि दो-तीन दिन से रात को बुरे-बुरे ख़्वाब देखते थे।

मौलवी—हम इसके क़ायल नहीं, ख़्वाब क्या चीज़ है!

सिपहआरा को इस वक़्त वह दिन याद आया, जब शाहज़ादा हुमायूँ फ़र अपनी बहन बन कर उनसे गले मिलने गये। एक वह दिन था और एक आज का दिन है। हमने उस हुमायूँ फ़र को बुरा-भला क्यों कहा था?

बड़ी बेगम ने कहा—बेटी, अब जरी बैठ जाओ, दम ले लो।

अब्बासी—हुज़ूर, इस मर्ज़ का तो इलाज ही नहीं है।

सिपहआरा—दवा हर मर्ज की है ! इस मर्ज़ की दवा भी सब्र ही है । सब्र ही ने हमें इस क़ाबिल किया कि हुमायूँ फ़र की लाश अपनी आँखों देख रहे हैं !

जब लोगों ने देखा कि सिपहआरा की हालत ख़राब होती जाती है तो उन्हें लाश के पास से हटा ले गये । गाड़ी पर सवार किया और घर ले गये ।

गाड़ी में बैठ कर सिपहआरा रोने लगीं और बड़ी बेगम से बोलीं—अम्माँजान, अब हमें कहाँ लिये चलती हो ?

बड़ी बेगम—बेटी, मैं क्या करूँ, हाय !

सिपहआरा—अम्माँजान, करोगी क्या, मैंने क्या कर लिया ?

अब्बासी—हमारी क़िस्मत फूट गयी, शादी का दिन देखना नसीब में लिखा ही न था । आज के दिन और हम मातम करें !

सिपहआरा—अम्माँजान, इस वक़्त बेचारा कहाँ होगा ?

बड़ी बेगम—बेटी, खुदा के कारख़ाने में किसी को दख़ल है ?

एक पुरानी, मगर उजाड़ बस्ती में कुछ दिनों से दो औरतों ने रहना शुरू किया है। एक का नाम फ़ीरोज़ा है, दूसरी का फ़ारखुंदा। इस गाँव में कोई डेढ़ हज़ार घर आबाद होंगे, मगर उन सब में दो ठाकुरों के मकान आलीशान थे। फ़ीरोज़ा का मकान छोटा था, मगर बहुत खुशनुमा। वह जवान औरत थी, कपड़े-लत्ते भी साफ़-सुथरे पहनती थी, लेकिन उसकी बातचीत से उदासी पायी जाती थी। फ़रखुंदा इतनी हसीन तो न थी, मगर खुशमिज़ाज थी। गाँववालों को हैरत थी कि यह दोनों औरतें इस गाँव में कैसे आ गयीं और कोई मर्द भी साथ नहीं! उनके बारे में लोग तरह-तरह की बातें किया करते थे। गाँव की सिर्फ़ दो औरतें उनके पास जाती थीं, एक तम्बोलिन, दूसरी बेलदारिन। यार लोग टोह में थे कि यहाँ का कुछ भेद खुले, मगर कुछ पता न चलता था। तम्बोलिन और बेलदारिन से पूछते थे तो वह भी आँय-बाँय-साँय उड़ा देती थीं।

एक दिन उस गाँव में एक कांस्टेबिल आ निकला। आते ही एक बनिये से शक्कर माँगी। उसने कहा—शक्कर नहीं, गुड़ है। कांस्टेबिल ने आव देखा न ताव, गाली दे बैठा। बनिये ने कहा—ज़बान पर लगाम दो। गाली न जबान से निकालो। इतना सुनना था कि कांस्टेबिल ने बढ़ कर दो घूसे लगाये और दूकान की चीजें फेंक-फाँक दीं। सामनेवाला दूकानदार मारे डर के शक्कर ले आया, तब हज़रत ने कहा—काली मिर्च लाओ। वह बेचारा काली मिर्च भी लाया। तब आपने दो लोटे शरबत के पीये और कुएँ की जगत पर लेट कर एक लाला जी को पुकारा—ओ लाला, सराफी पीछे करना; पहले एक चादर तो दे जाओ। लाला बोले—हमारे पास और कोई बिछौना नहीं है, बस एक बिस्तरा है। कांस्टेबिल उठ कर दूकान पर गया। चादर उठा ली और कुएँ की जगत पर बिछा कर लेटा। लाला बेचारे मुँह ताकने लगे। अभी हज़रत सो रहे थे कि एक औरत पानी भरने आयी। आपने पाँव की आहट जो पायी तो चौंक उठे और गुल मचा कर बोले—अलग हट, चली वहाँ से घड़ा सिर पर लिये पानी भरने! सूझता नहीं, कौन लेटा है, कौन बैठा है? इस पर एक आदमी ने कहा, वाह! तुम तो कुएँ के मालिक बन बैठे! अब तुम्हारे मारे कोई पानी न भरे? दूसरा बोला—सराफ़ की दूकान से चादर लाये, मुफ़्त में शक्कर ली और डपट रहे हैं।

एक ठाकुर साहब टट्टू पर सवार चले जाते थे। इन लोगों की बातें सुन कर बोले—साहब को एक अर्ज़ी दे दो, बस सारी शेखी किरकिरी हो जाय।

कांस्टेबिल ने ललकारा—रोक ले टट्टू। हम चालान करेंगे।

ठाकुर—क्यों रोक लें, हम अपनी राह जा रहे हैं, तुमसे मतलब?

कांस्टेबिल—कह दिया, रोक लो, यह टट्टू ज़ख्मी है। चलो, तुम्हारा चालान होगा।

ठाकुर—तो ज़ुल्मी कहाँ है ? हम ऐसे-वैसे ठाकुर नहीं हैं, हमसे बहुत रोब न जमाना।

इतने में दो-एक आदमियों ने आ कर दोनों को समझाया, भाई, जवान, छोड़ दो, इज़्ज़तदार आदमी हैं। इस गाँव के ठाकुर हैं, उनको बेइज़्ज़त न करो।

इधर ठाकुर को समझाया कि रुपया-अधेली ले-दे कर अलग करो, कहाँ की झंझट लगायी है। मुफ़्त में चालान कर देगा तो गाँव भर में हँसी होगी। कुछ यह समझे, कुछ वह समझे। अठन्नी निकाल कर कांस्टेबिल की नज़र की, तब जा कर पीछा छूटा।

अब तो गाँव में और भी धाक बँध गयी। पनभरनियाँ मारे डर के पानी भरने न आयीं, यह इधर-उधर ललकारने लगे। ग़ल्ले की चंद गाड़ियाँ सामने से गुज़रीं। आपने ललकारा, रोक ले गाड़ी। क्यों बे पटरी से नहीं जाता, सड़क तो साहब लोगों के लिए है। एक गाड़ीवान ने कहा—अच्छा साहब, पटरी पर किये देते हैं। आपने उठ कर एक तमाचा लगा दिया और बोले, और सुनो, एक तो जुर्म करें, दूसरे टर्रायँ। सब के सब दंग हो गये कि टर्राया कौन, उस बेचारे ने तो इनके हुक्म की तामील की थी। हलवाई से कहा—हमको सेर भर पूरी तौल दो। वह भी काँप रहा था कि देखें, कब शामत आती है, कहा, अभी लाया। तब आप बोले कि आलू की तरकारी है ? वह बोला—आलू तो हमारे पास नहीं है, मगर उस खेत से खुदवा लाओ तो सब मामला ठीक हो जाय। कहने भर की देर थी। आप जा कर किसान से बोले—अरे, एक आध सेर आलू खोद दे। उसकी शामत जो आयी तो बोला—साहब, चार आने सेर होई, चाहे लेव चाहे न लेव। समझ लो। आपने कहा, अच्छा भाई लाओ, मगर बड़े-बड़े हों।

किसान आलू लाया। तरकारी बनी, जब आप चलने लगे तो किसान ने पैसे माँगे। इसके जवाब में आपने उस ग़रीब को पीटना शुरू किया।

किसान—सेर भर आलू लिहिस पैसा न दिहिस, और ऊपर से मारत है।

मुराइन—और अलई कै पलवा बकत है, राम करैं, देवी-भवानी खा जायँ।

लोगों ने किसान को समझाया कि सरकारी आदमी के मुँह क्यों लगते हो। जो कुछ हुआ सो हुआ, अब इन्हें दो सेर आलू ला दो। किसान आलू खोद लाया। आपने उसे रूमाल में बाँधा और ८ पैसे निकाल कर हलवाई को देने लगे।

हलवाई—यह भी रहने दो, पान खा लेना।

कांस्टेबिल—खुशी तुम्हारी। आलू तो हमारे ही थे।

हलवाई—बस, अब सब आप ही का है।

कांस्टेबिल ने खा-पी कर लम्बी तानी तो दो घंटे तक सोया किये। जब उठे तो पसीने में तर थे। एक गवार को बुला कर कहा—पंखा झल। वह बेचारा पंखा झलने लगा। जब आप ग़ाफ़िल हुए तो उसने इनकी लुटिया और लकड़ी उठायी और चलता धंधा किया। यह उनके भी उस्ताद निकले।

जमादर की आँख खुली तो पंखा झलनेवाले का कहीं पता ही नहीं। इधर-उधर

देखा तो लुटिया ग़ायब। लाठी नदारद। लोगों से पूछा, धमकाया, डराया, मगर किसी ने न सुना। और बताये कौन? सब के सब तो जले बैठे थे। तब आपने चौकी-दारों को बुलाया और धमकाने लगे। फिर सबों को ले कर गाँव के ठाकुर के पास गये और कहा—इसी दम दौड़ आयेगी। गाँव भर फूँक दिया जायगा, नहीं तो अपने आदमियों से पता लगवाओ।

ठाकुर—ले अब हम कस-कस उपाव करी। चोर का कहाँ ढूँढ़ी?

जमादार—हम नहीं जानता। ठाकुर हो कर के एक चोर का पता नहीं लगा सकता।

ठाकुर—तुमहू तो पुलीस के नौकर हो। ढूँढ निकालो।

ठाकुर साहब से लोगों ने कहा—यह सिपाही बड़ा शैतान है। आप साहब को लिख भेजिए कि हमारी रिआया को सताता है। बस, यह मौक़ूफ़ हो जाय। ठाकुर बोले—हम सरकारी आदमियों से बतबढ़ाव नहीं करते। कांस्टेबिल को तीन रुपये दे कर दरवाज़े से टाला।

जमादार साहब यहाँ से ख़ुश-ख़ुश चले तो एक घोसी की लड़की से छेड़छाड़ करने लगे। उसने जा कर अपने बाप से कह दिया। वह पहलवान था, लँगोट बाँध कर आया और जमादार साहब को पटक कर ख़ूब पीटा।

बहुत से आदमी खड़े तमाशा देख रहे थे। जमादार ने चूँ तक न की, चुपके से झाड़-पोंछ कर उठ खड़े हुए और गाँव की दूसरी तरफ़ चले। इत्तिफ़ाक़ से फ़ीरोज़ा अपनी छत पर खड़ी बाल सुलझा रही थी। जमादार की नज़र पड़ी तो हैरत हुई। बोले—अरे, यह किसका मकान है? कोई है इसमें?

पड़ोसी—इस मकान में एक बेगम रहती हैं। इस वक़्त कोई मर्द नहीं है।

जमादार—तू कौन है? बता इसमें कौन रहता है? और मकान किसका है?

पड़ोसी—मकान तो एक अहीर का है, मुल इसमें एक बेगम टिकी हैं।

जमादार—कहो, दरवाज़े पर आवें। बुला लाओ।

पड़ोसी—वाह, वह परदेवाली हैं। दरवाज़े पर न आयेंगी।

जमादार—क्या! परदा कैसा? बुलाता है कि घुस जाऊँ घर में? परदा लिये फिरता है!

फ़ीरोज़ा के होश उड़ गये। फ़रख़ुंदा से बोली—अब ग़ज़ब हो गया। भाग के यहाँ आयी थी, मगर यहाँ भी वही बला सिर पर आयी।

फ़रख़ुंदा—इसको कहाँ से ख़बर हुई?

फ़ीरोज़ा—क्या बताऊँ? इस वक़्त कौन इससे सवाल-जवाब करेगा?

फ़रख़ुंदा—देखिए, पड़ोसिन को बुलाती हूँ। शायद वह काम आयें।

दरवाज़ा खुलने में देर हुई तो कांस्टेबिल ने दरवाज़े पर लात मारी और कहा—खोल दो दरवाज़ा, हम दौड़ लाये हैं। मुहल्लेवालों ने कहा—भई, तुम्हारे पास न सम्मन, न सफ़ीना। फिर किसके हुक्म से दरवाज़ा खुलवाते हो? ऐसा भी कहीं हुआ है। इन बेचारियों का जुर्म तो बताओ!

जमादार—जुर्म चलके साहब से पूछो जिनके भेजे हम आये हैं। सम्मन-सफ़ीना दीवानी के मज़कूरी लाते हैं। हम पुलीस के आदमी हैं।

दूसरे आदमी ने आगे बढ़ कर कहा—सुनो भई जवान, तुम इस वक़्त बड़ा भारी जुल्म कर रहे हो। भला इस तरह कोई काहे को रहने पायेगा।

जमादार ने अकड़ कर कहा—तुम कौन हो? अपना नाम बताओ। तुम सरकारी आदमी को अपना काम करने से रोकते हो। हम रपट बोलेंगे।

यह सुन कर वह हज़रत चकराये और चुपके लम्बे हुए। तब जमादार ने गुल मचा कर कहा, मुख़बिरों ने हमें ख़बर दी है कि तुम्हारे लड़का होनेवाला है। हमको हुक्म है कि दरवाज़े पर पहरा दें।

पड़ोसिन ने जो यह बात सुनी तो दाँतों-तले अँगुली दबायी—ऐ है, यह ग़ज़ब ख़ुदा का, हमें आज तक मालूम ही न हुआ, हम भी सोचते थे कि यह जवान-जहान औरत शहर से भाग कर गाँव में क्यों आयी! यह मालूम ही न था कि यहाँ कुछ और गुल खिलनेवाला है।

इतने में फ़रख़ुंदा ने कोठे पर जा कर पड़ोसिन से कहा—ज़री अपने मियाँ से कहो कि इस सिपाही से कुल हाल पूछें—माजरा क्या है?

पड़ोसिन कुछ सोच कर बोली—भई, हम इस मामले में दख़ल न देंगे। ओह, तुम्हारी बेगम ने तो अच्छा जाल फैलाया था, हमारे मियाँ को मालूम हो जाय कि यह ऐसी हैं तो मुहल्ले से खड़े-खड़े निकलवा दें।

इतने में पड़ोसिन के मियाँ भी आये। फ़रख़ुंदा उनसे बोली, ख़ाँ साहब, ज़री इस सिपाही को समझाइए, यह हमारे बड़ी मुसीबत का वक़्त है।

ख़ाँ साहब—कुछ न कुछ तो उसे देना ही पड़ेगा।

फ़रख़ुंदा—अच्छा, आप फैसला करा दें। जो माँगे वह हमसे इसी दम ले।

ख़ाँ साहब—इन पाजियों ने नाक में दम कर दिया है और इस तरफ़ की रिआया ऐसी बोदी है कि कुछ न पूछो। सरकार ने इन पियादों को इंतज़ाम के लिए रखा है और यह लोग ज़मीन पर पाँव नहीं रखते। सरकार को मालूम हो जाय तो खड़े-खड़े निकाल दिये जायँ।

पड़ोसिन—पहले बेगम से यह तो पूछो कि शहर से यहाँ आ कर क्यों रही हैं? कोई न कोई वजह तो होगी।

फ़रख़ुंदा ने दो रुपये दिये और कहा, जा कर यह दे दीजिए। शायद मान जाय। ख़ाँ साहब ने रुपये दिये तो सिपाही बिगड़ कर बोला—यह रुपया कैसा? हम रिश्वत नहीं लेते!

ख़ाँ साहब—सुनो मियाँ, जो हमसे टर्राओगे, तो हम ठीक कर देंगे। टके का पियादा, मिज़ाज ही नहीं मिलता।

सिपाही—मियाँ, क्यों शामतें आयी हैं, हम पुलीस के लोग हैं, जिस वक़्त चाहें, तुम जैसों को ज़लील कर दें। बताओ तुम्हारी गुज़र-बसर कैसे होती है? बचा,

किसी भले घर की औरत भगा लाये हो और ऊपर से टर्राते हो !

खाँ साहब—यह धमकियाँ दूसरों को देना। यहाँ तुम जैसे को अँगुलियों पर नचाते हैं।

सिपाही ने देखा कि यह आदमी कड़ा है तो आगे बढ़ा। एक नानबाई की दूकान पर बैठ कर मज़े का पुलाव उड़ाया और सड़क पर जा कर एक गाड़ी पकड़ी। गाड़ीवान की लड़की बीमार थी। बेचारा गिड़गिड़ाने लगा, मगर सिपाही ने एक न मानी। इस पर एक बाबू जी बोल उठे—बड़े बेरहम आदमी हो जी ! छोड़ क्यों नहीं देते ?

सिपाही—कप्तान साहब ने मँगवाया है, छोड़ कैसे दूँ ? यह इसी तरह के बहाने किया करते हैं, ज़माने भर के झूठे !

आखिर गाड़ीवान ने सात पैसे और एक कद्दू दे कर गला छुड़ाया। तब आपने एक चबूतरे पर बिस्तर जमाया और चौकीदार से हुक्क़ा भरवा कर पीने लगे। जब ज़रा अँधेरा हुआ, तो चौकीदार ने आ कर कहा—हवलदार साहब, बड़ा अच्छा शिकार चला जात है। एक महाजन की मेहरिया बैलगाड़ी पर बैठी चली जात है। गहनन से लदी है।

सिपाही—यहाँ से कितनी दूर ?

चौकीदार—कुछ दूर नाहिन, घड़ी भर में पहुँच जैहो। बस एक गाड़ीवान है और एक छोकरा। तीसर कोऊ नहीं।

सिपाही—तब तो मार लिया है। आज किसी भले आदमी का मुँह देखा है। हमारे साथ कौन-कौन चलेगा ?

चौकीदार—आदमी सब ठीक हैं, कहै भर की देर है। हुक्म होय तो हम जाके सब ठीक करी।

सिपाही—हाँ-हाँ और क्या ?

अब सुनिए कि महाजन की गाड़ी बारह बजे रात को एक बाग़ की तरफ़ से गुज़री जा रही थी कि एकाएक छः सात आदमी उस पर टूट पड़े। गाड़ीवान को एक डंडा मारा। कहार को भी मार के गिरा दिया। औरत के ज़ेवर उतार लिये और चोर-चोर का शोर मचाने लगे। गाँव में शोर मच गया कि डाका पड़ गया। कांस्टेबिल ने जा कर थाने में इत्तला की। थानेदार ने चौकीदार से पूछा, तुम्हारा किस पर शक है ! चौकीदार ने कई आदमियों का नाम लिखाया और फ़िरोज़ा के पड़ोसी खाँ साहब भी उन्हीं में थे। दूसरे दिन उसी सिपाही ने खाँ साहब के दरवाज़े पर पहुँच कर पुकारा। खाँ साहब ने बाहर आ कर सिपाही को देखा तो मूँछों पर ताव दे कर बोले, क्या है साहब, क्या हुक्म है ?

सिपाही—चलिए, वहाँ बरगद के तले तहक़ीक़ात हो रही है ! दारोग़ा जी बुलाते हैं।

खाँ—कैसी तहक़ीक़ात ? कुछ सुनें तो !

सिपाही—मालूम हो जायगी ! चलिए तो सही।

ख़ाँ—सुनो जी, हम पटान हैं। जब तक चुप हैं तब तक चुप हैं। 'जिस दम ग़ुस्सा आया, फिर या तुम न होगे या हम न होंगे। कहाँ चलें, कहाँ?

सिपाही—मुझे आपसे कोई दुश्मनी तो है नहीं, मगर दारोग़ा जी के हुक्म से मजबूर हूँ।

चौकीदार—लोधे को बुलाया है, घोसी को और तुमको।

ख़ाँ—एँ, वह तो सब डाकू हैं।

सिपाही—और आप बड़े साहु हैं! बड़ी शेख़ी।

ख़ाँ—क्यों अपनी जान के दुश्मन हुए हो?

सिपाही—अब चलिएगा या वारंट आये।

ख़ाँ साहब घर में कपड़े पहनने गये तो बीबी ने कहा, कैसे पठान हो? मुए प्यादे की क्या हक़ीक़त है कि दरवाज़े पर खोटी-खरी कहे। भला देखूँ तो निगोड़ा तुम्हें वह क्योंकर ले जाता है। यह कह कर वह दरवाज़े पर आ कर बोली, क्यों रे, तू इन्हें कहाँ लिये जाता है? बता, किस बात की तहक़ीक़ात होगी? क्या तेरा बाप क़तल किया गया है?

सिपाही—आप ख़ाँ साहब को भेज दें। अजी ख़ाँ साहब, आइएगा या वारंट आये?

बीबी—वारंट ले जा अपने होतों-सोतों के यहाँ।

सिपाही—यह औरत तो बड़ी कल्ला-दराज़ है।

बीबी—मेरे मुँह लगेगा तो मुँह पकड़के झुलस दूँगी। वारंट अपने बाप-दादा के नाम ले जा!

इतने में ख़ाँ साहब ढाटा बाँध कर बाहर निकले और बोले—ले तुझे दायें हाथ खाना हराम है जो न ले चले।

सिपाही—बस, बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न कीजिए, चुपके से मेरे साथ चलिए।

ख़ाँ साहब अकड़ते हुए चले तो सिपाही ने फ़ीरोज़ा के दरवाज़े पर खड़े हो कर कहा, इन्हें तो लिये जाते हैं, अब तुम्हारी बारी भी आयेगी।

ख़ाँ साहब बरगद के नीचे पहुँचे तो देखा, गाँव भर के बदमाश जमा हैं और दारोग़ा जी चारपाई पर बैठे हुक़्क़ा पी रहे हैं। बोले, क्यों जनाब, हमें क्यों बुलाया?

दारोग़ा—आज गाँव भर के बदमाशों की दावत है।

ख़ाँ साहब ने डंडे को तौल कर कहा, तो फिर दो एक बदमाशों की हम भी ख़बर लेंगे।

दारोग़ा—बहुत गरमाइए नहीं, चौकीदारों ने हमसे जो कहा वह हमने किया।

ख़ाँ—और जो चौकीदार आपको कुएँ में कूद पड़ने की सलाह दे?

दारोग़ा—तो हम कूद पड़ें।

ख़ाँ—तो हमारी निस्बत आख़िर क्या जुर्म लगाया गया है?

दारोग़ा—कल रात को तुम कहाँ थे?

ख़ाँ—अपने घर पर, और कहाँ।

चौकीदार—हुजूर, बखरी में नाहीं रहे और एक मनई इनका वही बाग़ के भीतर देखिस रहा।

ख़ाँ साहब ने चौकीदार को एक चौंटा दिया, सुअर, अबे हम चोर हैं? रात को हम घर पर न थे?

दारोग़ा ने कहा, क्यों जी, हमारे सामने यह मार-पीट! तुम भी पठान हो और हम भी पठान हैं। अगर अबकी हाथ उठाया तो तुम्हारी ख़ैरियत नहीं।

इतने में एक अँगरेज घोड़े पर सवार उधर से आ निकला। यह जमघट देख कर दारोग़ा से बोला, क्या बात है? दारोग़ा ने कहा, ग़रीबपरवर, एक मुक़दमे की तहक़ीक़ात करने आये हैं। इस पठान की निस्बत एक चोरी का शक है, मगर यह तहक़ीक़ात नहीं करने देता। चौकीदार को कई मरतबा पीट चुका है। चौकीदार ने कहा, दोहाई है साहब की! दोहाई है, मारे डारत है।

साहब ने कहा—वेल, चालान करो। हमारी गवाही लिखवा दो, हमारा नाम मेजर क्रास है।

लीजिए, चोरी और डाका तो दूर रहा, एक नया जुर्म साबित हो गया।

अब दारोग़ा जी ने गवाहों के बयान लिखने शुरू किये। पहले एक तम्बोलिन आयी। भड़कीला लहँगा पहने हुए, माँग-चोटी से लैस, मुँह में गिलौरी दबी हुई, हाथ में पान के बीड़े, आ कर दरोग़ा जी को बीड़े दे कर खड़ी हो गयी।

दारोगा—तुमने ख़ाँ साहब को रात के वक़्त कहाँ देखा था?

तम्बोलिन—उस पूरे के पास। इनके साथ तीन-चार आदमी और थे। सब लट्ठ-बंद। एक आदमी ने कहा, छीन लो सास से, मैं बोली कि बोटियाँ नोच लूँगी, मैं कोई गँवारिन नहीं हूँ। ख़ाँ साहब ने मुझसे कहा, तम्बोलिन, कहो फ़तह है।

ख़ाँ—अरी तम्बोलिन!

तम्बोलिन—ज़रा अरी तरी न करना मुझसे, मैं कोई चमारिन नहीं हूँ।

ख़ाँ—तुमने हमको चोरों के साथ देखा था?

तम्बोलिन—देखा ही था। क्या कुछ अंधे हैं, चोर तो तुम हो ही।

ख़ाँ—ख़ुदा इस झूठ की सज़ा देगा।

तम्बोलिन—इसका हाल तो जब मालूम होगा, जब बड़े घर में चक्की पीसोगे।

ख़ाँ—और वहाँ गीत गाने के लिए तुमको बुला लेंगे।

दूसरे गवाह ने बयान किया, मैं रात को ग्यारह बजे इस पूरे की तरफ़ जाता था तो ख़ाँ साहब मुझे मिले थे।

ख़ाँ—क़सम ख़ुदा की, कोई आदमी मेरी ही शक्ल का रहा होगा।

दारोग़ा—आपने ठीक कहा।

काले ख़ाँ—जब पठान होके ऐसी हरकतें करने लगे तो इस गाँव का ख़ुदा ही मालिक है। कौन कह सकता है कि यह सफ़ेद-पोश आदमी डाका डालेगा।

ख़ाँ—ख़ुदा की क़सम, जी चाहता है सिर पीट लूँ, मगर ख़ैर, हम भी इसका मज़ा चखा देंगे।

दारोग़ा—पहले अपने घर की तलाशी तो करवाइए, मज़ा पीछे चखवाइएगा।

यह कह कर दारोग़ा जी ख़ाँ साहब के घर पहुँचे और कहा, जल्दी परदा करो, हम तलाशी लेंगे। ख़ाँ साहब की बीबी ने सैकड़ों गालियाँ दीं, मगर मज़बूर हो कर परदा किया। तलाशी होने लगी। दो बालियाँ निकलीं, एक जुगनू और एक छपका! ख़ाँ साहब की बीबी हक्का-बक्का हो कर रह गयी, यह ज़ेवर यहाँ कहाँ से आये? या ख़ुदा, अब हमारी आबरू तेरे ही हाथ है!

८६

फ़ीरोज़ा बेगम और फरखुंदा रात के वक़्त सो रही थीं कि धमाके की आवाज़ हुई। फरखुंदा की आँख खुल गयी। यह धमाका कैसा ? मुँह पर से चादर उठायी, मगर अँधेरा देख कर उठने की हिम्मत न पड़ी। इतने में पाँव की आहट मिली, रोयें खड़े हो गये। सोची, अगर बोली तो यह सब हलाल कर डालेंगे। दबकी पड़ी रही। चोर ने उसे गोद में उठाया और बाहर ले जा कर बोला—सुनो अब्बासी, हमको तुम खूब पहचानती हो ? अगर न पहचान सकी हो, तो अब पहचान लो।

अब्बासी—पहचानती क्यों नहीं, मगर यह बताओ कि यहाँ किस ग़रज़ से आये हो ? अगर हमारी आबरू लेनी चाहते हो तो क़सम खा कर कहती हूँ, ज़हर खा लूँगी।

चोर—हम तुम्हारी आबरू नहीं चाहते, सिर्फ़ तुम्हारा ज़ेवर चाहते हैं। तुम अपनी बेगम को जगाओ, ज़रा उनसे मिलूँगा। नाहक़ इधर-उधर मारी-मारी फिरती हैं, हमारे साथ निकाह क्यों नहीं कर लेतीं ?

यकायक फ़ीरोज़ा की आँख भी खुल गयी। देखा तो मिर्ज़ा आज़ाद खड़े हैं। बोली, आजाद मिर्ज़ा, अगर हमें दिक़ करने से तुम्हें कुछ मिलता हो तो तुमको अख्तियार है। नाहक क्यों हमारी जान के दुश्मन हुए हो ? इस मुसीबत के वक़्त तुमसे मदद की उम्मीद थी और तुम उल्टे गला रेतने को मौजूद ?

अब्बासी—बेगम आपको हमेशा याद किया करती हैं।

आज़ाद—मेरे लायक़ जो काम हो, उसके लिए हाज़िर हूँ, तुम्हारे लिए जान तक हाज़िर है।

सुरैया—आपकी जान आपको मुबारक रहे, हम सिर्फ़ एक काम को कहते हैं। यहाँ एक कानिस्टिबिल ने हमें बहुत दिक़ किया है, तुम किसी तदबीर से हमें उसके पंजे से छुड़ाओ, (आज़ाद के कान में कुछ कह कर) मुझे इस बात का बड़ा रंज है। मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

आज़ाद—वही कानिस्टिबिल तो नहीं है जो खाँ साहब को पकड़ ले गया है ?

फ़ीरोज़ा—हाँ-हाँ, वही।

आज़ाद—अच्छा, समझा जायगा। खड़े-खड़े उससे समझ लूँ तो सही। उसने अच्छे घर बयाना दिया !

सुरैया—कमबख्त ने मेरी आबरू ले ली, कहीं मुँह दिखाने लायक़ न रखा। यहाँ भी बला की तरह सिर पर सवार हो गया। तुमने भी इतने दिनों के बाद आज खबर ली। दूसरों का दर्द तुम क्या समझोगे ? जो बेइज़्ज़ती कभी न हुई थी वह आज हो गयी। एक दिन वह था कि अच्छे-अच्छे आदमी सलाम करने आते थे और आज एक कानिस्टिबिल मेरी आबरू मिटाने पर तुला हुआ है और तुम्हारे होते।

आज़ाद—सुरैया बेगम, खुदा की क़सम, मुझे बिल्कुल खबर न थी, मैं इसी वक़्त

जा कर दारोग़ा और कानिस्टिबिल दोनो को देखता हूँ। देख लेना, सुबह तक उनकी लाश फ़ड़कती होगी, ऐसे-ऐसे कितनों को जहन्नुम के घाट उतार चुका हूँ। इस वक़्त रुख़सत करो, कल फिर मिलूँगा।

यह कह कर आज़ाद मिर्ज़ा बाहर निकले। यहाँ उनके कई साथी खड़े थे, उनसे बोले, भाई जवानों! आज कोतवाल के घर हमारी दावत है, समझ गये, तैयार हो जाओ। उसी वक़्त आजाद मिर्ज़ा और लक्ष्मी डाकू, गुलबाज़, रामू यह सब के सब दारोगा के मकान पर जा पहुँचे। रामू को ती बैठक में रखा और महल्ले भर के मकानों की कुंडियाँ बंद करके दारोगा जी के घर में सेंध लगाने की फ़िक्र करने लगे।

दरबान—कौन! तुम लोग कौन हो, बोलते क्यों नही?

आज़ाद—क्या बतायें, मुसीबत के मारे हैं, इधर से कोई लाश तो नहीं निकली?

दरबान—हाँ, निकली तो है, बहुत से आदमी साथ थे।

आज़ाद—हमारे बड़े दोस्त थे, अफ़सोस!

लक्ष्मी—हुजूर, सब्र कीजिए, अब क्या हो सकता है!

दरबान—हाँ भाई, परमेश्वर की माया कौन जानता है, आप कौन ठाकुर हैं?

लक्ष्मी—कनवजिया ब्राह्मण हैं। बेचारे के दो छोटे-छोटे बच्चे हैं, कौन उनकी परवरिश करेगा!

दरबान को बातों में लगा कर इन लोगों ने उसकी मुश्कें कस लीं और कहा, बोले और हमने क़त्ल किया। बस, मुँह बंद किये पड़े रहो।

दीवार में सेंध पड़ने लगी। रामू कहीं से सिरका लाया। सिरका छिड़क-छिड़क-कर दीवार में सेंध दी। इतने में एक कानिस्टिबिल ने हाँक लगायी—जागते रहियो, अँधेरी रात है।

आज़ाद—हमारे लिए अँधेरी रात नहीं, तुम्हारे लिए होगी।

चौकीदार—तुम लोग कौन हो?

आज़ाद—तेरे बाप। पहचानता है या नहीं?

यह कह कर आज़ाद ने क़रौली से चौकीदार का काम तमाम कर दिया।

लक्ष्मी—भाई, यह तुमने बुरा किया। कितनी बेरहमी से इस बेचारे की जान ली!

आज़ाद—बस, मालूम हो गया कि तुम नाम के चोर हो, बिलकुल कच्चे!

अब यह तजवीज पायी कि मिर्ज़ा आज़ाद सेंध के अंदर जायें। आज़ाद ने पहले सेंध में पाँव डाले, डालते ही किसी आदमी ने अंदर से तलवार जमायी दोनों पाँव खट से अलग।

आज़ाद—हाय मरा! अरे दौड़ो!

लक्ष्मी—बड़ा धोखा हुआ, कहीं के न रहे!

चोरों ने मिल कर आज़ाद मिर्ज़ा का धड़ उठाया और रोते-पीटते ले चले, मगर रास्ते ही में पकड़ लिये गये।

मुहल्ले भर में जाग हो गयी। अब जो दरवाज़ा खोलता है, बंद पाता है। यह

कौन बंद कर गया ? दरवाज़ा खोलो ! कोई सुनता ही नहीं। चारों तरफ़ यही आवाजें आ रही थीं। सिर्फ़ एक दरवाज़े में बाहर से कुंडी न थी। एक बूढ़ा सिपाही एक हाथ में मशाल, दूसरे में सिरोही लिये बाहर निकला। देखा तो दारोग़ा जी के घर में सेंध पड़ी हुई है ! चोर-चोर !

एक कानि०—ख़ून भी हुआ है। जल्द आओ।

सिपाही—मार लिया है, जाने न पावे।

यह कह कर उसने दरवाज़े खोलने शुरू किये। लोग फ़ौरन लट्ठ ले-ले कर बाहर निकले। देखा तो चोरों और कानिस्टिबिलों में लड़ाई हो रही है। इन आदमियों को देखते ही चोर तो भाग निकले ! आज़ाद मिर्ज़ा और लक्ष्मी रह गये। आज़ाद की टाँगें कटी हुईं। लक्ष्मी ज़ख़्मी। थाने पर खबर हुई। दारोग़ा जी भागे हुए अपने घर आये। मालूम हुआ कि उनके घर की बारिन ने चोरों को सेंध देते देख लिया था। फ़ौरन जा कर कोठरी में बैठ रही। ज्यों ही आज़ाद मिर्ज़ा ने सेंध में पाँव डाला, तलवार से उनके दो टुकड़े कर दिये।

आज़ाद पर मुक़दमा चलाया गया। जुर्म सबित हो गया। कालेपानी भेज दिये गये।

जब जहाज़ पर सवार हुए तो एक आदमी से मुलाक़ात हुई। आज़ाद ने पूछा, कहो भाई, क्या किया था ? उसने आँखों में आँसू भरके कहा, भाई, क्या बताऊँ ? बे-क़सूर हूँ। फ़ौज़ में नौकर था, इश्क के फेर में नौकरी छोड़ी, मगर माशूक़ तो न मिला, हम खराब हो गये।

यह शहसवार था।

ख़ाँ साहब पर मुक़दमा तो दायर हो ही गया था; उस पर दारोग़ा जी दुश्मन थे। दो साल की सज़ा हो गयी। तब दारोग़ा जी ने एक औरत को सुरैया बेगम के मकान पर भेजा। औरत ने आ कर सलाम किया और बैठ गयी।

सुरैया—कौन हो? कुछ काम है यहाँ?

औरत—ऐ हुज़ूर, भला बग़ैर काम के कोई भी किसी के यहाँ जाता है? हुज़ूर से कुछ कहना है, आपके हुस्न का दूर-दूर तक शोहरा है। इसका क्या सबब है कि हुज़ूर इस उम्र में, इस हालत में ज़िंदगी बसर करती हैं!

सुरैया—बहन, मैं एक मुसीबत की मारी औरत हूँ।

औरत—ऐ हुज़ूर, मुझे बहिन न कहें, मैं लौंडी, हुज़ूर शाहज़ादी हैं। हुज़ूर पर ऐसी क्या मुसीबत है! हुज़ूर तो इस क़ाबिल हैं कि बादशाहों के महल में हों।

सुरैया—ख़ुदा दुश्मन पर भी ऐसी मुसीबत न डाले। मैं तो ज़िंदगी से तंग आ गयी।

औरत—अल्लाह मालिक है। कोशिश यह करनी चाहिए कि दुनिया में इज़्ज़त के साथ रहे और किसी का होके रहे।

सुरैया—मगर जब ख़ुदा को भी मंज़ूर हो। हमने तो बहुत चाहा कि शादी कर लें, मगर ख़ुदा को मंज़ूर ही न था। क़िस्मत का लिखा कौन मिटा सकता है?

औरत—हुज़ूर का हुक्म हो तो कहीं फ़िक्र करूँ?

सुरैया—हमको माफ़ कीजिए। हम अब शादी न करेंगे।

औरत—हुज़ूर से मैं अभी जवाब नहीं चाहती। ख़ूब सोच लीजिए। दो-तीन दिन में जवाब दीजिएगा। यहाँ एक रईसज़ादे रहते हैं, बहुत ही ख़ूबसूरत, ख़ुश-मिज़ाज और शौक़ीन। दिल बहलाने के लिए नौकरी कर ली है। हुकूमत की नौकरी है।

सुरैया—हुकुमत की नौकरी कैसी होती है?

औरत—ऐसी नौकरी, जिसमें सब पर हुकूमत करें। कोतवाल हैं।

अब्बासी—अच्छा, उन्हीं थानेदार का पैग़ाम लायी होगी!

औरत—ऐ, थानेदार काहे को हैं, बराय नाम नौकरी कर ली, वरना उनको नौकरी की क्या ज़रूरत है, वह ऐसे-ऐसे दस थानेदारों को नौकर रख सकते हैं।

अब्बासी—हुज़ूर को तो शादी करना मंज़ूर ही नहीं है।

औरत—वाह! कैसी बातें करती हो।

सुरैया—तुम उनकी सिखायी-पढ़ायी आयी हो, हम समझ गये। उनसे कह देना कि हम बेकस औरत हैं, हम पर रहम करो, क्यों हमारी जान के दुश्मन हुए हो, हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो पंजे झाड़ के हमारे पीछे पड़े हो?

औरत—हुज़ूर के क़दमों की क़सम, उन्होंने नहीं भेजा है।

सुरैया—अच्छा तो इसमें ज़बरदस्ती काहे की है।

औरत—आपके और उनके दोनों के हक़ में यही इच्छा है कि हुज़ूर इन्कार न करें। वह अफ़सर पुलिस हैं, जरा सी देर में बे-आबरू कर सकते हैं?

सुरैया—हमारा भी खुदा है।

औरत—खैर न मानो।

औरत दो-चार बातें सुना कर चली गयी तो अब्बासी और सुरैया बेगम सलाह करने लगीं—

सुरैया—अब यहाँ से भी भागना पड़ा, और आज ही कल में।

अब्बासी—इस मुए को ऐसी जिद पड़ गयी कि क्या कहें! मगर अब भाग के जायँगे कहाँ?

सुरैया—जिधर खुदा ले जाय। कहीं से लाला खुशवक़्तराय को लाओ, बड़ा नमकहलाल बुड्ढा है। कोई ऐसी तदबीर करो कि वह कल सुबह तक यहाँ आ जाय।

अब्बासी—कहिए तो कल्लू को भेजूँ, बुला लाये।

कल्लू क़ौम का लोहार था। ऊपर से तो मिला हुआ था, मगर दिल में इनका दुश्मन था। अब्बासी ने उसको बुला के कहा, तुम जाके लाला खुशवक़्त राय को लिवा लाओ। कल्लू ने कहा, तुम साथ चलो तो क्या मुज़ायक़ा है, मगर अकेला तो मैं न जाऊँगा। आखिर यही तै हुआ कि अब्बासी भी साथ जाय। शाम के वक़्त दोनों यहाँ से चले। अब्बासी मर्दाना भेष में थी। कुछ दूर चल कर कल्लू बोला, अब्बासी बुरा न मानो तो एक बात कहूँ! तुम इस बेगम के साथ क्यों अपनी ज़िंदगी खराब करती हो? उनकी जमा-जथा ले कर चली आओ और मेरे घर पड़ रहो।

अब्बासी—तुम मर्दों का ऐतबार क्या?

कल्लू—हम उन लोगों में नहीं हैं।

अब्बासी—भला अब लाला साहब का मकान कितनी दूर होगा?

कल्लू—यही कोई दो कोस, कहो तो सवारी केराया कर लूँ या गोद में ले चलूँ!

अब्बासी—ऐं, या तो घर बिठाते थे, या गोद बिठाने लगे।

कल्लू—भई, बहुत कही, ऐसी कही कि हमारी ज़बान बंद हो गयी।

अब्बासी—ऐ, तुम ऐसे गँवारों को बंद करना कौन बात है।

थोड़ी देर में दोनों एक मकान में पहुँचे। यह कल्लू के दोस्त शिवदीन का मकान था। शिवदीन ने कहा, आओ यार, मिज़ाज अच्छे?

कल्लू—सब चैन ही चैन है। इनको ले आया हूँ, जो कुछ सलाह करनी हो, कर लो। सुनो अब्बासी, शिवदीन की और हमारी यह राय है कि तुमको अब यहाँ से न जाने दें। बस हमें अपनी बेगम के माल-टाल का पता बतला दो।

अब्बासी—बड़ी दग़ा दी कल्लू, बड़ी दग़ा दी तुमने।

कल्लू—अब तुम रात भर यहीं रहो, हम लोग ज़रा सुरैया बेगम से मुलाकात करने जायँगे।

अब्बासी—बड़ा धोखा दिया, कहीं के न रहे।

अब्बासी तो यहाँ रोती रही, उधर वह दोनों चोर कई आदमियों के साथ सुरैया बेगम के मकान पर जा पहुँचे और दरवाज़ा तोड़ कर अंदर दाख़िल हुए। सुरैया बेगम की आँख खुल गयी, बिचारी अकेली मकान में मारे डर के दबकी पड़ी थी। बोली—कौन है ? अब्बासी ?

कल्लू—अब्बासी नहीं है, हम है, अब्बासी के मियाँ।

सुरैया—हाय मेरे अल्लाह, ग़ज़ब हो गया ?

शिव०—चुप्पे-चुप्पे बोल, बताओ, रुपया कहाँ हैं ? सच बता दो, नहीं मारी जाओगी।

कल्लू—बतायें तो अच्छा, न न बतायें तो अच्छा, हम घर भर ढूँढ़ ही मरेंगे। सुना है कि तुम्हारे पास जवाहिर के ढेर हैं।

सुरैया—अमीर जब थी तब थी, अब तो मुसीबत की मारी हूँ।

कल्लू—तुम यों न बताओगी, हम कुछ और ही उपाय करेंगे, अब भी बताती है कि नहीं।

सुरैया बेगम ने मारे ख़ौफ़ के एक-एक चीज का पता बतला दिया। जब सारी जमा-जथा ले कर वे सब चलने लगे, तो कल्लू सुरैया बेगम से बोला, चल हमारे साथ, उठ।

सुरैया—ख़ुदा के लिए मुझे छोड़ दो ! रहम करो।

शिव०—चल, चल उठ, रात जाती है।

सुरैया बेगम ने हाथ जोड़े, पाँव पड़ी, रो-रो कर कहा, ख़ुदा के वास्ते मेरी इज़्ज़त न लो। मगर कल्लू ने एक न सुनी। कहने लगा, तुझे किसी रईस अमीर के हाथ बेचेंगे; तुम भी चैन करोगी, हम भी चैन करेंगे।

सुरैया—मेरा माल लिया, अब तो छोड़ो।

कल्लू—चलो, सीधे से चलो, नहीं तो धकियायी जाओगी। देखो मुँह से आवाज़ न निकले वरना हम छुरी भोंक देंगे।

सुरैया (रो कर)—या ख़ुदा, मैंने कौन सा गुनाह किया था, जिसके एवज़ यह मुसीबत पड़ी !

कल्लू—चलती है कि बैठी रोती है ?

आख़िर सुरैया बेगम को अँधेरी रात में घर छोड़ कर उनके साथ जाना पड़ा।

आध कोस चलने के बाद इन चोरों ने सुरैया बेगम को दो और चोरों के हवाले किया। इनमें एक का नाम बुद्धसिंह था, दूसरे का हुलास। यह दोनों डाकू दूर-दूर तक मशहूर थे, अच्छे-अच्छे डकैत उनके नाम सुन कर अपने कान पकड़ते थे। किसी आदमी की जान लेना उनके लिए दिल्लगी थी। सुरैया बेगम काँप रही थी कि देखें आबरू बचती है या नहीं। हुलास बोला, कहो बुद्धसिंह, अब क्या करना चाहिए?

बुद्धसिंह—अपनी तो यह मरज़ी है कि कोई मनचला मिल जाये तो उसी दम पटील डालो।

हुलास—मैं तो समझता हूँ, यह हमारे साथ रहे तो अच्छे-अच्छे शिकार फँसें। सुनो बेगम, हम डकैत हैं, बदमाश नहीं। हम तुम्हें किसी ऐसे जवान के हाथ बेचेंगे, जो तुम्हें अमीरज़ादी बना कर रखे। चुपचाप हमारे साथ चली आओ।

चलते-चलते तीनों आमों के एक बाग़ में पहुँचे। दोनों डाकू तो चरस पीने लगे, सुरैया बेगम सोचने लगी—खुदा जाने, किसके हाथ बेचें, इससे तो यही अच्छा है कि क़त्ल कर दें। इतने ही में दो आदमी बातें करते हुए निकले—

एक—मिर्ज़ा जी, दो बदमाशों से यह शहर पाक हो गया। आज़ाद और शह-सवार। दोनों ही कालेपानी गये। अब दो मुड्डा और बाक़ी हैं।

मिर्ज़ा—वह दो कौन हैं?

पहला—वही हुलास और बुद्धसिंह। अरे, वह दोनों तो यहीं बैठे हुए हैं! क्यों यारो, चरस के दम उड़ रहे हैं? तुम लोगों के नाम वारंट जारी है।

हुलास—मीर साहब, आप भी बस वही रहे। पड़ोस में रहते हो, फिर भी वारंट से डराते हो? ऐसे-ऐसे कितने वारंट रोज़ ही जारी हुआ करते हैं। हमसे और पुलिस से तो जानी दुश्मनी है, मगर क़सम खाके कहता हूँ कि अगर पचास आदमी भी गिरफ़्तार करने आयें तो हमारी गर्द तक न पायें। हम दोनों एक पलटन के लिए काफ़ी हैं। कहिए, आप लोग कहाँ जा रहे हैं?

मिर्ज़ा—अजी, हम भी किसी शिकार ही के तलाश में निकले हैं।

जब मीर और मिर्ज़ा चले गये तो दोनों चोर भी सुरैया बेगम को ले कर चले। इत्तिफ़ाक़ से उसी वक़्त एक सवार आ निकला। बुद्धसिंह ने साईस को तो मार गिराया और मुसाफ़िर से कहा, अगर आबरू के साथ घोड़ा नज़र करो तो बेहतर है, नहीं तो तुम भी ज़मीन पर लोट रहे होगे। सवार बेचारा उतर पड़ा। हुलास ने तब सुरैया बेगम को घोड़े पर सवार किया और लगाम ले कर चलने लगा।

सुरैया बेगम दिल में सोचती थी कि इतनी ही उम्र में हमने क्या-क्या देखा। यह नौबत पहुँची है कि जान भी बचती दिखायी नहीं देती।

हुलास—बीबी, क्या सोचती जाती हो ? कुछ गाना जानती हो तो गाओ। इस जंगल में मंगल हो।

बुद्धसिंह—इससे कहो कि कोई भजन गाये।

हुलास—इनको ग़ज़लें याद होंगी या ठुमरी-टप्पा। यह भजन क्या जानें !

सुरैया—नहीं मियाँ, हमें कुछ नहीं आता, हम बहू-बेटियाँ गाना क्या जानें।

इतने में किसी की आवाज़ आयी। हुलास ने बुद्धसिंह से पूछा, यह किसकी आवाज़ आयी ?

बुद्धसिंह—अरे, कौन सा आदमी बोला था ?

आवाज़—ज़रा इधर तक आ जाओ। मैं मिर्ज़ा हूँ, ज़रा सुन लो।

हुलास और बुद्धसिंह दोनों आवाज़ की तरफ चले, इधर-उधर देखा, कोई न मिला। सुरैया बेगम का कलेजा धड़कने लगा। मारे डर के आँखें बंद कर लीं और आहिस्ता-आहिस्ता दोनों को पुकारने लगीं। हाय ! खुदा किसी को मुसीबत में न डाले। यह दोनों डाकू उसको बेचने की फ़िक्र में थे, और इसने मुसीबत के वक़्त उन्हीं दोनों को पुकारा। वह आवाज़ की तरफ कान लगाये हुए चले तो देखा कि एक बूढ़ा आदमी घास पर पड़ा सिसक रहा है। इनको देख कर बोला, बाबा, मुझ फ़क़ीर को ज़रा सा पानी पिलाओ। बस, मैं पानी पी कर इस दुनिया से कूच कर जाऊँगा। फिर किसी को अपना मुँह न दिखाऊँगा।

हुलास ने उसे पानी पिलाया, पानी पी कर वह बोला, बाबा, ख़ुदा तुम्हें इसका बदला दे। इसके एवज़ तुम्हें क्या दूँ। खैर, अगर दो घंटे भी ज़िंदा रहा तो अपना कुछ हाल तुमसे बयान करूँगा और तुम्हें कुछ दूँगा भी।

हुलास—आपके पास जो कुछ जमा-जथा हो वह हमको बता दीजिए।

बूढ़ा—कहा न कि दो घंटे भी ज़िंदा रहा तो सब बातें बता दूँगा। मैं सिपाही हूँ, लड़कपन से यही मेरा पेशा है।

हुलास—आपने तो एक क़िस्सा छेड़ दिया, मुझे खौफ़ है कि ऐसा न हो कि आपकी जान निकल जाय तो फिर वह रुपया वहीं का वहीं पड़ा रहे।

बूढ़ा (गा कर)—पहुँची न राहत हमसे किसी को...

हुलास—जनाब, आपको गाने को सूझती है और हम डर रहे हैं कि कहीं आप का दम न निकल जाय। रुपये बता दो, हम बड़ी धूमधाम से तुम्हारा तीजा करेंगे।

बुद्धसिंह—पानी और पिलवा दो तो फिर खूब ठंडा हो कर बतायेगा।

बूढ़ा—मेरा एक लड़का है, दुनिया में और कोई नहीं। बस यही एक लड़का, जवान, खूबसूरत, घोड़े पर खूब सवार होता था।

सुरैया—फिर अब कहाँ है वह ?

बूढ़ा—फ़ौज में नौकर था। किसी बेगम पर आशिक़ हुआ, तब से पता नहीं। अगर इतना मालूम हो जाय कि उसकी जान निकल गयी तो क़ब्र बनवा दूँ !

सुरैया—लम्बे हैं या ठिंगने ?

बूढ़ा—लम्बा है। चौड़ा सीना, ऊँची पेशानी, गोरा रंग।

सुरैया—हाय-हाय! क्या बताऊँ बड़े मियाँ, मेरा उनका बरसों साथ रहा है। मेरे साथ निकाह होने को था।

बूढ़ा—बेटा, जरी हमारे पास आ जाओ। कुछ उसका हाल बताओ। ज़िंदा तो है?

सुरैया—हाँ, इतना तो मैं कह सकती हूँ कि जिंदा हैं।

बूढ़ा—अब वह है कहाँ? ज़रा देख लेता तो आरज़ू पूरी हो जाती।

हुलास—आपका सर दबा दूँ, तलुवे मलूँ, जो ख़िदमत कहिए करूँ।

बूढ़ा—नहीं, मौत का इलाज नहीं है। मैंने अपने लड़के को लड़ाई के फ़न ख़ूब सिखाये थे। हरएक के साथ मुरौवत से पेश आता था। बस, इतना बता दो कि ज़िंदा है या मर गया?

सुरैया—जिंदा हैं और खुश हैं।

बूढ़ा—अब मैं अपनी सारी तकलीफ़ें भूल गया। ख्याल भी नहीं कि कभी तकलीफ़ हुई थी।

ये बातें हो रही थीं कि पचास आदमियों ने आ कर इन लोगों को चारों तरफ़ से घेर लिया। दोनों डाकुओं की मुश्कें कस ली गयीं। बुद्धसिंह मजबूत आदमी था। रस्सी तोड़ कर, तीन सिपाहियों को ज़ख्मी किया और भाग कर झील में कूद पड़ा, किसी की हिम्मत न पड़ी कि झील में कूद कर उसे पकड़े। हुलास बँधा रह गया।

यह पुलिस का इंसपेक्टर था।

सुरैया बेगम हैरान थीं कि यह क्या माजरा है। इन लोगों को डाकुओं की ख़बर कैसे मिल गयी। चुपचाप खड़ी थी कि सिपाहियों ने उससे हँसी-दिल्लगी करनी शुरू की। एक बोला, वाह-वाह, यह तो कोई परी है भाई। दूसरा बोला, अगर ऐसी सूरत कोई दिखा दे तो महीने की तनख्वाह हार जाऊँ।

हुलास—सुनते हो जी, उस औरत से न बोलो, तुमको हमसे मतलब है या उससे।

इंसपेक्टर—इसका जवाब तो यह है कि तेरे एक बीस लगाये और भूल जाय तो फिर से गिने। आँखें नीची कर, नहीं खोद के गाड़ दूँगा।

सुबह के वक़्त शहर में दाख़िल हुए तो सुरैया बेगम ने चादर से मुँह छिपा लिया। इस पर एक चौकीदार बोला, सत्तर चूहे खा के बिल्ली हज को चली! ओढ़नी मुँह पर ढाँपती है, हटाओ ओढ़नी।

सुरैया बेगम की आँखों से आँसू जारी हो गये। उसके दिल पर जो कुछ गुज़रती थी, उसे कौन जान सकता है। रास्ते में तमाशाइयों में बातें होने लगीं!

रँगरेज़—भई, यह दुपट्टा कितना अच्छा रँगा हुआ है!

नानबाई—कहाँ से आते हो जवानो? क्या कहीं डाका पड़ा था?

शेख़ जी—अरे यारो, यह नाज़नीन कौन है ? क्या मुखड़ा है, क़सम ख़ुदा की, ऐसी सूरत कभी न देखी थी। बस, यही जी चाहता है कि इससे निकाह पढ़वा लें। यह तो शब्बोजान से भी बढ़ कर है।

यह शेख़ जी वही वकील साहब थे जिनके यहाँ अलारक्खी शब्बोजान बन कर रही थी। सलारू भी साथ था। बोला, मियाँ, आँखोंवाले तो बहुत देखे, मगर आपकी आँख निराली है।

वकील—क्यों बे बदमाश, फिर तूनेगुस्ताख़ी की।

सलारू—जब कहेंगे, खरी कहेंगे। आप थाली के बैंगन हैं।

वकील साहब इस पर झल्ला कर दौड़े। सलारू भागा, आप मुँह के बल गिरे।

इस पर लोगों ने क़हक़हा मारा। सुरैया बेगम सोच रही थीं कि मैंने इस आदमी को कहीं देखा है, पर याद न आता था।

यह लोग और आगे चले तो तरह-तरह की अफ़वाहें उड़ने लगीं। एक महल्ले में यह ख़बर उड़ी कि दरिया से एक घोड़मुहा आदमी निकाला गया है। उसी के साथ एक परी भी निकली है। दो-तीन महल्लों में यह अफ़वाह उड़ी कि एक औरत अपने घर से ज़ेवर ले कर भाग गयी थी, अब पकड़ी गयी है। नौ बजते-बजते यह लोग थाने में जा पहुँचे। हुलास और सुरैया बेगम हवालात में बंद कर दिये गये। रात को तरह-तरह के ख़्वाब दिखायी दिये। पहले देखा कि उसका बूढ़ा शौहर क़ब्र से गर्दन निकाल कर कहता है, सुरैया, वह कैसी बुरी घड़ी थी, जब तेरे साथ निकाह किया और अपने खानदान की इज्ज़त ख़ाक में मिलायी। फिर दूसरा ख़्वाब देखा कि आज़ाद एक दरख़्त के साये में लेटे और सो गये। एक साँप उनके सिरहाने आ बैठा और काटना ही चाहता था कि सुरैया बेगम की आँख खुल गयी।

सबेरे उठ कर बैठी कि एक सिपाही ने आ कर कहा, तुम्हारे भाई तुमसे मिलने आये हैं। सुरैया बेगम ने सोचा, मेरा भाई तो कोई पैदा ही नहीं हुआ था, यह कौन भाई बन बैठा ? सोची; शायद कोई दूर के रिश्तेदार होंगे, बुला लिया। जब वह आया तो उसे देख कर सुरैया बेगम के होश उड़ गये। यह वही वकील साहब थे। आपने आते ही आते कहा, बहन, ख़ैर तो है, यह क्या, हुआ क्या ? हमसे बयान तो करो ! कुछ दौड़-धूप करें ? हुक्काम से मिल कर कोई सबील निकालें।

सुरैया—मियाँ, मेरी तक़दीर में यही लिखा था, तो तुम क्या करोगे और कोई क्या करेगा ?

वकील—ख़ैर, अब उन बातों का ज़िक्र ही क्या। सच कहता हूँ शब्बोजान, तुम्हारी याद दिल से कभी नहीं उतरी, मगर अफ़सोस कि तुमने मेरी मुहब्बत की क़दर न की। जिस दिन तुम मेरे घर से निकल भागीं, मुझे ऐसा मालूम हुआ कि बदन से जान निकल गयी। अब तुम घबराओ नहीं। हम तुम्हारी तरफ़ से पैरवी करेंगे। तुम जानती ही हो कि हम कैसे मशहूर वकील हैं और कैसे-कैसे मुक़दमे बात की बात में जीत लेते हैं।

सुरैया—इस वक्त आप आ गये, इससे दिल को बड़ी तसकीन हुई। तुम्हारे घर से निकली तो पहिले एक मुसीबत में फँस गयी, बारे खुदा-खुदा करके उससे नजात पायी और कुछ दौलत भी हाथ आयी तो तुम्हारे ही महल्ले में मकान लिया और बेगमों की तरह रहने लगी।

वकील—अरे, वह सुरैया बेगम आप ही थीं ?

सुरैया—हाँ, मैं ही थी।

वकील—अफ़सोस, इतने क़रीब रह कर भी कभी मुझे न बुलाया! मगर वह आपकी दौलत क्या हुई और यहाँ हवालात में क्योंकर आयीं ?

सुरैया—हुआ क्या, दो बार चोरी हो गयी, ऊपर से थानेदार भी दुश्मन हो गया। आख़िर हम अपनी महरी को ले कर चल दिये। एक गाँव में रहने लगी, मगर वहाँ भी चोरी हुई और डाकुओं के फंदे में फँसी।

इतने ही में एक थानेदार ने आ कर वकील साहब से कहा, अब आप तशरीफ़ ले जाइए। वक़्त ख़तम हो गया। सुरैया बेगम ने इस थानेदार को देखा, तो पहचान गयी। यह वही आदमी था जिसके पास एक बार वह आज़ाद पर रपट करने गयी थी। बोली—क्यों साहब, पहचाना ? अब क्यों पहचानिएगा ?

थानेदार—अलारक्खी, ख़ुदा को गवाह रख कर कहता हूँ कि इस वक़्त मारे ख़ुशी के रोना आता है। मैं तो बिलकुल मायूस हो गया था। मुझे अब भी तुम्हारी वैसी ही मुहब्बत है जो पहिले थी।

रात के वक़्त थानेदार ने हवालात में आ कर उसे जगाया और आहिस्ता से कान में कहा, बहुत अच्छा मौक़ा है, चलो, भाग चलें। मैंने चौकीदारों को मिला लिया है।

सुरैया बेगम ने थानेदार को समझाया कि कहीं पकड़ न लिये जायँ। मगर जब वह न माना, तो वह उसके साथ चलने पर तैयार हो गयी। बाहर आ कर थानेदार ने सुरैया बेगम को मर्दाना कपड़े पहिनाये और गाड़ी पर सवार कराके चला। जब दो कोस निकल गये तो सबेरा हुआ। थानेदार ने गाड़ी से दरी निकाली और आराम से लेट कर हुक्क़ा पीने लगे कि एक मुसाफ़िर सवार ने आ कर पूछा—क्यों भाई मुसाफ़िर हिंदू हो या मुसलमान ? मुसलमान हो तो हुक्क़ा पिलाओ।

थानेदार ने ख़ातिर से बैठाया। लेकिन जब मुसाफ़िर के चेहरे पर ग़ौर से नज़र डाली तो कुछ शक हुआ। कहा—जनाब, मेरे दिल में आपकी तरफ़ से एक शक पैदा हुआ है। कहिए अर्ज़ करूँ, कहिए ख़ामोश रहूँ ? आप ही तो जबलपुर में एक सौदागर के यहाँ मुंशी थे। वहाँ आपने दो हज़ार रुपये का ग़बन किया और साल भर की सज़ा पायी। कहिए, ग़लत कहता हूँ ?

मुसाफ़िर—जनाब, आपको धोखा हुआ है, यहाँ ख़ानदानी रईस हैं। ग़बन पर लानत भेजते हैं।

थानेदार—यह चकमे किसी और को दीजिएगा। दाई से पेट नहीं छिपता।

मुसाफ़िर—अच्छा मान लीजिए, आप ही का कहना दुरुस्त है। भला हम फँस जायँ तो आपको क्या मिले?

थानेदार—पाँच सौ रुपये नक़द, तरक्क़ी और नेकनामी अलग!

मुसाफ़िर—बस! हमसे एक हजार ले लीजिए, अभी-अभी गिना लीजिए। लेकिन गिरफ़्तार करने का इरादा हो तो मेरे हाथ में भी तलवार है।

थानेदार—हज़रत, यह रक़म बहुत थोड़ी है, हमें जँचती नहीं।

मुसाफ़िर—आख़िर दो ही हज़ार तो मेरे हाथ लगे थे। उसका आधा आपको नज़र करता हूँ! मगर गुस्ताख़ी माफ़ हो, तो मैं भी कुछ कहूँ! मुझे आपके इन दोस्त पर कुछ शक होता है। कहिए, कैसा भाँपा?

थानेदार ने देखा कि पर्दा खुल गया, तो झगड़ा बढ़ाना मुनासिब न समझा। डरे, कहीं जा कर अफ़सरों से जड़ दे, तो रास्ते ही में धर लिये जायँ। बोले, हज़रत, अब आपको अख़्तियार है, हमारी लाज अब आपके हाथ है।

मुसाफ़िर—मेरी तरफ़ से आप इतमीनान रखिए।

दोनों आदमियों में दोस्ती हो गयी। थोड़ी देर के बाद तीनों वहाँ से रवाना हुए, शाम होते-होते एक नदी के किनारे एक गाँव में पहुँचे। वहाँ एक साफ़-सुथरा मकान अपने लिए ठीक किया और जमींदार से कहा कि अगर कोई आदमी हमें पूछे तो कहना, हमें नहीं मालूम। तीनों दिन भर के थके थे, खाने-पीने की भी सुध न रही। सोये तो सबेरा हो गया। सुबह के वक़्त थानेदार साहब बाहर आये तो देखा कि ज़मींदार उनके इंतज़ार में खड़ा है। इनको देखते ही बोला, जनाब, आपने तो उठते-उठते नौ बजा दिये। एक अनजबी आदमी यहाँ आपकी तलाश में आया है। वरदी तो नहीं पहिने है, हाँ, सिर पर पगड़ी बाँधे है। पंजाबी मालूम होता है। मुझे तो बहुत डर लग रहा है कि न जाने क्या आफ़त आये।

थानेदार—किसी बहाने से हमको अपने मकान पर ले चलो और ऐसी जगह बैठाओ, जहाँ से हम सुन सकें कि क्या बातें करता है।

ज़मींदार—चलिए, मगर आपका चलना अच्छा नहीं। अंदर ही बैठिए, अगर कोई खटके की बात होगी तो आपको इत्तला दूँगा।

थानेदार—जनाब, मैंने पुलिस में नौकरी की है; चलने का डर आपको होगा। मैं अभी दाढ़ी हज्जाम की नज़र करता हूँ और मूछें कतरवा डालता हूँ। चलिए, छुट्टी हुई।

सुरैया बेगम को समझाया कि कहीं फँस गये तो कहीं के न रहोगे। आप भी जाओगे और मुझे भी ले डूबोगे। मगर थानेदार साहब ने एक न सुनी। फ़ौरन नाई को बुलाया, दाढ़ी मुड़वायी, स्याह किनारे की धोती पहनी, अँगरखा डाटा, काली मंदील सर पर रखी और आधे हिंदू और आधे मुसलमान बने हुए ज़मींदार के पास जा पहुँचे। सलाम-बंदगी के बाद बातें होने लगीं। थानेदार ने अपना नाम शेख़ बुद्धु बतलाया और घर बंगाल में। ज़मींदार के पास एक पंजाबी भी बैठा हुआ था।

समझ गये कि यही हज़रत हमें गिरफ़्तार करने आये हैं! नाम पूछा तो उसने बतलाया शेरसिंह।

थानेदार—आप तो पंजाब के रहनेवाले होंगे?

शेरसिंह—जी हाँ, हम ख़ास अम्बरसर में रहते हैं।

थानेदार—आप कहाँ नौकर हैं?

शेरसिंह—हम ज़मींदार हैं। अम्बरसर के पास हमारा इलाक़ा है, उसको हमारा भाई देखता है, हम घूमते रहते हैं। आप यहाँ किस ग़रज़ से आये हैं? और टिके आप कहाँ हैं?

थानेदार—इसी गाँव में मैं भी ठहरा हूँ। अगर तकलीफ़ न हो तो हमारे साथ घर तक चलिए।

थानेदार उनको ले कर डेरे पर आये। सुरैया बेगम दौड़ कर छिपने को थीं, मगर थानेदार ने मना किया और कहा कि यह मेरे भाई हैं। इनसे पर्दा करना फ़ुज़ूल है!

शेरसिंह—यह आपकी कौन हैं?

थानेदार—जी, मेरे घर पड़ गयी हैं?

सुरैया बेगम—ऐ हटो भी, क्या वाहियात बातें करते हो। हज़रत, यह मेरे भाई हैं। इस पर शेरसिंह ने क़हक़हा लगाया और थानेदार झेंपे।

शेरसिंह—अपने सुना नहीं, एक मुसलमान थानेदार किसी बेड़िन को हवालात से ले कर भागे। बड़ी तहक़ीक़ात हो रही है, मगर पता नहीं चलता।

थानेदार—कह तो नहीं सकता कि वह थानेदार ही था या कोई और, मगर परसों रात को जब हम और यह आ रहे थे तो देखा कि एक गाड़ी पर कोई फ़ौज़ी आदमी सवार है और किसी औरत से बातें करता जाता है। औरत का नाम सुरैया बेगम था। जो मुझे मालूम हो कि वही हज़रत हैं तो कुछ ले मरूँ।

शेरसिंह—ज़रूर वही था, उस औरत का नाम सुरैया बेगम ही था। क्या कहूँ, मैं उस वक़्त न हुआ।

तीनों में बड़ी देर तक हँसी-दिल्लगी होती रही। शेरसिंह जब चलने लगे तो कहा, कल से हम भी यहीं ठहरेंगे। दूसरे दिन तड़के शेरसिंह अपना बोरिया-बधना ले कर आ पहुँचे। थानेदार ने कहा, हज़रत, आप हिंदू और हम मुसलमान। आपकी गंगा और हमारा क़ुरान। आप गंगा की क़सम और हम कुरान की क़सम खायँ कि मरते दम तक कभी साथ न छोड़ेंगे, हमेशा दोस्ती का दम भरते रहेंगे। ऐसा न हो कि पीछे से निकल जाओ।

शेरसिंह—हम अपने ईमान की क़सम खाते हैं कि मरते दम तक तुम्हारी दोस्ती का दम भरेंगे।

थानेदार—मेरी कुछ शर्तें हैं, उनको क़बूल कीजिए—

(१) एक दूसरे की बात किसी से न कहें। अगर हम किसी को मार भी डालें तो आप न कहिए। चाहे नौकरी जाय, चाहे आबरू जाय।

(२) हमारे आपस में कोई पर्दा न रहे।

(३) हम अपना हाल आपसे कहें और आप अपना हाल हमसे बयान करें।

शेरसिंह—आपकी सब बातें मंजूर हैं। हाथ पर हाथ मारिए और टोपी बदलिए। बस, हम और आप भाई-भाई हुए। भाभी साहब, हम ग़रीबों पर भी मिहरबानी की नज़र रहे।

सुरैया बेगम—ऐ, थोड़ी देर में हम आपको झुक के सलाम करेंगे।

शेरसिंह—क्यों, थोड़ी देर में क्या होगा साहब, बताइए!

सुरैया बेगम—(हँस कर) घड़ी दो में मुरलिया बाजेगी।

थानेदार—अच्छा तो अब सुनिए भाई साहब, हम ख़ूनी हैं। अब आप चाहे इन्सपेक्टर की हैसियत में क़ैद कीजिए चाहे दोस्त की हैसियत में माफ़ कीजिए।

शेरसिंह—(दंग हो कर) क्या ख़ूनी!

थानेदार—जी हाँ, मैं बंगाली नहीं हूँ। लखनवी हूँ। चंद ही रोज़ हुए, शाहज़ादा हुमायूँ फ़र को क़त्ल किया और भाग आया। अब फ़र्माइए?

शेरसिंह—ख़ुदा तुझे ग़ारद करे, कमबख़्त! तू तो इस क़ाबिल है कि तुझको खोदके दफ़न कर दे।

थानेदार—अच्छा, अब हमारी क्या सज़ा तजवीज हुई? साफ़ बता दो।

शेरसिंह—मुए पर सौ दुर्रे और गधे की सवारी। बस, अब मैं यहाँ से भाग जाऊँगा और उम्र भर तुम्हारी सूरत न देखूँगा। ख़ुदा तुझसे समझे।

थानेदार—सुनो भाईजान, यह फ़क़त चकमा था। हम आज़माते थे कि देखें, तुम क़ौल के कहाँ तक सच्चे हो। अब हम साफ़ कहते हैं कि हम क़ातिल नहीं हैं, लेकिन मुजरिम हैं। अब कहिए।

शेरसिंह—अजी, जब इतने बड़े जुर्म की सज़ा न दी तो अब क्या ख़ौफ़ है! क्या कहीं से माल मार लाये हो!

थानेदार—भाई, माफ़ करो तो बता दें। सुनिए, हम वही थानेदार हैं जिसकी तलाश में तुम निकले हो। और यह वही बेड़िन हैं। अब चाहे बाँध ले चलो, चाहे दोस्ती का हक़ अदा करो।

शेरसिंह—ओफ! बड़ा झाँसा दिया। मुझे तो हैरत है कि तुमसे मेरे पास आया क्योंकर गया। मैं पंजाब से ख़ास इसी काम के लिए बुलवाया गया था। यहाँ दो दिन से तुम्हें भी देख रहा हूँ और बेड़िन से नोंक-झोंक भी हो रही है। मगर टाँय-टाँय-फिस।

सुरैया—हुज़ूर, ले ज़रा मुँह सम्हाल कर बात कीजिए। बेड़िन कोई और होगी। बेड़िन की सूरत नहीं देखी!

थानेदार—यह बेगम हैं। ख़ुदा की क़सम। सुरैया बेगम नाम है।

शेरसिंह—वह तो बातचीत से ज़ाहिर है। अच्छा बेगम साहब, बुरा न मानो

तो एक बात कहूँ। अगर अपनी और इनकी रिहाई चाहती हो, तो इनको इस्तीफ़ा दो और हमसे वादा करो।

थानेदार—इनको राज़ी कीजिए। हमसे क्या वास्ता। हमको तो अपनी जान प्यारी है।

सुरैया—ऐ वाह! अच्छे मिले। तुम थानेदारी क्या करते थे! अच्छा, दिल्लगी तो हो चुकी। अब मतलब की बात कहो। हम दोनों भागें, तो भागके जायँ कहाँ? और भागें तो रहें कहाँ?

शेरसिंह—एक काम करो। हमको वापस जानेदो। हम वहाँ जा कर आयँ-बायँ-सायँ उड़ा देंगे। इसके बाद आ कर तुमको पंजाब ले जायँगे।

थानेदार—अच्छा तो है। हम सब मिल कर पंजाब चलेंगे।

सुरैया—तुम जाओ, हम तो न जायँगे। और सुनिए, वाह!

थानेदार—हमारी बात मानिए। आप घर-घर तहक़ीक़ात कीजिए और दो दिन तक यहाँ टिके रहिए और वहाँ जा कर कहिए कि मुलज़िम तराई की तरफ़ निकल गया।

शेरसिंह—हाँ, सलाह तो अच्छी है। तो आप यहाँ रहें, मैं जाता हूँ।

शेरसिंह ने दिन भर सारे क़स्बे में तहक़ीक़ात की। ज़मींदारों को बुला कर खूब डाँट-फटकार सुनायी। शाम को आ कर थानेदार के साथ खाना खाया और सदर को रवाना हुए। जब शेरसिंह चले गये तो थानेदार साहब बोले—दुनिया में रह कर अगर चालाकी न करें तो दम भर गुज़ारा न हो। दुनिया में आठों गाँठ कुम्मैत हो तब काम चले।

सुरैया—वाह! आदमी को नेक होना चाहिए, न कि चालाक।

थानेदार—नेकी से कुछ नहीं होता, चालाकी बड़ी चीज़ है। अगर हम शेर-सिंह से चालाकी न करते तो उनसे गला कैसे छूटता।

दूसरे दिन थानेदार साहब भी रवाना हुए। दिन भर चलने के बाद गाड़ीवान से कहा—भाई, यहाँ से मीरडीह कितनी दूर है?

गाड़ीवान ने कहा—हुज़ूर यही मीरडीह है।

थानेदार—यहाँ हम किसके मकान में टिकेंगे?

गाड़ीवान—हुज़ूर, आदमी भेज दिया गया है।

यह कह कर उसने नंदा-नंदा पुकारा। बड़ी देर के बाद नंदा आया और गाड़ी को एक टीले की तरफ़ ले चला। वहीं एक मकान में उसने दोनों आदमियों को उतारा और तहखाने में ले गया।

थानेदार—क्या कुछ नीयत खोटी है भई?

सुरैया—हम तो इसमें न जाने के। अल्लाह रे अँधेरा!

नंदा—आप चलें तो सही।

थानेदार ने तलवार म्यान से खींच ली और सुरैया बेगम के साथ चले।

थानेदार—अरे नंदा, रोशनदान तो ज़रा खोल दे जाके।

नंदा—अजी, क्या जाने, किस वक़्त के बंद पड़े हैं।

सुरैया—है-है! खुदा जाने, कितने बरसों से यहाँ चिराग़ नहीं जला। यह ज़ीने तो खत्म ही होने नहीं आते।

नंदा—कोई एक सौ दस ज़ीने हैं।

सुरैया—उफ्! बस अब मैं मर गयी।

नंदा—अब नगिचाय आये। कोई पचीस ठो और हैं।

बड़ी मुश्किलों से ज़ीने तय हुए। मगर तहखाने में पहुँचे तो ऐसी ठंडक मिली कि गुलाबी जाड़े का मज़ा आया। दो पलँग बिछे हुए थे। दोनों आराम से बैठे। खाना भी पहले से एक बावर्ची ने पका रखा था। दोनों ने खाना खाया और आराम करने लगे। यह मकान चारों तरफ़ पहाड़ों से ढका था। बाहर निकलने पर पहाड़ों की काली-काली चोटियाँ नज़र आती थीं। उन पर हिरन कुलेलें भरते थे। थानेदार ने कहा—बहुत मुक़ामों की सैर की है, मगर ऐसी जगह कभी देखने में नहीं आयी थी। बस, इसी जगह हमारा और तुम्हारा निकाह होना चाहिए।

सुरैया—भई, सुनो, बुरा मानने की बात नहीं। मैंने दिल में ठान ली है कि किसी से निकाह न करूँगी। दिल का सौदा सिर्फ़ एक बार होता है। अब तो उसी के नाम पर बैठी हूँ। किसी और के साथ निकाह करने की तरफ़ तबियत मायल नहीं होती।

थानेदार—आखिर वह कौन साहब हैं जिन पर आपका दिल आया है? मैं भी तो सुनूँ।

सुरैया—तुम नाहक़ बिगड़ते हो। तुमने मेरे साथ जो सलूक किये हैं, उनका एहसान मेरे सिर पर है; लेकिन यह दिल दूसरे का हो चुका।

थानेदार—अगर यह बात थी तो मेरी नौकरी क्यों ली? मुझे क्यों मुसीबत में गिरफ़्तार किया? पहले ही सोची होती। अब से बेहतर है, तुम अपनी राह लो, मैं अपनी राह लूँ।

सुरैया—यह तुमने लाख रुपये की बात कही। चलिए, सस्ते छूटे।

थानेदार—तुम न होगी तो क्या जिंदगी न होगी?

सुरैया—और तुम न होगे तो क्या सबेरा न होगा?

थानेदार—नौकरी की नौकरी गयी और मतलब का मतलब न निकला—

ग़ैर आँखें सेंके उस बुत से दिले मुज़्तर जले,
बाये बेदर्दी कोई तापे किसी का घर जले।

सुरैया—आँखें सेंकवानेवालियाँ और होती हैं।

थानेदार—इतने दिनों से दुनिया में आवारा फिरती हो और कहती हो, हम नेक। वाह री नेकी!

सुरैया—तुमसे नेकी की सनद तो नहीं माँगती?

थानेदार—अब इस वक़्त तुम्हारी सूरत देखने को जी नहीं चाहता !

सुरैया—अच्छा, आप अलग रहें। हमारी सूरत न देखिए, बस छुट्टी हुई।

थानेदार—हमको मलाल यह है कि नौकरी मुफ़्त गयी।

सुरैया—मजबूरी !!

सुरैया बेगम ने अब थानेदार के साथ रहना मुनासिब न समझा। रात को जब थानेदार खा पी कर लेटा तो सुरैया बेगम वहाँ से भागी। अभी सोच ही रही थी कि एक चौकीदार मिला। सुरैया बेगम को देख कर बोला—आप कहाँ? मैंने आपको पहचान लिया है। आप ही तो थानेदार साहब के साथ उस मकान में ठहरी थीं। मालूम होता है, रूठ कर चली आयी हो। मैं खूब जानता हूँ।

सुरैया—हाँ, है तो यही बात, मगर किसी से ज़िक्र न करना।

चौकीदार—क्या मजाल, मैं नवाबों और रईसों की सरकार में रहा हूँ।

बेगम—अच्छा, मैं इस वक़्त कहाँ जाऊँ?

चौकीदार—मेरे घर।

बेगम—मगर किसी पर ज़ाहिर न होने पाये, वरना हमारी इज्ज़त जायगी।

बेगम साहब चौकीदार के साथ चलीं और थोड़ी देर में उसके घर जा पहुँचीं। चौकीदार की बीबी ने बेगम की बड़ी खातिर की और कहा—कल यहाँ मेला है, आज टिक जाओ। दो-एक दिन में चली जाना।

सुरैया बेगम ने रात वहीं काटी। दूसरे दिन पहर दिन चढ़े मेला जमा हुआ। चौकीदार के मकान के पास एक पादरी साहब खड़े वाज़ कह रहे थे। सैकड़ों आदमी जमा थे। सुरैया बेगम भी खड़ी हो कर वाज़ सुनने लगीं। पादरी साहब उसको देख कर भाँप गये कि यह कोई परदेशी औरत है। कहीं से भूल-भटक कर यहाँ आ गयी है। जब वाज़ खत्म करके चलने लगे तो सुरैया बेगम से बोले—बेटी, तुम्हारा घर यहाँ तो नहीं है?

सुरैया—जी नहीं, बदनसीब औरत हूँ। आपका वाज़ सुन कर खड़ी हो गयी।

पादरी—तुम यहाँ कहाँ ठहरी हो?

सुरैया—सोच रही हूँ कि कहाँ ठहरूँ।

पादरी—मेरा मकान हाज़िर है, उसे अपना घर समझो। मेरी उम्र अस्सी वर्ष से ज़्यादा है। अकेले पड़ा रहता हूँ। तुम मेरी लड़की बन कर रहना।

दूसरे दिन जब पादरी साहब गिरजाघर में आये, तो उनके साथ एक नाज़ुक बदन मिस क़ीमती अँगरेजी कपड़े पहने आयी और शान से बैठ गयी। लोगों को हैरत थी कि या खुदा, इस बुड्ढे के साथ यह परी कौन है! पादरी साहब ने उसे भी पास की कुर्सी पर बैठाया। इस औरत की चाल-ढाल से पाया जाता था कि कभी सोहबत में नहीं बैठी है। हर चीज़ को अजनबियों की तरह देखती थी।

रँगीले जवानों में चुपके-चुपके बातें होने लगीं—

टाम—कपड़े अँगरेजी हैं, रंग गोरा, मगर ज़ुल्फ़ सियाह है और आँखें भी काली। मालूम होता है, किसी हिंदोस्तानी औरत को अँगरेजी कपड़े पहना दिये हैं।

डेविस—इस क़ाबिल है कि जोरू बनायें।

टाम—फिर आओ, हम-तुम डोरे डालें, देखें, कौन ख़ुशनसीब है।

डेविस—न भई, हम यों डोरे डालनेवाले आदमी नहीं। पहले मालूम तो हो कि है कौन? चाल-चलन का भी तो कुछ हाल मालूम हो। पादरी साहब की लड़की तो नहीं है। शायद किसी औरत को बपतिस्मा दिया है।

तीन हिंदोस्तानी आदमी भी गिरजा गये थे। उनमें यों बातें होने लगीं—

मिरज़ा—उस्ताद, क्या माल है, सच कहना?

लाला—इस पादरी के तो कोई लड़का-बाला नहीं था।

मुंशी—वह था या नहीं था, मगर सच कहना, कैसी ख़ूबसूरत है!

नमाज़ के बाद जब पादरी साहब घर पहुँचे तो सुरैया से बोले—बेटी, हमने तुम्हारा नाम मिस पालेन रखा है। अब तुम अँगरेजी पढ़ना शुरू करो।

सुरैया—हमें किसी चीज़ के सीखने की आरज़ू नहीं है। बस, यही जी चाहता है कि जान निकल जाय। किसका पढ़ना और कैसा लिखना। आज से हम गिरजा-घर न जायँगे।

पादरी—यह न कहो बेटी! ख़ुदा के घर में जाना अपनी आक़बत बनाना है। यह ख़ुदा का हुक्म है।

सुरैया—अगर आप मुझे अपनी बेटी समझते हैं तो मैं भी आपको अपना बाप समझती हूँ, मगर मैं साफ़-साफ़ कहे देती हूँ कि मैं ईसाई मज़हब न क़बूल करूँगी।

रात को जब सुरैया बेगम सोयी, तो आज़ाद की याद आयी और यहाँ तक रोयी कि हिचकियाँ बँध गयीं।

पादरी साहब चाहते थे कि यह लड़की किसी तरह ईसाई मज़हब अख्तियार कर ले, मगर सुरैया बेगम ने एक न सुनी। एक दिन वह बैठी कोई किताब पढ़ रही थी कि जानसन नाम का एक अँगरेज आया और पूछने लगा—पादरी साहब कहाँ हैं?

सुरैया—मैं अँगरेजी नहीं समझती।

जानसन—(उर्दू में) पादरी साहब कहाँ हैं?

सुरैया—कहीं गये हैं।

जानसन—मैंने कभी तुमको यहाँ नहीं देखा था।

सुरैया—जी हाँ, मैं यहाँ नहीं थी।

जानसन—यह कौन-सी किताब है?

सुरैया—सेनेका की नसीहतें हैं। पादरी साहब मुझे यह किताब पढ़ाते हैं।

जानसन—मालूम होता है, पादरी साहब तुम्हें भी 'नन' बनाना चाहते हैं।

सुरैया—नन किसे कहते हैं?

जानसन—नन उन औरतों को कहते हैं जो जिंदगी भर क्वाँरी रह कर मसीह की ख़िदमत करती हैं। उनका सिर मुँड़ा दिया जाता है और आदमियों से अलग एक मकान में रख दी जाती हैं।

सुरैया—यह तो बड़ी अच्छी बात है। मैं भी चाहती हूँ कि उन्हीं में शामिल हो जाऊँ और तमाम उम्र शादी न करूँ।

जानसन ने यह बातें सुनीं तो और ज़्यादा बैठना फ़ुज़ूल समझा। हाथ मिला कर चला गया।

सुरैया बेगम यहाँ आ तो फँसी थीं, मगर भाग निकलने का मौक़ा ढूँढ़ती थीं। इस तरह तीन महीने गुज़र गये!

नेपाल की तराई में रियासत खैरीगढ़ के पास एक लक़ व दक़ जंगल है। वहाँ कई शिकारी शेर का शिकार करने के लिए आये हुए हैं। एक हाथी पर दो नौजवान बैठे हुए हैं। एक का सिन बीस-बाईस बरस का है, दूसरे का मुश्किल से अट्ठारह का। एक का नाम है वजाहत अली, दूसरे का माशूक़ हुसैन। वजाहत अली दोहरे बदन का मज़बूत आदमी है। माशूक़ हुसैन दुबला-पतला छरहरा आदमी है। उसकी शक्ल-सूरत और चाल-ढाल से ऐसा मालूम होता है कि अगर इसे ज़नाने कपड़े पहना दिये जायँ, तो बिलकुल औरत मालूम हो। पीछे-पीछे छह हाथी और आते थे। जंगल में पहुँच कर लोगों ने हाथी रोक लिये ताकि शेर का हाल दरियाफ़्त कर लिया जाय कि कहाँ है। माशूक़ हुसैन ने काँप कर कहा—क्या शेर का शिकार होगा ? हमारे तो होश उड़ गये। अल्लाह के लिए हमें बचाओ। मेरी तो शेर के नाम ही से जान निकल जाती है। तुमने तो कहा था हिरनी और पाढे का शिकार खेलने चलते हैं।

वजाहत अली—वाह इसी पर कहती थीं कि हम बन-बन फिरे हैं। भूत-प्रेत से नहीं डरते। अब क्या हो गया कि ज़रा सा शेर का नाम सुना और काँप उठीं !

माशूक़ हुसैन—शेर ज़रा सा होता है ! ऐ, वह इस हाथी का कान पकड़ ले तो चिंघाड़ कर बैठ जाय। निगोड़ा हाथी बस देखने ही भर को होता है। इसके बदन में ख़ून कहाँ। बस, पानी ही पानी है।

वजाहत अली—अव्वल तो शेर का शिकार नहीं है, और अगर शेर आया भी तो हम उसका मुक़ाबिला कर सकेंगे। अट्ठारह-अट्ठारह निशानेबाज़ साथ हैं। इनमें दो तीन आदमी तो ऐसे बढ़े हुए हैं कि रात के वक़्त आवाज़ पर तीर लगाते हैं। क्या मजाल कि निशाना ख़ाली जाय। तुम घबराओ नहीं, ऐसा लुत्फ़ आयेगा कि सारी उम्र याद करोगी।

माशूक़ हुसैन—तुम्हें क़सम है, हमें यहाँ से कहीं भेज दो। अल्लाह ! कब यहाँ से छुटकारा होगा। ऐसी बुरी फँसी कि कुछ कहा नहीं जाता।

नवाब साहब ने मुसकिरा कर पूछा—किससे ?

माशूक़ हुसैन—ऐ, हटो भी ! तुम्हें दिल्लगी सूझी है और हम क्या सोच रहे हैं। शेर ऐसा जानवर, एक थप्पड़ में देव को सुला दे। आदमी जरी सा भुनगा, चले हैं शेर के शिकार को ! हाथी रोक लो, नहीं अल्लाह जानता है, हम हाथी पर से कूद पड़ेंगे। बला से जान जाय या रहे।

नवाब—हैं-हैं। जान तुम्हारे दुश्मनों की जाय। आख़िर इतने आदमियों को अपनी जान प्यारी है या नहीं ? कोई और भी चूँ करता है ?

माशूक़—इतने आदमी जायँ चूल्हे में। इन मुओं को जान भारी हुई है। यह

घर से लड़ कर आये हैं। जोरू ने जूतियाँ मार-मार कर निकाल दिया है। इनकी और मेरी कौन सी बराबरी। हमें उतार दो, हम अब जायँगे।

नवाब—ज़रा ठहरो तो, मैं बंदोबस्त किये देता हूँ। किसी बड़े दरख़्त पर एक मचान बाँध देंगे। बस, वहीं से बैठके देखना?

माशूक़—वाह, जरी सा मचान और जंगल का वास्ता। अकेली डर न जाऊँगी? हाँ, तुम भी बैठो तो अलबत्ता!

नवाब—यह तो बड़े शर्म की बात है कि हम मर्द हो कर मचान पर बैठें और और लोग शिकार खेलें।

माशूक़—इन लोगों से कह दो कि हमारे दोस्त की यही राय है। डर किस बात का है? साफ़-साफ़ कह दो कि यह औरत हैं और हमारा इनके साथ निकाह होनेवाला है।

नवाब—यह नहीं हो सकता। यह मशहूर करना कि एक कमसिन औरत को मर्दाना कपड़े पहना कर यहाँ लाये हैं, मुनासिब नहीं।

इतने में आदमियों ने आ कर कहा—हुज़ूर, सामने एक कछार है। उसमें एक शेरनी बच्चों के पास बैठी है। इसी दम हाथी को पेल दीजिए।

इतना सुनना था कि नवाब साहब ने ख़िदमतगार को हुक्म दिया—इनको एक शाली रूमाल और पचास अशर्फ़ियाँ आज ही देना। हाथी के लिए पेल का लफ़्ज़ खूब लाये! सुभान-अल्लाह।

इस पर मुसाहबों ने नवाब साहब की तारीफ़ों के पुल बाँध दिये।

एक—सुभान-अल्लाह, वाह मेरे शाहज़ादे। क्यों न हो।

दूसरा—खुदा आपको एक हज़ार बरस की उम्र दे। हातिम का नाम मिटा दिया। रियासत इसे कहते हैं।

नवाब—अच्छा, अब सब तैयार हो और कछार की तरफ़ हाथी ले चलें।

माशूक़—अरे लोगों, यह क्या अंधेर है। आख़िर इतनों में किसी के जोरू-जाँता भी है या सब निहंग-लाडले, बेफ़िकरे, उठाऊ-चूल्हे ही जमा हैं। खुदा के लिए इनको समझाओ। इतनी सी जान, गोली लगी और आदमी टें से रह गया। आदमी में है क्या! अल्लाह करे, शेर न मिले। मुई बिल्ली से तो डर लगता है। शेर की सूरत क्योंकर देखूँगी। भला इतना बताओ कि बँधा होगा या खुला? तमाशे में हमने शेर देखे थे, मगर सब कठघरों में बंद थे।

एकाएक दो पासियों ने आ कर कहा कि शेरनी कछार से चली गयी! नवाब साहब ने वहीं डेरा डाल दिया और माशूक़ हुसैन के साथ अंदर आ बैठे।

नवाब—यह बात भी याद रहेगी कि एक बेगम साहब बहादुरी के साथ शेर का शिकार खेलने को गयीं!

माशूक़—ऐ वाह! जो शरीफ़ज़ादी सुनेगी, अपने दिल में यही कहेगी कि शरीफ़ की लड़की और इतनी ढीठ। भलेमानस की बहू-बेटी वह है कि जंगल के कुत्ते का

नाम सुनते ही बदन के रोयें खड़े हो जायँ। अकेले कमरे में बिल्ली आये तो थरथर काँपने लगे। ख्वाब में भी रस्सी देखे तो चौंक पड़े। अच्छी पट्टी पढ़ाते हो!

दूसरे दिन नवाब साहब ने शिकारी लिबास पहना। खेमे से निकले। माशूक़ हुसैन भी पीछे से निकले, मगर इस वक़्त बेगमों की पोशाक में थे और बेगम भी कौन? वही सुरैया, जो मिस पालेन बनी हुई पादरी साहब के साथ रही थी। ऐसा मालूम हुआ, कोई परी पर खोले चली आती है। नवाब साहब ने कहा—

आग़ाज़े इश्क़ ही में हमें मौत आ गयी,
आगाह भी न हाल से वह बेखबर हुआ।

सुरैया बेगम ने तिनक के कहा—बस, यह मनहूस बातें हमें एक आँख नहीं भातीं। मरने-जीने का कौन ज़िक्र है?

नवाब—सुनिए हुज़ूर! जो आप आँखें दिखलायेंगी तो हम भी बिगड़ जायँगे। इतना याद रखिए।

सुरैया—खुदा के लिए ज़रा हया से काम लो। इन सबके सामने हमें रुसवा न करो। वह शरीफ़ज़ादी क्या, जो शर्म से मुँह मोड़े। इतने आदमी खड़े हैं और तुमको कुछ ख्याल ही नहीं।

खुदा का क़हर, बुतों का एताब रहता है,
इस एक जान प' क्या-क्या अज़ाब रहता है।

सुरैया—बस, हम न जायँगे। चाहे इधर की दुनियाँ उधर हो जाय।

नवाब साहब ने क़दमों पर टोपी रख दी, और कहा—मार डालो, मगर साथ चलो; वरना घुट-घुट के जान जायगी।

बारे खुदा-खुदा करके बेगम साहब उठीं। इतने में चौकीदार ने आ कर कहा—खुदावंद, दो शेर जंगल में दिखाई दिये हैं। अब भी मौक़ा है, वरना शेरनी की तरह वह भी भाग जायेंगे और फिर शिकार न मिलेगा।

बेगम—आदमी कैसे मुए जान के दुश्मन हैं!

नवाब साहब ने हुक्म दिया कि हाथी को बैठाओ। पीलवान ने 'बरी-बरी' कह कर हाथी को बैठाया। तब ज़ीना लगाया गया। बेगम साहब ने ज़ीने पर क़दम रखा, मगर झिझक कर उतर गयीं।

नवाब—पहली बार तो बेझिझक बैठ गयी थीं, अबकी डरती हो।

बेगम—ऐ लो, उस बार कहा था कि मुर्ग़ाबी का शिकार होगा।

नवाब—शेर का शिकार आसान है, मुर्ग़ाबी का शिकार मुश्किल है।

बेगम—चलिए, रहने दीजिए। हमने कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं। यहाँ रूह काँप रही है कि या खुदा, क्या होगा?

नवाब—होगा क्या? कुछ भी नहीं।

आखिर बेगम साहब भी बैठीं। नवाब साहब भी बैठे। हवाली-मवाली भी दूसरे हाथियों पर बैठे और हाथी झूमते हुए चले। थोड़ी देर के बाद लोग एक झील के

पास पहुँचे। शिकारी ने कहा—झील में पानी कम है, हाथी निकल जायेंगे।

बेगम—क्या कहा ! क्या इस समुंदर में से जाना होगा ?

नवाब—अभी दम के दम में निकले जाते हैं।

बेगम—कहीं निकले न ? हमें यहाँ डुबोने लाये हो ? जरी हाथी का पाँव फिसला और चलिए, पानी के अंदर गोते खाने लगे।

नवाब साहब ने बहुत समझाया, तब बेगम साहब अपने हाथी को झील के अंदर डालने पर राज़ी हुईं, मगर आँखें बंद कर लीं और गुल मचाया कि जल्दी निकल चलो। पाँच हाथी तो साथ-साथ चले, दो पीछे थे। नवाब साहब ने कहा—अब आँखें खोल दो, आधी दूर चले आये हैं, आधी दूर और बाक़ी है। बेगम ने आँखें खोलीं तो झील की कैफ़ियत देख कर खिल उठीं। किनारों पर ऊँचे-ऊँचे दरख्त झूम रहे थे। कोई झील के पानी को चूमता था, किसी की शाखें झील की तरफ झुकी थीं। बेगम ने कहा—अब हमें डर नहीं मालूम होता। मगर अल्लाह करे, कोई शेर आज न मिले।

नवाब—ख़ुदा न करे।

बेगम—वाह ! आ जाय क्या मजाल है। हम मंतर पढ़ देंगे।

नवाब—भला आप इतनी हुईं तो !

बेगम—अजी, मैं तुम सबको बनाती हूँ, डर कैसा ! मगर कहीं शेर सचमुच निकल आये, तो ग़ज़ब ही हो जाय। सुनते ही रोयें खड़े होते हैं।

इस झील के उस पार कछार था और कछार में एक शेरनी अपने बच्चों को लिये बैठी थी। खेदे के आदमियों ने कहा—हुजूर, अब हाथी रोक लिये जाँय। सुरैया बेगम काँप उठीं। हाय ! क्या हुआ। यह शेरनी कहाँ से निकल आयी। या तो उसको क़ज़ा लायी है या हमको।

नवाब साहब ने हुक्म दिया, खेदा किया जाय। तीस आदमी बड़े-बड़े कुत्ते ले कर कछार की तरफ दौड़े। सुरैया बेगम बहुत सहमी हुई थीं। फिर भी शिकार में एक क़िस्म का लुत्फ़ भी आता था। एकाएक दूर से रोशनी दिखाई दी। बेगम ने पूछा—वह रोशनी कैसी है ? नवाब बोले—शेरनी निकली होगी और शायद हमला किया हो। इसी लिए रोशनी की गयी कि डर से भाग जाय।

शेरनी ने जब आदमियों की आवाज़ सुनी, तो घबरायी। बच्चों को एक ऐसी जगह ले गयी जहाँ आदमी का गुज़र मुहाल था। खेदे के लोग समझे कि शेरनी भाग गयी। सुरैया बेगम यह खबर सुन कर खिलखिला कर हँस पड़ीं। लो, अब खेलो शिकार, बड़े वह बन कर चले थे ! हमारी दुआ और क़बूल न हो ?

नवाब—आज बे-शिकार किये न जायँगे। लो, कसम खायी।

नवाब साहब रईस तो थे ही, कसम खा बैठे। एक मुसाहब ने कहा—हुजूर, मुमकिन है कि शेर आज न मिले। क़सम खाना ठीक नहीं।

नवाब—हम हरगिज़ खाना न खायँगे जब तक शेर का शिकार न करेंगे। इसमें

चाहे रात हो जाय, शेर का जंगल में न मिलना कैसा ?

बेगम—ख़ुदा तुम्हारी बात रख ले।

मुसाहब—जैसी हुज़ूर की मर्ज़ी।

बेगम—ख़ुदा के लिए अब भी चले चलो। क्या तुम पर कोई जिन सवार है या किसी ने जादू कर दिया है। अब दिन कितना बाक़ी है ?

नवाब—दिन कितना ही हो, हम शिकार ज़रूर करेंगे।

बेगम—तुम्हें बायें हाथ का खाना हराम है जो शेर का शिकार खेले बग़ैर जाओ।

नवाब—मंजूर ! जब तक शेर का शिकार न करेंगे, खाना न खायँगे।

बेगम—बात तो यही है, ख़ुदा तुम्हारी बात रख ले। ओ लोगो, कोई इनको समझाओ, यह किसी का कहना नहीं मानते, कोई सलाह देनेवाला भी है या नहीं ?

एक मुसाहब—हुज़ूर ने तो क़सम खा ली, लेकिन साथ के सब आदमी भूखे-प्यासे हैं, उनके हाल पर रहम कीजिए, वरना सब हलकान हो जायँगे।

नवाब—हमको किसी का ग़म नहीं है, कुछ परवा नहीं है। अगर आप लोग हमारे साथी हैं तो हमारा हुक्म मानिए।

बेगम—शाम होने आयी, और शिकार का पता नहीं, फिर अब यहाँ ठहरना बेवक़ूफ़ी है या और कुछ ?

बरकत—हुज़ूर ही के सब काँटे बोये हैं।

इतने में खेदेवालों ने कहा—खुदावंद, अब होशियार रहिए। शेरनी आती है। अब देर नहीं है। कछार छोड़ कर पूरब की तरफ़ भागी थी। हम लोगों को देख कर इस ज़ोर से गरजी कि होश उड़ गये, अट्ठाईस आदमी साथ थे, अट्ठाईसों भाग गये। उस वक़्त कदम जमाना मुहाल था। शेर का क़ायदा है कि जब गोली लगती है तो आग हो जाता है। फिर गोली के बाप की नहीं मानता। अगर बम का गोला भी हो तो वह इस तरह आयेगा जैसे तोप का गोला आता है। और शेरनी का क़ायदा है कि अगर अपने बच्चों के पास हो और सारी दुनिया के गोले कोई ले कर आये तो भी मुमकिन नहीं कि उसके बच्चों पर आँच आ सके।

बेगम—बँधी है या खुली हुई है ? तमाशेवाले शेरों की तरह कठघरे में बंद है न ?

मुसाहब—हाँ-हाँ साहब, बँधी हुई है।

बेगम—भला उसको बाँधा किसने होगा ?

अब एक दिल्लगी सुनिए। एक हाथी पर दो बंगाली थे। उन्होंने इतना ही सुना था कि नवाब साहब शिकार के लिए जाते हैं। अगर यह मालूम होता कि शेर के शिकार को जाते हैं तो करोड़ बरस न आते। समझे थे कि झीलों में चिड़ियों का शिकार होगा। जब यहाँ आये और सुना कि शेर का शिकार है तो जान निकल गयी। एक का नाम कालीचरण घोष, दूसरे का शिवदेव बोस था। इन दोनों में यों बातें होने लगीं।

बोस—नवाब हमको बड़ा धोखा दिया, हम नहीं जानता था कि यह लोग हमारा दुश्मन है।

घोष—हम इनसे समझेगा। ओ शाला फील का बान, हमारे को कीधर ले जायगा ?

फ़ीलबान ने हाथी को और भी तेज़ किया तो यह दोनों साहब चिल्लाये।

बोस—ओ शाला !

घोष—ओ शाला फील का बान, आच्छा हम साहब के यहाँ तुम्हारा नालिश करेगा। अरे बाबा, हम लोग जाने नहीं माँगता। शेर शाला का मुक़ाबिला कौन करने सकता ?

फ़ीलबान—बाबू जी, डरो नहीं। अभी तो शेर दूर है। जब हौदा पकड़ लेगा तब दिल्लगी होगी, अभी शाला-शाला कहते जाओ।

बोस—अरे भाई, तुम हमारे का बाप, हमारे का बाप का बाप, हम हाथी को फेरने माँगता। ओ शाला, तुम आरामजादा।

फ़ीलबान—अच्छा बाबू, देते जाओ गालियाँ। खुदा की क़सम, शेर के मुँह में हाथी न ले जाऊँ तो पाजी।

बोस—बाप रे बाप, हमारे को बचाओ, हम रिशवत देगा। हमारा बाप है, माँ है, सब तुम है।

जितने आदमी साथ थे, सब हँस रहे थे। इन दोनों की घबराहट देखने क़ाबिल थी। कभी फ़ीलबान के हाथ जोड़ते, कभी टोपी उतार कर खुदा से दुआ माँगते थे, कभी जंगल की तरफ देख कर कहते थे—बाबा, हमारा जान लेने को हम यहाँ आया। हमारा मौत हमको यहाँ लाया। अरे बाबा, हम लोग लिखने-पढ़ने में अच्छा होता है। हम लोग बिलायत जा कर अँगरेजी सीखता है। हम कभी शेर का शिकार नहीं करता, हमारा अपना जान से बैर नहीं है। ओ फील का बान, हम खबर के कागज में तुम्हारा तारिप छापेगा।

फ़ीलबान—आप अपनी तारीफ़ रहने दें।

घोष—नहीं, तुम्हारा नाम हो जायगा। बड़ा-बड़ा लोग तुम्हारा नाम पढ़ेगा तो बोलेगा, यह फील का बान बड़ा होशियार है, तुम पचास-साठ का नौकर हो जायगा। हम तुमको नौकर रखा देगा।

फ़ीलबान—पचास-साठ ! इतने रुपये मैं रखूँगा कहाँ ? अच्छा दूसरी शादी कर लूँगा, मगर तारीफ़ किस बात की लिखिएगा। ज़रा हाथी दौड़ाऊँ ?

बोस—तुम बड़ा नटखट है। ओ शाला, तुम फिर दौड़ाया ?

जब झील के क़रीब पहुँचे, तो दोनों बंगाली और भी डरे। घोष ने पूछा—ओ फील का बान, इस झील में कित्ता गहरा ?

फ़ीलबान ने कहा—हाथी-डुबाव है।

घोष—और इस झील के अंदर से हम लोग को जाने होगा भी।

फ़ीलबान—जी हाँ, इसी में से जाने होगा भी।

घोष—और जो हाथी का पाँव फिसल गयी तो हम लोग का क्या...।

फ़ीलबान—अगर हाथी का पाँव फिसल गयी तो तुम लोग का टाँग और नाक टूट जायगा, बस और कुछ न होगा, और मुँह बिगड़ जायगी तुम लोग की।

घोष—और तुम शाला कहाँ से बचने सकेगा ?

फ़ीलबान—हम उम्र भर हाथी पर चढ़ा किये हैं। हाथी फिसले तो डर नहीं और बह जाय तो खौफ़ नहीं।

घोष—बाबा, तुम्हारी हाथी पानी से डरती है या नहीं ? हमसे शाच-शाच कह दो।

फ़ीलबान—तुम इतना डरता था तो आया क्यों !

घोष—अरे बाबा, गोली लगने से तो सब कोई डरता है ? जान फेरके आने सकेगा नहीं।

फ़ीलबान ने हाथी को झील में डाला, तो इन दोनों ने वह चिल्ल-पों मचायी कि कुछ न पूछो। एक बोला—हम डूब गया, तो हमारा जागीर किसके पास जायगा !

फ़ीलबान मुसकिरा कर बोला—वहीं से सब लिख के भेज दीजिएगा।

घोष—ओ शाला, तू हमारा जान लेगा ! तुम जान लेगा शाला !

फ़ीलबान—बाबू, गोल-माल न करो, ख़ुदा को याद करो।

घोष—गोल-माल तुम करता है कि हम करता है ?

बोस—हाथी हिलेगी तो हम तुमको ढकेल देगा, तुम मर जायगा !

घोष—अरे बाबा, घूस ले-ले, हम बहुत से रुपये देने सकता।

फ़ीलबान—अच्छा, एक हज़ार रुपया दीजिए तो हम हाथी को फेर दें। भले आदमी, इतना नहीं सोचते कि पाँच हाथी तो उस पार निकल गये और एक हाथी पीछे आ रहा है। किसी का बाल बाँका नहीं हुआ तो क्या आप ही डूब जायँगे ! क्या जान आप ही को प्यारी है ?

घोष—अरे बाबा, तुम बात न करे। तुम हाथी का ध्यान करे, जों पाँव फिसलेगी तो बड़ी ग़ज़ब हो जायगा।

फ़ीलबान—अजी, न पाँव फिसलेगी, न बड़ी गजब होगा। बस चुपचाप बैठे रहिए। बोलिए-चालिए नहीं।

घोष—किस माफिक नहीं बोलेगा, जरूर करके बोलेगा, ओ शाला ! तुम्हारा बाप आज ही मर जाय।

फ़ीलबान—हमारा बाप तो कब का मर चुका, अब तुम्हारी नानी मरने की बारी है।

फ़ीलबान ने मारे शरारत के हाथी को दो-तीन बार आँकुश लगाया, तो दोनों आदमी समझे कि बस, अब जान गयी। आपस में बातें करने लगे—

घोष—आमी दुई जानी डूबी जाबो।

बोस—ई, हाथीवाला बड़ो बोरू।

घोष—जोनी आये बची आज, तेखे दली कोरा आम आर शिकार खेलने जाबेना।

बोस—तुमी अमाए जाबरदस्ती नीए एछो।

घोष—आमारा प्रान भवाए आचे।

घोष—हाथी रोक ले ओ शाला!

फ़ीलबान—बाबू जी, अब हाथी हमारे मान का नहीं। अब इसका पाँव फिसला चाहता है, जरा सँभले रहिएगा।

नवाब साहब ने दोनों आदमियों का रोना-चीखना सुना तो महावत से बोले—खबरदार जो इनको डरायेगा तो तू जानेगा।

घोष—नवाब शाब, हमारा मदद करो, अब हम जाता है बैकुंठ।

महावत ने आहिस्ता से कहा—बैकुंठ जा चुके, नरक में जाओगे।

इस पर घोष बाबू बहुत बिगड़े और गालियाँ देने लगे। तुम शाला को पानी के बाहर जाके हम मार डालेगा।

महावत ने कहा—जब पानी के बाहर जा सको न।

घोष—नवाब शाब, यह शाला हमारे को गाली देता।

नवाब—गाली कैसी बाबू, आप इतना घबराते क्यों हैं?

घोष—हमारे को यह शाला गाली देते हैं।

नवाब—क्यों बे, ख़बरदार जो गाली-गलौज की।

फ़ीलबान—हुजूर, मैं ऐसी सवारी से दरगुज़रा, इनको चारों तरफ़ मौत ही मौत नज़र आती है। इन्हें आप शिकार में क्यों लाये?

बोस—अरे शाले का शाला, तुम बात करेगा, या हाथी को देखेगा? अरे बाबा, अब हम ऐसी सवारी पर न आयेगा।

बारे हाथी उस पार पहुँचा, तो इन दोनों की जान में जान आयी। बोस बाबू बोले—नवाब शाब, हम इसी का साथ बड़ा तकलीफ़ पाया। यह महावत हमारा उस जन्म का बैरी है बाबा, हम ऐसा शिकार नहीं खेलना चाहता, अब हम हाथी पर से उतर जायगा।

नवाब साहब ने फ़ीलबान को हुक्म दिया कि हाथी को बैठाओ और बाबू लोगों से कहा—अगर आप लोगों को तकलीफ़ होती है तो उतर जाइए। इस पर घोष और बोस दोनों सिर पीटने लगे—अरे बाबा, इस जंगल के बीच में तुम हमको छोड़के भागना माँगता। हम जायगा कहाँ? इधर जंगल, उधर जंगल। हमारे को घर पहुँचा दो।

नवाब साहब ने कहा—अगर एक हाथी को अकेला भेज दूँ तो शायद शेर या सुअर या कोई अन्य जानवर हमला कर बैठे, हाथी ज़ख्मी हो जाय और महावत की जान पर आ बने। आप लोग गोली चलाने से रहे, फिर क्या हो?

घोष—आपको अपना हाथी प्यारा, फील का बान प्यारा, हमारा जान प्यारा नहीं। फील का बान सात-आठ रुपये का नौकर, हम लोग हेडक्लर्की करता और क्या बात करेगा। हम जान नहीं रखता, वह जान रखता है?

नवाब—अच्छा, फिर बैठे रहो, मगर डरो नहीं।

घोष—अच्छा अब हम न बोलेगा।

बोस—कैसे न बोलेगा, तुम न बोलेगा? तुम न बोलेगा तो हम बोलेगा।

घोष—तुम शाला सुअर है। तुम क्या बोलेगा? बोलेगा तो हम तुमको कतल कर डालेगा। शाला हमारे को फाँसके लाया और अब जान लेना माँगता है।

बोस—(धोती सँभाल कर) तुम दुष्ट चुप रहे। तुम नीच कोम है।

घोष—बोलेगा तो हम हलाल करेगा।

बोस—(दाँत दिखा कर) हम तुमको दाँत काट लेगा।

घोष—अरे तुम बोके जाय शाला, बोदजात, दुष्ट।

बोस—तुम नीच कोम, छोटा कोम, भीख माँगनेवाला सुअर।

दोनों में खूब तकरार हुई। कभी घोष ने घूँसा ताना, कभी बोस ने पैंतरा बदला; मगर दोनों में कोई वार न करता था। दोनों कुंदे तोल-तोल कर रह जाते थे। नवाब साहब ने यह हाल देखा तो चाहा कि दोनों को अलग-अलग हाथियों पर बिठायें, मगर घोष ने मंजूर न किया, बोले—यह हमारा देश का, हम इसका देश का, और कोई हमारा देश का नहीं।

इतने में आदमियों ने ललकार कर कहा—खबरदार, शेरनी निकली जाती है। हुक्म हुआ है कि हाथी इस तरफ़ बढ़ाओ। सब हाथी बढ़ाये गये। एक दरख्त की आड़ में शेरनी दो बच्चे लिये हुए दबकी खड़ी थी। नवाब साहब ने फ़ौरन गोली सर की, वह खाली गयी। नवाब साहब ने फिर बंदूक सर की, अब की गोली शेरनी के क़ल्ले पर जा पड़ी। गोली खाना था कि वह झल्ला कर पलट पड़ी और तोप के गोले की तरह झपटी। आते ही उसने एक हाथी को थप्पड़ लगाया तो वह चिंघाड़ कर भागा। नवाब साहब ने फिर बंदूक चलायी, मगर निशाना खाली गया। शेरनी ने उसी हाथी को जिसे थप्पड़ मारा था, कान पकड़ कर बैठा दिया। बारे चौथा निशाना ऐसा पड़ा कि शेरनी तड़प कर गिर पड़ी।

इधर तो यह कैफ़ियत हो रही थी, उधर बंगाली बाबू दोनों हौदे के अंदर औंधे पड़े थे। आँखें दोनों हाथों से बंद कर ली थी। बेगम साहब ने उन्हें हौदे में बैठे न देखा तो पूछा—क्या वह दोनों बाबू भाग गये?

फ़ीलबान—नहीं खुदावंद, मैं हाथी बढ़ाये लाता हूँ।

हाथी क़रीब आया तो नवाब साहब दोनों बंगालियों को देख कर इतना हँसे कि पेट में बल पड़-पड़ गये।

नवाब—अब उठोगे भी या सोते ही रहोगे? बाबू जी तो बोलते ही नहीं।

बेगम—क्या अच्छे आदमी थे बेचारे!

नवाब—मगर चल बसे। अभी बातें कर रहे थे।

बेगम—अब कुछ कफ़न-दफ़न की फ़िक्र करोगे या नहीं।

फ़ीलबान ने कंधा पकड़ कर हिलाया तो बोस बाबू उठे। उठते ही शेरनी की

लाश देखी, तो काँप कर बोले—नवाब शाब, शाच-शाच बोलो कि यह मिट्टी का शेर है या ठीक-ठीक शेर है ? हम समझ गया कि मिट्टी का हैं।

नवाब—आप तो हैं पागल।

घोष—आप लोग जान को कुछ नहीं समझता ?

बोस—ये लोग गँवार हैं। हम लोग एम० ए०, बी ए० पास करता है। हम लोग बहुत सा बात ऐसा करता है कि आप लोग नहीं करने सकता।

नवाब—अच्छा, अब हाथी से तो उतरो।

फ़ीलबान—बाबू साहब, शेरनी तो मर गयी; अब क्या डर है।

दोनों बाबुओं ने हाथी से उतर कर शेरनी की तरफ़ देखना शुरू किया, मगर आगे कोई नहीं बढ़ता।

बोस—आगे बढ़ो महाशाई।

घोष—तुम्हीं बढ़ो, तुम बड़ा मर्द है तो तुम बढ़े।

नवाब—बढ़ना नहीं। खबरदार, बढ़े और शेर खा गया।

घोष—बाबा, अब चाहे जान जाता रहे, पर हम उसके पास जरूर करके जायगा।

यह कह कर आप आगे बढ़े, मगर फिर उलटे पाँव भागे और पीछे फिर कर भी न देखा।

६१

जब रात को सब लोग खा-पी कर लेटे, तो नवाब साहब ने दोनों बंगालियों को बुलाया और बोले—खुदा ने आप दोनों साहबों को बहुत बचाया, वरना शेरनी खा जाती।

बोस—हम डरता नहीं था, हम शाला ईश फील का बान को मारना चाहता था कि हम ईश देश का आदमी नहीं है। इस माफिक हमारे को डराने सकता और हाथी को बोदजाती से हिलाने माँगे। जब तो हम लोग बड़ा गुस्सा हुआ कि अरे सब लोग का हाथी हिलने नहीं माँगता, तुम क्यों हिलने माँगता है और हमसे बोला कि बाबू शाब, अब तो मरेगा। हाथी का पाँव फिसलेगी और तुम मर जायँगे। हम बोला—अरे, जो हाथी की पाँव फिसल जायगी तो तुम शाले का शाला कहाँ बच जायगा? तुम भी तो हमारा एक साथ मरेगा।

नवाब—अच्छा, जो कुछ हुआ सो हुआ। अब यह बतलाइए कि कल शिकार खेलने जाइएगा या नहीं?

बोस—जायगा जो जरूर करके, मगर फील का बान बोदजाती करेगा, तो हम आपका बुराई छपवा देगा। हमारे हाथी पर बेगम शाब बैठे तो हम चला जायगा।

सुरैया—बेगम साहब तो तुझ ऐसों को अपना साया तक न छूने दें। पहले मुँह तो बनवा!

बोस—अब हमारे को डर पास नहीं आते, हम खूब समझ गया कि जान जानेवाला नहीं है।

नवाब—अच्छा जाइए, कल आइएगा।

जब नवाब और सुरैया बेगम अकेले रह गये तो नवाब ने कहा—देखो सुरैया बेगम, इस ज़िंदगी का कोई भरोसा नहीं। अभी कल की बात है कि शाहज़ादा हुमायूँ फ़र के निकाह की तैयारियाँ हो रही थीं और आज उनकी क़ब्र बन रही है। इसलिए इनसान को चाहिए कि ज़िंदगी के दिन हँसी-खुशी से काट दे। यहाँ तो सिर्फ़ यही ख्वाहिश है कि हम हों और तुम हो। मुझे किसी से मतलब न सरोकार। अगर तुम साथ रहो तो खुदा गवाह है, बादशाही की हक़ीक़त न समझूँ। अगर यक़ीन न आये तो आज़मा लो।

बेगम—आप साफ़-साफ़ अपना मंशा बतलाइए। मैं आपकी बात कुछ नहीं समझी।

नवाब—साफ़-साफ़ कहते हुए डर मालूम होता है।

बेगम—नहीं, यह क्या बात है, आप कहें तो।

नवाब—(दबी ज़बान से) निकाह!

बेगम—सुनिए, मुझे निकाह में कोई उज़्र नहीं। आप अव्वल तो कमसिन, दूसरे

रईसज़ादे, तीसरे खूबसूरत, फिर मुझे निकाह में क्या उज्र हो सकता है। लेकिन रफ़्ता-रफ़्ता अर्ज़ करूँगी कि किस सबब से मुझे मंजूर नहीं।

नवाब—हाय-हाय! तुमने यह क्या सितम ढाया?

बेगम—मैं मजबूर हूँ, इसकी वजह फिर बयान करूँगी।

नवाब—अगर मंजूर नहीं तो हमें क़त्ल कर डालो। बस छुट्टी हुई। अब ज़िंदगी और मौत तुम्हारे हाथ है।

दूसरे दिन नवाब साहब सो ही रहे थे कि खिदमतगार ने आ कर कहा—हुजूर, और सब लोग बड़ी देर से तैयार हैं, देर हो रही है।

नवाब साहब ने शिकारी लिबास पहना और सुरैया बेगम के साथ हाथी पर सवार हो कर चले।

बेगम—वह बाबू आज कहाँ हैं? मारे डर के न आते होंगे!

बोस—हम तो आज शुरू से ही साथ-साथ हैगा। अब हमारे को कुछ खोफ लगती नहीं।

बेगम—बाबू, तुम्हारे को हाथी तो नहीं हिलती?

घोष—ना, आज हाथी नहीं हिलती। कल का बात कल के साथ गया।

हाथी चले। थोड़ी दूर जाने पर लोगों ने इत्तला दी कि शेर यहाँ से आध मील पर है और बहुत बड़ा शेर है। नवाब साहब ने खुश हो कर कहा—हाथियों को दौड़ा दो। बाबुओं के फ़ीलबान ने जो हाथी तेज़ किया, तो बोस बाबू मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे।

घोष—अरे शाला, ज़मीन पर गिरा दिया!

फ़ीलबान—चुप-चुप, गुल न मचाइए, मैं हाथी रोके लेता हूँ।

घोष—गुल न मचायें तो फिर क्या मचायें?

फ़ीलबान—वह देखिए, बाबू साहब उठ बैठे, चोट नहीं आयी।

घोष—महाशाई, लागे ने तो?

बोस—बड़ी बोद लोग।

घोष—अपना समाचार बोलो।

बोस—अपना समाचार की बोलबो बाबा!

मिस्टर बोस झाड़-पोंछ कर उठे और महावत को हज़ारों गालियाँ दीं।

बोस—महाशाई, तुम ईश को मारो, मारो ईश दूष्ट को।

घोष—ओ शाला, तुम्हारा शिर पर बाल नहीं, हम पट्टे पकड़ कर तुमको मार डालने माँगता।

फ़ीलबान हँस दिया। इस पर बोस आग हो गये, और कई ढेले चलाये, मगर कोई ढेला फ़ीलबान तक न पहुँच सका। फ़ीलबान ने कहा—हुजूर, अब हाथी पर बैठ लें तो हम नवाब साहब के हाथियों से मिला दें। बोस बोले—हम डरपोक आदमी नहीं है। हम महाराजा बड़ौदा के यहाँ किसिम-किसिम का जानवर देख चुका है।

घोष—अब बातें कब तक करेगा ! आके बैठ जा।

फ़ीलबान—हुजूर, क़ुरान की कसम खा कर कहता हूँ, मेरा क़ुसूर नहीं। आप कभी हाथी पर सवार तो हुए नहीं। हौदे पर लटक कर बैठे हुए थे। हाथी जो हिला तो आप भद से गिर पड़े।

बोस—हमारा दिल में आयी कि तुम्हारा कान नोच डाले। हम कभी हाथी पर नहीं चढ़ा ? तुम बोलता है। तुम्हारा बाप के सामने हम हाथी पर चढ़ा था। तुम क्या जानेगा।

जब शेर थोड़ी दूर पर रह गया और नवाब साहब ने देखा कि बाबूवाला हाथी नहीं है तो डरे कि न जाने उन बेचारों की क्या हालत होगी। हुक्म दिया कि सब हाथी रोक लिये जायँ और धरतीधमक को दौड़ा कर ले जाओ। देखो, उन बेचारों पर क्या तबाही आयी !

धरतीधमक रवाना हुआ और कोई दस-बारह मिनट में बाबू साहबों का हाथी दूर से नज़र आया। जब हाथी क़रीब आया तो नवाब ने पूछा—बाबू साहब, खैरियत तो है ? हाथी कहाँ रह गया था ? बाबू साहबों ने कुछ जवाब न दिया; मगर फ़ीलबान बोला—हुजूर, यह दोनों बाबू लोग आपस में लड़ते थे, इसी से देर हो गयी।

अब बोस बाबू से न रहा गया। बिगड़ कर बोले—ओ शाला, तुम हमारे मुँह पर झूठ बोलता है। तुम शाला बिला कहे हाथी को दौड़ा दिये, हम तो ग़ाफ़िल पड़ा था।

इतने में आदमियों ने इत्तला दी कि शेर सामने की झील के किनारे लेटा हुआ है। लोग बंदूकें सँभाल-सँभाल कर आगे बढ़े तो देखा, एक बनैला सुअर ऊँची-ऊँची घास में छिपा बैठा है। सबकी सलाह हुई कि चारों तरफ़ से खाली निशाने लगाये जायँ ताकि घबरा कर निकले, मगर नवाब साहब के दिल में ठन गयी कि हम इस पतावर में हाथी जरूर ले जायँगे। सुरैया बेगम अब तक तो सैर देखती थीं मगर पतावर में जाना बहुत अखरा। बोलीं—नवाब, तुम्हारे सिर की कसम, अब हम न जायँगे। पतावर तलवार की धार से भी ज़्यादा तेज होती है। हमें किसी और हाथी पर बिठा दो।

नवाब ने दो शिकारियों को अपने हाथी पर बिठा लिया और सुरैया बेगम को दूसरे हाथी पर बिठा दिया। एक और हाथी उनके साथ-साथ उनकी हिफ़ाजत के लिए छोड़ दिया गया। तब नवाब साहब पतावर में पहुँचे। जब सुअर ने देखा कि दुश्मन चला आ रहा है तो उठा और भाग खड़ा हुआ। नवाब साहब ने गोली चलायी। फिर और शिकारियों ने भी बंदूकें सर कीं ! सुअर तड़प कर झील की तरफ़ झपटा। इतने में तीसरी गोली आयी। लोगों ने समझा कि अब काम तमाम हो गया। नवाब साहब को शौक़ चर्राया कि उसे अपने हाथ से क़त्ल करें। हाथी से उतर कर तलवार म्यान से निकाली और साथियों को झील के किनारे इधर-उधर

हटा दिया कि सुअर समझे, सब चल दिये हैं। जब सुअर ने देखा कि मैदान खाली है तो आहिस्ता-आहिस्ता झील से निकला। नवाब साहब घात में थे ही, ताक कर ऐसा हाथ दिया कि बनैला बोल गया। लोगों ने चारों तरफ़ से वाह-वाह का शोर मचाना शुरू किया।

एक—हुजूर, यह करामात है।

दूसरा—सुभान अल्लाह, क्या तुला हुआ हाथ लगाया कि बोला तक नहीं।

तीसरा—तलवार के धनी ऐसे ही होते हैं। एक ही हाथ में चौरंग कर दिया। क्या हाथ पड़ा है, वाह !

चौथा—धूम पड़ गयी, धूम पड़ गयी। क्या कमाल है, एक ही वार में ठंडा हो गया !

नवाब—अरे भाई देखते हो! बरसों शिकार की नौबत नहीं आती, मगर लड़कपन से शिकार खेला है। वह बात कहाँ जा सकती है। ज़रा किसी सूरत से बेगम साहब को यहाँ लाते और उनको दिखाते कि हमने कैसा शिकार किया है !

बेगम साहब का हाथी आया तो बनैले को देख कर डर गयीं। अल्लाह जानता है, तुम लोगों को जान की ज़रा भी परवा नहीं। और जो फिर पड़ता तो कैसी ठहरती !

नवाब—तारीफ़ न की, कितनी जवाँमर्दी से अकेले आदमी ने शिकार किया। लाश तो देखो, कहाँ से कहाँ तक है !

एक मुसाहब—हुजूर ने वह काम किया जो सारी दुनियाँ में किसी से नहीं हो सकता। दस-पाँच आदमी मिल कर तो जिसे चाहें मार लें; मगर एक आदमी का तलवार ले कर बनैले से भिड़ना ज़रा मुश्किल है।

बेगम—ऐ है, तुम अकेले शिकार करने गये थे ! क़सम खुदा की, बड़े ढीठ हो। मेरे तो रोयें खड़े हुए जाते हैं।

नवाब—अब तो हमारी बहादुरी का यक़ीन आया कि अब भी नहीं !

यहाँ से फिर शिकार के लिए रवाना हुए। बनैले का शिकार तो घाते में था। झील के क़रीब पहुँचे, तो हाथी ज़ोर-ज़ोर से ज़मीन पर पाँव पटकने लगा।

फ़ीलबान—शेर यहाँ से बीस क़दम पर है। बस यही समझिए कि अब निकला, अब निकला। काशीसिंह , हाथी पर आ जाओ। दिलाराम से भी कहो, बहुत आगे न बढ़े।

काशीसिंह—हुँह, सहर के मनई, नेवला देखे डर जायँ, हमका राह देखावत हैं। वह सेर तो हम सवा सेर !

नवाब—यह उजड्डुपन अच्छा नहीं। काशीसिंह, आ जाओ। दिलाराम, तुम भी किसी और हाथी पर चले जाओ। मानो कहना।

दिलाराम—हुजूर, चार बरस की उमिर से बाघ मारत चला आवत हौं, खा जाई, ससुर खा जाय।

बेगम—ऐ है, बड़े ढीठ हैं। नवाब, तुम अपना हाथी सब हाथियों के बीच में रखो। हमारे कलेजे की धड़कन को तो देखो।

अब सुनिए कि इत्तफ़ाक़ से एक शिकारी ने शेर देख लिया। एक दरख़्त के नीचे चित सो रहा था? उन्होंने किसी से न कुछ कहा, न सुना, बंदूक दाग़ ही तो दी। गोली पीठ पर पड़ी। शेर आग हो गया और गरजता हुआ लपका, तो खलबली मच गयी। आते ही काशीसिंह को एक थप्पड़ दिया, दूसरा थप्पड़ देने ही को था कि काशीसिंह सँभला और तलवार लगायी। तलवार हाथ पर पड़ी। तलवार खाते ही हाथी की तरफ़ झपटा, और नवाब साहब के हाथी के दोनों कान पकड़ लिये। हाथी ने ठोकर दी तो शेर ५-६ क़दम पर गिरा। इधर हाथी, उधर शेर, दोनों गरजे। बाबू साहबों ने दोहाई देनी शुरू की।

बोस—अरे, हमारा नानी मर गया। अरे, बाबा, हम तो काल ही से रोता था कि हम नहीं जायगा।

घोष—ओ भाई, तुम शेर को रोक लेगा जल्दी से।

बोस—हम नीचे होता तो जरूर करके रोक लेता।

दो हाथी तो शेर की गरज सुन कर भागे; मगर बाबू का हाथी डटा खड़ा था। इस पर बोस ने रो कर कहा—ओ शाला हमारा हाथी, अरे तुम किस माफिक भागता नहीं! तुम्हारा भाई भागे जाता है, तुम क्यों खड़ा है?

शेर ने झपट कर नवाब साहब के हाथी के मस्तक पर एक हाथ दिया तो गोश्त खिंच आया। नवाब साहब के हाथ-पाँव फूल गये। एक शिकारी जो उनके पीछे बैठा था, नीचे गिर पड़ा। शेर ने फिर थप्पड़ दिया। इतने में एक चौकीदार ने गोली चलायी। गोली सिर तोड़ कर बाहर निकल गयी और शेर गिर पड़ा, मगर नवाब साहब ऐसे बदहवास थे कि अब तक गोली न चलायी। लोग समझे, शेर मर गया। दो आदमी नज़दीक गये और देख कर बोले, हुजूर, अब इसमें जान नहीं है, मर गया। नवाब साहब हाथी से उतरने ही को थे कि शेर गरज कर उठा और एक चौकीदार को छाप बैठा। चारों तरफ़ हुल्लड़ मच गया। कोई बंदूक छतियाता है, कोई ललकारता है। कोई कहता है—तलवार ले कर दस-बारह आदमी पहुँच जाओ, अब शेर नहीं उठ सकता।

नवाब—क्या कोई गोली नहीं लगा सकता?

एक—हुजूर, शेर के साथ आदमी की भी जान जायगी!

नवाब—तुम तो अपनी बड़ी तारीफ़ करते थे। अब वह निशानेबाज़ी कहाँ गयी? लगाओ गोली।

गोली पीठ को छूती हुई निकल गयी। शिकारी ने एक और गोली लगायी तो शेर का काम-तमाम हो गया। मगर यह गोली इस उस्तादी से चलायी थी कि चौकीदार पर आँच न आने पायी। सब लोगों ने तारीफ़ की। शेर ऊपर था और चौकीदार नीचे। सात आदमी तलवार ले कर झपटे और शेर पर वार करने लगे। जब

ख़ूब यक़ीन हो गया कि शेर मर गया तो लाश को हटाया। देखा कि चौकीदार मर रहा है।

नवाब—ग़ज़ब हो गया यारो, हा! अफ़सोस।

बेगम—हाथी यहाँ से हटा ले चलो। कहते थे कि शिकार को न चलो। तुमने मेरा कहा न माना।

नवाब—फ़ीलबान, हाथी बिठा दे, हम उतरेंगे।

बेगम—उतरने का नाम भी न लेना। हम न जाने देंगे।

नवाब—बेगम, तुम तो हमको बिलकुल डरपोक ही बनाया चाहती हो। हमारा आदमी मर रहा है, मुझे दूर से तमाशा देखना मुनासिब नहीं।

बेगम ने नवाब के गले में हाथ डाल कर कहा—अच्छी बात है, जाइए, अब या तो हम-तुम दोनों गिरेंगे या यहीं रहेंगे।

नवाब दिल में बहुत ख़ुश हुए कि बेगम को मुझसे इतनी मुहब्बत है। आदमियों से कहा—ज़रा देखो, उसमें कुछ जान बाक़ी है? आदमियों ने कहा—हुजूर, इतना बड़ा शेर, इतनी देर तक छापे बैठा रहा। बेचारा घुट-घुटके कभी मर गया होगा!

बेगम—अब फिर तो कभी शिकार को न आओगे? एक आदमी की जान मुफ्त में ली?

नवाब—हमने क्यों जान ली, जो हमीं को शेर मार डालता!

बेगम—क्या मनहूस बातें ज़बान से निकालते हो, जब देखो, अपने को कोसा करते हो।

खेमे में पहुँच कर नवाब साहब ने वापसी की तैयारियाँ कीं और रातों-रात घर पहुँच गये।

६२

आज तो क़लम की बाछें खिली जाती हैं। नौजवानों के मिज़ाज की तरह अठखेलियों पर है। सुरैया बेगम खूब निखर के बैठी हैं। लौंड़ियाँ-महरियाँ बनाव-चुनाव किये घेरे खड़ी हैं। घर में जश्न हो रहा है। न जाने सुरैया बेगम इतनी दौलत कहाँ से लायीं। यह ठाट तो पहले भी नहीं था।

महरी—ऐ बी सैदानी, आज तो मिज़ाज ही नहीं मिलते। इस गुलाबी जोड़े पर इतना इतरा गयीं?

सैदानी—हाँ, कभी बाबाराज काहे को पहना था? आज पहले-पहल मिला है। तुम अपने जोड़े का हाल तो कहो।

महरी—तुम तो बिगड़ने लगी। चलो, तुम्हें सरकार याद करती हैं।

सैदानी—जाओ, कह दो, हम नहीं आते, आयी वहाँ से चौधराइन बनके। अब घूरती क्या हो, जाओ, कह दो न!

महरी ने आ कर सुरैया बेगम से कहा—हुजूर, वह तो नाक पर मक्खी नहीं बैठने देतीं। मैंने इतना कहा कि सरकार ने याद किया है तो मुझे सैकड़ों बातें सुनायीं।

सुरैया बेगम ने आँख उठा कर देखा तो महरी के पीछे सैदानी खड़ी मुसकिरा रही थी। महरी पर घड़ों पानी पड़ गया।

सैदानी—हाँ हाँ, कहो, और क्या कहती हो? मैंने तुम्हें गालियाँ दीं, कोसा और भी कुछ?

सुरैया बेगम की माँ बैठी हुई शादी का इंतज़ाम कर रही थीं। उनके सामने सुरैया बेगम की बहन ज़ाफ़री बेगम भी बैठी थीं। मगर यह माँ और बहन आयीं कहाँ से? इन दोनों का तो कहीं पता ही न था। माँ तो कब की मर चुकी। बहनों का ज़िक्र ही न सुना। मज़ा यह कि सुरैया बेगम के अब्बा जान भी बाहर बैठे शादी का इंतज़ाम कर रहे हैं। समझ में नहीं आता, यह माँ, बहन कहाँ से निकल पड़े। इसका क़िस्सा यों है कि नवाब वजाहत अली ने सुरैया बेगम से कहा—अगर यों ही निकाह पढ़वा लिया गया तो हमारे रिश्तेदार लोग तुमको हक़ीर समझेंगे कि किसी बेसवा को घर डाल लिया होगा। बेहतर है कि किसी भले आदमी को तुम्हें अपनी लड़की बनाने पर राज़ी कर लिया जाये।

सुरैया बेगम को यह बात पसंद आयी। दूसरे दिन सुरैया बेगम एक सैयद के मकान पर गयीं। सैयद साहब को मुफ़्त के रुपये मिले, उन्हें नवाब साहब के ससुर बनने में क्या इनकार होता। क़िस्मत खुल गयी। पड़ोसी हैरत में थे कि यह सैयद साहब अभी कल तक तो जूतियाँ चटकाते फिरते थे। आज इतना रुपया कहाँ से आया कि डोमिनियाँ भी हैं, नाच-रंग भी, नौकर-चाकर भी और सबके सब नये जोड़े पहने हुए। एक पड़ोसी ने सैयद साहब से यों बात-चीत की—

पड़ोसी— आज तो आपके मिज़ाज ही नहीं मिलते। मगर आप चाहे आधी बात न करें, मैं तो छेड़के बोलूँगा।

गो नहीं पूछते हरगिज़ वह मिज़ाज,
हम तो कहते हैं दुआ करते हैं।

सैयद—हज़रत, बड़े फ़िक्र में हूँ। आप जानते हैं, लड़की की शादी झंझट से ख़ाली नहीं। ख़ुदा करे, ख़ैरियत से काम पूरा हो जाय।

पड़ोसी—जनाब, ख़ुदा बड़ा कारसाज़ है। शादी कहाँ हो रही है?

सैयद—नवाब वजाहत अली के यहाँ, यही सामने महल है, बड़ी कोशिश की, जब मैंने मंजूर किया। मेरा तो मंशा यही था कि किसी शरीफ़ और ग़रीब के यहाँ ब्याहूँ।

पड़ोसी—क्यों? ग़रीब के यहाँ क्यों ब्याहते? आपका ख़ानदान मशहूर है। बाक़ी रहा रुपया। यह हाथ का मैल है। मगर अब यह फ़र्माइए कि सब बंदोबस्त कर लिया है न, मैं आपका पड़ोसी हूँ, मेरे लायक़ जो ख़िदमत हो उसके लिए हाज़िर हूँ।

सैयद—ऐ हज़रत आपकी मिहरबानी काफ़ी है। आपकी दुआ और ख़ुदा की इनायत से मैंने हैसियत के मुआफ़िक़ बंदोबस्त कर लिया है।

इधर तो ये बातें होती थीं, उधर नवाब के दोस्त बैठे आपस में चुहल कर रहे थे।

एक दोस्त—हज़रत, इस बारे में तो आप क़िस्मत के धनी हैं।

नवाब—भई, ख़ुदा की क़सम, आपने बहुत ठीक कहा, और सैयद साहब को तो बिल्कुल फ़क़ीर ही समझिए। उनकी दुआ में तो ऐसा असर है कि जिसके वास्ते जो दुआ माँगी, फ़ौरन क़बूल हो गयी।

दोस्त—जभी तो आप जैसे आली ख़ानदान शरीफ़ज़ादे के साथ लड़की का निकाह हो रहा है। इस वक़्त शहर में आपका सा रईस और कौन है!

मीर साहब—अजी, शाहज़ादों के यहाँ से जो न निकले वह आपके यहाँ है।

लाला—इसमें क्या शक, लेकिन यहाँ एक-एक शाहज़ादा ऐसा पड़ा है जिसके घर में दौलत लौंडी बनी फिरती है।

मीर साहब—कुछ बेधा होके तो नहीं आया है! बढ़ कर दूसरा कौन रईस है शहर में, जिसके यहाँ है यह साज-सामान?

लाला—तुम खुशामद करते हो और बंदा साफ़-साफ़ कहता है।

मीर साहब—जा पहले मुँह बनवा, चला वहाँ से बड़ा साफ़गो बनके।

दोस्त—ऐसे आदमी को तो खड़े-खड़े निकलवा दे, तमीज़ तो छू ही नहीं गयी। गौखेपन के सिवा और कोई बात नहीं।

नवाब—बदतमीज़ आदमी है, शरीफ़ों की सोहबत में नहीं बैठा।

मीर साहब—बड़ा खरा बना है, खरा का बचा!

नवाब—अजी, सख़्त बदतमीज़ है।

घर में सुरैया बेगम की हमजोलियाँ छेड़-छाड़ कर रही थीं। फ़ीरोज़ा बेगम ने छेड़ना शुरू किया—आज तो हुज़ूर का दिल उमंगों पर है।

सुरैया बेगम—बहन, चुप भी रहो, कोई बड़ी-बूढ़ी आ जायें तो अपने दिल में क्या कहें, आज के दिन माफ़ करो, फिर दिल खोल के हँस लेना। मगर तुम मानोगी काहे को!

फ़ीरोज़ा—अल्लाह जानता है, ऐसा दूल्हा पाया है कि जिसे देख कर भूख-प्यास बंद हो जाय।

इतने में डोमिनियों ने यह ग़ज़ल गानी शुरू की—

दिल किसी तरह चैन पा जाये,
ग़ैर की आयी हमको आ जाये;
दीदा व दिल हैं काम के दोनों,
वक़्त पर जो मज़ा दिखा जाये।
शेख़ साहब बुराइयाँ मय की,
और जो कोई चपत जमा जाये;
जान तो कुछ गुज़र गयी उस पर,
मुँह छिपाके जो कोसता जाये।
लाश उठेगी जभी कि नाज़ के साथ,
फेर कर मुँह वह मुसकिरा जाये;
फिर निशाने लेहद रहे न रहे,
आके दुश्मन भी ख़ाक उड़ा जाये।
वह मिलेंगे गले से ख़िलवत में,
मुझको डर है हया न आ जाये।

फ़ीरोज़ा बेगम ने यह ग़ज़ल सुन कर कहा—कितना प्यारा गला है; लेकिन लै अच्छा नहीं।

सुरैया बेगम ने डोमिनियों को इशारा कर दिया कि यह बहुत बढ़-बढ़ कर बातें कर रही हैं, ज़रा इनकी ख़बर लेना। इस पर एक डोमिनी बोली—अब हूज़ूर हम लोगों को लै सिखा दें।

दूसरी—यह तो मुजरे को जाया करें तो कुछ पैदा कर लायें।

तीसरी—बहन, ऐसी कड़ी न कहो।

इतने में एक औरत ने आ कर कहा—हुज़ूर, कल बरात न आयेगी। कल का दिन अच्छा नहीं। अब परसों बरात निकलेगी।

सुरैया बेगम के यहाँ वही धमाचौकड़ी मची थी। परियों का झुरमुट, हसीनों का जमघट, आपस की चुहल और हँसी से मकान गुलज़ार बना हुआ था। मज़े-मज़े की बातें हो रही थीं कि महरी ने आ कर कहा—हुजूर, रामनगर से असग़ार मियाँ की बीबी आयी हैं। अभी-अभी बहली से उतरी हैं। जानी बेगम ने पूछा—असग़ार मियाँ कौन हैं? कोई देहाती भाई हैं? इस पर हशमत बहू ने कहा, बहन वह कोई हों। अब तो हमारे मेहमान हैं। फ़ीरोज़ा बेगम बोलीं—हाँ-हाँ तमीज़ से बात करो, मगर वह जो आयी हैं, उनका नाम क्या है? महरी ने आहिस्ता से कहा—फ़ैज़न। इस पर दो-तीन बेगमों ने एक दूसरे की तरफ़ देखा।

हशमत बहू—वाह,क्या प्यारा नाम है। फ़ैज़न, कोई मीरासीनि हैं क्या?

सुरैया बेगम—तुम आज लड़वाओगी। जानी बेगम कौन सा अच्छा नाम है।

फ़ीरोज़ा—देहात के तो यही नाम हैं, कोई जैनब है, कोई ज़ीनत, कोई फ़ैज़न।

सुरैया बेगम—फैज़न बड़ी अच्छी औरत है। न किसी के लेने में, न देने में।

इतने में बी फ़ैज़न तशरीफ लायी और मुसकिरा कर बोलीं—मुबारक हो!

यहाँ जितनी बेगमें बैठी थीं सब मुँह फेर-फेर कर मुसकिरायीं। बी फ़ैज़न के पहनावे से ही देहातीपन बरसता था।

फ़ैज़न—बहन, आज ही बारात आयेगी न, कौन-कौन रस्में हुई? हम तो पहले ही आते, मगर हमारे देवर की तबियत अच्छी न थी।

फ़ीरोज़ा—बहन, तुम्हारा नाम क्या है?

फ़ेजन—फ़ैज़न।

फ़ीरोज़ा—और तुम्हारे मियाँ का नाम?

फ़ैज़न—हमारे यहाँ मियाँ का नाम नहीं लेते। तुम अपने मियाँ का नाम बताओ!

फ़ीरोज़ा बेगम ने तड़ से कहा—असग़ार मियाँ। इस पर वह फ़र्मायशी क़हक़हा पड़ा कि दूर तक आवाज़ गयी फ़ैज़न दंग हो गयीं और दिल ही दिल में सोचने लगीं कि इस शहर की औरतें बड़ी ढीठ है। मैं इनसे पेश न पाऊँगी।

हशमत बहू—तो असग़ार मियाँ बी फ़ैज़न के मियाँ हैं। या तुम्हारे मियाँ, पहले इसका फ़ैसला हो जाय।

फ़ीरोज़ा—ऐ है, इतना भी न समझीं, पहले इनसे निकाह हुआ था, फिर हमसे हुआ और अब असग़ार मियाँ के दो महल हैं, एक तो ये बेगम, दूसरे हम।

इस पर फिर क़हक़हा पड़ा, फ़ैज़न के रहे-सहे हवास भी ग़ायब हो गये। अब इतनी हिम्मत भी न थी कि ज़बान खोल सकें। जानी बेगम ने कहा—क्यों फ़ैज़न बहन, तुम्हारे यहाँ कौन-कौन रस्में होती हैं? हमारे यहाँ तो दूल्हा लड़की के घर जा कर देख आता है, बस फिर बात तै हो जाती है।

फ़ैज़न—क्या यहाँ मियाँ पहले ही देख लेते हैं ? हमारे यहाँ तो नव बरस भी ऐसा न हो।

फ़ीरोज़ा—यह नव बरस क्या, क्या यह भी कोई टोटका है ? नव बरस की क़ैद मुई कैसी !

फ़ैज़न—बहन, हम मुई-टुई क्या जानें।

यह सुन कर हमजोलियाँ और भी हँसीं।

फ़ीरोज़ा—यह महरी मुई-टुई कहाँ चली गयी ? एक भी मुई-टुई दिखायी नहीं देती।

हशमत बहू—हमका मालूम है, मगर हम न बताउब।

फ़ीरोज़ा—अरे मुई-टुई पंखिया कहाँ गायब हो गयी ?

हशमत बहू—जिस मुई-टुई को गर्मी मालूम हो वह ढूँढ़ ले।

इतने में जुलूस सजा और दुलहिन के हाथ दूल्हा के लिए सेहरा गया। चाँदी की ख़ुशनुमा किश्तियों में फूलों के हार, बद्धियाँ और जड़ाऊ सेहरा। इसके बाद डोमिनियों का गाना होने लगा। फ़ैज़न ने कहा—हमने तो यहाँ की बड़ी तारीफ़ सुनी है। इस पर एक बूढ़ी औरत ने पोपले मुँह से कहा—ऐ हुज़ूर, अब तो नाम ही नाम है, नहीं तो हमारे लड़कपन में डोमिनियों का महल्ला बड़ी रौनक पर था। यह महबूबन जो सामने बैठी हैं, इनकी दादी का वह दौरदौरा था कि अच्छे-अच्छे शाहज़ादे सिर टेक कर आते थे। एक बार बादशाह तक उनके यहाँ आये थे। हाथी वहाँ तक नहीं जा सकता था। हुक्म दिया कि मकान गिरा दिये जायँ और चौगुना रुपया मालिकों को दिया जाय। एक बूढ़ी औरत जिसकी भवें तक सफ़ेद थीं, हाथी की सूँड़ पकड़ कर खड़ी हो गयी और कहा—मैं हाथी को आगे न बढ़ने दूँगी। मेरे बुज़ुर्गों की हड्डियाँ खोदके फेंक दी गयीं। यह मकान मेरे बुज़ुर्गों की हड्डी है। बादशाह ने उसके बुज़ुर्गों के नाम से खैरातख़ाना जारी कर दिया। जब बादशाह का घोड़ा महबूबन की दादी के मकान पर पहुँचा, तो दस-बारह हज़ार आदमी गली में खड़े थे। मगर वाह री ज़हूरन ! इतना सब कुछ होते भी ग़रूर छू न गया था। बरसात के दिन थे, बादशाह ने कहा—ज़हूरन, जब जानें कि मेंह बरसा दो। मुसकिरा कर कहा—हुज़ूर, लौंडी एक अदना सी डोमिनी है, मगर ख़ुदा के नज़दीक कुछ मुश्किल नहीं है। यह कह कर तान ली—

'आयो बदरा कारे-कारे रही बिजली चमक मोरे आँगन में'

बस, पच्छिम तरफ़ के झूमती हुई घटा उठी। स्याही छलकने लगी। ज़हूरन को ख़ुदा बख़्शे, फिर तान लगायी और मूसलाधार मेंह बरसने लगा, ऐसा बरसा कि दरिया बढ़ गया और तालाब से दरिया तक पानी ही पानी नज़र आता था ? जब तो यहाँ की डोमिनियाँ मशहूर हैं। और अब तो ख़ुदा का नाम है। इतनी डोमिनियाँ बैठी हैं कोई गाये तो ?

ख़ुदारा जल्द ले आ कर खबर तू ऐ मेरे ईसा;
तेरे बीमार का अब कोई दम में दम निकलता है।

नसीहत दोस्तो करते हो पर इतना तो बतलाओ,
कहीं आया हुआ दिल भी सँभाले से सँभलता है।

महबूबन—बड़ी गलेबाज़ हैं आप, और क्यों न हो, किनकी-किनकी आँखें देखी हैं। हम क्या जानें।

हैदरी—हम लोगों के गले इसी सिन में काम नहीं करते, जब इनकी उम्र को पहुँचेंगे तो ख़ुदा जाने क्या हाल होगा।

बुढ़िया क़ब्र में एक पाँव लटकाये बैठी थी। सिर हिलता था, लठिया टेक के चलती थी, मगर तबीयत ऐसी रंगीन कि जवानों को मात करती थी। सबेरे उबटना न मले तो चैन न आये। पट्टियाँ ज़रूर जमाती थी, यों तो बहुत ही ख़ुशमिज़ाज और हँस-मुख थी, मगर जहाँ किसी ने इसको बूढ़ी कहा, बस, फिर अपने आपे में नहीं रहती थी। फ़ीरोज़ा ने छेड़ने के लिए कहा—तुमने जो ज़माना देखा है वह हम लोगों को कहाँ नसीब होगा। कोई सौ बरस का सिन होगा, क्यों?

बुढ़िया ने पोपले मुँह से कहा—अब इसका मैं क्या जवाब दूँ, बूढ़ी मैं काहे से हो गयी, बालों पर नज़ला गिरा, सफ़ेद हो गये, इससे कोई बूढ़ा हो जाता है!

शाम से आधी रात तक यही कैफ़ियत; यही मज़ाक़, यही चहल-पहल रही। नयी दुलहिन गोरी-गोरी गरदन झुकाये, प्यारा-प्यारा मुखड़ा छिपाये, अदब और हया के साथ चुप-चाप बैठी थी, हमजोलियाँ चुपके-चुपके छेड़ती जाती थीं। आधी रात के वक़्त दुलहिन को बेसन मल-मल कर नहलाया गया। हिना का इत्र, सुहाग, केवड़ा और गुलाब बदन में मला गया। इसके बाद जोड़ा पहनाया गया! हरे बाफ़ते का पैजामा, सूहे की कुरती, सूहे की ओढ़नी, बसंती रंग का कश्मीरी दुशाला ओढ़ाया गया। भावजों ने मेढ़ियाँ गूँथी थीं, अब ज़ेवर पहनाने बैठीं। सोने के पाज़ेब, छागल और कड़े दसों पोरों में छल्ले, हाथों में चूहेदंत्तियाँ, जड़ाऊ कंगन, सोने के कड़े, गले में मोतियों का हार, कानों में करनफूल और बाले, सिर पर छपका और सीसफूल माँग में मोतियों की लड़ी देख कर नज़र का पाँव फिसला जाता था। जवाहिरात की चमक-दमक से गुमान होता था कि ज़मीन पर चाँद निकल आया।

जानी बेगम—चौथी के दिन और ठाट होंगे, आज क्या है।

फ़ैज़न—आज कुछ हई नहीं। ऐसा महकौवा इत्र कभी नहीं सूँघा।

इस पर सब खिलखिला कर हँस पड़ीं।

हशमत बहू—बी फ़ैज़न की बातों से दिल की कली खिल जाती है।

फ़ीरोज़ा—कैसी कुछ, और चंचल कैसी हैं, रग-रग में शोखी है।

जानी बेगम—बहन फ़ैज़न, हम तुम्हारे मियाँ के साथ निकाह पढ़वा लें, बुरा तो न मानोगी?

फ़ीरोज़ा—दो दिल राज़ी तो क्या करेगा क़ाज़ी।

हशमत बहू—बहन, तुम्हारी आँखों का पानी बिलकुल ढल गया। हया भून खायी।

महरी—हुजूर, यही तो दिन हँसी-मज़ाक़ के हैं। जब हम इन सिनों थे तो हमारी भी यही कैफ़ियत थी।

इतने में एक हमजोली ने आ कर कहा—फ़ीरोज़ा बेगम, वह आयी हैं मुबारक महल। उनके सामने जरी ऐसी बातें न करना, वह बड़ी नाज़ुक मिज़ाज हैं। इतनी बेलिहाज़ी अच्छी नहीं होती।

फ़ीरोज़ा—तो तुम ज़ाके अदब से बैठो। तुम्हारा वज़ीफ़ा आज से बँध जायगा।

मुबारक महल आयीं और सबसे गले मिल कर सुरैया बेगम के पास जा बैठीं।

मुबारक महल—हमने सुरैया बेगम को आज ही देखा, ख़ुदा मुबारक करे।

फ़ीरोजा—ऐ सुरैया बेगम, जरी गरदन ऊँची करो, वाह यह तो और झुकी जाती हैं। हम तो सीना तानके बैठे थे, क्या किसी का डर पड़ा है।

हशमत—तुम तो अंधेर करती हो, नई दुलहिन कहीं अकड़ कर बैठती है?

महरी—ऐ हाँ हुजूर, दुलहिन कहीं तन कर बैठती है! क्या कुछ नयी रीति है।

फ़ीरोजा—अच्छा साहब, यों ही सही, जरी और झुक जाओ।

एकाएक बाजे की आवाज़ आयी। दूल्हा के यहाँ से दुलहिन का सेहरा बड़े ठाट से आ रहा था। जब सेहरा अंदर आया तो सुरैया बेगम की माँ ने कहा, अब इस वक़्त कोई छींके-मींके नहीं। सेहरा अंदर आता है।

सेहरा अंदर आया। दूल्हा के बहनोई ने साली के सिर पर सेहरा बाँधा और सास से नेग माँगा।

सास—हाँ-हाँ, बाँध लो, इस वक़्त तुम्हारा हक़ है।

बहनोई—इन चकमों में न आऊँगा। लाइए, नेग लाइए।

हशमत—हाँ, बेझगड़े न मानना दूल्हा भाई।

बहनोई—मान चुका, तोड़ों के मुँह खोलिए। अब देर न कीजिए।

सुरैया बेगम की माँ ने पाँच अशर्फ़ियाँ दीं। वह तो ले कर बाहर गये। इधर दूल्हा के यहाँ की ओढ़नी दुलहिन को ओढ़ायी गयी। पायजामे में नाड़े की इक्कीस गिरहें दी गयी। परदा डाला गया। दुलहिन एक पलँग पर बैठी। फूलों के तौक़ और बद्धियाँ पहनायी गयीं। फूलों का तुर्रा बाँधा गया। अब बरात के आने का इंतज़ार था।

फ़ीरोज़ा—क्यों बहन फ़ैज़न, सच कहना, इस वक़्त दुलहिन पर कैसा जोबन है?

फ़ैजन—वह तो यों ही खूबसूरत हैं!

फ़ीरोज़ा—बरात बड़े धूम से आयगी, हमने चाहा था कि मुन्ने मियाँ के यहाँ से बरात का ठाट देखें।

हशमत बहू—ऐ तो बरात यहीं से क्यों न देखो। महरी, जाके देखो, चिकें सब दुरुस्त हैं ना।

महरी—हुजूर, सब सामान लैस है।

फ़ीरोज़ा बेगम उस कमरे की तरफ़ चलीं जहाँ से बरात देखने का बंदोबस्त था।

लेकिन जब कमरे में गयीं और नीचे झाँकके देखा तो सहम कर बोलीं, ओफ़्फ़ोह, इतना ऊँचा कमरा, मैं तो मारे डर के गिर पड़ी होती। जानी बेगम ने जब सुना कि वह डर गयीं तो आड़े हाथों लिया—हमने सुना, आप इस वक़्त सहम गयीं, वाह !

फ़ीरोज़ा—खुदा गवाह है, दिल्लगी न करो, मेरे होश ठिकाने नहीं।

जानी बेगम—चलो, बस ज्यादा मुँह न खुलवाओ।

फ़ीरोज़ा—अच्छा, जाके झाँको तो मालूम हो।

हशमत बहू—हम भी चलते हैं। हम भी झाँकेंगे।

महरी—न बीबी, मैं झाँकने को न कहूँगी। एक बार का ज़िक्र सुनो कि मैं ताजबीबी का रोज़ा देखने गयी। अल्लाह री तैयारी, रोज़ा क्या सचमुच बिहिश्त है। फिरंगी तक जब आते हैं तो मारे रोब के टोपी उतार लेते हैं। मेरे साथ एक बेगम भी थीं, जब रोज़े के फाटक पर पहुँचे तो मुज़ाविर बाहर चले गये। मालियों को हुक्म हुआ कि पीठ फेर कर काम करें, गँवारों से परदा क्या।

फ़ीरोज़ा—उहँ, परदा दिल का।

हशमत—फिर मुज़ाविरों को क्यों हटाया ?

महरी—वह आदमी हैं और माली जानवर, भला इन मज़दूरों से कौन परदा करता है। अच्छा, यह तो बताओ कि दुलहिन को कहाँ से बरात दिखाओगी ?

हशमत—हमारे यहाँ की दुलहिनें बरात नहीं देखा करतीं।

फ़ीरोज़ा—वाह, क्या अनोखी दुलहिन हैं !

जानी बेगम—जिस दिन तुम दुलहिन बनी थीं, उस दिन बरात देखी होगी।

फ़ीरोजा—हाँ-हाँ, न देखना क्या माने। हमने अम्माँजान से कहा कि हमको दूल्हा दिखा दो, नहीं हम शादी न करेंगे। उन्होंने कहा, अच्छा झरोखे से बरात देखो, हमने देखी। हमारे मियाँ घोड़े पर अकड़े बैठे थे। एक फूल उनके सिर पर मारा।

हशमत—क्यों नहीं, शाबाश, क्या कहना !

जानी बेगम—फूल नाहक़ मारा, एक जूता खींच मारा होता।

फ़ीरोज़ा—खूब याद दिलाया, अब सही।

जानी बेगम—अच्छा महरी, तुमने उन बेगम साहब का ज़िक्र छेड़ा था जिनके साथ ताजबीबी का रोज़ा देखने गयी थीं। फिर क्या हुआ ?

महरी—हाँ, खूब याद आया। हम लोग एक बुर्ज़ पर चढ़ गये, मैं क्या कहूँ हुज़ूर, कम से कम होंगे तो कोई सात-आठ सौ ज़ीने होंगे।

फ़ीरोज़ा—ओफ़्फ़ोह, इतना झूठ, अच्छा फिर क्या हुआ, कहती जाओ।

महरी—खैर, दम ले-ले के फिर चढ़े, जब धुर पर पहुँचे तो दम नहीं बाक़ी रहा कि ज़रा हिल भी सकें। बेगम साहब ने ऊपर से नीचे को झाँका तो ग़श आ गया, धम से गिरीं।

हशमत बहू—हाय-हाय ! मरीं कि बचीं ?

महरी—बच जाने की एक ही कही। हड्डी-पसली चूर हो गयी।

फ़ीरोज़—मैंने कहा तो किसी को यक़ीन नहीं आया। अल्लाह जानता है, इतने ऊँचे पर से जो सड़क देखी होश उड़ गये।

जानी बेगम—जाने दो भई, अब उसका ज़िक्र न करो, चलो दुलहिन के पास बैठो।

खबरें आने लगीं की आज तक इस शहर में ऐसी बरात किसी ने नहीं देखी थी। एक नयी बात यह है कि गोरों का बाजा है। हज़ारो आदमी गोरों का बाजा सुनने आये हैं। छतें फटी पड़ती हैं, एक-एक कमरा चौक में आज दो-दो आशर्फियों किराये पर नहीं मिलता। सुना कि बरात के साथ नयी रोशनी है जिसकी गैस लाइट बालते हैं।

फ़ीरोज़ा—उस रोशनी और इस रोशनी में क्या फ़र्क़ है ?

महरी—ऐ हुज़ूर, ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ है। यह मालूम होता है कि दिन है।

९४

आज़ाद पौलैंड की शाहज़ादी से रुखसत हो कर रातोरात भागे। रास्ते में रूसियों की कई फ़ौजें मिलीं। आज़ाद को गिरफ़्तार करने की ज़ोरों से कोशिश हो रही थी, मगर आज़ाद के साथ शाहज़ादी का जो आदमी था वह उन्हें सिपाहियों की नज़रें बचा कर ऐसे अनजान रास्तों से ले गया कि किसी को खबर तक न हुई। दोनों आदमी रात को चलते थे और दिन को कहीं छिप कर पड़ रहते थे। एक हफ़्ते तक भागा-भाग चलने के बाद आज़ाद पिलौना पहुँचे गये। इस मुक़ाम को रूसी फ़ौज़ों ने चारों तरफ़ से घेर लिया था। आज़ाद के आने की खबर सुनते ही पिलौनेवालों ने कई हज़ार सवार रवाना किये कि आज़ाद को रूसी फ़ौज़ों से बचा कर निकाल लायें। शाम होते-होते आज़ाद पिलौनावालों से जा मिले।

पिलौना की हालत यह थी कि क़िले के चारों तरफ़ रूस की फ़ौज़ थी और इस फ़ौज़ के पीछे तुर्कों की फ़ौज़ थी। रात को क़िले से तोपें चलने लगीं। इधर रूसियों की फ़ौज़ भी दोनों तरफ़ गोले उतार रही थी। क़िलेवाले चाहते थे कि रूसी फ़ौज़ दो तरफ़ से घिर जाय, मगर यह कोशिश कारगर न हुई। रूसियों की फ़ौज़ बहुत ज़्यादा थी। गोलों से काम न चलते देख कर आज़ाद ने तुर्की जनरल से कहा—अब तो तलवार से लड़ने का वक़्त आ पहुँचा, अगर आप इज़ाज़त दें तो मैं रूसियों पर हमला करूँ।

अफ़सर—ज़रा देर ठहरिए, अब मार लिया है। दुश्मन के छक्के छूट गये हैं।

आज़ाद—मुझे खौफ़ है कि रूसी तोपों से क़िले की दीवारें न टूट जायँ।

अफ़सर—हाँ, यह खौफ़ तो है। बेहतर है, अब हम लोग तलवार ले कर बढ़ें।

हुक्म की देर थी। आज़ाद ने फ़ौरन तलवार निकाल ली। उनकी तलवार की चमक देखते ही हज़ारों तलवारें म्यान से निकल पड़ीं। तुर्की जवानों ने दाढ़ियाँ मुँह में दबायीं और अल्लाह-अकबर कहके रूसी फ़ौज़ पर टूट पड़े। रूसी भी नंगी तलवारें ले कर मुक़ाबिले के लिए निकल आये। पहले दो तुर्की कम्पनियाँ बढ़ीं, फिर कुछ फ़ासले पर छह कम्पनियाँ और थीं। सबसे पीछे खास फ़ौज़ की चौदह कम्पनियाँ थीं। तुर्कों ने यह चालाकी की थी कि सिर्फ़ फ़ौज़ के एक हिस्से को आगे बढ़ाया था, बाकी कालमों को इस तरह आड़ में रखा कि रूसियों को खबर न हुई। क़रीब था कि रूसी भाग जायँ, मगर उनके तोपखाने ने उनकी आबरू रख ली। इसके सिवा तुर्की फ़ौज़ मंजिलें मारे चली जाती थी और रूसी फ़ौज़ ताज़ा थी। इत्तिफ़ाक़ से रूसी फ़ौज़ का सरदार एक गोली खा कर गिरा, उसके गिरते ही रूसी फ़ौज़ में खलबली मच गयी, आखिर रूसियों को भागने के सिवा कुछ न बन पड़ी। तुर्कों ने छह हज़ार रूसी गिर-फ़्तार कर लिये।

जिस वक़्त तुर्की फ़ौज़ पिलौना में दाखिल हुई, उस वक़्त की ख़ुशी बयान नहीं की जा सकती। बूढ़े और जवान सभी फूले न समाते थे। लेकिन यह ख़ुशी देर तक क़ायम न रही। तुर्कों के पास न रसद का सामान काफ़ी था, न गोला-बारूद। रूसी फ़ौज़ ने फिर क़िले को घेर लिया। तुर्क हमलों का जवाब देते थे, मगर भूखे सिपाही कहाँ तक लड़ते। रूसी ग़ालिब आते जाते थे और ऐसा मालूम होता था कि तुर्कों को पिलौना छोड़ना पड़ेगा। पचीस हज़ार रूसी तीन घंटे क़िले की दीवारों पर गोले बरसाते रहे। आख़िर दीवार फट गयी और तुर्कों के हाथ-पाँव फूल गये। आपस में सलाह होने लगी।

फ़ौज़ का अफ़सर—अब हमारा क़दम नहीं ठहर सकता, अब भाग चलना ही मुनासिब है।

आज़ाद—अभी नहीं, ज़रा और सब्र कीजिए, जल्दी क्या है।

अफ़सर—कोई नतीजा नहीं।

क़िले की दीवार फटते ही रूसियों ने तुर्की फ़ौज़ के पास पैग़ाम भेजा, अब हथियार रख दो, वरना मुफ़्त में मारे जाओगे।

लेकिन अब भी तुर्कों ने हथियार रखना मंजूर न किया। सारी फ़ौज़ क़िले से निकल कर रूसी फ़ौज़ पर टूट पड़ी। रूसियों के दिल बढ़े हुए थे कि अब मैदान हमारे हाथ रहेगा, और तुर्क तो जान पर खेल गये थे। मगर मजबूर हो कर तुर्कों को पीछे हटना पड़ा। इसी तरह तुर्कों ने तीन धावे किये और तीनों मरतबा पीछे हटने पर मजबूर हुए। तुर्की जेनरल फिर धावा करने की तैयारियाँ कर रहा था कि बादशाही हुक्म मिला—फ़ौज़ें हटा लो, सुलह की बात चीत हो रही है। दूसरे दिन तुर्की फ़ौज़ें हट गयीं और लड़ाई खतम हो गयी।

९५

जिस दिन आज़ाद क़ुस्तुनतुनिया पहुँचे, उनकी बड़ी इज़्ज़त हुई। बादशाह ने उनकी दावत की और उन्हें पाशा का ख़िताब दिया। शाम को आज़ाद होटल में पहुँचे और घोड़े से उतरे ही थे कि यह आवाज़ कान में आयी, भला गीदी, जाता कहाँ है। आज़ाद ने कहा—अरे भई, जाने दो। आज़ाद की आवाज सुन कर खोजी बेक़रार हो गये। कमरे से बाहर आये और उनके क़दमों पर टोपी रख कर कहा—आज़ाद, ख़ुदा गवाह है, इस वक़्त तुम्हें देख कर कलेजा ठंडा हो गया, मुँह-माँगी मुराद पायी।

आज़ाद—ख़ैर, यह तो बताओ, मिस मीडा कहाँ हैं?

ख़ोजी—आ गयीं, अपने घर पर हैं।

आज़ाद—और भी कोई उनके साथ है?

ख़ोजी—हाँ, मगर उस पर नज़र न डालिएगा।

आज़ाद—अच्छा, यह कहिए।

ख़ोज़ी—हम तो पहले ही समझ गये थे कि आज़ाद भावज भी ठीक कर लाये, मगर अब यहाँ से चलना चाहिए।

आज़ाद—उस परी के साथ शादी तो कर लो।

ख़ोज़ी—अजी, शादी जहाज़ पर होगी।

मिस मीडा और क्लारिसा को आज़ाद के आने की ज्यों ही ख़बर मिली, दोनों उनके पास आ पहुँचीं।

मीडा—ख़ुदा का हज़ार शुक्र है। यह किसको उम्मेद थी कि तुम जीते-जागते लौटोगे। अब इस ख़ुशी में हम तुम्हारे साथ नाचेंगे।

आज़ाद—मैं नाचना क्या जानूँ।

क्लारिसा—हम तुमको सिखा देंगे।

खोजी—तुम एक ही उस्ताद हो।

आज़ाद—मुझे भी वह गुर याद हैं कि चाहूँ तो परी को उतार लूँ।

खोजी—भई, कहीं शरमिंदा न करना।

तीन दिन तक आज़ाद क़ुस्तुनतुनिया में रहे। चौथे दिन दोनों लेडियों के साथ जहाज़ पर सवार हो कर हिंदोस्तान चले।

९६

आज़ाद, मीडा, क्लारिसा और खोजी जहाज़ पर सवार हैं। आज़ाद लेडियों का दिल बहलाने के लिए लतीफ़े और चुटकुले कह रहे हैं। खोजी भी बीच-बीच में अपना ज़िक्र छेड़ देते हैं।

खोजी—एक दिन का ज़िक्र है, मैं होली के दिन बाज़ार निकला। लोगों ने मना किया कि आज बाहर न निकलिए, वरना रंग पड़ जायगा। मैं उन दिनों बिलकुल गैंडा बना हुआ था। हाथी की दुम पकड़ ली तो हुमस न सका। चें से बोल कर चाहा कि भागे, मगर क्या मजाल! जिसने देखा, दातों उँगली दबायी कि वाह पट्टे।

आज़ाद—एँ, तब तक आप पट्टे ही थे?

खोजी—मैं आपसे नहीं बोलता। सुनो मिस मीडा, हम बाज़ार में आये तो देखा, हरबोंग मचा हुआ है। कोई सौ आदमी के क़रीब जमा थे और रंग उछल रहा था। मेरे पास पेशक़ब्ज़ और तमंचा, बस क्या कहूँ।

आज़ाद—मगर क़रौली न थी?

खोजी—भई, मैंने कह दिया, मेरी बात न काटो। ललकार कर बोला, यारो, देख-भाल के, मरदों पर रंग डालना दिल्लगी नहीं है। एक पठान ने आगे बढ़के कहा—खाँ साहब, आप सिपाही आदमी हैं, इतना ग़ुस्सा न कीजिए, होली के दिन रंग खेलना माफ़ है। मैंने कहा, सुनो भाई, तुम मुसलमान होके ऐसी बात कहते हो? पठान बोला, हज़रत, हमारा इन लोगों से चोली-दामन का साथ है।

इतने में दो लौंडों ने पिचकारी तानी और रंग डाल दिया, ऊपर से उसी पठान ने पीछे से तान के एक जूता दिया तो खोपड़ी पिलपिली हो गयी। फिरके जो देखता हूँ, तो डबल जूता, समझावन-बुझावन। मुसकिरा कर आगे बढ़ा।

आज़ाद—एँ, जूता खाके आगे बढ़े!

मीडा—और उस ज़माने में सिपाही भी थे, तिस पर जूता खाके चुप रहे?

आज़ाद—चुप रहते तो ख़ैरियत थी, मुसकिराये भी। और बात भी दिल्लगी की थी, मुसकिराते न तो क्या रोते?

खोजी—मैं तो सिपाही हूँ, तलवार से बात करता हूँ, जूते से काम नहीं लेता। कहाँ तलवार, कहाँ जूती-पैज़ार!

क्लारिसा—एक हाकिम ने गवाह से पूछा कि मुद्दई की माँ तुम्हारे सामने रोती थी या नहीं? गवाह ने कहा, जी हाँ, बायीं आँख से रोती थी।

खोजी—यह तो कोई लतीफ़ा नहीं, मुझे रह-रहके खयाल आता है जिस आदमी ने होली में बेअदबी की थी, उसे पा जाऊँ तो खूब मरम्मत करूँ।

आज़ाद—अच्छा, अब घर पहुँच कर सबसे पहले उसकी मरम्मत कीजिएगा। यह लीजिए, स्वेज़ की नहर!

मिस मीडा ने कहा—हम ज़रा यहाँ की सैर करेंगे। आज़ाद को भी यह बात पसंद आयी। इस्कंदरिया के उसी होटल में ठहरे जहाँ पहले टिके थे। खोजी अकड़ते हुए उनके पास आये और कहा, अब यहाँ ज़रा हमारे ठाट देखिएगा। पहले तो लोगों से दरियाफ़्त कर लो कि हमने कुश्ती निकाली थी या नहीं? मारा चारों शाने चित, और किसको? उस पहलवान को जो सारे मिस्र में एक था। जिसका नाम ले कर मिस्र के पहलवानों के उस्ताद कान पकड़ते थे। उसको देखो तो आँखें खुल जायँ। किसी का बदन चोर होता है। उसका क़द चोर है। पहले तो मुझे रेलता हुआ अखाड़े के बाहर ले गया और मैं भी चुपचाप चला गया, बस भाई, फिर तो मैंने क़दम जमाके जो रेला दिया तो बोल गया। अब पेंचें होने लगीं, मगर वह उस्ताद, तो मैं जगत-उस्ताद! उसने पेंच किया, मैंने तोड़ किया। उसने दस्ती खींची, मैं बगली हुआ। उसने डंडा लगाया, मैंने उचकके काट खाया।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह, यह पेंच सबसे बढ़ कर है। आपने इतनी तकलीफ़ क्यों की, बैठके कोसना क्यों न शुरू कर दिया?

दोनों लेडियाँ हँसने लगीं तो खोजी भी मुसकिराये, समझे कि मेरी बहादुरी पर दोनों खुश हो रही हैं। बोले—बस जनाब, दो घंटे तक बराबर की लड़ाई रही, वह कड़ियल जवान, मोटा-ताज़ा, पँचहत्था। उसका क़द क्या बताऊँ, बस जैसे हुसैनाबाद का सतखंडा। उसमें कूवत और यहाँ उस्तादी करतब, मैंने उसे हँफा-हँफाके मारा, जब उसका दम टूट गया तो चुर्र-मुर्र कर डाला। बस जनाब, क़िला जंग के पेंच पर मारा तो चारों शाने चित। कोई पचास हज़ार आदमी देख रहे थे। तमाम शहर में मशहूर था कि हिंद का पहलवान आया।

आज़ाद—भाई जान, सुनो, अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनने की सनद नहीं। जब जानें कि हमारे सामने पटकनी दो और पहले उस पहलवान को भी देख लें कि कैसा है, तुम्हारी-उसकी जोड़ है या नहीं।

खोजी—कुछ अजीब आदमी हैं आप, कहता जाता हूँ कि ग्रांडील पँचहत्था जवान है, आपको यक़ीन नहीं आता, हम इसको क्या करें।

इतने में होटल के दो-एक आदमी खोजी को देख कर जमा हो गये, खोजी ने पूछा—क्यों भाई, हमने यहाँ एक कुश्ती निकाली थी या नहीं?

एक आदमी—वाह, हमारे होटल के बौने ने तो उठा के दे पटका था, चले वहाँ से कुश्ती निकालने!

खोजी—ओ गीदी, झूठ बोलना और सुअर खाना बराबर है।

दूसरा आदमी—हाथ-पाँव तोड़के घर देगा। आप और कुश्ती!

खोजी—जी हाँ, हम और कुश्ती! कोई आये तब न! (ताल ठोक कर) बुलवाओ उस पहलवान को।

इतने में बौना सामने आ खड़ा हुआ और आते ही खोजी को चिढ़ाने लगा। ख्वाजा साहब ने कहा—यही पहलवान है जिसको हमने पटका था। आज़ाद बहुत

हँसे, बस ! टॉँय-टाँय फिस। बौने से कुश्ती निकाली तो क्या। किसी बराबरवाले से कुश्ती निकालते तो जानते। इसी पर घमंड था।

ख़ोजी—साहब, कहने और करने में बड़ा फ़र्क़ है, अगर उससे हाथ मिलायें तो ज़ाहिर हो जाय।

बौना ताल ठोंक के सामने आ खड़ा हुआ और ख़ोजी भी पैंतरे बदल कर पहुँचे। आज़ाद, मीडा और होटल के बहुत से आदमी उन दोनों के गिर्द टट लगाके खड़े हो गये।

ख़ोजी—आओ, आओ बच्चा। आज भी गुद्दा दूँगा।

बौना—आज तुम्हारी खोपड़ी है और मेरा जूता।

ख़ोजी—ऐसा गुद्दा दूँ कि उम्र भर याद रहे।

बौना—इनाम तो मिलेगा ही, फिर हमारा क्या हर्ज है ?

अब सुनिए कि दोनों पहलवान गुथ गये। ख़ोजी ने घूँसा ताना, बौने ने मुँह चिढ़ाया। ख़ोजी ने चपत जमायी, बौने ने धौल लगायी। दोनों की चाँद घुटी-घुटायी, चिकनी थी। इस ज़ोर की आवाज़ आती थी कि सुननेवालों और देखनेवालों का जी खुश हो जाता था।

मीडा—खूब आवाज़ आयी, तड़ाक। एक और।

क्लारिसा—ओफ़, मारे हँसी के पेट में बल पड़ गये।

ख़ोजी—हँसी क्यों न आयेगी! जिसकी खोपड़ी पर पड़ती है उसी का दिल जानता है।

आज़ाद—अरे यार, ज़रा ज़ोर से चपतबाज़ी हो।

ख़ोजी—देखिए तो, दम के दम में बेदम किये देता हूँ कि नहीं।

आज़ाद—मगर यार, यह तो बिलकुल बौना है।

ख़ोजी—हाय अफ़सोस, तुम अभी बिलकुल लौंडे हो। अरे कमबख्त, इसका क़द चोर है, यों देखने में कुछ नहीं मालूम होता, मगर अखाड़े में चिट और लँगोट बाँध कर खड़ा हुआ, बस फिर देखिए, बदन की क्या कैफ़ियत होती है। बिलकुल गैंडा मालूम होता है। कोई कहता है, दुम-कटा भैंसा है, कोई कहता है, हाथी का पाठा है, कोई नागौरी बैल बताता है, कोई कहता है, जमुनापारी बकरा है, मगर मुझे इसका गम नहीं। जानता हूँ कि कोई बोला और मैंने उठाके दे मारा।

ख़ोजी ने कई बार झल्ला-झल्ला कर चपतें लगायीं। एक बार इत्तिफ़ाक़ से उसके हाथ में इनकी गरदन आ गयी, ख्वाजा साहब ने बहुत हाथ-पैर मारे, बहुत कुछ ज़ोर लगाये, मगर उसने दोनों हाथों से गरदन पकड़ लीं और लटक गया। ख़ोजी कुछ झुके, उनका झुकना था कि उसने ज़ोर से मुक्का दिया और दो-तीन लप्पड़ लगाके भागा। ख़ोजी उसके पीछे दौड़े, उसने कमरे में जा कर अंदर से दरवाज़ा बंद कर लिया। ख़ोजी ने चपतें खायीं तो लोग हँसे और मिस क्लारिसा ने तालियाँ बजायीं। तब तो आप बहुत ही झल्लाये, आसमान सिर पर उठा लिया, ओ गीदी, अगर

शरीफ़ का बच्चा है तो बाहर आ जा। गिरा तो भाग खड़ा हुआ!

आज़ाद—अरे मियाँ, यह हुआ क्या? कौन गिरा, कौन जीता? हम तो उस तरफ़ देख रहे थे! मालूम नहीं हुआ, किसने दे मारा।

खोजी—ऐसी बात काहे को देखने लगे थे? अंजर-पंजर ढीले कर दिये गीदी के। वल्लाह, कुश्ती देखने के क़ाबिल थी। मैंने एक नया पेंच किया था। उसके गिरने के वक़्त ऐसी आवाज़ आयी कि यह मालूम होता था, जैसे पहाड़ फट पड़ा, आपने सुना ही होगा!

आज़ाद—वह है कहाँ? क्या खोदके ज़मीन में गाड़ दिया आपने?

खोजी—नहीं भाई, हारे हुए पर हाथ नहीं उठाता, और क़सम है, पूरा ज़ोर नहीं किया, वरना मेरे मुक़ाबिले में क्या ठहरता। हाथ पाँव तोड़के चुर्र-मुर्र कर डालता। नानी ही तो मर गयी कमबख़्त की, बस रोता हुआ भागा।

आज़ाद—मगर ख्वाजा साहब, गिरा तो वह और यह आपकी पीठ पर इतनी गर्द क्यों लगी है?

खोजी—भई, यहाँ पर हम भी क़ायल हो गये।

क्लारिसा—इसी तरह उस दफ़ा भी तुमने कुश्ती निकाली थी?

मीडा—बड़े शरम की बात है कि ज़रा सा बौना तुमसे न गिराया गया।

खोजी—जी चाहता है, दोनों हाथों से अपना सिर पीटूँ। कहता जाता हूँ कि उस गीदी का क़द चोर है। आख़िर मेरा बदन चोर है या नहीं, इस वक़्त मेरे बदन पर अँगरखा नहीं है। ख़ासा देव बना हुआ हूँ, अभी कपड़े पहन लूँ तो पिद्दी मालूम होने लगूँ। बस यही फ़र्क़ समझो। अव्वल तो मैं गिरा नहीं, अपनी ही ज़ोर में आप आ गया। दूसरे उसका क़द चोर है, फिर आप कैसे कहते हैं कि ज़रा सा बौना था?

दूसरे दिन आज़ाद दोनों लेडियों को ले कर बाज़ार की एक कोठी से बाहर आते थे, तो क्या देखते हैं कि खोजी अफ़ीम की पीनक में ऊँघते हुए चले आ रहे हैं। सामने से साठ-सत्तर दुम्बे जाते थे। दुम्बेवाले ने पुकारा—हटो-हटो, बचो-बचो, वह आपे में हों तो बचें। नतीजा यह हुआ कि एक दुम्बे से धक्का लगा तो धम से सड़क पर आ रहे और गिरते ही चौंक के गुल मचाया—कोई है? लाना क़रौली। आज अपनी जान और इसकी जान एक करूँगा। खुदा जाने, इसको मेरे साथ क्या अदावत पड़ गयी। अरे वाह वे बहुरूपिये, आज हमारे मुक़ाबिले के लिए साँड़िनियाँ लाया है। अबे, यहाँ हर वक़्त चौकन्ने रहते हैं। उस दफ़ा बज़ाज़ की दूकान पर आये तो मिठाई खाने में आयी, आज यह हाथ-पाँव तोड़ डालने से क्या मिला। घुटने लहू-लुहान हो गये। अच्छा बचा, अब तो मैं होशियार हो गया हूँ, अबकी समझूँगा।

सुरैया बेगम का मकान परीख़ाना बना हुआ था। एक कमरे में वज़ीर डोमिनी नाच रही थी। दूसरे में शहज़ादी का मुजरा होता था।

फ़ीरोज़ा—क्यों फ़ैज़न बहन, तुमको इस उजड़े हुए शहर की डोमिनियों का गाना काहे को अच्छा लगता होगा?

जानी बेगम—इनके लिए देहात की मीरासिनें बुलवा दो।

फ़ैज़न—हाँ, फिर देहाती तो हम हैं ही, इसका कहना क्या?

इस फ़िक़रे पर वह क़हक़हा पड़ा कि घर भर गूँज उठा और फ़ैज़न बहुत शरमायीं। जानी बेगम ने कहा—बस यही बात तो हमें अच्छी नहीं लगती। एक तो बेचारी इतनी देर के बाद बोलीं, उस पर भी सबने मिल कर उनको बना डाला।

फ़हीमन डोमिनी मुजरा करने लगी। उसके साथ दो औरतें सारंगी लिये थीं, एक तबला बजा रही थी और एक मजीरे की जोड़ी। उसके गाने की शहर में धूम थी।

बंदनवार बाँधो सब मिलके मालिनियाँ।

इसको उसने इस तरह अदा किया कि जिसने सुना, लट्टू हो गया।

जानी बेगम—चौथी के दिन तीस-चालीस तवायफ़ों का नाच होगा।

नज़ीर बेगम—कश्मीरी नहीं आते, हमें उनकी बातों में बड़ा मज़ा आता है।

हशमत बहू—नवाब साहब को ज़नाने में नाच कराने की चिढ़ है।

फ़ीरोज़ा—सुनो बहन! जो औरत बदी पर आये तो उसकी बात ही और है, नहीं तो शरीफ़ज़ादी के लिए सबसे बड़ा परदा दिल का है।

फ़ैज़न—फ़हीमन, यह गीत गाओ—

'डाल गयो कोऊ टोना रे।'

फ़ीरोज़ा—क्या गाओ गीत! गीत कंडेवालियाँ गाती हैं!

जानी—और इनको ठुमरी, टप्पे, ग़ज़ल से क्या मतलब। नकटा गाओ।

फ़ीरोज़ा और जानी बेगम की बातें सुन कर मुबारक महल बिगड़ गयीं।

फ़ीरोज़ा—बहन, हमारी बातों से बुरा न मानना।

मुबारक—बुरा मान कर ही क्या लूँगी!

जानी—ऐसी बातों से आपस में फ़साद हो जाता है।

फ़ीरोज़ा—यह लड़वाती हैं बहन, सच कहती हूँ!

मुबारक—तुम दोनों एक-सी हो, जैसे तुम वैसे वह, न तुम कम, न वह कम, शरीफ़ों में बैठने लायक़ नहीं हो। पढ़-लिख कर भी यह बातें सीखीं!

जानी—देखिए तो सही, अब दिल में कट गयी होंगी।

मुबारक—मैं ऐसों से बात तक नहीं करती।

फ़ीरोज़ा—(तिनक कर) जितना दबो, उतना और दबाती हैं, तुम बात नहीं करतीं, यहाँ कौन तुमसे बात करने के लिए बेक़रार है।

मुबारक—महरी, हमारी पालकी मँगवाओ, हम जायँगे।

बेगम साहब को खबर हुई तो उन्होंने दोनों को समझा-बुझा कर राज़ी कर दिया।

शाम हुई, रोशनी का इंतज़ाम होने लगा। बेगम ने कहा—फ़राशों को हुक्म दो कि बारहदरी को झाड़-कँवल से सजायें, कमरे और दालानों में साफ़ चाँदनियाँ बिछें, उन पर ऊनी और चीनी गलीचे हों। महरी ने बाहर जा कर आग़ा साहब से ये बातें कहीं—बोले, हाँ-हाँ साहब, सुना। बेगम साहब से कहो कि या तो हमको इंतज़ाम करने दें, या खुद ही बाहर चली आयें। आखिर हमको कोई गँवार समझी हैं! कल से इंतज़ाम करते-करते हम शल हो गये और जब बरात आने का वक़्त आया तो हुक्म देने लगीं कि यह करो, वह करो। जा कर कह दो कि बाहर का इंतज़ाम हमारे ताल्लुक है। आप क्यों दखल देती हैं। हम अपने बंदोबस्त कर लेंगे।

महरी ने अंदर जा कर बेगम साहब से कहा—हुजूर, बाहर का सब इंतज़ाम ठीक है। बारहदरी के फाटक पर नौबतखाना है, उस पर कारचोबी झूल पड़ी है, कहीं कँवल और गिलास हैं, कहीं हरी और लाल हाँड़ियाँ। रंग बिरंग के कुमकुमे बड़ी बहार दिखाते हैं।

हशमत बहू—दरवाज़े पर यह शोर कैसा हो रहा है?

महरी—हुजूर, शोर की न पूछें, आदमियों की इतनी भीड़ लगी हुई है कि कंधे से कंधा छिलता है। दूकानें भी बहुत सी आयी हैं। तम्बोली लाल कपड़े पहने दूकानों पर बैठे हैं। हाथों में चाँदी के कड़े, थालियों में सुफ़ेद पान, एक थाली में छोटी इलायचियाँ, एक में डलियाँ, कत्था इत्र में बसा हुआ, सफ़ाई के साथ गिलौरियाँ बना रहा है। एक तरफ़ साक़िनों की दूकानें हैं। बिगड़े-दिल दमों पर दम लगाते हैं, बे-फ़िकरे टूटे पड़ते हैं।

फ़ीरोज़ा—सुनती हो फ़ैज़न बहन, चलो ज़रा बाहर देख आयें, यह नाक-भौं क्यों चढ़ाये बैठी हो। क्या घर से लड़ कर आयी हो!

फ़ैज़न—हमारे पीछे क्यों पड़ी हो, हम न किसी से बोलें, न चालें।

हशमत—हाँ फ़ीरोज़ा, यह तुममें बड़ी बुरी आदत है।

फ़ीरोज़ा—लड़वाओ, वह तो सीधी-सादी हैं, शायद तुम्हारे भरों में आ जायँ।

जानी—फ़ीरोज़ा बेगम जिस महफ़िल में न हों वह बिलकुल सूनी मालूम हो।

फ़ीरोज़ा—हमें अफसोस यही है कि हमसे मुबारक महल बहन खफ़ा हो गयीं। अब कोई मेल करवा दे।

मुबारक—बहन, तुम बड़ी मुँहफट हो।

फ़ीरोज़ा—अब साफ़-साफ़ कहूँ तो बुरा मानो, जरी-जरी सी बात में चिटकती हो। आपस में हँसी-दिल्लगी हुआ करती है। इसमें बिगड़ना क्या? फ़ैज़न बुरा

मानें तो एक बात भी है, यह बेचारी देहात में रहती हैं, यहाँ के राह-रस्म क्या जानें, मगर तुम शहर की हो कर बात-बात में रोये देती हो। रही मैं, मैं तो हाज़िर-जवाब हूँ ही। हाँ, जानी बेगम की तरह जबाँदराज़ नहीं!

जानी—अब मेरी तरफ़ झुकीं।

हशमत—चौमुखा लड़ती हैं, उफ़ री शोखी!

अब दूल्हा के यहाँ का ज़िक्र सुनिए। वहाँ इससे भी ज्यादा धूम-धाम थी। नौजवान शाहज़ादे और नवाबज़ादे जमा थे। दिल्लगी हो रही थी।

एक—यार, आज तो बे सरूर जमाये जाना मुनासिब नहीं।

दूसरा—मालूम होता है, आज पीके आये हो।

पहला—अरे मियाँ, खुदा से डरो, पीनेवाले की ऐसी-तैसी।

दूल्हा—ज़रूर पीके आये हो। आप हमारी बारात के साथ न चलिए।

दीवानखाने में बुज़ुर्ग लोग बैठे पुराने ज़माने की बातें कर रहे थे। एक मौलवी साहब बोले—न अब वह लोग हैं, न ज़माना। अब किसके पास जायँ, कोई मिलने के क़ाबिल ही नहीं। इल्म की तो अब क़दर ही नहीं। अब तो वह ज़माना है कि गाली खाये, मगर जवाब न दे।

ख्वाजा साहब—अब आप देखें कि उस ज़माने में दस, बीस, तीस की नौकरियाँ थीं, मगर वाह रे बरकत। एक भाई घर में नौकर है और दस भाई चैन कर रहे हैं।

रात के दस बजे नवाब साहब महल में नहाने गये। चारो तरफ़ बंदनवार बँधी हुई थीं। आम, अमरूद और नारंगियाँ लटक रही थीं। नीचे एक सौ एक कोरे घड़े थे, एक मटके पर इक्कीस टोंटी का बधना रखा था और बधने में जौ लगे हुए थे। दूल्हा की माँ ने कहा—कोई छींके-वींके नहीं, खबरदार कोई छींकने न पाये। घर-भर में बच्चों को मना कर दो कि जिसको छींक आये, ज़ब्त करे। अब दिल्लगी देखिए कि इस टोकने से सबको छींक आने लगी। किसी ने नाक को उँगली से दबाया, कोई लपक के बाहर चला गया। दूल्हा ने लुंगी बाँधी, बदन में उबटन मला गया। बहनें सिर पर पानी डालने लगीं।

दूल्हा—कितना सर्द पानी है। ठिठरा जाता हूँ।

महरी—फिर हुजूर, शादी करना कुछ दिल्लगी है!

बहन—दिल में तो खुश होंगे। आज तुम्हें भला सर्दी लगेगी।

नहा कर दूल्हा ने खड़ाऊँ पहनी, कमरे में आये, कपड़े पहने! मशरू का पायजामा, जामदानी का अँगरखा, सिर पर पगड़ी के इर्द-गिर्द मोती टँके हुए, बीच में पुखराज का रंगीन नगीना, कमर में शाली पटका, पगड़ी पर फूलों का सेहरा, हाथ में लाल रेशमी रुमाल और कंधे पर हरा दुशाला, पैरों में फुँदनेदार बूट।

जब दूल्हा बाहर गया तो बेगम साहब ने लड़कियों से कहा—अब चलने की तैयारी करो। हमको बारात से पहले पहुँच जाना चाहिए। दूल्हा की बहनें अपने-अपने जोड़े पहनने लगीं। महरियों-लौंडियों को भी हुक्म हुआ कि कपड़े बदलो।

ज़रा देर में सुखपाल और झप्पान दरवाज़े पर ला कर लगा दिये गये। दोनों बहनें चलीं। दायें-बायें महरियाँ, मशालचियों के हाथ में मशालें, सिपाही और ख़िदमतगार लाल फुँदनेदार पगड़ियाँ बाँधे साथ चले। जिस तरफ़ से सवारी निकल गयी, गलियाँ इत्र की महक से बस गयीं। यही मालूम होता था कि परियों का उड़न-खटोला है।

जब दोनों बहनें समधियाने पहुँच गयीं, तो नवाब साहब की माँ भी चलीं। वहाँ दुलहिन की माँ ने इनकी पेशवाई की। इत्र-पान से ख़ातिर हुई और डोमिनियों का नाच होने लगा।

थोड़ी देर के बाद दूल्हा के यहाँ से बरात चली, सबके आगे हाथी पर निशान था। हाथी के सामने अनार और हज़ारे छूट रहे थे। हाथियों के पीछे अँगरेजी बाजेवालों की धूम थी। फिर सजे हुए घोड़े सिर से पाँव तक ज़ेवर से लदे चले आते थे। साईस उनकी बाग पकड़े हुए थे और दो सिपाही इधर-उधर क़दम बढ़ाते चले जाते थे। दूल्हा के सामने शहनाई बज रही थी। तमाशा देखनेवाले यह ठाट-बाट देख कर दंग हो रहे थे।

एक—भई, अच्छी बरात सजायी; और ख़ूब आतशबाज़ी बनायी है। आतशबाज़ी क्या बनवायी है, यों कहिए कि चाँदी गलवायी है।

दूसरा—अनार तो आसमान की ख़बर लाता है, मगर धुआँ आसमान के भी पार हो जाता है।

तख़्त ऐसे थे कि जो देखता, दाँतों अँगुली दबाता। एक हाथी ऐसा नादिर बना था कि नकल को असल कर दिखाया था। बाज़-बाज़ तख़्त आदमियों को मुग़ालता देते थे, ख़ास कर चंडूबाज़ों का तख़्त तो ऐसा बनाया था कि चंडूवालों को शर्माया। एक चंडूबाज़ ने झल्ला कर कहा—इन कुम्हारों को हमसे अदावत है। ख़ुदा इनसे समझे। एक महफ़िल की तसवीर बहुत ही ख़ूबसूरत थी। फ़र्श पर बैठे लोग नाच देख रहे हैं, बीच में मसनद बिछी है, दूल्हा तकिया लगाये बैठा है और सामने नाच हो रहा है। सबके पीछे एक आदमी हाथी पर बैठा रुपये लुटाता आता था और शोहदे गुल मचाते थे। एक-एक रुपये पर दस-दस गिरे पड़ते थे। जान पर खेलकर पिले पड़ते थे।

यह वही सुरैया बेगम हैं जो अभी कल तक मारी-मारी फिरती थीं। जिनको सारी दुनिया में कहीं ठिकाना न था, वही सुरैया बेगम आज शान से दुलहिन बनी बैठी हैं और इस धूमधाम से उनकी बारात आती है। माँ, बाप, भाई, बहन, सभी मुफ़्त में मिल गये। इस वक़्त उनके दिल में तरह-तरह के ख़याल आते थे—यहाँ किसी को मालूम न हो जाय कि यही सराय में रहती थी, इसी का नाम अलारक्खी भठियारी था, फिर तो कहीं की न रहूँ। इस ख़याल से उन्हें इतनी घबराहट हुई कि इधर दरवाज़े पर बारात आयी और उधर वह बेहोश हो गयीं। सबने दुलहिन को घेर लिया।

अरे, खैर तो है ! यह हुआ क्या, किसी ने मिट्टी पर पानी डाल कर सुँघाया । दुलहिन की माँ इधर-उधर दौड़ने लगी ।

हशमत—ऐ, यह हुआ क्या अम्माँजान ?

फ़ीरोज़ा—अभी अच्छी खासी बैठी हुई थीं । बैठे-बैठे ग़श आ गया ।

बाहर दूल्हा ने यह खबर सुनी तो अपनी महरी को बुलवाया और समझाया कि जाके पूछो, अगर ज़रूरत हो तो डॉक्टर को बुलवा लूँ । महरी ने आ कर कहा—हुजूर, अब तबियत बहाल है, मगर पसीना आ रहा है और पानी-पानी करती हैं । नवाब साहब की जान में जान आयी । बार-बार तबियत का हाल पूछते थे । जब दुलहिन की हालत दुरुस्त हो गयी तो हमजोलियों ने दिक़ करना शुरू किया ।

जानी—आखिर इस ग़श का सबब क्या था ? हाँ, अब समझी । अभी सूरत देखी नहीं और ग़श आने लगे ।

फ़ीरोज़ा—ऐ नहीं, क्या जाने अगली-पिछली कौन बात याद आ गयी ।

जानी—सूरत से तो खुशी बरसती है, वह हँसी आयी । ऐ, लो वह फिर गरदन झुका ली ।

हशमत—यहाँ तो पाँव-तले से मिट्टी निकल गयी ।

फ़ीरोज़ा—मज़ा तो जब आता कि निकाह के वक़्त ग़श आता, मियाँ को बनाते तो, कि अच्छे सब्ज़क़दम हो ।

अब सुनिए कि महल से बराबर खबरें आ रही हैं कि तबियत अच्छी है, मगर नवाब साहब को चैन नहीं आता । आखिर डॉक्टर साहब को बुलवा ही लिया । उनका महल में दाखिल होना था कि हमजोलियों ने उन पर आवाज़े कसने शुरू किये ।

एक—मुआ सूँस है कि आदमी, अच्छे भदभद को बुलाया ।

दूसरी—तोंद क्या, चार आनेवाला फ़र्रुखाबादी तरबूज़ है ।

तीसरा—तम्बाकू का पिंडा है या आदमी है ?

चौथी—कह दो, कोई अच्छा हकीम बुलावें, इस जंगली हूश की समझ में क्या खाक आयेगा ।

पाँचवीं—खुदा की मार ऐसे मुए पर !

डॉक्टर साहब कुर्सी पर बैठे, नये आदमी थे, उर्दू बाजिबी ही वाजिबी समझते थे । बोले—दारोद होते कौन जागो ?

महरी—नहीं डॉक्टर साहब, दारोद तो नहीं बतातीं, मगर देखते-देखते ग़श आ गया ।

डॉक्टर—गास कीस को बोलते ?

महरी—हुजूर मैं समझती नहीं । घास क्या !

डॉक्टर—गास किसको बोलते ? तुम लोग क्या गोल-माल करने माँगता । हम जुबान देखे ।

फ़ीरोज़ा—नौज़ ऐसा हकीम हो। डॉक्टर की दुम बना है।

जानी—कहो, नब्ज़ देखें।

डॉक्टर—नाबुज कैसा बात। हम लोग नाबुज देखना नहीं माँगता, जुबान दिखाये, जुबान, इस माफ़िक़।

डॉक्टर साहब ने मुँह खोल कर ज़बान बाहर निकाली।

फ़ीरोज़ा—मुँह काहे को घंटावेग की गड़हिया है।

जानी—अरे महरी, देखती क्या है, मुँह में धूल झोंक दे।

हशमत—एक दफ़ा फिर मुँह खोले तो मैं पंखे की डंडी हलक़ में डाल दूँ।

डॉक्टर—जिस माफिक हम जुबान दिखाया, उस माफिक हम देखना माँगता। सब माई लोग हँसी करता। जुबान दिखाने में क्या बात है।

फ़ीरोजा—नवाब साहब से कहो, पहले इसके दिमाग़ का इलाज करें।

सुरैया बेगम जब किसी तरह ज़बान दिखाने पर राज़ी न हुईं तो डॉक्टर साहब ने नब्ज़ देख कर नुस्ख़ा लिखा और चलते हुए! सुरैया का जी कुछ हलका हुआ। मगर इसी वक़्त मेहमानों के साथ उन्होंने एक ऐसी औरत को देखा जो उनसे ख़ूब वाक़िफ़ थी, वह मैके में इनके साथ बरसों रह चुकी थी। होश उड़ गये कि कहीं यह पूरा हाल सबसे कह दे तो कहीं की न रहूँ। इस औरत का नाम ममोला था। वह एक शरीर, आवाज़े कसने लगी। एक लड़के को गोद में ले कर उसके साथ खेलने लगी और बातों बातों में सुरैया बेगम को सताने लगी। हम ख़ूब पहचानते हैं। सराय में भी देखा था, महल में भी देखा था। अलारक्खी नाम था। इन फ़िक्रों ने सुरैया बेगम को और भी बेचैन कर दिया, चेहरे पर ज़र्दी छा गयी। कमरे में जा कर लेट रहीं, उधर ममोला ने भी समझा कि अगर ज़्यादा छेड़ती हूँ तो दुलहिन दुश्मन हो जायगी। चुप हो रही।

बाहर महफ़िल जमी हुई थी। दूल्हा ज्यों ही मसनद पर बैठा, एक हसीना नज़ाकत के साथ क़दम उठाती महफ़िल में आयी। यारों ने मुँह-माँगी मुराद पायी। एक बूढ़े मियाँ ने पोपले मुँह से कहा—ख़ुदा ख़ैर करें। इस पर महफ़िल भर ने क़हक़हा लगाया और वह परी भी मुसकिरा कर बोली—बूढ़े मुँह मुँहासे, इस बुढ़ौती में भी छेड़छाड़ की सूझी! आपने हँस कर जवाब दिया—बीबी, हम भी कभी जवान थे, बूढ़े हुए तो क्या, दिल तो वही है।

यह परी नाचने खड़ी हुई तो ऐसा सितम ढाया कि सारी महफिल लोट-पोट हो गयी। नौजवानों में आहिस्ता अहिस्ता बातें होने लगीं।

एक—बे अख़्तियार जी चाहता है कि इसके क़दमों पर सिर रख दूँ।

दूसरा—कल ही परसों हमारे घर न पड़ जाय तो अपना नाम बदल डालूँ, देख लेना।

तीसरा—क़सम ख़ुदा की, मैं तो इसकी गुलामी करने को हाज़िर हूँ, पूछो तो कहाँ से आयी है।

चौथा—शीन-क़ाफ़ से दुरुस्त है।

पाँचवाँ—हमसे पूछो, मुरादाबाद से आयी है।

हसीना ने सुरीली आवाज़ में एक ग़ज़ल गायी। इस ग़ज़ल ने महफ़िल को मस्त कर दिया। एक साहब की आँखों से आँसू बह चले, यह वही साहब थे जिन्होंने कहा था कि हम इसे घर डाल लेंगे। लोगों ने समझाया—भई, इस रोने-धोने से क्या मतलब निकलेगा। यह कोई शरीफ़ की बहू-बेटी तो है नहीं, हम कल ही शिप्पा लड़ा देंगे। मगर इस वक़्त तो ख़ुदा के वास्ते आँसू न बहाओ, वरना लोग हँसेंगे। उन्होंने कहा—भाई, दिल को क्या करूँ, मैं तो ख़ुद चाहता हूँ कि दिल का हाल ज़ाहिर न हो, मगर वह मानता ही नहीं तो मेरा क्या क़ुसूर है।

यह हज़रत तो रो रहे थे। और लोग उसकी तारीफ़ें कर रहे थे। एक ने कहा—यह हमारे शहर की नाक हैं। दूसरा बोला—इसमें क्या शक। आप बहुत ही मिलन-सार, नेक, ख़ुश-मिज़ाज हैं। तीसरे साहब बोले—ऐ हज़रत, दूर-दूर तक शोहरत है इनकी! अब इस शहर में जो कुछ हैं, यही हैं।

इस जलसे में दो-चार देहाती भी बैठे थे। उनको यह बातें नागवार लगीं। मुन्ने मियाँ बोले—वाह, अच्छा दस्तूर है शहर का, पतुरिया को सामने बिठा लिया।

छुट्टन—हमारे देश में अगर पतुरिया को कोई बीच में बिठाये तो हुक़्क़ा पानी बंद हो जाय।

गजराज—पतुरिया बैठे काहे को, पनही न खाय?

नवाब—जी हाँ, शहरवाले बड़े ही बेशरम होते हैं।

आग़ा—देहातियों की लियाक़त हम बेचारे कहाँ से लायें?

गजराज—हई है, हम लोग इज्ज़तदार हैं। कोई नंगे-लुच्चे नहीं हैं।

आग़ा—तो जनाब, आप शहर की मजलिस में क्यों आये?

गजराज—काहे को बुलाया, क्या हमलोग बिन बुलाये आये?

आग़ा—अच्छा, अब ग़ुस्से को थूक दीजिए।

जब ये लोग ज़रा ठंडे हुए, तो उस हसीना ने एक फ़ारसी ग़ज़ल गायी, इस पर एक कमसिन नवाबज़ादे ने जो पंद्रह-सोलह साल से ज़्यादा न था, ऊँची आवाज़ में कहा—वाह जानमन, क्यों न हो! इस लड़के के बाप भी महफ़िल में बैठे थे, मगर इस लड़के को ज़रा भी शरम न आयी।

इसके बाद तायफ़ा बदली गयी। यह आ कर महफ़िल में बैठ गयी और इसके पीछे साज़िंदे भी बैठ गये।

नवाब—ऐं, ख़ैरियत तो है? ऐ साहब, नाचिए-गाइए।

हसीना—कल से तबियत ख़राब है। दो-एक चीज़ें आपकी ख़ातिर से कहिए तो गा दूँ।

नवाब—मज़ा किरकिरा कर दिया, तुम्हारे नाच की बड़ी तारीफ़ सुनी है।

हसीना—क्या अर्ज़ करूँ। आज तो नाचने के क़ाबिल नहीं हूँ।

यह कह कर, उसने एक ठुमरी शुरू कर दी। इधर बड़े नवाब साहब महल में गये और जहाँ दुलहिन का पलंग था, वहाँ बैठे। खवास ने चिकनी डली, इलायची, गिलौरियाँ पेश कीं। इत्र की शीशियाँ सामने रखीं। बड़े नवाब साहब हुक़्क़ा पीने लगे।

सुरैया बेगम की माँ परदे की आड़ से बोलीं—आदाब अर्ज़ है।

बड़े नवाब—बंदगी, खुदा करे, इसकी औलाद देखो।

बेगम—खुदा आपकी दुआ क़बूल करे। शुक्र है कि इस शादी की बदौलत आपकी ज़ियारत हुई।

बड़े नवाब—दुलहिन से पूछूँ। क्यों बेटी, मेरे लड़के से तुम्हारा निकाह होगा। तुम इसे मंजूर करती हो?

सुरैया बेगम ने इसका कुछ जवाब न दिया। बड़े नवाब साहब ने कई मरतबा वही सवाल पूछा, मगर दुलहिन ने सिर उपर न उठाया। आखिर जब हशमत बहू ने आ कर कहा—क्या सबको दिक़ करती हो, जी तो चाहता होगा कि बेनिकाह ही चल दो, मगर नखरों से बाज़ नहीं आती हो। तब सुरैया बेगम ने आहिस्ता से कहा—हूँ।

बड़ी बेगम—आपने सुना?

बड़े नवाब—जी नहीं, ज़रा भी नहीं सुना।

बड़ी बेगम ने कहा—आपलोग ज़रा खामोश हो जायँ तो नवाब साहब लड़की की आवाज़ सुन लें। जब सब खामोश हो गयीं तो दुलहिन ने फिर आहिस्ता से कहा—हूँ।

उधर नौशा के दोस्त उससे मजाक़ कर रहे थे।

एक—आपसे जो पूछा जाय कि निकाह मंजूर है या नहीं, तो आप घंटे भर तक जवाब न दीजिएगा।

दूसरा—और नहीं तो क्या, हाँ कह देंगे?

तीसरा—जब लोग हाथ-पैर जोड़ने लगें, तब आहिस्ते से कहना, मंजूर है।

चौथा—ऐसा न हो, तुम फ़ौरन मंजूर कर लो और उधरवाले हमारी हँसी उड़ायें।

दूल्हा—दूल्हा तो नहीं बने मगर बरातें तो बहुत देखी हैं। अगर आप लोगों की यही मरज़ी है तो मैं दो घंटे में मंजूर करूँगा।

अब मेहर पर तक़रार होने लगी। दुलहिन के भाई ने कहा—मेहर चार लाख से कम न होगा। बड़े नवाब साहब बोले—भाई, और भी बढ़ा दो, चार लाख मेरी तरफ़ से, पूरे आठ लाख का मेहर बँधे।

निकाह के बाद किश्तियाँ आयीं, किसी में दुशाला, किसी में भारी-भारी हार, तश्तरियों में चिकनी डली, इलायची, पान, शीशियों में इत्र। किसी किश्ती में मिठाइयाँ और मिश्री के कूजे। जब क़ाज़ी साहब रुखसत हो गये तो दूल्हा ने पाँच अशर्फ़ियाँ नज़र दिखायीं। नवाब साहब बाहर आये। थोड़ी देर के बाद महल से शरबत आया। नवाब साहब ने इक्कीस अशर्फ़ियाँ दीं। दुलहिन के खिदमतगार ने पाँच अशर्फ़ियाँ पायीं। पहले तो दुशाला माँगता रहा, मगर लोगों के समझाने से इनाम ले लिया।

दुलहिन के लिए जूठा शरबत भेजा गया। महफ़िलवालों ने शरबत पिया, हार गले में डाला, इत्र लगाया और पान खा कर गाना सुनने लगे। इतने में अंदर से आदमी दूल्हा को बुलाने आया। दूल्हा यहाँ से खुश-खुश चला। जब ड्योढ़ी में पहुँचा तो उसकी बहनों ने आँचल डाला और ले जा कर दुलहिन के मसनद पर बिठा दिया। डोमिनियों ने रीत-रस्म शुरू की! पहले आरसी की रस्म अदा की।

फ़ीरोज़ा—कहिए, 'बीबी, मुँह खोलो! मैं तुम्हारा गुलाम हूँ।'

नवाब—बीबी मुँह खोलो, मैं तुम्हारे गुलाम का गुलाम हूँ।

हशमत—जब तक हाथ न जोड़ोगे, मुँह न खोलेंगी।

मुबारक महल—ऊपर के दिल से गुलाम बनते हो, दिल से कहो तो आँखें खोल दें।

नवाब—या खुदा, अब और क्योंकर कहूँ, बीबी तुम्हारा गुलाम हूँ। खुदा के लिए ज़रा सूरत दिखा दो।

दूल्हा ने एक दफ़ा झूठ-मूठ गुल मचा दिया, वह आँखें खोलीं, सखियों ने कहा—झूठ कहते हो, कौन कहता है, आँख खोली।

डोमिनी—बेगम साहब, अब आँखें खोलिए, बेचारे गुलाम बनते-बनते थक गये। आप फ़क़त आँख खोल दें। वह आपको देखें, आप चाहे उन्हें न देखें।

फ़ीरोज़ा—वाह, दूल्हा तो चाहे पीछे देखे, यह पहले ही घूर लेंगी।

आखिर सुरैया बेगम ने ज़रा सिर उठाया और नवाब साहब से चार आँखें होते ही शरमा कर गर्दन नीचे कर ली।

नवाब—कहिए, अब आँखें खोलीं या अब भी नहीं खोलीं?

फ़ीरोज़ा—अभी नाहक़ आँखें खोलीं, जब क़दमों पर टोपी रखते तब आँखें खोलतीं।

दूल्हा ने इक्कीस पान का बीड़ा खाया, पायजामे में एक हाथ से इज़ारबंद डाला और तब सास को सलाम किया। सास ने दुआ दी और गले में मोतियों का हार डाल दिया। अब मिश्री चुनवाने की रस्म अदा हुई। दुलहिन के कंधे, घुटने, हाथ वगैरह पर मिश्री के छोटे-छोटे टुकड़े रखे गये और दूल्हा ने झुक-झुकके खाये। सुरैया बेगम को गुदगुदी मालूम हो रही थी। सालियाँ दूल्हा को छेड़ रही थीं। किसी ने चुटकी ली, किसी ने गुद्दी पर हाथ फेरा, यह बेचारे इधर-उधर देख कर रह जाते थे।

जानी—फ़ीरोज़ा बेगम जैसी चरबाँक साली भी न देखी होगी।

नवाब—एक चरबाँक हो तो कहूँ, यहाँ तो जो है, आफ़त का परकाला है और फ़ीरोज़ा बेगम का तो कहना ही क्या, सवार को घोड़े पर से उतार लें।

फ़ीरोज़ा—क्या तारीफ़ की है, वाह-वाह!

जानी—क्या कुछ झूठ है? तुम्हारी ज़बान क्या, कतरनी है!

फ़ीरोज़ा—और तुम अपनी कहो, दूल्हा को उसी वक़्त से घूर रही हो। उनकी नज़र भी पड़ती है तुम्हीं पर।

जानी—फिर पड़ा ही चाहे, पहले अपनी सूरत तो देखो।

फ़ीरोज़ा—सुरैया बेगम गाती खूब हैं और बताने में तो उस्ताद हैं, कोई कथक इनके सामने क्या नाचेगा, कहो एक घुँघरू बोले, कहो दोनों बोलें और तलवार पर तो ऐसा नाचती हैं कि बस, कुछ न पूछो।

जानी—सुना, किसी कथक ने दिल लगाके नाचना सिखाया है। नवाब साहब की चाँदी है, रोज़ मुफ़्त का नाच देखेंगे।

हशमत—भई, इतनी बेहयाई अच्छी नहीं, हँसी-दिल्लगी का भी एक मौक़ा होता है।

फ़ीरोज़ा—हमारी समझ ही में नहीं आता कि वह कौन सा मौक़ा होता है, बरात के दिन न हँसें-बोलें तो फिर किस दिन हँसें-बोलें?

इस तरह हँसी-दिल्लगी में रात कट गयी। सबेरे चलने की तैयारियाँ होने लगीं। दुलहिन की माँ-बहनें सब की सब रोने लगीं। माँ ने समधिन से कहा—बहन, लौंडी देती हूँ, इस पर मिहरबानी की निगाह रहे। वह बोलीं—क्या कहती हो? औलाद से ज्यादा है। जिस तरह अपने लड़कों को समझती हूँ उसी तरह इसको भी समझूँगी। इसके बाद दूल्हा ने दुलहिन को गोद में उठा कर सुखपाल पर सवार किया। समधिनें गले मिल कर रुख़सत हुईं।

जब बरात दूल्हा के घर पर आयी, तो एक बकरा चढ़ाया गया, इसके बाद कहारियाँ पालकी को उठा कर जनानी ड्योढ़ी पर ले गयीं। तब दूल्हा की बहन ने आ कर दुलहिन के पाँव दूध से धोये और तलवे में चाँदी के वरक़ लगाये। इसके बाद दूल्हा ने दुलहिन के दामन पर नमाज़ पढ़ी। फिर खीर आयी, पहले दुलहिन के हाथ पर रख कर दूल्हा को खिलायी गयी, फिर दूल्हा के हाथ पर खीर रखी गयी और दुलहिन से कहा गया कि खाओ, तो वह शरमाने लगी। आख़िर दूल्हा की बहनों ने दूल्हा का हाथ दुलहिन के मुँह की तरफ़ बढ़ा दिया। इस तरह यह रस्म अदा हुई, फिर मुँह दिखावे की रस्म पूरी हुई और दूल्हा बाहर आया।

१८

शाहज़ादा हुमायूँ फ़र की मौत जिसने सुनी, कलेजा हाथों से थाम लिया। लोगों का ख़याल था कि सिपहआरा यह सदमा बरदाश्त न कर सकेगी और सिसक-सिसक कर शाहज़ादे की याद में जान दे देगी। घर में किसी की हिम्मत नहीं पड़ती थी कि सिपहआरा को समझाये या तसकीन दे, अगर किसी ने डरते-डरते समझाया भी तो वह और रोने लगती और कहती—क्या अब तुम्हारी यह मर्ज़ी है कि मैं रोऊँ भी न, दिल ही में घुट-घुट कर मरूँ। दो-तीन दिन तक वह क़ब्र पर जा कर फूल चुनती रही, कभी क़ब्र को चूमती, कभी ख़ुदा से दुआ माँगती कि ऐ ख़ुदा, शाहज़ादे बहादुर की सूरत दिखा दे, कभी आप ही आप मुसकिराती, कभी क़ब्र की चट-चट बलाएँ लेती। एक आँख से हँसती, एक आँख से रोती। चौथे दिन वह अपनी बहनों के साथ वहाँ गयी। चमन में टहलते टहलते उसे आज़ाद की याद आ गयी। हुस्नआरा से बोली—बहन, अगर दूल्हा भाई आ जायँ तो हमारे दिल को तसकीन हो। ख़ुदा ने चाहा तो वह दो-चार दिन में आया ही चाहते हैं।

हुस्नआरा—अख़बारों से तो मालूम होता है कि लड़ाई ख़तम हो गयी।

सिपहआरा—कल मैं अम्माँजान को भी लाऊँगी।

एक उस्तानी जी भी उनके साथ थीं। उस्तानी जी से किसी फ़क़ीर ने कहा था कि जुमेरात के दिन शाहज़ादा जी उठेगा। और किसी को तो इस बात का यक़ीन न आता था, मगर उस्तानी जी को इसका पूरा यक़ीन था। बोलीं—कल नहीं, परसों बेगम साहब को लाना।

सिपहआरा—उस्तानी जी, अगर मैं यहीं दस-पाँच दिन रहूँ तो कैसा हो?

उस्तानी—बेटा, तुम हो किस फ़िक्र में! जुमेरात के दिन देखो तो, अल्लाह क्या करता है, परसों ही तो जुमेरात है, दो दिन तो बात करते कटते हैं।

सिपहआरा—ख़ुशी का तो एक महीना भी कुछ नहीं मालूम होता, मगर रंज की एक रात पहाड़ हो जाती है। ख़ैर, दो दिन और सही, शायद आप ही का कहना सच निकले।

हुस्नआरा—उस्तानी जी जो कहेंगी, समझ-बूझ कर कहेंगी। शायद अल्लाह को इस ग़म के बाद ख़ुशी दिखानी मंजूर हो।

सिपहआरा ने क़ब्र पर चढ़ाने के लिए फूल तोड़ते हुए कहा—फूल तो दो-एक दिन हँस भी लेते हैं, मगर कलियाँ बिन खिले मुरझा जाती हैं, उन पर हमें बड़ा तरस आता है।

उस्तानी—जो खिले वे भी मुरझा गये, जो नहीं खिले वे भी मुरझा गये। इनसान का भी यही हाल है, आदमी समझता है कि मौत कभी आयेगी ही नहीं। मकान बनवाएगा तो सोचेगा कि हज़ार बरस तक इसकी बुनियाद ऐसी ही रहे; लेकिन

यह ख़बर ही नहीं कि 'सब ठाट पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बनजारा।' सबसे अच्छे वे लोग हैं जिनको न ख़ुशी से ख़ुशी होती है, न ग़म से ग़म।

हुस्नआरा—क्यों उस्तानी जी, आप को इस फ़क़ीर की बात का यक़ीन है?

उस्तानी—अब साफ़-साफ़ कह दूँ, आज के दूसरे दिन हुमायूँ फ़र यहाँ न बैठे हों तो सही।

हुस्नआरा—तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर, कल भी कुछ दूर नहीं है, कल के बाद ही तो परसों आयेगा।

सिपहआरा—बाजीजान, मुझे तो ज़रा भी यक़ीन नहीं आता। भला आज तक किसी ने यह भी सुना है कि मुर्दा क़ब्र से निकल आया?

यह बात होती ही थी कि क़ब्र के पास से हँसी की आवाज़ आयी, सबको हैरत थी कि यह क़हक़हा किसने लगाया। किसी की समझ में यह बात न आयी।

दस बजते-बजते सब की सब घर लौट आयीं। यहाँ पहिले ही से एक शाह साहब बैठे हुए थे। चारों बहनों को देखते ही महरी ने आ कर कहा—हुज़ूर, यह बड़े पहुँचे हुए फ़क़ीर हैं, यह ऐसी बातें कहते हैं, जिनसे मालूम होता है कि शाहज़ादा साहब के बारे में लोगों को धोखा हुआ था। वह मरे नहीं हैं, बल्कि ज़िंदा हैं। उस्तानी जी ने शाह साहब को अंदर बुलाया और बोलीं—आपको इस वक़्त बड़ी तकलीफ़ हुई, मगर हम ऐसी मुसीबत में गिरफ़्तार हैं कि ख़ुदा सातवें दुश्मन को भी न दिखाये।

शाह साहब—ख़ुदा की कारसाज़ी में दख़ल देना छोटा मुँह बड़ी बात है। मगर मेरा दिल गवाही देता है कि शाहज़ादा हुमायूँ फ़र ज़िंदा हैं। यों तो यह बात मुहाल मालूम होती है; लेकिन इनसान क्या, और उसकी समझ क्या, इतना तो किसी को मालूम ही नहीं कि हम कौन हैं, फिर कोई ख़ुदा की बातों को क्या समझेगा?

उस्तानी—आप अभी तो यहीं रहेंगे?

शाह साहब—मैं उस वक़्त यहाँ से जाऊँगा, जब दूल्हा के हाथ में दुलहिन का हाथ होगा।

उस्तानी—मगर दुलहिन को तो इस बात का यक़ीन ही नहीं आता। आप कुछ कमाल दिखायें तो यक़ीन आये।

शाह साहब—अच्छा तो देखिए—

शाह साहब ने थोड़ी सी उरद मँगवायी और उस पर कुछ पढ़ कर ज़मीन पर फेंक दी। आध घंटा भी न गुज़रा था कि वहाँ की ज़मीन फट गयी।

बड़ी बेगम—अब इससे बढ़ कर क्या कमाल हो सकता है।

सिपहआरा—अम्माँजान, अब मेरा दिल गवाही देता है कि शायद शाह साहब ठीक कहते हों! (हुस्नआरा से) बाजी, अब तो आप फ़क़ीरों के कमाल की क़ायल हुईं।

उस्तानी—हाँ बेटा, इसमें शक क्या है। फ़क़ीरों का कोई आज तक मुक़ाबिला

कर सका है ? वह लोग बादशाही की क्या हक़ीक़त समझते हैं !

शाह साहब—फ़क़ीरों पर शक उन्हीं लोगों को होता है जो कामिल फ़क़ीरों की हालत से वाक़िफ़ नहीं, वरना फ़क़ीरों ने मुर्दों को ज़िंदा कर दिया है, मंज़िलों से आपस में बातें की हैं और आगे का हाल बता दिया है।

बेगम साहब ने अपने रिश्तेदारों को बुलाया और यह खबर सुनायी। इस पर लोग तरह-तरह के शुबहे करने लगे। उन्हें यक़ीन ही न था कि मुर्दा कभी ज़िंदा हो सकता है।

दूसरे दिन बेगम साहब ने खूब तैयारियाँ कीं। घर भर में सिर्फ़ हुस्नआरा के चेहरे से रंज ज़ाहिर होता था, बाक़ी सब खुश थे कि मुँह-माँगी मुराद पायी। हुस्नआरा को खौफ़ था, कहीं सिपहआरा की जान के लाले न पड़ जायँ।

तमाम शहर में यह खबर मशहूर हो गयी और जुमेरात को चार घड़ी दिन रहे से मेला जमा होने लगा। वह भीड़ हो गयी कि कंधे से कंधा छिलता था। लोगों में ये बातें हो रही थीं—

एक—मुझे तो यक़ीन है कि शाहज़ादे आज ज़िंदा हो जायँगे।

दूसरा—भला फ़क़ीरों की बात कहीं ग़लत होती है!

तीसरा—और ऐसे कामिल फ़क़ीर की!

चौथा—विंध्याचल पहाड़ की चोटी पर बरसों नीम की पत्तियाँ उबाल कर नमक के साथ खायी हैं। क़सम खुदा की, इसमें ज़रा झूठ नहीं।

पाँचवाँ—सुलतान अली की बहू तीन दिन तक खून थूका कीं, वैद्य भी आये, हकीम भी आये, पर किसी से कुछ न हुआ, तब मैं जाके इन्हीं शाह साहब को बुला लाया। जा कर एक नज़र उसको देखा और बोले, क्या ऐसा हो सकता है कि सब लोग वहाँ से हट जायँ, सिर्फ़ मैं और यह लड़की रहे। लड़की के बाप को शाह साहब पर पूरा भरोसा था। सब आदमियों को हटाने लगा। यह देख कर शाह साहब हँसे और कहा, इस लड़की को खून नहीं आता! यह तो बिलकुल अच्छी है। यह कह कर शाह साहब ने लड़की के सिर पर हाथ रखा, तब से आज तक उसे खून नहीं आया। फ़क़ीरों ही से दुनिया क़ायम है।

इतने में खबर हुई कि दुलहिन घर से रवाना हो गयी हैं। तमाशा देखनेवालों की भीड़ और भी ज़्यादा हो गयी, उधर सिपहआरा बेगम ने घर से बाहर पाँव निकाला तो बड़ी बेगम ने कहा—खुदा ने चाहा तो आज फ़तह है, अब हमें ज़रा भी शक नहीं रहा।

सिपहआरा—अम्माँजान, बस अब इधर या उधर, या तो शाहज़ादे को लेके आऊँगी, या वहीं मेरी भी क़ब्र बनेगी।

बेगम—बेटी, इस वक़्त बदसगुनी की बातें न करो।

सिपहआरा—अम्माँजान, दूध तो बख्श दो; यह आखिरी दीदार है। बहन, कहा-सुना माफ़ करना, खुदा के लिए मेरा मातम न करना। मेरी तसवीर आबनूस

के संदूक में है, जब तुम हँसो-बोलो तो मेरी तसवीर भी सामने रख लिया करना। ऐ अम्माँजान, तुम रोती क्यों हो ?

बहार बेगम—कैसी बातें करती हो सिपहआरा, वाह !

रूहअफ़ज़ा—बहन, जो ऐसा ही है तो न जाओ।

बड़ी बेगम—हुस्नआरा, बहन को समझाओ।

हुस्नआरा की रोते-रोते हिचकी बँध गयी। मुश्किल से बोलीं—क्या समझाऊँ।

सिपहआरा—अम्माँजान, आपसे एक अर्ज़ है, मेरी क़ब्र भी शाहज़ादे की कब्र के पास ही बनवाना। जब तक तुम अपने मुँह से न कहोगी, मैं क़दम बाहर न रखूँगी।

बड़ी बेगम—भला बेटी, मेरे मुँह से यह बात निकलेगी ! लोगो, इसको समझाओ, इसे क्या हो गया है।

उस्तानी—आप अच्छा कह दें, बस।

सिपहआरा—मैं अच्छा-उच्छा नहीं जानती, जो मैं कहूँ वह कहिए।

उस्तानी—फिर दिल को मज़बूत करके कह दो साहब।

बड़ी बेगम—ना, हमसे न कहा जायगा।

हुस्नआरा—बहन, जो तुम कहती हो वही होगा। अल्लाह वह घड़ी न दिखाये, बस अब हठ न करो।

सिपहआरा—मेरी कब्र पर कभी-कभी आँसू बहा लिया करना बाजीजान। मैं सोचती हूँ कि तुम्हारा दिल कैसे बहलेगा।

यह कह कर सिपहआरा बहनों से गले मिली और सब की सब रवाना हुईं। जब सवारियाँ किले के फाटक पर पहुँचीं तो शाह साहब ने हुक्म दिया, कि दुलहिन घोड़े पर सवार हो कर अंदर दाखिल हो। बेगम साहब ने हुक्म दिया, घोड़ा लाया जाय। सिपहआरा घोड़े पर सवार हुई और घोड़े को उड़ाती हुई क़ब्र के पास पहुँच कर बोली—अब क्या हुक्म होता है ? खुद आओगे या हमको भी यहीं सुलाओगे। हम हर तरह राज़ी हैं।

सिपहआरा का इतना कहना था कि सामने रोशनी नज़र आयी। ऐसी तेज़ रोशनी थी कि सबकी नज़र झपक गयी और एक लहमे में शाहज़ादा हुमायूँ फ़र घोड़े पर सवार आते हुए दिखायी दिये। उन्हें देखते ही लोगों ने इतना गुल मचाया कि सारा क़िला गूँज उठा। सबको हैरत थी कि यह क्या माजरा है। वह मुर्दा जिसकी क़ब्र बन गयी हो और जिसको मरे हुए हफ़्तों गुज़र गये हों, वह क्यों कर जी उठा !

हुस्नआरा और शाहज़ादे की बहन खुरशेद में बातें होने लगीं—

हुस्नआरा—क्या कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता !

खुरशेद—हमारी अक़्ल भी कुछ काम नहीं करती।

हुस्नआरा—तुम अच्छी तरह कह सकती हो कि हुमायूँ फ़र यही है ?

खुरशेद—हाँ साहब, यही हैं। यही मेरा भाई है।

और लोगों को भी यही हैरत हो रही थी। अक़सर आदमियों को यक़ीन ही नहीं आता था कि यह शाहज़ादा हैं!

एक आदमी—भाई, ख़ुदा की ज़ात से कोई बात बईद नहीं। मगर यह सारी क़रामात शाह साहब की है।

तीसरा—जभी तो दुआ में इतनी ताक़त है।

९९

नवाब वजाहत हुसैन सुबह को जब दरबार में आये तो नींद से आँखें झुकी पड़ती थीं। दोस्तों में जो आता था, नवाब साहब को देख कर पहले मुसकिराता था। नवाब साहब भी मुसकिरा देते थे। इन दोस्तों में रौनक़दौला और मुबारक हुसैन बहुत बेतकल्लुफ़ थे। उन्होंने नवाब साहब से कहा—भाई, आज चौथी के दिन नाच न दिखाओगे ? कुछ ज़रूरी है कि जब कोई तायफ़ा बुलवाया जाय तो बदी ही दिल में हो ? अरे साहब, गाना सुनिए, नाच देखिए, हँसिए, बोलिए, शादी को दो दिन भी नहीं हुए और हुज़ूर मुल्ला बन बैठे। मगर यह मौलवीपन हमारे सामने न चलने पायेगा। और दोस्तों ने भी उनकी हाँ में हाँ मिलायी। यहाँ तक कि मुबारक हुसैन जा कर कई तायफ़े बुला लाये, गाना होने लगा। रौनक़दौला ने कहा—कोई फ़ारसी ग़ज़ल कहिए तो खूब रंग जमे।

हसीना—रंग जमाने की जिसको ज़रूरत हो वह यह फ़िक्र करे, यहाँ तो आके महफ़िल में बैठने भर की देर है। रंग आप ही आप जम जायगा। गा कर रंग जमाया तो क्या जमाया ?

रौनक़—हुस्न का भी बड़ा ग़रूर होता है, क्या कहना !

हसीना—होता ही है। और क्यों न हो, हुस्न से बढ़ कर कौन दौलत है ?

बिगड़े दिल—अब आपस ही में दाना बदलौवल होगा या किसी की सुनोगी भी, अब कुछ गाओ।

रौनक़—यह ग़ज़ल शुरू करो—

बहार आयी है भर दे बादये गुलगूँ से पैमाना,
रहे साक़ी तेरा लाखों बरस आबाद मैखाना।

इतने में महलसरा से दूल्हा की तलबी हुई। नवाब साहब महल में गये तो दुलहिन और दूल्हा को आमने-सामने बैठाया गया। दस्तरख्वान बिछा, चाँदी की लगन रखी गयी, डोमिनियाँ आयीं और उन्होंने दुलहिन के दोनों हाथों में दूल्हा के हाथ से तरकारी दी, फिर दुलहिन के हाथों से दूल्हा को तरकारी दी, तब गाना शुरू किया।

अब तरकारियाँ उछलने लगीं। दूल्हा को साली ने नारंगी खींच मारी, हशमत बहू और जानी बेगम ने दूल्हा को बहुत दिक़ किया। आख़िर दूल्हा ने भी झल्ला कर एक छोटी सी नारंगी फ़ीरोज़ा बेगम को ताक कर लगायी।

जानी बेगम—तो झेंप काहे की है। शरमाती क्या हो ?

मुबारक महल—हाँ, शरमाने की क्या बात है, और है भी तो तुमको शर्म काहे की। शरमाये तो वह जिसको कुछ हया हो।

हशमत बहू—तुम भी फेंको फ़ीरोज़ा बहन ! तुम तो ऐसी शरमायीं कि अब हाथ ही नहीं उठता।

फ़ीरोज़ा—शरमाता कौन है, क्योंजी फिर मैं भी हाथ चलाऊँ ?

दूल्हा—शौक़ से हुज़ूर हाथ चलायें, अभी तक तो ज़बान ही चलती थी।

फ़ीरोज़ा—अब क्या जवाब दूँ, जाओ छोड़ दिया तुमको।

अब चारों तरफ़ से मेवे उछलने लगे। सब की सब दूल्हे पर ताक-ताक कर निशाना मारती थीं। मगर दूल्हा ने बस एक फ़ीरोज़ा को ताक लिया था, जो मेवा उठाया, उन्हीं पर फेंका। नारंगी पर नारंगी पड़ने लगी।

थोड़ी देर तक चहल-पहल रही।

फ़ीरोज़ा—ऐसे ढीठ दूल्हा भी नहीं देखे।

दूल्हा—और ऐसी चंचल बेगम भी नहीं देखी। अच्छा यहाँ इतनी हैं, कोई कह दे कि तुम जैसी शोख़ और चंचल औरत किसी ने आज तक देखी है ?

फ़ीरोज़ा—अरे, यह तुम हमारा नाम कहाँ से जान गये साहब ?

दूल्हा—आप मशहूर औरत हैं या ऐसी-वैसी। कोई ऐसा भी है जो आपको न जानता हो ?

फ़ीरोज़ा—तुम्हें क़सम है, बताओ, हमारा नाम कहाँ से जान गये ?

मुबारक महल—बड़ी ढीठ हैं। इस तरह बातें करती हैं, जैसे बरसों की बेतक़ल्लुफ़ी हो।

फ़ीरोज़ा—ऐ तो तुमको इससे क्या, इसकी फ़िक्र होगी तो हमारे मियाँ को होगी, तुम काहे को काँपती जाती हो।

दूल्हा—आपके मियाँ से और हमसे बड़ा याराना है।

फ़ीरोज़ा—याराना नहीं वह हैं। वह बेचारे किसी से याराना नहीं रखते, अपने काम से काम है।

दूल्हा—भला बताओ तो, उनका नाम क्या है। नाम लो तो जानें कि बड़ी बेतक़ल्लुफ़ हो।

फ़ीरोज़ा—उनका नाम, उनका नाम है नवाब वजाहत हुसैन।

दूल्हा—बस, अब हम हार गये, ख़ुदा की क़सम, हार गये।

मुबारक महल—इनसे कोई जीत ही नहीं सकता। जब मर्दों से ऐसी बेतक़ल्लुफ़ हैं तो हम लोगों की बात ही क्या है, मगर इतनी शोख़ी नहीं चाहिए।

फ़ीरोज़ा—अपनी-अपनी तबीयत, इसमें भी किसी का इजारा है।

दूल्हा—हम तो आपसे बहुत ख़ुश हुए, बड़ी हँस-मुख हो। ख़ुदा करे, रोज़ दो-दो बातें हो जाया करें।

जब सब रस्में हो चुकीं तो और औरतें रुख़सत हुईं। सिर्फ़ दूल्हा और दुलहिन रह गये।

नवाब—फ़ीरोज़ा बेगम तो बड़ी शोख़ मालूम होती हैं। बाज़-बाज़ मौक़े पर मैं शरमा जाता था, पर वह न शरमाती थीं। जो मेरी बीबी ऐसी होती तो मुझसे दम भर न बनती। ग़ज़ब ख़ुदा का ! ग़ैर-मर्द से इस बेतक़ल्लुफ़ी से बातें करना बुरा है।

तुमने तो पहले इन्हें काहे को देखा होगा।

सुरैया—जैसे मुफ़्त की माँ मिल गयी और मुफ्त की बहनें बन बैठीं, वैसे ही यह भी मुफ्त मिल गयीं।

नवाब—मुझे तो तुम्हारी माँ पर हँसी आती थी कि बिलकुल इस तरह पेश आती थीं जैसे कोई खास अपने दामाद के साथ पेश आता है।

सुरैया—आप भी तो फ़ीरोज़ा बेगम को खूब घूर रहे थे।

नवाब—क्यों मुफ़्त में इलज़ाम लगाती हो, भला तुमने कैसे देख लिया?

सुरैया—क्यों? क्या मुझे कम सूझता है?

नवाब—गरदन झुकाये दुलहिन बनी तो बैठी थीं, कैसे देख लिया कि मैं घूर रहा था! और ऐसी खूबसूरत भी तो नहीं हैं।

सुरैया—मुझसे खुद उसने क़समें खा कर यह बात कही। अब सुनिए, अगर मैंने सुन पाया कि आपने किसी से दिल मिलाया, या इधर-उधर सैर-सपाटे करने लगे तो मुझसे दम भर भी न बनेगी।

नवाब—क्या मजाल, ऐसी बात है भला!

सुरैया—हाँ, खूब याद आया, भूल ही गयी थी। क्यों साहब, यह नारंगियाँ खींच मारना क्या हरकत थी? उनकी शोखी का ज़िक्र करते हो और अपनी शरारत का हाल नहीं कहते।

नवाब—जब उसने दिक़ किया तो मैं भी मजबूर हो गया।

सुरैया—किसने दिक़ किया? वह भला बेचारी क्या दिक़ करती तुमको! तुम मर्द और वह औरतज़ात।

नवाब—अजी, वह सवा मर्द है। मर्द उसके सामने पानी भरे।

सुरैया—तुम भी छटे हुए हो!

उसी कमरे में कुछ अखबार पड़े थे, सुरैया बेगम की निगाह उन पर पड़ी तो बोलीं—इन अखबारों को पढ़ते-पढ़ाते भी हो या यों ही रख छोड़े हैं।

नवाब—कभी-कभी देख लेता हूँ। यह देखो, ताज़ा अखबार है। इसमें आज़ाद नाम के एक आदमी की खूब तारीफ़ छपी है।

सुरैया—ज़रा मुझे तो देना, अभी दे दूँगी।

नवाब—पढ़ रहा हूँ, ज़रा ठहर जाओ।

सुरैया—और हम छीन लें तो! अच्छा ज़ोर-ज़ोर से पढ़ो, हम भी सुनें।

नवाब—उन्होंने तो लड़ाई में एक बड़ी फ़तह पायी है।

सुरैया—सुनाओ-सुनाओ। खुदा करें, वह सुर्खरू हो कर आयें।

नवाब—तुम इनको कहाँ से जानती हो, क्या कभी देखा है।

सुरैया—वाह, देखने की अच्छी कही। हाँ, इतना सुना है कि तुर्कों की मदद करने के लिए रूम गये थे।

१००

शाहज़ादा हुमायूँ फ़र के जी उठने की ख़बर घर-घर मशहूर हो गयी। अख़बारों में इसका ज़िक्र होने लगा। एक अख़बार ने लिखा, जो लोग इस मामले में कुछ शक करते हैं उन्हें सोचना चाहिए कि ख़ुदा के लिए किसी मुर्दे को जिला देना कोई मुश्किल बात नहीं। जब उनकी माँ और बहनों को पूराय क़ीन है तो फिर शक की गुंज़ाइश नही रहती।

दूसरे अख़बार ने लिखा......हम देखते हैं कि सारा ज़माना दीवाना हो गया है। अगर सरकार हमारा कहना माने तो हम उसको सलाह देंगे कि सबको एक सिरे से पागलख़ाने भेज दे। ग़ज़ब ख़ुदा का, अच्छे-अच्छे पढ़े आदमियों को पूरा यक़ीन है कि हुमायूँ फ़र जिंदा हो गये। हम इनसे पूछते हैं, यारो, कुछ अक़्ल भी रखते हो। कहीं मुर्दे भी ज़िंदा होते हैं? भला कोई अक़्ल रखनेवाला आदमी यह बात मानेगा कि एक फ़क़ीर की दुआ से मुर्दा जी उठा। क़ब्र बनी की बनी ही रही और हुमायूँ फ़र बाहर मौजूद हो गये। जो लोग इस पर यक़ीन करते हैं उनसे ज़्यादा अहमक़ कोई नहीं। हम चाहते हैं कि सरकार इस मामले में पूरी तहक़ीक़ात करे। बहुत मुमकिन है कि कोई आदमी शाहज़ादी बेगम को बहका कर हुमायूँ फ़र बन बैठा हो। जिसके मानी यह हैं कि वह शाहज़ादी बेगम की जायदाद का मालिक हो गया।

ज़िले के हुक्काम को भी इस मामले में शक पैदा हुआ। कलक्टर ने पुलिस के कप्तान को बुला कर सलाह की कि हुमायूँ फ़र से मुलाक़ात की जाय। यह फ़ैसला करके दोनों घोड़े पर सवार हुए और दन से शाहज़ादी बेगम के मकान पर जा पहुँचे। हुमायूँ फ़र के भाई ने सबसे हाथ मिलाया और इज़्ज़त के साथ बैठाया। ज़नाने में ख़बर हुई तो शाहज़ादी बेगम ने कहा—हम शाह साहब के हुक्म के बग़ैर हुमायूँ फ़र को बाहर न जाने देंगे।

लेकिन जब शाह साहब से पूछा गया तो उन्होंने साफ़ कह दिया कि हुमायूँ फ़र महलसरा से बाहर नहीं निकल सकते। वह बाहर आये और मैंने अपना रास्ता लिया। हाँ, साहब को जो कुछ पूछना हो, लिख कर पूछ सकते हैं। आख़िर हुमायूँ फ़र ने साहब के नाम पर एक रुक़्क़ा लिख कर भेजा। साहब ने अपनी जेब से हुमायूँ फ़र का एक पुराना ख़त निकाला और दोनों ख़तों को एक सा पा कर बोले—अब तो मुझे भी यक़ीन आ गया कि यह शाहज़ादा हुमायूँ फ़र ही हैं, मगर समझ में नहीं आता, वह फ़क़ीर क्यों उन्हें हमसे मिलने नहीं देता। आख़िर उन्होंने हुमायूँ फ़र के भाई से पूछा, आपको ख़ूब मालूम है कि हुमायूँ फ़र यही हैं? लड़का हँस कर बोला—आप को यक़ीन ही नहीं आता तो क्या किया जाय, आप ख़ुद चल कर देख लीजिए।

शाहज़ादी बेगम ने जब देखा कि हुक्काम टाले न टलेंगे तो उन्होंने शाहज़ादा को एक कमरे में बैठा दिया। हुक्काम बरामदे में बैठाये गये। साहब ने पूछा—वेल शाहज़ादा हुमायूँ फ़र, यह सब क्या बात है?

शाहज़ादा—ख़ुदा के कारख़ाने में किसी को दख़ल नहीं।

साहब—आप शाहज़ादा हुमायूँ फ़र ही हैं या कोई और?

शाहज़ादा—क्या ख़ूब, अब तक शक है?

साहब—हमने आपको कुछ दिया था, आपने पाया या नहीं?

शाहज़ादा—मुझे याद नहीं। आख़िर वह कौन चीज़ थी?

साहब—याद कीजिए।

साहब ने हुमायूँ फ़र से और कई बातें पूछीं, मगर वह एक का भी जवाब न दे सके। तब तो साहब को यक़ीन हो गया कि यह हुमायूँ फ़र नहीं है।

आज़ाद पाशा को इस्कंदरिया में कई दिन रहना पड़ा। हैज़े की वजह से जहाज़ों का आना-जाना बंद था। एक दिन उन्होंने खोजी से कहा—भाई, अब तो यहाँ से रिहाई पाना मुश्किल है।

खोजी—खुदा का शुक्र करो कि बचके चले आये, इतनी जल्दी क्या है?

आज़ाद—मगर यार, तुमने वहाँ नाम न किया, अफ़सोस की बात है।

खोजी—क्या खूब, हमने नाम नहीं किया तो क्या तुमने नाम किया? आखिर आपने क्या किया, कुछ मालूम तो हो, कौन गढ़ फ़तह किया, कौन लड़ाई लड़े! यहाँ तो दुश्मनों को खदेड़-खदेड़ के मारा। आप बस मिसों पर आशिक हुए, और तो कुछ नहीं किया।

आज़ाद—आप भी तो बुआ ज़ाफ़रान पर आशिक़ हुए थे!

मीडा—अजी, इन बातों को जाने दो, कुछ अपने मुल्क के रईसों का हाल बयान करो, वहाँ कैसे रईस हैं?

खोजी—बिल्कुल तबाह, फटे हाल, अनपढ़, उनके शौक़ दुनिया से निराले हैं। पतंगबाजी पर मिटे हुए, तरह तरह के पतंग बनते हैं, गोल, माहीजाल, माँगदार, भेड़िया, तौक़िया, खरबूज़िया, लँगोटिया, तुक्कल, ललपत्ता, कलपत्ता। दस-दस अशर्फ़ियों के पेंच होते हैं। तमाशाइयों की वह भीड़ होती है कि खुदा की पनाह! पतंगबाज़ अपने फ़न के उस्ताद। कोई ढील लड़ाने का उस्ताद है, कोई घसीट लड़ाने का यकता। इधर पेंच पड़ा, उधर ग़ोता देते ही कहा, वह काटा! लूटने-वालों की चाँदी है। एक-एक दिन में दस-दस सेर डोर लूटते हैं।

आज़ाद—क्यों साहब, यह कोई अच्छी आदत है?

खोजी—तुम क्या जानो, तुम तो किताब के कीड़े हो। सच कहना, पतंग लड़ाया है कभी?

आज़ाद—हमने पतंग की इतनी क़िस्में भी नहीं सुनी थीं।

खोजी—इसी से तो कहता हूँ, जाँगलू हो। भला पेटा जानते हो, किसे कहते हैं?

आज़ाद—हाँ हाँ, जानता क्यों नहीं, पेटा इसी को कहते हैं न कि किसी की डोर तोड़ ली जाय।

खोजी—भई, निरे गाउदी हो।

मीडा—अच्छा बोलो, करते क्या हैं, क्या सारा दिन पतंग ही उड़ाया करते हैं?

खोजी—नहीं साहब, अफ़ीम और चंडू कसरत से पीते हैं।

आज़ाद—और कबूतरबाज़ी का तो हाल बयान करो।

क्लारिसा—हमने सुना है कि हिंदोस्तान की औरतें बिलकुल ज़ाहिल होती हैं।

आज़ाद—मगर हुस्नआरा को देखो तो खुश हो जाओ।

क्लारिसा—हम तो बेशक खुश होंगे, मगर ख़ुदा जाने, वह हमको देख कर ख़ुश होती हैं या नहीं।

मीडा—नहीं, उम्मेद नहीं कि हम दोनों को देख कर ख़ुश हों। जब हमको और तुमको देखेंगी तो उनको बड़ा रंज होगा।

क्लारिसा—मुझे क्यों नाहक बदनाम करती हो, मुझे आज़ाद से मतलब? मैं तुम्हारी तरह किसी पर फिसल पड़नेवाली नहीं।

मीडा—ज़रा होश की बातें करो। जब उन्होंने करोड़ों बार नाक रगड़ी तब मैंने मंजूर किया। वरना इनमें है क्या? न हसीन, न जवान, न रँगीले।

ख़ोजी— और हम? हमको क्या समझती हो आख़िर?

मीडा—तुम बड़े तरहदार जवान हो। और तो और, डील डौल में तो कोई तुम्हारा सानी नहीं।

आज़ाद—हम भी किसी ज़माने में ख्वाजा साहब की तरह शहज़ोर थे, मगर अब वह बात कहाँ, अब तो मरे-बूढ़े आदमी हैं।

ख़ोजी—अजी अभी क्या है, जवानी में हमको देखिएगा।

आज़ाद—आपकी जवानी शायद कब्र में आयेगी।

ख़ोजी—अजी, क्या बकते हो, अभी हमें शादी करनी है भाई।

मीडा—तुम मिस क्लारिसा के साथ शादी कर लो।

क्लारिसा—आप ही को मुबारक रहें।

आज़ाद—भई, यहाँ तुम्हारी शादी हो जाय तो अच्छी बात है, नहीं तो लोगों को शक होगा कि इन्हें किसी ने नहीं पूछा।

ख़ोजी—वल्लाह, यह तो तुमने एक ही सुनायी। अब हमें शादी की ज़रूरत आ पड़ी।

आज़ाद—मगर तुम्हारे लिए तो कोई ख़ूबसूरत चाहिए जिस पर सबकी निगाह पड़े।

ख़ोजी—जी हाँ, जिसमें आपको भी घूरा-घारी करने का मौक़ा मिले। यहाँ ऐसे अहमक़ नहीं हैं। जोरू के मामले में बंदा किसी से याराना नहीं रखता।

आज़ाद तो सैर करने चले गये। ख़ोजी ने मिस क्लारिसा से कहा—हमारे लिए कोई ऐसी बीबी ढूँढ़ो जिस पर सारी दुनिया के शाहज़ादे जान देते हों। आज़ाद का खटका जरूर है, यह आदमी भाँजी मारने से बाज़ न आयेगा। यह तो इसकी आदत में दाख़िल है कि जो औरत हमारे ऊपर रीझेगी उसको बहकायेगा। लेकिन यह भी जानता हूँ कि जो औरत एक बार हमें देख लेगी, उसे आज़ाद क्या, आज़ाद के बाप भी न बहका सकेंगे। मुझे देख-देख कर यह हज़रत जला करते हैं।

क्लारिसा—आज़ाद तुम्हारी सी जवानी कहाँ से लायें।

ख़ोजी—बस-बस, ख़ुदा तुमको सलामत रखें। ख़ुदा करे, तुमको मेरा सा शौहर मिले। इससे ज़्यादा और क्या दुआ दूँ।

क्लारिसा—कहीं तुम्हारी शामत तो नहीं आयी है?

खोजी—क्यों, क्या हुआ ? आखिर हममें कौन बात नहीं है, कुछ मालूम हो, अंधा हूँ, काना हूँ, लूला हूँ, लँगड़ा हूँ। आखिर मुझमें कौन सी बात नहीं है ?

क्लारिसा—पहले जा कर मुँह बनवाओ। चले हैं हमारे साथ शादी करने, कुछ पागल तो नहीं हो गये हो ?

खोजी—पागल ! ठीक, मेरे पागलपने का हाल मिस्र, अदन, रूम, हिंदोस्तान की औरतों से जा कर पूछ लो, आखिर कुछ देख कर ही तो वह सब मुझ पर आशिक़ हुई थीं।

इतने में मियाँ आज़ाद ने आ कर पूछा—क्या बातें हो रही हैं ? क्लारिसा, तुम इनके फेर में न आना। यह बड़े चालाक आदमी हैं। यह बातों ही बातों में अपना रंग जमा लेते हैं।

खोजी—खैर, अब तो तुमने इनसे कह ही दिया, वरना आज ही शादी होती। खैर, आज नहीं, कल सही। बिना शादी किये तो अब मानता नहीं।

क्लारिसा—तो आप अपने को इस क़ाबिल समझने लगे ?

खोजी—क़ाबिल के भरोसे न रहिएगा। मेरी ज़बान में जादू है।

आज़ाद—तुम्हारे लिए तो बुआ ज़ाफ़रान की सी औरत चाहिए।

खोजी—अगर मिस क्लारिसा ने मंजूर न किया तो और कहीं शिप्पा लगायेंगे। मगर मुझे तो उम्मेद है कि मिस क्लारिसा आजकल में ज़रूर मंजूर कर लेंगी।

आज़ाद—अजी, मैंने तुम्हारे लिए वह औरत तलाश कर रखी है कि देख कर फड़क उठो, वह तुम पर जान देती है। बस, कल शादी हो जायगी।

खोजी बहुत खुश हुए। दूसरे दिन आज़ाद ने एक गाड़ी मँगवायी। आप दोनों मिसों के साथ गाड़ी में बैठे, खोजी को कोच-बक्स पर बैठाया और शादी करने चले। खोजी ऊपर से हटो-बचो की हाँक लगाते जाते थे। एक जगह एक बहरा गाड़ी के सामने आ गया। यह गुल मचाते ही रहे और गाड़ी उसके कल्ले पर पहुँच गयी। आप बहुत ही बिगड़े, भला बे गीदी, अब और कुछ बस न चला तो आज जान देने आ गया।

आज़ाद—क्या है भाई, खैरियत तो है ?

खोजी—अजी, आज वह बहुरूपिया नया भेष बदल कर आया, हम गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहे हैं और वह सुनता ही नहीं। तब मैं समझा कि हो न हो बहु-रूपिया है। गाड़ी के सामने अड़ जाने से उसका मतलब था कि हमें पकड़ा दे। वह तो दो-चार दिन में लोट-पोट के चंगा हो जाता, मगर हमारी गाड़ी पकड़ जाती। अब पूछो कि तुमको क्या फ़िक्र है, हम लोग भी तो सवार हैं। इसका जवाब हमसे सुनिए। मिसें तो औरत बन कर छूट जातीं, रहे हम और तुम। तो जिसकी नज़र पड़ती, हमी पर पड़ती। तुमको लोग खिदमतगार समझते, हम रईस के धोखे में धर लिये जाते। बस, हमारे माथे जाती।

इतने में दस-ग्यारह दुम्बे सामने से आये। खोजी ने चरवाहे को उस तीखी

चितवन से देखा कि खा ही जायँगे। उसे इनका कैंड़ा देख कर हँसी आ गयी। बस आप आग ही तो हो गये। कोचवान को डाँट बतायी—रोक ले, रोक ले।

आज़ाद—अब क्या मुसीबत पड़ी !

खोजी—इस बदमाश से कहो बाग रोक ले, मैं उस चरवाहे को सज़ा दे आऊँ तो बात करूँ। बदमाश मुझे देख कर हँस दिया, कोई मसखरा समझा है।

आज़ाद—कौन था, कौन, ज़रा नाम तो सुनूँ।

खोजी—अब राह चलते का नाम मैं क्या जानूँ। कहिए, उटक्करलैस कोई नाम बता दूँ। मुझे देखा तो हँसे आप, मेरी आँखों में खून उतर आया।

आज़ाद—अरे यार, तुम्हें देख कर, मारे खुशी के हँस पड़ा होगा।

खोजी—भई, तुमने सच कहा, यही बात है।

आज़ाद—अब बताओ, हो गधे कि नहीं, जो मैं न समझाता तो फिर ?

खोजी—फिर क्या, एक बेगुनाह का खून मेरी गरदन पर होता।

एकाएक कोचवान ने गाड़ी रोक ली। खोजी घबरा कर कोच-बक्स से उतरे तो पायदान से दामन अटका और मुँह के बल गिरे, मगर जल्दी से झाड़-पोंछ कर उठ खड़े हुए। आज़ाद और दोनों औरतें हँसने लगीं।

आज़ाद—अजी, गर्द-वर्द पोंछो, ज़रा आदमी बनो। जो दुलहिनवाले देख लें तो कैसी हो ?

खोजी—अरे यार, गर्द-वर्द तो झाड़ चुका, मगर यह तो बताओ कि यह किसकी शरारत है, मैं तो समझता हूँ, वही बहुरूपिया मेरी आँखों में धूल झोंक कर मुझे घसीट ले गया। खैर, शादी हो ले। फिर बीबी की सलाह से बदमाश को नीचा दिखाऊँगा।

आज़ाद तो दोनों मिसों के साथ गाड़ी से उतरे और खोजी की ससुराल के दरवाज़े पर आये। खोजी गाड़ी के अंदर बैठे रहे। जब अंदर से आदमी उन्हें बुलाने आया तो उन्होंने कहा—उनसे कह दो, मेरी अगवानी करने के लिए किसी को भेज दें।

आज़ाद ने अंदर जा कर एक पँचहत्थी मोटी-ताज़ी औरत भेज दी। उसने आव देखा न ताव, खोजी को गाड़ी से उतारा और गोद में उठा कर अंदर ले चली। खोजी अभी सँभलने न पाये थे कि उसने उन्हें ले जा कर आँगन में दे मारा और ऊपर से दबाने लगी। खोजी चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगे—अम्माँजान, माफ़ करो, ऐसी शादी पर खुदा की मार, मैं क्वाँरा ही रहूँगा।

आज़ाद—क्या है भई, यह रो क्यों रहे हो ?

खोजी—कुछ नहीं भाईजान, ज़रा दिल्लगी हो रही थी।

आज़ाद—अम्माँजान का लफ़्ज़ किसी ने कहा था ?

खोजी—तो यहाँ तुम्हारे सिवा हिंदोस्तानी और कौन है।

आज़ाद—और आप कहाँ के रहनेवाले हैं ?

ख़ोजी—मैं तुर्क हूँ।

आज़ाद—अच्छा, जा कर दुलहिन के पास बैठो। वह कब से गरदन झुकाये बैठी है बेचारी, और आप सुनते ही नहीं।

ख़ोजी ऊपर गये तो देखा, एक कोने में दुशाला ओढ़े दुलहिन बैठी है। आप उसके क़रीब जा कर बैठ गये। क्लारिसा और मीडा भी जरा फ़ासले पर बैठी थीं। ख़्वाजा साहब दून की लेने लगे। हमारे अब्बाजान सैयद थे और अम्माँजान काबुल के एक अमीर की लड़की थीं। उनके हाथ-पाँव अगर आप देखतीं तो डर जातीं। अच्छे-अच्छे पहलवान उनका नाम सुन कर कान पकड़ते थे। सीना शेर का सा था, कमर चीते की सी, रंग बिलकुल जैसे सलजम, आँखों में ख़ून बरसता था। एक दफ़े रात को घर में चोर आया, मैं तो मारे डर के सन्नाटा खींचे पड़ रहा, मगर वाह री अम्माँजान, चोर की आहट पाते ही उस बदमाश को जा पकड़ा। मैंने पुकार कर कहा, अम्माँजान, जाने न पाये, मैं भी आ पहुँचा। इतने में अब्बाजान की आँख खुल गयी। पूछा—क्या है? मैंने कहा—अम्माँजान से और एक चोर से पकड़ हो रही है। अब्बाजान बोले—तो फिर दबके पड़े रहो, उसने चोर को क़त्ल कर डाला होगा। मैं जो जाके देखता हूँ तो लाश फड़क रही है। जनाब, हम ऐसों के लड़के हैं।

आज़ाद—तभी तो ऐसे दिलेर हो, सुअरों के सुअर ही होते हैं।

ख़ोजी—(हँस कर) मिस क्लारिसा हमारी बातों पर हँस रही हैं। अभी हम इनकी नज़रों में नहीं जँचते।

आज़ाद—दुलहिन आज बहुत हँसती हैं। बड़ी हँसमुख बीबी पायी।

ख़ोजी—उर्दू तो यह क्या समझती होंगी।

आज़ाद—आप भी बस चोंगा ही रहे। अरे बेवक़ूफ़, इन्हें हिंदी-उर्दू से क्या ताल्लुक़।

ख़ोजी—बड़ी ख़राबी यह है कि यहाँ जिस गली-कूचे में निकल जायँ, सबकी नज़र पड़ा चाहे और लोग मुझसे जला ही चाहें, इसको मैं क्या करूँ। अगर इनको सैर कराने साथ न ले चलूँ तो नहीं बनती, ले चलूँ तो नहीं बनती। कहीं मुझ पर किसी परीछम की निगाह पड़े और वह घूर-घूर कर देखे, तो यह समझें कि कोई ख़ास वजह है। अब कहिए, क्या किया जाय?

आज़ाद—दुलहिन मुँह बंद किये क्यों बैठी हैं, नाक की तो खैर है?

ख़ोजी—क्या बकते हो मियाँ, मगर अब मुझे भी शक हो गया, तुम लोग ज़रा समझा दो भाई की नाक दिखा दें।

मिस क्लारिसा ने दुलहिन को समझाया, तो उसने चेहरे को छिपा कर जरा सी नाक दिखा दी। ख़ोजी ने जा कर नाक को छूना चाहा तो उसने इस ज़ोर के चपत दी कि ख़ोजी बिलबिला उठे।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, बड़े बेअदब हो।

खोजी—अरे मियाँ, जाओ भी। यहाँ होश बिगड़ गये, तुमको अदब की पड़ी है, मगर यार, यह बुरा सगुन हुआ।

आज़ाद—अरे गाउदी, यह नखरे हैं, समझा !

खोजी—(हँस कर) वाह रे नखरे !

आज़ाद—अच्छा भाई, तुम कभी लड़ाई पर भी गये हो ?

खोजी—उँह, कभी की एक ही कही, क्या नन्हें बने जाते हैं ? अरे मियाँ, शाही में गुलचले मशहूर थे, अब भी जो चाँदमारी हुई, उसमें हमी बीस रहे।

आज़ाद—मिस मीडा हँस रही हैं, गोया तुम झूठे हो।

खोजी—यह अभी छोकरी हैं, यह बातें क्या जानें। अब्बाजान को ख़ुदा बख़्शे। दो ऐसे गुर बता गये हैं जो हर जगह काम आते हैं। एक तो यह कि जब किसी से लड़ाई हो तो पहला वार ख़ुद करना, बात करते ही चाँटा देना।

आज़ाद—आप तो कई जगह इस नसीहत को काम में ला चुके हैं। एक तो बुआ ज़ाफ़रान पर हाथ उठाया था। दूसरे जैनब की नाक में दम कर दिया था।

खोजी—अब मैं अपना सिर पीट लूँ, क्या करूँ ! जिस-जिस जगह अपनी भलमनसी से शरमिंदा हुआ था, उन्हीं का ज़िक्र करते हो। वह तो कहिए, ख़ैरियत है कि दुलहिन उर्दू नहीं समझतीं, वरना नज़रों से गिर जाता।

यह फ़िक़रा सुन कर दुलहिन मुसकिरायीं तो ख़्वाजा साहब अकड़ कर बोले—वल्लाह, वह हँसमुख बीबी पायी है कि जी ख़ुश हो गया। बात नहीं समझती, मगर हँसने लगती है। भई, ज़रा आँखें भी देख लेना।

आज़ाद—जनाब, दोनों आँखें हैं और बिलकुल हाथी की सी !

खोजी—बस यही मैं चाहता हूँ, वह क्या जिसकी बड़ी-बड़ी आँखें हों ! तारीफ़ यह है कि ज़रा-ज़रा सी आँखें हो और हँसने के वक़्त बिलकुल बंद हो जायँ, मगर यार, गला कैसा है ?

आज़ाद—ऐं, क्या हिंदोस्तान में गाने की तालीम दोगे ?

खोजी—ऐ है, समझते तो हो ही नहीं, मतलब यह कि गरदन लम्बी है या छोटी ? पहले समझ लो, फिर एतराज़ जड़ो।

आज़ाद—गरदन, सिर और धड़ सब सपाट है।

खोजी—यह क्या, तो क्या, छोटी गरदन की तारीफ़ है ?

आज़ाद—और क्या, सुना नहीं, 'छोटी गरदन, तंग पेशानी, हसीन औरत की यही निशानी।' क्या महावरे भी भूल गये ?

खोजी—महावरे कोई हमसे सीखे, आप क्या जानें, मगर ख़ुदा के लिए ज़रा मुझसे अदब से बातें कीजिए, वरना यहाँ मेरी किरकिरी होगी। और यह आप उनके क़रीब क्यों बैठे हैं, हटके बैठिए ज़रा।

आज़ाद—क्यों साहब, आप अपनी ससुराल में हमारी बेइज़्ज़ती करते हैं ? अच्छा ! ख़ैर, देखा जायगा।

खोजी—आप तो दिल्लगी में बुरा मान जाते हैं और मेरी आदत कमबख़्त ऐसी ख़राब है कि बेचुहल किये रहा नहीं जाता।

आज़ाद—ख़ैर चलो, होगा कुछ। मगर यार, यहाँ एक अजीब रस्म है, दुलहिन अपने दूल्हा के दोस्तों से हँस-हँस कर बात करती है।

खोजी—यह तो बुरी बात है, क़सम ख़ुदा की, अगर तुमने इनसे एक बात भी की होगी तो क़रौली ले कर अभी-अभी काम तमाम कर दूँगा।

आज़ाद—सुन तो लो, ज़रा सुनो तो सही।

खोजी—अजी बस, सुन चुके। इस वक़्त आँखों में ख़ून उतर आया, ऐसी दुल-हिन की ऐसी-तैसी, और कैसी दबकी-दबकायी बैठी हैं, गोया कुछ जानती ही नहीं।

आज़ाद—हर मुल्क की रस्म अलग-अलग है। इसमें आप ख़्वाहमख़्वाह बिगड़ रहे हैं।

खोजी—तो आप आँखें क्या दिखाते हैं? कुछ आपका मुहताज या ग़ुलाम हूँ? लूट का रुपया मेरे पास भी है, यहाँ से हिंदुस्तान तक अपनी बीबी के साथ जा सकता हूँ। अब आप तो जायँ, मैं ज़रा इनसे दो-दो बातें कर लूँ, फिर शादी की राय पीछे दी जायगी।

आज़ाद उठने ही को थे कि दुलहिन ने पाँव से दामन दबा दिया।

आज़ाद—अब बताओ, उठने नहीं देतीं, मैं क्या करूँ।

खोजी—(डपट कर) छोड़ दो।

आज़ाद—छोड़ दो साहब, देखो तुम्हारे मियाँ ख़फ़ा होते हैं।

खोजी—अभी मुझे मियाँ न कहिए, शादी-ब्याह नाज़ुक मामला है।

आज़ाद—पहले आपकी इनसे शादी हो जाय, फिर अगर बंदा आँख उठाके देखे तो गुनहगार।

खोजी—अच्छा मंज़ूर, मगर इतना समझा देना कि यह बड़े कड़े खाँ हैं, नाक पर मक्खी भी नहीं बैठने देते। मगर आप क्यों समझायेंगे। मैं ख़ुद ही क्यों न कह दूँ। सुनो बी साहब, हमारे साथ चलती हो तो दो शर्तें माननी होंगी। एक यह कि किसी ग़ैर आदमी को सूरत न दिखाओ। दूसरी यह कि मुझे जो कोई औरत देखती है, पहरों घूरा करती है, टकटकी बँध जाती है। ऐसा न हो कि तुम्हें सौतिया डाह होने लगे। भई आज़ाद, ज़रा इनको इनकी ज़बान में समझा दो।

आज़ाद—आप ज़रा एक मिनट के लिए बाहर चले जाइए, तो मैं सब बातें समझा दूँ।

खोजी—जी, दुरुस्त, यह भरें लौंडों को दीजिएगा, आप ऐसे छोकड़े मेरी जेब में पड़े हैं। और सुनिए, क्या उल्लू समझा है! अब तुम जाओ, हम इनसे दो-दो बात कर लें।

आज़ाद बाहर चले गये तो खोजी पलँग पर दुलहिन के पास बैठे और बोले—

भई, अब तो घूँघट उठा लो, जब हम तुम्हारे हो चुके तो हमसे क्या शर्म, क्यों तरसाती हो ?

जब दुलहिन ने अब भी घूँघट न खोला तो खोजी ज़रा और आगे खिसक गये—जानमन, इस वक़्त शर्म को भून खाओ, क्यों तरसाती हो, अरे, अब कब लग तरसाये रखियो जी ! कब लग तरसाये रखियो जी !

दो-तीन मिनट तक खोजी ने गा-गा कर रिझाया मगर जब यों भी दुलहिन ने न माना तो आपने उसके घूँघट की तरफ़ हाथ बढ़ाया। एकाएक दुलहिन ने उनका हाथ पकड़ लिया। अब आप लाख ज़ोर मारते हैं, मगर हाथ नहीं छूटता। तब आप ख़ुशामद की बातें करने लगे। छोड़ दो भाई, भला किसी ग़रीब का हाथ तोड़ने से तुम्हें क्या मिलेगा। और यह तो तुम जानती हो कि मैं तुमसे ज़ोर न करूँगा। फिर क्यों दिक़ करती हो, मेरा तो कुछ न बिगड़ेगा, मगर तुम्हारे मुलायम हाथ दुखने लगेंगे।

यह कह कर खोजी दुलहिन के पैरों पर गिर पड़े और टोपी उतार कर उसके क़दमों पर रख दी। उनकी हरकत पर दुलहिन को हँसी आ गयी।

खोजी—वह हँसी आयी, नाक पर आयी, बस अब मार लिया है, अब इसी बात पर गले लग जाओ।

दुलहिन ने हाथ फैला दिये। खोजी गले मिले तो दुलहिन ने इतने ज़ोर से दबाया कि आप चीख पड़े। छोड़ दो, छोड़ दो, चोट आ जायगी। मगर अब की दुलहिन ने उन्हें उठा कर दे मारा और छाती पर सवार हो गयी। मियाँ खोजी अपनी बदनसीबी पर रोने लगे। इनको रोते देख कर उसने छोड़ दिया, तब आप सोचे कि बिला अपनी जवाँमरदी दिखाये, इस पर रोब न जमेगा। बहुत होगा, मार डालेगी, और क्या। आपने कपड़े उतारे और पैंतरा बदल कर बोले—सुनो जी, हम शाहज़ादे हैं। तलवार के धनी, बात के शूर, नाक पर मक्खी बैठ जाय तो तलवार से नाक उड़ा दें, समझीं ? अब तक मैं दिल्लगी करता था। तुम औरत, मैं मर्द, अगर अब की तुमने ज़रा भी गुस्ताख़ी की तो आग हो जाऊँगा। ले अब घूँघट उठा दो, वरना ख़ैरियत नहीं है। यह कहीं ऊँचा तो नहीं सुनती ? (तालियाँ बजा कर) अजी सुनती हो, बुर्क़ा उठाओ।

ख्वाजा साहब बका किये, मगर वहाँ कुछ असर न हुआ। तब आप बिगड़ गये और फिर पैंतरे बदलने लगे। अब की दुलहिन ने उन्हें बग़ल में दबा लिया; अब आप तड़प रहे हैं; दाँत पीसते हैं, मगर गरदन नहीं छूटती। तब आपने झल्ला कर दाँत काट खाया। काटना था कि उसने ज़ोर से एक थप्पड़ दिया। ख्वाजा साहब का मुँह फिर गया। तब आप कोसने लगे—ख़ुदा करे तेरे हाथ टूटें। हाय, अगर इस वक़्त ख़ुदा एक मिनट के लिए ज़ोर दे-दे तो सुर्मा बना डालूँ।

मिस क्लारिसा और मीडा एक झरोखे से यह कैफ़ियत देख रही थीं, जब खोजी पिट-पिटा कर बाहर निकले तो क्लारिसा ने कहा—मुबारक हो।

आज़ाद—कहिए, दुलहिन कैसी है? यार, हो खुशनसीब!

खोजी—खुदा करे, आप भी ऐसे खुशनसीब हों।

आज़ाद—हमने तो बड़ी तारीफ सुनी थी, मगर तुम कुछ रंजीदा मालूम होते हो, इसका क्या सबब?

खोजी—भाईजान, वहाँ तो फ़ौज़दारी हो गयी। औरत क्या, देवनी है, वल्लाह, कचूमर निकल गया।

आज़ाद—आप तो हैं पागल, यह इस मुल्क का रिवाज है कि पहले दिन दो घंटे तक दुलहिन मियाँ को मारती है, काट खाती है, फिर मियाँ बाहर आता है, फिर जाता है।

खोज़ी—अजी, वहाँ तो मार-पीट तक हो गयी, जी में तो आया था कि उठा कर दे मारूँ; मगर औरत के मुँह कौन लगे। देखें, अब की कैसी गुज़रती है, या तो वही नहीं या हमी नहीं।

आज़ाद—क्या सच-मुच फ़ौज़दारी ही पर आमादा हो? भाई, क़रौली अपने साथ न ले जाना, और जो हो सो हो।

खोजी—अजी, यहाँ हाथ क्या कम हैं! क़रौली मर्द के लिए है, औरत के लिए क़रौली की क्या ज़रूरत?

आज़ाद—बस, अब की जा के मीठी-मीठी बातें करो। हाथ जोड़ो, पैर दबाओ, फिर देखिए, कैसी खुश होती हैं। अब देर होती है, जाइए।

ख्वाजा साहब कमरे में गये और दुलहिन के पाँव दबाने लगे।

दुलहिन—हमको छोड़ कर चले तो न जाओगे।

खोजी—अरे, यह तो उर्दू बोल लेती हैं, यह क्या माजरा है!

दुलहिन—मियाँ, कुछ न पूछो। हमको एक हब्शी बहका कर बेचने के लिए लिये जाता था। बारे खुदा-खुदा करके यह दिन नसीब हुआ।

खोजी—अब तक तुम हमसे साफ़-साफ़ न बोलीं! ख्वाहमख्वाह किसी भले आदमी को दिक़ करने से फ़ायदा?

दुलहिन—तुम्हारे साथी आज़ाद ने हमें जैसा सिखाया वैसा हमने किया।

खोजी—अच्छा आज़ाद। ठहर जाओ बचा, जाते कहाँ हो। देखो तो कैसा बदला लेता हूँ।

यह कह कर खोजी ने अपनी टोपी दुलहिन के क़दमों पर रख दी और बोले—बीबी, बस अब यह समझो कि मियाँ नहीं, खिदमतगार है। मगर कब तक? जब तक हमारी हो कर रहो। उधर आपने तेवर बदले, इधर हम बिगड़ खड़े हुए। मुझसे बढ़ कर मुरव्वतदार कोई नहीं, मगर मुझसे बढ़ कर शरीर भी कोई नहीं; अगर किसी ने मुझसे दोस्ती की तो उसका गुलाम हो गया, और अगर किसी ने हेकड़ी जतायी तो मुझसे ज़्यादा पाजी कोई नहीं। डंडे से बात करता हूँ। देखने में दुबला हूँ,

मगर आज तक किसी ने मुझे ज़ेर नहीं किया। सैकड़ों पहलवानों से लड़ा, और हमेशा कुश्तियाँ निकालीं।

दुलहिन—तुम्हारे पहलवान होने में शक नहीं, वह तो डील-डौल ही से ज़ाहिर है।

खोजी—इसी बात पर अब घूँघट हटा दो।

दुलहिन—यह घूँघट नहीं है जी, कल से हमारी मूँछ में दर्द है।

खोजी—काहे में दर्द है, क्या कहा?

दुलहिन—ऐ, मूँछ तो कहा, कानों की ठेठियाँ निकाल।

खोजी—मूँछ क्या! बकती क्या हो? औरत हो या मर्द? ख़ुदा जाने, तुम मूँछ किसको कहती हो।

दुलहिन—(खोजी की मूँछ पकड़ कर) इसे कहते हैं, यह मूँछ नहीं है?

खोजी—अल्लाह जानता है, बड़ी दिल्लगीबाज़ हो, मैं भी सोचता था कि क्या कहती हैं।

दुलहिन—अल्लाह जानता है, मेरी मूँछों में दर्द है।

ख्वाजा साहब ने ग़ौर करके देखा तो ज़रा-ज़रा सी मूँछें। पूछा—आख़िर बताओ तो जानमन, यह मूँछ क्या है?

दुलहिन—देखता नहीं, आँखें फूट गयी हैं क्या?

खोजी—ऐ तो बीबी, आख़िर यह मूँछ कैसी? कहता तो कहता, सुनता सिड़ी हो जाता है। औरत हो या मर्द? ख़ुदा जाने, तुम मूँछ किसे कहती हो?

दुलहिन—तो तुम इतना घबराते क्यों हो? मैं मरदानी औरत हूँ।

खोजी—भला औरत और मूँछ से क्या वास्ता?

दुलहिन—ऐ है; तुम तो बिलकुल अनाड़ी हो, अभी तुमने औरतें देखी कहाँ?

खोजी—ऐसी औरतों से बाज़ आये।

एकाएक दुलहिन ने घूँघट उठा दिया तो खोजी की जान निकल गयी। देखा तो वही बहुरूपिया। बोले—जी चाहता है कि क़रौली भोंक दूँ, क़सम ख़ुदा की, इस वक़्त यही जी चाहता है।

बहुरूपिया—पहले उस पारसल के रुपये लाइए जिसका लिफ़ाफ़ा आपने अपने नाम लिखवा लिया था। बस, अब दायें हाथ से रुपये लाइए!

खोजी—ओ गीदी, बस अलग ही रहना, तुम अभी मेरे गुस्से से वाक़िफ़ नहीं हो!

बहुरूपिया—खूब वाक़िफ़ हूँ। कमज़ोर, मार खाने की निशानी।

खोजी—हम कमज़ोर हैं? अभी चाहूँ तो गरदन तोड़के रख दूँ। जा कर होटल-वालों से तो पूछो कि किस जवाँमरदी के साथ मिस्र के पहलवानों को उठाके दे मारा।

बहुरूपिया—अच्छा, अब तुम्हारी क़ज़ा आयी है। ख्वाहमख्वाह हाथ-पाँव के दुश्मन हुए हो।

खोजी—सच कहता हूँ, अभी तुमने मेरा ग़ुस्सा नहीं देखा, मगर हम-तुम परदेशी हैं, हमको-तुमको मिल-जुल कर रहना चाहिए। तुम न जाने कैसे हिंदोस्तानी हो कि हिंदोस्तानी का साथ नहीं देते।

बहुरूपिया—पारसल का रुपया दाहने हाथ से दिलवाइए तो खैर।

खोजी—अजी, तुम भी कैसी बातें करते हो; 'हिसाबे दोस्ताँ दर दिल अगर हम बेवफ़ा समझे।' पारसल का ज़िक्र कैसा, बज़ाज़ की दूकान पर हम भी तो तुम्हारी तरफ़ से कुछ पूज आये थे ? कुछ तुम समझे, कुछ हम समझे।

इतने में आज़ाद दोनों लेडियों के साथ अंदर आये।

आज़ाद—भाई, शादी मुबारक हो। यार, आज हमारी दावत करो।

खोज़ी—ज़हर खिलाओ और दावत माँगो। यह जो हमने आपको लाखों खतरों से बचाया उसका यह नतीजा निकला। अब हम या तो यहीं नौकरी कर लेंगे, या फिर रूम वापस जायँगे। वहाँ के लोग क़द्रदाँ हैं, दो-चार शेर भी कह लेंगे तो खाने भर को बहुत है। खैर, आदमी कुछ खो कर सीखता है। हम भी खो कर सीखे, अब दुनिया में किसी का भरोसा नहीं रहा।

क्लारिसा—यह मिठाइयाँ न देने की बातें हैं, यह चकमे किसी और को देना, हम बे-दावत लिये न रहेंगे।

खोजी—हाँ साहब, आपको क्या। खुदा करे, जैसी बीबी हमने पायी, वैसा ही शौहर तुम पाओ, अब इसके सिवा और क्या दुआ दूँ।

मीडा—हमने तो बहुत सोच-समझ कर तुम्हारी शादी तजवीज की थी।

खोजी—अजी, रहने भी दो। हमें आप लोगों से कोई शिकायत नहीं, मगर आज़ाद ने बड़ी दग़ा दी। हिंदोस्तान से इतनी दूर आये। जब मौक़ा पड़ा, इनके लिए जान लड़ा दी। पोलैंड की शाहज़ादी के यहाँ हमीं काम आये, वरना पड़े-पड़े सड़ जाते। इन सब बातों का अंजाम यह हुआ कि हमीं पर चकमे चलने लगे। अब चाहे जो हो, हम आज़ाद की सूरत न देखेंगे।

चौथी के दिन रात को नवाब साहब ने सुरैया बेगम को छेड़ने के लिए कई बार फ़ीरोज़ा बेगम की तारीफ़ की। सुरैया बेगम बिगड़ने लगीं और बोलीं -- अजब बेहूदा बातें हैं तुम्हारी, न जाने किन लोगों में रहे हो कि ऐसी बातें ज़बान से निकलती हैं।

नवाब—तुम नाहक़ बिगड़ती हो, मैं तो सिर्फ़ उनके हुस्न की तारीफ़ करता हूँ।

सुरैया—ऐ, तो कोई ढूँढ़के वैसी ही की होती।

नवाब—तुम्हारे यहाँ कभी-कभी आया-जाया करती हैं ?

सुरैया—मुझे उस घर का हाल क्योंकर मालूम हो। मगर जो तुम्हारे यही लच्छन हैं तो खुदा ही मालिक है। आज ही से ये बातें शुरू हो गयीं। हाँ, सच है, घर की मुर्ग़ी साग बराबर। खैर, अब तो मैं आ कर फँस ही गयी, मगर मुझे वही मुहब्बत है जो पहले थी। हाँ, अब तुम्हारी मुहब्बत अलबत्ता जाती रही।

नवाब—तुम इतनी समझदार हो कर ज़रा-सी बात पर इतना रूठ गयीं। भला अगर मेरे दिल में यही होता तो मैं तुम्हारे सामने उनकी तारीफ़ करता, मुझे कोई पागल समझा है ? मतलब यह था कि दो घड़ी की दिल्लगी हो, मगर तुम कुछ और ही समझीं। खूब याद रखना कि जब तक मेरी और तुम्हारी ज़िंदगी है, किसी और औरत को बुरी नज़र से न देखूँगा। आगे देखूँ तो शरीफ़ नहीं।

सुरैया—वह औरत क्या जो अपने शौहर के सिवा किसी मर्द को बुरी नजरों से देखे और वह मर्द क्या जो अपनी बीबी के सिवा परायी बहू-बेटी पर नज़र डाले।

नवाब—बस, यही हमारी भी राय है और जो लोग दस-दस शादियाँ करते हैं उनको मैं अहमक़ समझता हूँ।

सुरैया—देखना इन बातों को भूल न जाना।

सुबह को दुलहिल के मैके से महरी आयी और अर्ज़ की कि आज साली ने दूल्हा और दुलहिन को बुलाया है, पहला चाला है।

बेगम—(नवाब साहब की माँ) तुम्हारे यहाँ वह लड़की तो बड़े ही ग़ज़ब की है, फ़ीरोज़ा, किसी से दबती ही नहीं !

महरी—हुजूर, अपना-अपना मिज़ाज है।

बेगम—अरे, कुछ तो शर्म-हया का खयाल हो। बेचारी फ़ैज़न को बात बात पर बनाती थी। वह लाख गँवारों की सी बातें करे, फिर इससे क्या, जो अपने यहाँ आये उसकी खातिर करनो चाहिए, न कि ऐसा बनाये कि वह कभी फिर आने का नाम ही न ले।

खुरशेद—(नवाब की बहन) हमको तो उनकी बातों से ऐसा मालूम होता था कि (दबे दाँतों) नेक नहीं, आगे खुदा जाने।

बेगम—यह न कहो बेटा, अभी तुमने देखा क्या है।

नवाब—(इशारा करके) उनकी महरी बैठी है, उसके सामने कुछ न कहो।

बेगम साहब ने सुरैया बेगम को उसी वक़्त रुख़सत किया। शाम को दूल्हा भी चला। मुसाहबों ने उसकी रियासत और ठाट-बाट की तारीफ़ करनी शुरू की—

बबरअली—हुज़ूर, इस वक़्त ईरान के शाहज़ादे मालूम होते हैं।

नूरख़ाँ—इसमें क्या शक है, यह मालूम होता है कि कोई शाहज़ादा मसनद लगाये बैठा है।

बबरअली—हुज़ूर, आज ज़रा चौक की तरफ़ से चलिएगा। ज़रा इधर-उधर कमरों से तारीफ़ की अवाज़ तो निकले।

नवाब—क्या फ़ायदा, जिसके बीबी हो, उसको इन बातों में न पड़ना चाहिए।

नूरख़ाँ—ऐ हुज़ूर, यह तो रियासत का तमग़ा ही है।

ईदू—ऐ हुज़ूर, यह तो ग़रीब आदमियों के लिए है कि एक से ज़्यादा न हो, दूसरी बीबी को क्या खिलायेगा, ख़ाक! मगर अमीरों का तो यह जौहर है। बादशाहों के आठ-आठ नौ-नौ सौ से ज़्यादा महल होते थे, एक-दो की कौन कहे। जिसे ख़ुदा देता है वही इस क़ाबिल समझा जाता है।

इन लोगों ने नवाब साहब को ऐसा चंग पर चढ़ाया कि चौक ही से ले गये, मगर नवाब साहब ने गरदन जो नीची की तो चौक भर में किसी कमरे की तरफ़ देखा ही नहीं। इस पर मुसाहबों ने हाशिये चढ़ाये—ऐ हुज़ूर, एक नज़र तो देख लीजिए, कैसा कटाव हो रहा है। सारी ख़ुदाई का हाल तो कौन जाने, मगर इस शहर में तो कोई जवान हुज़ूर के चेहरे-मोहरे को नहीं पाता। बस, यही मालूम होता है कि शेर कछार से चला आता है।

नवाब साहब दिल में सोचते जाते थे कि इन ख़ुशामदियों से बचना मुश्किल है। इनके फंदे में फँसे और दाख़िल जहन्नुम हुए। हमने ठान ली है कि अब किसी औरत को बुरी निगाह से न देखेंगे। यों हँसी-दिल्लगी की और बात है।

नवाब साहब ससुराल में पहुँचे, तो बाहर दीवानख़ाने में बैठे। नाच शुरू हुआ और मुसाहबों ने तायफ़ों की तारीफ़ के पुल बाँध दिये—जनाब, ऐसी गानेवाली अब दूसरी शहर में नहीं है, अगर शाही ज़माना होता तो लाखों रुपये पैदा कर लेती और अब भी हमारे हुज़ूर के से जौहर-शिनास बहुत हैं, मगर फिर भी कम हैं। क्यों हुज़ूर, होली गाने को कहूँ?

नवाब—जो जी चाहे, गायें।

मुसाहब—हुज़ूर फ़रमाते हैं, यह जो गायँगी, अपना रंग जमा लेंगी, मगर होली हो तो और भी अच्छा।

नवाब—हमने यह नहीं कहा, तुम लोग हमें ज़लील करा दोगे।

मुसाहब—क्या मजाल हुज़ूर, हुज़ूर का नमक खाते हैं, हम ग़ुलामों से यह उम्मीद! चाहे सिर जाता रहे, मगर नमक का पास ज़रूर रहेगा, और यह तो हुज़ूर, दो घड़ी हँसने-बोलने का वक़्त ही है।

ग़नीमत जान इस मिल बैठने को,
जुदाई की घड़ी सिर पर खड़ी है।

इसके बाद नवाब साहब अंदर गये और खाना खाया। साली ने एक भारी ख़िलअत बहनोई को और एक क़ीमती जोड़ा बहन को दिया। दूसरे दिन दूल्हा-दुलहिन रुख़सत हो कर घर गये।

१०३

कुछ दिन तक तो मियाँ आज़ाद मिस्र में इस तरह रहे जैसे और मुसाफ़िर रहते हैं, मगर जब कांसल को इनके आने का हाल मालूम हुआ तो उसने उन्हें अपने यहाँ बुला कर ठहराया और बातें होने लगी।

कांसल—मुझे आपसे सख्त शिकायत है कि आप यहाँ आये और हमसे न मिले। ऐसा कौन है जो आपके नाम से वाक़िफ़ न हो, जो अखबार आता है उसमें आपका ज़िक्र जरूर होता है। वह आपके साथ मसखरा कौन है? वह बौना खोजी?

आज़ाद ने मुसकिरा कर खोजी की तरफ इशारा किया?

खोजी—जनाब, वह मसखरे कोई और होंगे और खोजी खुदा जाने, किस भकुए का नाम है। हम ख्वाजा साहब हैं और बौने की एक ही कही। हाय, मैं किससे कहूँ कि मेरा बदन चोर है!

आज़ाद—क्या अखबारों में ख्वाज़ा साहब का ज़िक्र हता है?

कांसल—जी हाँ, इनकी बड़ी धूम है, मगर एक मुक़ाम पर तो सचमुच इन्होंने बड़ा काम कर दिखाया था। आपका दौलतखाना किस शहर में है जनाब? मुझे हैरत तो यह है कि इतने नन्हे-नन्हे तो आपके हाथ-पाँव, लड़ाई में आप किस बिरते पर गये थे।

खोजी—(मुसकिरा कर) यही तो कहता हूँ हज़रत कि मेरा बदन चोर है, देखिए ज़रा हाथ मिलाइए। हैं फ़ौलाद की अँगुलियाँ या नहीं? अगर अभी ज़ोर करूँ तो आपकी एक-आध अँगुली तोड़ कर रख दूँ।

थोड़ी देर तक वहाँ बातचीत करके आज़ाद चले तो खोजी ने कहा—यह आपकी अजीब आदत है कि ग़ैरों के सामने मुझे ज़लील करने लगते हैं। अगर मुझे ग़ुस्सा आ जाता और मैं मियाँ कांसल के हाथ-पाँव तोड़ देता तो बताओ कैसी ठहरती! मैं मारे मुरव्वत के तरह देता जाता हूँ, वरना मियाँ की सिट्टी-पिट्टी भूल जाती।

आज़ाद—अजी, ऐसी मुरव्वत भी क्या जिससे हमेशा जूतियाँ खानी पड़ें। कई जगह आप पिटे, मगर मुरव्वत न छोड़ी। एक दिन इस मुरव्वत की बदौलत आप कहीं काँजी-हौस न भेजे जाइए। अच्छा, अब यह पूछता हूँ कि जब सारे ज़माने ने मेरा हाल सुना तो क्या हुस्नआरा ने न सुना होगा?

खोजी—जरूर सुना होगा भाई, अब आज के आठवें दिन शादी लो। मगर उस्ताद, दो-एक दिन बम्बई में ज़रूर रहना। ज़रा बेगम साहब से बातें होंगी।

आज़ाद—भाई, अब तो बीच में ठहरने का जी नहीं चाहता।

खोजी—यह नहीं हो सकता, इतनी बेवफ़ाई करना मुनासिब नहीं, वह बेचारी हम लोगों की राह देख रही होंगी।

आज़ाद—अच्छा तो यह सोच लो कि अगर उन्होंने पूछा कि खोजी के साथ कोई औरत क्यों नहीं आयी तो क्या जवाब दोगे ? हमारी तो सलाह है कि किसी को यहीं से फाँस ले चलो ?

खोजी—नहीं जनाब, मुझे यहाँ की औरतें पसंद नहीं। हाँ, अपने वतन में हो तो मुज़ायक़ा नहीं।

आज़ाद—अच्छा कैसी औरत चाहते हो ?

खोजी—बस यही कि उम्र ज़्यादा न हो। और शक्ल-सूरत अच्छी हो।

आज़ाद—ऐसी एक औरत तो हुस्नआरा के मकान के पास है। उसी दर्ज़ी की बीबी है जो उनके मकान के सामने रहता है। रंगत तो साँवली है, मगर ऐसी नमकीन कि आपसे क्या कहूँ और अभी कमसिन। बहुत-बहुत तो कोई ४०-४२ की होगी।

खोजी—भला मीडा में और उसमें क्या फ़र्क़ है ?

आज़ाद—यह उससे दो-चार बरस कमसिन हैं, बस, और तो कोई फ़र्क़ नहीं। हाँ, यह गोरी हैं और उसका रंग साँवला है।

खोजी—भला नाम क्या है ?

आज़ाद—नाम है शिताबजान।

खोजी—तब तो भाई, हम हाज़िर हैं। मगर पक्की-पोढ़ी बात तो हो ले पहले।

आज़ाद—आपको इससे क्या वास्ता ? कुछ तो समझ के हमने कहा है ! हमारे पास उसका खत आया था कि अगर ख्वाजा साहब मंजूर करें तो मैं हाज़िर हूँ।

खोजी—तब तो भाई, बनी-बनायी बात है, खुदा ने चाहा तो आज के आठवें दिन शिताबजान हमारी बग़ल में होंगी।

आज़ाद—शाम को कांसल से मिल कर चले चलो आज ही।

खोजी—कांसल ! हमको शिताबजान की पड़ी है, हमारे सामने खत लिखके भेज दो। मज़मून हम बतायेंगे।

आज़ाद क़लम-दावात ले कर बैठे। खोजी ने खत लिखवाया और जा कर उसे डाकखाने में छोड़ आये। तब मिस मीडा से जा कर बोले—अब हमारी खुशामद कीजिए। आज के आठवें दिन हमारे यहाँ आपकी दावत होगी। अच्छे से अच्छे क़िस्म की ब्रांडी तय कर रखिए। शिताबजान के हाथ पिलवाऊँगा।

मीडा—शिताबजान कौन ! क्या तुम्हारी बहन का नाम है ?

खोजी—अरे तोबा ! शिताबजान से मेरी शादी होनेवाली है। उसने मुझे भेजा था कि रूम जा कर नाम करो तो फिर निकाह होगा। अब मैं वहाँ से नाम करके लौटा हूँ, पहुँचते-पहुँचते शादी होगी।

मीडा—क्या सिन होगा ? बेवा तो नहीं है ?

खोजी—खुदा न करे, दर्ज़ी अभी जिन्दा है ?

मीडा—क्या मियाँवाली है, और आप उसके साथ निकाह करेंगे ? सिन क्या है ?

खोजी—अभी क्या सिन है, कल की लड़की है, कोई पैंतालीस बरस की हो शायद।

मीडा—बस, पैंतालीस ही बरस की ? तब तो उसे पालना पड़ेगा !

खोजी—हम तो क़िस्मत के धनी हैं।

मीडा—भला शक्ल-सूरत कैसी है ?

खोजी—यह आज़ाद से पूछो। चाँद में मैल है, उसमें मैल नहीं, मैं तो आज़ाद को दुआएँ देता हूँ जिनकी बदौलत शिताबजान मिलीं।

यहाँ से खोजी होटलवालों के पास पहुँचे और उनसे भी वही चर्चा की। अजी, बिलकुल साँचे की ढली है, कोई देखे तो बेहोश हो जाय। अब आज़ाद के सामने उसे थोड़ा ही आने दूँगा, हरगिज़ नहीं।

खानसामा—तुमसे बातचीत भी हुई या दूर ही से देखा ?

खोजी—जी हाँ, कई बार देख चुका हूँ। बातें क्या करती है, मिश्री की डली घोलती है।

होटलवालों ने खोजी को खूब बनाया। इतनी देर में आज़ाद ने जहाज़ का बंदोबस्त किया और एक रोज़ दोनों परियों और ख्वाजा साहब के साथ जहाज़ पर सवार हुए। सवार होते ही खोजी ने गाना शुरू किया—

अरे मल्लाह लगा किश्ती मेरा महबूब जाता है,
शिताबो की तमन्ना में मुझे दिल लेके आता है।
मगर छोड़ा विदेशी होके ख्वाजा ने गये लड़ने,
शिताबो के लिए जी मेरा कल से तिलमिलाता है।

आज़ाद ने शह दे-दे कर और चंग पर चढ़ाया। ज्यों-ज्यों उनकी तारीफ़ करते थे, वह और अकड़ते थे। जहाज़ थोड़ी ही दूर चला था कि एक मल्लाह ने कहा—लोगो, होशियार ! तूफ़ान आ रहा है। यह खबर सुनते ही कितनों ही के तो होश उड़ गये और मियाँ खोजी तो दोहाई देने लगे—जहाज़ की दोहाई ! बेड़े की दोहाई ! समुद्र की दोहाई ! हाय शिताबजान, अरे मेरी प्यारी शिताब, दुआ माँग।

यह कह कर आपने अकड़ कर आज़ाद की तरफ़ देखा। आज़ाद ताड़ गये कि इस फ़िक़रे की दाद चाहते हैं। कहा—सुभान-अल्लाह, शिताब जान के लिए शिताब, क्या खूब।

खोजी—इस फ़न में कोई मेरी बराबरी क्या करेगा भला। उस्ताद हूँ, उस्ताद।

आज़ाद—और लुत्फ़ यह है कि ऐसे नाज़ुक वक़्त में भी नहीं चूकते।

खोजी—या खुदा, मेरी सुन ले। यारो, रो-रो कर उसकी दरगाह से दुआ माँगो कि ख्वाजा बच जायँ और शिताबजान से ब्याह हो। खूब रोओ।

आज़ाद—जनाब, यह क्या सबब है कि आप सिर्फ़ अपने लिए दुआ माँगते हैं, और बेचारों का भी तो खयाल रखिए।

इतने में आँधी आ गयी। आज़ाद तो जहाज़ के कप्तान के साथ बातें कर रहे

थे। खोजी ने सोचा, अगर जहाज़ डूब गया तो शिताबजान क्या करेगी? फ़ौरन अफ़ीम की डिबिया ली और खूब कस कर कमर में बाँध कर बोले—लो यारो, हम तो तैयार हैं। अब चाहे आँधी आये या बगूला। तूफ़ान नहीं, तूफ़ान का बाप आये तो क्या ग़म है!

जहाज़वाले तो घबराये हुए थे कि नहीं मालूम, तूफ़ान क्या गुल खिलाये, मगर ख्वाजा साहब तान लगा रहे थे—

शिताबो की तमन्ना में मेरा दिल तिलमिलाता है।

आज़ाद—ख्वाजा साहब, आप तो बेवक़्त की शहनाई बजाते हैं। पहले तो रोये-चिल्लाये और अब तान लगाने लगे।

एक ठाकुर साहब भी जहाज़ पर सवार थे। खोजी को गाते देख कर समझे कि यह कोई बड़े वली हैं। क़दमों पर टोपी रख दी और बोले—साईं जी, हमारे हक़ में दुआ कीजिए।

खोजी—खुश रहो बाबा, बेड़ा पार है।

आज़ाद ने खोजी के कान में कहा—यार, यह तो अच्छा उल्लू फँसा! रास्ते में खूब दिल्लगी रहेगी।

ठाकुर साहब बार-बार खोजी से सवाल करते थे और मियाँ खोजी अनापशनाप जवाब देते थे।

ठाकुर—साईं जी, जुमे के दिन सफ़र करना कैसा है?

खोजी—बहुत अच्छा दिन है।

ठाकुर—और जुमेरात?

खोजी—उससे भी अच्छा।

आज़ाद—ठाकुर साहब, आप कब से सफ़र कर रहे हैं?

ठाकुर—जनाब, कोई चालीस बरस हुए।

आज़ाद—चालीस बरस सफ़र करते हो गये और अभी तक आप अच्छे और बुरे दिन पूछते जाते हैं?

ठाकुर—सनीचर के दिन आप सफ़र करके देख लें।

खोजी—हमने इस बारे में बहुत ग़ौर किया है। बुरी साइत का सफ़र कभी पूरा नहीं होता।

ठाकुर—साईं जी, कुछ और नसीहत कीजिए, जिससे मेरा भला हो।

खोजी—अच्छा सुनो, पहली बात तो यह है कि जिस दिन चाहो, सफ़र करो, मगर पहर रात रहे से, तुम्हारी मंजिल दूनी हो जायगी। दूसरी नसीहत यह है कि एक बीबी से ज़्यादा के साथ शादी न करना, अगर वह मर जाय तो दूसरी शादी का खयाल भी दिल में न लाना। तीसरी बात यह है कि रात को दो घंटे तक ठंडे पानी में रह कर खुदा की याद करना। गरमी, जाड़ा, बरसात तीनों मौसिमों में इसका

ख़याल रखना। चौथी नसीहत यह है कि अच्छे खाने और अच्छे कपड़े से परहेज़ रखना। खाने को जौ की रोटी और पीने को औटाया हुआ पानी काफ़ी है।

खोजी ने यह नसीहतें कुछ इस तरह कीं, गोया वह पहुँचे हुए फ़क़ीर हैं। ठाकुर ने अपनी नोटबुक पर ये सब बातें लिख लीं और बोला—साईं जी, आपसे मुलाक़ात करना चाहूँ तो कैसे करूँ?

खोजी—बस, लखनऊ में शिताबजान का मकान पूछते हुए चले आना।

ठाकुर—शिताबजान कौन हैं?

खोजी—कोई हों, तुम्हें इससे मतलब?

यों ही ठाकुर साहब को बनाते हुए रास्ता कट गया और बम्बई सामने से नज़र आने लगा। खोजी की बाँछें खिल गयीं, चिल्ला कर कहा—यारो, ज़रा देखना, शिताबजान की सवारी तो नहीं आयी है। करीमबख्श नामी महरी साथ होगी। अतलस का लहँगा है, कहारों की पगड़ियाँ रँगी हुई हैं, मछलियाँ जरूर लटक रही होंगी। अरे महरी, महरी! क्या बहरी है?

लोगों ने समझाया कि साहब, अभी बंदरगाह तो आने दो। शिताबजान यहाँ से क्योंकर सुन लेंगी? बोले—अजी, हटो भी, तुम क्या जानो। कभी किसी पर दिल आया हो तो समझो? अरे नादान, इश्क़ के कान दो कोस तक की खबर लाते हैं, क्या शिताबजान ने आवाज़ न सुनी होगी? वाह, भला कोई बात है! मगर जवाब क्यों न दिया? इसमें एक लिम है, वह यह कि अगर आवाज़ के साथ ही आवाज़ का जवाब दें तो हमारी नज़रों से गिर जायँ। मज़ा जब है कि हम बौखलाये हुए इधर-उधर ढूँढ़ते और आवाज़ देते हों और वह हमें पीछे से एक धौल जमायें और तिनक कर कहें—मुड़ीकाटा, आँखों का अंधा नाम नैनसुख, गुल मचाता फिरता है, और हम धौल खा कर कहें कि देखिए सरकार, अब की धौल लगायी तो ख़ैर, जो अब लगायी तो बिगड़ जायगी। इस पर वह झल्ला कर इस घुटी हुई खोपड़ी पर तड़ातड़ दो-चार और जमा दें, तब मैं हँस कर कहूँ, तो फिर दो-एक जूते भी लगा दो, इसके बग़ैर तबीयत बेचैन है।

आज़ाद—बिलफ़ेल कहिए तो मैं ही लगा दूँ।

खोजी—अजी नहीं, आपको तकलीफ़ होगी।

आज़ाद—वल्लाह, किस भकुए को ज़रा भी तकलीफ़ हो।

खोजी—मियाँ, पहले मुँह धो आओ, इन खोपड़ियों के सुहलाने के लिए परियों के हाथ चाहिए, तुम जैसे देवों के नहीं।

इतने में समुद्र का किनारा नज़र आया, तो खोजी ने गुल मचा कर कहा—शिताबजान साहब, आपका यह गुलाम, फ़र्ज़िंदाना आदाब-अर्ज़···।

इतना कह चुके थे कि लोगों ने क़हक़हा लगाया और खोजी की समझ में कुछ न आया कि लोग क्यों हँस रहे हैं।

आज़ाद से पूछा कि इस बेमौक़ा हँसी का क्या सबब है? आज़ाद ने कहा—

इसका सबब है आपकी हिमाक़त। क्या आप शिताब के बेटे हैं जो उनको फ़र्ज़िंदाना आदाब बजा लाते हैं, जोरू को कोई इस तरह सलाम करता है ?

खोजी—(गालों पर थप्पड़ लगा कर) अररर, ग़ज़ब हो गया, बुरा हुआ। वल्लाह, इतना ज़लील हुआ कि क्या कहूँ। भाई, इश्क़ में होश-हवास कब ठीक रहते हैं, अनाप-शनाप बातें मुँह से निकल ही जाती हैं, मगर खैर ! अब तो पालकी साफ़-साफ़ नज़र आती है। वह देखिए, महरी सामने डटी खड़ी है। अल्लाह, अब तो महरी भी बाढ़ पर है !

जहाज़ ने लंगर डाला और उतरने लगे। ख्वाजा साहब दूर ही से शिताबजान को ढूँढ़ने लगे। आज़ाद दोनों लेडियों को ले कर खुश्की पर आये तो बम्बई के मिरज़ा साहब ने दौड़ कर उन्हें गले लगाया। फिर दोनों परियों को देख कर ताज्जुब से बोले—इन दोनों को कहाँ से लाये, क्या परिस्तान की परियाँ हैं।

आज़ाद ने अभी कुछ जवाब न दिया था कि खोजी कफ़न फाड़ कर बोल उठे—इधर शिताबजान, इधर, ओ करमबख्श करमफोड़ कमबख्ती के निशान, यहाँ क्यों नहीं आती ! दूर ही से बुत्ते बताती है !

मिरज़ा—किसको पुकारते हो ख्वाजा साहब, मैं बुला लूँ। क्या ब्याह लाये हो कोई परी ? मगर उस्ताद, नाम तो हिंदुस्तान का है, ज़रा दिखा तो दो।

आज़ाद ने खैर-आफ़ियत पूछी और दोनों आदमियों में शाहज़ादा हुमायूँ फ़र की चरचा होने लगी। फिर लड़ाई का ज़िक्र छिड़ गया।

उधर ख्वाजा साहब ने अफ़ीम घोली और चुस्की लगा कर गुल मचाया—शिताबजान प्यारी, मैं तेरे वारी, जल्द से आ री, सूरत दिखा री, आँसू है जारी। जानमन, जिस बिस्तर पर तुम सोयी थीं उसको हर रोज़ सूँघ लिया करता हूँ और उसी की खुशबू पर ज़िंदगी का दार मदार है।

तेरी-सी न बू किसी में पायी;
सारे फूलों को सूँघता हूँ।

मिरज़ा साहब ने कहा—आखिर यह माजरा क्या है। जनाब ख्वाजा साहब, क्या सफ़र में अक़्ल भी खो आये, यह आपको क्या हो गया है ? अगर सच्चे आशिक़ हो तो फ़रियाद कैसी ?

खोजी—जनाब, कहने और करने में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है।

मिरजा—

कब अपने मुँह से आशिक़ शिकवए बेदाद करते हैं;
दहाने ग़ैर से वह मिस्ल नै फ़रियाद करते हैं।

खोजी—मुझसे कहिए तो ऐसे दो करोड़ शेर पढ़ दूँ, आशिक़ी दूसरी चीज है, शायरी दूसरी चीज़।

मिरज़ा—दो करोड़ शेर तो दस करोड़ बरस तक भी आपसे न पढ़े जायँगे। आप दो ही चार शेर फ़रमायें।

खोजी—अच्छा तो सुनिए और गिनते जाइए, आप भी क्या कहेंगे—

यही कह-कहके हिजरे यार में फ़रियाद करते हैं;
वह भूले हमको बैठे हैं जिन्हें हम याद करते हैं।
असीराने कुहन पर ताज़ा वह बेदाद करते हैं,
रही ताक़त न जब उड़ने की तब आज़ाद करते हैं।
रक़म करता हूँ जिस दम काट तेरी तेग़ अब्रू की;
ग़रीबाँ चाक अपना जामए फ़ौलाद करते हैं।
सिफ़त होती है जानाँ जिस ग़ज़ल में तेरे अब्रू की;
तो हम हर बैत पर आँखों से अपनी साद करते हैं।

अब भी न कोई शरमाये तो अंधेर है, दो करोड़ शेर न पढ़ कर सुनाऊँ तो नाम बदल डालूँ। हाँ, और सुनिए—

नहीं हम याद से रहते हैं ग़ाफ़िल एकदम हमदम;
जो बुत को भूल जाते हैं ख़ुदा को याद करते हैं।

आज़ाद—इस वक़्त तो मिरज़ा साहब को आपने ख़ूब आड़े हाथों लिया।

खोजी—अजी, यहाँ कोई एक शेर पढ़े तो हम दस करोड़ शेर पढ़ते हैं। जानते हो कहाँ के रहनेवाले हैं हम ! बम्बईवालों को हम समझते क्या हैं।

इतने में एक औरत ने खोजी को इशारे से बुलाया तो उनकी बाँछें खिल गयीं। बोले—क्या हुक्म है हुज़ूर ?

औरत—ऐ दुर हुज़ूर के बच्चे ! कुछ लाया भी वहाँ से, या खाली हाथ झुलाता चला आता है ?

खोजी—पहले तुम अपना नाम तो बताओ ?

औरत—ऐ लो, पहरों से नाम रट रहा है और अब पूछता है, नाम बता दो। (धप जमा कर) और नाम पूछेगा ?

खोजी—ऐ, तुमने तो धप लगानी शुरू की, जो कहीं अब की हाथ उठाया तो बहुत ही बेढब होगी।

आज़ाद—अरे यार, यह क्या माजरा है ? बेभाव की पड़ने लगी।

खोजी—अजी, मुहब्बत के यही मज़े हैं भाईजान। तुम यह बातें क्या जानो।

मिरज़ा—यह आपकी ब्याहता है या सिर्फ़ मुलाक़ात है ?

शिताब—हमारे बुज़ुर्गों से यह रिश्ता चला आता है।

मिरज़ा—तो यह कहो कि तुम इनकी बहन हो।

खोजी—जनाब, ज़रा सँभल कर फ़रमाइएगा। मैं आपका बड़ा लिहाज़ करता हूँ।

शिताब—ऐ, तो कुछ झूठ भी है। आख़िर आप मेरे हैं कौन ? मुफ़्त में मियाँ बनने का शौक़ चर्राया है ?

खोजी—अरे तो निकाह तो हो ले। क़सम खुदा की, लड़ाई के मैदान में भी दिल तुम्हारी ही तरफ़ रहता था।

आज़ाद—हमेशा याद करते थे बेचारे !

जब आज़ाद लेडियों के साथ गाड़ी में बैठ गये तब मिरज़ा ने खोजी से कहा—चलिए, वह लोग जा रहे हैं।

खोजी—जा रहे हैं तो जाने दीजिए। अब मुद्दत के बाद माशूक से मुलाक़ात हुई है, ज़रा बातें कर लूँ। आप चलिए, मैं अभी हाज़िर होता हूँ।

वह लोग इधर रवाना हुए, उधर शिताबजान ने खोजी को दूसरी गाड़ी में सवार कराया और घर चलीं। ख्वाजा साहब खुश थे कि दिल्लगी में माशूक़ हाथ आया। घर पहुँच कर शिताबजान ने खोजी से कहा—अब कुछ खिलवाइए, बहुत भूख लगी है।

खोजी—भई वाह, मैं सिपाही आदमी, मेरे पास सिवा ढाल-तलवार, बरछी-कटार के और क्या है ? या तमग़े हैं, सो वह मैं किसी को दे नहीं सकता।

शिताब—कमाई करने गये थे वहाँ, या रास्ता नापने ? तमग़े ले कर चाटूँ, तलवार से अपनी गरदन मार लूँ, छूरी भोंक के मर जाऊँ ? छुरी-तलवार से कहीं पेट भरता है ?

खोजी—अभी कुछ खिलवाओ-पिलवाओ, जब हम रिसालदारी करेंगे तो तुमको मालोमाल कर देंगे। अब परवाना आया चाहता है। लड़ाई में मैंने जो बड़े-बड़े काम किये वह तो तुम सुन ही चुकी होगी। दस हज़ार सिपाहियों की नाक काट डाली। उधर दुश्मन की फौज ने शिकस्त पायी, इधर मैंने क़रौली उठायी और मैदान में खट से दाखिल। जिसको देखा कि बिलकुल ठंढा हो गया है, उसकी नाक उड़ा दी। जब तक लड़ाई होती रहती थी, बंदा छिपा बैठा रहता था; कभी पेड़ पर चढ़ गया, कभी किसी झोपड़े में लुक गया। मुफ़्त में जान देना कौन सी अक्लमंदी है। मगर लड़ाई खतम होते ही मैदान में जा पहुँचता था। जिस शहर में जाता था, शहर भर की औरतें मेरे पीछे पड़ जाती थीं, मगर मैं किसी की तरफ़ आँख उठा कर भी न देखता था। ग़रज़ कि लड़ाई में मैंने बड़ा नाम किया, यह मेरी ही जूतियों का सदक़ा है कि आज़ाद पाशा बन बैठे। वह तो जानते भी न थे कि लड़ाई किस चिड़िया का नाम है।

शिताब—मगर यह तो बताओ कि बंदूक से नाक क्योंकर काटी जाती है ?

खोजी—तुम इन बातों को क्या जानो, यह सिपाहियों के समझने की बातें हैं।

इधर आज़ाद मिरज़ा साहब के घर पहुँचे तो बेगम साहब फूली न समायीं। खिदमतगार ने आज़ाद को झुक कर सलाम किया। दोनों दोस्त कमरे में जा कर बैठे। मिरज़ा साहब ने घर में जा कर देखा तो बेगम साहब पलँग पर पड़ी थीं। महरी से पूछा तो मालूम हुआ, आज तबियत कुछ खराब है। बाहर आ कर आज़ाद से कहा—घर में सोती हैं और तबियत भी अच्छी नहीं। मैंने जगाना मुनासिब न समझा। आज़ाद समझे कि बीमारी महज़ बहाना है, हमसे कुछ नाराज़ हैं।

इतने में एक चपरासी ने आ कर मिरज़ा साहब को एक लिफ़ाफ़ा दिया। युनिवर्सिटी

के रजिस्ट्रार ने कुछ सलाह करने के लिए उन्हें बुलाया था। मिरज़ा साहब बोले—भाई, इस वक़्त तो जाने को जी नहीं चाहता। मुद्दत के बाद एक दोस्त आये हैं, उनकी खातिर-तवाज़ा में लगा हुआ हूँ। मगर जब आज़ाद ने कहा कि आप जाइए, शायद कोई ज़रूरी काम हो, तो मिरज़ा साहब ने गाड़ी तैयार करायी और रजिस्ट्रार से मिलने गये।

इधर आज़ाद के पास जैनब ने आ कर सलाम किया।

आज़ाद—कहो जैनब, अच्छी रहीं?

जैनब—हुजूर के जान-माल की दुआ देती हूँ। हुजूर तो अच्छे रहे?

आज़ाद—बेगम साहब क्या अभी आराम ही में हैं? अगर इजाज़त हो तो सलाम कर आऊँ।

जैनब—हुजूर के लिए पूछने की ज़रूरत नहीं, चलिए।

आज़ाद जैनब के साथ अंदर गये तो कमरे में क़दम रखते ही महरी ने कहा—वहीं बैठिए, कुर्सी आती है।

आज़ाद—सरकार कहाँ हैं? बेगम साहब की खिदमत में आदाब अर्ज़ है।

बेगम—बंदगी। आपको जो कुछ कहना हो कहिए, मुझे ज़्यादा बातें करने की फ़ुरसत नहीं।

आज़ाद—खुदा खैर करे, आखिर किस जुर्म में यह खफ़गी है? कौन सा गुनाह हुआ?

बेगम—बस ज़बान न खुलवाइए, ग़ज़ब खुदा का, एक खत तक भेजना क़सम था, कोई इस तरह अपने अज़ीज़ों को तड़पाता है?

आज़ाद—क़ुसूर माफ़ कीजिए, बेशक गुनाह तो हुआ, मगर मैंने सोचा कि खत भेज कर मुफ़्त में मुहब्बत बढ़ाने से क्या फ़ायदा, न जाने ज़िंदा आऊँ या न आऊँ, इसलिए ऐसी फ़िक्र करूँ कि उनके दिल से भूल ही जाऊँ। अगर ज़िंदगी बाक़ी है तो चुटकियों में गुनाह माफ़ करा लूँगा।

इस फ़िक़रे ने बेगम साहब के दिल पर बड़ा असर किया। सारा ग़ुस्सा हवा हो गया। जैनब को नीचे भेजा कि हुक्क़ा भर लाओ, खवास को हुक्म दिया कि पान बनाओ। तब मैदान खाली पा कर चिक उठा दी और बोलीं—वह कहाँ गये हैं?

आज़ाद—किसी साहब ने बुलाया है, उनसे मिलने गये हैं। खुदा ने मुझे यह खूब मौक़ा दिया।

बेगम—क्या कहा, क्या कहा! ज़रा फिर तो कहिएगा, ज़रा सुनूँ तो किस चीज़ का मौक़ा मिला?

आज़ाद—यही हुजूर को सलाम करने का।

बेगम—हाँ, यों बातें कीजिए, अदब के साथ। हुस्नआरा के नाम तुमने कोई खत भेजा था? मुझे लिखा है कि जिस दिन आयें, फ़ौरन तार से इत्तला देना।

आज़ाद—अब तो यही धुन है कि किसी तरह वहाँ पहुँचूँ और ज़िंदगी के अरमान पूरे करूँ।

बेगम—जी नहीं, पहले आपका इम्तहान होगा। आप रंगीन आदमी ठहरे, आपका एतबार ही क्या !

आज़ाद—ओफ्फोह ! यह बदगुमानी। खैर साहब, अख्तियार है, मगर हमारे साथ चलने का इरादा है या नहीं ?

बेगम—नहीं साहब, यह हमारे यहाँ का दस्तूर नहीं। बहनोई के साथ जवान सालियाँ सफ़र नहीं करतीं। वक़्त पर उनके साथ आ जाऊँगी।

आज़ाद—खैर, इतनी इनायत क्या कम है। अब आप जा कर परदे में बैठिए, मैं दीवाना हो जाऊँगा।

बेगम—क्यों साहब, यही आपका इश्क़ है ? इसी बूते पर इम्तहान दीजिएगा ?

बेगम साहब ने वहाँ ज़्यादा देर तक बैठना मुनासिब न समझा। आज़ाद भी बाहर चले गये। ख़िदमतगार ने हुक्क़ा भर दिया। पलंग पर लेटे-लेटे हुक्क़ा पीने लगे तो खयाल आया कि आज मुझसे बड़ी ग़लती हुई, अगर मिरज़ा साहब मुझे घूरते देख लेते तो अपने दिल में क्या कहते। अब यहाँ ज़्यादा ठहरना ग़लती है। खुदा करे, आज के चौथे दिन वहाँ पहुँच जाऊँ। बेगम साहब ने मुझे हिक़ारत की निगाह से देखा होगा।

वह अभी यही सोच रहे थे कि जैनब ने बेगम साहब का एक खत ला कर उन्हें दिया। लिखा था—अभी-अभी मैंने सुना है कि आपके साथ दो लेडियाँ आयी हैं। दोनों कमसिन हैं और आप भी जवान। आग और फूस का साथ क्या ? अगर वाक़ई तुमने इन दोनों के साथ शादी कर ली है तो बड़ा ग़ज़ब किया, फिर उम्मेद न रखना कि हुस्नआरा तुमको मुँह लगायेंगी। तुमने सारी की-करायी मिहनत तक ख़ाक में मिला दी। और अगर शादी नहीं की तो यहाँ लाये क्यों ? तुम्हें शर्म नहीं आती ? हुस्नआरा ग़रीब तो तुम्हारी मुहब्बत की आग में जले और तुम सौतों को साथ लाओ—क्या क़हर है क्योंकर न उठे दर्द जिगर में,

> मेरी तो बग़ल ख़ाली है और आपके बर में।
> एक आन भी मुझसे न मिलो आठ पहर में,
> घर छोड़के अपना रहो यों और के घर में।

तुम और ग़ैरों को साथ लाओ, तुम्हारी तरह हुस्नआरा भी अब तक शादी कर लेतीं तो तुम क्या बना लेते ? तुमको इतना भी ख्याल न रहा कि हुस्नआरा के दिल पर क्या असर होगा ! तुम्हारे हज़ारों चाहनेवाले हैं तो उसके गाहक भी अच्छे-अच्छे शाहज़ादे हैं। मैंने ठान ली है कि हुस्नआरा को आपके हाल से इत्तला दूँ, और कह दूँ कि अब वह आज़ाद नहीं रहे, अब दो-दो बग़ल में रहती हैं, उस पर बहू-बेटियों पर बुरी निगाह रखते हैं। अगर तुमने मेरा इतमिनान न कर दिया तो पछताओगे।

यह खत पढ़ कर आज़ाद ने जैनब से कहा—क्यों, तुम इधर की उधर लगा-लगा कर आपस में लड़वाती हो ? तुमने उनसे जाके क्या कह दिया, मुझसे भी पूछ लिया होता।

जैनब—ऐ हुज़ूर, तो मेरा इसमें क्या क़ुसूर। मुझसे जो सरकार ने पूछा, वह मैंने बयान कर दिया। इसमें बंदी ने क्या गुनाह किया।

आज़ाद—ख़ैर, जो हुआ सो हुआ, लाओ क़लम-दावात।

आज़ाद ने उसी वक़्त इस ख़त का जवाब लिखा—बेगम साहब की ख़िदमत में आदाब-अर्ज़ करता हूँ। आप मुझ पर बेवफ़ाई का इलज़ाम लगाती हैं। आपको शायद यक़ीन न आयेगा, मगर अक़सर मुक़ामों पर ऐसी-ऐसी परियाँ मुझ पर रीझी हैं कि अगर हुस्नआरा का सच्चा इश्क़ न होता तो मैं हिंदोस्तान में आने का नाम न लेता, मगर अफ़सोस है कि मेरी कुल मिहनत बेक़ार गयी। मेरा ख़ुदा जानता है, जिन-जिन जंगलों, पहाड़ों पर मैं गया, कोई कम गया होगा। हफ़्तों एक अँधेरी कोठरी में क़ैद रहा, जहाँ किसी जानदार की सूरत नज़र न आती थी। और यह सब इसलिए कि एक परी मुझसे शादी करना चाहती थी और मैं इन्कार करता था कि हुस्नआरा को क्या मुँह दिखाऊँगा। यह दोनों लेडियाँ जो मेरे साथ हैं, उन्होंने मुझ पर बड़े-बड़े एहसान किये हैं। गाढ़े वक़्त में काम आयी हैं, वरना आज आज़ाद यहाँ न होता। मगर इतने पर भी आप नाराज़ हो रही हैं, इसे अपनी बदनसीबी के सिवा और क्या कहूँ। ख़ुदा के लिए कहीं हुस्नआरा को न लिख भेजना। और अगर यही चाहती हो कि मैं जान दूँ तो साफ़-साफ़ कह दो। हुस्नआरा को लिखने से क्या फ़ायदा। और क्या लिखूँ। तबीयत बेचैन है।

बेगम साहब ने यह ख़त पढ़ा तो ग़ुस्सा ठंडा हो गया, छमछम करती हुई परदे के पास आ कर खड़ी हुई तो देखा—आज़ाद सिर पर हाथ रख कर रो रहे हैं। आहिस्ता से पुकारा—आज़ाद !

जैनब—हुज़ूर, देखिए कौन सामने खड़ा है ? ज़री उधर निगाह तो कीजिए।

बेगम—आज़ाद, जो रोये तो हमीं को है-है करे। जैनब, ज़रा सुराही तो उठा ला, मुँह पर छींटे दे।

जैनब—हुज़ूर, क्या ग़ज़ब कर रहे हैं, वह सामने कौन खड़ा है ?

आज़ाद—(बेगम साहब की तरफ़ रुख कर के) क्या हुक्म है ?

बेगम—मेरा तो कलेजा धक-धक कर रहा है।

आज़ाद—कोई बात नहीं। ख़ुदा जाने, इस वक़्त क्या याद आया। आपको तकलीफ़ होती है, आप जायँ, मैं बिलकुल अच्छा हूँ।

बेगम—अब चोंचले रहने दो, मुँह धो डालो। 'वाह, मर्द हो कर आँसू बहाते हो ? तुमसे तो छोकरियाँ अच्छी। यह तुम लड़ाई में क्या करते थे ?

आज़ाद—जलाओ और उस पर ताने दो।

बेगल—क्या ख़ूब, जलाने की एक ही कही। जलाते तुम हो या मैं ? एक छोड़ दो-दो वहाँ से लाये, ऊपर से बातें बनाते हो, मुँह दिखाने क़ाबिल नहीं रखा अपने को। हुस्नआरा ने उड़ती ख़बर पायी थी कि आज़ाद ने किसी औरत को ब्याह लिया तो पछाड़ें खाने लगीं। एक तुम हो कि जोड़ी साथ लाये और ऊपर से

कहते हो, जलाओ। तुम्हें शर्म भी नहीं आती?

आज़ाद—क्या टेढ़ी खीर है, न खाते बने, न छोड़ते बने।

बेगम—तो फिर साफ़-साफ़ क्यों नहीं बता देते?

आज़ाद—ब्याहता बीबी हैं दोनों, और क्या कहें।

बेगम—अच्छा साहब, ब्याहता बीबी नहीं, दोनों आपकी बहनें सही, अब खुश हुए? बरसों बाद आये तो एक काँटा साथ लेके। भला सोचो, मैं चुपकी हो रहूँ तो हुस्नआरा क्या कहेगी कि वाह बहन, तुमने हमको लिखा भी नहीं। लेकिन दो में क्या फ़ायदा होगा तुम्हें?

आज़ाद—आप दिल्लगी करती हैं और मैं चुप हूँ। फिर मेरी भी ज़बान खुलेगी।

बेगम—तुम हमको सिर्फ़ इतना बतला दो कि यह दोनों यहाँ किस लिए आयी हैं, तो मैं चुप ही रहूँ।

आज़ाद—तो उन दोनों को यहाँ बुला लाऊँ?

बेगम—उनको आने दो, उनसे सलाह लेके जवाब दूँगी।

आज़ाद—तो क्या आप हममें और उनमें कोई फ़र्क़ समझती हैं। मैं तो तुमको और हुस्नआरा को एक नज़र से देखता हूँ।

बेगम—बस, अब मैं कह बैठूँगी। बड़े बेशर्म हो, छटे हुए बेहया।

इतने में जैनब ने आ कर कहा—मिरज़ा साहब आ गये। बेगम साहब झपट कर कोठे पर हो रहीं और आज़ाद बारादरी में आ कर लेट रहे।

मिरजा—आपने अभी तक हम्माम किया या नहीं? बड़ी देर हो गयी है। जिस तरफ़ जाता हूँ, लोग गाड़ी रोक कर आपका हाल पूछने लगते हैं। कल शाम को सब लोग आपसे टाउनहाल में मिलना चाहते हैं। हाँ, यह तो फ़रमाइए, यह दोनों परियाँ कौन हैं? एक तो उनमें से किसी और मुल्क की मालूम होती है।

आज़ाद—एक तो रूस की हैं और दूसरी कोहक़ाफ़ की।

मिरज़ा—यार, बुरा किया। हुस्नआरा सुनेंगी तो क्या कहेंगी?

इधर तो यह बातें हो रही थीं, उधर शिताबजान ने खोजी से कहा—ज़रा अकेले में चलिए, आपसे कुछ कहना है। खोज़ी ने कहा—खुदा की कुदरत है कि माशूक़ तक हमसे अकेले में चलने को कहते हैं। जो हुक्म हो, बजा लाऊँ। अगर तोप के मोहरे पर भेज दो तो अभी चला जाऊँ। यह तो कहो, तुम्हारे सबब से चुप हूँ, नहीं अब तक दस-पाँच को क़त्ल कर चुका होता।

यह कह कर ख्वाजा साहब झपट कर बाहर निकले। इत्तिफ़ाक़ से एक गाड़ीवान आहिस्ता-आहिस्ता गाड़ी हाँकता चला जाता था। खोजी उसे गालियाँ देने लगे—भला बे गीदी, भला, खबरदार जो आज से यह बेअदबी की। तू जानता नहीं, हम कौन हैं? हमारे मकान की तरफ़ से गाता हुआ निकलता है। हमें भी रिआया समझ लिया है। भला बी शिताबजान गाड़ी की घड़घड़ाहट सुनेंगी तो उनके कानों को कितना नागवार लगेगा! गाड़ीवाला पहले तो घबराया कि यह माजरा क्या है!

गाड़ी रोक कर ख़ोजी की तरफ़ घूरने लगा। मगर जब ख़्वाजा साहब झपट कर गाड़ी के पास पहुँचे, और चाहा कि लकड़ी जमायें कि उसने इनके दोनों हाथ पकड़ लिये। अब आप सिटपिटा रहे हैं और वह छोड़ता ही नहीं।

ख़ोजी—कह दिया, ख़ैर इसी में है कि हमारा हाथ छोड़ दो, वरना बहुत पछताओगे। मैं जो बिगड़ूँगा तो एक पलटन के मनाये भी न मानूँगा।

गाड़ीवान—हाथ तो अब तुम्हारे छुड़ाये नहीं छूट सकता।

ख़ोजी—लाना तो मेरी करौली।

गाड़ीवान—लाना तो मेरा ढाई तलेवाला चमरौधा।

ख़ोजी—शरीफ़ों में ऐसी बातें नहीं होतीं।

गाड़ीवान—शरीफ़ कभी तुम्हारे बाप भी थे कि तुम्हीं शरीफ़ हुए ?

ख़ोजी—अच्छा, हाथ छोड़ दो। वरना इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि उम्र भर याद करोगे।

गाड़ीवान ने इस पर झल्ला कर ख़ोजी का हाथ मरोड़ना शुरू किया। ख़ोजी की जान पर बन आयी, मगर क्या करें। सबसे ज़्यादा ख़्याल इस बात का था कि कहीं शिताबजान न देख लें, नहीं तो बिलकुल नज़रों से गिर जाऊँ।

ख़ोजी—कहता हूँ, हाथ छोड़ दे, मैं कोई ऐसा-वैसा आदमी नहीं हूँ।

गाड़ीवान—मैं तो अपना गाता हुआ चला जाता था। आपने गालियाँ क्यों दीं ?

ख़ोजी—हमारे घर की तरफ़ से क्यों गाते जाते थे ?

गाड़ीवान—आप मना करनेवाले कौन ? क्या किसी की ज़बान बंद कर दीजिएगा ?

बारे कई आदमियों ने गाड़ीवान को समझा कर ख़ोजी का हाथ छुड़ाया। ख़ोजी झाड़-पोंछ कर अंदर गये और शिताबजान से बोले—मैं बात पीछे करता हूँ, क़रौली पहले भोंकता हूँ। पाजी गाता हुआ जाता था। मैंने पकड़ कर इतनी चपतें लगायीं कि भुरता ही बना दिया। मेरे मुँह में आग बरसती है। अच्छा, अब यह फ़रमाइए कि किस नेकबख़्त बदनसीब से तुम्हारी शादी पहले हुई थी वह अब कहाँ है और कैसा आदमी था ?

शिताबजान—यह तो मैं पीछे बतलाऊँगी। पहले यह फ़रमाइए कि उसको नेकबख़्त कहा तो बदनसीब क्यों कहा ? जो नेकबख़्त है वह बदनसीब कैसे हो सकता है ?

ख़ोजी—क़सम ख़ुदा की, मेरी बातें जवाहिरात में तौलने के क़ाबिल हैं। नेकबख़्त इसलिए कहा कि तुम जैसी बीबी पायी। बदनसीब इसलिए कहा कि या तो वह मर गया या तुमने उसे निकाल बाहर किया।

शिताबजान—अच्छा सुनिए, पहले मेरी शादी एक ख़ूबसूरत जवान के साथ हुई थी। जिसकी नज़र उस पर पड़ी, रीझ गया।

ख़ोजी—यहाँ भी तो वही हाल है। घर से निकलना मुश्किल है।

शिताबजान—हाज़िर-जवाब ऐसा था कि बात की बात में ग़ज़लें कह डालता था।

खोजी—यह बात मुझमें भी है। दस हज़ार शेर एक मिनट में कह दूँ, एक कम न एक ज़्यादा!

शिताबजान—मैं यह कब कहती हूँ कि तुम उससे किसी बात में कम हो। अव्वल तो जवान गभरू, अभी मसें भींगती हैं। आदमी क्या, शेर मालूम होते हो। फिर सिपाही आदमी हो, उस पर शायर भी हो। बस ज़रा झल्ले हो, इतनी खराबी है।

खोजी—अगर मेरा हुक्म मानती हो तो मोम हो जाऊँगा। हाँ, लड़ोगी तो हमारा मिज़ाज बेशक झल्ला है।

शिताबजान—मियाँ, मैं लौंड़ी बनके रहूँगी। मुझसे लड़ाई-झगड़े से वास्ता? मगर यह बताओ कि रहोगे कहाँ? मैं बम्बई में रहूँगी। तुम्हारे साथ मारी-मारी न फिरूँगी।

खोजी—तुम जहाँ रहोगी, वहीं मैं रहूँगा; मगर...

शिताबजान—अगर-मगर मैं कुछ नहीं जानती। एक तो तुमको अफ़ीम न खाने दूँगी! तुमने अफ़ीम खायी और मैंने किसी बहाने से ज़हर खिला दिया।

खोजी—अच्छा न खायेंगे। कुछ ज़रूरी है कि अफ़ीम खाये ही। न खायी, पी ली, चलो छुट्टी हुई।

शिताबजान—पीने भी न दूँगी। दूसरी शर्त यह है कि नौकरी ज़रूर करो, बग़ैर नौकरी के गुज़ारा नहीं। तीसरी शर्त यह है कि मेरे दोस्त और रिश्तेदार जो आते हैं, बदस्तूर आया करेंगे।

खोजी—वाह, कहीं आने न दूँ। इन बदमाशों को फटकने न दूँगा।

शिताबजान—अच्छा तो कल मेरे घर चलो, वहीं हमारा निकाह होगा।

दूसरे दिन खोजी शिताबजान के साथ उसके घर चले। बम्बई से कई स्टेशन के बाद शिताबजान गाड़ी से उतर पड़ीं और खोजी से कहा—अब आपके पास जितने रुपये-पैसे हों, चुपके से निकाल कर रख दो। मेरे घरवाले बिना नज़राना लिये शादी न करेंगे।

खोजी ने देखा कि यहाँ बुरे फँसे। अब अगर कहते हैं कि मेरे पास रुपये नहीं हैं तो हेठी होती है। उन्होंने समझा था कि शादी का दो घड़ी मज़ाक़ रहेगा, मगर अब जो देखा कि सचमुच शादी करनी पड़ेगी तो चौकन्ने हुए। बोले—मैं तो दिल्लगी करता था जी। शादी कैसी और ब्याह कैसा? कुछ ऊपर साठ बरस का तो मेरा सिन है, अब भला मैं शादी क्या करूँगा। तुम अभी जवान हो, तुमको सैकड़ों जवान मिल जायेंगे।

शिताबजान—तुमको इससे मतलब क्या! इसकी मुझे फ़िक्र होनी चाहिए। जब मेरा तुम पर दिल आया और तुम भी निकाह करने पर राज़ी हुए तो अब इनकार करना क्या माने। अच्छे हो तो मेरे, बुरे हो तो मेरे।

मियाँ खोजी घबराये, सिट्टी-पिट्टी भूल गयी। अपनी अक़्ल पर बहुत पछताये

और उसी वक़्त आज़ाद के नाम यह खत लिखा—मेरे बड़े भाई साहब, सलाम! मेरी आँख से अब ग़फ़लत का परदा उठ गया। मैं कुछ ऊपर साठ बरस का हूँगा। इस सिन में निकाह का खयाल सरासर ग़ैरमुनासिब है। मगर शिताबजान मुझ पर बुरी तरह आशिक़ हो गयी हैं। उसका सबब यह है कि जिस तरह मेरा जिस्म चोर है उसी तरह मेरी सूरत भी चोर है। मुझे कोई देखे तो समझे कि हड्डियाँ तक गल गयी हैं, मगर आप खूब जानते हैं कि इन्हीं हड्डियों के बल पर मैंने मिस्र के नामी पहल-वान को लड़ा दिया और बुआ ज़ाफ़रान जैसी देवनी की लातें सहीं। दूसरा होता, तो कचूमर निकल जाता। उसी तरह मेरी सूरत में भी यह बात है कि जो देखता है, आशिक़ हो जाता है। मैं खुद सोचता हूँ कि यह क्या बात है, मगर कुछ समझ में नहीं आता। खैर, अब आपसे यह अर्ज़ है कि खत देखते मेरी मदद के लिए दौड़ो, वरना मौत का सामना है। सोचा था कि शादी न होगी तो लोग हँसेंगे कि आज़ाद तो दो-दो साथ लाये और ख्वाजा साहब मोची के मोची रहे। लेकिन यह क्या मालूम था कि यह शादी मेरे लिये ज़हर होगी। ज़रा शर्तें तो सुनिए—अफ़ीम छोड़ दो और नौकरी कर लो। अब बताइए कि अफ़ीम छोड़ दूँ तो ज़िंदा कैसे रहूँ? अब रही नौकरी। यहाँ लड़कपन से फ़िक़रेबाजों की सोहबत में रहे। गप्पें उड़ाना, बातें बनाना, अफ़ीम की चुस्की लगाना हमारा काम है। भला हमसे नौकरी क्या होगी, और करना भी चाहें तो किसकी नौकरी करें। सरकारी नौकरी तो मिलने से रही, वहाँ तो आदमी पचपन साल का हुआ और निकाला गया, और यहाँ पच-पन और दस पैंसठ बरस के हैं। हम तो इसी काम के हैं कि किसी नवाबज़ादे की सोहबत में रहें और उसको ऐसा पक्का रईस बना दें कि वह भी याद करे। चंडू का क़वाम हमसे बनवा ले, अफ़ीम ऐसी पिलायें कि उम्र भर याद करे, रहा यह कि हम जमाखर्च लिखें, यह हमसे न होगा, जिसको अपना काम ग़ारत कराना हो वह हमें नौकर रखे। इसलिए अगर मेरा गला यहाँ से छुड़ा दो तो बड़ा एहसान हो। खुदा जाने, तुम लोग मुझे क्यों खाक में मिलाते हो, तुम्हारे साथ रूम गया, तुम्हारी तरफ़ से लड़ा-भिड़ा, वक़्त-बेवक़्त काम आया और अब तुम मुझे ज़बह किये देते हो।

यह खत लिख कर शिताबजान को दिया कि आज़ाद के पास जल्द पहुँचा दो। शादी के मामले में उनसे कुछ सलाह करनी है।

शिताबजान—सलाह की क्या ज़रूरत है भला?

खोजी—शादी-ब्याह कोई खाला जी का घर नहीं है, ज़रा आदमी को इस बारे में ऊँच-नीच सोच लेना चाहिए, मैंने सिर्फ़ यह पूछा है कि तुम्हारी शर्तें मंजूर करूँ या नहीं।

शिताबजान—अच्छा जाओ, मैं कोई शर्त नहीं करती।

खोजी—अब मंजूर, दिल से मंजूर, मगर यह खत तो भेज दो।

अब सुनिए कि शिताबजान के साथ एक खाँ साहब भी थे। मालवे के रहनेवाले।

उन्होंने खोजी को दो दिन में इतनी अफ़ीम पिला दी जितनी वह चार दिन में भी न पीते। सफ़र में सेहत भी कुछ बिगड़ गयी थी। दो ही दिन में चुर्र-मुर्र हो गये। लेटे-लेटे ख़ाँ साहब से बोले—जनाब, दूसरा इतनी अफ़ीम पीता तो बोल जाता, क्या मजाल कि इस शहर में कोई मेरा मुक़ाबिला कर सके, और इस शहर पर क्या मौक़ूफ़ है, जहाँ कहिए, मुक़ाबिले के लिए तैयार हूँ, कोई तोले भर पिये तो मैं सेर भर पी जाऊँ।

ख़ाँ साहब—मगर उस्ताद, आज कुछ अंजर-पंजर ढीले नज़र आते हैं, शायद अफ़ीम ज़्यादा हो गयी।

खोजी—वाह, ऐसा कहीं कहिएगा भी नहीं। जब जी चाहे, साथ बैठ कर पी लीजिए।

शाम तक खोजी की हालत और भी ख़राब हो गयी। शिताबजान ने उन्हें दिक़ करना शुरू किया। ऐ आग लगे तेरे सोने पर मरदुए, कब तक सोता रहेगा!

खोजी—सोने दो, सोने दो।

शिताब—भला ख़ैर, हम तो समझे थे, ख़बर आ गयी।

ख़ाँ—कहती किससे हो, वह पहुँचे ख़ुदागंज।

शिताब—ऐ फिर पीनक आ गयी, अभी तो ज़िंदा हो गया था।

ख़ाँ—(कान के पास जा कर) ख़्वाजा साहब!

खोजी—ज़रा सोने दो भाई।

शिताब—मेरे यहाँ पीनकवालों का काम नहीं है।

ख़ाँ—ख़्वाजा साहब, अरे ख़्वाजा साहब, ऐ बोलते ही नहीं! चल बसे!

ख़्वाजा साहब की हालत जब बहुत ख़राब हो गयी, तो एक हकीम साहब बुलाये गये। उन्होंने कहा—ज़हर का असर है। नुस्ख़ा लिखा। बारे कुछ रात जाते-जाते नशा टूटा। खोजी की आँखें खुलीं।

शिताब—मैं तो समझी थी, तुम चल बसे।

खोजी—ऐसा न कहो भाई, जवानी की मौत बुरी होती है।

शिताब—मर मुड़ीकाटे, अभी जवान बना है!

खोजी—बस ज़बान सँभालो, हम समझ गये कि तुम कोई भठियारी हो। मैं अगर अपने हालात बयान करूँ तो आँखें खुल जायें। हम अमीर-कबीर के लड़के हैं। लड़कपन में हमारे दरवाजे पर हाथी बँधता था, तुम जैसी भठियारियों को मैं क्या समझता हूँ।

यह कह कर आप मारे ग़ुस्से के घर से निकल खड़े हुए, समझते थे कि शिताबजान मुझ पर आशिक़ है ही, उससे भला कैसे रहा जायगा, ज़रूर मुझे तलाश करने आयेगी, लेकिन जब बहुत देर गुज़र गयी और शिताबजान ने ख़बर न ली तो आप लौटे! देखा तो शिताबजान का कहीं पता नहीं, घर का कोना-कोना टटोला, मगर शिताबजान वहाँ कहाँ? उसी महल्ले में एक हबशिन रहती थी। खोजी ने

जा कर उससे अपना सारा क़िस्सा कहा, तो वह हँस कर बोली—तुम भी कितने अहमक़ हो। शिताबजान भला कौन है? तुमको मिरज़ा साहब और आज़ाद ने चकमा दिया है।

खोजी को आज़ाद की बेवफ़ाई का बहुत मलाल हुआ। जिसके साथ इतने दिनों तक जान-जोखिम करके रहे, उसने हिंदुस्तान में लाके उन्हें छोड़ दिया। खूब रोये, तब हबशिन से बातें करने लगे—

खोजी—क़िस्मत कहाँ से हमें कहाँ लायी?

हबशिन—आपका घोंसला किस झाड़ी में है?

खोजी—हम खोजिस्तान के रहनेवाले हैं।

हबशिन—यह किस जगह का नाम लिया? खोजिस्तान तो किसी जगह का नाम नहीं मालूम होता।

खोजी—तो क्या सारी दुनिया तुम्हारी देखी हुई है? खोजिस्तान एक सूबा है, शकरक़ंद और जिलेबिस्तान के क़रीब। बताशा नदी उसे सैराब करता है।

हबशिन—भला शकरक़ंद भी कोई देस है?

खोजी—है क्यों नहीं, समरक़ंद का छोटा भाई है।

हबशिन—वहाँ आप किस मुहल्ले में रहते थे?

खोजी—हलुवापुर में।

हबशिन—तब तो आप बड़े मीठे आदमी हैं।

खोजी—मीठे तो नहीं, हैं तो तीखे, नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते, मगर मीठी नज़र के आशिक़ हैं—ख्वाहिश न क़ंद की है, न तालिब शकर के हैं;

चस्के पड़े हुए तेरी मीठी नज़र के हैं।

हबशिन—तो आप भी मेरे आशिक़ों में हैं?

खोजी—आशिक़ कोई और होंगे, हम माशूक़ों के माशूक़ हैं। सारी दुनिया छान डाली, पर जहाँ गया, माशूक़ों के मारे नाक में दम हो गया। बुआ ज़ाफ़रान नामी एक औरत हम पर इतनी रीझी कि पट्टे पकड़के दे जूता दे जूता मारके उड़ा दिया। मगर हमारी बहादुरी देखो कि उफ़् तक न की।

हबशिन—हमको यक़ीन क्योंकर आये? हम तो जब जानें कि सिर झुकाओ और हम दो-चार लगायें, फिर देखें, कैसे नहीं उफ़् करते।

खोजी—हाँ, हम हाज़िर हैं, मगर आज अभी अफ़ीम यों ही सी पी है। जब नशा जमे तब अलबत्ता आज़मा लो।

हबशिन—ऐ है, फिर निगोड़ी अफ़ीम का नाम लिया, मरते-मरते बचे और अब तक अफ़ीम ही अफ़ीम कहते जाते हो!

खोजी—तुम इसके मज़े क्या जानो। अफ़ीम खाना फ़क़ीरी है। ग़रूर को तो यह खाक में मिला देती है। मैं कितनी ही जगह पिटा, कभी जूतियाँ खायीं, कभी कोई काँजीहौस ले गया, मगर हमने कभी जवाब न दिया।

हबशिन चली गयी तो खोजी साहब ने एक डोली मँगवायी और उसमें बैठ कर चंडूखाने पहुँचे। लोगों ने इन्हें देखा तो चकराये कि यह नया पंछी कौन फँसा।

खोजी—सलाम आलेकुम भाइयो!

इमामी—आलेकुम भाई, आलेकुम। कहाँ से आना हुआ?

खोजी—ज़रा टिकने दो, फिर कहूँ। दो बरस लड़ाई पर रहा, जब देखो मोरचा-बंदी, मर मिटा, मगर नाम भी वह किया कि सारी दुनिया में मशहूर हो गया।

इमामी—लड़ाई कैसी? आजकल तो कहीं लड़ाई नहीं है।

खोजी—तुम घर में बैठे बैठे दुनिया का क्या हाल जानो।

क़ादिर—क्या रूम-रूस की लड़ाई से आते हो क्या?

खोजी—ख़ैर, इतना तो सुना।

इमामी—अजी, यह न कहिए, इनको सारी दुनिया का हाल मालूम रहता है। कोई बात इनसे छिपी थोड़ी है।

क़ादिर—रूमवाले ने रूस के बादशाह से कहा कि जिस तरह तुम्हारा चचा हकीमी कौड़ी देता था उसी तरह तुम भी दिया करो, मगर उसने न माना। इसी बात पर तक़रार हुई, तो रूमवाले ने कहा, अच्छा, अपने चचा की क़ब्र में चलो और पूछ देखो, क्या आवाज़ आती है। बस जनाब, सुनने की बात है कि रूमवाले ने न माना। रूम के बादशाह के पास हज़रत सुलेमान की अँगूठी थी। उन्होंने जो उसे हवा में उछाला, तो सैकड़ों जिन्न हाज़िर हो गये। बादशाह ने कहा कि रूस में चारों तरफ़ आग लगा दो। चारों तरफ़ आग लग गयी। तब रूस के बादशाह ने वज़ीरों को जमा करके कहा, आग बुझाओ, बस सवा करोड़ भिश्ती मशकें भर भरके दौड़े। एक-एक मशक में दो-दो लाख मन पानी आता था।

खोजी—क्यों साहब, यह आपसे किसने कहा है?

इमामी—अजी, यह न पूछो, इनसे फ़रिश्ते सब कह जाते हैं।

क़ादिर—बस साहब, सुनने की बातें हैं कि सवा दो करोड़ मशकें मुल्क के चारों कोनों पर पड़ती थीं, मगर आग बढ़ती ही जाती थी। तब बादशाह ने हुक्म दिया कि दो करोड़ लाख भिश्ती काम करें और मशकों में छब्बीस-छब्बीस करोड़ मन पानी हो।

खोजी—ओ गीदी, क्यों इतना झूठ बोलता है?

शुबराती—मियाँ, सुनने दो भाई, अजब आदमी हो।

खोजी—अजी, मैं तो सुनते-सुनते पागल हो गया।

क़ादिर—आप लखनऊ के महीन आदमी, उन मुल्कों का हाल क्या जानें। रूम, रूस, तूरान, अनूपशहर का हाल हमसे सुनिए।

इमामी—वहाँ के लोग भी देव होते हैं देव!

क़ादिर—रूस के बादशाह की खुराक का हाल सुनो तो चकरा जाओ। सबेरे मुँह अँधेरे ६ बकरों की यख़नी, चार बकरों के कबाब, दस मुर्ग़ों का पोलाव और दस

मुरैले तरकीब से खाते हैं, और ९ बजे के वक़्त सौ मुर्गों का शोरबा और दस सेर ठंडा पानी, बारह बजे जवाहिरात का शरबत, कभी पचास मन, कभी साठ मन, चार बजे दो कच्चे बकरे, दो कच्चे हिरन, शाम को शराब का एक पीपा और पहर रात गये गोश्त का एक छकड़ा।

इमामी—जब तो ताक़तें होती हैं कि सौ-सौ आदमियों को एक आदमी मार डालता है। हिंदोस्तान का आदमी क्या खा कर लड़ेगा।

शुबराती—हिंदोस्तान में अगर हाज़मे की ताकत कुछ है तो चंडू के सबब से, नहीं तो सब के सब मर जाते।

इमामी—सुना, रूसवाले हाथी से अकेले लड़ जाते हैं।

क़ादिर—हमसे सुनो, दस हाथी हों और एक रूसी तो वह दसों को मार डालेगा।

ख़ोजी—आप रूस कभी गये भी हैं?

क़ादिर—अजी हम घर बैठे सारी दुनिया की सैर कर रहे हैं।

ख़ोजी—हम तो अभी लड़ाई के मैदान से आते हैं, वहाँ एक हाथी भी न देखा।

क़ादिर—रूमवालों ने जब आग लगा दी, तो वह ग्यारह बरस, ग्यारह महीने, ग्यारह दिन, ग्यारह घंटे जला की। अब जाके जरी-जरी आग बुझी है, नहीं तो अजब नक़्शा था कि सारा मुल्क जल रहा है और पानी का छिड़काव हो रहा है। रूमवाले जब रात को सोते हैं तो हर मकान में दो देवों का पहरा रहता है।

ख़ोजी—अरे यारो, इस झूठ पर ख़ुदा की मार, हम बरसों रहे, एक देव भी न देखा।

क़ादिर—आपकी तो सूरत ही कहे देती है कि आप रूम ज़रूर गये होंगे। ख़ुदा झूठ न बुलवाये तो घर के बाहर क़दम नहीं रखा।

ख़ोजी समझे थे कि चंडूख़ाने में चल कर अपने सफ़र का हाल बयान करेंगे और सबको बंद कर देंगे, चंडूख़ाने में इनकी तूती बोलने लगेगी, मगर यहाँ जो आये तो देखा कि उनके भी चचा मौजूद हैं। झल्ला कर पूछा, बतलाओ तो रूम के पायतख़्त का क्या नाम है?

क़ादिर—वाह, इसमें क्या रखा है, भला-सा नाम तो है, हाँ मर्ज़बान।

ख़ोजी—इस नाम का तो वहाँ कोई शहर ही नहीं।

क़ादिर—अजी, तुम क्या जानो। मर्ज़बान वह शहर है जहाँ पहाड़ों पर परियाँ रहती हैं। वहाँ पहाड़ों पर बादल पानी पी-पी कर जाते हैं और सबको पानी पिलाते हैं।

ख़ोजी—तो वह कोई दूसरा रूम होगा। जिस रूम से मैं आता हूँ वह और है।

क़ादिर—अच्छा बताओ, रूम के बादशाह-का क्या नाम है?

ख़ोजी—सुलतान अब्दुलहमीद ख़ाँ।

क़ादिर—बस-बस, रहने दीजिए आप नहीं जानते, उस पर दावा यह है कि हम रूम से आते हैं। भला लड़ाई का क्या नतीजा हुआ, यही बताइए?

ख़ोजी—पिलौना की लड़ाई में तुर्क हार गये और रूसियों ने फ़तह पायी।

क़ादिर—क्या बकता है बेहूदा। खबरदार जो ऐसा कहा होगा तो इतने जूते लगाऊँगा कि भुरकस ही निकल जायगा।

इमामी—हमारे बादशाह के हक़ में बुरी बात निकालता है, बेअदब कहीं का। बच्चा, यहाँ ऐसी बातें करोगे तो पिट जाओगे।

खोजी—सुनो जी, हम फ़ौज़ी आदमी हैं।

क़ादिर—अब ज़्यादा बोलोगे तो उठ कर कचूमर ही निकाल दूँगा।

शुबराती—यह हैं कहाँ के, ज़रा सूरत तो देखो, मालूम होता है, कब्र से निकल भागा है।

खोजी को सबने मिल कर ऐसा डपटा कि बेचारे क़रौली और तमंचा भूल गये। गये तो बड़े जोम में थे कि चंडूखाने में खूब डींग हाँकेंगे, मगर वहाँ लेने के देने पड़ गये। चुपके से चंडू के छींटे उड़ाये और लम्बे हुए। रास्ते में क्या देखते हैं कि बहुत से आदमी एक जगह खड़े है। आपने घुस कर देखा तो एक पहलवान बीच में बैठा है और लोग खड़े उसकी तारीफ़ों के पुल बाँध रहे हैं। खोजी ने समझा कि हमने भी तो मिस्र के पहलवान को पटका था, हम क्या किसी से कम हैं? इस जोम में आपने पहलवान को ललकारा—भाई पहलवान, हम इस वक़्त इतने खुश हैं कि फूले नहीं समाते। मुद्दत के बाद आज अपना जोड़ीदार पाया।

पहलवान—तुम कहाँ के पहलवान हो भाई साहब?

खोजी—यार, क्या बतायें। अपने साथियों में कोई रहा ही नहीं। अब तो कोई पहलवान जँचता ही नहीं।

पहलवान—उस्ताद, कुछ हमको भी बताओ।

खोजी—अजी, तुम खुद उस्ताद हो।

पहलवान—आप किसके शागिर्द हैं?

खोजी—शागिर्द तो भाई, किसी के नहीं हुए। मगर हाँ, अच्छे-अच्छे उस्तादों ने लोहा मान लिया। हिंदोस्तान से रूम तक और रूम से रूस तक सर कर आया। तुम आजकल कहाँ रहते हो?

पहलवान—आजकल एक नवाब साहब के यहाँ हैं। तीन रुपया रोज़ देते हैं। एक बकरा, आठ सेर दूध और दो सेर घी बँधा है। नवाब अमजदअली नाम है।

खोजी—भला वहाँ चंडू की भी चर्चा रहती है?

पहलवान—कुछ मत पूछिए भाई साहब, दिन-रात।

खोजी—भला वहाँ मस्तियाबेग भी हैं?

पहलवान—जी हाँ हैं, आप कैसे जान गये?

खोजी—अजी, वह कौन सा नवाब है जिसकी हमने मुसाहबी न की हो। नवाब अमजदअली के यहाँ बरसों रहा हूँ। बटेरों का अब भी शौक़ है या नहीं?

पहलवान—अजी, अभी तक सफ़शिकन का मातम होता है।

खोजी—तुम्हारा कब तक जाने का इरादा है?

पहलवान—मैं तो आज ही जा रहा हूँ।

खोजी—तो भाई, हमको भी ज़रूर लेते चलो। हम अपना किराया दे देंगे।

पहलवान—तो चलिए, मेरा इसमें हरज ही क्या है। हमको नवाब साहब ने सिर्फ़ दो दिन की छुट्टी दी थी। कल यहाँ दाख़िल हुए, आज दंगल में कुश्ती निकाली और शाम को रेल पर चल देंगे। हमारे साथ मस्तियाबेग भी हैं।

शाम को पहलवान के साथ खोजी स्टेशन पर आये। पहलवान ने कहा—वह देखिए मिरज़ा साहब खड़े हैं, जा कर मिल लीजिए। ख्वाज़ा आहिस्ता-आहिस्ता गये और पीछे से मिरज़ा साहब की आखें बंद कर लीं।

मिरज़ा—कौन है भाई, कोई मुसम्मात हैं क्या? हाथ तो ऐसे ही मालूम होते हैं।

पहलवान—भला बूझ जाइए तो जानें।

मिरज़ा—कुछ समझ में नहीं आता, मगर हैं कोई मुसम्मात।

खोजी—भला गीदी, भला, अभी से भूल गया, क्यों?

मिरज़ा—अख्खाह, ख्वाजा साहब हैं! कहो भाई खोजी, अच्छे तो रहे?

खोजी—खोजी कहीं और रहते होंगे। अब हमें ख्वाजा साहब कहा करो।

मिरज़ा—अरे कमबख्त, गले तो मिल ले।

खोजी—सरकार कैसे हैं, घर में तो खैर-आफ़ियत है?

मिरज़ा—हाँ, सब खुदा का फ़ज़ल है, बेगम साहब पर कुछ आसेब था, मगर अब अच्छी हैं। कहो, तुमने तो खूब नाम पैदा किया।

खोजी—नाम, अरे हम मेजर थे।

मिरज़ा—सरकार को इस लड़ाई के ज़माने में अखबार से बड़ा शौक़ था। आज़ाद को तो सब जानते हैं, मगर तुम्हारा हाल जब से पढ़ा तब से सरकार को अखबारों का एतबार जाता रहा। कहते थे कि समुद्र की सूरत देख कर इसका जिगर क्यों न फट गया। भला इसे लड़ाई से क्या वास्ता।

खोजी—अब इसका हाल तो उन लोगों से पूछो जो मोरचों पर हमारे शरीक थे। तुम मज़े से बैठे-बैठे मीठे टुकड़े उड़ाया किये, तुमको इन बातों से क्या सरोकार, मगर भाई, नशों में नशा शराब का। इधर डंके पर चोट पड़ी, उधर सिपाही कमर कस कर तैयार हो गये।

मिरज़ा—अब सरकार के सामने न कहना, नहीं खड़े-खड़े निकाल दिये जाओगे।

खोजी—अजी, अब तो सरकार के बाप के निकाले भी नहीं निकल सकते।

मिरज़ा—एक बार तो अखबार में लिखा था कि खोजी ने शादी कर ली है।

खोजी—अरे यार, इसका हाल न पूछो, अपनी शक्ल-सूरत का हाल तो हमको बाहर जा कर मालूम हुआ। जिस शहर में निकल गये, करोड़ों औरतें हम पर आशिक़ हो गयीं। खास कर एक कमसिन नाज़नीन ने तो मुझे कहीं का न रखा।

मिरज़ा—तो आपकी सूरत पर सब औरतें जान देती थीं? क्या कहना है, तुमने बहादुरी के काम भी तो खूब किये।

ख़ोजी—भाईजान, मोरचे पर मेरी बहादुरी देखते तो दंग हो जाते। ख़ैर, उस परी पर मेरे सिवा पचास तुर्की अफ़सर भी आशिक़ थे। यह राय तय पायी कि जिससे वह परी राज़ी हो उससे निकाह करे। एक रोज़ सब बन-ठन कर आये, मगर उस शोख़ की नज़र आपके ख़ादिम ही पर पड़ती थी।

मिरज़ा—ऐ क्यों नहीं, हज़ार जान से आशिक़ हो गयी होगी।

ख़ोजी—आव देखा न ताव, अठलाती हुई आयी और मेरा हाथ अपने सीने पर रख लिया। अब सुनिए, उन सबों के दिल में हसद की आग भड़की, कहने लगे, यों हम न मानेंगे, जो उससे निकाह करे वह पहले पचासों आदमियों से लड़े। हमने कहा, ख़ैर! तलवार खींच कर जो चला, तो वह-वह चोटें लगायीं कि सब के सब बिलबिलाने लगे। बस परी हमको मिल गयी। अब दरबार के रंग ढंग बयान करो।

मिरज़ा—सब तुम्हारी याद किया करते हैं। झम्मन ने वह चुग़लख़ोरी पर कमर बाँधी है कि सैकड़ों ख़िदमतगार और कितने ही मुसाहबों को मौक़ूफ़ करा दिया।

ख़ोजी—एक ही पाजी आदमी है। हम रूम गये, फ्रांस गये, सारी दुनिया के रईस देख डाले, मगर नवाब सा भोला-भाला रईस कहीं न देखा। ग़ज़ब ख़ुदा का कि एक बदमाश ने जो कह दिया, उसका यक़ीन हो गया, अब कोई लाख सम-झाये, वह किसी की सुनते ही नहीं।

मिरज़ा—मेरा तो अब वहाँ रहने को जी नहीं चाहता।

ख़ोजी—अजी, इस झगड़े को चूल्हे में डालो। अब हम-तुम चल कर रंग जमायेंगे। तुम मेरी हवा बाँधना और हम दोनों एक जान दो क़ाबिल हो कर रहेंगे।

मिरज़ा—मैं कहूँगा, ख़ुदावंद, अब यह सब मुसाहबों के सिरताज हुए, सारी दुनिया में हुज़ूर का नाम किया। मगर तुम ज़रा अपने को लिये रहना।

ख़ोजी—अजी, मैं तो ऐसा बनूँ कि लोग दंग हो जायँ।

जब घंटी बजी और मुसाफ़िर चले तो ख़ोजी भी पहलवान की तरह अकड़ कर चलने लगे। रेल के दो-चार मुलाज़िमों ने उन पर आवाज़े कसना शुरू किया।

एक—आदमी क्या गैंडा है, माशा-अल्लाह, क्या हाथ-पाँव हैं!

दूसरा—क्यों साहब, आप कितने दंड पेल सकते हैं?

ख़ोजी—अजी, बीमारी ने तोड़ दिया, नहीं एक पूरी रेल पर लदके जाता था।

तीसरा—इसमें क्या शक है, एक-एक रान दो-दो मन की है।

ख़ोजी—क़सम खाके अर्ज़ करता हूँ कि अब आधा नहीं रहा! यह पहलवान हमारे अखाड़े का ख़लीफ़ा है, और बाक़ी सब शागिर्द हैं। सब मिलाके हमारे चालीस-बयालीस हज़ार शागिर्द होंगे।

एक मुसाफ़िर—दूर-दूर से लोग शागिर्दी करने आते होंगे?

ख़ोजी—दूर-दूर से। अब आप मुलाहिज़ा फ़रमायें कि हिंदुस्तान से ले कर रूस तक मेरे लाखों शागिर्द हैं। मिस्र में ऐसा हुआ कि एक पहलवान की शामत आयी, एक मेले में हमको टोक बैठा। टोकना था कि बंदा भी चट लँगोट कसके सामने

आ खड़ा हुआ। लाखों ही आदमी जमा थे। उसका सामने आना ही था कि मैं उसी दम जुट गया, दाँव-पेंच होने लगे। उसके मिस्री दाँव थे। हमारे हिंदुस्तानी दाँव थे। बस दम की दम में मैंने उठाके दे पटका।

इतने में दूसरी घंटी हुई। खोजी ऐसे बौखलाये कि ज़नाने दर्जे में धँस पड़े। वहाँ लेना-लेना का गुल मचा। भागे तो पहले दर्जे में घुस गये, वहाँ एक अँगरेज ने डाँट बतायी। बारे निकल कर तीसरे दर्जे में आये। थके-माँदे बहुत थे, सोये तो सारी रात कट गयी। आँख खुली तो लखनऊ आ गया। शाम के वक़्त नवाब साहब के यहाँ दाखिल हुए।

खोजी—आदाब अर्ज़ है हुजूर।

नवाब—अख्खाह, खोजी हैं! आओ भाई, आओ।

खोजी—हाजिर हूँ खुदावंद, खुदा का शुक्र है कि आपकी ज़ियारत हुई।

ग़फ़ूर—खोजी मियाँ, सलाम।

खोजी—सलाम भाई, सलाम, मगर हमको खोजी मियाँ न कहना, अब हम फ़ौज के अफ़सर हैं।

झम्मन—आप बादशाह हों या वज़ीर, हमारे तो खोजी ही हो।

खोजी—हाँ भाई, यह तो है ही। हुजूर के नमक की क़सम, मुल्कों-मुल्कों इस दरबार का नाम किया।

नवाब—शाबाश! हमने अखबारों में तुम्हारी बड़ी-बड़ी तारीफ़ें पढ़ीं।

खोजी—हुजूर, गुलाम किस लायक़ है।

झम्मन—भला यार, तुम समुद्र में जहाज़ पर कैसे सवार हुए?

खोजी—वाह, तुम जहाज़ की लिये फिरते हो। यहाँ मोरचों पर बड़े-बड़े मेजरों और जनरलों से भिड़-भिड़ पड़े हैं। हुजूर, पिलौना की लड़ाई में कोई दस लाख आदमी एक तरफ़ थे और सत्तर सवारों के साथ गुलाम दूसरी तरफ़ था, फिर यह मुलाहिज़ा कीजिए कि चौदह दिन तक बराबर मुक़ाबिला किया और सबके छक्के छुड़ा दिये।

झम्मन—इतना झूठ, उधर दस लाख, इधर सत्तर! भला कोई बात है।

खोजी—तुम क्या जानो, वहाँ होते तो होश उड़ जाते।

नवाब—भाई, इसमें तो शक नहीं कि तुमने बड़ा नाम किया। खबरदार, आज से इनको कोई खोजी न कहे। पाशा के लक़ब से पुकारे जायँ।

खोजी—आदाब हुजूर। झम्मन गीदी ने मुँह की खायी न आखिर। रईसों की सोहबत में ऐसे पाजियों का रहना मुनासिब नहीं।

नवाब—क्यों साहब, हिंदोस्तान के बाहर भी हमको कोई जानता है? सच-सच बताना भाई!

खोजी—हुजूर, जहाँ-जहाँ ग़ुलाम गया, हुजूर का नाम बादशाहों से ज़्यादा मशहूर हो गया।

आज़ाद बम्बई से चले तो सबसे पहले ज़ीनत और अख़्तर से मुलाक़ात करने की याद आयी। उस क़स्बे में पहुँचे तो एक जगह मियाँ ख़ोजी की याद आ गयी। आप ही आप हँसने लगे। इत्तिफ़ाक़ से एक गाड़ी पर कुछ सवारियाँ चली जाती थीं। उनमें से एक ने हँस कर कहा—वाह रे भलेमानस, क्या दिमाग़ पर गरमी चढ़ गयी है क्या ? आज़ाद रंगीन मिज़ाज आदमी तो थे ही। आहिस्ता से बोले—जब ऐसी-ऐसी प्यारी सूरतें नज़र आयें तो आदमी के होश-हवास क्योंकर ठिकाने रहें। इस पर वह नाज़नीन तिनक कर बोली—अरे, यह तो देखने ही को दीवाना मालूम होते थे, अपने मतलब के बड़े पक्के निकले। क्यों मियाँ, यह क्या सूरत बनायी है, आधा तीतर और आधा बटेर ? ख़ुदा ने तुमको वह चेहरा-मोहरा दिया है कि लाख दो लाख में एक हो। अगर इस शक्ल-सूरत पर जो लम्बे-लम्बे बाल हों, बालों में सोलह रुपये वाला तेल पड़ा हो, बारीक शरबती का अँगरखा हो, जालीलोट के कुरते से गोरे-गोरे डंड नज़र आयें, चुस्त घुटन्ना हो, पैरों में एक अशर्फ़ी का टाटबाफ़ी बूट हो, अँगरखे पर कामदानी की सदरी हो, सिर से पैर तक इत्र में बसे हो, मुसाहबों की टोली साथ हो, ख़िदमतगारों के हाथ में काबुकें और बटेरें हों और इस ठाट के साथ चौक में निकलो, तो अँगुलियाँ उठें कि वह रईस जा रहा है ! तब लोग कहें कि इस सज-धज, नख-सिख, कल्ले-ठल्ले का गभरू जवान देखने में नहीं आया। यह सब छोड़ पट्टे कतरवाके लंडूरे हो गये, ऐ वाह री आपकी अक़्ल !

आज़ाद—ज़रा मैं तो जानूँ कि किसकी ज़बान से यह बातें सुन रहा हूँ। इनसान हम भी हैं, फिर इनसान से क्या परदा ?

नाज़नीन—अच्छा, तो आप भी इनसान होने का दम भरते हैं। मेढकी भी चली मदारों को।

आज़ाद—खैर साहब, इनसान न सही।

नाज़नीन—(परदा हटा कर) ऐ साहब लीजिए, बस अब तो चार आँखें हुईं, अब कलेजे में ठंडक पहुँची ?

आज़ाद ने देखा तो सोचने लगे कि यह सूरत तो कहीं देखी है और अब ख़याल आता है कि आवाज़ भी कहीं सुनी है। मगर इस वक़्त याद नहीं आता कि कहाँ देखा था।

नाज़नीन—पहचाना ? भला आप क्यों पहचानने लगे ! रुतबा पा कर कौन किसे पहचानता है ?

आज़ाद—इतना तो याद आता है कि कहीं देखा है, पर यह ख़याल नहीं कि कहाँ देखा है।

नाज़नीन—अच्छा, एक पता देते हैं, अब भी न समझो तो खुदा तुमसे समझे। याद है, किसने यह ग़ज़ल गायी थी?—

कोई मुझ सा दीवाना पैदा न होगा,
हुआ भी तो फिर ऐसा रुसवा न होगा।
न देखा हो जिसने कहे उसके आगे,
हमें लन्तरानी सुनाना न होगा।

आज़ाद—अब समझ गया! ज़हूरन, वहाँ की खैर-आफ़ियत बयान करो। उन्हीं दोनों बहनों से मिलने के लिए बम्बई से चला आ रहा हूँ।

ज़हूरन—सब खुदा का फ़ज़ल है। दोनों बहनें आराम से हैं, अख्तर के मियाँ तो उनका ज़ेवर खा-पी कर भाग गये, अब उन्होंने दूसरी शादी कर ली है। ज़ीनत बेगम खुश हैं।

आज़ाद—तो अब हम उनके मैके जायँ या ससुराल?

ज़हूरन—ससुराल न जाइए, मैके में चलिए और वहाँ से किसी महरी के ज़बानी पैग़ाम भेजिए। हमने तो हुज़ूर को देखते ही पहचान लिया।

आज़ाद—हमको इन दोनों बहनों का हाल बहुत दिनों से नहीं मालूम हुआ।

ज़हूरन—यह तो हुज़ूर, आप ही का क़ुसूर है; कभी आपने एक पुरज़ा तक न भेजा। जिस दिन ज़ीनत बेगम के मियाँ ने उनसे कहा कि लो, आज़ाद वापस आते हैं तो मारे खुशी के खिल उठीं। तो अब आना हो तो आइए, शाम होती है।

थोड़ी देर में आज़ाद ज़ीनत बेगम के मकान पर जा पहुँचे। ज़हूरन ने जा कर उनकी चाची से आज़ाद के आने की इत्तला की। उसने आज़ाद को फ़ौरन बुला लिया।

आज़ाद—बंदगी अर्ज करता हूँ। आप तो इतने ही दिनों में बूढ़ी हो गयीं।

चाची—बेटा, अब हमारे जवानी के दिन थोड़े ही हैं। तुम तो खैर-आफ़ियत के साथ आये? आँखें तुम्हें देखने को तरस गयीं।

आज़ाद—जी हाँ, मैं खैरियत से आ गया। दोनों साहबज़ादियों को बुलवाइए। सुना, ज़ीनत की भी शादी हो गयी है।

चाची—हाँ, अब तो दोनों बहनें आराम से हैं। अख्तरी का पहला मियाँ तो बिलकुल नालायक़ निकला। ज़ेवर, गहना-पाता, सब बेच कर खा गया और खुदा जाने, किधर निकल गया। अब दूसरी शादी हुई है। डाक्टर हैं। साठ तनख्वाह है और ऊपर से कोई चार रुपया रोज़ मिलता है। ज़ीनत के मियाँ स्कूल में पढ़ाते हैं। दो सौ की तलब है। तुम्हारे चाचाजान तो मुझे छोड़ कर चल दिये।

इधर महरी ने जा कर दोनों बहनों को आज़ाद के आने की खबर दी। ज़ीनत ने अपनी आया को साथ लिया और मैके की तरफ़ चली। घर के अंदर क़दम रखते ही आज़ाद से हाथ मिला कर बोली—वाह रे बेमुरव्वतों के बादशाह! क्यों साहब, जब से गये, एक पुरज़ा तक भेजने की क़सम खा ली?

आज़ाद—यह तो न कहोगी कि सबसे पहले तुम्हारे दरवाज़े पर आया। यह तो फ़रमाइए कि यह पोशाक कब से अख्तियार की ?

ज़ीनत—जब से शादी हुई। उन्हें अँगरेजी पोशाक बहुत पसंद है।

आज़ाद—ज़ीनत, खुदा गवाह है कि इस वक़्त जामे में फूला नहीं समाता। एक तो तुमको देखा और दूसरे यह खुशखबरी सुनी कि तुम्हारे मियाँ पढ़े-लिखे आदमी हैं और तुम्हें प्यार करते हैं। मियाँ-बीबी में मुहब्बत न हो तो ज़िंदगी का लुत्फ़ ही क्या।

इतने में अख्तरी भी आ गयी और आते ही कहा—मुबारक !

आज़ाद—आपको बड़ी तकलीफ़ हुई, मुआफ़ करना।

अख्तर—मैंने तो सुना था कि तुमने वहाँ किसी साईसिन से शादी कर ली।

आज़ाद—और तुम्हें इसका यक़ीन भी आ गया ?

अख्तर—यक़ीन क्यों न आता। मर्दों के लिए यह कोई नयी बात थोड़ी ही है। जब लोग एक छोड़, चार-चार शादियाँ करते हैं तो यक़ीन क्यों न आता।

आज़ाद—वह पाजी है जो एक के सिवा दूसरी का खयाल भी दिल में लाये।

ज़ीनत—ऐसे मियाँ-बीबी का क्या कहना, मगर यहाँ तो वही पाजी नज़र आते हैं जो बीबी के होते भी उसकी परवा नहीं करते।

आज़ाद—अगर बीबी समझदार हो तो मियाँ कभी उसके क़ाबू से बाहर न हो।

अख्तर—यह तो हम मान चुके। खुदा न करे कि किसी भलेमानस का पाला शोहदे मियाँ से पड़े।

ज़ीनत—जिसके मिज़ाज में पाजीपन हो उससे बीबी की कभी न पटेगी। मियाँ सुबह से जायँ तो रात के एक बजे घर में आयें और वह भी किसी रोज़ आये, किसी रोज़ न आये। बीबी बेचारी बैठी उनकी राह देख रही है। बाज़ तो ऐसे बेरहम होते हैं कि बात हुई और बीबी को मार बैठे।

आज़ाद—यह तो धुनिया जुलाहों की बातें हैं।

ज़ीनत—नहीं जनाब, जो लोग शरीफ़ कहलाते हैं उनमें भी ऐसे मर्दों की कमी नहीं है।

अख्तर—ऐ चूल्हे में जायँ ऐसे मर्द, जभी तो बेचारियाँ कुएँ में कूद पड़ती हैं, ज़हर खाके सो रहती हैं।

ज़ीनत—मुझे खूब याद है कि एक औरत अपने मियाँ को ज़रा सी बात पर हाथ फैला-फैला कोस रही थी कि कोई दुश्मन को भी न कोसेगा।

आज़ाद—जहाँ ऐसे मर्द हैं वहाँ ऐसी औरतें भी हैं।

अख्तर—ऐसी बीबी का मुँह लेके झुलस दे।

ज़ीनत—मेरे तो बदन के रोयें खड़े हो गये।

आज़ाद—मेरी तो समझ ही में नहीं आता कि ऐसे मियाँ और बीबी में मेल-जोल कैसे हो जाता है।

इस तरह बातें करते-करते यूरोपियन लेडियों की बात चल पड़ी। ज़ीनत और अख़्तर ने हिंदोस्तानी औरतों की तरफ़दारी की और आज़ाद ने यूरोपियन लेडियों की।

आज़ाद—जो आराम यूरोप की औरतों को हासिल है वह यहाँ की औरतों को कहाँ नसीब। धूप में अगर मियाँ-बीबी साथ चलते हों तो मियाँ छतरी लगायेगा।

अख़्तर—यहाँ भी महाजनों को देखो। औरतें दस-दस हज़ार का ज़ेवर पहन कर निकलती हैं और मियाँ लँगोटा लगाये दूकान पर मक्खियाँ मारा करते हैं।

आज़ाद—यहाँ की औरतों को तालीम से चिढ़ है।

ज़ीनत—इसका इलज़ाम भी मर्दों ही की गरदन पर है। वह ख़ुद औरतों को पढ़ाते डरते हैं कि कहीं ये उनकी बराबरी न करने लगें।

आज़ाद—हमारे मकान के पास एक महाजन रहते थे। मैं लड़कपन में उनके घर खेलने जाया करता था। जैसे ही मियाँ बाहर से आता, बीबी चारपाई से उतर कर ज़मीन पर बैठ जाती। अगर तुमसे कोई कहे कि मियाँ के सामने घूँघट करके जाओ तो मंजूर करो या नहीं?

अख़्तर—वाह, यहाँ तो घर में क़ैद न रहा जाय, घूँघट कैसा!

आज़ाद—यूरोपियन लेडियों को घर के इंतज़ाम का जो सलीक़ा होता है, वह हमारी औरतों को कहाँ?

ज़ीनत—हिंदोस्तानी औरतों में जितनी वफ़ा होती है वह यूरोपियन लेडियों में तलाश करने से भी न मिलेगी। यहाँ एक के पीछे सती हो जाती हैं, वहाँ मर्द के मरते ही दूसरी शादी कर लेती हैं।

१०५

वहाँ दो दिन और रह कर आज़ाद दोनों लेडियों के साथ लखनऊ पहुँचे और उन्हें होटल में छोड़ कर नवाब साहब के मकान पर आये। इधर वह गाड़ी से उतरे, उधर ख़िदमतगारों ने गुल मचाया कि ख़ुदावंद, मुहम्मद आज़ाद पाशा आ गये। नवाब साहब मुसाहबों के साथ उठ खड़े हुए तो देखा कि आज़ाद रप-रप करते हुए तुर्की वर्दी डाटे चले आते हैं। नवाब साहब झपट कर उनके गले लिपट गये और बोले—भाईजान, आँखें तुम्हें ढूँढ़ती थीं।

आज़ाद—शुक्र है कि आपकी ज़ियारत नसीब हुई।

नवाब—अजी, अब यह बातें न करो, बड़े-बड़े अँगरेज हुक्काम तुमसे मिलना चाहते हैं।

मुसाहब—बड़ा नाम किया। वल्लाह, करोड़ों आदमी एक तरफ़ और हुजूर एक तरफ़।

ख़ोजी—ग़ुलाम भी आदाब अर्ज़ करता है।

आज़ाद—तुम यहाँ कब आ गये ख्वाजा साहब?

नवाब—सुना, आपने तीन-तीन करोड़ आदमियों से अकेले मुक़ाबिला किया!

ग़फ़ूर—अल्लाह की देन है हुजूर!

नवाब—अरे भाई, गंगा-जमुनी हुक़्क़ा भर लाओ आपके वास्ते, आज़ाद पाशा को ऐसा-वैसा न समझना। इनकी तारीफ़ कमिश्नर तक की ज़बान से सुनी। सुना, आपसे रूस के बादशाह से भी मुलाक़ात हुई। भाई, तुमने वह दरजा हासिल किया है कि हम अगर हुजूर कहें तो बजा है। कहाँ रूस के बादशाह और कहाँ हम!

ख़ोजी—ख़ुदावंद, मोरचे पर इनको देखते तो दंग रह जाते। जैसे शेर कछार में डँकारता है।

नवाब—क्यों भाई आज़ाद, इन्होंने वहाँ कोई कुश्ती निकाली थी?

आज़ाद—मेरे सामने तो सैकड़ों ही बार चपतियाये गये और एक बौने तक ने इनको उठाके दे मारा।

मुसाहब—भाई, इस वक़्त तो भम्भाड़ा फूट गया।

आज़ाद—क्या यह ग़प उड़ाते थे कि मैंने कुश्तियाँ निकालीं?

मस्तियाबेग—ऐ हुजूर, जब से आये हैं, नाक में दम कर दिया। बात हुई और क़रौली निकाली।

ग़फ़ूर—परसों तो कहते थे कि मिस्र में हमने आज़ाद के बराबर के पहलवान को दम भर में आसमान दिखा दिया।

आज़ाद—क्या खूब! एक बौने तक ने तो उठाके दे मारा, चले वहाँ से दून की लेने।

इतने में नवाब साहब के यहाँ एक मुंशी साहब आये और आज़ाद को देख कर

बोले—वल्लाह, आज़ाद पाशा साहब हैं, आपने तो बड़ा नाम पैदा किया, सुभान अल्लाह।

नवाब—अजी, कमिश्नर साहब इनकी तारीफ़ करते हैं। इससे ज़्यादा इज़्ज़त और क्या होगी।

ख़ोजी—साहब, लड़ाई के मैदान में कोई इनके सामने ठहरता ही न था।

मुंशी—आपने भी बड़ा साथ दिया ख़्वाजा साहब, मगर आपकी बहादुरी का ज़िक्र कहीं सुनने में नहीं आया।

ख़ोजी—आप ऐसे गीदियों को मैं क्या समझता हूँ, मैंने वह-वह काम किये हैं कि कोई क्या करेगा। क़रौली हाथ में ली और सफ़ों की सफ़ें साफ़ कर दीं।

मुंशी—आप तो नवाब साहब के यहाँ बने हैं न?

ख़ोजी—बने होंगे आप, बनना कैसा! क्या मैं कोई चरकटा हूँ। क़सम है हुज़ूर के क़दमों की, सारी दुनिया छान डाली, मगर आज तक ऐसा बदतमीज़ देखने में नहीं आया।

आज़ाद—जनाब ख़्वाजा साहब ने जो बातें देखी हैं वह औरों को कहाँ नसीब हुई। आप जिस जगह जाते थे वहाँ की सारी औरतें आपका दम भरने लगती थीं। सबसे पहले बुआ ज़ाफ़रान आशिक़ हुई।

ख़ोजी—तो फिर आपको बुरा क्यों लगता है? आप क्यों जलते हैं?

नवाब—भई आज़ाद, यह क़िस्सा ज़रूर बयान करो। अगर आपने इसे छिपा रखा तो वल्लाह, मुझे बड़ा रंज होगा। अब फ़रमाइए, आपको मेरा ज़्यादा ख़याल है या इस गीदी का?

ख़ोजी—हुज़ूर, मुझसे सुनिए। जिस रोज़ आज़ाद पाशा और हम पिलौना के क़िले में थे, उस रोज़ की कार्रवाई देखने के लायक़ थी। क़िला पाँचों तरफ़ से घिरा हुआ था।

मुसाहब—यह पाँचवाँ कौन तरफ़ है साहब? यह नयी तरफ़ कहाँ से लाये? जो बात कहोगे वही अनोखी।

ख़ोजी—तुम हो गधे, किसी ने बात की और तुमने काट दी, यों नहीं वों, वों नहीं यों। एक तरफ़ दरिया था और ख़ुश्की भी थी। अब हुईं पाँच तरफ़ें या नहीं, मगर तुम ऐसे गौखों को हाल क्या मालूम। कभी लड़ाई पर गये हो? कभी तोप की सूरत देखी है? कभी धुआँ तक तो देखा न होगा और चले हैं वहाँ से बड़े सिपाही बन कर! तो बस जनाब, अब करें तो क्या करें। हाथ-पाँव फूले हुए कि अब जायँ तो किधर जायँ और भागें तो किधर भागें।

नवाब—सचमुच वक़्त बड़ा नाज़ुक था।

ख़ोजी—और रूसियों की यह कैफ़ियत कि गोले बरसा रहे थे। बस आज़ाद पाशा ने मुझसे कहा कि भाईजान, अब क्या सोचते हो, मरोगे या निकल जाओगे! मेरे बदन में आग लग गयी। बोला, निकलना किसे कहते हैं जी! इतने में क़िले की दीवारें चलनी हो गयी। जब मैंने देखा कि अब फ़ौज़ के बचने की कोई उम्मीद

नहीं रही, तो तलवार हाथ में ली और अपने अरबी घोड़े पर बैठ कर निकल पड़ा और उसी वक़्त दो लाख रूसियों को काट कर रख दिया।

मुसाहब—इस झूठ पर खुदा की मार।

खोजी—अच्छा, आज़ाद से पूछिए, बैठे तो हैं सामने।

नवाब—हज़रत, सच-सच कहिएगा। बस फ़क़त इतना बता दीजिए, यह बात कहाँ तक सच है?

आज़ाद—जनाब, पिलौना का जो कुछ हाल बयान किया वह तो सब ठीक है, मगर दो लाख आदमियों का सिर काट लेना महज़ गप है। लुत्फ़ यह है कि पिलौना की तो इन्होंने सूरत भी न देखी। उन दिनों तो यह खास क़ुस्तुनतुनियाँ में थे।

इस पर बड़े ज़ोर का क़हक़हा पड़ा। बेगम साहब ने क़हक़हे की आवाज़ सुनी तो महरी से कहा—जा देख, यह कैसी हँसी हो रही है।

महरी—हुज़ूर, वह आये हैं मियाँ आज़ाद, वह गोरे-गोरे से आदमी, बस वही हँसी हो रही है।

बेगम—अल्लाह, आज़ाद आ गये, जाके खैर-आफ़ियत तो पूछ! हमारी तरफ़ से न पूछना! वहाँ कहीं ऐसी बात न करना।

महरी—वाह हुज़ूर, कोई दीवानी हूँ क्या? सुनती हूँ उस मुल्क में बड़ा नाम किया। तुमने कभी तोप देखी है ग़फ़ूरन?

ग़फ़ूरन—ऐ खुदा न करे हुज़ूर!

महरी—हमने तो तोप देखी है, बल्कि रोज़ ही देखती हूँ।

बेगम—तोप देखी है! तुम्हारे मियाँ सवारों के साईस होंगे। तोप नहीं वह देखी है।

महरी—हुज़ूर, यह सामने तोप ही लगी है या कुछ और?

महल में रहीमन नाम की एक महरी और सबों से मोटी-ताज़ी थी। महरी ने जो उसकी तरफ़ इशारा किया तो बेगम साहब खिल-खिला कर हँस पड़ीं।

रहीमन—क्या पड़ा पाया है बहन ग़फ़ूरन?

ग़फ़ूरन—आज एक नयी बात देखने में आयी है बहन।

रहीमन—हमको भी दिखाओ। देखें कोई मिठाई है या खिलौना है?

ग़फ़ूरन—तोप की तोप और औरत की औरत।

रहीमन—(बात समझ कर) तुम्हीं लोगों ने तो मिल कर हमें नज़र लगा दी।

बेगम—ऐ आग लगे, अब और क्या मोटी होती, फूलके कुप्पा तो हो गयी है।

उधर खोजी ने देखा कि यार लोग रंग नहीं जमने देते तो मौक़ा पा कर आज़ाद के क़दमों पर टोपी रख दी और कहा—भाई आज़ाद, बरसों तुम्हारा साथ दिया है, तुम्हारे लिए जान तक देने को तैयार रहा हूँ। मेरी दो-दो बातें सुन लो।

आज़ाद—मैं आपका मतलब समझ गया, मगर कहाँ तक ज़ब्त करूँ?

खोजी—इस दरबार में मेरे ज़लील करने से अगर आपको कुछ मिले तो आपको अख्तियार है।

आज़ाद—जनाब, आप मेरे बुजुर्ग हैं, भला मैं आपको ज़लील करूँगा?

खोजी—हाय अफ़सोस, तुम्हारे लिए जान लड़ा दी और अब इस दरबार में, जहाँ रोटियों का सहारा है, आप हमको उल्लू बनाते हैं, जिसमें रोटियों से भी जायँ।

आज़ाद—भई, माफ़ करना, अब तुम्हारी ही सी कहेंगे।

खोजी—मुझे रंग तो बाँधने दो ज़रा।

आज़ाद—आप रंग जमायें, मैं आपकी ताईद करूँगा।

ख्वाजा साहब का चेहरा खिल गया कि अब राप के पुल बाँध दूँगा और जब आज़ाद मेरा कलमा पढ़ने लगेंगे तो फिर क्या पूछना।

नवाब—ख्वाजा साहब, यह क्या बातें हो रही हैं हमसे छिप-छिप कर?

खोजी—खुदावंद, एक मामले पर बहस हो रही थी।

नवाब—कैसी बहस, किस मामले पर?

खोजी—हुजूर, मेरी राय है कि इस मुल्क में भी नहरें जारी होनी चाहिएँ और आज़ाद पाशा की राय है कि नहरों से आबपाशी तो होगी, मगर मुल्क की आब-हवा खराब हो जायगी।

मस्तियाबेग—अल्लाह, तो यह कहिए कि आप शहर के अंदेशे में दुबले हैं!

खोजी—तुम गौखे हो, यह बातें क्या जानो। पहले यह तो बताओ कि एक बाट्री में कितनी तोपें होती हैं? चले वहाँ से सुकरात की दुम बनके।

नवाब—खोजी है तो सीड़ी, मगर बातें कभी-कभी ठिकाने की करता है।

आज़ाद—इन बातों का तो इन्हें अच्छा तजरबा है।

ग़फ़ूर—हुज़ूर, इनको बड़ी-बड़ी बातें मालूम हुई हैं।

आज़ाद—साहब, सफ़र भी तो इतना दूर-दराज का किया था! कहाँ हिंदोस्तान, कहाँ रूम! खयाल तो कीजिए।

मीर साहब—क्यों ख्वाजा साहब, पहाड़ तो आपने बहुत देखे होंगे?

खोजी—एक-दो नहीं, करोड़ों, आसमान से बातें करनेवाले।

नवाब—भला आसमान वहाँ से कितनी दूर रह जाता है?

खोजी—हुज़ूर, बस एक दिन की राह। मगर ज़ीना कहाँ?

नवाब—और क्यों साहब, वहाँ से तो खूब मालूम होता होगा कि मेंह किस जगह से आता है?

खोजी—जनाब, पहाड़ की चोटी पर मैं था और मेंह नीचे बरस रहा था।

नवाब—क्यों साहब, यह सच है? अजीब बात है भाई!

आज़ाद—जी हाँ, यह तो होता ही है, पहाड़ पर से नीचे मेंह का बरसना साफ़ दिखाई देता है।

मस्तियाबेग—और जो यह मशहूर है कि बादल तालाबों में पानी पीते हैं?

खोजी—यह तुम जैसे गधों में मशहूर होगा।

नवाब—भई, यह तजरबेकार लोग हैं, जो बयान करें वह सही है।

खोजी—हुजूर ने दरिया डैन्यूब का नाम तो सुना ही होगा। इतना बड़ा दरिया है कि उसके आगे समुद्र भी कोई चीज़ नहीं। इतना बड़ा दरिया और एक रईस के दीवानखाने के हाते से निकला है।

मीर साहब—ऐं, हमें तो यक़ीन नहीं आता।

खोजी—आप लोग कुएँ के मेढक हैं।

नवाब—मकान के हाते से! जैसे हमारे मकान का यह हाता?

खोजी—बल्कि इससे भी छोटा। हुज़ूर, ख़ुदा की ख़ुदाई है, इसमें बंदे को क्या दख़ल। और ख़ुदावंद, हमने इस्तम्बोल में एक अजायबख़ाना देखा।

मीर साहब—तुमको तो किसी ने धोखे में बंद नहीं कर दिया।

खोजी—बस, इन बाँगलुओं को और कुछ नहीं आता!

नवाब—अजी, तुम अपना मतलब कहो, उस अजायबख़ाने में कोई नयी बात थी?

खोजी—हुज़ूर, एक तो हमने भैंसा देखा। भैंसा क्या, हाथी का पाठा था और नाक के ऊपर एक सींग। इत्तिफ़ाक़ से जिस मकान में वह बंद था उसकी तीन छड़ें टूट गयी थीं। उसे रास्ता मिला तो सिमट-सिमट कर निकला। जनाब, कुछ न पूछिए, दो हज़ार आदमी गड़-बड़ एक के ऊपर एक इस तरह गिरे कि बेहोश। कोई चार-पाँच सौ आदमी ज़ख़्मी हुए। मैंने यह कैफ़ियत देखी तो सोचा, अगर तुम भी भागते हो तो हँसी होगी। लोग कहेंगे कि यह फ़ौज़ में क्या करते थे। ज़रा से भैंसे को देख कर डर गये। बस एक बार झपटके जो जाता हूँ तो गरदन हाथ आयी, बस बायें हाथ से गरदन दबायी और दबोचके बैठ गया, फिर लाख-लाख ज़ोर उसने मारे, मगर मैंने हुमसने न दिया। ज़रा गरदन हिलायी और मैंने दबोचा। जितने आदमी खड़े थे सब दंग हो गये कि वाह रे पहलवान! आख़िर जब मैंने देखा कि उसका दम टूट गया तो गरदन छोड़ दी। फिर उसने बहुत चाहा कि उठे, मगर हुमस न सका। मुझसे लोग मिन्नतें करने लगे कि उसे कठघरे में डाल दो, ऐसा न हो कि बफरे तो सितम ही कर डाले। इस पर मैंने उसे एक थप्पड़ जो लगाया तो चौंधिया कर तड़ से गिरा।

मस्तियाबेग—इसके क्या मतलब? आपके ख़ौफ़ के मारे लेटा तो था ही, फिर लेटे-लेटे क्यों गिर पड़ा?

खोजी—वाही हो। बस हुज़ूर, मैंने कान पकड़ा तो इस तरह साथ हो लिया जैसे बकरी। उसी कठघरे में फिर बंद कर दिया।

नवाब—क्यों साहब, यह क़िस्सा सच है?

आज़ाद—मैं उस वक़्त मौजूद न था, शायद सच हो।

मीर साहब—बस-बस, क़लई खुल गयी, ग़ज़ब ख़ुदा का, झूठ भी तो कितना! इस वक़्त जी चाहता है, उठके ऐसा गुद्दा दूँ कि दस गज़ ज़मीन में धँस जाय।

ख़ोजी—क़सम है ख़ुदा की, जो अब की कोई बात मुँह से निकली तो इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि उम्र भर याद करेगा। तू अपने दिल में समझा क्या है! यह सूखी हड्डियाँ लोहे की हैं।

नवाब—इतने बड़े जानवर से इनसान क्या मुक़ाबला कर सकता है?

आज़ाद—हुज़ूर बात यह है कि बाज़ आदमियों को यह कुदरत होती है कि इधर जानवर को देखा, उधर उसकी गरदन पकड़ी। ख्वाजा साहब को भी यह तरकीब मालूम है।

नवाब—बस, हमको यक़ीन आ गया।

मस्तियाबेग—हाँ ख़ुदावंद, शायद ऐसा ही हो।

मुसाहब—जब हुजूर की समझ में एक बात आ गयी तो आप किस खेत की मूली हैं।

मीर साहब—और जब एक बात की लिम भी दरियाफ़्त हो गयी तो फिर उसमें इनक़ार करने की क्या ज़रूरत?

नवाब—क्यों साहब, लड़ाई में तो आपने खूब नाम पैदा किया है, बताइए कि आपके हाथ से कितने आदमियों का खून हुआ होगा?

ख़ोजी—ग़ुलाम से पूछिये, इन्होंने कुल मिला कर दो करोड़ आदमियों को मारा होगा।

नवाब—दो करोड़!

ख़ोजी—जभी तो रूम और शाम, तूरान और मुलतान, आस्ट्रिया और इँगलिस्तान, जर्मनी और फ्रांस में इनका नाम हुआ है।

नवाब—ओफ़्फ़ोह, ख़ोजी को इतने मुल्कों के नाम याद हैं!

आज़ाद—हुजूर, अब इन्हें वह ख़ोजी न समझिए।

ख़ोजी—ख़ुदावंद, मैंने एक दरिया पर अकेले एक हज़ार आदमियों का मुकाबिला किया।

नवाब—भाई, मुझे तो यक़ीन नहीं आता।

मस्तियाबेग—हुज़ूर, तीन हिस्से झूठ और एक हिस्सा सच।

मीर साहब—हम तो कहते हैं, सब डींग है।

आज़ाद—नवाब साहब, इस बात की तो हम भी गवाही देते हैं। इस लड़ाई में मैं शरीक न था, मगर मैंने अखबार में इनकी तारीफ़ देखी थी और वह अखबार मेरे पास मौजूद है।

नवाब—तो अब हमको यक़ीन आ गया, जब जनरल आज़ाद ने गवाही दी तो फिर सही है।

ख़ोजी—वह मौका ही ऐसा था।

आज़ाद—नहीं-नहीं भाई, तुमने वह काम किया कि बड़े-बड़े जनरलों ने दाँतों अँगुली दबायी। वहीं तो सफ़शिकन भी तुम्हें नज़र आये थे!

खोजी—हुजूर, यह कहना तो मैं भूल ही गया। जिस वक़्त मैं दुश्मनों का सुथराव कर रहा था, उसी वक़्त सफ़शिकन को एक दरख़्त पर बैठे देखा।

नवाब—लो साहबो, सुनो, मेरे सफ़शिकन रूम की फ़ौज़ में भी जा पहुँचे।

मुसाहब—सुभान-अल्लाह! वाह रे सफ़शिकन, बहादुर हो तो ऐसा हो।

खोजी—खुदावंद, इस डॉट-डपट का बटेर भी कम देखा होगा।

नवाब—देखा ही नहीं, कम कैसा? अरे मियाँ ग़फ़ूर, ज़रा घर में इत्तला करो कि सफ़शिकन खैरियत से हैं।

ग़फ़ूर ड्योढ़ी पर आया। वहाँ खिदमतगार, दरबान, चपरासी सब नवाब की सादगी पर खिलखिला कर हँस रहे थे।

खिदमतगार—ऐसा उल्लू का पट्ठा भी कहीं न देखा होगा।

ग़फ़ूर—निरा पागल है, वल्लाह निरा पागल।

चपरासी—अभी देखिए, तो क्या-क्या क़िस्से गढ़े जाते हैं।

महरी ने यह खबर बेगम साहब को दी तो उन्होंने क़हक़हा लगाया और कहा—इन पाजियों ने नवाब को अँगुलियों पर नचाना शुरू किया। जाके कह दो कि जरी खड़े-खड़े बुलाती हैं।

नवाब साहब उठे, मगर उठते ही फिर बैठ गये और कहा—भाई, जाने को तो मैं जाता हूँ, मगर कहीं उन्होंने मुफ़स्सल हाल पूछा तो?

आज़ाद—ख्वाजा साहब से उनका हाल पूछिए, इन्हें खूब मालूम है।

खोजी—साथ तो सच पूछिए तो मेरा ही उनका बहुत रहा। इनके अँगरेजी लिबास से चकराते थे।

नवाब—भला किसी मोरचे पर गये थे या नहीं, या दूर ही से दुआ दिया किये?

खोजी—खुदावंद गुलाम जो अर्ज़ करेगा, किसी को यक़ीन न आयेगा, इस पर मैं झल्ला ऊँगा और मुफ़्त ठाँय-ठाँय होगी।

नवाब—क्या मजाल, खुदा की क़सम, अब तुम मेरे खास मुसाहब हो, तुमने जो तजरबा हासिल किया है वह औरों को कहाँ नसीब। तुम्हारा कौन मुक़ाबिला कर सकता है?

खोजी—यह हुजूर के इकबाल का असर है, वरना मैं तो किसी शुमार में न था। बात यह हुई कि गुलाम एक नदी के किनारे अफ़ीम घोल रहा था कि जिस दरख़्त का तरफ़ नज़र डालता हूँ, रोशनी छायी हुई है। घबराया कि या खुदा, यह क्या माजरा है, इसी फ़िक्र में पड़ा था कि हुजूर सफ़शिकन न जाने किधर से आ कर मेरे हाथ पर बैठ गये।

नवाब—खुदा का शुक्र है, तुम तो बड़े खुश हुए होगे?

खोजी—हुजूर, जैसे करोड़ों रुपये मिल गये। पहले हुजूर का हाल बयान किया। फिर शहर का ज़िक्र करने लगे! दुनिया की सभी बातें उन पर रोशन थीं। बस हुजूर, तो यह कैफ़ियत हुई कि दुश्मन किसी लड़ाई में जम ही न सके। इधर रूसियों

ने तोपों पर बत्ती लगायी, उधर मेरे शेर ने कील ठोंक दी।

नवाब—वाह-वाह, सुभान-अल्लाह, कुछ सुनते हो यारो ?

मस्तियाबेग—खुदावंद, जानवर क्या, जादू है !

खोजी—भला उनको कोई बटेर कह सकता है ! और जानवर तो आप खुद हैं। आप उनकी शान में इतना सख्त और बेहूदा लफ़्ज़ मुँह से निकालते हैं।

नवाब—मस्तियाबेग, अगर तुमको रहना है तो अच्छी तरह रहो, वरना अपने घर का रास्ता लो। आज तो सफ़शिकन को जानवर बनाया, कल को मुझे जानवर बनाओगे।

मुसाहब—खुदावंद, यह निरे फूहड़ हैं। बात करने की तमीज़ नहीं।

ग़फ़ूर—अच्छा तो अब खामोश ही रहिए साहब, क़ुसूर हुआ।

खोजी—नहीं, सारा हाल तो सुन चुके, मगर तब भी अपनी ही सी कहे जायेंगे, दूसरा अगर इस वक़्त जानवर कहता तो गलफड़े चीर कर धर देता, न हुई क़रौली !

नवाब—जाने भी दो, बेशऊर है।

खोजी—खुदावंद, खुश्की में तो सभी लड़ सकते हैं, मगर तरी में लड़ना मुश्किल है। सो हुजूर, तरी की लड़ाई में सफ़शिकन सबसे बढ़ कर रहे। एक दफ़ा का ज़िक्र है कि एक छोटा-दरिया था। इस तरफ़ हम, उस तरफ़ दुश्मन। मोरचे बंदी हो गयी, गोलियाँ चलने लगीं, बस क्या देखता हूँ कि सफ़शिकन ने एक कंकरी ली और उस पर कुछ कर पढ़ इस ज़ोर से फेंकी कि एक तोप के हज़ार टुकड़े हो गये।

नवाब—वाह-वाह, सुभान-अल्लाह।

मुसाहब—क्या पूछना है, एक ज़रा सी कंकरी की यह करामात !

खोजी—अब सुनिए, कि दूसरी कंकरी जो पढ़ कर फेंकी तो एक और तोप फटी और बहत्तर टुकड़े हो गये। कोई तीन-चार हज़ार आदमी काम आये।

नवाब—इस कंकरी को देखिएगा। वल्लाह-वल्लाह ! एक हज़ार टुकड़े तोप के और तीन-हज़ार आदमी ग़ायब ! वाह रे मेरे सफ़शिकन।

खोजी—इस तरह कोई चौदह तोपें उड़ा दीं और जितने आदमी थे सब भुन गये। कुछ न पूछिए हुजूर, आज तक किसी की समझ में न आया कि यह क्या हुआ। अगर एक गोला भी पड़ा होता तो लोग समझते, उसमें कोई ऐसा मसाला रहा होगा, मगर कंकरी तो किसी को मालूम भी नहीं हुई।

नवाब—बला की कंकरी थी कि तोप के हज़ारों टुकड़े कर डाले और हज़ारों आदमियों की जान ली। भई, ज़रा कोई जा कर सफ़शिकन की काबुक तो लाओ।

इतने में महरी ने फिर आ कर कहा—हुजूर; बड़ा जरूरी काम है, ज़रा चल कर सुन लें। नवाब साहब खोजी को ले कर ज़नानखाने में चले। खोजी की आँखों में दोहरी पट्टी बाँधी गयी और वह ड्योढ़ी में खड़े किये गये।

बेगम—क्या सफ़शिकन का कोई ज़िक्र था, कहाँ हैं आजकल ?

नवाब—यह कुछ न पूछो, रूम जा पहुँचे। वहाँ कई लड़ाइयों में शरीक हुए

और दुश्मनों का क़ाफ़िया तंग कर दिया। ख़ुदा जाने, यह सब किससे सीखा है ?

बेगम—ख़ुदा की देन है, सीखने से भी कहीं ऐसी बातें आती हैं ?

नवाब—वल्लाह, सच कहती हो बेगम साहब ! इस वक़्त तुमसे जी ख़ुश हो गया। कहाँ तोप, कहाँ सफ़शिकन, ज़रा ख़याल तो करो।

बेगम—अगर पहले से मालूम होता तो सफ़शिकन को हज़ार परदों में छिपाके रखती। हाँ, ख़ूब याद आया, वह तो अभी जीते-जागते हैं और तुमने उनकी क़ब्र बनवा दी।

नवाब—वल्लाह, ख़ूब याद दिलाया। सुभान-अल्लाह !

बेगम—यह तो कोसना हुआ किसी बेचारे को।

नवाब—अगर कहीं यहाँ आ जायँ, और पढ़े-लिखे तो हैं ही, कहीं क़ब्र पर नज़र पड़ गयी, उस वक़्त यही कहेंगे कि यह लोग मेरी मौत मना रहे हैं, क्या झपाके से क़ब्र बनवा दी। इससे बेहतर यही है कि खुदवा डालूँ।

बेगम—जहन्नुम में जाय। इस अफ़ीमची को घर के अंदर लाने की क्या ज़रूरत थी ?

नवाब—अजी, यह वही हैं जिनको हम लोग ख़ोजी-ख़ोजी कहते थे। लड़ाई के मैदान में सफ़शिकन इन्हीं से मिले थे। अगर कहो तो यहाँ बुला लूँ।

बेगम—ऐ जहन्नुम में जाय मुआ, और सुनो, उस अफ़ीमची को घर के अंदर लायेंगे।

नवाब—सुन तो लो। पहले बूढ़ा, पेट में आँत न मुँह में दाँत, दूसरे मातबर, तीसरे दोहरी पट्टी बँधी है।

बेगम—हाँ, इसका मुज़ायक़ा नहीं, मगर मैं उन मुए लुंगाड़ों के नाम से जलती हूँ, उन्हीं की सोहबत में तुम्हारा यह हाल हुआ।

नवाब—ऐं, क्या ख़ूब !

ख़ोजी—ख़ुदावंद, ग़ुलाम हाज़िर है।

महरी—मैं तो समझी कि कुएँ में से कोई बोला।

बेगम—क्या यह हरदम पीनक में रहता है ?

नवाब—ख़्वाजा साहब, क्या सो गये ?

दरबान—ख़्वाजा साहब, देखो सरकार क्या फ़रमाते हैं ?

ख़ोजी—क्या हुक्म है ख़ुदावंद !

बेगम—देखो, ख़ुदा जानता है, ऊँघ रहा था। मैं तो कहती ही थी।

नवाब—भाई, ज़रा सफ़शिकन का हाल तो कह चलो।

ख़ोजी—ख़ुदावंद, तो अब आँखें तो खुलवा दीजिए।

बेगम—क्या कुतिया के पिल्ले की आँखें हैं जो अब भी नहीं खुलतीं।

नवाब—पहले हाल तो बयान करो। ज़रा तोपवाला ज़िक्र फिर करना, यहाँ किसी को यक़ीन ही नहीं आता।

खोजी—हुजूर, क्योंकर यक़ीन आये, जब तक अपनी आँखों से न देखेंगे, कभी न मानेंगे।

नवाब—तो भाई, हमने क्योंकर मान लिया, इतना तो सोचो।

खोजी—खुदा ने सरकार को देखनेवाली आँखें दी हैं। आप न समझें तो कौन समझे। हुजूर, यह कैफ़ियत हुई कि दरिया के दोनों तरफ़ आमने-सामने तोपें चढ़ी हुई थीं। बस सफ़शिकन ने एक कंकरी उठा कर, खुदा जाने क्या जादू फूँक दिया कि इधर कंकरी फेंकी और उधर तोप के दो सौ टुकड़े और हर टुकड़े ने सौ-सौ रूसियों की जान ली।

बेगम—इस झूठ को आग लगे, अफ़ीम पी-पीके निगोड़ों को क्या-क्या सूझती है। बैठे-बैठे एक कंकरी से तोप के सौ टुकड़े हो गये। खुदा का डर ही नहीं।

नवाब—तुम्हें यक़ीन ही न आये तो कोई क्या करे।

बेगम—चलो, बस खामोश रहो, ज़रा सा मुआ बटेर और कंकरी से उसने तोप के दो सौ टुकड़े कर डाले। खुदा जानता है, तुम अपनी फ़स्द खुलवाओ।

नवाब—अब खुदा जाने, हमें जनून है या तुम्हें।

खोजी—खुदावंद, बहस से क्या फायदा! औरतों की समझ में यह बातें नहीं आ सकतीं।

बेगम—महरी, ज़रा दरवान से कह, इस निगोड़े अफ़ीमची को जूते मारके निकाल दे। खबरदार जो इसको कभी ड्योढ़ी में आने दिया।

खोजी—सरकार तो नाहक़ खफ़ा होती हैं।

बेगम—मालूम होता है, आज मेरे हाथों तुम पिटोगे, अरे महरी, खड़ी सुनती क्या है, जाके दरबान को बुला ला।

हुसैनी दरबान ने आ कर खोजी के कान पकड़े और चपतियाता हुआ ले चला।

खोजी—बस-बस, देखो, कान-वान की दिल्लगी अच्छी नहीं।

महबूबन—अब चलता है या मचलता है?

खोजी—(टोपी जमीन से उठा कर) अच्छा, अगर आज जीते बच जाओ तो कहना। अभी एक थप्पड़ दूँ तो दम निकल जाय।

इतना कहना था कि दूसरी महरी आ पहुँची और कान पकड़ कर चपतियाने लगी। खोजी बहुत बिगड़े, मगर सोचे कि अगर सब लोगों को मालूम हो जायगा कि महरियों की जूतियाँ खायीं तो बेढब होगी। झाड़-पोंछ कर बाहर आये और एक पलँग पर लेट रहे।

खोजी के जाने के बाद बेगम साहब ने नवाब को खूब ही आड़े हाथों लिया। ज़रा सोचो तो कि तुम्हें हो क्या गया है। कहाँ बटेर और कहाँ तोप, खुदा झूठ न बोलाये तो बिल्ली खा गयी हो, या इन्हीं मुसाहबों में से किसी ने निकाल कर बेच लिया होगा और तुम्हें पट्टी पढ़ा दी कि वह सफ़शिकन थे। आखिर तुम किसी अपने दोस्त से पूछो। देखो, लोगों की क्या राय है?

नवाब—खुदा के लिए मेरे मुसाहबों को न कोसो, चाहे मुझे बुरा-भला कह लो।

बेगम—इन मुफ़्तखोरों से खुदा समझे।

नवाब—ज़रा आहिस्ता-आहिस्ता बोलो, कहीं वह सब सुन लें, तो सब के सब चलते हों और मैं अकेला मक्खियाँ मारा करूँ।

बेगम—ऐ है, ऐसे बड़े खरे हैं! तुम जूतियाँ मार के निकालो तो भी ये चूँ न करें। जो सब निकल जायँ तो होगा क्या? वह कल जाते हों तो आज ही जायँ।

महरी—हुजूर तो चूक गयीं, जरी इस मुए खोजी की कहानी तो सुनी होती। हँसते-हँसते लोट जातीं।

बेगम—सच, अच्छा तो उसको बुलाओ जरी, मगर कह देना कि झूठ बोला और मैंने खबर ली।

नवाब—या खुदा, यह तुमसे किसने कह दिया कि वह झूठ ही बोलेगा। इतने दिनों से दरबार में रहता है, कभी झूठ नहीं बोला तो अब क्यों झूठ बोलने लगा? और आखिर इतना तो समझो कि झूठ बोलने से उसको मिल क्या जायगा?

बेगम—अच्छा, बुलाओ। मैं भी ज़रा सफ़शिकन का हाल सुनूँ।

महरी ने जा कर खोजी को बुलाया। ख्वाजा साहब झल्लाये हुए पलँग पर पड़े थे। बोले—जा कर कह दो, अब हम वह खोजी नहीं हैं जो पहले थे, आनेवाले और जानेवाले, बुलानेवाले और बुलवानेवाले, सबको कुछ कहता हूँ।

आखिर लोगों ने समझाया तो ख्वाजा साहब ड्योढ़ी में आये और बोले—आदाब अर्ज़ करता हूँ सरकार, अब क्या फिर कुछ मेहरबानी की नज़र ग़रीब के हाल पर होगी? अभी कुछ इनाम बाक़ी हो तो अब मिल जाय।

बेगम—सफ़शिकन का कुछ हाल मालूम हो तो ठीक-ठीक कह दो। अगर झूठ बोले तो तुम जानोगे।

खोजी—वाह री क़िस्मत, हिंदोस्तान से बम्बई गये, वहाँ सब के सब 'हुजूर-हुजूर' कहते थे। तुर्की और रूस में कोहक़ाफ़ की परियाँ हाथ बाँधे हाज़िर रहती थीं। मिस रोज़ एक-एक बात पर जान देती थीं, अब भी उसकी याद आ जाती है तो रात भर अच्छे-अच्छे ख्वाब देखा करता हूँ—

ख्वाब में एक नूर आता है नज़र;
याद में तेरी जो सो जाते हैं हम।

बेगम—अब बताओ, है पक्का अफ़ीमची या नहीं, मतलब की बात एक न कही वाही-तबाही बकने लगा।

खोजी—एक दफ़े का ज़िक्र है कि पहाड़ के ऊपर तो रूसी और नीचे हमारी फ़ौज़। हमको मालूम नहीं कि रूसी मौजूद हैं। वहीं पड़ाव का हुक्म दे दिया। फ़ौज़ तो खाने पीने का इंतज़ाम करने लगी और मैं अफ़ीम घोलने लगा कि एका-एक पहाड़ पर से तालियों की आवाज आयी। मैं प्याली ओठों तक ले गया था कि

ऊपर से रूसियों ने बाढ़ मारी। हमारे सैकड़ों आदमी घायल हो गये। मगर वाह रे मैं, खुदा गवाह है, प्याली हाथ से न छूटी। एकाएक देखता हूँ कि सफ़शिकन उड़े चले आते हैं, आते ही मेरे हाथ पर बैठ कर चोंच अफ़ीम से तर की, और उसके दो कतरे पहाड़ पर गिरा दिये। बस धमाके की आवाज़ हुई और पहाड़ फट गया। रूस की सारी फ़ौज़ उसमें समा गयी। मगर हमारी तरफ़ का एक आदमी भी न मरा। मैंने सफ़शिकन का मुँह चूम लिया।

बेगम—भला सफ़शिकन बातें किस ज़बान में करते हैं?

खोजी—हुज़ूर, एक ज़बान हो तो कहूँ। उर्दू, फारसी, अरबी, तुर्की, अँगरेजी।

बेगम—क्या और ज़बानों के नाम नहीं याद हैं?

खोजी—अब हूज़ूर से कौन कहे।

नवाब—अब यक़ीन आया कि अब भी नहीं? और जो कुछ पूछना हो, पूछ लो।

बेगम—चलो, बस चुपके बैठ रहो। मुझे रंज होता है कि इन हरामखोरों के पास बैठ-बैठ तुम कहीं के न रहे।

नवाब—हाय अफ़सोस, तुम्हें यक़ीन ही नहीं आता, भला सोचो तो, यह सब के सब मुझसे क्यों झूठ बोलेंगे। खोजी को मैं कुछ इनाम दे देता हूँ या कोई जागीर लिख दी है इसके नाम?

खोजी—खुदावंद, अगर इसमें ज़रा भी शक हो तो आसमान फट पड़े। झूठ बात तो ज़बान से निकलेगी ही नहीं, चाहे कोई मार डाले।

बेगम—अच्छा, ईमान से कहना कि कभी मोरचे पर भी गये या झूठ-मूठ के फ़िक़रे ही बनाया करते हो?

खोजी—हुजूर मालिक हैं, जो चाहें, कह दें, मगर ग़ुलाम ने जो बात अपनी आँखों देखी, वह बयान की। अगर फ़र्क़ हो तो फाँसी का हुक्म दे दीजिए।

एक बूढ़ी महरी ने खोजी की बातें सुनने के बाद बेगम से कहा—हुज़ूर, इसमें ताज्जुब की कौन बात है, हमारे महल्ले में एक बड़ा काला कुत्ता रहा करता था। महल्ले के लड़के उसे मारते, कान पकड़ कर खींचते, मगर वह चूँ भी नहीं करता था। एक दिन महल्ले के चौकीदार ने उस पर एक ढेला फेंका। ढेला उसके कान में लगा और कान से खून बहने लगा। चौकीदारी दूसरा ढेला मारना ही चाहता था कि एक जोगी ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, क्यों जान का दुश्मन हुआ है बाबा। यह कुत्ता नहीं है। उसी रात को चौकीदार ने ख्वाब देखा कि कुत्ता उसके पास आया! और अपना घाव दिखा कर कहा—या तो हमीं नहीं, या तुम्हीं नहीं। सबेरे जो चौकीदार उठा तो उसने पास-पड़ोसवालों से ख्वाब का जिक्र किया। मगर अब देखते हैं तो कुत्ते का कहीं पता ही नहीं। दोपहर को चौकीदार कुएँ पर पानी भरने गया तो पानी देखते ही भूँकने लगा।

बेगम—सच!

महरी—हुजूर, अल्लाह बचाये इस बला से, कुत्ते के भेस में क्या जाने कौन था।

नवाब—अब इसको क्या कहोगी भई, अब भी सफ़शिकन के कमाल को न मानोगी?

बेगम—हाँ, ऐसी बातें तो हमने भी सुनी हैं, मगर...

खोजी—अगर-मगर की गुंजायश नहीं, ग़ुलाम आँखों देखी कहता है। एक क़िस्सा और सुनिए, आपको शायद इसका भी यक़ीन न आये। सफ़शिकन मेरे सिर पर आ कर बैठ गये और कहा, रूसियों की फ़ौज़ में धँस पड़ो। मेरे होश उड़ गये। बोला, साहब आप हैं कहाँ? मेरी जान जायगी, आपके नज़दीक दिल्लगी है, मगर वह सुनते किसकी हैं। कहा, चलो तो तुम! आधी रात थी, घटा छायी हुई थी, मगर मजबूरन जाना पड़ा। बस, रूसी फ़ौज़ में जा पहुँचा। देखा, कोई गाता है, कोई सोता है। हम सबको देखते हैं, मगर हमें कोई नहीं देखता। सफ़शिकन अस्तबल की तरफ़ चले और फुदक के एक घोड़े की गरदन पर जा बैठे। घोड़ा धम से जा गिरा, अब जिस घोड़े की गरदन पर बैठते हैं, ज़मीन पर लोटने लगता है। इस तरह कोई सात हज़ार घोड़े उसी दम धम-धम करके लोट गये। फ़ौज़ से निकले तो आपने पूछा, कहो आज की दिल्लगी देखी, कितने सवार बेकार हुए!

मैं—हुजूर, पूरे सात हज़ार!

सफ़शिकन—आज इतना ही बहुत है, कल फिर देखी जायगी, चलो, अपने पड़ाव पर चलें। चलते-चलते जब थक जाओ तो हमसे कह दो।

मैं—क्यों, आपसे क्यों कह दूँ?

सफ़शिकन—इसलिए कि हम उतर जायँ।

मैं—वाह, मुट्ठी भर के आप, भला आपके बैठने से मैं क्या थक जाऊँगा? आप क्या और आपका बोझ क्या!

इतना सुनना था कि ख़ुदा जाने ऐसा कौन सा जादू कर दिया कि मेरा क़दम उठाना मुहाल हो गया। मालूम होता था, सिर पर पहाड़ का बोझा लदा हुआ है। बोला, हुज़ूर, अब तो बहुत ही थक गया, पैर ही नहीं उठते। बस, फ़ुर्र से उड़ गये। ऐसा मालूम हुआ कि सिर से दस-बीस करोड़ मन बोझा उतर गया।

नवाब—यह तो भाई, नयी-नयी बातें मालूम होती जाती हैं। वाह रे सफ़शिकन!

खोजी—हुज़ूर, खुदा जाने, किस औलिया ने यह भेस बदला है।

बेगम साहब ने इस वक़्त तो कुछ न कहा, मगर ठान ली कि आज रात को नवाब साहब को खूब आड़े हाथों लूँगी। नवाब साहब ने समझा कि बेगम साहब को सफ़शिकन के कमाल का यक़ीन आ गया। बाहर आ कर बोले—वल्लाह, तुमने तो ऐसा समा बाँध दिया कि अब बेगम साहब को उम्र भर शक न होगा।

खोजी—हुज़ूर, सब आँखों देखी बात बयान की है।

नवाब—यही तो मुश्किल है कि वह सच्ची बातों को भी बनावट समझती हैं।

खोजी—समझ में नहीं आता, मुझसे क्यों इतनी नाराज़ हैं।

नवाब—नाराज़ नहीं हैं जी, मतलब यह कि अब इस बात को सिवा पढ़े-लिखे आदमी के और कौन समझ सकता है। और भई, मैं सोचता हूँ कि आखिर कोई झूठ क्यों बोलने लगा, झूठ बोलने में किसी को फ़ायदा ही क्या है।

खोजी—ऐ सुभान-अल्लाह, क्या बात हुज़ूर ने पैदा की है! सच-मुच कोई झूठ क्यों बोलने लगा। एक तो झूठा कहलाये, दूसरे बेआबरू हो।

नवाब—भाई, हम इनसान को खूब पहचानते हैं। आदमी का पहचानना कोई हमसे सीखे। मगर दो को हमने भी नहीं पहचाना। एक तुमको, दूसरे सफ़शिकन को।

खोजी—खुदावंद, मैं यह न मानूँगा, हुज़ूर की नज़र बड़ी बारीक है।

नवाब साहब खोजी की बातों से इतने खुश हुए कि उनके हाथ में हाथ दिये बाहर आये। मुसाहबों ने जो इतनी बेतकल्लुफ़ी देखी तो जल मरे, आपस में इशारे होने लगे—

मस्तियाबेग—ऐं, मियाँ खोजी ने तो जादू कर दिया यारो!

ग़फ़ूर—ज़रूर किसी मुल्क से जादू सीख आये हैं।

मस्तियाबेग—तजरबाकार हो गया न, अब इसका रंग कुछ जम गया।

ग़फ़ूर—कैसा कुछ, अब तो सोलहों आने के मालिक हैं।

मिरज़ा—अरे मियाँ, दोनों हाथ में हाथ दे कर निकले, वाह री क़िस्मत। मगर यह खुश किस बात पर हुए?

ग़फ़ूर—इनको अभी तक यही नहीं मालूम, बताइए साहब!

मस्तियाबेग—मियाँ, अजब कूढ़मग्ज़ हो, कहने लगे, खुश किस बात पर हुए। सफ़शिकन की तारीफ़ों के पुल बाँध दिये। सूझ ही तो है, अब लाख चाहें कि उसका रंग फीका कर दें, मुमकिन नहीं।

मिरज़ा—इस वक़्त तो खोजी का दिमाग़ चौथे आसमान पर होगा।

मस्तियाबेग—अजी, बल्कि और उसके भी पार, सातवें आसमान पर।

ग़फ़ूर—मैं बाग़ में गया था, देखा, नवाब साहब मोढ़े पर बैठे हैं और खोजी तिपाई पर बैठा हुआ, खास सरकार की गुड़गुड़ी पी रहा है!

मिरज़ा—सच, तुम्हें खुदा की क़सम!

ग़फ़ूर—चल कर देख लीजिए न, बस जादू कर दिया। यह वही खोजी हैं जो चिलमें भरा करते थे, मगर जादू का ज़ोर, अब दोस्त बने हुए हैं।

मिरज़ा—खोजी को सब के सब मिल कर मुबारकबाद दो और उनसे बढ़िया दावत लो। अब इससे बढ़ कर कौन दरजा है?

इतने में नवाब साहब खोजी को लिये हुए दरबार में आये, मुसाहब उठ खड़े हुए। ख्वाजा साहब को सरकार ने अपने क़रीब बिठाया और आज़ाद से बोले—हज़रत, आपकी सोहबत में ख्वाजा साहब पारस हो गये।

आज़ाद—जनाब, यह सब आपकी ख़िदमत का असर है। मेरी सोहबत में तो थोड़े ही दिनों से हैं, आपकी शागिर्दी करते बरसों गुज़र गये।

नवाब—वाह, अब तो ख्वाजा साहब मेरे उस्ताद हैं जनाब!

मस्तियाबेग—खुदावंद, यह क्या फ़रमाते हैं। हुज़ूर के सामने खोजी की क्या हस्ती है?

नवाब—क्या बकता है? खोजी की तारीफ़ से तुम सब क्यों जल मरते हो?

मिरज़ा—खुदावंद, यह मस्तियाबेग तो दूसरों को देख कर हमेशा जलते रहते हैं।

ग़फ़ूर—यह परले सिरे के गुस्ताख़ हैं, बात तो समझे नहीं, जो कुछ मुँह में आया, बक दिये। आख़िर ख्वाजा साहब बेचारे ने इनका क्या बिगाड़ा!

नवाब—मुझसे सुनो साहब, दिल में पुरानी कुदूरत है।

मुसाहब—सुभान-अल्लाह! हुज़ूर, बस यही बात है।

खोजी—हुज़ूर इसका ख्याल न करें। यह लोग जो चाहें, कहें। भाई ग़फ़ूर, ज़रा सा पानी पीयेंगे।

नवाब—ठंडा पानी लाओ ख्वाजा साहब के वास्ते।

ख़िदमतगार सुराही का झला ठंडा पानी लाया, चाँदी के कटोरे में पानी दिया। जब ख्वाजा साहब पानी पी चुके तो नवाब साहब ने पानदान से दो गिलौरियाँ निकाल कर खास अपने हाथ से उनको दीं।

मिरज़ा—मैंने मस्तियाबेग से हज़ार बार कहा कि भाई, तुम किसी को देख के जले क्यों मरते हो, कोई तुम्हारा हिस्सा नहीं छीन ले जाता, फिर ख्वाहमख्वाह के लिए अपने को क्यों हलकान करते हो।

नवाब—मुझे इस वक़्त उसकी बातें बहुत नागवार मालूम हुईं।

मुसाहब—जानते हैं कि इस दरबार में खुशामदियों की दाल नहीं गलती, फिर भी अपनी हरकत से बाज़ नहीं आते।

मुसाहब लोग तो बाहर बैठे सलाह कर रहे थे, इधर दरबार में नवाब साहब, आज़ाद और खोजी में यूरोप के रईसों का ज़िक्र होने लगा। आज़ाद ने यूरोप के रईसों की खूब तारीफ़ की।

नवाब—क्यों साहब, हम लोग भी उन रईसों की तरह रह सकते हैं?

आज़ाद—बेशक, अगर उन्हीं की राह पर चलिए। आपकी सोहबत में चंडू-बाज़, मदकिये, चरसिये इस कसरत से हैं कि शायद ही कोई इनसे खाली हो। यूरोप के रईसों के यहाँ ऐसे आदमी फटकने भी न पायें!

नवाब—कहिए तो ख्वाजा साहब के सिवा और सबको निकाल दूँ।

खोजी—निकालिए चाहे रहने दीजिए, मगर इतना हुक्म ज़रूर दे दीजिए कि आपके सामने दरबार में न कोई चंडू के छींटे उड़ाये, न मदक के दम लगाये और न अफ़ीम घोले।

आज़ाद—दूसरी बात यह है कि खुशामदी लोग आपकी झूठी तारीफ़ें कर-

करके खुश करते हैं। इनको झिड़क दीजिए और इनकी खुशामद पर खुश न होइए।

नवाब—आप ठीक कहते हैं। वल्लाह, आपकी बात मेरे दिल में बैठ गयी। यह सब भेंरें दे-दे कर मुझे बिलटाये देते हैं।

आज़ाद—आपको खुदा ने इतनी दौलत दी है, यह इस वास्ते नहीं कि आप खुशामदियों पर लुटायें। इसको इस तरह काम में लायें कि सारी दुनिया में नहीं तो हिंदोस्तान भर में आपका नाम हो जाय। खैरातखाना क़ायम कीजिए, अस्पताल बनवाइए, आलिमों की क़द्र कीजिए। मैंने आपके दरबार में किसी आलिम फ़ाज़िल को नहीं देखा।

नवाब—बस, आज ही से इन्हें निकाल बाहर करता हूँ।

आज़ाद—अपनी आदतें भी बदल डालिए, आप दिन को ग्यारह बजे सो कर उठते और हाथ-मुँह धो कर चंडू के छींटे उड़ाते हैं। इसके बाद इन फ़िक़रेबाज़ों से चुहल होती है। सुबह का खाना आपको तीन बजे नसीब होता है। आप फिर आराम करते हैं तो शाम से पहले नहीं उठते। फिर वही चंडू और मदक का बाज़ार गर्म होता है। कोई दो बजे रात को आप खाना खाते हैं। अब आप ही इनसाफ़ कीजिए कि दुनिया में आप कौन सा काम करते हैं।

नवाब—इन बदमाशों ने मुझे तबाह कर दिया।

आज़ाद—सबेरे उठिए, हवा खाने जाइए, अखबार पढ़िए, भले आदमियों की सोहबत में बैठिए, अच्छी-अच्छी किताबें पढ़िए, ज़रूरी काग़ज़ों को समझिए; फिर देखिए कि आपकी ज़िंदगी कितनी सुधर जाती है।

नवाब—खुदा की क़सम, आज से ऐसा ही करूँगा, एक-एक हर्फ़ की तामील न हो तो समझ लीजिएगा, बड़ा झूठा आदमी है।

खोजी—हुज़ूर, मुझे तो बरसों इस दरबार में हो गये, जब सरकार ने कोई बात ठान ली तो फिर चाहे ज़मीन और आसमान एक तरफ़ हो जाय, आप उसके खिलाफ़ कभी न करेंगे। बरसों से यही देखता आता हूँ।

आज़ाद—एक इश्तहार दे दीजिए कि लोग अच्छी-अच्छी किताबें लिखें, उन्हें इनाम दिया जायगा। फिर देखिए, आपका कैसा नाम होता है!

नवाब—मुझे किसी बात में उज्र नहीं है।

उधर मुसाहबों में और ही बातें हो रही थीं—

मस्तियाबेग—वल्लाह, आज तो अपना खून पी कर रह गया यारो।

मिरज़ा—देखते हो, किस तरह झिड़क दिया!

मस्तियाबेग—झिड़क क्या दिया, बस कुछ न पूछो, मैं जान-बूझ कर चुप हो रहा, नहीं बेढब हो जाती। किसी ने अपनी इज़्ज़त नहीं बेची है। और अब आपस में सलाहें हो रही हैं। खोजी ने सबको बिलटाया।

मस्तियाबेग—कोई लाख कहे, हम न मानेंगे, यह सब जादू का खेल है।

ग़फ़ूर—मियाँ, इसमें क्या शक है, यह जादू नहीं तो है क्या?

मिरज़ा—अजी, उल्लू का गोश्त नवाब साहब को न खिला दिया हो तो नाक कटवा डालूँ। इन लोगों ने मिल कर उल्लू का गोश्त खिलवा दिया है, जभी तो उल्लू बन गये, अब उनसे कहे कौन?

मस्तियाबेग—कहके बहुत खुश हुए कि अब किसी दूसरे को हिम्मत होगी।

ग़फ़ूर—अब तो कुछ दिन खोजी की खुशामद करनी पड़ेगी।

मस्तियाबेग—हमारी जूती उस पाजी की खुशामद करती है।

मिरज़ा—फिर निकाले जाओगे, यहाँ रहना है तो खोजी को बाप बनाओ, दरिया में रहना और मगर से बैर?

मस्तियाबेग—दो-चार दिन रहके यहाँ का रंग-ढंग देखते हैं। अगर यही हाल रहा तो हमारा इस्तीफ़ा है, ऐसी नौकरी से बाज़ आये! बराबरवालों की खुशामद हमसे न हो सकेगी।

मीर साहब—बराबरवाले कौन? तुम्हारे बराबरवाले होंगे। हम तो खोजी को ज़लील समझते हैं।

ग़फ़ूर—अरे साहब, अब तो वह सबके अफ़सर हैं और हम तो उन्हें गुड़गुड़ी पिला चुके। आप लोग उन्हें मानें या न मानें, हमारे तो मालिक हैं।

मिरज़ा—सौ बरस बाद घूरे के भी दिन फिरते हैं। भाईजान, किसी को इसका गुमान भी था कि खोजी को सरकार इस तपाक से अपने पास बिठायेंगे, मगर अब आँखों देख रहे हैं।

नवाब साहब बाहर आये तो इस ढंग से कि उनके हाथ में एक छोटी सी गुड़-गुड़ी और ख्वाजा साहब पी रहे हैं। मुसाहबों के रहे-सहे होश भी उड़ गये। ओ-फ़्फ़ोह, सरकार के हाथ में गुड़गुड़ी और यह टुकरचा, रईस बना हुआ दम लगा रहा है। नवाब साहब मसनद पर बैठे तो खोजी को भी अपने बराबर बिठाया। मुसा-हब सन्नाटे में आ गये। कोई चूँ तक नहीं करता, सबकी निगाह खोजी पर है। बारे मीर साहब ने हिम्मत करके बात-चीत शुरू की—

मीर साहब—खुदावंद, आज कितनी बहार का दिन है, चमन से कैसी भीनी-भीनी खुशबू आ रही है।

नवाब—हाँ, आज का दिन इसी लायक़ है कि कोई इल्मी बहस हो।

मीर साहब—खुदावंद, आज का दिन तो गाना सुनने के लिए बहुत अच्छा है।

नवाब—नहीं, कोई इल्मी बहस होनी चाहिए। ख्वाजा साहब, आप कोई बहस शुरू कीजिए।

मस्तियाबेग—(दिल में) इनके बाप ने भी कभी इल्मी बहस की थी?

मिरज़ा—हुज़ूर, ख्वाजा साहब की लियाक़त में क्या शक है, मगर...।

नवाब—अगर-मगर के क्या मानी? क्या ख्वाजा साहब के आलिम होने में आप लोगों को कुछ शक है?

मिरज़ा—किस इल्म की बहस कीजिएगा ख्वाजा साहब ? इल्म का नाम तो मालूम हो।

खोजी—हम इल्म जालोजी में बहस करते हैं, बतलाइए, इस इल्म का क्या मतलब है ?

मिरज़ा—किस इल्म का नाम लिया आपने, जालोजी ! यह जालोजी क्या बला है ?

नवाब—जब आपको इस इल्म का नाम तक नहीं मालूम तो बहस क्या खाक कीजिएगा। क्यों ख्वाजा साहब, सुना है कि दरिया में जहाज़ों के डुबो देने के औज़ार भी अँगरेजों ने निकाले हैं। यह तो खुदाई करने लगे !

खोजी—उस औज़ार का नाम तारपेडो है। दो जहाज़ हमारे सामने डुबो दिये गये ! पानी के अंदर ही अंदर तारपेडो छोड़ा जाता है, बस जैसे ही जहाज़ के नीचे पहुँचा वैसे ही फटा। फिर तो जनाब, जहाज़ के करोड़ों टुकड़े हो जाते हैं।

मस्तियाबेग—और क्यों साहब, यह बम का गोला कितनी दूर का तोड़ करता है ?

खोजी—बम के गोले कई क़िस्म के होते हैं, आप किस क़िस्म का हाल दरियाफ्त करते हैं ?

मस्तियाबेग—अजी, यही बम के गोले।

खोजी—आप तो यही-यही करते हैं, उसका नाम तो बतलाइए ?

नवाब—क्यों जनाब, लड़ाई के वक़्त आदमी के दिल का क्या हाल होता होगा ? चारों तरफ़ मौत ही मौत नज़र आती होगी ?

मिरज़ा—मैं अर्ज़ करूँ हुजूर, लड़ाई के मैदान में आ कर ज़रा...।

नवाब—चुप रहो साहब, तुमसे कौन पूछता है, कभी बंदूक की सूरत भी देखी है या लड़ाई का हाल ही बयान करने चले !

खोजी—जनाब, लड़ाई के मैदान में जान का ज़रा भी खौफ़ नहीं मालूम होता। आपको यक़ीन न आयेगा, मगर मैं सही कहता हूँ कि इधर फ़ौज़ी बाजा बजा और उधर दिलों में जोश उमड़ने लगा। कैसा ही बुज़दिल हो, मुमकिन नहीं कि तलवार खींच कर फ़ौज़ के बीच में धँस न जाय। नंगी तलवार हाथ में ली और दिल बढ़ा। फिर अगर दो करोड़ गोले भी सिर पर आयें तो क्या मजाल कि आदमी हट जाय।

खोजी यही बातें कर रहे थे कि खिदमतगार ने आ कर कहा—हुजूर, बाहर एक साहब आये हैं, और कहते हैं, नवाब साहब को हमारा सलाम दो, हमें उनसे कुछ कहना है। नवाब साहब ने कहा—ख्वाजा साहब, आप ज़रा जा कर दरियाफ़्त कीजिए कि कौन साहब हैं। खोजी बड़े ग़रूर के साथ उठे और बाहर जा कर साहब को सलाम किया। मालूम हुआ कि यह पुलीस का अफ़सर है, ज़िले के हाकिम ने उसे आज़ाद का हाल दरियाफ़्त करने के लिए भेजा है।

खोजी—आप साहब से जा कर कह दीजिए, आज़ाद पाशा नवाब साहब के मेहमान हैं और उनके साथ ख्वाजा साहब भी हैं।

अफ़सर—तो साहब उनसे मिलनेवाला है। अगर आज उनको फ़ुरसत हो तो अच्छा, नहीं तो जब उनका जी चाहे।

ख़ोजी—मैं उनसे पूछ कर आपको लिख भेजूँगा।

इंस्पेक्टर साहब चले गये तो मस्तियाबेग ने कहा—क्यों साहब, यह बात हमारी समझ में नहीं आयी कि आपने आज़ाद पाशा से इसी वक़्त क्यों न पूछ लिया। एक ओहदेदार को दिक़ करने से क्या फ़ायदा? ख़ोजी ने त्योरियाँ बदल कर कहा—तुमसे हज़ार बार मना किया कि इस बारे में न बोला करो, मगर तुम सुनते ही नहीं। तुम तो हो अक्ल के दुश्मन, हम चाहते हैं कि आज़ाद पाशा जब किसी हाकिम से मिलें तो बराबर की मुलाक़ात हो। इस वक़्त यह वर्दी नहीं पहने हैं। कल जब यह फ़ौज़ी वर्दी पहन कर और तमगे लगा कर हाकिम-ज़िला से मिलेंगे तो वह खड़ा हो कर ताज़ीम करेगा।

नवाब—अब समझे या अब भी गधे ही बने हो? ख्वाजा साहब को तौलने चले हैं! वल्लाह, ख्वाजा साहब, आपने खूब सोची। अगर इस वक़्त कह देते कि आज़ाद वह क्या बैठे हैं तो कितनी किरकिरी होती।

इतने में खाने का वक़्त आ पहुँचा। खाना चुना गया, सब लोग खाने बैठे, उस वक़्त ख़ोजी ने एक क़िस्सा छेड़ दिया—हुजूर, एक बार जब अँगरेजों की डच लोगों से मुठभेड़ हुई तो अँगरेजी अफ़सर ने कहा, अगर कोई आदमी दूसरी तरफ़ के जहाज़ों को ले आये तो हमारी फ़तह हो सकती है, नहीं तो हमारा बेड़ा तबाह हो जायगा। इतना सुनते ही बारह मल्लाह पानी में कूद पड़े। उनके साथ पंद्रह साल का एक लड़का भी पानी में कूदा।

नवाब—समुद्र में, ओफ़्फ़ोह!

खोजी—खुदावंद, उनसे बढ़ कर दिलेर और कौन हो सकता है? बस अफ़सर ने मल्लाहों से कहा, इस लड़के को रोक लो। लड़के ने कहा, वाह, मेरे मुल्क पर अगर मेरी जान कुरबान हो जाय तो क्या मुज़ायक़ा? यह कह कर वह लड़का तैरता हुआ निकल गया।

नवाब—ख्वाजा साहब, कोई ऐसी फ़िक्र कीजिए कि हमारी-आपकी दोस्ती हमेशा इसी तरह क़ायम रहे।

खोजी—भाई सुनो, हमें खुशामद करनी मंजूर नहीं, अगर साहब-सलामत रखना है तो रखिए, वरना आप अपने घर खुश और मैं अपने घर खुश।

नवाब—यार, तुम तो बेवजह बिगड़ खड़े होते हो।

खोजी—साफ़ तो यह है कि जो तजरबा हमको हासिल हुआ है उस पर हम जितना ग़रूर करें, बजा है।

नवाब—इसमें क्या शक है जनाब।

खोजी—आप खूब जानते हैं कि आलिम लोग किसी की परवा नहीं करते। मुझे दुनिया में किसी से दबके चलना नागवार है, और हम क्यों किसी से दबें? लालच

हमें छू नहीं गया, हमारे नज़दीक बादशाह और फ़क़ीर दोनों बराबर। जहाँ कहीं गया, लोगों ने सिर और आँखों पर बिठाया। रूम, मिस्र, रूस वग़ैरह मुल्कों में मेरी जो क़द्र हुई वह सारा ज़माना जानता है। आपके दरबार में आलिमों की क़द्र नहीं। वह देखिए, नालायक़ मस्तियाबेग आपके सामने चंडू का दम लगा रहा है। ऐसे बादमाशों से मुझे नफ़रत है।

नवाब—कोई है, इस नालायक़ को निकाल दो यहाँ से।

मुसाहिब—हुजूर तो आज नाहक़ ख़फ़ा होते हैं, इस दरबार में तो रोज़ ही चंडू के दम लगा करते हैं। इसने किया तो क्या गुनाह किया?

नवाब—क्या बकते हो, हमारे यहाँ चंडू का दम कोई नहीं लगाता।

ख़ोजी—हमें यहाँ आते इतने दिन हुए, हमने कभी नहीं देखा। चंडू पीना शरीफ़ों का काम ही नहीं।

मिरज़ा—तुम तो ग़ज़ब करते हो ख़ोजी, ज़माने भर के चंडूबाज़, अफ़ीमची, अब आये हो वहाँ से बढ़-बढ़के बातें बनाने। ज़रा सरकार ने मुँह लगाया तो ज़मीन पर पाँव ही नहीं रखते।

नवाब—ग़फ़ूर, इन सब बदमाशों को निकाल बाहर करो। ख़बरदार जो आज से कोई यहाँ आने पाया।

मीर साहब—ख़ुदावंद! बस, कुछ न कहिएगा, हम लोगों ने अपनी इज्ज़त नहीं बेची है।

नवाब—निकालो इन सबों को, अभी-अभी निकाल दो।

ख्वाजा साहब शह पा कर उठे और एक कतारा ले कर मस्तियाबेग पर जमाया। वह तो झल्लाया था ही, ख़ोजी को एक चाँटा दिया, तो गिर पड़े, इतने में कई सिपाही आ गये, उन्होंने मस्तियाबेग को पकड़ लिया और बाक़ी सब भाग खड़े हुए। ख़ोजी झाड़-पोंछ कर उठे और उठते ही हुक्म दिया कि मस्तियाबेग को एक दरख़्त में बाँध-कर दो सौ कोड़े लगाये जायँ, नमकहराम अपने मालिक के दोस्तों से लड़ता है। बदन में कीड़े न पड़ें तो सही।

उधर मियाँ आज़ाद साहब से मिल कर लौटे तो देखा कि दरबार में सन्नाटा छाया हुआ है। नवाब साहब उन्हें देखते ही बोले—हज़रत, आज से हमने आपकी सलाहों पर चलना शुरू कर दिया।

आज़ाद—दरबार के लोग कहाँ ग़ायब हो गये?

ख़ोजी—सब के सब निकाल दिये गये, अब कोई यहाँ फटकने भी न पायेगा।

नवाब—अब हम हुक्काम से मिला करेंगे और कोशिश करेंगे कि हरएक क़िस्म की कमेटी में शरीक हों। वाही-तबाही आदमियों की सोहबत में आप देखें तो मेरे कान पकड़िएगा।

आज़ाद—अब आप हर क़िस्म की किताबें पढ़ा कीजिए।

नवाब— आप जो कुछ फ़रमाते हैं, बजा है, मेरा पचीसवाँ साल है, अभी मुझे पढ़ने-लिखने का बहुत मौक़ा है; और मुझे करना ही क्या है।

आज़ाद— ख़ुदा आपकी नीयत में बरकत दे।

ख़ोजी—बस, आज से आपको आलिमों की सोहबत रखनी चाहिए। ऐसा न हो, इस वक़्त तो सब कुछ तकरार कर लीजिए और कल से फिर वही ढाक के तीन पात।

नवाब—ख़ुदा ने चाहा तो यह सब बातें अब नाम को भी न देखिएगा।

दूसरे दिन आज़ाद सैर करने निकले तो क्या देखते हैं कि एक जगह कई आदमी एक छत पर बैठे हुए हैं। आज़ाद को देखते ही एक आदमी ने आ कर उनसे कहा—अगर आपको तकलीफ़ न हो, तो ज़रा मेरे साथ आइए। आज़ाद उसके साथ छत पर पहुँचे तो उन आदमियों में एक की सूरत अपनी से मिलती-जुलती पायी। उसने आज़ाद की ताज़ीम की और कहा—आइए, आपसे कुछ बातें करूँ। आपने अपनी सूरत तो आईने में देखी होगी!

आज़ाद— हाँ, और इस वक़्त बग़ैर आईने के देख रहा हूँ। आपका नाम?

आदमी— मुझे आज़ाद मिरज़ा कहते हैं।

आज़ाद—तब तो आप मेरे हमनाम भी हैं। आपने मुझे क्योंकर पहचाना?

मिरज़ा—मैंने आपकी तसवीरें देखी हैं और अख़बारों में आपका हाल पढ़ता रहा हूँ।

आजाद—इस वक़्त आपसे मिल कर बहुत ख़ुशी हुई।

मिरज़ा—और अभी और भी ख़ुशी होगी। सुरैया बेगम को तो आप जानते हैं?

आज़ाद—हाँ-हाँ, आपको उनका कुछ हाल मालूम है?

मिरज़ा—जी हाँ, आपके धोखे में मैं उनके यहाँ पहुँचा था, और अब तो वह बेगम हैं। एक नवाब साहब के साथ उनका निकाह हो गया है।

आज़ाद—क्या अब दूर से भी मुलाक़ात न होगी?

मिरज़ा—हरगिज़ नहीं।

आज़ाद—बे अख़्तियार जी चाहता है कि मिल कर बातें करूँ।

मिरज़ा—कोशिश कीजिए, शायद मुलाक़ात हो जाय, मगर उम्मेद नहीं!

१०६

आज़ाद सुरैया बेगम की तलाश में निकले तो क्या देखते हैं कि एक बाग़ में कुछ लोग एक रईस की सोहबत में बैठे गपें उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने समझा, शायद इन लोगों से सुरैया बेगम के नवाब साहब का कुछ पता चले। आहिस्ता-आहिस्ता उनके क़रीब गये। आज़ाद को देखते ही वह रईस चौंक कर खड़ा हो गया और उनकी तरफ़ देख कर बोला— वल्लाह, आपसे मिलने का बहुत शौक़ था। शुक्र है कि घर बैठे मुराद पूरी हुई। फ़र्माइए, आपकी क्या ख़िदमत करूँ ?

मुसाहब—हुज़ूर, जंडैल साहब को कोई ऐसी चीज़ पिलाइए कि रूह तक ताज़ा हो जाय।

ख़ाँ साहब—मुझे पारसाल सबलवायु का मरज़ हो गया था। दो महीने डाक्टर का इलाज हुआ। ख़ाक फ़ायदा न हुआ। बीस दिन तक हकीम साहब ने नुस्खे पिलाये, मरज़ और भी बढ़ गया। पड़ोस में एक बैदराज रहते हैं उन्होंने कहा मैं दो दिन में अच्छा कर दूँगा। दस दिन तक उनका इलाज रहा, मगर कुछ फ़ायदा न हुआ। आखिर एक दोस्त ने कहा—भाई, तुम सबकी दवा छोड़ दो, जो हम कहें वह करो। बस हुज़ूर, दो बार बरांडी पिलायी। दो छटाँक शाम को, दो छटाँक सुबह को, उसका यह असर हुआ कि चौथे दिन मैं बिलकुल चंगा हो गया।

रईस—बरांडी के बड़े-बड़े फ़ायदे लिखे हैं।

दीवान—सरकार, पेशाब के मरज़ में तो बरांडी अक़सीर है। जितनी देते जाइए उतना ही फ़ायदा करती है!

ख़ाँ साहब—हुज़ूर, आँखों देखी कहता हूँ। एक सवार को मिर्गी आती थी, सैकड़ों इलाज किये, कुछ असर न हुआ, आखिर एक आदमी ने कहा, हुज़ूर हुक्म दें तो एक दवा बताऊँ। दावा करके कहता हूँ कि कल ही मिर्गी न रहे। ख़ुदावंद, दो छटाँक शराब लीजिए और उसमें उसका दूना पानी मिलाइए, अगर एक दिन में फ़ायदा न हो तो जो चोर की सज़ा वह मेरी सज़ा।

नवाब—यह सिफ़त है इसमें !

मुसाहब—हुज़ूर, गँवारों ने इसे झूठ-मूठ बदनाम कर दिया है। क्यों जंडैल साहब, आपको कभी इत्तफ़ाक़ हुआ है ?

आज़ाद—वाह, क्या मैं मुसलमान नहीं हूँ।

नवाब—क्या ख़ूब जवाब दिया है, सुभान-अल्लाह !

इतने में एक मुसाहब जिनको औरों ने सिखा-पढ़ा कर भेजा था, चुग़ा पहने और अमामा बाँधे आ पहुँचे। लोगों ने बड़े तपाक से उनकी ताज़ीम की और बुला कर बैठाया।

नवाब—कैसे मिज़ाज़ हैं मौलाना साहब ?

मौलाना—ख़ुदा का शुक्र है।

मुसाहब—क्यों मौलाना साहब, आपके खयाल में शराब हलाल है या हराम?

मौलाना—अगर तुम्हारा दिल साफ़ नहीं तो हज़ार बार हज करो कोई फ़ायदा नहीं। हरएक चीज़ नीयत के लिहाज़ से हलाल या हराम होती है।

आज़ाद—जनाब, हमने हर क़िस्म के आदमी देखे। किसी सोहबत से परहेज़ नहीं किया, आप लोग शौक़ से पियें, मेरा कुछ खयाल न करें।

नवाब—नीयत की सफ़ाई इसी को कहते हैं। हज़रत आज़ाद, आपकी जितनी तारीफ़ सुनी थी, उससे कहीं बढ़ कर पाया।

एक साहब नीचे से शराब, सोडा की बोतलें और बर्फ़ लाये और दौर चलने लगे। जब सरूर जमा तो ग़पें उड़ने लगीं—

ख़ाँ साहब—ख़ुदावंद, एक बार नैपाल की तराई में जाने का इत्तफ़ाक़ हुआ। चौदह आदमी साथ थे, वहाँ जंगल में शहद कसरत से है और शहद की मक्खियों की अजब ख़ासियत है कि बदन पर जहाँ कहीं बैठती हैं, दर्द होने लगता है। मैंने वहाँ के बाशिंदों से पूछा, क्यों भाई, इसकी कुछ दवा है? कहा, इसकी दवा शराब है। हमारे साथियों में कई ब्राह्मण भी थे। वह शराब को छू न सकते थे। हमने दवा के तौर पर पी, हमारा दर्द तो जाता रहा और वह सब अभी तक झींक रहे हैं।

नवाब—वल्लाह, इसके फ़ायदे बड़े-बड़े हैं, मगर हराम है, अगर हलाल होती तो क्या कहना था।

मुसाहब—ख़ुदावंद, अब तो सब हलाल है।

ख़ाँ साहब—ख़ुदावंद, हैजे की दवा, पेचिस की दवा, बवासीर की दवा, दमे की दवा, यहाँ तक कि मौत की भी दवा।

दीवान—ओ-हो-हो, मौत की दवा!

नवाब—ख़बरदार, सब के सब ख़ामोश, बस कह दिया।

दीवान—ख़ामोश! ख़ामोश!

ख़ाँ साहब—तप की दवा, सिर-दर्द की दवा, बुढ़ापे की दवा।

नवाब—यह तुम लोग बहकते क्यों हो? हमने भी तो पी है। हज़रत, मुझे एक औरत ने नसीहत की थी। तबसे क्या मजाल कि मेरी ज़बान से एक बेहूदा बात भी निकले। (चपरासी को बुला कर) रमज़ानी, तुम ख़ाँ साहब और दीवान जी को यहाँ से ले जाओ।

दीवान—इल्म की क़सम, अगर इतनी गुस्ताख़ी हमारी शान में करोगे तो हमसे जूती-पैजार हो जायगी।

नवाब—कोई है? जो लोग बहक रहे हों उन्हें दरबार से निकाल दो और फिर भूल के भी न आने देना।

लाला—अभी निकाल दो सबको!

यह कह कर लाला साहब ने रमज़ान खाँ पर टीप जमायी। वह पठान आदमी, टीप पड़ते ही आग हो गया। लाला साहब के पट्टे पकड़ कर दो-चार धप्पे ज़ोर-ज़ोर से लगा बैठा। इस पर दो-चार आदमी और इधर-उधर से उठे। लप्पा-डुग्गी होने लगी। आज़ाद ने नवाब साहब से कहा—मैं तो रुखसत होता हूँ। नवाब साहब ने आज़ाद का हाथ पकड़ लिया और बाग़ में ला कर बोले—हज़रत, मैं बहुत शरमिंदा हूँ कि इन पाजियों की वजह से आपको तकलीफ़ हुई। क्या कहें, उस औरत ने हमें वह नसीहत की थी कि अगर हम आदमी होते तो सारी उम्र आराम के साथ बसर करते। मगर इन मुसाहबों से खुदा समझे; हमें फिर घेर-घारके फंदे में फाँस लिया।

आज़ाद—तो जनाब, ऐसे अदना नौकरों को इतना मुँह चढ़ाना हरगिज़ मुनासिब नहीं।

नवाब—भाई साहब, यही बातें उस औरत ने भी समझायी थीं।

आज़ाद—आखिर वह औरत कौन थी और आपसे उससे क्या ताल्लुक़ था?

नवाब—हज़रत, अर्ज़ किया न कि एक दिन दोस्तों के साथ एक बाग़ में बैठा था कि एक औरत सफ़ेद दुलाई ओढ़े निकली। दो चार बिगड़े दिलों ने उसे चकमा दे कर बुलाया। वह बेतक़ल्लुफ़ी के साथ आ कर बैठी तो मुझसे बातचीत होने लगी। उसका नाम अलारक्खी था।

अलारक्खी का नाम सुनते ही आज़ाद ने ऐसा मुँह बना लिया गोया कुछ जानते ही नहीं, मगर दिल में सोचे कि वाह री अलारक्खी, जहाँ जाओ, उसके जाननेवाले निकल ही आते हैं। कुछ देर बाद नवाब नशे में चूर हो ही गये और आज़ाद बाहर निकले तो एक पुराने जान-पहचान के आदमी से मुलाक़ात हो गयी। आज़ाद ने पूछा—कहिए हज़रत, आजकल आप कहाँ हैं?

आदमी—आजकल तो नवाब वाजिद हुसैन की खिदमत में हूँ। हुज़ूर तो खैरियत से रहे? हुज़ूर का नाम तो सारी दुनिया में रोशन हो गया।

आज़ाद—भाई, जब जानें कि एक बार सुरैया बेगम से दो-दो बातें करा दो।

आदमी—कोशिश करूँगा हुज़ूर, किसी न किसी हीले से वहाँ तक आपका पैग़ाम पहुँचा दूँगा।

यह मामला ठीक-ठाक करके आज़ाद होटल में गये तो देखा कि खोजी बड़ी शान से बैठे गप्पें उड़ा रहे हैं और दोनों परियाँ उनकी बातें सुन-सुन कर खिलखिला रही हैं।

क्लारिसा—तुम अपनी बीबी से मिले, बड़ी खुश हुई होंगी।

खोजी—जी हाँ, महल्ले में पहुँचते ही मारे खुशी के लोगों ने तालियाँ बजायीं। लौंडों ने ढेले मार-मार कर गुल मचाया कि आये-आये। अब कोई गले मिलता है, कोई मारे मुहब्बत के उठाके दे मारता है। सारा महल्ला कह रहा है तुमने तो रूम में वह काम किया कि झंडे गाड़ दिये। घर में जो खबर हुई तो लौंडी ने आ कर सलाम किया। हुज़ूर आइए, बेगम साहब बड़ी देर से इंतज़ार कर रही हैं। मैंने

कहा, क्योंकर चलूँ ? जब यह इतने भूत छोड़ें भी। कोई इधर घसीट रहा है, कोई उधर और यहाँ जान अज़ाब में है।

मीडा—घर का हाल बयान करो। वहाँ क्या बातें हुईं ?

खोजी—दालान तक बीबी नंगे पाँव इस तरह दौड़ी आयीं कि हाँफ गयीं।

मीडा—नंगे पाँव क्यों ? क्या तुम लोगों में जूता नहीं पहनते ?

खोजी—पहनते क्यों नहीं; मगर जूता तो हाथ में था।

मीडा—हाथ से और जूते से क्या वास्ता ?

खोजी—आप इन बातों को क्या समझें।

मीडा—तो आखिर कुछ कहोगे भी ?

खोजी—इसका मतलब यह है कि मियाँ अंदर क़दम रखें और हम खोपड़ी सुहला दें।

मीडा—क्या यह भी कोई रस्म है ?

खोजी—यह सब अदाएँ हमने सिखायी हैं। इधर हम घर में घुसे, उधर बेगम साहब ने जूतियाँ लगायीं। अब हम छिपें तो कहाँ छिपें, कोई छोटा-मोटा आदमी हो तो इधर-उधर छिप रहे, हम यह डील-डौल लेके कहाँ जायँ ?

क्लारिसा—सच तो है, क़द क्या है, ताड़ है !

मीडा—क्या तुम्हारी बीबी भी तुम्हारी ही तरह ऊँचे क़द की हैं ?

खोजी—जनाब, मुझसे पूरे दो हाथ ऊँची हैं। आ कर बोलीं, इतने दिनों के बाद आये तो क्या लाये हो ? मैंने तमग़ा दिखा दिया तो खिल गयीं। कहा, हमारे पास आजकल बाट न थे अब इससे तरकारी तौला करूँगी।

मीडा—क्या पत्थर का तमग़ा है ? क्या खूब क़दर की है।

क्लारिसा—और तुम्हें तमग़ा कब मिला ?

खोजी—कहीं ऐसा कहना भी नहीं।

इतने में आज़ाद पाशा चुपके से आगे बढ़े और कहा—आदाब अर्ज है। आज तो आप खासे रईस बने हुए हैं ?

खोजी—भाईजान, वह रंग जमाया कि अब खोजी ही खोजी हैं।

आज़ाद—भई, इस वक़्त एक बड़ी फ़िक्र में हूँ। अलारक्खी का हाल तो जानते ही हो। आजकल वह नवाब वाजिद हुसैन के महल में है। उससे एक बार मिलने की धुन सवार है। बतलाओ, क्या तदबीर करूँ ?

खोजी—अजी, यह लटके हमसे पूछो। यहाँ सारी ज़िंदगी यही किया किये हैं। किसी चूड़ीवाली को कुछ दे दिला कर राज़ी कर लो।

आज़ाद के दिल में भी यह बात जम गयी। जा कर एक चूड़ीवाली को बुला लाये।

आज़ाद—क्यों भलेमानस, तुम्हारी पैठ तो बड़े-बड़े घरों में होगी। अब यह बताओ कि हमारे भी काम आओगी ? अगर कोई काम निकले तो कहें, वरना बेकार है।

चूड़ीवाली—अरे, तो कुछ मुँह से कहिएगा भी? आदमी का काम आदमी ही से तो निकलता है।

आज़ाद—नवाब वाजिद हुसैन को जानती हो?

चूड़ीवाली—अपना मतलब कहिए।

आज़ाद—बस उन्हीं के महल में एक पैग़ाम भेजना है।

चूड़ीवाली—आपका तो वहाँ गुज़र नहीं हो सकता। हाँ, आपका पैग़ाम वहाँ तक पहुँचा दूँगी। मामला जोखिम का है, मगर आपके खातिर कर दूँगी।

आज़ाद—तुम सुरैया बेगम से इतना कह दो कि आज़ाद ने आपको सलाम कहा है।

चूड़ीवाली—आज़ाद आपका नाम है या किसी और का?

आज़ाद—किसी और के नाम या पैग़ाम से हमें क्या वास्ता। मेरी यह तसवीर ले लो, मौक़ा मिले तो दिखा देना।

चूड़ीवाली ने तसवीर टोकरे में रखी और नवाब वाजिद हुसैन के घर चली। सुरैया बेगम कोठे पर बैठी दरिया की सैर कर रही थीं। चूड़ीवाली ने जा कर सलाम किया।

सुरैया—कोई अच्छी चीज़ लायी हो या खाली-खूली आयी हो?

चूड़ीवाली—हुजूर, वह चीज़ लायी हूँ कि देख कर खुश हो जाइएगा; मगर इनाम भरपूर लूँगी।

सुरैया—क्या है, ज़रा देखूँ तो?

चूड़ीवाली ने बेगम साहब के हाथों में तसवीर रख दी। देखते ही चौंक के बोलीं सच बताना कहाँ पायी?

चूड़ीवाली—पहले यह बतलाइए कि यह कौन साहब हैं और आपसे कभी की जान-पहचान है कि नहीं?

सुरैया—बस यह न पूछो, यह बतलाओ कि तसवीर कहाँ पायी?

चूड़ीवाली—जिनकी यह तसवीर है, उनको आपके सामने लाऊँ तो क्या इनाम पाऊँ?

सुरैया—इस बारे में मैं कोई बातचीत करना नहीं चाहती। अगर वह खैरियत से लौट आये हैं तो खुश रहें और उनके दिल की मुरादें पूरी हों।

चूड़ीवाली—हुजूर, यह तसवीर उन्होंने मुझको दी। कहा, अगर मौक़ा हो तो हम भी एक नज़र देख लें।

सुरैया—कह देना कि आज़ाद, तुम्हारे लिए दिल से दुआ निकलती है, मगर पिछली बातों को जाने दो, हम पराये बस में हैं और मिलने में बदनामी है। हमारा दिल कितना ही साफ़ हो, मगर दुनिया को तो नहीं मालूम है, नवाब साहब को मालूम हो गया, तो उनका दिल कितना दुखेगा।

चूड़ीवाली—हुजूर, एक दफ़ा मुखड़ा तो दिखा दीजिए; इन आँखों की क़सम, बहुत तरस रहे हैं।

सुरैया—चाहे जो हो, जो बात खुदा को मंजूर थी, वह हुई और उसी में अब हमारी बेहतरी है। यह तसवीर यहीं छोड़ जाओ, मैं इसे छिपा कर रखूँगी।

चूड़ीवाली—तो हुजूर, क्या कह दूँ। साफ़ टका सा जवाब ?

सुरैया—नहीं, तुम समझा कर कह देना कि तुम्हारे आने से जितनी खुशी हुई, उसका हाल खुदा ही जानता है। मगर अब तुम यहाँ नहीं आ सकते और न मैं ही कहीं जा सकती हूँ; और फिर अगर चोरी-छिपे एक दूसरे को देख भी लिया तो क्या फ़ायदा। पिछली बातों को अब भूल जाना ही मुनासिब है। मेरे दिल में तुम्हारी बड़ी इज्ज़त है। पहले मैं तुमसे ग़रज़ की मुहब्बत करती थी, अब तुम्हारी पाक मुहब्बत करती हूँ। खुदा ने चाहा तो शादी के दिन हुस्नआरा बेगम के यहाँ मुलाक़ात होगी।

यह वही अलारक्खी हैं जो सराय में चमकती हुई निकलती थीं। आज उन्हें परदे और हया का इतना खयाल है। चूड़ीवाली ने जा कर यहाँ की सारी दास्तान आज़ाद को सुनायी। आज़ाद बेगम की पाकदामनी की घंटों तारीफ़ करते रहे। यह सुन कर उन्हें बड़ी तस्कीन हुई कि शादी के दिन वह हुस्नआरा बेगम के यहाँ ज़रूर आयेंगी।

१०७

मियाँ आज़ाद सैलानी तो थे ही, हुस्नआरा से मुलाक़ात करने के बदले कई दिन तक शहर में मटरगश्त करते रहे, गोया हुस्नआरा की याद ही नहीं रही। एक दिन सैर करते-करते वह एक बाग़ में पहुँचे और एक कुर्सी पर जा बैठे। एकाएक उनके कान में आवाज़ आयी—

चले हम ऐ जुनूँ जब फ़स्ले गुल में सैर गुलशन को,
एवज़ फूलों के पत्थर से भरा गुलचीं ने दामन को।
समझ कर चाँद हमने यार तेरे रूए रौशन को;
कहा बाले को हाला और महे नौ ताके गरदन को।
जो वह तलवार खींचें तो मुक़ाबिल कर दूँ मैं दिल को;
लड़ाऊँ दोस्त से अपने मैं उस पहलू के दुश्मन को।
करूँ आहें तो मुँह को ढाँप कर वह शोख़ कहता है—
हवा से कुछ नहीं है डर चिराग़े ज़ेर दामन को।
तवाज़ा चाहते हो ज़ाहिदो क्या बादःख्वारों से,
कहीं झुकते भी देखा है भला शीशे की गर्दन को।

आज़ाद के कान खड़े हुए कि यह कौन गा रहा है। इतने में एक खिड़की खुली और एक चाँद सी सूरत उनके सामने खड़ी नज़र आयी। मगर इत्तिफ़ाक़ से उसकी नज़र इन पर नहीं पड़ी। उसने अपना रंगीन हाथ माथे पर रख कर किसी हमजोली को पुकारा, तो आज़ाद ने यह शेर पढ़ा—

हाथ रखता है वह बुत अपनी भौहों पर इस तरह;
जैसे मेहराब पर अल्लाह लिखा होता है।

उस नाज़नीन ने आवाज़ सुनते ही उन पर नज़र डाली और दरीचा बंद कर लिया। दुपट्टे को जो हवा ने उड़ा दिया तो आधा खिड़की के इधर और आधा उधर। इस पर उस शोख़ ने झुँझला कर कहा, यह निगोड़ा दुपट्टा भी मेरा दुश्मन हुआ है।

आज़ाद—अल्लाह रे ग़ज़ब, दुपट्टे पर भी ग़ुस्सा आता है!

सनम—ऐ यह कौन बोला? लोगो, देखो तो, इस बाग़ में मरघट का मुर्दा कहाँ से आ गया?

सहेली—ऐ कहाँ, बहन, हाँ-हाँ, वह बैठा है, मैं तो डर गयी।

सनम—अल्लाह, यह तो कोई सिड़ी सा मालूम होता है।

आज़ाद—या ख़ुदा, यह आदमज़ाद हैं या कोहक़ाफ़ की परियाँ?

सनम—तुम यहाँ कहाँ से भटकके आ गये?

आज़ाद—भटकते कोई और होंगे, हम तो अपनी मंज़िल पर पहुँच गये।

सनम—मंजिल पर पहुँचना दिल्लगी नहीं है, अभी दिल्ली दूर है।

आज़ाद—यह कहाँ का दस्तूर है कि कोई ज़मीन पर हो, कोई आसमान पर ? आप सवार, मैं पैदल, भला क्योंकर बने !

सनम—और सुनो, आप तो पेट से पाँव निकालने लगे, अब यहाँ से बोरिया-बधना उठाओ और चलता धंधा करो।

आज़ाद—इतना हुक्म दो कि क़रीब से दो-दो बातें कर लें।

सनम—वह काम क्यों करें जिसमें फ़साद का डर है।

सहेली—ऐ बुला लो, भले आदमी मालूम होते हैं। (आज़ाद से) चले आइए साहब, चले आइए।

आज़ाद खुश-खुश उठे और कोठे पर जा पहुँचे।

सनम—वाह बहन, वाह, एक अजनबी को बुला लिया ! तुम्हारी भी क्या बातें हैं।

आज़ाद—भई, हम भी आदमी हैं। आदमी को आदमी से इतना भागना न चाहिए।

सनम—हज़रत, आपके भले ही के लिए कहती हूँ, यह बड़े जोखिम की जगह है। हाँ, अगर सिपाही आदमी हो तो तुम खुद ताड़ लोगे।

आज़ाद ने जो यह बातें सुनीं तो चक्कर में आये कि हिंदोस्तान से रूस तक हो आये और किसी ने चूँ तक न की, और यहाँ इस तरह की धमकी दी जाती है। सोचे कि अगर यह सुन कर यहाँ से भाग-जाते हैं तो यह दोनों दिल में हँसेंगी और अगर ठहर जायँ तो आसार बुरे नज़र आते हैं। बातों-बातों में उस नाज़नीन से पूछा—यह क्या भेद है ?

सनम—यह न पूछो भई, हमारा हाल बयान करने के क़ाबिल नहीं।

आज़ाद—आखिर कुछ मालूम तो हो; तुम्हें यहाँ क्या तकलीफ़ है ? मुझे तो कुछ दाल में काला ज़रूर मालूम होता है।

सनम—जनाब, यह जहन्नुम है और हमारी जैसी कितनी ही औरतें इस जहन्नुम में रहती हैं। यों कहिए कि हमीं से यह जहन्नुम आबाद है। एक कुंदन नामी बुढ़िया बरसों से यही पेशा करती है। खुदा जाने, इसने कितने घर तबाह किये। अगर मुझसे पूछो कि तेरे माँ-बाप कहाँ हैं, तो मैं क्या जवाब दूँ, मुझे इतना ही मालूम है कि यह बुढ़िया मुझे किसी गाँव से पकड़ लायी थी। मेरे माँ-बाप ने बहुत तलाश की, मगर इसने मुझे घर से निकलने न दिया। उस वक़्त मेरा सिन चार-पाँच साल से ज़्यादा न था।

आज़ाद—तो क्या यहाँ सब ऐसी ही जमा हैं ?

सनम—यह जो मेरी सहेली हैं, किसी बड़े आदमी की बेटी हैं। कुंदन उनके यहाँ आने-जाने लगी और उन सबों से इस तरह की साँठ-गाँठ की कि औरतें इसे बुलाने लगीं। उनको क्या मालूम था कि कुंदन के यह हथकंडे हैं।

आज़ाद—भला कुंदन से मेरी मुलाक़ात हो तो उससे कैसी बातें करूँ !

सनम—वह इसका मौक़ा ही न देगी कि तुम कुछ कहो। जो कुछ कहना होगा, वह ख़ुद कह चलेगी। लेकिन जो तुमसे पूछे कि तुम यहाँ क्योंकर आये ?

आज़ाद—मैं कह दूँगा कि तुम्हारा नाम सुन कर आया।

सनम—हाँ, इस तरकीब से बच जाओगे। जो हमें देखता है, समझता है कि वह बड़ी ख़ुशनसीब हैं। पहनने के लिए अच्छे से अच्छे कपड़े, खाने के लिए अच्छे से अच्छे खाने, रहने के लिए बड़ी से बड़ी हवेलियाँ, दिल बहलाव के लिए हमजोलियाँ सब कुछ हैं; मगर दिल को ख़ुशी और चैन नहीं। बड़ी ख़ुशनसीब वे औरतें हैं जो एक मियाँ के साथ तमाम उम्र काट देती हैं। मगर हम बदनसीब औरतों के ऐसे नसीब कहाँ ? उस बुढ़िया को ख़ुदा ग़ारत करे जिसने हमें कहीं का न रखा।

आज़ाद—मुझे यह सुन कर बहुत अफ़सोस हुआ। मैंने तो यह समझा था कि यहाँ सब चैन ही चैन है, मगर अब मालूम हुआ कि मामला इसका उलटा है।

सनम—हज़ारों आदमियों से बातचीत होती है, मगर हमारे साथ शादी करने को कोई पतियाता ही नहीं। कुंदन से सब डरते हैं। शोहदे-लुच्चों की बात का एतबार क्या, दो-एक ने निकाह का वादा किया भी तो पूरा न किया।

यह कह कर वह नाज़नीन रोने लगी।

आज़ाद ने समझाया कि दिल को ढारस दो और यहाँ से निकलने की हिकमत सोचो।

सनम—ख़ुदा बड़ा कारसाज़ है, उसको काम करते देर नहीं लगती, मगर अपने गुनाहों को जब देखते हैं तो दिल गवाही नहीं देता कि हमें यहाँ से छुटकारा मिलेगा।

आज़ाद—मैं तो अपनी तरफ़ से ज़रूर कोशिश करूँगा।

सनम—तुम मर्दों की बात का एतबार करना फ़ज़ूल है।

आज़ाद—वाह ! क्या पाँचों उँगलियाँ बराबर होती हैं ?

इतने में एक और हसीना आ कर खड़ी हो गयी। इसका नाम नूरजान था। आज़ाद ने उससे कहा—तुम भी अपना कुछ हाल कहो। यहाँ कैसे आ फँसी ?

नूर—मियाँ, हमारा क्या हाल पूछते हो, हमें अपना हाल ख़ुद ही नहीं मालूम। ख़ुदा जाने, हिंदू के घर जन्म लिया या मुसलमान के घर पैदा हुई। इस मकान की मालिक एक बुढ़िया है, उसके काटे का मंत्र नहीं, उसका यही पेशा है कि जिस तरह हो कमसिन और ख़ूबसूरत लड़कियों को फ़ुसला कर ले आये। सारा ज़माना उसके हथकंडों को जानता है, मगर किसी से आज तक बंदोबस्त नहीं हो सका। अच्छे-अच्छे महाजन और व्यापारी उसके मकान पर माथा रगड़ते हैं, बड़े-बड़े शरीफ़-ज़ादे उसका दम भरते हैं। शाहज़ादों तक के पास इसकी पहुँच है, सुनते थे कि बुरे काम का नतीजा बुरा होता है, मगर ख़ुदा जाने, बुढ़िया को इन बुरे कामों की सज़ा क्यों नहीं मिलती ? इस चुड़ैल ने ख़ूब रुपये जमा किये हैं और इतना नाम कमाया है कि दूर-दूर तक मशहूर हो गयी है।

आज़ाद—तुम सब की सब मिलकर भाग क्यों नहीं जातीं ?

सनम—भाग जायँ तो फिर खायँ क्या, यह तो सोचो।

आज़ाद—इसने अपनी मक्कारी से इस क़दर तुम सबको बेवक़ूफ़ बना रखा है।

सनम—बेवक़ूफ़ नहीं। बनाया है, यह बात सही है, खाने भर का सहारा तो हो जाय।

आज़ाद—तुम्हारी आँख पर ग़फ़लत की पट्टी बाँध दी है। तुम इतना नहीं सोचतीं कि तुम्हारी बदौलत तो इसने इतना रुपया पैदा किया और तुम खाने को मुँहताज रहोगी ? जो पसंद हो उसके साथ शादी कर लो और आराम से ज़िंदगी बसर करो।

सनम—यह सच है, मगर उसका रोब मारे डालता है।

आज़ाद—उफ् रे रोब, यह बुढ़िया भी देखने के क़ाबिल है।

सनम—इस तरह की मीठी मीठी बातें करेगी कि तुम भी उसका कलमा पढ़ने लगोगे।

आज़ाद—अगर मुझे हुक्म दीजिए तो मैं कोशिश करूँ।

सनम—वाह, नेकी और पूछ-पूछ ? आपका हमारे ऊपर बड़ा एहसान होगा। हमारी ज़िंदगी बरबाद हो रही है। हमें हर रोज़ गालियाँ देती है और हमारे माँ-बाप को कोसा करती है। गो उन्हें आँखों से नहीं देखा, मगर ख़ून का जोश कहाँ जाय ?

इस फ़िक़रे से आज़ाद की आँखें भी डबडबा आयीं, उन्होंने ठान ली कि इस बुढ़िया को ज़रूर सज़ा करायेंगे।

इतने में सहेली ने आ कर कहा—बुढ़िया आ गयी है, धीरे-धीरे बातें करो।

आज़ाद ने सनम के कान में कुछ कह दिया और दो की दोनों चली गयीं।

कुंदन—बेटा, आज एक और शिकार किया, मगर अभी बतायेंगे नहीं। यह दरवाज़े पर कौन खड़ा था ?

सनम—कोई बहुत बड़े रईस हैं, आपसे मिलना चाहते हैं।

कुंदन ने फ़ौरन आज़ाद को बुला भेजा और पूछा, किसके पास आये हो बेटा ! क्या काम है ?

आज़ाद—मैं ख़ास आपके पास आया हूँ।

कुंदन—अच्छा बैठो। आजकल बे-फ़सल की बारिश से बड़ी तकलीफ़ होती है, अच्छी वह फ़सल कि हर चीज वक़्त पर हो, बरसात हो तो मेंह बरसे, सर्दी के मौसम में सर्दी ख़ूब हो और गर्मी में लू चले, मगर जहाँ कोई बात बे-मौसम की हुई और बीमारी पैदा हो गयी।

आज़ाद—जी हाँ, क़ायदे की बात है।

कुंदन—और बेटा, हजार बात की एक बात है कि आदमी बुराई से बचे। आदमी को याद रखना चाहिए कि एक दिन उसको मुँह दिखाना है, जिसने उसे

पैदा किया। बुरा आदमी किस मुँह से मुँह दिखायेगा !

आज़ाद—क्या अच्छी बात आपने कही है, है तो यही बात !

कुंदन—मैंने तमाम उम्र इसी में गुज़ारी कि लावारिस बच्चों की परवरिश करूँ, उनको खिलाऊँ-पिलाऊँ और अच्छी-अच्छी बातें सिखाऊँ। ख़ुदा मुझे इसका बदला दे तो वाह-वाह, वरना और कुछ फ़ायदा न सही, तो इतना फ़ायदा तो है कि इन बेकसों की मेरी ज़ात से परवरिश हुई।

आज़ाद—ख़ुदा ज़रूर इसका सवाब देगा।

कुंदन—तुमने मेरा नाम किससे सुना ?

आज़ाद—आपके नाम की ख़ुशबू दूर-दूर तक फैली हुई है।

कुंदन—वाह, मैं तो कभी किसी से अपनी तारीफ़ ही नहीं करती। जो लड़कियाँ मैं पालती हूँ उनको बिलकुल अपने ख़ास बेटों की तरह समझती हूँ। क्या मजाल कि ज़रा भी फ़र्क़ हो। जब देखा कि वह सयानी हुईं तो उनको किसी अच्छे घर ब्याह दिया, मगर ख़ूब देख-भालके। शादी मर्द और औरत की रज़ामंदी से होनी चाहिए।

आज़ाद—यही शादी के माने हैं।

कुंदन—तुम्हारी उम्र दराज़ हो बेटा, आदमी जो काम करे, अक़्ल से, हर पहलू को देख-भालके।

आज़ाद—बग़ैर इसके मियाँ-बीबी में मुहब्बत नहीं हो सकती और यों ज़बरदस्ती की तो बात ही और है।

कुंदन—मेरा क़ायदा है कि जिस आदमी को पढ़ा-लिखा देखती हूँ उसके सिवा और किसी से नहीं ब्याहती और लड़की से पूछ लेती हूँ कि बेटा, अगर तुमको पसंद हो तो अच्छा, नहीं कुछ ज़बरदस्ती नहीं है।

यह कह कर उसने महरी को इशारा किया। आज़ाद ने इशारा करते तो देखा, मगर उनकी समझ में न आया कि इसके क्या माने हैं। महरी फ़ौरन कोठे पर गयी और थोड़ी ही देर में कोठे से गाने की आवाज़ें आने लगीं।

कुंदन—मैंने इन सबको गाना भी सिखाया है, गो यहाँ इसका रिवाज नहीं।

आज़ाद—तमाम दुनिया में औरतों को गाना-बजाना सिखाया जाता है।

कुंदन—हाँ, बस एक इस मुल्क में नहीं।

आज़ाद—यह तो तीन की आवाज़ें मालूम होती हैं, मगर इनमें से एक का गला बहुत साफ़ है।

कुंदन—एक तो उनका दिल बहलता है, दूसरे जो सुनता है उसका भी दिल बहलता है।

आज़ाद—मगर आपने कुछ पढ़ाया भी है या नहीं ?

कुंदन—देखो बुलवाती हूँ, मगर बेटा, नीयत साफ़ रखनी चाहिए।

उस ठगों की बुढ़िया ने सबसे पहले नूर को बुलाया। वह लजाती हुई आयी

और बुढ़िया के पास इस तरह गरदन झुकाके बैठी जैसे कोई शरमीली दुलहिन।

आज़ाद—ऐ साहब, सिर ऊँचा करके बैठो, यह क्या बात है?

कुंदन—बेटा, अच्छी तरह बैठो सिर उठा कर। (आज़ाद से) हमारी सब लड़कियाँ शरमीली और हयादार हैं।

आज़ाद—यह आप ऊपर क्या गा रही थीं? हम भी कुछ सुनें।

कुंदन—बेटी नूर, वही ग़ज़ल गाओ।

नूर—अम्माँजान, हमें शर्म आती है।

कुंदन—कहती है, हमें शर्म आती है, शर्म की क्या बात है, हमारी ख़ातिर से गाओ।

नूर—(कुंदन के कान में) अम्माँजान, हमसे न गाया जायगा।

आज़ाद—यह नयी बात है—

अकड़ता है क्या देख-देख आईना,
हसीं गरचे है तू पर इतना घमंड।

कुंदन—लो, इन्होंने गाके सुना दिया।

महरी—कहिए, हुजूर, दिल का परदा क्या कम है जो आप मारे शर्म के मुँह छिपाये लेती हैं। ऐ बीबी, गरदन ऊँची करो, जिस दिन दुलहिन बनोगी, उस दिन इस तरह बैठना तो कुछ मुज़ायका नहीं है।

कुंदन—हाँ, बात तो यही है, और क्या?

आज़ाद—शुक्र है, आपने ज़रा गरदन तो उठायी—

बात सब ठीक-ठाक है, पर अभी
कुछ सवालो-जवाब बाक़ी है।

कुंदन—(हँस कर) अब तुम जानो और यह जाने।

आज़ाद—ऐ साहब, इधर देखिए।

नूर—अम्माँजान, अब हम यहाँ से जाते हैं।

कुंदन ने चुटकी ले कर कहा—कुछ बोलो जिसमें इनका भी दिल ख़ुश हो, कुछ जवाब दो, यह क्या बात है।

नूर—अम्माँजान, किसको जवाब दूँ? न जान, न पहचान।

कुंदन इन कामों में आठों गाँठ कुम्मैत, किसी बहाने से हट गयी। नूर ने भी बनावट के साथ चाहा कि चली जाय, इस पर कुंदन ने डाँट बतायी—हैं-हैं, यह क्या, भले मानस हैं या कोई नीच क़ौम! शरीफ़ों से इतना डर! आखिर नूर शर्मा कर बैठ गयी। उधर कुंदन नज़र से ग़ायब हुई, इधर महरी भी चम्पत।

आज़ाद—यह बुढ़िया तो एक ही काइयाँ है।

नूर—अभी देखते जाओ, यह अपने नज़दीक तुमको उम्र भर के लिए ग़ुलाम बनाये लेती है, जो हमने पहले से इसका हाल न बयान कर दिया होता तो तुम भी चंग पर चढ़ जाते।

आज़ाद—भला यह क्या बात है कि तुम उसके सामने इतना शरमाती रहीं ?

नूर—हमको जो सिखाया है वह करते हैं, क्या करें ?

आज़ाद—अच्छा, उन दोनों को क्यों न बुलाया ?

नूर—देखते जाओ, सबको बुलायेगी।

इतने में महरी पान, इलायची और इत्र लेकर आयी।

आज़ाद—महरी साहब, यह क्या अंधेर है ? आदमी आदमी से बोलता है या नहीं ?

महरी—ऐ बीबी, तुमने क्या बोलने की क़सम खा ली है ? ले अब हमसे तो बहुत न उड़ो। खुदा झूठ न बोलाये तो बातचीत तक नौबत आ चुकी होगी और हमारे सामने घूँघट की लेती हैं।

आज़ाद—गरदन तक तो ऊँची नहीं करतीं, बोलना-चालना कैसा, या तो बनती हैं या अम्माँजान से डरती हैं।

महरी—वाह-वाह, हुज़ूर वाह, भला यह काहे से जान पड़ा कि बनती हैं ? क्या यह नहीं हो सकता कि आँखों की हया के सबब से लजाती हों ?

आज़ाद—वाह, आँखें कहे देती हैं कि नीयत कुछ और है।

नूर—खुदा की सँवार झूठे पर।

महरी - शाबाश, बस यह इसी बात की मुंतज़िर थीं। मैं तो समझे ही बैठी थी कि जब यह ज़बान खोलेंगी, फिर बंद ही कर छोड़ेंगी।

नूर—हमें भी कोई गँवार समझा है क्या ?

आज़ाद—वल्लाह, इस वक़्त इनका त्योरी चढ़ाना अजब लुत्फ़ देता है। इनके जौहर तो अब खुले। इनकी अम्माँजान कहाँ चली गयीं ? ज़रा उनको बुलवाइए तो !

महरी—हुज़ूर, उनका क़ायदा है कि अगर दो दिल मिल जाते हैं तो फिर निकाह पढ़वा देती हैं, मगर मर्द भलामानस हो, चार पैसे पैदा करता हो। आप पर तो कुछ बहुत ही मिहरबान नज़र आती हैं कि दो बातें होते ही उठ गयीं, वरना महीनों जाँच हुआ करती है, आपकी शक्ल-सूरत से रियासत बरसती है।

नूर—वाह, अच्छी फबती कही, बेशक रियासत बरसती है !

यह कह नूर ने आहिस्ता-आहिस्ता गाना शुरू किया।

आज़ाद—मैं तो इनकी आवाज़ पर आशिक़ हूँ।

नूर—खुदा की शान, आप क्या और आपकी क़द्रदानी क्या !

आज़ाद—दिल में तो खुश हुई होंगी, क्यों महरी ?

महरी—अब यह आप जानें और वह जानें, हमसे क्या ?

एकाएक नूर उठ कर चली गयी। आज़ाद और महरी के सिवा वहाँ कोई न रहा, तब महरी ने आज़ाद से कहा—हुज़ूर ने मुझे पहचाना नहीं, और मैं हुज़ूर को देखते ही पहचान गयी, आप सुरैया बेगम के यहाँ आया-जाया करते थे।

आज़ाद—हाँ, अब याद आया, बेशक मैंने तुमको उनके यहाँ देखा था। कहो, मालूम है कि अब वह कहाँ हैं ?

महरी—हुज़ूर, अब वह वहाँ हैं जहाँ चिड़िया भी नहीं जा सकती; मगर कुछ इनाम दीजिए तो दिखा दूँ। दूर ही से बात-चीत होगी। एक रईस आज़ाद नाम के थे, उन्हीं के इश्क़ में जोगिन हो गयीं। जब मालूम हुआ कि आज़ाद ने हुस्नआरा से शादी कर ली तो मजबूर हो कर एक नवाब से निकाह पढ़वा लिया। आज़ाद ने यह बहुत बुरा किया। जो अपने ऊपर जान दे, उसके साथ ऐसी बेवफ़ाई न करनी चाहिए।

आज़ाद—हमने सुना है कि आज़ाद उन्हें भठियारी समझ कर निकल भागे।

महरी—अगर आप कुछ दिलवायें तो मैं बीड़ा उठाती हूँ कि एक नज़र अच्छी तरह दिखा दूँगी।

आज़ाद—मंजूर, मगर बेईमानी की सनद नहीं।

महरी—क्या मजाल, इनाम पीछे दीजिएगा, पहले एक कौड़ी भी न लूँगी।

महरी ने आज़ाद से यहाँ का सारा कच्चा चिट्ठा कह सुनाया—मियाँ, यह बुढ़िया जितनी ऊपर है, उतनी ही नीचे है, इसके काटे का मंत्र नहीं। पर आज़ाद को सुरैया बेगम की धुन थी। पूछा—भला उनका मकान हम देख सकते हैं?

महरी—जी हाँ, यह क्या सामने है।

आज़ाद—और यह जितनी यहाँ हैं, सब इसी फैशन की होंगी?

महरी—किसी को चुरा लायी है, किसी को मोल लिया है, बस कुछ पूछिए न?

इतने में किसी ने सीटी बजायी और महरी फ़ौरन उधर चली गयी। थोड़ी ही देर में कुंदन आयी और कहा—ऐं, यहाँ तुम बैठे हो, तोबा तोबा, मगर लड़कियों को (महरी को पुकार कर) क्या करूँ, इतनी शरमीली हैं कि जिसकी कोई हद ही नहीं। ऐ, उनको बुलाओ, कहो, यहाँ आकर बैठें। यह क्या बात है? जैसे कोई काटे खाता है!

यह सुनते ही सनम छम-छम करती हुई आयी। आज़ाद ने देखा तो होश उड़ गये, इस मरतबा ग़ज़ब का निखार था। आज़ाद अपने दिल में सोचे कि यह सूरत और यह पेशा! ठान ली कि किसी मौक़े पर ज़िले के हाकिम को ज़रूर लायेंगे और उनसे कहेंगे कि खुदा के लिए इन परियों को इस मक्कार औरत से बचाओ।

कुंदन ने सनम के हाथ में एक पंखा दे दिया और झलने को कहा। फिर आज़ाद से बोली—अगर किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बयान कर दो।

आज़ाद—इस वक़्त दिल वह मज़े लूट रहा है जो बयान से बाहर है।

कुंदन—मेरे यहाँ सफ़ाई का बहुत इंतज़ाम है।

आज़ाद—आपके कहने की ज़रूरत नहीं।

कुंदन—यह जितनी हैं सब एक से एक बढ़ी हुई हैं।

आज़ाद—इनके शौहर भी इन्हीं के से हों तो बात है।

कुंदन—इसमें किसी के सिखाने की ज़रूरत नहीं। मैं इनके लिए ऐसे लोगों को चुनूँगी जिनका कहीं सानी न हो। इनको खिलाया, पिलाया, गाना सिखाया, अब इन पर ज़ुल्म कैसे बरदाश्त करूँगी?

आज़ाद—और तो और, मगर इनको तो आपने खूब ही सिखाया।

कुंदन—अपना-अपना दिल है, मेरी निगाह में तो सब बराबर, आप दो-चार दिन यहाँ रहें, अगर इनकी तबीयत ने मंजूर किया तो इनके साथ आपका निकाह कर दूँगी, बस अब तो खुश हुए।

महरी—वह शर्तें तो बता दीजिए!

कुंदन—खबरदार, बीच में न बोल उठा करो, समझीं?

महरी—हाँ हुजूर, खता हुई।

आज़ाद—फिर अब तो शर्तें बयान ही कर दीजिए न।

कुंदन—इतमीनान के साथ बयान करूँगी।

आज़ाद—(सनम से) तुमने तो हमें अपना गुलाम ही बना लिया।

सनम ने कोई जवाब न दिया।

आज़ाद—अब इनसे क्या कोई बात करे—

गवारा नहीं है जिन्हें बात करना,
सुनेंगे वह काहे को क़िस्सा हमारा।

कुंदन—ऐ हाँ, यह तुममें क्या ऐब है? बातें करो बेटा!

सनम—अम्माँजान, कोई बात हो तो क्या मुज़ायक़ा और यों ख्वाहमख्वाह एक अजनबी से बातें करना कौन सी दानाई है।

कुंदन—खुदा को गवाह करके कहती हूँ कि यह सबकी सब बड़ी शरमीली हैं।

आज़ाद को इस वक्त याद आया कि एक दोस्त से मिलने जाना है, इसलिए कुंदन से रुखसत माँगी और कहा कि आज माफ़ कीजिए, कल हाज़िर होऊँगा, मगर अकेले आऊँ, या दोस्तों को भी साथ लेता आऊँ? कुंदन ने खाना खाने के लिए बहुत जिद की मगर आज़ाद ने न माना।

आज़ाद ने अभी बाग के बाहर भी क़दम नहीं रखा था कि महरी दौड़ी आयी और कहा—हुजूर को बीबी बुलाती हैं। आज़ाद अंदर गये तो क्या देखते हैं कि कुंदन के पास सनम और उसकी सहेली के सिवा एक और कामिनी बैठी हुई है जो आन-बान में उन दोनों से बढ़ कर है।

कुंदन—यह एक जगह गयी हुई थीं, अभी डोली से उतरी हैं। मैंने कहा, तुमको जरी दिखा दूँ कि मेरा घर सचमुच परिस्तान है, मगर बदी क़रीब नहीं आने पाती।

आज़ाद—बेशक, बदी का यहाँ ज़िक्र ही क्या है?

कुंदन—सबसे मिल-जुल के चलना और किसी का दिल न दुखाना मेरा उसूल है, मुझे आज तक किसी ने किसी से लड़ते न देखा होगा।

आज़ाद—यह तो सबों से बढ़-चढ़ कर हैं।

कुंदन—बेटा, सभी घर गृहस्थ की बहू-बेटियाँ हैं, कहीं आयें न जायें, न किसी से हँसी, न दिल्लगी।

आज़ाद—बेशक, हमें आपके यहाँ का क़रीना बहुत पसंद आया।

कुंदन—बोलो बेटा, मुँह से कुछ बोलो, देखो, एक शरीफ़ आदमी बैठे हैं और तुम न बोलती हो न चालती हो।

परी—क्या करूँ, आप ही आप बकूँ ?

कुंदन—हाँ यह भी ठीक है, वह तुम्हारी तरफ़ मुँह करके बात-चीत करें तब बोलो। लीजिए साहब, अब, तो आप ही का कुसूर ठहरा।

आज़ाद—भला सुनिए तो, मेहमानों की खातिरदारी भी कोई चीज़ है या नहीं ?

कुंदन—हाँ, यह भी ठीक है, अब बताओ बेटा ?

परी—अम्मीजान, हम तो सबके मेहमान हैं, हमारी जगह सबके दिल में है, हम भला किसी की खातिरदारी क्यों करें ?

कुंदन—अब फ़र्माइए हज़रत, जवाब पाया ?

आज़ाद—वह जवाब पाया कि लाजवाब हो गया। खैर साहब, खातिरदारी न सही, कुछ ग़ुस्सा ही कीजिए।

परी—उसके लिए भी क़िस्मत चाहिए।

मियाँ आज़ाद बड़े बोलक्कड़ थे, मगर इस वक्त सिट्टी-पिट्टी भूल गये।

कुंदन—अब कुछ कहिए, चुप क्यों बैठे हैं ?

परी—अम्मीजान, आपकी तालीम ऐसी-वैसी नहीं है कि हम बंद रहें।

कुंदन—मगर मियाँ साहब की क़लई खुल गयी। अरे कुछ तो फ़र्माइए हज़रत—

कुछ तो कहिए कि लोग कहते हैं—
आज 'ग़ालिब' ग़जलसरा न हुआ।

आज़ाद—आप शेर भी कहती हैं ?

नूर—ऐ वाह, ऐसे घबड़ाये कि 'ग़ालिब' का तख़ल्लुस मौजूद है और आप पूछते हैं कि आप शेर भी कहती हैं ?

परी—आदमी में हवास ही हवास तो है, और है क्या ?

सनम—हम जो गरदन झुकाये बैठे थे तो आप बहुत शेर थे, मगर अब होश उड़े हुए हैं।

सहेली—तुम पर रीझे हुए हैं बहन, देखती हो, किन आँखों से घूर रहें हैं।

परी—ऐ हटो भी, एड़ी-चोटी पर कुरबान कर दूँ।

आज़ाद—या खुदा, अब हम ऐसे गये गुज़रे हो गये ?

परी—और आप अपने को समझे क्या हैं !

कुंदन—यह हम न मानेंगे, हँसी-दिल्लगी और बात है, मगर यह भी लाख दो लाख में एक हैं।

परी—अब अम्मीजान कब तक तारीफ़ किया करेंगी।

आज़ाद—फिर जो तारीफ़ के क़ाबिल होता है उसकी तारीफ़ होती ही है।

नूर—उँह-उँह, घर की पुटकी बासी साग।

आज़ाद—जलन होगी कि इनकी तारीफ़ क्यों की।

नूर—यहाँ तारीफ़ की परवा नहीं।

कुंदन—यह तो खूब कही, अब इसका जवाब दीजिए।

आज़ाद—हसीनों को किसी की तारीफ़ कब पसंद आती है?

नूर—भला खैर, आप इस क़ाबिल तो हुए कि आपके हुस्न से लोगों के दिल में जलन होने लगी।

कुंदन—(सनम से) तुमने इनको कुछ सुनाया नहीं बेटा?

सनम—हम क्या कुछ इनके नौकर हैं?

आज़ाद—खुदा के लिए कोई फड़कती हुई ग़ज़ल गाओ; बल्कि अगर कुंदन साहब का हुक्म हो तो सब मिल कर गायें।

सनम—हुक्म, हुक्म तो हम बादशाह-वज़ीर का न मानेंगे।

परी—अब इसी बात पर जो कोई गाये।

कुंदन—अच्छा, हुक्म कहा तो क्या गुनाह किया, कितनी ढीट लड़कियाँ हैं कि नाक पर मक्खी नहीं बैठने देतीं।

सनम—अच्छा बहन, आओ, मिल-मिल कर गायें—

ऐ इश्क़े कमर दिल का जलाना नहीं अच्छा।

परी—यह कहाँ से बूढ़ी ग़ज़ल निकाली? यह ग़ज़ल गाओ—

गया यार आफ़त पड़ी इस शहर पर;
उदासी बरसने लगी बाम व दर पर।
सबा ने भरी दिन को एक आह ठंडी;
क़यामत हुई या दिले नौहागर पर।
मेरे भावे गुलशन को आतश लगी है;
नज़र क्या पड़े खाक गुलहाय तर पर।
कोई देव था या कि जिन था वह काफ़िर;
मुझे गुस्सा आता है पिछले पहर पर।

एकाएक किसी ने बाहर से आवाज़ दी। कुंदन ने दरवाज़े पर जा कर कहा—कौन साहब हैं?

सिपाही—दारोग़ा जी आये हैं, दरवाज़ा खोल दो।

कुंदन—ऐ तो यहाँ किसके पास तशरीफ़ लाये हैं?

सिपाही—कुंदन कुटनी के यहाँ आये हैं। यही मकान है या और?

दूसरा सिपाही—हाँ-हाँ जी, यही है, हमसे पूछो।

इधर कुंदन पुलीसवालों से बातें करती थी, उधर आज़ाद तीनों औरतों के साथ बाग़ में चले गये और दरवाज़ा बंद कर दिया।

आज़ाद—यह माजरा क्या है भई?

सनम—दौड़ आयी है मियाँ, दरवाजा बंद करने से क्या होगा, कोई तदबीर ऐसी बताओ कि इस घर से निकल भागें।

परी—हमें यहाँ एक दम का रहना पसंद नहीं।

आज़ाद—किसी के साथ शादी क्यों नहीं कर लेतीं ?

नूर—ऐ है ! यह क्या ग़ज़ब करते हो, आहिस्ता से बोलो।

आज़ाद—आख़िर यह दौड़ क्यों आयी है, हम भी तो सुनें।

सनम—कल एक भलेमानस आये थे। उनके पास एक सोने की घड़ी, सोने की ज़ंजीर, एक बेग, पाँच आशर्फ़ियाँ और कुछ रुपये थे। यह भाँप गयी। उसको शराब पिला कर सारी चीज़ें उड़ा दीं। सुबह को जब उसने अपनी चीज़ों की तलाश की तो धमकाया कि टर्राओगे तो पुलीस को इत्तला कर दूँगी। वह बेचारा सीधा-सादा आदमी, चुपचाप चला गया और दारोग़ा से शिकायत की, अब वही दौड़ आयी है।

आज़ाद—अच्छा ! यह हथकंडे हैं।

सनम—कुछ पूछो न, जान अज़ाब में है।

नूर—अब ख़ुदा ही जाने, किस-किस का नाश वह करेगी, क्या आग लगायेगी।

सनम—अजी, वह किसी से दबनेवाली नहीं है।

परी—वह न दबेंगी साहब तक से, यह दारोग़ा लिये फिरती हैं !

सनम—ज़री सुनो तो क्या हो रहा है।

आज़ाद ने दरवाज़े के पास से कान लगा कर सुना तो मालूम हुआ कि बीबी कुंदन पुलीसवालों से बहस कर रही हैं कि तुम मेरे घर भर की तलाशी लो। मगर याद रखना, कल ही तो नालिश करूँगी। मुझे अकेली औरत समझके धमका लिया है। मैं अदालत चढ़ूँगी। लेना एक न देना दो, उस पर यह अंधेर ! मैं साहब से कहूँगी कि इसकी नियत ख़राब है, यह रिआया को दिक़ करता है और परायी बहू-बेटी को ताकता है।

सनम—सुनती हो, कैसा डाँट रही है पुलीसवालों को।

परी—चुपचाप, ऐसा न हो, सब इधर आ जायँ।

उधर कुंदन ने मुसाफ़िर को कोसना शुरू किया—अल्लाह करे, इस अठवारे में इसका जनाज़ा निकले। मुए ने आके मेरी जान अज़ाब में कर दी। मैंने तो ग़रीब मुसाफ़िर समझ कर टिका लिया था। मुआ उलटा लिये पड़ता है।

मुसाफ़िर—दारोग़ा जी, इस औरत ने सैकड़ों का माल मारा है।

सिपाही—हुज़ूर, यह पहले ग़ुलाम हुसैन के पुल पर रहती थी। वहाँ एक अहीरिन की लड़की को फ़ुसला कर घर लायी और उसी दिन मकान बदल दिया। अहीर ने थाने पर रपट लिखवायी। हम जो जाते हैं तो मकान में ताला पड़ा हुआ, बहुत तलाश की, पता न मिला। ख़ुदा जाने, लड़की किसी के हाथ बेच डाली या मर गयी।

कुंदन—हाँ-हाँ, बेच डाली, यहीं तो हमारा पेशा है।

दारोग़ा—(मुसाफ़िर से) क्यों हज़रत, जब आपको मालूम था कि यह कुट्नी है तो आप इसके यहाँ टिके क्यों ?

मुसाफ़िर—बेधा था, और क्या, दो-ढाई सौ पर पानी फिर गया, मगर शुक्र है कि मार नहीं डाला।

कुंदन—जी हाँ, साफ़ बच गये।

दारोग़ा—(कुंदन से) तू ज़रा भी नहीं शरमाती ?

कुंदन—शरमाऊँ क्यों ? क्या चोरी की है ?

दारोग़ा—बस, खैरियत इसी में है कि इनका माल इनके हवाले कर दो।

कुंदन—देखिए, अब किसी दूसरे घर डाका डालूँ तो इनके रुपये मिलें।

सिपाही—हुजूर, इसे पकड़के थाने ले चलिए, इस तरह यह न मानेगी ?

कुंदन—थाने में क्यों जाऊँ ? क्या इज्ज़त बेचनी है ! यह न समझना कि अकेली है। अभी अपने दामाद को बुला दूँ तो आँखें खुल जायँ।

यह सुनते ही आज़ाद के होश उड़ गये। बोले, इस मुरदार को सूझी क्या !

महरी—ज़रा दरवाज़ा खोलिए।

आज़ाद—खुदा की मार तुझ पर।

कुंदन—ऐ बेटा, जरी इधर आओ। मर्द की सूरत देख कर शायद यह लोग इतना ज़ुल्म न करें।

दारोग़ा—अख्खाह, क्या तोप साथ है ? हम सरकारी आदमी और तुम्हारे दामाद से दब जायँ ! अब तो बताओ, इनके रुपये मिलेंगे या नहीं ?

कुंदन एक सिपाही को अलग ले गयी और कहा—मैं इसी वक़्त दारोग़ा जी को इस शर्त पर सत्तर रुपये देती हूँ कि वह इस मामले को दबा दें। अगर तुम यह काम पूरा कर दो तो दस रुपया तुम्हें भी दूँगी।

दारोग़ा ने देखा कि यह मक्कार औरत झाँसा देना चाहती है तो उसे साथ ले कर थाने चले गये।

आज़ाद—बड़ी बला इस वक़्त टली। औरत क्या, सचमुच बला है।

सनम—आपको अभी इससे कहाँ साबिक़ा पड़ा है।

आज़ाद—मैं तो इतने ही में ऊब उठा।

सनम—अभी यह न समझना कि बला टल गयी, हम सब बाँधे जायँगे।

आज़ाद—ज़रा इस शरारत को तो देखो कि मुझे थानेदार से लड़वाये देती थी।

सनम—खुश तो न होंगे कि दामाद बना दिया।

आज़ाद—हम ऐसी सास से बाज़ आये।

सनम—इस गली से कोई आदमी बिना लुटे नहीं जा सकता। एक औरत को तो इसने ज़हर दिलवा दिया था।

नूर—पड़ोसिन से कोई जा कर कह दे कि तुम अपनी लड़की का क्यों सत्यानाश करती हो। जो कुछ रूखा-सूखा अल्लाह दे वह खाओ और पड़ी रहो।

महरी—हाँ और क्या, ऐसे पोलाव से दाल-दलिया ही अच्छी।

सनम—तुम जाके बुला लाओ तो यह समझा दें हीले से।

महरी जा कर पड़ोसिन को बुला लायी। आज़ाद ने कहा—तुम्हारी पड़ोसिन को तो सिपाही ले गये। अब यह मकान हमें सौंप गयी हैं। पड़ोसिन ने हँस कर कहा—मियाँ, उनको सिपाही ले जा कर क्या करेंगे? आज गयी हैं, कल छूट आयेंगी?

इतने में एक आदमी ने दरवाज़े पर हाथ मारा। महरी ने दरवाज़ा खोला तो एक बूढ़े मियाँ दिखाई दिये। पूछा—बी कुंदन कहाँ हैं?

महरी ने कहा—उनको थाने के लोग ले गये।

सनम—एक सिरे से इतने मुक़दमे, एक, दो, तीन।

नूर—हर रोज़ एक नया पंछी फाँसती है।

बूढ़े मियाँ—बस, अब प्याला भर गया।

सनम—रोज़ तो यही सुनती हूँ कि प्याला भर गया।

बूढ़े मियाँ—अब मौक़ा पाके तुम सब कहीं चल क्यों नहीं देती हो? अब इस वक़्त तो वह नहीं है।

सनम—जायँ तो बे सोचे समझे कहाँ जायँ।

आज़ाद—बस इसी इत्तिफ़ाक़ को हम लोग क़िस्मत कहते हैं और इसी का नाम अक़बाल है।

बूढ़े मियाँ—जी हाँ, आप तो नये आये हैं, यह औरत ख़ुदा जाने, कितने घर तबाह कर चुकी है। पुलिस में भी गिरफ़्तार हुई। मजिस्ट्रेटी भी गयी। सब कुछ हुआ, सज़ा पायी, मगर कोई नहीं पूछता। मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि इनमें से जिसका जी चाहे, मेरे साथ चली चले। किसी शरीफ़ के साथ निकाह पढ़वा दूँगा, मगर कोई राज़ी नहीं होती।

एकाएक किसी ने फिर दरवाज़े पर आवाज़ दी, महरी ने दरवाज़ा खोला तो मम्मन और गुलबाज़ अंदर दाखिल हुए। दोनों ढाटे बाँधे हुए थे। महरी उन्हें इशारे से बुला कर बाग़ में ले गयी।

मम्मन—कुंदन कहाँ हैं?

महरी—वह तो आज बड़ी मुसीबत में फँस गयी। पुलीसवाले पकड़ ले गये।

मम्मन—हम तो आज और ही मनसूबे बाँध कर आये थे। वह जो महाजन गली में रहते हैं, उनकी बहू अजमेर से आयी है।

महरी—हाँ, मेरा जाना हुआ है। बहुत से रुपये लायी है।

गुलबाज़—महाजन गंगा नहाने गया है। परसों तक आ जायगा। हमने कई आदमियों से कह दिया था। सब के सब आते होंगे।

मम्मन—कुंदन नहीं हैं, न सही! हम अपने काम से क्यों ग़ाफ़िल रहें। आओ एक-आध चक्कर लगायें।

इतने में बाग़ के दरवाज़े की तरफ़ सीटी की आवाज़ आयी। गुलबाज़ ने दरवाज़ा खोल दिया और बोला—कौन है, दिलवर!

दिलवर—बस अब देर न करो। वक़्त जाता है भाई।

गुलबाज़—अरे यार, आज तो मामला हुच गया।

दिलवर—ऐं! ऐसा न कहो। दो लाख नक़द रखा हुआ है। इसमें एक भी कम हो, तो जो जुर्माना कहो दूँ।

मम्मन—अच्छा, तो कहीं भागा जाता है?

दिलवर—यह क्या ज़रूरी है कि कुंदन ज़रूर ही हो।

मम्मन—भाईजान, एक कुंदन के न होने से कहीं यार लोग चूकते हैं? और भी कई सबब हैं।

दिलवर—ऐसे मामले में इतनी सुस्ती!

मम्मन—यह सारा कुसुर गुलबाज़ का है। चंडूखाने में पड़े छींटे उड़ाया किये, और सारा खेल बिगाड़ दिया।

दिलवर—आज तक इस मामले में ऐसे लौंडे नहीं बने थे। वह दिन याद है कि जब ज़हूरन की गली में छुरी चली थी?

गुलबाज़—मैं उस दिन कहाँ था?

दिलवर—हाँ, तुम तो मुर्शिदाबाद चले गये थे। और यहाँ ज़हूरन ने हमें इत्तला दी कि सुल्तान मिरज़ा चल बसे। सुल्तान मिरज़ा के महल्ले में सब मोटे रुपयेवाले, मगर उनके मारे किसी कि हिम्मत न पड़ती थी कि उनके महल्ले में जाय।

मम्मन—वह तो इस फ़न का उस्ताद था।

दिलवर—बस जनाब, इधर सुल्तान मिरज़ा मरे, उधर ज़हूरन ने हमें बुलवाया। हम लोग जा पहुँचे। अब सुनिए कि जिस तरफ़ जाते हैं, कोई गा रहा है, कोई घर ऐसा नहीं, जहाँ रोशनी और जाग न हो।

मम्मन—किसी ने पहले से महल्लेवालों को होशियार कर दिया होगा।

दिलवर—जी हाँ, सुनते तो जाइए। पीछे खुला न। हुआ यह कि जिस वक़्त हम लोगों ने ज़हूरन के दरवाज़े पर आवाज़ दी, तो उनकी मामा ने पड़ोस के मकान में कंकरी फेंकी। उस पड़ोसी ने दूसरे मकान में। इस तरह महल्ले भर में खबर हो गयी।

यहाँ तो ये बातें हो रही थीं, उधर बूढ़े मियाँ और आज़ाद में कुंदन को सज़ा दिलाने के लिए सलाहें होती थीं—

आज़ाद—जिन-जिन लड़कियों को इसने चोरी से बेच लिया है, उन सबों का पता लगाइए।

बूढ़े मियाँ—अजी, एक-दो हों, तो पता लगाऊँ। यहाँ तो शुमार ही नहीं।

आज़ाद—मैं आज ही हाकिम जिला से इसका ज़िक्र करूँगा।

इन लोगों से रुखसत हो कर आज़ाद मजिस्ट्रेट के बँगले पर आये। पहले अपने कमरे में जा कर मुँह-हाथ धोया, और कपड़े बदल कर उस कमरे में गये, जहाँ साहब मेहमानों के साथ डिनर खाने बैठे थे। अभी खाना चुना ही जा रहा था कि आज़ाद

कमरे में दाखिल हुए। आप शाम को आने का वादा करके गये थे। ९ बजे पहुँचे तो सबने मिल कर क़हक़हा लगाया।

मेम—क्यों साहब, आपके यहाँ अब शाम हुई?

साहब—बड़ी देर से आपका इंतज़ार था।

मीडा—कहीं शादी तो नहीं तय कर आये?

साहब—हाँ, देर होने से तो हम सबको यही शक हुआ था।

मेम—जब तक आप देर की वजह न बतायेंगे, यह शक न दूर होगा। आप लोगों में तो चार शादियाँ हो सकती हैं।

क्लारिसा—आप चुप क्यों हैं, कोई बहाना सोच रहे हैं?

आज़ाद—अब मैं क्या बयान करूँ। यहाँ तो सब लाल-बुझक्कड़ ही बैठे हैं। कोई चेहरे से ताड़ जाता है, कोई आँखों से पहचान लेता है; मगर इस वक़्त मैं जहाँ था, वहाँ खुदा किसी को न ले जाय।

साहब—जुवारियों का अड्डा तो नहीं था?

आज़ाद—नहीं वह और ही मामला था। इतमीनान से कहूँगा।

लोग खाना खाने लगे। साहब के बहुत ज़ोर देने पर भी आज़ाद ने शराब न पी। खाना हो जाने पर लेडियों ने गाना शुरू किया और साहब भी शरीक हुए। उसके बाद उन्होंने आज़ाद से कुछ गाने को कहा।

आज़ाद—आपको इसमें क्या लुत्फ़ आयेगा?

मेम—नहीं, हम हिंदुस्तानी गाना पसंद करते हैं, मगर जो समझ में आये।

आज़ाद ने बहुत हीला किया, मगर साहब ने एक न माना। आखिर मजबूर हो कर यह ग़ज़ल गायी—

जान से जाती हैं क्या-क्या हसरतें;
काश वह भी दिल में आना छोड़ दे।
'दाग़' से मेरे जहन्नुम को मिसाल;
तू भी वायज़ दिल जलाना छोड़ दे।
परदे की कुछ हद भी है परदानशीं;
खुलके मिल बस मुँह छिपाना छोड़ दे।

मेम—हम कुछ-कुछ समझे। वह जहन्नुम का शेर अच्छा है।

साहब—हम तो कुछ नहीं समझे। मगर कानों को अच्छा मालूम हुआ।

दूसरे दिन आज़ाद तड़के कुंदन के मकान पर पहुँचे और महरी से बोले—क्यों भाई, तुम सुरैया बेगम को किसी तरह दिखा सकती हो?

महरी—भला मैं कैसे दिखा दूँ? अब तो मेरी वहाँ पहुँच ही नहीं!

आज़ाद—खुदा गवाह है, फ़क़त एक नज़र भर देखना चाहता हूँ।

महरी—खैर, अब आप कहते ही हैं तो कोशिश करूँगी। और आज ही शाम को यहीं चले आइएगा।

आज़ाद—ख़ुदा तुमको सलामत रखे, बड़ा काम निकलेगा।

महरी—ऐ मियाँ, मैं लौंडी हूँ। तब भी तुम्हारा ही नमक खाती थी, और अब भी...।

आज़ाद—अच्छा, इतना बता दो कि किस तरकीब से मिलूँगा?

महरी—यहाँ एक शाह साहब रहते हैं। सुरैया बेगम उनकी मुरीद हैं। उनके मियाँ ने भी हुक्म दे दिया है कि जब उनका जी चाहे, शाह साहब के यहाँ जायँ। शाह जी का सिन कोई दो सौ बरस का होगा। और हुज़ूर, जो वह कह देते हैं, वही होता है। क्या मजाल जो फ़रक पड़े।

आज़ाद—हाँ साहब, फ़क़ीर हैं, नहीं तो दुनिया क़ायम कैसे है!

महरी—मैं शाह जी को एक और जगह भेज दूँगी। आप उनकी जगह जाके बैठ जाइएगा। शाह साहब की तरफ़ कोई आँख उठा कर नहीं देख सकता। इसलिए आपको यह ख़ौफ़ भी नहीं है कि सुरैया बेगम पहचान जायेंगी।

आज़ाद—बड़ा एहसान होगा। उम्र भर न भूलूँगा। अच्छा, तो शाम को आऊँगा।

शाम को आज़ाद कुंदन के घर पहुँच गये। महरी ने कहा—लीजिए, मुबारक हो। सब मामला चौकस है।

आज़ाद—जहाँ तुम हो, वहाँ किस बात की कमी। तुमसे आज मुलाक़ात हुई थी? हमारा ज़िक्र तो नहीं आया? हमसे नाराज़ तो नहीं हैं?

महरी—ऐ हुज़ूर, अब तक रोती हैं। अक़्सर फ़रमाती हैं कि जब आज़ाद सुनेंगे कि उसने एक अमीर के साथ निकाह कर लिया, तो अपने दिल में क्या कहेंगे।

शाह साहब शहर के बाहर एक इमली के पेड़ के नीचे रहते थे। महरी आज़ाद को वहाँ ले गयी और दरख़्त के नीचेवाली कोठरी में बैठा कर बोली—आप यहीं बैठिए, बेगम साहब अब आती ही होंगी। जब वह आँख बंद करके नज़र दिखायँ तो ले लीजिएगा। फिर आपमें और उनमें ख़ुद ही बातें होंगी।

आज़ाद—ऐसा न हो कि मुझे देख कर डर जायँ।

महरी—जी नहीं, दिल की मज़बूत हैं। वनों-जंगलों में फिर आयी हैं।

इतने में किसी आदमी के गाने की आवाज़ आयी।

बुते-ज़ालिम नहीं सुनता किसी की;
ग़रीबों का ख़ुदा फ़रियाद-रस है।

आज़ाद—यह इस वक़्त इस वीराने में कौन गा रहा है?

महरी—सिड़ी है। ख़बर पायी होगी कि आज यहाँ आनेवाली हैं।

आज़ाद—बाबा साहब को इसका हाल मालूम है या नहीं?

महरी—सभी जानते हैं। दिन-रात यों ही बका करता है; और कोई काम ही नहीं।

आज़ाद—भला यह तो बताओ कि सुरैया बेगम के साथ कौन-कौन होगा ?

महरी—दो-एक महरियाँ होंगी, मौलाई बेगम होंगी और दस-बारह सिपाही।

आज़ाद—महरियाँ अंदर साथ आयेंगी या बाहर ही रहेंगी ?

महरी—इस कमरे में कोई नहीं आ सकता।

इतने में सुरैया बेगम की सवारी दरवाज़े पर आ पहुँची। आज़ाद का दिल धक-धक करता था। कुछ तो इस बात की खुशी थी कि मुद्दत के बाद अलारक्खी को देखेंगे और कुछ इस बात का खयाल कि कहीं परदा न खुल जाय।

आज़ाद—ज़रा देखो, पालकी से उतरीं या नहीं।

महरी—बाग़ में टहल रही हैं। मौलाई बेगम भी हैं। चलके दीवार के पास खड़े हो कर आड़ से देखिए।

आज़ाद—डर मालूम होता है कि कहीं देख न लें।

आखिर आज़ाद से न रहा गया। महरी के साथ आड़ में खड़े हुए तो देखा कि बाग़ में कई औरतें चमन की सैर कर रही हैं।

महरी—जो ज़रा भी इनको मालूम हो जाय कि आज़ाद खड़े देख रहे हैं तो खुदा जाने, दिल का क्या हाल हो।

आज़ाद—पुकारूँ ? बेअख्तियार जी चाहता है कि पुकारूँ।

इतने में बेगम दीवार के पास आयीं और बैठ कर बातें करने लगीं।

सुरैया—इस वक़्त तो गाना सुनने को जी चाहता है।

मौलाई—देखिए, यह सौदाई क्या गा रहा है।

सुरैया—अरे ! इस मुए को अब तक मौत न आयी ? इसे कौन मेरे आने की खबर दे दिया करता है। शाह जी से कहूँगी कि इसको मौत आये।

मौलाई—ऐ नहीं, काहे को मौत आये बेचारे को। मगर आवाज़ अच्छी है।

सुरैया—आग लगे इसकी आवाज़ को।

इतने में ज़ोर से पानी बरसने लगा। सब की सब इधर-उधर दौड़ने लगीं। आखिर एक माली ने कहा कि हुजूर, सामने का बँगला खाली कर दिया है, उसमें बैठिए। सब की सब उस बँगले में गयीं। जब कुछ देर तक बादल न खुला तो सुरैया बेगम ने कहा—भई, अब तो कुछखाने को जी चाहता है।

ममोला नाम की एक महरी उनके साथ थी। बोली—शाह जी के यहाँ से कुछ लाऊँ ? मगर फ़क़ीरों के पास दाल-रोटी के सिवा और क्या होगा।

सुरैया—जाओ, जो कुछ मिले, ले आओ। ऐसा न हो कि वहाँ कोई बेतुकी बात कहने लगो।

महरी ने दुपट्टे को लपेट कर ऊपर से डोली का परदा ओढ़ा। दूसरी महरी ने मशालची को हुक्म दिया कि मशाल जला। आगे-आगे मशालची, पीछे पीछे दोनों महरियाँ दरवाजे पर आयीं और आवाज़ दी। आज़ाद और महरी ने समझा कि बेगम साहब आ गयीं, मगर दरवाज़ा खोला तो देखा कि महरियाँ हैं।

महरी—आओ, आओ। क्या बेगम साहब बाग़ ही में हैं?

ममोला—जी हाँ। मगर एक काम कीजिए। शाह साहब के पास भेजा है। यह बताओ कि इस वक़्त कुछ खाने को है?

महरी ने शाह जी के बावरचीख़ाने से चार मोटी-मोटी रोटियाँ और एक प्याला मसूर की दाल का ला कर दिया। दोनों महरियाँ खाना ले कर बँगले में पहुँचीं तो सुरैया बेगम ने पूछा—कहो, बेटा कि बेटी?

ममोला—हुज़ूर, फ़क़ीरों के दरबार से भला कोई खाली हाथ आता है? लीजिए, वह मोटे-मोटे टिक्कड़ हैं।

मौलाई—इस वक़्त यही ग़नीमत हैं।

ममोला—बेगम साहब आपसे एक अरज़ है।

सुरैया—क्या है, कहो तुम्हारी बातों से हमें उलझन होती है।

ममोला—हुज़ूर, जब हम खाना लेके आते थे तो देखा कि बाग़ के दरवाज़े पर एक बेकस, बेगुनाह, बेचारा दबका दबकाया खड़ा भींग रहा है।

सुरैया—फिर तुमने वही पाजीपने की ली न! चलो हटो सामने से।

मौलाई—बहन, ख़ुदा के लिए इतना कह दो कि जहाँ सिपाही बैठे हैं, वहीं उसे भी बुला लें।

सुरैया—फिर मुझसे क्या कहती हो?

सिपाहियों ने दीवाने को बुला कर बैठा लिया। उसने यहाँ आते ही तान लगायी—

पसे फ़िना हमें गरदूँ सतायेगा फिर क्या,
मिटे हुए को यह ज़ालिम मिटायेगा फिर क्या?
ज़ईफ़ नालादिल उसका हिला नहीं सकता,
यह जाके अर्श का पाया हिलायेगा फिर क्या?
शरीक जो न हुआ एक दम को फूलों में,
वह फूल आके लेहद के उठायेगा फिर क्या?
ख़ुदा को मानो न बिस्मिल को अपने ज़बह करो,
तड़पके सैर वह तुमको दिखायेगा फिर क्या?

सुरैया—देखा न। यह कम्बख़्त बे गुल मचाये कभी न रहेगा।

मौलाई—बस यही तो इसमें ऐब है। मगर ग़ज़ल भी ढूँढ़के अपने ही मतलब की कही है।

सुरैया—कम्बख़्त बदनाम करता फिरता है।

दोनों बेगमों ने हाथ धोया। उस वक़्त वहाँ मसूर की दाल और रोटी पोलाव और क़ोरमे को मात करती थी। उस पर माली ने कैथे की चटनी तैयार कराके महरी के हाथ भेजवा दी। इस वक़्त इस चटनी ने वह मज़ा दिया कि कोई सुरैया बेगम की ज़बान से सुने।

मौलाई—माली ने इनाम का काम किया है इस वक़्त।

सुरैया—इसमें क्या शक। पाँच रुपये इनाम दे दो।

जब खुदा खुदा करके मेंह थमा और चाँदनी निखरी तो सुरैया बेगम ने महरी भेजी कि शाह जी का हुक्म हो तो हम हाज़िर हों। वहाँ महरी ने कहा—हाँ, शौक़ से आयें; पूछने की क्या ज़रूरत है।

सुरैया बेगम ने आँखें बंद कीं और शाह जी के पास गयीं। आज़ाद ने उन्हें देखा तो दिल का अजब हाल हुआ। एक ठंडी साँस निकल आयी। सुरैया बेगम घबरायीं कि आज शाह साहब ठंडी साँसें क्यों ले रहे हैं। आँखें खोल दीं तो सामने आज़ाद को बैठे देखा। पहले तो समझीं कि आँखों ने धोखा दिया, मगर क़रीब से ग़ौर करके देखा तो शक दूर हो गया।

उधर आज़ाद की ज़बान भी बंद हो गयी। लाख चाहा कि दिल का हाल कह सुनायें, मगर ज़बान खोलना मुहाल हो गया। दोनों ने थोड़ी देर तक एक दूसरे को प्यार और हसरत की नज़र से देखा, मगर बातें करने की हिम्मत न पड़ी। हाँ, आँखों पर दोनों में से किसी को अख्तियार न था। दोनों की आँखों से टप-टप आँसू गिर रहे थे। एकाएक सुरैया बेगम वहाँ से उठ कर बाहर चली आयीं।

ममोला ने पूछा—बेगम साहब, आज इतनी जल्दी क्यों की?

सुरैया—यों ही।

मौलाई—आँखों में आँसू क्यों हैं? शाह साहब से क्या बातें हुईं?

सुरैया—कुछ, नहीं बहन, शाह साहब क्या कहते, जी ही तो है।

मौलाई—हाँ, मगर खुशी और रंज के लिए कोई सबब भी तो होता है।

सुरैया—बहन, हमसे इस वक़्त सबब न पूछो। बड़ी लम्बी कहानी है।

मौलाई—अच्छा, कुछ कतर-ब्योंत करके कह दो।

सुरैया—बहन, बात सारी यह है कि इस वक़्त शाह जी तक ने हमसे चाल की। जो कुछ हमने इस वक़्त देखा, उसके देखने की तमन्ना बरसों से थी, मगर अब आँखें फेर-फेरके देखने के सिवा और क्या है?

मौलाई—(सुरैया के गले में हाथ डाल कर) क्या, आज़ाद मिल गये क्या?

सुरैया—चुप-चुप! कोई सुन न ले।

मौलाई—आज़ाद इस वक़्त कहाँ से आ गये! हमें भी दिखला दो।

सुरैया—रोकता कौन है। जाके देख लो।

मौलाई बेगम चलीं तो सुरैया बेगम ने इनका हाथ पकड़ लिया और कहा—खबरदार, मेरी तरफ से कोई पैग़ाम न कहना।

मौलाई बेगम कुछ हिचकती, कुछ झिझकती आ कर आज़ाद से बोलीं—शाह जी कभी और भी इस तरफ़ आये थे?

आज़ाद—हम फ़क़ीरों को कहीं आने-जाने से क्या सरोकार। जिधर मौज़ हुई,

चल दिये। दिन को सफ़र, रात को ख़ुदा की याद। हाँ, ग़म है तो यह कि ख़ुदा को पायें।

मौलाई—सुनो शाह जी, आपकी फ़क़ीरी को हम ख़ूब जानते हैं। यह सब काँटे आप ही के बोये हुए हैं। और अब आप फ़क़ीर बन कर यहाँ आये हैं। यह बतलाइए कि आपने उन्हें जो इतना परेशान किया तो किस लिए? इससे आपका क्या मतलब था?

आज़ाद—साफ़-साफ़ तो यह है कि हम उनसे फ़क़त दो-दो बातें करना चाहते हैं।

मौलाई—वाह, जब आँखें चार हुईं तब तो कुछ बोले नहीं; और वह बातें हुईं भी तो नतीजा क्या? उनके मिज़ाज को तो आप जानते हैं। एक बार जिसकी हो गयीं, उसकी हो गयीं।

आज़ाद—अच्छा, एक नज़र तो दिखा दो।

मौलाई—अब यह मुमकिन नहीं। क्यों मुफ्त में अपनी जान को हलाकान करोगे।

आज़ाद—तो बिलकुल हाथ धो डालें? अच्छा चलिए, बाग़ में ज़रा दूर ही से दिल के फफोले फोड़ें।

मौलाई—वाह-वाह! जब बाग़ में हों भी।

आज़ाद—अच्छा साहब, लीजिए, सब्र करके बैठे जाते हैं।

मौलाई—मैं जा कर कहती हूँ, मगर उम्मेद नहीं कि मानें।

यह कह कर मौलाई बेगम उठीं और सुरैया बेगम के पास आ कर बोलीं—बहन, अल्लाह जानता है, कितना ख़ूबसूरत जवान है।

सुरैया—हमारा ज़िक्र भी आया था? कुछ कहते थे?

मौलाई—तुम्हारे सिवा और ज़िक्र ही किसका था? बेचारे बहुत रोते थे। हमारी एक बात इस वक़्त मानोगी? कहूँ?

सुरैया—कुछ मालूम तो हो, क्या कहोगी?

मौलाई—पहले क़ौल दो, फिर कहेंगे; यों नहीं।

सुरैया—वाह! बे-समझे-बूझे क़ौल कैसे दे दूँ?

मौलाई—हमारी इतनी ख़ातिर भी न करोगी बहन!

सुरैया—अब क्या जानें, तुम क्या ऊल-जलूल बात कहो।

मौलाई—हम कोई ऐसी बात न कहेंगे जिससे नुक़सान हो।

सुरैया—जो बात तुम्हारे दिल में है वह मेरे नाख़ून में है।

मौलाई—क्या कहना है। आप ऐसी ही हैं।

सुरैया—अच्छा, और सब बातें मानेंगे सिवा एक बात के।

मौलाई—वह एक बात कौन सी है, हम सुन तो लें।

सुरैया—जिस तरह तुम छिपाती हो उसी तरह हम भी छिपाते हैं।

मौलाई—अल्लाह को गवाह करके कहती हूँ, रो रहा है। मुझसे हाथ जोड़ कर कहा है कि जिस तरह मुमकिन हो, मुझसे मिला दो। मैं इतना ही चाहता हूँ कि नज़र भर कर देख लूँ।

सुरैया—क्या मज़ाल, ख़्वाब तक में सूरत न दिखाऊँ।

मौलाई—मुझे बड़ा तरस आता है।

सुरैया—दुनिया का भी तो ख़याल है।

मौलाई—दुनिया से हमें क्या काम? यहाँ ऐसा कौन आता-जाता है। डर काहे का है, चलके ज़रा देख लो, उसका अरमान तो निकल जाय।

सुरैया—ना, मुमकिन नहीं! अब यहाँ से चलोगी भी या नहीं?

मौलाई—हम तो तब तक न चलेंगे, जब तक तुम हमारा कहना न मानोगी।

सुरैया—सुनो मौलाई बेगम, हर काम का कोई न कोई नतीजा होता है। इसका नतीजा तुम क्या सोची हो?

मौलाई—उनका दिल खुश होगा। इस वक़्त वह आपे में नहीं हैं; मगर जब इस मामले पर ग़ौर करेंगे तो उन्हें ज़रूर रंज होगा।

दोनों बेगम पालकियों पर बैठ कर रवाना हुईं। आज़ाद ने मकान की दीवार से सुरैया बेगम को देखा और ठंडी साँस ली।

१०८

दूसरे दिन आज़ाद यहाँ से रुख़सत हो कर हुस्नआरा से मिलने चले। बात-बात पर बाँछें खिली जाती थीं। दिमाग़ सातवें आसमान पर था। आज ख़ुदा ने वह दिन दिखाया कि रूस और रूम की मंजिल पूरी करके यार के कूचे में पहुँचे। कहाँ रूस, कहाँ हिंदोस्तान! कहाँ लड़ाई का मैदान, कहाँ हुस्नआरा का मकान! दोनों लेडियों ने उन्हें छेड़ना शुरू किया—

क्लारिसा—आज भला आज़ाद के दिमाग़ काहे को मिलेंगे।

मीडा—इस वक़्त मारे ख़ुशी के इन्हें बात करना भी मुश्किल है।

आज़ाद—बड़ी मुश्किल है। बोलूँ तो हँसवाऊँ, न बोलूँ तो आवाज़े कसे जायँ।

क्लारिसा—क्या इसमें कुछ झूठ भी है? जिसके लिए दुनिया भर की ख़ाक छानी, उससे मिलने का नशा हुआ ही चाहे।

एकाएक कमरे के बाहर से आवाज़ आयी—भला रे गीदी, भला, और ज़रा देर में मियाँ ख़ोजी कमरे में दाख़िल हुए।

क्लारिसा—आप इतने दिन तक कहाँ थे ख़्वाजा साहब?

ख़ोजी—था कहाँ, जहाँ जाता हूँ वहाँ लोग पीछे पड़ जाते हैं। इतनी दावतें खायीं कि क्या किसी ने खायीं होंगी। एक-एक दिन में दो-दो सौ बुलावे आ जाते हैं। अगर न जाऊँ तो लोग कहें, ग़ुरूर करता है। जाऊँ तो इतना वक़्त कहाँ! इसी उधेड़-बुन में पड़ा रहा।

आज़ाद—अब कुछ हमारे भी काम आओ।

ख़ोजी—और दौड़ा आया किस लिए हूँ। कहो, हुस्नआरा को ख़बर हुई या नहीं? न हुई हो तो पहुँचूँ। मुझसे ज़्यादा इस काम के लायक़ और किसी को न पाओगे। मैं बड़े काम का आदमी हूँ।

आज़ाद—इसमें क्या शक है भाईजान! बेशक हो।

ख़ोजी—तो फिर मैं चलूँ?

आज़ाद—नेकी और पूछ-पूछ?

ख़ोजी जानेवाले ही थे कि एक आदमी होटल की तरफ़ आता दिखाई दिया। उसकी शक्ल-सूरत बिलकुल ख़ोजी से मिलती थी। वही नाटा क़द, वही काला रंग, वही नन्हे-नन्हे हाथ-पाँव। ख़ोजी का बड़ा भाई मालूम होता था।

आज़ाद—वल्लाह, बिलकुल ख़ोजी ही हैं।

मीडा—बस, इनको छिपाओ, उनको दिखाओ। उनको छिपाओ, इनको दिखाओ। ज़रा फ़र्क़ नहीं।

ख़ोजी—तू कौन है बे? कहाँ चला आता है? कुछ बेधा तो नहीं है? तुम जैसे मसख़रों का यहाँ क्या काम?

मसख़रा—कोई हमसे बदके देख ले। बड़ा मर्द हो तो आ जाय।

खोजी—क्या कहता है? बरस पड़ूँ?

मसख़रा—जा, अपना काम कर। जो गरजता है, वह बरसता नहीं।

खोजी—बचा, तुम्हारी क़ज़ा मेरे ही हाथ से है।

मसख़रा—माशे-भर का आदमी, बौनों के बराबर क़द और चला है मुझे ललकारने!

खोजी—कोई है? लाना तो चंडू की निगाली। ले, आइए!

मसख़रा—हम तो जहाँ खड़े थे, वहीं खड़े हैं, शेर कहीं हटा करते हैं। जमे, सो जमे।

खोजी—क़ज़ा खेल रही है तेरी। मैं इसको क्या करूँ। अब जो कुछ कहना-सुनना हो, कह-सुन लो; थोड़ी देर में लाश फड़कती होगी।

मसख़रा—जरी ज़बान सँभाले हुए हज़रत! ऐसा न हो, मैं गरदन पर सवार हो जाऊँ।

होटल में जितने आदमी थे, उनको शिगूफ़ा हाथ आया। सभी इन बौनों की कुश्ती देखने के लिए बेक़रार थे। दोनों को चढ़ाने लगे।

एक—भई, हम सब तो ख्वाजा साहब की तरफ़ हैं।

दूसरा—हम भी। यह उससे कहीं तगड़े हैं।

तीसरा—कौन? कहीं हों न। इनमें और उसमें बीस और सोलह का फ़र्क़ है। बोलो, क्या-क्या बदते हो!

खोजी—जिसका रुपया फ़ालतू हो, वह इसके हाथ पर बदे। जो कुछ बना कर घर ले जाना चाहे, वह हमारे हाथ पर बदे।

मसख़रा—एक लपोटे में बोल जाइए तो सही। बात करते-करते पकड़ लाऊँ और चुटकी बजाते चित करूँ, (चुटकी बजा कर) यों-यों!

खोजी—मैं इतनी देर नहीं लगाने का।

मसख़रा—अरे चुप भी रह! यह मुँह खाय चौलाई! एक ऊँगली से वह पेंच बाँधूँ कि तड़पने लगो—

> लिया जिसने हमारा नाम, मारा बेगुनाह उसको,
> निशाँ जिसने बनाया, बस, वह तीरों का निशाना था।

आज़ाद—बढ़ गये ख्वाजा साहब, यह आपसे बढ़ गये। अब कोई फड़कता हुआ शेर कहिए तो इज़्ज़त रहे।

खोजी—अजी, इससे अच्छा शेर लीजिए—

> तड़पा न ज़रा खंजर के तले
> सिर अपना दिया शिकवा न किया,
> था पासे अदब जो क़ातिल का
> यह भी न हुआ वह भी न हुआ।

मसखरा—ले, अब आ।

खोजी—देख, तेरी क़ज़ा आ गयी है।

मसखरा—ज़रा सामने आ। ज़मीन में सिर खोंस दूँगा।

खोजी—(ताल ठोक कर) अब भी कहा मान, न लड़।

मसखरा—या अली, मदद कर—

क़ब्र में जिनको न सोना था, सुलाया उनको,
पर मुझे चर्ख़ सितमगर ने सोने न दिया।

आज़ाद—भई ख़ोजी, शायरी में तुम बिलकुल दब गये।

ख़ोजी जवाब देने ही वाले थे कि इतने में मसखरे ने उनकी गरदन में हाथ डाल दिया। क़रीब था कि ज़मीन पर दे पटके कि मियाँ खोजी सँभले और झल्लाके मसखरे की गरदन में दोनों हाथ डाल कर बोले—बस, अब तुम मरे!

मसखरा—आज तुझे जीता न छोड़ूँगा।

खोजी—देखो, हाथ टूटा तो नालिश कर दूँगा। कुश्ती में हाथा-पाई कैसी?

मसखरा—अपनी बुढ़िया को बुला लाओ। कोई लाश को रोनेवाली तो हो तुम्हारी!

खोजी—या तो क़त्ल ही करेंगे या तो क़त्ल होंगे।

मसखरा—और हम क़त्ल ही करके छोड़ेंगे।

ख्वाजा साहब ने एक अंटी बतायी तो मसखरा गिरा। साथ ही खोजी भी मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे। अब न यह उठते हैं न वह। न वह इनकी गरदन छोड़ता है, न यह उसको छोड़ते हैं।

मसखरा—मार डाल, मगर गरदन न छोड़ूँगा।

खोजी—तू गरदन मरोड़ डाल, मगर मैं अधमरा करके छोड़ँगा। हाय-हाय! गरदन गयी! पसलियाँ चर-चर बोल रही हैं!

मसखरा—जो कुछ हो सो हो, कुछ परवा नहीं है।

खोजी—यहाँ किसको परवा है, कोई रोनेवाला भी नहीं है।

अब की खोजी ने गरदन छुड़ा ली; उधर मसखरा भी निकल भागा। दोनों अपनी-अपनी गरदन सुहलाने लगे। यार लोगों ने फिर फ़िक़रे चुस्त किये। भई, हम तो खोजी के दम के क़ायल हैं।

दूसरा बोला—वाह! अगर कची आध घड़ी और कुश्ती रहती तो वह मार लेता।

तीसरे ने कहा—अच्छा, फिर अब की सही। किसी का दम थोड़े टूटा है।

यार लोग तो उनको तैयार करते थे, मगर उनमें दम न था। आधा घंटे तक दोनों हाँफा किये, मगर ज़बान चली जाती थी।

खोजी—ज़रा और देर होती तो फिर दिल्लगी देखते।

मसखरा—हाँ, बेशक।

खोजी—तकदीर थी, बच गये, वरना मुँह बिगाड़ देता।

मसख़रा—अब तुम इस फ़िक्र में हो कि मैं फिर उठूँ।

आज़ाद—भई, अब ज़्यादा बखेड़ा मत बढ़ाओ। बहुत हो चुकी।

मसख़रा—हुज़ूर, मैं बे नीचा दिखाये न मानूँगा।

खोजी—(मसख़रे की गरदन पकड़ कर) आओ, दिखाओ नीचा।

मसख़रा—अबे, तू गरदन तो छोड़। गरदन छोड़ दे हमारी।

खोजी—अब की हमारा दाँव है!

मसख़रा—(थप्पड़ लगा कर) एक-दो।

खोजी—(चपत दे कर) तीन।

फ़िक़रेबाज—सौ तक गिन जाओ यों ही। हाँ, पाँच हुईं।

दूसरा—ऐसे-ऐसे जवान और पाँच ही तक गिनके रह गये?

खोजी—(चपत दे कर) छह-छह और नहीं तो। लोग बड़ी देर से छह का इंतज़ार कर रहे थे।

अब की वह घमासन लड़ाई हुई कि दोनों बेदम हो कर गिर पड़े और रोने लगे।

खोजी—अब मौत क़रीब है। भई आज़ाद, हमारी क़ब्र किसी पोस्ते के खेत के क़रीब बनवाना।

मसख़रा—और हमारी क़ब्र शाहफ़सीह के तकिये में बनवाई जाय जहाँ हमारे वालिद ख्वाजा वलीग दफ़न हैं।

खोजी—कौन-कौन? इनके वालिद का क्या नाम था?

आज़ाद—ख्वाजा वलीग कहते हैं।

खोजी—(रो कर) अरे भाई, हमें पहचाना? मगर हमारी-तुम्हारी यों ही बदी थी।

मसख़रे ने जो इनका नाम सुना तो सिर पीट लिया—भई क्या गज़ब हुआ! सगा भाई सगे भाई को मारे?

दोनों भाई गले मिल कर रोये। बड़े भाई ने अपना नाम मियाँ रईस बतलाया। बोले—बेटा, तुम मुझसे कोई बीस बरस छोटे हो। तुमने वालिद को अच्छी तरह से नहीं देखा था। बड़ी खूबियों के आदमी थे। हमको रोज़ दूकान पर ले जाया करते थे?

आज़ाद—काहे की दूकान थी हज़रत?

रईस—जी, टाल थी। लकड़ियाँ बेचते थे।

खोजी ने भाई की तरफ घूर कर देखा।

रईस—कुछ दिन कंपू में साहब लोगों के यहाँ खानसामा रहे थे।

खोजी ने भाई की तरफ़ देख कर दाँत पीसा।

आज़ाद—बस हज़रत, क़लई खुल गयी। अब्बाजान खानसामा थे और आप रईस बनते हैं।

आज़ाद चले गये तो दोनों भाइयों में खूब तक़रार हुई। मगर थोड़ी ही देर में मेल हो गया और दोनों भाई साथ-साथ शहर की सैर को गये। इधर-उधर मटर-गश्त करके मियाँ रईस तो अपने अड्डे पर गये और ख़ोजी हुस्नआरा बेगम के मकान पर जा पहुँचे। बूढ़े मियाँ बैठे हुक्क़ा पी रहे थे।

ख़ोजी—आदाब अर्ज है। पहचाना या भूल गये ?

बूढ़े मियाँ—बंदगी अर्ज़। मैंने आपको नहीं पहचाना।

ख़ोजी—तुम भला हमें क्यों पहचानोगे। तुम्हारी आँख में तो चर्बी छायी हुई है।

बूढ़े मियाँ—आप तो कुछ अजीब पागल मालूम होते हैं। जान न पहचान, त्योरियाँ बदलने लगे।

ख़ोजी—अजी, हम तो सुनायें बादशाह को, तुम क्या माल हो।

बूढ़े मियाँ—अपने होश में हो या नहीं ?

ख़ोजी—कोई महलसरा में हुस्नआरा बेगम को इत्तला दो कि मुसाफ़िर आये हैं।

बूढ़े मियाँ—(खड़े हो कर) अख्खाह ! ख्वाजा साहब तो नहीं हैं आप ! माफ़ कीजिएगा। आइए गले मिल लें।

बूढ़े मियाँ ने आदमी को हुक्म दिया कि हुक़्क़ा भर दो, और अंदर जा कर बोले—लो साहब, ख़ोजी दाख़िल हो गये।

चारों बहनें बाग़ में गयीं और चिक की आड़ से ख़ोजी को देखने लगीं।

नाज़ुक अदा—ओ-हो-हो ! कैसा ग्रांडील जवान है !

जानी—अल्लाह जानता है, ऐसा जवान नहीं देखने में आया था। ऊँट की तो कोई कल शायद दुरुस्त भी हो, इसकी कोई कल दुरुस्त नहीं। हँसी आती है।

ख़ोजी इधर-उधर देखने लगे कि यह आवाज़ कहाँ से आती है। इतने में बूढ़े मियाँ आ गये।

ख़ोजी—हज़रत, इस मकान की अजब ख़ासियत है।

बूढ़े मियाँ—क्या-क्या ? इस मकान में कोई नयी बात आपने देखी है ?

ख़ोजी—आवाजें आती हैं। मैं बैठा हुआ था, एक आवाज़ आयी, फिर दूसरी आवाज़ आयी।

बूढ़े मियाँ—आप क्या फ़रमाते हैं, हमने तो कोई बात ऐसी नहीं देखी।

जानी बेगम की रग-रग में शोख़ी भरी हुई थी। ख़ोजी को बनाने की एक तरकीब सूझी। बोलीं—एक बात हमें सूझी है। अभी हम किसी से कहेंगे नहीं।

बहार बेगम—हमसे तो कह दो।

जानी ने बहार बेगम के कान में आहिस्ता से कुछ कहा।

बहार—क्या हरज है, बूढ़ा ही तो है।

सिपहआरा—आख़िर कुछ कहो तो बाजीजान ! हमसे कहने में कुछ हरज है ?

बहार—जानी बेगम कह दें तो बता दूँ।

जानी—नहीं, किसी से न कहो।

जानी बेगम और बहार बेगम दोनों उठ कर दूसरे कमरे में चली गयीं। यहाँ इन सबको हैरत हो रही थी कि या खुदा! इन सबों को कौन तरकीब सूझी है, जो इतना छिपा रही हैं। अपनी-अपनी अक़्ल दौड़ाने लगीं।

नाज़ुक—हम समझ गये। अफ़ीमी आदमी है। उसकी डिबिया चुराने की फ़िक्र होगी।

हुस्नआरा—यह बात नहीं, इसमें चोरी क्या थी?

इतने में बहार बेगम ने आ कर कहा—चलो, बाग़ में चल कर बैठें। ख्वाजा साहब पहले ही से बाग़ में बैठे हुए थे। एकाएक क्या देखते हैं कि एक गभरू जवान सामने से ऐंठता-अकड़ता चला आता है। अभी मसें भी नहीं भीगीं। जालीलोट का कुरता, उस पर शरबती कटावदार अँगरखा, सिर पर बाँकी पगिया और हाथ में कटार।

हुस्नआरा—यह कौन है अल्लाह? ज़रा पूछना तो।

सिपहआरा—ओफ़्फ़ोह! बाजीजान, पहचानो तो भला।

हुस्नआरा—अरे! बड़ा धोखा दिया।

नाज़ुक—सचमुच! बेशक बड़ा धोखा दिया! ओफ़्फ़ोह!

सिपहआरा—मैं तो पहले समझी ही न थी कुछ।

इतने में वह जवान खोजी के क़रीब आया तो यह चकराये कि इस बाग़ में इसका गुज़र कैसे हुआ। उसकी तरफ़ ताक ही रहे थे कि बहार बेगम ने गुल मचा कर कहा—ऐ! यह कौन मरदुआ बाग़ में आ गया। ख्वाजा साहब, तुम बैठे देख रहे हो और यह लौंडा भीतर चला आता है! इसे निकाल क्यों नहीं देते?

खोजी—अजी हज़रत, आखिर आप कौन साहब हैं? पराये ज़नाने में घुसे जाते हो, यह माजरा क्या है?

जवान—कुछ तुम्हारी शामत तो नहीं आयी है? चुपचाप बैठे रहो।

खोजी—सुनिए साहब, हम और आप दोनों एक ही पेशे के आदमी हैं।

जवान—(बात काट कर) हमने कह दिया, चुप रहो, वरना अभी सिर उड़ा दूँगा। हम हुस्नआरा बेगम के आशिक़ हैं। सुना है कि आज़ाद यहाँ आये हैं, और हुस्नआरा के पास निकाह का पैग़ाम भेजनेवाले हैं। बस, अब यही धुन है कि उनसे दो-दो हाथ चल जाय।

खोजी—आज़ाद का मुक़ाबिला तुम क्या खा कर करोगे। उसने लड़ाइयाँ सर की हैं। तुम अभी लौंडे हो।

जवान—तू भी तो उन्हीं का साथी है। क्यों न पहले तेरा ही काम तमाम कर दूँ।

खोजी—(पैंतरे बदल कर) हम किसी से दबनेवाले नहीं हैं।

जवान—आज ही का दिन तेरी मौत का था।

खोजी—(पीछे हट कर) अभी किसी मर्द से पाला नहीं पड़ा है।

जवान—क्यों नाहक़ ग़ुस्सा दिलाता है। अच्छा, ले सँभल।

जवान ने तलवार घुमायी तो ख़ोजी घबरा कर पीछे हटे और गिर पड़े। बस क़रौली की याद करने लगे। औरतें तालियाँ बजा-बजा कर हँसने लगीं।

जवान—बस, इसी बिरते पर भूला था?

ख़ोजी—अजी, मैं अपने जोम में आप आ रहा। अभी उठूँ तो क़यामत बरपा कर दूँ।

जवान—जा कर आज़ाद से कहना कि होशियार रहें।

ख़ोजी—बहुतों का अरमान निकल गया। उनकी सूरत देख लो, तो बुख़ार आ जाय।

जवान—अच्छा, कल देखूँगा।

यह कह कर उसने बहार बेगम का हाथ पकड़ा और बेधड़क कोठे पर चढ़ गया। चारों बहनें भी उसके पीछे-पीछे ऊपर चली गयीं।

ख़ोजी यहाँ से चले तो दिल में सोचते जाते थे कि आज़ाद से चल कर कहता हूँ, हुस्नआरा के एक और चाहनेवाले पैदा हुए हैं। क़दम-क़दम पर हाँक लगाते थे, घड़ी दो में मुरलिया बाजेगी। इत्तफ़ाक़ से रास्ते में उसी होटल का ख़ानसामा मिल गया, जहाँ आज़ाद ठहरे थे। बोला—अरे भाई! इस वक़्त कहाँ लपके हुए जाते हो? ख़ैर तो है? आज तो आप ग़रीबों से बात ही नहीं करते।

ख़ोजी—घड़ी दो में मुरलिया बाजेगी।

ख़ानसामा—भई वाह! सारी दुनिया घूम आये, मगर कैंडा वही है। हम समझे थे कि आदमी बन कर आये होंगे।

ख़ोजी—तुम जैसों से बातें करना हमारी शान के ख़िलाफ़ है।

ख़ानसामा—हम देखते हैं, वहाँ से तुम और भी गाउदी हो कर आये हो।

थोड़ी देर में आप गिरते-पड़ते होटल में दाख़िल हुए और आज़ाद को देखते ही मुँह बना कर सामने खड़े हो गये।

आज़ाद—क्या ख़बरें लाये?

ख़ोजी—(क़रौली को दायें हाथ से बायें हाथ में ले कर) हूँ!!!

आज़ाद—अरे भाई, गये थे वहाँ?

ख़ोजी—(क़रौली को बायें हाथ से दायें हाथ में ले कर) हूँ!!

आज़ाद—अरे, कुछ मुँह से बोलो भी तो मियाँ!

ख़ोजी—घड़ी दो में मुरलिया बाजेगी।

आज़ाद—क्या? कुछ सनक तो नहीं गये! मैं पूछता हूँ, हुस्नआरा बेगम के यहाँ गये थे? किसी से मुलाक़ात हुई? क्या रंग-ढंग है।

ख़ोजी—वहाँ नहीं गये थे तो क्या जहन्नुम में गये थे? मगर कुछ दाल में काला है।

आज़ाद—भाई साहब, हम नहीं समझे। साफ़-साफ़ कहो, क्या बात हुई? क्यों उलझन में डालते हो।

खोजी—अब वहाँ आपकी दाल नहीं गलने की।

आज़ाद—क्या? कैसी दाल? यह बकते क्या हो?

खोजी—बकता नहीं, सच कहता हूँ।

आज़ाद—खोजी,अगर साफ़-साफ़ न बयान करोगे तो इस वक़्त बुरी ठहरेगी।

खोजी—उलटे मुझी को डाँटते हो। मैंने क्या बिगाड़ा?

आज़ाद—वहाँ का मुफ़स्सल हाल क्यों नहीं बयान करते?

खोजी—तो जनाब, साफ़-साफ़ यह है कि हुस्नआरा बेगम के एक और चाहनेवाले पैदा हुए हैं। हुस्नआरा बेगम और उनकी बहनें बाग़ के बँगले में बैठी थीं कि एक जवान अंदर आ पहुँचा और मुझे देखते ही ग़ुस्से से लाल हो गया।

आज़ाद—कोई खूबसूरत आदमी है?

खोजी—निहायत हसीन, और कमसिन।

आज़ाद—इसमें कुछ भेद है ज़रूर। तुम्हें उल्लू बनाने के लिए शायद दिल्लगी की हो। मगर हमें इसका यक़ीन नहीं आता।

खोजी—यक़ीन तो हमें भी मरते दम तक नहीं आता, मगर वहाँ तो उसे देखते ही क़हक़हे पड़ने लगे।

अब उधर का हाल सुनिए। सिपहआरा ने कहा—अब दिल्लगी हो कि वह जा कर आज़ाद से सारा क़िस्सा कहे।

हुस्नआरा—आज़ाद ऐसे कच्चे नहीं हैं।

सिपहआरा—खुदा जाने, वह सिड़ी वहाँ जा कर क्या बके। आज़ाद को चाहे पहले यक़ीन न आये, लेकिन जब वह क़समें खा कर कहने लगेगा तो उनको ज़रूर शक हो जायगा।

हुस्नआरा—हाँ, शक हो सकता है, मगर किया क्या जाय। क्यों न किसी को भेज कर खोजी को होटल से बुलवाओ। जो आदमी बुलाने जाय वह हँसी-हँसी में आज़ाद से यह बात कह दे।

हुस्नआरा की सलाह से बूढ़े मियाँ आज़ाद के पास पहुँचे, और बड़े तपाक से मिलने के बाद बोले—वह आपके मियाँ खोजी कहाँ हैं? ज़रा उनको बुलवाइए।

आज़ाद—आपके यहाँ से जो आये तो ग़ुस्से में भरे हुए। अब मुझसे बात ही नहीं करते।

बूढ़े मियाँ—वह तो आज खूब ही बनाये गये।

बूढ़े मियाँ ने सारा किस्सा बयान कर दिया। आज़ाद सुन कर खूब हँसे और खोजी को बुला कर उनके सामने ही बूढ़े मियाँ से बोले—क्यों साहब, आपके यहाँ क्या दस्तूर है कि कटारबाज़ों को बुला-बुला कर शरीफ़ों से भिड़वाते हैं।

बूढ़े मियाँ—ख्वाजा साहब को आज खुदा ही ने बचाया।

आज़ाद—मगर यह तो हमसे कहते थे कि वह जवान बहुत दुबला-पतला आदमी है। इनसे-उससे अगर चलती तो यह उसको ज़रूर नीचा दिखाते।

खोजी—अजी, कैसा नीचा दिखाना? वह तलवार चलाना क्या जाने!

आज़ाद—आज उसको बुलवाइए, तो इनसे मुक़ाबिला हो जाय।

खोजी—हमारे नज़दीक उसको बुलवाना फ़ज़ूल है। मुफ़्त की टाँय-टाँय से क्या फ़ायदा। हाँ, अगर आप लोग उस बेचारे की जान के दुश्मन हुए हैं तो बुलवा लीजिए।

यह बातें हो ही रही थीं कि बैरा ने आ कर कहा—हुज़ूर, एक गाड़ी पर औरतें आयी हैं। एक ख़िदमतगार ने, जो गाड़ी के साथ है, हुज़ूर का नाम लिया और कहा कि ज़रा यहाँ तक चले आयें।

आज़ाद को हैरत हुई कि औरतें कहाँ से आ गयीं! खोजी को भेजा कि जा कर देखो। खोजी अकड़ते हुए सामने पहुँचे, मगर गाड़ी से दस क़दम अलग।

ख़िदमतगार—हज़रत, जरी सामने यहाँ तक आइए।

खोजी—ओ गीदी, ख़बरदार जो बोला!

ख़िदमतगार—ऐं! कुछ सनक गये हो क्या?

बैरा—गाड़ी के पास क्यों नहीं जाते भई! दूर क्यों खड़े हो?

खोजी—(क़रौली तौल कर) बस ख़बरदार!

बैरा—ऐं! तुमको हुआ क्या है? जाते क्यों नहीं सामने?

खोजी—चुप रहो जी। जानो न बूझो, आये वहाँ से। क्या मेरी जान फ़ालतू है, जो गाड़ी के सामने जाऊँ?

इत्तफ़ाक से आज़ाद ने उनकी बेतुकी हाँक सुन ली। फ़ौरन बाहर आये कि कहीं किसी से लड़ न पड़ें। खोजी से पूछा—क्यों साहब, यह आप किस पर बिगड़ रहे हैं? जवाब नदारद। वहाँ से झपट कर आज़ाद के पास आये और क़रौली घुमाते हुए पैतरे बदलने लगे।

आज़ाद—कुछ मुँह से तो कहो। खुद भी ज़लील होते हो और मुझे भी ज़लील करते हो।

खोजी—(गाड़ी की तरफ़ इशारा करके) अब क्या होगा?

ख़िदमतगार—हुज़ूर, इन्होंने आते ही पैतरा बदला, और यह काठ का खिलौना नचाना शुरू किया। न मेरी सुनते हैं, न अपनी कहते हैं।

खोजी—(आज़ाद के कान में) मियाँ, इस गाड़ी में औरतें नहीं हैं। वही लौंडा तुमसे लड़ने आया होगा।

आज़ाद—यह कहिए, आपके दिल में यह बात जमी हुई थी। आप मेरे साथ बहुत हमदर्दी न कीजिए, अलग जाके बैठिए।

मगर खोजी के दिल में खुप गयी थी कि इस गाड़ी में वही जवान छिपके आया है। उन्होंने रोना शुरू किया। अब आज़ाद लाख-लाख समझाते हैं कि देखो, होटल

के और मुसाफ़िरों को बुरा मालूम होगा, मगर ख़ोजी चुप ही नहीं होते। आख़िर आपने कहा—जो लोग इस पर सवार हों, वह उतर आयें। पहले मैं देख लूँ, फिर आप जायँ। आज़ाद ने ख़िदमतगार से कहा—भाई, अगर वह लोग मंजूर करें तो यह बूढ़ा आदमी झाँक कर देख ले। इस सीड़ी को शक हुआ है कि इसमें कोई और बैठा है। ख़िदमतगार ने जा कर पूछा, और बोला—सरकार कहती हैं, हाँ, मंजूर है। चलिए, मगर दूर ही से झाँकिएगा।

ख़ोजी —(सबसे रुख़सत हो कर) लो यारो, अब आख़िरी सलाम है। आज़ाद ख़ुदा तुमको दोनों जहान में सुर्ख़रू रखे।

छुटता है मुक़ाम, कूच करता हूँ मैं,
रुख़सत ऐ ज़िंदगी कि मरता हूँ मैं।
अल्लाह से लौ लगी हुई है मेरी;
ऊपर के दम इस वास्ते भरता हूँ।

ख़िदमतगार—अब आख़िर मरने तो जाते ही हो, ज़रा क़दम बढ़ाते न चलो। जैसे अब मरे, वैसे आध घड़ी के बाद।

आज़ाद—क्यों मुरदे को छेड़ते हो जी।

बग्घी से हँसी की आवाजें आ रही थीं। ख़ोजी आँखों में आँसू भरे चले आ रहे थे कि उनके भाई नज़र पड़े। उनको देखते ही ख़ोजी ने हाँक लगायी—आइए भाई साहब! आख़िरी वक़्त आपसे ख़ूब मुलाक़ात हुई।

रईस—ख़ैर तो है भाई! क्या अकेले ही चले जाओगे? मुझे किसके भरोसे छोड़े जाते हो?

ख़ोजी भाई के गले मिल कर रोने लगे। जब दोनों गले मिल कर ख़ूब रो चुके तो ख़ोजी ने गाड़ी के पास जा कर ख़िदमतगार से कहा—खोल दे। ज्यों ही गरदन अंदर डाली तो देखा, दो औरतें बैठी हैं। इनका सिर ज्यों ही अंदर पहुँचा, उन्होंने इनकी पगड़ी उतार कर दो चपतें लगा दीं। ख़ोजी की जान में जान आयी। हँस दिये। आ कर आज़ाद से बोले—अब आप जायँ, कुछ मुज़ायक़ा नहीं है। आज़ाद ने होटल के आदमियों को वहाँ से हटा दिया और उन औरतों से बातें करने लगे।

आज़ाद—आप कौन साहब हैं?

बग्घी में से आवाज़ आयी—आदमी हैं साहब! सुना कि आप आये हैं, तो देखने चले आये। इस तरह मिलना बुरा तो ज़रूर है; मगर दिल ने न माना।

आज़ाद—जब इतनी इनायत की है तो अब नक़ाब दूर कीजिए और मेरे कमरे तक आइए।

आवाज़—अच्छा, पेट से पाँव निकले! हाथ देते ही पहुँचा पकड़ लिया।

आज़ाद—अगर आप न आयँगी तो मेरी दिलशिकनी होगी। इतना समझ लीजिए।

आवाज़—ऐ, हाँ! ख़ूब याद आया। वह जो दो लेडियाँ आपके साथ आयी हैं, वह कहाँ हैं? परदा करा दो तो हम उनसे मिल लें।

आज़ाद—बहुत अच्छा, लेकिन मैं रहूँ या न रहूँ ?

आवाज़—आप से क्या परदा है।

आज़ाद ने परदा करा दिया। दोनों औरतें गाड़ी से उतर पड़ीं और कमरे में आयीं। मिसों ने उनसे हाथ मिलाया; मगर बातें क्या होतीं। मिसें उर्दू क्या जानें और बेगमों को फ्रांसीसी ज़बान से क्या मतलब। कुछ देर तक वहाँ बैठे रहने के बाद, उनमें से एक ने, जो बहुत ही हसीन और शोख़ थी, आज़ाद से कहा—भई, यहाँ बैठे-बैठे तो दम घुटता है। अगर परदा हो सके तो चलिए, बाग़ की सैर करें।

आज़ाद—यहाँ तो ऐसा कोई बाग़ नहीं। मुझे याद नहीं आता कि आपसे पहले कब मुलाक़ात हुई।

हसीना ने आँखों में आँसू भर कर कहा—हाँ साहब, आपको क्यों याद आयेगा। आप हम ग़रीबों को क्यों याद करने लगे। क्या यहाँ कोई ऐसी जगह भी नहीं, जहाँ कोई ग़ैर न हो। यहाँ तो कुछ कहते-सुनते नहीं बनता। चलिए, किसी दूसरे कमरे में चलें।

आज़ाद को एक अनजबी औरत के साथ दूसरे कमरे में जाते शर्म तो आती थी, मगर यह समझ कर कि इसे शायद कोई परदे की बात कहनी होगी, उसे दूसरे कमरे में ले गये और पूछा—मुझे आपका हाल सुनने की बड़ी तमन्ना है। जहाँ तक मुझे याद आता है, मैंने आपको कभी नहीं देखा है। आपने मुझे कहाँ देखा था ?

औरत—ख़ुदा की क़सम, बड़े बेवफ़ा हो। (आज़ाद के गले में हाथ डाल कर) अब भी याद नहीं आता ! वाह रे हम !

आज़ाद—तुम मुझे बेवफ़ा चाहे कह लो; पर मेरी याद इस वक्त धोखा दे रही है।

औरत—हाय अफ़सोस ! ऐसा ज़ालिम नहीं देखा—

न क्योंकर दम निकल जाये कि याद आता है रह-रह कर;
वह तेरा मुसकिराना कुछ मुझे ओठों में कह-कह कर।

आज़ाद—मेरी समझ ही में नहीं आता कि यह क्या माजरा है।

औरत—दिल छीनके बातें बनाते हो ? इतना भी नहीं होता कि एक बोसा तो ले लो।

आज़ाद—यह मेरी आदत नहीं।

औरत—हाय ! दिल सा घर तूने ग़ारत कर दिया, और अब कहता है, यह मेरी आदत नहीं।

आज़ाद—अब मुझे फ़ुरसत नहीं है, फिर किसी रोज़ आइएगा।

औरत—अच्छा, अब कब मिलोगे ?

आज़ाद—अब आप तकलीफ़ न कीजिएगा।

यह कहते हुए आज़ाद उस कमरे से निकल आये। उनके पीछे-पीछे वह औरत भी बाहर निकली। दोनों लेडियों ने उसे देखा तो कट गयीं। उसके बाल बिखरे हुए

थे, चोली मसकी हुई। उस औरत ने आते ही आते आज़ाद को कोसना शुरू किया—तुम लोग गवाह रहना। यह मुझे अलग कमरे में ले गये और एक घंटे के बाद मुझे छोड़ा। मेरी जो हालत है, आप लोग देख रही हैं।

आज़ाद—खैरियत इसी में है कि अब आप जाइए।

औरत—अब मैं जाऊँ! अब किसकी होके रहूँ?

क्लारिसा—(फ्रांसीसी में) यह क्या माजरा है आज़ाद?

आजाद—कोई छटी हुई औरत है।

आज़ाद के तो होश उड़े हुए थे कि अच्छे घर बयाना दिया और वह चमक कर यही कहती थी—अच्छा, तुम्हीं क़सम खाओ कि तुम मेरे साथ अकेले कमरे में थे या नहीं?

आज़ाद—अब ज़लील हो कर यहाँ से जाओगी तुम। अजब मुसीबत में जान पड़ी है।

औरत—ऐ है, अब मुसीबत याद आयी! पहले क्या समझे थे?

आज़ाद—बस, अब ज़्यादा न बढ़ना।

औरत—गाड़ीवान से कहो, गाड़ी बरामदे में लाये।

आज़ाद—हाँ, खुदा के लिए तुम यहाँ से जाओ।

औरत—जाती तो हूँ, मगर देखो तो क्या होता है!

जब गाड़ी रवाना हुई तो खोजी ने अंदर आ कर पूछा—इनसे तुम्हारी कब की जान-पहचान थी?

आज़ाद—अरे भाई, आज तो ग़ज़ब हो गया।

खोजी—मना तो करता था कि इनसे दूर रहो, मगर आप सुनते किसकी हैं।

आज़ाद—झूठ बकते हो। तुमने तो कहा था कि आप जायँ, कुछ मुज़ायक़ा नहीं है। और अब निकले जाते हो।

खोजी—अच्छा साहब, मुझी से ग़लती हुई। मैंने गाड़ीवान को चकमा दे कर सारा हाल मालूम कर लिया। यह दोनों कुंदन की छोकरियाँ हैं। अब यह सारे शहर में मशहूर करेंगी कि आज़ाद का हमसे निकाह होनेवाला है।

आज़ाद—इस वक्त हमें बड़ी उलझन है भाई! कोई तदबीर सोचो।

खोजी—तदबीर तो यही है कि मैं कुंदन के पास जाऊँ और उसे समझा-बुझा कर ढर्रे पर ले आऊँ।

आज़ाद—तो फिर देर न कीजिए। उम्र भर आपका एहसान मानूँगा।

खोजी तो इधर रवाना हुए। अब आज़ाद ने दोनों लेडियों की तरफ़ देखा तो दोनों के चेहरे गुस्से से तमतमाये हुए थे। क्लारिसा एक नाविल पढ़ रही थी और मीडा सिर झुकाये हुए थी। उन दोनों को यक़ीन हो गया था कि औरत या तो आज़ाद की ब्याहता बीबी है या आशना। अगर जान-पहचान न होती तो उस कमरे में जा कर बैठने की दोनों में से एक को भी हिम्मत न होती। थोड़ी देर तक बिलकुल

सन्नाटा रहा, आखिर आज़ाद ने खुद ही अपनी सफ़ाई देनी शुरू की। बोले—किसी ने सच कहा है, 'कर तो डर, न कर तो डर'; मैंने इस औरत की आज तक सूरत भी न देखी थी। समझा कि कोई शरीफ़ज़ादी मुझसे मिलने आयी होगी। मगर ऐसी मक्कार और बेशर्म औरत मेरी नज़र से नहीं गुज़री।

दोनों लेडियों ने इसका कुछ जवाब न दिया। उन्होंने समझा कि आज़ाद हमें चकमा दे रहे हैं। अब तो आज़ाद के रहे-सहे हवास भी गायब हो गये। कुछ देर तक तो ज़ब्त किया मगर न रहा गया। बोले—मिस मीडा, तुमने इस मुल्क की मक्कार औरतें अभी नहीं देखीं।

मीडा—मुझे इन बातों से क्या सरोकार है।

आज़ाद—उसकी शरारत देखी?

मीडा—मेरा ध्यान उस वक़्त उधर न था।

आज़ाद—मिस क्लारिसा, तुम कुछ समझीं या नहीं।

क्लारिसा—मैंने कुछ ख़याल नहीं किया।

आज़ाद—मुझ सा अहमक़ भी कम होगा। सारी दुनिया से आ कर यहाँ चरका खा गया।

मीडा—अपने किये का क्या इलाज, जैसा किया, वैसा भुगतो।

आज़ाद—हाँ, यही तो मैं चाहता था कि कुछ कहो तो सही। मीडा, सच कहता हूँ, जो कभी पहले इसकी सूरत भी देखी हो। मगर इसने वह दाँव-पेंच किया कि बिलकुल अहमक़ बन गये।

मीडा—अगर ऐसा था तो उसे अलग कमरे में क्यों ले गये?

आज़ाद—इसी ग़लती का तो रोना है। मैं क्या जानता था कि वह यह रंग लायेगी।

मीडा—यह तो जो कुछ हुआ सो हुआ। अब आगे के लिए क्या फ़िक्र की है? उसकी बातचीत से मालूम होता था कि वह ज़रूर नालिश करेगी।

आज़ाद—इसी का तो मुझे भी खौफ़ है। खोजी को भेजा है कि जा कर उसे धमकायें। देखो, क्या करके आते हैं।

उधर खोजी गिरते-पड़ते कुंदन के घर पहुँचे, तो दो-तीन औरतों को कुछ बातें करते सुना। कान लगा कर सुनने लगे।

'बेटा, तुम तो समझती ही नहीं हो; बदनामी कितनी बड़ी है।'

'तो अम्माँ जान, बदनामी का ऐसा ही डर हो तो सभी न दब जाया करें?'

'दबते ही हैं। उस फ़ौज़ी अफसर से नहीं खड़े-खड़े गिनवा लिये!'

'अच्छा अम्माँजान, तुम्हें अख्तियार है; मगर नतीजा अच्छा न होगा।'

खोजी से अब न रहा गया। झल्ला कर बोले—ओ गीदी, निकल तो आ। देख तो कितनी क़रौलियाँ भोंकता हूँ। बढ़-बढ़के बातें बनाती है? नालिश करेगी, और बदनाम करेगी।

कुंदन ने यह आवाज़ सुनी तो खिड़की से झाँका। देखा, तो एक ठिंगना सा आदमी पैतरे बदल रहा है। महरी से कहा कि दरवाज़ा खोल कर बुला लो। महरी ने आ कर कहा—कौन साहब हैं ? आइए।

ख़ोजी अकड़ते हुए अंदर गये और एक मोढ़े पर बैठे। बैठना ही था कि सिर नीचे और टाँगें ऊपर! औरतें हँसने लगीं। ख़ैर, आप सँभल कर दूसरे मोढ़े पर बैठे और कुछ बोलना ही चाहते थे कि कुंदन सामने आयी और आते ही ख़ोजी को एक धक्का दे कर बोली—चूल्हे में जाय ऐसा मियाँ। बरसों के बाद आज सूरत दिखायी तो भेस बदल कर आया। निगोड़े, तेरा जनाज़ा निकले। तू अब तक था कहाँ ?

ख़ोजी—यह दिल्लगी हमको पसंद नहीं।

कुंदन—(धप लगा कर) तो शादी क्या समझ कर की थी ?

शादी का नाम सुन कर ख़ोजी की बाँछें खिल गयीं। समझे कि मुफ़्त में औरत हाथ आयी। बोले—तो शादी इसलिए की थी कि जूतियाँ खायें ?

कुंदन—आख़िर, तू इतने दिन था कहाँ ? ला, क्या कमा कर लाया है।

यह कह कर कुंदन ने उनकी जेब टटोली तो तीन रुपये और कुछ पैसे निकले। वह निकाल लिये। वह बेचारे हाँ-हाँ करते ही रहे कि सबों ने उन्हें घर से निकाल कर दरवाज़ा बंद कर दिया। ख़ोजी वहाँ से भागे और रोनी सूरत बनाये हुए होटल में दाख़िल हुए।

आज़ाद ने पूछा—कहो भाई, क्या कर आये ? ऐं! तुम तो पिटे हुए से जान पड़ते हो।

ख़ोजी—ज़रा दम लेने दो। मामला बहुत नाज़ुक है। तुम तो फँसे ही थे, मैं भी फँस गया। इस सूरत का बुरा हो, जहाँ जाता हूँ वहीं चाहनेवाले निकल आते हैं। एक पंडित ने कहा था कि तुम्हारे पास मोहिनी है। उस वक़्त तो उसकी बात मुझे कुछ न जँची, मगर अब देखता हूँ तो उसने बिलकुल सच कहा था।

आज़ाद—तुम तो हो सिड़ी। ऐसे ही तो बड़े हसीन हो। मेरी बाबत भी कुंदन से कुछ बातचीत हुई या आँखें ही सेकते रहे ?

ख़ोजी—बड़े घर की तैयारी कर रखो। बंदा वहाँ भी तुम्हारे साथ होगा।

आज़ाद—बाज़ आया आपके साथ से। तुम्हें खिलाना-पिलाना सब अकारथ गया। बेहतर है, तुम कहीं और चले जाओ।

इस पर ख़ोजी बहुत बिगड़े। बोले—हाँ साहब, काम निकल गया न ? अब तो मुझसे बुरा कोई न होगा।

ख़ानसामा—क्या है ख़्वाजा जी, क्यों बिगड़ गये ?

ख़ोज़ी—तू चुप रह कुली, ख़्वाजा जी! और सुनिएगा ?

ख़ानसामा—मैंने तो आपकी इज़्ज़त की थी!

ख़ोजी—नहीं, आप माफ़ कीजिए। क्या ख़ूब! टके का आदमी और हमसे इस तरह पर पेश आये। मगर तुम क्या करोगे भाई, हमारा नसीबा ही फिरा हुआ है।

ख़ैर, जो चाहो, सुनाओ। अब हम यहाँ से कूच करते हैं। जहाँ हमारे क़द्रदाँ हैं, वहाँ जायँगे।

ख़ानसामा—यहाँ से बढ़के आपका कौन क़द्रदाँ होगा? खाना आपको दें, कपड़ा आपको दें, उस पर दोस्त बना कर रखें; फिर अब और क्या चाहिए?

खोजी—सच है भाई, सच है। हम आज़ाद के ग़ुलाम तो हैं ही। उन्हीं से क़सम लो कि उनके बाप-दादा हमारे बुज़ुर्गों के टुकड़े खा कर पले थे या नहीं।

आज़ाद—आपकी बातें सुन रहा हूँ। ज़रा इधर देखिएगा।

खोजी—सौ सोनार की, तो एक लोहार की।

आज़ाद—हमारे बाप-दादा आपके टुकड़खोरे थे?

खोजी—जी हाँ, क्या इसमें कुछ शक भी है?

इतने में ख़ानसामा ने दूर से कहा—ख्वाजा साहब, हमने तो सुना है कि आपके वालिद अंडे बेचा करते थे।

इतना सुनना था कि खोजी आग हो गये और एक तवा उठा कर ख़ानसामा की तरफ़ दौड़े। तवा बहुत गर्म था। अच्छी तरह उठा भी नहीं पाये थे कि हाथ जल गया। झिझक कर तवे को जो फेंका तो खुद भी मुँह के बल गिर पड़े।

ख़ानसामा—या अली, बचाइयो।

बैरा—तवा तो जल रहा था, हाथ जल गया होगा।

मीडा—डाक्टर को फ़ौरन बुलाओ।

ख़ानसामा—उठ बैठो भाई, कैसे पहलवान हो!

आज़ाद—ख़ुदा ने बचा लिया, वरना जान ही गयी थी।

ख्वाजा साहब चुपचाप पड़े हुए थे। ख़ानसामा ने बरामदे में एक पलँग बिछाया और दो आदमियों ने मिल कर खोजी को उठाया कि बरामदे में ले जायँ। उसी वक़्त एक आदमी ने कहा—अब बचना मुश्किल है। खोजी अक़्ल के दुश्मन तो थे ही। उनको यक़ीन हो गया कि अब आख़िरी वक़्त है। रहे-सहे हवास भी ग़ायब हो गये। ख़ानसामा और होटल के और नौकर-चाकर उनको बनाने लगे।

ख़ानसामा—भाई, दुनिया इसी का नाम है। जिंदगी का एतबार क्या।

बैरा—इसी बहाने मौत लिखी थी।

मुहर्रिर—और अभी नौजवान आदमी हैं। इनकी उम्र ही क्या है!

आज़ाद—क्या, हाल क्या है? नब्ज़ का कुछ पता है?

ख़ानसामा—हुज़ूर, अब आख़िरी वक़्त है। अब कफ़न-दफ़न की फ़िक्र कीजिए। यह सुन कर खोजी जल-भुन गये। मगर आख़िरी वक़्त था, कुछ बोल न सके।

आज़ाद—किसी मौलवी को बुलाओ।

मुहर्रिर—हुज़ूर, यह न होगा। हमने कभी इनको नमाज़ पढ़ते नहीं देखा।

आज़ाद—भई, इस वक़्त यह ज़िक्र न करो।

मुहर्रिर—हुज़ूर मालिक हैं, मगर यह मुसलमान नहीं हैं।

खोजी का बस चलता तो मुहर्रिर की बोटियाँ नोच लेते; मगर इस वक़्त वह मर रहे थे।

खानसामा—क़ब्र खुदवाइए, अब इनमें क्या है?

बैरा—इसी सामनेवाले मैदान में इनको तोप दो।

खोजी का चेहरा सुर्ख़ हो गया। कम्बख़्त कहता है, तोप दो! यह नहीं कहता कि आपको दफ़न कर दो।

आज़ाद—बड़ा अच्छा आदमी था बेचारा।

खानसामा—लाख सिड़ी थे, मगर थे नेक।

बैरा—नेक क्या थे। हाँ, यह कहो कि किसी तरह निभ गयी।

खोजी अपना ख़ून पीके रह गये, मगर मजबूर थे।

मुहर्रिर—अब इनको मिलके तोप ही दीजिए।

आज़ाद—घड़ी दो में मुरलिया बाजेगी।

बैरा—ख्वाजा साहब, कहिए, अब कितनी देर में मुरलिया बाजेगी?

आज़ाद—अब इस वक़्त क्या बतायें बेचारे, अफ़सोस है!

खानसामा—अफ़सोस क्यों हुजूर, अब मरने के तो दिन ही थे। जवान-जवान मरते जाते हैं। यह तो अपनी उम्र तमाम कर चुके। अब क्या आक़बत के बोरिये बटोरेंगे?

आज़ाद—हाँ, है तो ऐसा ही, मगर जान बड़ी प्यारी होती है। आदमी चाहे दो सौ बरस का होके मरे, मगर मरते वक़्त यही जी चाहता है कि दस बरस और ज़िंदा रहता।

खानसामा—तो हुजूर, यह तमन्ना तो उसको हो, जिसका कोई रोनेवाला हो। इनके कौन बैठा है।

इतने में होटल का एक आदमी एक चपरासी को हकीम बना कर लाया!

आज़ाद—कुर्सी पर बैठिए हकीम साहब।

हकीम—यह गुस्ताख़ी मुझसे न होगी। हुजूर बैठें।

आज़ाद—इस वक़्त सब माफ़ है।

हकीम—यह बेअदबी मुझसे न होगी।

आज़ाद—हकीम साहब, मरीज़ की जान जाती है और आप तकल्लुफ़ करते हैं।

हकीम—चाहे मरीज़ मर जाय; मगर मैं अदब को हाथ से न जाने दूँगा।

खोजी को हकीम की सूरत से नफ़रत हो गयी।

आज़ाद—आप तकल्लुफ़ में मरीज़ की जान ले लेंगे।

हकीम—अगर मौत है तो मरेगा ही, मैं अपनी आदत क्यों छोड़ूँ?

आज़ाद ने खोजी के कान में ज़ोर से कहा—हकीम साहब आये हैं।

खोजी ने हकीम साहब को सलाम किया और हाथ बढ़ाया।

हकीम—(नब्ज़ पर हाथ रख कर) अब क्या बाक़ी है, मगर अभी तीन-चार

दिन की नब्ज़ है; इस वक़्त इनको ठंडे पानी से नहलाया जाय तो बेहतर है, बल्कि अगर पानी में बर्फ़ डाल दीजिए तो और भी बेहतर है।

आज़ाद—बहुत अच्छा। अभी लीजिए।

हकीम—बस, एक दो मन बर्फ़ काफ़ी होगी।

इतने में मिस मीडा ने आज़ाद से कहा—तुम भी अजीब आदमी हो। दो-चार होटलवालों को ले कर एक ग़रीब का ख़ून अपनी गरदन पर लेते हो। खोजी की चारपाई हमारे कमरे के सामने बिछवा दो और इन आदमियों से कह दो कि कोई खोजी के क़रीब न आये।

इस तरह खोजी की जान बची। आराम से सोये। दूसरे दिन घूमते-घामते एक चंडूख़ाने में जा पहुँचे और छींटे उड़ाने लगे। एकाएक हुस्नआरा का ज़िक्र सुन कर उनके कान खड़े हुए। कोई कह रहा था कि हुस्नआरा पर एक शाहज़ादे आशिक़ हुए हैं, जिनका नाम क़मरुद्दौला है। खोजी बिगड़ कर बोले—ख़बरदार, जो अब किसी ने हुस्नआरा का नाम फिर लिया। शरीफ़ज़ादियों का नाम बद करता है बे!

एक चंडूबाज़—हम तो सुनी-सुनाई कहते हैं साहब। शहर भर में यह ख़बर मशहूर है, आप किस-किसकी ज़बान रोकिएगा।

खोजी—झूठ है, बिलकुल झूठ।

चंडूबाज़—अच्छा, हम झूठ कहते हैं तो ईदू से पूछ लीजिए।

ईदू—हमने तो यह सुना था कि बेगम साहब ने अख़बार में कुछ लिखा था तो वह शाहज़ादे ने पढ़ा और आशिक़ हो गये, फ़ौरन बेगम साहब के नाम से ख़त लिखा और शायद किसी बाँके को मुक़र्रर किया है कि आज़ाद को मार डाले। ख़ुदा जाने, सच है या झूठ।

खोजी—तुमने किससे सुनी है यह बात? इस धोखे में न रहना। थाने पर चल-कर गवाही देनी होगी।

ईदू—हुज़ूर क्या आज़ाद के दोस्त हैं?

खोजी—दोस्त नहीं हूँ, उस्ताद हूँ। मेरा शागिर्द है।

ईदू—आपके कितने शागिर्द होंगे?

खोजी—यहाँ से ले कर रूम और शाम तक।

खोजी शाहज़ादे का पता पूछते हुए लाल कुएँ पर पहुँचे। देखा तो सैकड़ों आदमी पानी भर रहे हैं।

खोजी—क्यों भाई, यह कुआँ तो आज तक देखने में नहीं आया था।

भिश्ती—क्या कहीं बाहर गये थे आप?

खोजी—हाँ भई, बड़ा लम्बा सफ़र करके लौटा हूँ।

भिश्ती—इसे बने तो चार महीने हो गये।

खोजी—अहा-हा! यह कहो, भला किसने बनवाया है?

भिश्ती—शाहज़ादा क़मरुद्दौला ने।

खोजी—शाहज़ादा साहब रहते कहाँ हैं ?

भिश्ती—तुम तो मालूम होता है, इस शहर में आज ही आये हो। सामने उन्हीं की बारादरी तो है।

खोजी यहाँ से महल के चोबदार के पास पहुँचे और अलेक-सलेक करके बोले—भाई, कोई नौकरी दिलवाते हो।

दरबान—दारोगा साहब से कहिए, शायद मतलब निकले।

खोजी—उनसे कब मुलाक़ात होगी ?

दरबान—उनके मकान पर जाइए, और कुछ चटाइए।

खोजी—भला शाहज़ादे तक रसाई हो सकती है या नहीं ?

दरबान—अगर कोई अच्छी सूरत दिखाओ तो पौ बारह हैं।

इतने में अंदर से एक आदमी निकला। दरबान ने पूछा—किधर चले शेख़ जी ?

शेख़—हुक्म हुआ है कि किसी रम्माल को बहुत जल्द हाज़िर करो।

खोजी—तो हमको ले चलिए। इस फ़न में हम अपना सानी नहीं रखते।

शेख़—ऐसा न हो, आप वहाँ चल कर बेवकूफ़ बनें।

खोजी—अजी, ले तो चलिए। ख़ुदा ने चाहा तो सुर्ख़रू ही रहूँगा।

शेख़ साहब उनको ले कर बारादरी में पहुँचे। शाहज़ादा साहब मसनद लगाये पेचवान पी रहे थे और मुसाहब लोग उन्हें घेरे बैठे हुए थे। खोजी ने अदब से सलाम किया और फ़र्श पर जा बैठे।

आग़ा—हुज़ूर, अगर हुक्म हो तो तारे आसमान से उतार लूँ।

मुन्ने—हक़ है। ऐसा ही रोब है हमारे सरकार का।

मिरज़ा—ख़ुदावंद, अब हुज़ूर की तबीयत का क्या हाल है ?

आग़ा—ख़ुदा का फ़ज़ल है। ख़ुदा ने चाहा तो सुबह-शाम शिप्पा लड़ा ही चाहता है। हुज़ूर का नाम सुन कर कोई निकाह से इनकार करेगा भला !

मुन्ने—अजी, परिस्तान की हूर हो तो लौंडी बन जाय।

खोजी—ख़ुदा गवाह है कि शहर में दूसरा रईस टक्कर का नहीं है। यह मालूम होता है कि ख़ुदा ने अपने हाथ से बनाया है।

मिरज़ा—सुभान-अल्लाह ! वाह ! ख़ाँ साहब, वाह ! सच है।

शेख़—ख़ाँ साहब नहीं, ख़्वाजा साहब कहिए।

मिरज़ा—अजी, वह कोई हों, हम तो इनसाफ़ के लोग हैं। ख़ुदा को मुँह दिखाना है। क्या बात कही है ! ख़्वाजा साहब, आप तो पहली मरतबा इस सोहबत में शरीक हुए हैं। रफ़्ता-रफ़्ता देखिएगा कि हुज़ूर ने कैसा मिज़ाज पाया है।

शेख़—बूढ़ों में बूढ़े, जवानों में जवान।

खोजी—मुझसे कहते हो। शहर में कौन रईस है, जिससे मैं वाक़िफ़ नहीं ?

आग़ा—भई मिरज़ा, अब फ़तह है। उधर का रंग फीका हो रहा है। अब तो इधर ही झुकी हुई हैं।

मिरज़ा—वल्लाह ! हाथ लाइएगा । मरदों का वार ख़ाली जाय ?

आग़ा—यह सब हुज़ूर का इक़बाल है ।

क़मरुद्दौला—मैं तो तड़प रहा था, ज़िंदगी से बेज़ार था ! आप लोगों की बदौलत इतना तो हो गया ।

ख़ोजी हैरान थे कि यह क्या माजरा है । हुस्नआरा को यह क्या हो गया कि क़मरुद्दौला पर रीझीं ! कभी यक़ीन आता था, कभी शक होता था ।

आग़ा—हुज़ूर का दूर-दूर तक नाम है ।

मिरज़ा—क्यों नहीं, लंदन तक ।

ख़ोजी—कह दिया न भाईजान, कि दूसरा नज़र नहीं आता ।

शाहज़ादा—(आग़ा से) यह कहाँ रहते हैं और कौन हैं ?

ख़ोजी—जी, ग़रीब का मकान मुर्ग़ी-बाज़ार में है ।

आग़ा—जभी आप कुड़क रहे थे ।

मिरज़ा—हाँ, अंडे बेचते तो हमने भी देखा था ।

ख़ोजी—जभी आप सदर-बाजार में टापा करते हैं ।

शाहज़ादा—ख़्वाजा साहब ज़िले में ताक़ हैं ।

ख़ोजी—आपकी क़द्रदानी है ।

बातों-बातों में यहाँ की टोह ले कर ख़ोजी घर चले । होटल में पहुँचे तो आज़ाद को बूढ़े मियाँ से बातें करते देखा । ललकार कर बोले—लो, मैं भी आ पहुँचा ।

आज़ाद—गुल न मचाओ, हम लोग न जाने कैसी सलाह कर रहे हैं, तुमको क्या; बे-फ़िक्रे हो । कुछ बसंत की भी ख़बर है ? यहाँ एक नया गुल खिला है !

ख़ोजी—अजी, हमें सब मालूम हैं । हमें क्या सिखाते हो ।

आज़ाद—तुमसे किसने कहा ?

ख़ोजी—अजी, हमसे बढ़ कर टोहिया कोई हो तो ले । अभी उन्हीं क़मरुद्दौला के यहाँ जा पहुँचा । पूरे एक घंटे तक हमसे-उनसे बातचीत रही । आदमी तो ख़ब्ती सा है और बिलकुल ज़ाहिल । मगर उसने हुस्नआरा को कहाँ से देख लिया ? छोकरी है चुलबुली । कोठे पर गयी होगी, बस उसकी नज़र पड़ गयी होगी ।

बूढ़े मियाँ—ज़रा ज़बान सँभाल कर !

ख़ोजी—आप जब देखो, तिरछे ही हो कर बातें करते हैं ? क्या कोई आपका दिया खाता है या आपका दबैल है ? बड़े अक़्लमंद आप ही तो हैं एक !

इतने में फिटन पर एक अँगरेज आज़ाद को पूछता हुआ आ पहुँचा । आज़ाद ने बढ़ कर उससे हाथ मिलाया और पूछा तो मालूम हुआ कि वह फ़ौज़ी अफ़सर है । आज़ाद को एक जलसे का चेयरमैन बनने के लिए कहने आया है ।

आज़ाद—इसके लिए आपने क्यों इतनी तकलीफ़ की ? एक ख़त काफ़ी था ।

साहब—मैं चाहता हूँ कि आप इसी वक़्त मेरे साथ चलें । लेक्चर का वक़्त बहुत क़रीब है ।

आज़ाद साहब के साथ चल दिये। टाउन-हाल में बहुत से आदमी जमा थे। आजाद के पहुँचते ही लोग उन्हें देखने के लिए टूट पड़े। और जब वह बोलने के लिए मेज़ के सामने खड़े हुए तो चारों तरफ़ समा बँध गया। जब वह बैठना चाहते तो लोग गुल मचाते थे, अभी कुछ और फ़रमाइए। यहाँ तक कि आज़ाद ही के बोलते-बोलते वक़्त पूरा हो गया और साहब बहादुर के बोलने की नौबत न आयी। शाहज़ादा क़मरुद्दौला भी मुसाहबों के साथ जलसे में मौजूद थे। ज्यों ही आज़ाद बैठे, उन्होंने आग़ा से कहा—सच कहना, ऐसा ख़ूबसूरत आदमी देखा है?

आग़ा—बिलकुल शेर मालूम होता है।

शाहज़ादा—ऐसा जवान दुनिया में न होगा।

आग़ा—और तक़रीर कितनी प्यारी है!

शाहज़ादा—क्यों साहब, जब हम मरदों का यह हाल है, तो औरतों का क्या हाल होता होगा!

आग़ा—औरत क्या, परी आशिक़ हो जाय।

शाहज़ादा साहब जब यहाँ से चले तो दिल में सोचा—भला आज़ाद के सामने मेरी दाल क्या गलेगी! मेरा और आज़ाद का मुक़ाबिला क्या! अपनी हिमाक़त पर बहुत शर्मिंदा हुए। ज्योंही मकान पर पहुँचे, मुसाहबों ने बेपर की उड़ानी शुरू की।

मिरज़ा—खुदावंद, आज तो मुँह मीठा कराइए। वह खुशखबरी सुनाऊँ कि फड़क जाइए। हुजूर उनके यहाँ एक महरी नौकर है। वह मुझसे कहती थी कि आज आपके सरकार की तसवीर का आज़ाद की तसवीर से मुक़ाबिला किया और बोलीं—मेरी शाहज़ादे पर जान जाती है।

और मुसाहबों ने भी खुशामद करनी शुरू की; मगर नवाब साहब ने किसी से कुछ न कहा। थोड़ी देर तक बैठे रहे। फिर अंदर चले गये। उनके जाने के बाद मुसाहबों ने आग़ा से पूछा—अरे मियाँ! बताओ तो, क्या माज़रा है? क्या सबब है कि सरकार आज इतने उदास हैं?

आग़ा—भई, कुछ न पूछिए। बस, यही समझ लो कि सरकार की आँखें खुल गयीं।

१०९

आज़ाद के आने के बाद ही बड़ी बेगम ने शादी की तैयारियाँ शुरू कर दी थीं। बड़ी बेगम चाहती थीं कि बरात खूब धूम-धाम से आये। आज़ाद धूम-धाम के ख़िलाफ़ थे। इस पर हुस्नआरा की बहनों में बातें होने लगीं—

बहार बेगम—यह सब दिखाने की बातें है। किसी से दो हाथी माँगे, किसी से दो-चार घोड़े; कहीं से सिपाही आये, कहीं से बरछी-बरदार! लो साहब, बरात आयी है। माँगे-ताँगे की बरात से फ़ायदा?

बड़ी बेगम—हमको तो यह तमन्ना नहीं है कि बरात धूम ही से दरवाज़े पर आये। मगर कम से कम इतना तो ज़रूर होना चाहिए कि जग-हँसाई न हो।

जानी बेगम—एक काम कीजिए, एक ख़त लिख भेजिए।

गेती—हमारे ख़ानदान में कभी ऐसा हुआ ही नहीं। हमने तो आज तक नहीं सुना। धुनिये-जुलाहों के यहाँ तक तो अँगरेजी बाजा बरात के साथ होता है।

बहार—हाँ साहब, बरात तो वही है, जिसमें ५० हाथी, बल्कि फ़ीलख़ाने का फ़ीलखाना हो, साँड़िनियों की क़तार दो महल्ले तक जाय। शहर भर के घोड़े और हवादार और तामदान हों और कई रिसाले, बल्कि तोपख़ाना भी ज़रूर हो। क़दम-क़दम पर आतशबाजी छूटती हो और गोले दग़ते हों। मालूम हो कि बरात क्या, क़िला फ़तह किया जाता है।

नाज़ुक—यह सब बुरी बातें हैं, क्यों?

बहार—जी नहीं, इन्हें बुरी कौन कहेगा भला।

नाज़ुक—अच्छा, वह जानें, उनका काम जाने।

हुस्नआरा ने जब देखा कि आज़ाद की ज़िद से बड़ी बेगम नाराज़ हुई जाती हैं तो आज़ाद के नाम एक ख़त लिखा—

प्यारे आज़ाद,

माना कि तुम्हारे ख़यालात बहुत ऊँचे हैं, मगर राह-रस्म में दख़ल देने से क्या नतीजा निकलेगा। अम्माँजान ज़िद करती हैं, और तुम इन्कार, ख़ुदा ही ख़ैर करे। हमारी ख़ातिर से मान लो, और जो वह कहें सो करो।

आज़ाद ने इसका जवाब लिखा—जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। मुझे कोई उज्र नहीं है।

हुस्नआरा ने यह ख़त पढ़ा तो तस्कीन हुई। नाज़ुकअदा से बोलीं—लो बहन, जवाब आ गया।

नाज़ुक—मान गये या नहीं?

हुस्नआरा—न कैसे मानते।

नाज़ुक—चलो, अब अम्माँजान को भी तस्कीन हो गयी।

बहार—मिठाइयाँ बाँटो। अब इससे बढ़ कर खुशी की और क्या बात होगी?

नाज़ुक—आखिर फिर रुपया अल्लाह ने किस काम के लिए दिया है ?

बहार—वाह री अक़्ल ! बस, रुपया इसी लिए है कि आतशबाज़ी में फूँके या सजावट में लुटाये। और कोई काम ही नहीं ?

नाज़ुक—और आखिर क्या काम है ? क्या परचून की दूकान करे ? चने बेचे ? कुछ मालूम तो हो कि रुपया किस काम में खर्च किया जाय ? दिल का हौसला और कैसे निकाले !

बहार—अपनी-अपनी समझ है।

नाज़ुक—खुदा न करे कि किसी की ऐसी उलटी समझ हो। लो साहब, अब बरात भी गुनाह है। हाथी, घोड़े, बाजा सब ऐब में दाखिल। जो बरात निकालते हैं, सब गधे हैं। एक तुम और दूसरे मियाँ आज़ाद दो आदमियों पर अक़्ल खतम हो गयी। ज़रा आने तो दो मियाँ को, सारी शेखी निकल जायगी।

दूसरे दिन बड़ी धूम-धाम से माँझे की तैयारी हुई। आज़ाद की तरफ़ खोजी मुहतमिम थे। आपने पुराने ढंग की जामदानी की अचकन पहनी जिसमें क़ीमती बेल टँकी हुई थी। सिर पर एक बहुत बड़ा शमला। कंधे पर कश्मीर का हरा दुशाला। इस ठाट से आप बाहर आये तो लोगों ने तालियाँ बजायीं। इस पर आप बहुत ही खफ़ा हो कर बोले—यह तालियाँ हम पर नहीं बजाते हो। यह अपने बाप-दादों पर तालियाँ बजाते हो। यह खास उनका लिबास है। कई लौंडों ने उनके मुँह पर हँसना शुरू किया, मगर इंतज़ाम के धुन में खोजी को और कुछ न सूझता था। कड़क कर बोले—हाथियों को उसी तरफ रहने दो। बस, उसी लाइन में ला-ला कर हाथी लगाओ।

एक फ़ीलवान—यहाँ कहीं जगह भी है ? सबका भुरता बनायेंगे आप ?

खोजी—चुप रह, बदमाश !

मिरज़ा साहब भी खड़े तमाशा देख रहे थे। बोले—भई, इस फ़न में तो तुम उस्ताद हो।

खोजी—(मुसकिरा कर) आपकी क़द्रदानी है।

मिरज़ा—आपका रोब सब मानते हैं।

खोजी—हम किस लायक़ हैं भाईजान ! दोस्तों का इक़बाल है।

ग़रज़ इस धूम-धाम से माँझा दुलहिन के मकान पर पहुँचा कि सारे शहर में शोर मच गया। सवारियाँ उतरीं। मीरासिनों ने समधिनों को गालियाँ दीं। मियाँ आज़ाद बाहर से बुलवाये गये और उनसे कहा गया कि मढे के नीचे बैठिए। आज़ाद बहुत इनकार करते रहे; मगर औरतों ने एक न सुनी। नाज़ुक बेगम ने कहा—आप तो अभी से बिचकने लगे। अभी तो माँझे का जोड़ा पहनना पड़ेगा।

आज़ाद—यह मुझसे नहीं होने का।

जानी बेगम—अब चुपचाप पहन लो, बस !

आज़ाद—क्या फ़ज़ूल रस्म है !

जानी—ले, अब पहनते हो कि तक़रार करते हो? हमसे जनरैली न चलेगी।

बेगम—भला, यह भी कोई बात है कि माँझे का जोड़ा न पहनेंगे?

आज़ाद—अगर आपकी खातिर इसी में है तो लाइए, टोपी दे लूँ।

नाज़ुक बेगम—जब तक माँझे का पूरा जोड़ा न पहनोगे, यहाँ से उठने न पाओगे।

आज़ाद ने बहुत हाथ जोड़े, गिड़गिड़ा कर कहा कि खुदा के लिए मुझे इस पीले जोड़े से बचाओ। मगर कुछ बस न चला। सालियों ने अँगरखा पहनाया, कंगन बाँधा। सारी बातें रस्म के मुताबिक़ पूरी हुईं।

जब आज़ाद बाहर गये तो सब बेगमें मिल कर बाग़ की सैर करने चलीं। गेतीआरा ने एक फूल तोड़ कर जानी बेगम की तरफ़ फेंका। उसने वह फूल रोक कर उन पर ताक के मारा तो आँचल से लगता हुआ चमन में गिरा। फिर क्या था, बाग़ में चारों तरफ़ फूलों की मार होने लगी। इसके बाद नाज़ुकअदा ने यह ग़ज़ल गायी।

वाक़िफ़ नहीं है क़ासिद मेरे ग़मे-निहाँ से,
वह काश हाल मेरा सुनते मेरी ज़बाँ से।
क्यों त्योरियों पर बल है, माथे पर क्यों शिकन है?
क्यों इस क़दर हो बरहम, कुछ तो कहो ज़बाँ से।
कोई तो आशियाना सैयाद ने जलाया,
काली घटाएँ रो कर पलटी हैं बोस्ताँ से।
जाने को जाओ लेकिन, यह तो बताते जाओ,
किस तरह बारे फ़ुरक़त उठेगा नातवाँ से।

बहार—जी चाहता है, तुम्हारी आवाज़ को चूम लूँ।

नाज़ुक—और मेरा जी चाहता है कि तुम्हारी तारीफ़ चूम लूँ।

बहार—हम तुम्हारी आवाज़ के आशिक़ हैं।

नाज़ुक—आपकी मेहरबानी। मगर कोई खूबसूरत मर्द आशिक़ हो तो बात है। तुम हम पर रीझीं तो क्या? कुछ बात नहीं।

बहार—बस, इन्हीं बातों से लोग उँगलियाँ उठाते हैं। और तुम नहीं छोड़तीं।

जानी—सच्ची आवाज़ भी कितनी प्यारी होती है!

नाज़ुक—क्या कहना है। अब दो ही चीज़ों में तो असर है, एक गाना, दूसरे हुस्न। अगर हमको अल्लाह ने ऐसा हुस्न न दिया होता, तो हमारे मियाँ हम पर क्यों रीझते?

बहार—तुम्हारा हुस्न तुम्हारे मियाँ को मुबारक हो! हम तो तुम्हारी आवाज़ पर मिटे हुए हैं।

नाज़ुक—और मैं तुम्हारे हुस्न पर जान देती हूँ। अब मैं भी बनाव-चुनाव करना तुमसे सीखूँगी।

नाज़ुक—बहन, अब तुम झेंपती हो। जब कभी तुम मिलीं, तुम्हें बनते-ठनते देखा। मुझसे दो-तीन साल बड़ी हो, मगर बारह बरस की बनी रहती हो। हैं तुम्हारे मियाँ क़िस्मत के धनी।

बहार—सुनो बहन, हमारी राय यह है कि अगर औरत समझदार हो, तो मर्द की ताक़त नहीं कि उसे बाहर का चस्का पड़े।

साचिक़ के दिन जब चाँदी का पिटारा बाहर आया, तो ख़ोजी बार-बार पिटारे का ढकना उठा कर देखने लगे कि कहीं शीशियाँ न गिरने लगें। मोतिये का इत्र ख़ुदा जाने, किन दिक़्क़तों से लाया हूँ। यह वह इत्र है, जो आसफ़ुद्दौला के यहाँ से बादशाह की बेगम के लिए गया था।

एक आदमी ने हँस कर कहा—इतना पुराना इत्र हुज़ूर को कहाँ से मिल गया!

ख़ोजी—हुँः! कहाँ से मिल गया! मिल कहाँ से जाता? महीनों दौड़ा हूँ, तब जाके यह चीज़ हाथ लगी है।

आदमी—क्यों साहब, यह बरसों का इत्र चिटक न गया होगा?

ख़ोजी—वाह! अक़्ल बड़ी कि भैंस? बादशाही कोठों के इत्र कहीं चिटका करते हैं? यह भी उन गंधियों का तेल हुआ, जो फेरी लगाते फिरते हैं!

आदमी—और क्यों साहब, केवड़ा कहाँ का है?

ख़ोजी—केवड़िस्तान एक मुक़ाम है, कजलीवन के पास। वहाँ के केवड़ों से खींचा गया है।

आदमी—केवड़िस्तान! यह नाम तो आज ही सुना।

ख़ोजी—अभी तुमने सुना ही क्या है? केवड़िस्तान का नाम ही सुन कर घबड़ा गये?

आदमी—क्यों हुज़ूर, यह कजलीवन कौन सा है? वही न, जहाँ घोड़े बहुत होते हैं?

ख़ोजी—(हँस कर) अब बनाते हैं आप। कजलीवन में घोड़े नहीं, ख़ास हाथियों का जंगल है।

आदमी—क्यों जनाब, केवड़िस्तान से तो केवड़ा आया, और गुलाब कहाँ का है? शायद गुलाबिस्तान का होगा?

ख़ोजी—शाबाश! यह हमारी सोहबत का असर है कि अपने परों आप उड़ने लगे। गुलाबिस्तान कामरू-कमच्छा के पास है, जहाँ का जादू मशहूर है।

रात को जब साचिक़ का जलूस निकला तो ख़ोजी ने एक पनशाखेवाली का हाथ पकड़ा और कहा—जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ा।

वह बिगड़ कर बोली—दुर मुए! दाढ़ी झुलस दूँगी, हाँ। आया वहाँ से बरात का दारोग़ा बनके, सिवा मुरहेपन के दूसरी बात नहीं।

ख़ोजी—निकाल दो इस हरामज़ादी को यहाँ से।

औरत—निकाल दो इस मूड़ीकाटे को।

खोजी—अब मैं छूरी भोंक दूँगा, बस !

औरत—अपने पनशाखे से मुँह झुलस दूँगी। मुआ दीवाना, औरतों को रास्ते में छेड़ता चलता है।

खोजी—अरे मियाँ कांस्टेबिल, निकाल दो इस औरत को।

औरत—तू खुद निकाल दे, पहले।

जलूस के साथ कई बिगड़े दिल भी थे। उन्होंने खोजी को चकमा दिया—जनाब, अगर इसने सज़ा न पायी तो आपकी बड़ी किरकिरी होगी। बदरोबी हो जायगी। आखिर, यह फ़ैसला हुआ, आप कमर कस कर बड़े जोश के साथ पनशाखेवाली की तरफ़ झपटे। झपटते ही उसने पनशाखा सीधा किया और कहा—अल्लाह की क़सम ! न झुलस दूँ तो अपने बाप की नहीं।

लोगों ने खोजी पर फबतियाँ कसनी शुरू कीं।

एक—क्यों मेजर साहब, अब तो हारी मानी ?

दूसरा—एं ! करौली और छूरी क्या हुई !

तीसरा—एक पनशाखेवाली से नहीं जीत पाते, बड़े सिपाही की दुम बने हैं !

औरत—क्या दिल्लगी है ! ज़रा जगह से बढ़ा, और मैंने दाढ़ी और मूँछ दोनों झुलस दिया।

खोजी—देखो, सब के सब देख रहे हैं कि औरत समझ कर इसको छोड़ दिया। वरना कोई देव भी होता तो हम बे क़त्ल किये न छोड़ते इस वक़्त।

जब साचिक़ दुलहिन के घर पहुँचा, तो दुलहिन की बहनों ने चंदन से समधिन की माँग भरी। हुस्नआरा का निखार आज देखने के काबिल था। जिसने देखा, फड़क गयी। दुलहिन को फूलों का गहना पहनाया गया। इसके बाद छड़ियों की मार होने लगी। नाज़ुकअदा और जानी बेगम के हाथ में फूलों की छड़ियाँ थीं। समधिनों पर इतनी छड़ियाँ पड़ीं की बेचारी घबड़ा गयीं।

जब माँझे और साचिक की रस्म अदा हो चुकी तो मेहँदी का जलूस निकला। दुलहिन के यहाँ महफिल सजी हुई थी। डोमिनियाँ गा रही थीं। कमरे की दीवारें इस तरह रँगी हुई थीं कि नज़र नहीं ठहरती थी। छतगीर की जगह सुर्ख़ ज़रबफ़्त लगाया गया था। उस पर सुनहरी कलाबत्तू की झालर थी। फ़र्श भी सुर्ख़ मखमल का था। झाड़ और कँवल, मृदंग और हाँड़ियाँ सब सुर्ख़। कमरा शीशमहल हो गया था। बेगमें भारी-भारी जोड़े पहने चहकती फिरती थीं। इतने में एक सुखपाल ले कर महरियाँ सहन में आयीं। उस पर से एक बेगम साहब उतरीं, जिनका नाम परीबानू था।

सिपहआरा बोलीं—हाँ, अब नाज़ुकअदा बहन की जवाब देनेवाली आ गयीं। बराबर की जोड़ है ! यह कम न वह कम।

रूहअफ़ज़ा—नाम बड़ा प्यारा है।

नाज़ुक—प्यारा क्यों न हो। इनके मियाँ ने यह नाम रखा है।

परीबानू—और तुम्हारे मियाँ ने तुम्हारा नाम क्या रखा है। चरबाँक महल !

इस पर बड़ी हँसी उड़ी। बारह बजे रात को मेहँदी रवाना हुई। जब जलूस सज गया तो ख्वाजा साहब आ पहुँचे और आते ही गुल मचाना शुरू किया—सब चीज़ें क़रीने के साथ लगाओ और मेरे हुक्म के बग़ैर कोई कदम भी आगे न रखे। वरना बुरा होगा।

सजावट के तख्त बड़े-बड़े कारीगरों से बनवाये गये थे। जिसने देखा, दंग हो गया।

एक—यों तो सभी चीजें अच्छी हैं, मगर तख्त सबसे बढ़-चढ़ कर हैं।

दूसरा—बड़ा रुपया इन्होंने सर्फ़ किया है साहब।

तीसरा—ऐसा मालूम होता है कि सचमुच के फूल खिले हैं।

चौथा—ज़रा चंडूबाज़ों के तख्त को देखिए। ओहो-हो! सब के सब औंधे पड़े हुए हैं! आँखों से नशा टपका पड़ता है। कमाल इसे कहते हैं। मालूम होता है, सचमुच चंडूखाना ही है। वह देखिए, एक बैठा हुआ किस मज़े से पौंडा छील रहा है।

इसके बाद तुर्क सवारों का तख्त आया। जवान लाल बानात की कुर्तियाँ पहने, सिर पर बाँकी टोपियाँ दिये, बूट चढ़ाये, हाथ में नंगी तलवारें लिये, बस यही मालूम होता था कि रिसाले ने अब धावा किया।

जब जलूस दूल्हा के यहाँ पहुँचा तो बेगमें पालकियों से उतरीं। दूल्हा की बहनें और भावजें दरवाज़े तक उन्हें लाने आयीं। सब समधिनें बैठीं तो डोमिनियों ने मुबारकबाद गायी। फिर गालियों की बौछार होने लगी। आज़ाद को जब यह खबर हुई तो बहुत ही बिगड़े; मगर किसी ने एक न सुनी। अब आज़ाद के हाथों में मेहँदी लगाने की बारी आयी। उनका इरादा था कि एक ही उँगली में मेहँदी लगायें, मगर जब एक तरफ़ सिपहआरा और दूसरी तरफ़ रूहअफ़ज़ा बेगम ने दोनों हाथों में मेहँदी लगानी शुरू की तो उनकी हिम्मत न पड़ी कि हाथ खींच लें।

हँसी-हँसी में उन्होंने कहा—हिंदुओं के देखा-देखी हम लोगों ने यह रस्म सीखी है। नहीं तो अरब में कौन मेहँदी लगाता है।

सिपहआरा—जिन हाथों से तलवार चलायी, उन हाथों को कोई हँस नहीं सकता। सिपाही को कौन हँसेगा भला ?

रूहअफ़ज़ा—क्या बात कही है! जवाब दो तो जानें।

दो बजे रात को रूहअफ़ज़ा बेगम को शरारत जो सूझी तो गेरू घोल कर सोते में महरियों को रँग दिया और लगे हाथ कई बेगमों के मुँह भी रँग दिये। सुबह को जानी बेगम उठीं तो उनको देख कर सब की सब हँसने लगीं। चकरायीं कि आज माजरा क्या है। पूछा—हमें देख कर हँस रही हो क्या!

रूहअफ़ज़ा—घबराओ नहीं, अभी मालूम हो जायगा।

नाज़ुक—कुछ अपने चेहरे की भी खबर है ?

जानी—तुम अपने चेहरे की तो खबर लो।

दोनों आईने के पास जाके देखती हैं, तो मुँह रँगा हुआ। बहुत शर्मिंदा हुईं।

रूहअफ़ज़ा—क्यों बहन, क्या यह भी कोई सिंगार है?

जानी—अच्छा, क्या मुज़ायक़ा है; मगर अच्छे घर बयाना दिया। आज रात होने दो। ऐसा बदला लूँ कि याद ही करो।

रूहअफ़ज़ा—हम दरवाज़े बंद करके सो रहेंगे। फिर कोई क्या करेगा!

जानी—चाहे दरवाजा बंद कर लो, चाहे दस मन का ताला डाल दो, हम उस स्याही से मुँह रँगेंगी, जिससे जूते साफ़ किये जाते हैं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, अब तो माफ़ करो। और यों हम हाज़िर हैं। जूतों का हार गले में डाल दो।

इस तरह चहल-पहल के साथ मेहँदी की रस्म अदा हुई।

खोजी ने जब देखा कि आज़ाद की चारों तरफ़ तारीफ़ हो रही है, और हमें कोई नहीं पूछता, तो बहुत झल्लाये और कुल शहर के अफ़ीमचियों को जमा करके उन्होंने भी जलसा किया और यों स्पीच दी—भाइयो! लोगों का ख़याल है कि अफ़ीम खा कर आदमी किसी काम का नहीं रहता। मैं कहता हूँ, बिलकुल ग़लत। मैंने रूम की लड़ाई में जैसे-जैसे काम किये, उन पर बड़े से बड़ा सिपाही भी नाज़ कर सकता है। मैंने अकेले दो-दो लाख आदमियों का मुक़ाबिला किया है। तोपों के सामने बेधड़क चला गया हूँ। बड़े-बड़े पहलवानों को नीचा दिखा दिया है। और मैं वह आदमी हूँ, जिसके यहाँ सत्तर पुश्तों से लोग अफ़ीम खाते आये हैं।

लोग—सुभान अल्लाह! सुभान-अल्लाह!!

खोजी—रही अक़्ल की बात, तो मैं दुनिया के बड़े से बड़े शायर, बड़े से बड़े फ़िलास्फ़र को चुनौती देता हूँ कि वह आ कर मेरे सामने खड़ा हो जाय। अगर एक डपट में भगा न दूँ तो अपना नाम बदल डालूँ।

लोग—क्यों न हो।

खोजी—मगर आप लोग कहेंगे कि तुम अफ़ीम की तारीफ़ करके इसे और गिराँ कर दोगे, क्योंकि जिस चीज़ की माँग ज़्यादा होती है, वह महँगी बिकती है। मैं कहता हूँ कि इस शक को दिल में न आने दीजिए; क्योंकि सबसे ज़्यादा ज़रूरत दुनिया में ग़ल्ले की है। अगर माँग के ज़्यादा होने से चीज़ें महँगी हो जातीं तो ग़ल्ला अब तक देखने को भी न मिलता। मगर इतना सस्ता है कि कोरी-चमार, धुनिये-जुलाहे सब ख़रीदते और खाते हैं। वजह यह कि जब लोगों ने देखा कि ग़ल्ले की ज़रूरत ज़्यादा है, तो ग़ल्ला ज़्यादा बोने लगे। इसी तरह जब अफ़ीम की माँग होगी, तो ग़ल्ले की तरह बोयी जायगी और सस्ती बिकेगी। इसलिए हरएक सच्चे अफ़ीमची का फ़र्ज़ है कि वह इसके फ़ायदों को दुनिया पर रोशन कर दे।

एक—क्या कहना है! क्या बात पैदा की।

दूसरा—कमाल है, कमाल!

तीसरा—आप इस फ़न के ख़ुदा हैं।

चौथा—मेरी तसल्ली नहीं हुई। आख़िर, अफीम दिन-दिन क्यों महँगी होती जाती है?

पाँचवाँ—चुप रह! नामाकूल! ख्वाजा साहब की बात पर एतराज़ करता है! जा कर ख्वाजा साहब के पैरों पर गिरो और कहो कि क़ुसूर माफ़ कीजिए।

खोजी—भाइयो! किसी भाई को ज़लील करना मेरी आदत नहीं। गोकि ख़ुदा ने मुझे बड़ा रुतबा दिया है और मेरा नाम सारी दुनिया में रोशन है; मगर आदमी नहीं, आदमी का जौहर है। मैं अपनी ज़बान से किसी को कुछ न कहूँगा। मुझे यही

कहना चाहिए कि मैं दुनिया में सबसे ज़्यादा नालायक़, सबसे ज़्यादा बदनसीब और सबसे ज़्यादा ज़लील हूँ। मैंने मिस्र के पहलवान को पटकनी नहीं दी थी, उसी ने उठाके मुझे दे मारा था। जहाँ गया, पिटके आया। गो दुनिया जानती है कि ख्वाजा साहब का जोड़ नहीं; मगर अपनी ज़बान से मैं क्यों कहूँ। मैं तो यही कहूँगा कि बुआ ज़ाफ़रान ने मुझे पीट लिया और मैंने उफ़् तक न की।

एक—खुदा बख्शे आपको। क्या कहना है उस्ताद।

दूसरा—पिट गये और उफ़् तक न की?

खोजी—भाइयो! गोकि मैं अपनी शान में इज़्ज़त के बड़े-बड़े खिताब पेश कर सकता हूँ; मगर जब मुझे कुछ कहना होगा तो यही कहूँगा कि मैं झक मारता हूँ। अगर अपना ज़िक्र करूँगा तो यही कहूँगा कि मैं पाजी हूँ। मैं चाहता हूँ कि लोग मुझे ज़लील समझें ताकि मुझे ग़ुरूर न हो।

लोग—वाह-वाह! कितनी आजिज़ी है! जभी तो खुदा ने आपको यह रुतबा दिया।

खोजी—आजकल ज़माना नाज़ुक है। किसी ने ज़रा टेढ़ी बात की और घर लिये गये। किसी को एक धौल लगायी और चालान हो गया। हाकिम ने १० रुपया जुर्माना कर दिया या दो महीने की क़ैद। अब बैठे हुए चक्की पीस रहे हैं। इस ज़माने में अगर निबाह है, तो आज़िज़ी में। और अफ़ीम से बढ़ कर आज़िज़ी का सबक़ देनेवाली दूसरी चीज़ नहीं।

लोग—क्या दलीलें हैं! सुभान-अल्लाह!

खोजी—भाइयो, मेरी इतनी तारीफ़ न कीजिए, वरना मुझे ग़ुरूर हो जायगा। मैं वह शेर हूँ, जिसने जंग के मैदान में करोड़ों को नीचा दिखाया। मगर अब तो आपका ग़ुलाम हूँ।

एक—आप इस क़ाबिल हैं कि डिबिया में बंद कर दे।

दूसरा—आपके क़दमों की खाक ले कर तावीज़ बनानी चाहिए।

तीसरा—इस आदमी की ज़बान चूमने के क़ाबिल है।

चौथा—भाई, यह सब अफ़ीम के दम का ज़हूरा है।

खोजी—बहुत ठीक। जिसने यह बात कही, हम उसे अपना उस्ताद मानते हैं। यह मेरी खानदानी सिफ़त है। एक नक़ल सुनिए—एक दिन बाज़ार में किसी ने चिड़ीमार से एक उल्लू के दाम पूछे। उसने कहा, आठ आने। उसी के बग़ल में एक और छोटा उल्लू भी था। पूछा, इसकी क्या क़ीमत है? कहा, एक रुपया। तब तो गाहक ने कान खड़े किये और कहा—इतने बड़े उल्लू के दाम आठ आने और ज़रा से जानवर का मोल एक रुपया? चिड़ीमार ने कहा—आप तो हैं उल्लू। इतना नहीं समझते कि इस बड़े उल्लू में सिर्फ़ यह सिफ़त है कि यह उल्लू है और इस छोटे में दो सिफ़तें हैं, एक यह कि खुद उल्लू है, दूसरे उल्लू का पट्ठा है। तो भाइयो! आपका यह ग़ुलाम सिर्फ़ उल्लू नहीं, बल्कि उल्लू का पट्ठा है।

एक—हम आज से अपने को उल्लू की दुम फ़ाख्ता लिखा करेंगे।

दूसरा—हम तो ज़ाहिल आदमी हैं, मगर अब अपना नाम लिखेंगे तो गधे का नाम बढ़ा देंगे। आज से हम आज़िज़ी सीख गये।

खोजी—सुनिए, इस उल्लू के पट्ठे ने जो-जो काम किया, कोई करे तो जानें; उसकी टाँग की राह निकल जायँ। पहाड़ों को हमने काटा और बड़े-बड़े पत्थर उठा कर दुश्मन पर फेंके। एक दिन ४४ मन का एक पत्थर एक हाथ से उठा कर रूसियों पर मारा तो दो लाख पच्चीस हज़ार सात सौ उनसठ आदमी कुचल के मर गये।

एक—ओफ़्फ़ोह! इन दुबले-पतले हाथ-पाँवों पर यह ताक़त!

खोजी—क्या कहा? दुबले-पतले हाथ-पाँव! यह हाथ-पाँव दुबले-पतले नहीं। मगर बदन-चोर है। देखने में तो मालूम होता है कि मरा हुआ आदमी है; मगर कपड़े उतारे और देव मालूम होने लगा। इसी तरह मेरे क़द का भी हाल है। गँवार आदमी देखे तो कहे कि बौना है। मगर जाननेवाले जानते हैं कि मेरा क़द कितना ऊँचा है। रूम में जब दो-एक गँवारों ने मुझे बौना कहा, तो बेअख़्तियार हँसी आ गयी। यह ख़ुदा की देन है कि हूँ तो मैं इतना ऊँचा; मगर कोई कलियुग की खूँटी कहता है, कोई बौना बनाता है। हूँ तो शरीफ़ज़ादा; मगर देखनेवाले कहते हैं कि यह कोई पाजी है। अक़्ल इस क़दर कूट-कूट कर भरी है कि अगर फलातून ज़िंदा होता, तो शागिर्दी करता। मगर जो देखता है, कहता है कि यह गधा है। यह दरजा अफ़ीम की बदौलत ही हासिल हुआ है। अब तो यह हाल है कि अगर कोई आदमी मेरे सिर को जूतों से पीटे, तो उफ़् न करूँ। अगर किसी ने कहा कि ख्वाजा गधा है, तो हँस कर जवाब दिया कि मैं ही नहीं, मेरे बाप और दादा भी ऐसे ही थे।

एक—दुनिया में ऐसे-ऐसे औलिया पड़े हुए हैं!

खोजी—मगर इस आज़िज़ी के साथ दिलेर भी ऐसा हूँ कि किसी ने बात कही और मैंने चाँटा जड़ा। मिस्र के नामी पहलवान को मारा। यह बात किसी अफ़ीमची में नहीं देखी। मेरे वालिद भी तोलों अफ़ीम पीते थे और दिन भर दूकानों पर चिलमें भरा करते थे। मगर यह बात उनमें भी न थी।

लोग—आपने अपने बाप का नाम रोशन कर दिया।

खोजी—अब मैं आप लोगों से चंडू की सिफ़त बयान करना चाहता हूँ। बग़ैर चंडू पिये आदमी में इनसानियत आ नहीं सकती। आप लोग शायद इसकी दलील चाहते होंगे। सुनिए—बग़ैर लेटे हुए कोई चंडू पी नहीं सकता और लेटना अपने को ख़ाक में मिलाना है। बाबा सादी ने कहा है—

ख़ाक शो पेश अज़ाँ कि ख़ाक शवी।
(मरने से पहले ख़ाक हो जा।)

चंडू की दूसरी सिफ़त यह है कि हरदम लौ लगी रहती है। इससे आदमी का दिल रोशन हो जाता है। तीसरी सिफ़त यह है कि इसकी पीनक में फ़िक्र क़रीब नहीं आने पाती। चुस्की लगायी और ग़ोते में आये। चौथी सिफ़त यह है कि अफ़ीमची

को रात भर नींद नहीं आती। और यह बात पहुँचे हुए फ़क़ीर ही को हासिल होती है। पाँचवीं सिफ़त यह है कि अफ़ीमची तड़के ही उठ बैठता है। सबेरा हुआ और आग लेने दौड़े। और ज़माना जानता है कि सबेरे उठने से बीमारी नहीं आती।

इस पर एक पुराने खुर्राट अफ़ीमची ने कहा—हज़रत, यहाँ मुझे एक शक है। जो लोग चीन गये हैं। वह कहते हैं कि वहाँ तीस बरस से ज़्यादा उम्र का आदमी ही नहीं। इससे तो यही साबित होता है कि अफ़ीमियों की उम्र कम होती है।

खोजी—यह आपसे किसने कहा? चीनवाले किसी को अपने मुल्क में नहीं जाने देते। असल बात यह है कि चीन में तीस बरस के बाद लड़का पैदा होता है।

लोग—क्या, तीस बरस के बाद लड़का पैदा होता है! इसका तो यक़ीन नहीं आता।

एक—हाँ-हाँ होगा। इसमें यक़ीन न आने की कौन बात है। मतलब यह कि जब औरत तीस बरस की हो जाती है, तब कहीं लड़का पैदा होता है।

खोजी—नहीं-नहीं; यह मतलब नहीं है। मतलब यह है कि लड़का तीस बरस तक हमल में रहता है।

लोग—बिलकुल झूठ! खुदा की मार इस झूठ पर।

खोजी—क्या कहा? यह आवाज़ किधर से आयी? अरे, यह कौन बोला था? यह किसने कहा कि झूठ है?

एक—हुजूर, उस कोने से आवाज़ आयी थी।

दूसरा—हुजूर, यह ग़लत कहते हैं। इन्हीं की तरफ़ से आवाज आयी थी।

खोजी—उन बादमाशों को क़त्ल कर डालो। आग लगा दो। हम, और झूठ! मगर नहीं, हमीं चूके। मुझे इतना ग़ुस्सा न चाहिए। अच्छा साहब, हम झूठे, हम ग़प्पी, बल्कि हमारे बाप बेईमान, जालसाज़ और ज़माने भर के दग़ाबाज़। आप लोग बतलायें, मेरी क्या उम्र होगी?

एक—आप कोई पचास के पेटे में होंगे।

दूसरा—नहीं-नहीं, आप कोई सत्तर के होंगे।

खोजी—एक हुई, याद रखिएगा हज़रत। हमारा सिन न पचास का, न साठ का। हम दो ऊपर सौ बरस के हैं। जिसको यक़ीन न आये वह काफ़िर।

लोग—उफ़्फ़ोह, दो ऊपर सौ बरस का सिन है।

खोजी—जी हाँ, दो ऊपर सौ बरस का सिन है।

एक—अगर यह सही है तो यह एतराज उठ गया कि अफ़ीमियों की उम्र कम होती है। अब भी अगर कोई अफ़ीम न पिये, तो बदनसीब है।

खोजी—दो ऊपर सौ बरस का सिन हुआ और अब तक वही खमदम है कहो, हज़ार से लड़ें, कहो, लाख से। अच्छा अब आप लोग भी अपने-अपने तजरबे बयान करें। मेरी तो बहुत सुन चुके; अब कुछ अपनी भी कहिए।

इस पर गट्टू नाम का एक अफ़ीमची उठ कर बोला—भाई पंचों, मैं कलवार हूँ।

मुल सराब हमारे यहाँ नहीं बिकती। हम जब लड़के से थे, तब से हम अफ़ीम पीते हैं। एक बार होली के दिन हम घर से निकले। ऐ बस, एक जगह कोई पचास हों, पैतालिस हों, इतने आदमी खड़े थे। किसी के हाथ में लोटा, किसी के हाथ में पिच-कारी। हम उधर से जो चले, तो एक आदमी ने पीछे से दो जूता दिया, तो खोपड़ी भन्ना गयी। अगर चाहता तो उन सबको डपट लेता, मगर चुप हो रहा।

ख़ोजी—शाबाश! हम तुमसे बहुत ख़ुश हुए गुट्टू।

गुट्टू—हुजूर की दुआ से यह सब है।

इसके बाद नूरख़ाँ नाम का एक अफ़ीमची उठा। कहा—पंचो! हम हाथ जोड़ कर कहते हैं कि हमने कई साल से अफ़ीम, चंडू पीना शुरू किया है। एक दिन हम एक चने के खेत में बैठे बूट खा रहे थे। किसान था दिल्लगीबाज़। आया और मेरा हाथ पकड़ कर कानीहौज ले चला। मैं कान दबाये हुए उसके साथ चला आया।

इसके बाद कई अफ़ीमचियों ने अपने-अपने हाल बयान किये। आख़िर में एक बुड्ढे जोगादारी अफ़ीमी ने खड़े हो कर कहा—भाइयो! आज तक अफ़ीमियों में किसी ने ऐसा काम नहीं किया था। इसलिए हमारा फ़र्ज़ है कि हम अपने सरदार को कोई ख़िताब दें। इस पर सब लोगों ने मिलकर ख़ुशी से तालियाँ बजायीं और ख़ोजी को गीदी का ख़िताब दिया। ख़ोजी ने उन सबका शुक्रिया अदा किया और मजलिस बरख़ास्त हुई।

१११

आज बड़ी बेगम का मकान परिस्तान बना हुआ है। जिधर देखिए, सजावट की बहार है। बेगमें धमा-चौकड़ी मचा रही हैं।

जानी—दूल्हा के यहाँ तो आज मीरासिनों की धूम है। कहाँ तो मियाँ आज़ाद को नाच-गाने से इतनी चिढ़ थी कि मजाल क्या, कोई डोमिनी घर के अंदर क़दम रखने पाये। और आज सुनती हूँ कि तबले पर थाप पड़ रही है और ग़ज़लें, ठुमरियाँ, टप्पे गाये जाते हैं।

नाज़ुक—सुना है, आज सुरैया बेगम भी आनेवाली हैं।

बहार—उस मालज़ादी का हमारे सामने ज़िक्र न किया करो।

नाज़ुक—(दाँतों तले उँगली दबा कर) ऐसा न कहो, बहन !

जानी—ऐसी पाक-दामन औरत है कि उसका सा होना मुश्किल है।

नाज़ुक—यह लोग खुदा जाने, क्या समझती हैं सुरैया बेगम को।

बहार—ऐ है ! सच कहना, सत्तर चूहे खाके बिल्ली हज को चली।

इतने में एक पालकी से एक बेगम साहब उतरीं। जानी बेगम और नाज़ुकअदा में इशारे होने लगे। यह सुरैया बेगम थीं।

सुरैया—हमने कहा, चलके जरी दुलहिन को देख आयें।

रूहअफ़ज़ा—अच्छी तरह आराम से बैठिए।

सुरैया—मैं बहुत अच्छी बैठी हूँ। तक़ल्लुफ़ क्या है।

नाज़ुक—यहाँ तो आपको हमारे और जानी बेगम के सिवा किसी ने न देखा होगा।

सुरैया—मैं तो एक बार हुस्नआरा से मिल चुकी हूँ।

सिपहआरा—और हमसे भी ?

सुरैया—हाँ, तुमसे भी मिले थे, मगर बतायेंगे नहीं।

सिपहआरा—कब मिले थे अल्लाह ! किस मकान में थे ?

सुरैया—अजी, मैं मज़ाक़ करती थी। हुस्नआरा बेगम को देख कर दिल शाद हो गया।

नाज़ुक—क्या हमसे ज़्यादा खूबसूरत हैं ?

सुरैया—तुम्हारा तो दुनिया के परदे पर जवाब नहीं है।

नाज़ुक—भला दूल्हा से आपसे बातचीत हुई थी ?

सुरैया—बातचीत आपसे हुई होगी। मैंने तो एक दफ़ा राह में देखा था।

नाज़ुक—भला दूसरा निकाह भी मंजूर करते हैं वह।

सुरैया—यह तो उनसे कोई जाके पूछे।

नाज़ुक—तुम्हीं पूछ लो बहन, खुदा के वास्ते।

सुरैया—अगर मंजूर हो दूसरा निकाह, तो फिर क्या ?

नाज़ुक—फिर क्या, तुमको इससे क्या मतलब ?

रूहअफ़ज़ा—आख़िर दूसरे निकाह के लिए किसे तजवीजा है।

नाज़ुक—हम ख़ुद अपना पैग़ाम करेंगे।

रूहअफ़ज़ा—बस, हद हो गयी नाज़ुकअदा बहन ! ओफ्फ़ोह !

नाज़ुक—(आहिस्ता से) सुरैया बेगम, तुमने ग़लती की। धीरज न रख सकीं।

सुरैया—हम जान फ़िदा करते, गर वादा वफ़ा होता,
मरना ही मुक़द्दर था, वह आते तो क्या होता !

नाज़ुक—हाँ, है तो यही बात। ख़ैर, जो हुआ, अच्छा ही हुआ, मसलहत भी यही थी।

हुस्नआरा बेगम ने यह शेर सुना और नाज़ुक बेगम की बातों को तौला, तो समझ गयीं कि हो न हो, सुरैया बेगम यही हैं। कनखियों से देखा और गरदन फेर कर इशारे से सिपहआरा को बुला कर कहा—इनको पहचाना ? सोचो तो, यह कौन हैं ?

सिपहआरा—ऐ बाजी, तुम तो पहेलियाँ बुझवाती हो।

हुस्नआरा—तुम ऐसी तबीयतदार, और अब तक न समझ सकीं ?

सिपहआरा—तो कोई उड़ती चिड़िया तो नहीं पकड़ सकता।

हुस्नआरा—उस शेर पर ग़ौर करो।

सिपहआरा—अल्लाह, (सुरैया बेगम की तरफ़ देख कर) अब समझ गयी।

हुस्नआरा—है औरत हसीन।

सिपहआरा—हाँ हैं; मगर तुमसे क्या मुक़ाबिला।

हुस्नआरा—सच कहना, कितनी जल्द समझ गयी हूँ।

सिपहआरा—इसमें क्या शक है, मगर यह तुमसे कब मिली थीं ? मुझे तो याद नहीं आता।

हुस्नआरा—ख़ुदा जाने। अलारक्खी बनके आने न पाती, जोगिन के भेस में कोई फटकने न देता। शिब्बोजान का यहाँ क्या काम ?

सिपहआरा—शायद महरी-वहरी बनके गुज़र हुआ हो।

हुस्नआरा—सच तो यह है कि हमको इनका आना बहुत खटकता है। इन्हें तो यह चाहिए था कि जहाँ आज़ाद का नाम सुनतीं, वहाँ से हट जातीं, न कि ऐसी जगह आना !

सिपहआरा—इनसे यहाँ तक आया क्योंकर गया ?

हुस्नआरा—ऐसा न हो कि यहाँ कोई गुल खिले।

सिपहआरा ने जा कर बहार बेगम से कहा—जो बेगम अभी आयी हैं, उनको तुमने पहचाना ? सुरैया बेगम यही हैं। तब तो बहार बेगम के कान खड़े हुए। ग़ौर से देख कर बोलीं—माशा-अल्लाह ! कितनी हसीन औरत है ! ऐसी नमकीनी भी कम देखने में आयी।

सिपहआरा—बाजी को ख़ौफ़ है कि कोई गुल न खिलायें।

बहार—गुल क्या खिलायेंगी। अब तो इनका निकाह हो गया।

सिपहआरा—ऐ है, बाजी! निकाह पर न जाना। यह वह खिलाड़ है कि घूँघट के आड़ में शिकार खेलें।

बहार—ऐ नहीं, क्यों बिचारी को बदनाम करती हो।

सिपहआरा—वाह! बदनामी की एक ही कही। कोई पेशा, कोई कर्म इनसे छूटा? लगावटबाज़ी में इनकी धूम है।

बहार—हम जब इस ढब पर आने भी दें।

उधर नाज़ुकअदा बेगम ने बातों-बातों में सुरैया बेगम से पूछा—बहन, यह बात अब तक न खुली कि तुम पादरी के यहाँ से क्यों निकल आयीं। सुरैया बेगम ने कहा—बहन, इस ज़िक्र से रंज होता है। जो हुआ, वह हुआ; अब उसका घड़ी-घड़ी ज़िक्र करना फ़जूल है। लेकिन जब नाज़ुकअदा बेगम ने बहुत ज़िद की तो उन्होंने कहा—बात यह हुई कि बेचारे पादरी ने मुझ पर तरस खा कर अपने घर में रखा और जिस तरह कोई खास अपनी बेटियों से पेश आता है, उसी तरह मुझसे पेश आते। मुझे पढ़ाया-लिखाया, मुझसे रोज़ कहते कि तुम ईसाई हो जाओ; लेकिन मैं हँसके टाल दिया करती थी। एक दिन पादरी साहब तो चले गये थे किसी काम को, उनका भतीजा, जो फ़ौज़ में नौकर है, उनसे मिलने आया। पूछा—कहाँ गये हैं? मैंने कहा—कहीं बाहर गये हैं। इतना सुनना था कि वह गाड़ी से उतर आया और अपनी जेब से बोतल निकाल कर शराब पी। जब नशा हुआ तो मुझसे कहने लगा, तुम भी पियो। उसने समझा, मैं राज़ी हूँ। मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं उससे अपना हाथ छुड़ाने लगी। मगर वह मर्द, मैं औरत! फिर फ़ौज़ी जवान, कुछ करते-धरते नहीं बनती थी। आखिर बोली—साहब, तुम फ़ौज़ के जवान हो। मैं भला तुमसे क्या जीत पाऊँगी? मेरा हाथ छोड़ दो। इस पर हँस कर बोला—हम बिना पिलाये न मानेंगे। मेरा तो खून सूख गया। अब करूँ तो क्या करूँ। अगर किसी को पुकारती हूँ, तो यह इस वक़्त मार ही डालेगा। और बेइज्जत करने पर तो तुला ही हुआ है। चाहा कि झटके निकल जाऊँ, पर उसने मुझे गोद में उठा लिया और बोला—हमसे शादी क्यों नहीं कर लेतीं? मेरा बदन थर-थर काँप रहा था कि या खुदा, आज कैसे इज़्ज़त बचेगी, और क्या होगा! मगर आबरू का बचानेवाला अल्लाह है। उसी वक़्त पादरी साहब आ पहुँचे। बस, अपना सा मुँह ले कर रह गया। चुपके से खिसक गया। पादरी साहब उसको तो क्या कहते। जब बराबर का लड़का या भतीजा कमाता-धमाता हो, तो बड़ा-बूढ़ा उसका लिहाज़ करता ही है। जब वह भाग गया, तो मेरे पास आ कर बोले—मिस पालेन, अब तुम यहाँ नहीं रह सकतीं।

मैं—पादरी साहब, इसमें मेरा ज़रा कुसूर नहीं।

पादरी—मैंने खुद देखा कि तुम और वह हाथपाई करते थे।

मैं—वह मुझे ज़बर्दस्ती शराब पिलाना चाहते थे।

पादरी—अजी, मैं खूब जानता हूँ। मैं तुमको बहुत नेक समझता था।

मैं—पूरी बात तो सुन लीजिए।

पादरी—अब तुम मेरी आँखों से गिर गयीं। बस अब तुम्हारा निबाह यहाँ नहीं हो सकता। कल तक तुम अपना बंदोबस्त कर लो। मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे यह ढँग हैं।

उसी दिन रात को मैं वहाँ से भागी।

उधर बड़ी बेगम साहब इंतज़ाम करने में लगी हुई थीं। बात-बात पर कहती जाती थीं कि अल्लाह! आज तो बहुत थकी। अब मेरा सिन थोड़ा है कि इतने चक्कर लगाऊँ। उस्तानी जी हाँ-में-हाँ मिलाती जाती थीं।

बड़ी बेगम—उस्तानी जी, अल्लाह गवाह है, आज बहुत शल हो गयी।

उस्तानी—अरे तो हुज़ूर दौड़ती भी कितनी हैं! इधर से उधर, उधर से इधर।

महरी—दूसरा हो तो बैठ जाय।

उस्तानी—इस सिन में इतनी दौड़-धूप मुश्किल है।

महरी—ऐसा न हो, दुश्मनों की तबीयत ख़राब हो जाय। आखिर हम लोग किस लिए हैं?

बड़ी बेगम—अभी दो-तीन दिन तो न बोलो, फिर देखा जायगा। इसके बाद करना ही क्या है।

उस्तानी—यह क्यों? ख़ुदा सलामत रखे; पोते-पोतियाँ न होंगे?

बड़ी बेगम—बहन, ज़िंदगानी का कौन ठिकाना है।

अब बरात का हाल सुनिए। कोई पहर रात गये बड़ी धूम-धाम से बरात रवाना हुई। सबके आगे निशान का हाथी झूमता हुआ जाता था। हाथी के सामने क़दम-क़दम पर अनार छूटते जाते थे। महताब की रोशनी से चाँद का रंग फ़क़ था। चर्ख़ी की आनबान से आसमान का कलेजा धक था। तमाशाइयों की भीड़ से दोनों तरफ़ के कमरे फटे पड़ते थे। जिस वक़्त गोरों का बाजा चौक में पहुँचा और उन्होंने बैंड बजाया तो लोग समझे कि आसमान के फ़रिश्ते बाजा बजाते-बजाते उतर आये हैं।

इतने में मियाँ ख़ोजी इधर-उधर फुदकते हुए आये।

ख़ोजी—ओ शहनाईवालो! मुँह न फैलाओ बहुत।

लोग—आइए, आइए! बस आप ही की कसर थी।

ख़ोजी—अरे, हम क्या कहते हैं? मुँह न फैलाओ बहुत।

लोग—कोई आपकी सुनता ही नहीं।

ख़ोजी—ये तो नौसिखिये हैं। मेरी बातें क्या समझेंगे।

लोग—इनसे कुछ फ़र्माइश कीजिए।

ख़ोजी—अच्छा, वल्लाह! वह समाँ बाँधूँ की दंग हो जाइए। यह चीज़ छेड़ना भाई—

करेजवा में दरद उठी;
कासे कहूँ ननदी मोरे राम।

सोती थी मैं अपने मँदिल में;
अचानक चौंक पड़ी मोरे राम।
(करेजवा में दरद उठी...।)

लोग—सुभान-अल्लाह ! आप इस फ़न के उस्ताद हैं। मगर शहनाईवाले अब तक आपका हुक्म नहीं मानते।

खोजी—नहीं भई, हुक्म तो मानें दौड़ते हुए और न मानें तो मैं निकाल दूँ। मगर इसको क्या किया जाय कि अनाड़ी हैं। बस, ज़रा मुझे आने में देर हुई और सारा काम बिगड़ गया।

इतने में एक दूसरे आदमी ने खोजी के नज़दीक जा कर ज़रा कंधे का इशारा किया तो खोजी लड़खड़ाये और उनके चेले अफ़ीमी भाइयों ने बिगड़ना शुरू किया।

एक—अरे मियाँ ! क्या आँखों के अंधे हो ?

दूसरा—ईंट की ऐनक लगाओ मियाँ।

तीसरा—और ख्वाजा साहब भी धक्का देते तो कैसी होती ?

चौथा—मुँह के बल गिरे होते और क्या।

पाँचवाँ—अजी, यों कहो कि नाक सिलपट हो जाती।

खोजी—अरे भाई, अब इससे क्या वास्ता है। हम किसी से लड़ते-झगड़ते थोड़े ही हैं। मगर हाँ, अगर कोई गीदी हमसे बोले तो इतनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि याद करे।

जब बरात दुलहिन के घर पहुँची तो दूल्हे को दरवाज़े के सामने लाये और दुलहिन का नहाया हुआ पानी घोड़े के सुमों के नीचे डाला। इसके बाद घी और शक्कर मिला कर घोड़े के पाँव में लगाया। दूल्हा महल में आया। दूल्हा की बहनें उस पर दुपट्टे का आँचल डाले हुए थीं। दुलहिन की तरफ़ से औरतें बीड़ा हर क़दम पर डालती जाती थीं। इस तरह दूल्हा मड़वे के नीचे पहुँचा। उसी वक़्त एक औरत उठी और रूमाल से आँखें पोंछती हुई बाहर चली गयी। यह सुरैया बेगम थीं।

आज़ाद मँड़वे के नीचे उस चौकी पर खड़े किये गये जिस पर दुलहिन नहायी थी। मीरासिनों ने दुलहिन के उबटन का, जो माँझे के दिन से रखा हुआ था, एक भेड़ और एक शेर बनाया और दूल्हा से कहा—कहिए, दूल्हा भेड़, दुलहिन शेर।

आज़ाद—अच्छा साहब, हम शेर, वह भेड़; बस ?

डोमिनी—ऐ वाह ! यह तो अच्छे दूल्हा आये। आप भेड़, वह शेर।

आज़ाद—अच्छा साहब यों सही। आप भेड़, वह शेर।

डोमिनी—ऐ हुज़ूर, कहिए, यह शेर, मैं भेड़।

आज़ाद—अच्छा साहब, मैं भेड़, वह शेर।

इस पर खूब क़हक़हा पड़ा। इसी तरह और भी कई रस्में अदा हुईं, और तब दूल्हा महफ़िल में गया। यहाँ नाच-गाना हो रहा था। एक नाज़नीन बीच में बैठी

थी, मज़ाक़ हो रहा था। एक नवाब साहब ने यह फ़िक़रा कसा—बी साहब, आपने ग़ज़ब का गला पाया है। उसकी तारीफ़ ही करना फ़ज़ूल है।

नाज़नीन—कोई समझदार तारीफ़ करे तो ख़ैर, अताई-अनाड़ी ने तारीफ़ की तो क्या?

नवाब—ऐ साहब, हम तो ख़ुद तारीफ़ करते हैं।

नाज़नीन—तो आप अपना शुमार भी समझदारों में करते हैं! बतलाइए, यह बिहाग का वक़्त है या घनाक्षरी का।

नवाब—यह किसी ढाड़ी-बच्चे से पूछो जाके।

नाज़नीन—ऐ लो! जो इस फ़न के नुक़्ते समझे, वह ढाड़ी-बच्चा कहलाये। वाह री अक़्ल, वह अमीर नहीं, गँवार है, जो दो बातें न जानता हो—गाना और पकाना। आपके से दो-एक घामड़ रईस शहर में और हों तो सारा शहर बस जाय।

नाज़नीन ने यह ग़ज़ल गायी—

लगा न रहने दे झगड़े को यार तू बाक़ी;
रुके न हाथ अभी है रँगे-गुलू बाक़ी।
जो एक रात भी सोया वह गुल गले मिल कर;
तो भीनी-भीनी महीनों रही है बू बाक़ी।
हमारे फूल उठा के वह बोला गुँच-देहन;
अभी तलक है मुहब्बत की इसमें बू बाक़ी।
फ़िना है सबके लिए मुझप' कुछ नहीं मौक़ूफ़;
यह रंज है कि अकेला रहेगा तू बाक़ी।
जो इस ज़माने में रह जाय आबरू बाक़ी।

नवाब—हाँ, यह सबसे ज़्यादा मुक़द्दम चीज़ है।

नाज़नीन—मगर हयादारों के लिए। बगड़ेबाज़ों को क्या?

इस पर इस ज़ोर से क़हक़हा पड़ा कि नवाब साहब झेंप गये।

नाज़नीन—अब कुछ और फ़रमाइए हुज़ूर! चेहरे का रंग क्यों फ़क़ हो गया?

मिरज़ा—आपसे नवाब साहब बहुत डरते हैं।

नवाब—जी हाँ, हरामज़ादे से सभी डरा करते हैं।

नाज़नीन—ऐ है, जभी आप अपने अब्बाजान से इतना डरते हैं।

इस पर फिर क़हक़हा पड़ा और नवाब साहब की ज़बान बंद हो गयी।

उधर दुलहिन को सात सुहागिनों ने मिल कर इस तरह सँवारा कि हुस्न की आब और भी भड़क उठी। निकाह की रस्म शुरू हुई। क़ाज़ी साहब अंदर आये और दो गवाहों को साथ लाये। इसके बाद दुलहिन से पूछा गया कि आज़ाद पाशा के साथ निकाह मंजूर है? दुलहिन ने शर्म से सिर झुका लिया।

बड़ी बेगम—ऐ बेटा, कह दो।

रूहअफ़ज़ा—हुस्नआरा, बोलो बहन। देर क्यों करती हो?

नाज़क—बस, तुम हाँ कह दो।

जानी—(आहिस्ता से) बजरे पर सैर कर चुकीं, हवा खा चुकीं और अब इस वक़्त नख़रे बघारती हैं।

आख़िर बड़ी कोशिश के बाद हुस्नआरा ने धीरे से 'हूँ' कहा।

बड़ी बेगम—लीजिए, दुलहिन ने हुँकारी भरी।

क़ाज़ी—हमने तो आवाज़ नहीं सुनी।

बड़ी बेगम—हमने सुन लिया, बहुत से गवाह हैं।

क़ाज़ी साहब ने बाहर आ कर दूल्हा से भी यही सवाल किया।

आज़ाद—जी हाँ क़ुबूल किया!

क़ाज़ी साहब चले गये और महफ़िल में तायफ़ों ने मिल कर मुबारकबाद गायी। इसके बाद एक परी ने यह ग़ज़ल गायी—

तड़प रहे हैं शबे-इंतज़ार सोने दे;
न छेड़ हमको दिले-बेक़रार सोने दे।
क़फ़स में आँख लगी है अभी असीरों की,
ग़रज़ न बाग़ में अबरे-बहार सोने दे।
अभी तो सोये हैं यादे-चमन में अहले-क़फ़स;
जगा न उनको नसीमे बहार सोने दे।
तड़प रहे हैं दिले-बेकरार सोने दे।

शरबत-पिलाई के बाद दूल्हा और दुलहिन एक ही पलँग पर बिठाये गये। गेती-आरा ने कहा—बहन, जूती तो छुलाओ।

जानी—वाह! यह तो सिमटी-सिमटायी बैठी हैं।

बहार—आख़िर हया भी तो कोई चीज़ है!

नाज़ुक—अरे, जूती कंधे पर छुला दो बहन, वाह!

उस्तानी—अगले वक़्तों में तो सिर पर पड़ती थीं।

नाज़ुक—इस जूती का मज़ा कोई मर्दों के दिल से पूछे।

जब दुलहिन ने ज़रा भी जुम्बिश न की तो बहार बेगम ने दुलहिन के दाहने पैर की जूती दूल्हा के कंधे पर छुला दी।

नाज़क—कहिए, आपकी डोली के साथ चलूँगा।

रूहअफ़ज़ा—और जूतियाँ झाड़के धरूँगा।

जानी—और सुराही हाथ में ले चलूँगा।

आज़ाद—ऐ! क्यों नहीं, ज़रूर कहूँगा।

नाज़ुक—ऐ वाह! अच्छा रंग लाये।

जानी—रंडियों से नख़रे बहुत सीखे हैं।

इस फ़िक़रे पर ऐसा कहक़हा पड़ा कि मियाँ आज़ाद शर्मा गये। जानी बेगम इक्कीस पान का बीड़ा लायीं और उसे कई बार आज़ाद के मुँह तक ला-ला कर हटाने के बाद खिला दिया।

सिपहआरा—सुहाग लायीं और दूल्हा के कान में कहा—कहो, सोने में सुहागा मोतियों में धागा और बने का जी बनी से लागा!

इसके बाद आरसी की रस्म अदा हुई।

जानी—बन्नू, जल्दी आँख न खोलना।

नाज़ुक—जब तक अपने मुँह से ग़ुलाम न बनें।

हैदरी—कहिए, बीबी, मैं आपका ग़ुलाम हूँ।

आज़ाद—बीबी मैं आपका बिन दामों ग़ुलाम हूँ।

बड़ी बेगम—बेटा, अब तो कहवा लिया, अब आँखें खोल दो।

जानी—एक ही बार तो कहा।

हैदरी—ऐ हुज़ूर, ख़ुशामद तो कीजिये।

आज़ाद—यह ख़ुशामद से न मानेंगी।

हैदरी—जो कहा है, उसका ख़याल रहे। बीबी के ग़ुलाम बने रहिएगा।

आखिर बड़ी मुश्किलों से दुलहिन ने आँखें खोलीं, मगर आँखों में आँसू भरे हुए थे। बे-अख्तियार रोने लगीं। लोग समझाते-समझाते आरी हो गये, मगर आँसू न थमे। तब आज़ाद ने सिर झुका कर कान में कहा—यह क्या करती हो, दिल को मजबूत रखो।

रूहअफ़ज़ा—बहन, ख़ुदा के लिए चुप हो जाओ। इसका कौन सा मौक़ा है?

बहार—अम्मोंजान, आप ही समझायें। नाहक़ अपने को हलाकान करती हैं हुस्नआरा।

उस्तानी—तर कपड़े से मुँह पोंछो।

जब हुस्नआरा का जी बहाल हुआ तो आज़ाद ने सुहाग पुड़े से मसाला निकाल कर दुलहिन की माँग भरी। तब दुलहिन को गोद में उठा कर सुखपाल पर बिठा दिया। वहाँ जितनी औरतें थीं, सबकी आँखों से आँसू जारी हो गये और बड़ी बेगम तो पछाड़ें खाने लगीं। जब बरात रुख़सत हो गयी तो बातें होने लगीं—

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह करे, आज़ाद ने जितनी तकलीफ़ें उठायी हैं, उतना ही आराम भी पायें।

अब्बासी—अल्लाह ऐसा ही करेगा।

जानी—मगर आज़ाद का सा दूल्हा भी किसी ने कम देखा होगा।

नाज़ुक—लाखों कुओं का पानी पी चुके हैं।

बहार—बड़े ख़ुशमज़ाक़ आदमी मालूम होते हैं।

जानी—इस वक़्त हुस्नआरा के दिल का क्या हाल होगा?

नाज़ुक—चौथी के दिन हम ताक-ताक निशाने लगायेंगे।

रूहअफ़ज़ा—आज़ाद से कोई न जीत पायेगा!

जानी—कौन! देख लेना बहन, अगर हारी न बोलें जभी कहना। वह अगर तेज़ हैं, तो हम भी कम नहीं।

अंत

प्रिय पाठक, शास्त्रानुसार नायक और नायिका के संयोग के साथ ही कथा का अंत हो जाता है। इसलिए हम भी अब लेखनी को विश्राम देते हैं। पर कदाचित् कुछ पाठकों को यह जानने की इच्छा होगी कि ख्वाजा साहब का क्या हाल हुआ और मिस मीडा और मिस क्लारिसा पर क्या बीती। इन तीन पात्रों के सिवा हमारे विचार में तो और कोई ऐसा पात्र नहीं है जिसके विषय में कुछ कहना बाक़ी रह गया हो। अच्छा सुनिए। मियाँ ख़ोजी मरते दम तक आज़ाद के वफ़ादार दोस्त बने रहे। अफ़ीम की डिबिया और क़रौली की धुन ने कभी उनका साथ न छोड़ा। मिस मीडा और मिस क्लारिसा ने उर्दू और हिंदी पढ़ी और दोनों थियासोफिस्ट हो गयीं। दोनों ही ने स्त्रियों की सेवा करना ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया। क्लारिसा तो कलकत्ता की तरफ़ चली गयीं, मीडा बम्बई से लौट कर आज़ाद से मिलने आयीं तो आज़ाद ने हँस कर कहा—अब तो थियासोफिस्ट हैं आप ?

मीडा—जी हाँ, ख़ुदा का शुक्र है कि मुझे उसने हिदायत की।

आज़ाद—तो यह कहिए कि अब आप पर ख़ुदा का नूर नाज़िल हुआ। इस मज़हब में कौन-कौन आलिम शरीक हैं ?

मीडा—अफ़सोस है आज़ाद, कि तुम थियासोफी से बिलकुल वाक़िफ़ नहीं हो। इसमें बड़े-बड़े नामी आलिम और फिलासफर शरीक हैं, जिनके नाम के इस वक़्त दुनिया में झंडे गड़े हुए हैं। यूरोप के अक्सर आलिमों का झुकाव इसी तरफ़ है।

आज़ाद—हमने सुना है कि थियासोफीवाले रूह से बातें करते हैं। मुझे तो यह शोबदेबाज़ी मालूम होती है।

मीडा—तुम इसे शोबदेबाज़ी समझते हो ?

आज़ाद—शोबदा नहीं तो और क्या है, मदारियों का खेल ?

मीडा—अगर इसका नाम शोबदा है तो न्यूटन और हरशेल भी बड़े शोबदे-बाज़ थे ?

आज़ाद—वाह, कहाँ न्यूटन और कहाँ थियासोफी। हमने सुना है कि थियासो-फिस्ट लोग ग़ैब का हाल बता देते हैं। बम्बई में बैठे हुए अमेरिकावालों से बिना किसी वसीले के बातें करते हैं। यहाँ तक सुना है कि एक साहब जो थियासोफिस्टों में बहुत ऊँचा दरजा रखते हैं वह डाक से ख़त न भेज कर जादू से भेजते हैं। वह ख़त लिख कर मेज पर रख देते हैं और जिन् लोग उठा कर पहुँचा देते हैं।

मीडा—तो इसमें ताज्जुब की कौन बात है ? जो लोग लिखना-पढ़ना नहीं जानते वह दो आदमियों को हरफ़ों से बातें करते देख कर ज़रूर दिल में सोचेंगे कि जादूगर हैं। जिस तरह आपको ताज्जुब होता है कि मेज़ पर रखा हुआ ख़त पते पर कैसे पहुँच

गया उसी तरह उन जंगली आदमियों को हैरत होती है कि दो आदमी चुप-चाप खड़े हैं, न बोलते हैं, न चालते हैं, और लकीरों से बातें कर लेते हैं। अफ्रीका के हब्शियों से कहा जाय कि एक मिनट में हम लाखों मील पर बैठे हुए आदमियों के पास खबरें भेज सकते हैं तो वे कभी न मानेंगे। उनकी समझ में न आयेगा कि तार के खटखटाने से कैसे इतनी दूर खबरें पहुँच जाती हैं। इसी तरह तुम लोग थियासोफी की करामात को शोबदा समझते हो।

आज़ाद—तुम मेस्मेरिज़्म को मानती हो ?

मीडा—मैं समझती हूँ, जिसे ज़रा भी समझ होगी वह इससे इनकार नहीं कर सकता।

आज़ाद—खुदा तुमको सीधे रास्ते पर लाये, बस और क्या कहूँ।

मीडा—मुझे तो सीधे रास्ते पर लाया। अब मेरी दुआ है कि खुदा तुमको भी सीधे ढर्रे पर लगाये।

आज़ाद—आखिर इस मज़हब में नयी कौन सी बात है।

मीडा—समझाते-समझाते थक गयी मगर तुमने मज़हब कहना न छोड़ा।

आज़ाद—खता हुई, मुआफ़ करना, लेकिन मुझे तो यक़ीन नहीं आता कि बिला किसी वसीले के एक दूसरे के दिल का हाल क्योंकर मालूम हो सकता है। मैंने सुना है कि मैडम ब्लैवेट्स्की खतों को बगैर खोले पढ़ लेती हैं।

मीडा—हाँ-हाँ, पढ़ लेती हैं, एक नहीं हज़ारों बार मैंने अपनी आँखों देखा है और खुदा ने चाहा तो कुछ दिनों में मैं भी वही करके दिखा दूँगी।

आज़ाद—खुदा करे, वह दिन जल्द आये। मैं बराबर दुआ करूँगा।

यही बातें हो रही थीं कि बैरा ने अंदर आ कर एक कार्ड दिया। अज़ाद ने कार्ड देख कर बैरा से कहा—नवाब साहब को दीवानखाने में बैठाओ, हम अभी आते हैं।

मीडा ने पूछा—कौन नवाब साहब हैं ?

आज़ाद—मिरज़ा हुमायूँ फ़र के छोटे भाई हैं, जिनके साथ सिपहआरा की शादी हुई है।

मीडा—तो यों कहिए कि आपके साढ़ू हैं। तो फिर जाइए। मैं भी उनसे मिलूँगी।

आज़ाद—मैं उन्हें यहीं लाऊँगा।

यह कहते हुए आज़ाद दीवानखाने की तरफ़ चले गये।